जय महावीर जय विजयेश

गुण पूजा का भाव ही समानता का द्योतक है। –आचार्य श्री नानेश

समता विभूति आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि सहित

श्री वैभव श्री जी म.सा.
श्री विरल श्री जी म.सा.
को
शत्-शत् वन्दन!
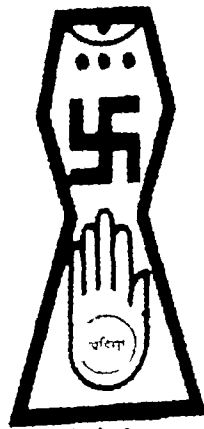
परस्परोपग्रहो जीवानाम्

तोलाराम खेमचन्द बोथरा

पी.ओ.–मोलापुर, जिला बीरभूम (प.ब.)
[illegible]-62247 (आवास)

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ

पदाधिकारीगण

◆ संरक्षक
- श्री चम्पालाल जैन — ब्यावर
- श्री जीवनसिह सरूपरिया — उदयपुर
- श्री उम्मेदमल गाधी — जोधपुर

◆ अध्यक्ष
- श्री गेहरीलाल वया — मुम्बई

◆ कार्यवाहक अध्यक्ष
- श्री प्रेमराज सोमावत — चैन्नई
- श्री चैनमल पामेचा — मन्दसौर

◆ उपाध्यक्ष
- श्री माणकचन्द सेठिया — बीकानेर
- श्री समरथमल आचलिया — इन्दौर
- श्री रोशनलाल मेहता — अहमदाबाद
- श्री देवेन्द्र कुमार लुणावत — जयपुर
- श्री आनन्दीलाल ललवाणी — इन्दौर
- श्री इन्दरचन्द सोनावत — गगाशहर
- श्री शुभकरण सेठिया — सूरत
- श्री घीसूलाल कोठारी — चैन्नई
- श्री भौरीलाल धींग — बडी सादडी
- श्री मोहनलाल पोखरना — चित्तौडगढ

◆ महामंत्री
- श्री धर्मीचन्द कोठारी — अजमेर

◆ कोषाध्यक्ष
- श्री स्वरूपचन्द कोठारी — ब्यावर

◆ वरिष्ठ [illegible]मंत्री
- श्री आनन्दीलाल सचेती — उदयपुर

◆ मंत्री
- श्री शान्तिलाल कर्णावट — बिजयनगर
- श्री मानमल मेहता — कानोड
- श्री विजय कुमार सेठिया — रतलाम
- श्री मदनलाल सचेती — इन्दौर
- श्री दिनेश कुमार ओस्तवाल — मुम्बई
- श्री कान्तिलाल रातडिया — मन्दसौर
- श्री अशोक कुमार जैन — दिल्ली

◆ महिला संघ (संरक्षिका/अध्यक्ष/महामंत्री)
- श्रीमती छगनीदेवी दस्साणी — कलकत्ता
- श्रीमती हंसा हिगड — उदयपुर
- श्रीमती आशा ललवाणी — इन्दौर

◆ युवा संघ (अध्यक्ष/महामंत्री)
- श्री हेमन्त कोठारी — भीलवाडा
- श्री नरेन्द्र खेरोदिया — भादसोडा

◆ वीर लोकाशाह बाल मंच (अध्यक्ष/महामंत्री)
- श्री राकेश सरूपरिया — भदेसर
- सुश्री चचल हिगड — उदयपुर

श्रमण संस्कृति

समता विभूति विशेषांक

Licensed to post without prepayment

Reg No L2/श्रमण संस्कृति/97-98

RNI No RAJHIN/1997/590

वर्ष : 6 मई-जून अक 2-3

(सयुक्त अक)

सम्पादक
उम्मेदमल गांधी

प्रबन्ध सम्पादक
ज्ञानचन्द टेडिया

केन्द्रीय कार्यालय :
10, सत्यनारायण मार्ग, अमल का कांटा
उदयपुर (राज) 313 001
फोन : 0294-423689, फैक्स : 520171

❑

पंजीकृत कार्यालय :
अप्सरा टॉकीज के सामने,
चित्तौडगढ (राज.) 312 001

❑

शाखा कार्यालय :
17, शिवगंगा मार्केट, दूसरी मंजिल
ब्यावर (राज) 305 901
फोन : 55069

प्रकाशक
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी
जैन श्रावक संघ

मुद्रक
गरिमा ऑफसेट
रीको द्वितीय, गायत्री नगर, अजमेर रोड, ब्यावर
फोन : 50456, 58550

कहां-क्या ?

□□□

श्री जवाहर
भीनासर (बीकानेर)
पुस्तक क्रमाक
विषय

समता दर्शन के प्रणेता,
सत्यपुंज शासन श्रृंगार।

***आचार्य वर नानेश गुरु** की,*
संस्मृति में यह श्रुत उपहार।

श्री हुक्मगच्छ नवम पद नायक,
साधुमार्ग संघ के आधार।

***प्रज्ञाऽऽलोक श्री विजय गुरु** को*
वन्दन अर्पण है साभार।

-श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन श्रावक संघ

विशेष कार्य अधिकारी

राष्ट्रपति सचिवालय,
राष्ट्रपति भवन,
नई दिल्ली-110 004

स 8-एम एच /2000

31 मई, 2000
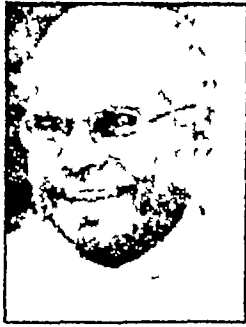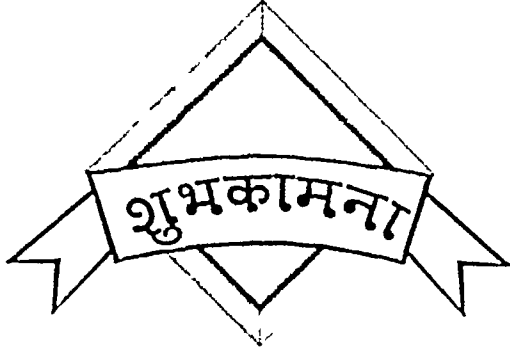
प्रिय श्री लुणावत जी,

भारत के राष्ट्रपति श्री के आर नारायणन् जी को यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक समिति, जयपुर आचार्य श्री नानेश की स्मृति मे श्रमण सस्कृति नामक मासिक पत्रिका का एक विशेषाक प्रकाशित कर रही है।

राष्ट्रपति जी इस प्रकाशन की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाए प्रेषित करते है।

आपका

प्रेमप्रकाश कौशिक

राज भवन

न्यायमूर्ति अशुमान सिह
राज्यपाल

राज्यपाल राजस्थान

राज भवन
जयपुर - 302 006

31 मई, 2000
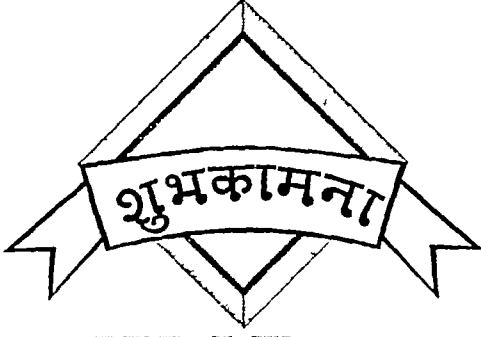
मुझे जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक समिति, जयपुर द्वारा परम श्रद्धेय आचार्यश्री नानेश की पावन स्मृति मे "श्रमण सस्कृति" मासिक पत्रिका का विशेषाक प्रकाशित किया जा रहा है।

श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सघ के परम प्रभावक, आचार्य श्री नानेश ने अल्पावस्था मे दीक्षा प्राप्त कर यह सकेत दिया था कि वे इस भौतिकवादी सस्कृति के पोषक न होकर समाज को सद्राह दिखाने वाले है। आचार्यश्री ने धर्म, दर्शन और सस्कृति के महान् मूल्यो की स्थापना के लिए जीवन पर्यन्त उपदेश दिया। मेरा विश्वास है कि आचार्यश्री को हमारी विनम्र श्रद्धाजलि यही होगी कि हम उनके बताये मार्ग पर चलने का प्रयास करे।

मै मासिक "श्रमण सस्कृति" विशेषाक के सफल प्रकाशन के लिए अपनी मगलकामनाए प्रेषित करता हू।

अशुमान सिह

अशोक गहलोत
मुख्यमत्री

मुख्यमत्री, राजस्थान
जयपुर - 302 006

1 दिसम्बर 2000
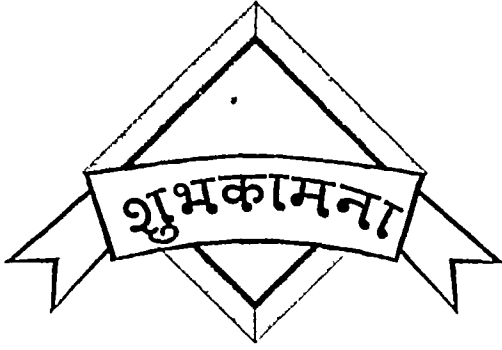
मुझे जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई है कि श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक सघ, उदयपुर द्वारा साधुमार्गी आचार्यश्री नानालाल जी म सा के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर "श्रमण सस्कृति" पत्रिका के विशेषाक का प्रकाशन किया जा रहा है।

साधु-सतो का जीवन दर्शन प्रेरणादायी है तथा उनके जीवन आदर्शो से अध्यात्म, दर्शन एव आत्म शाति का मार्ग प्रशस्त होता है।

यह शुभ है कि पत्रिका आचार्यश्री के व्यक्तित्व एव कृतित्व को विशेषाक द्वारा प्रकाशमान करने जा रही है। मुझे विश्वास है कि प्रकाशन की सामग्री प्रेरणादायी होगी।

मै आचार्यश्री को श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए प्रकाशन की सफलता के लिए शुभकामनाए प्रेषित करता हू।

अशोक गहलोत

राजस्थान प्रदेश कांग्रेस कमेटी

डॉ गिरिजा व्यास, सासद
अध्यक्ष

इदिरा गाधी भव
स्टेशन रोड, जयपु

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है कि श्री अखि
भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक सघ, उदयपुर जो
धार्मिक एव सामाजिक सेवाभावी सस्था है के
हुक्मगच्छीय साधुमार्गी सघ के अष्टमपट्टधर परम
समता विभूति आचार्य प्रवर 1008 श्री नानालाल जी म
जिनका गत 27 अक्टूबर, 1999 को झीलों के नगर
महाप्रयाण हो गया था की पुण्य स्मृति मे उनके
एवं वाणी को जन-जन तक पहुचाने एव श्रद्धाजलि
जैन श्रावक संघ द्वारा 'श्रमण सस्कृति' नामक म
पत्रिका का वृहद विशेषाक प्रकाशित किया जा रहा

मै इस सुअवसर पर आचार्य प्रवर 1008 स्वर्गीय
नानालाल जी म सा को कोटि-कोटि नमन एव अप
सच्ची श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए आशा करती हू
प्रस्तावित विशेषाक एक आदर्श पुस्तिका के रूप मे उ
सिद्ध होगा।

भवनिष्ठा

डॉ गिरिजा व्यास

घनश्याम पाटीदार
राज्य मत्री (स्वतत्र प्रभार)
सामान्य प्रशासन एव
विधि और विधायी कार्य विभाग
मध्यप्रदेश

बी-20 (74 बगला)
स्वामी दयानद नगर, भोपाल
फोन 551975 (कार्या)
574244, 574233 (नि)

भोपाल
दिनाक 4 मार्च 2001

सपादक जी,

सादर अभिवादन,

समता विभूति महान् जैनाचार्य श्री नानेश की स्मृति मे-श्रमण सस्कृति द्वारा विशेषाक का प्रकाशन किया जा रहा है। आप बधाई व धन्यवाद के पात्र है।

मुझे आचार्य श्री नानेश के पावन दर्शन व सान्निध्य का अवसर मिला है। आचार्य श्री नानेश ने श्रमण भगवान् महावीर की जिनवाणी को लाखो, करोडो लोगो के समक्ष प्रभावी ढग से रखा और लाखो लोगो के जीवन मे क्राति ला दी। ऐसे महान् आचार्य श्री नानेश के चरणो मे बार-बार वदन, नमन।

हुक्म गच्छ, शात क्राति सघ के नायक आचार्य श्री विजयराज जी म सा के चरणो मे सादर वदन।

भवदीय

(घनश्याम पाटीदार)

आचार्य पूज्य श्री शिवमुनि जी म सा
(श्रमण संघ के आचार्य)

जालना
3 नवम्बर 1999

महास्थविर श्रमण श्रेष्ठ श्री शातिलाल जी म सा

सादर सुखशाति!

समाचारो से ज्ञात हुआ कि आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा का महाप्रयाण उदयपुर मे हो गया। इन समाचारो से यहा की समाज स्तब्ध रह गई। समस्त जैन समाज एव भारतवर्ष के लिए एक बहुत बड़ी क्षति हुई है लेकिन नियति आयुष्यकर्म के आगे किसी का वश नही चलता। महाराजश्री का सयम-निष्ठ जीवन, साधना के प्रति जागरुकता, मुनिचर्या की सजगता सदैव स्थानकवासी समाज को स्मरण रहेगी। उन्होने अपना पूरा जीवन साधना, सयम और समाज सेवा मे अर्पित किया। अपने स्वास्थ्य के प्रति भी जागरुक न रहते हुए वे निरन्तर सघ सेवा मे लगे रहे।

पिछले वर्ष से उनका स्वास्थ्य अनुकूल नही था फिर भी उत्साह के साथ सघीय व्यवस्था को सुचारू रुप से चलाने के लिए जागरुक रहे। उस महान् आत्मा के सद्‌गुणो को अपने जीवन मे अपनाते हुए सकल जैन समाज की एकता, अखण्डता बनाए रखते हुए हम सभी मिल कर जिनशासन की प्रभावना करे। मैत्री, प्रेम और सौहार्द का वातावरण निर्मित करे यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धाजली होगी। वे जहा भी देवलोक मे विराजमान हो, उनका आशीर्वाद, कृपा सघ पर सदा बनी रहे, यही जिनशासन देव से प्रार्थना करते है।

आप सभी मुनिवृद पर जो ये क्षण आए इसका अनुभव मै कर रहा हू, शासनदेव इस सत्य को स्वीकार करने की क्षमता प्रदान करे। आप सभी धैर्य धारण करे। हमारी असीम मैत्री, सवेदना, हार्दिकता आप सभी के साथ है।

असीम मंगल मैत्री के साथ,

शिवमुनि

घनश्याम पाटीदार
राज्य मत्री (स्वतत्र प्रभार)
सामान्य प्रशासन एव
विधि और विधायी कार्य विभाग
मध्यप्रदेश

बी-20 (74 बगला)
स्वामी दयानद नगर, भोपाल
फोन 551975 (कार्या)
574244, 574233 (नि)

भोपाल
दिनाक 4 मार्च 2001

सपादक जी,

सादर अभिवादन,

समता विभूति महान् जैनाचार्य श्री नानेश की स्मृति मे- श्रमण सस्कृति द्वारा विशेषाक का प्रकाशन किया जा रहा है। आप बधाई व धन्यवाद के पात्र है।

मुझे आचार्य श्री नानेश के पावन दर्शन व सान्निध्य का अवसर मिला है। आचार्य श्री नानेश ने श्रमण भगवान् महावीर की जिनवाणी को लाखो, करोडो लोगो के समक्ष प्रभावी ढग से रखा और लाखो लोगो के जीवन मे क्राति ला दी। ऐसे महान् आचार्य श्री नानेश के चरणो मे बार-बार वदन, नमन।

हुक्म गच्छ, शात क्राति सघ के नायक आचार्य श्री विजयराज जी म सा के चरणो मे सादर वदन।

भवदीय

(घनश्याम पाटीदार)

आचार्य पूज्य श्री शिवमुनि जी म सा
(श्रमण सघ के आचार्य)

जालना
3 नवम्बर 1999

महास्थविर श्रमण श्रेष्ठ श्री शातिलाल जी म सा

सादर सुखशाति।

समाचारो से ज्ञात हुआ कि आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा का महाप्रयाण उदयपुर मे हो गया। इन समाचारो से यहां की समाज स्तब्ध रह गई। समस्त जैन समाज एव भारतवर्ष के लिए एक बहुत बड़ी क्षति हुई है लेकिन नियति आयुष्यकर्म के आगे किसी का वश नही चलता। महाराजश्री का सयम-निष्ठ जीवन, साधना के प्रति जागरुकता, मुनिचर्या की सजगता सदैव स्थानकवासी समाज को स्मरण रहेगी। उन्होने अपना पूरा जीवन साधना, सयम और समाज सेवा मे अर्पित किया। अपने स्वास्थ्य के प्रति भी जागरुक न रहते हुए वे निरन्तर सघ सेवा मे लगे रहे।

पिछले वर्ष से उनका स्वास्थ्य अनुकूल नही था फिर भी उत्साह के साथ सघीय व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए जागरूक रहे। उस महान् आत्मा के सद्गुणो को अपने जीवन मे अपनाते हुए सकल जैन समाज की एकता, अखण्डता बनाए रखते हुए हम सभी मिल कर जिनशासन की प्रभावना करे। मैत्री, प्रेम और सौहार्द का वातावरण निर्मित करे यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धाजली होगी। वे जहा भी देवलोक मे विराजमान हो, उनका आशीर्वाद, कृपा सघ पर सदा बनी रहे, यही जिनशासन देव से प्रार्थना करते है।

आप सभी मुनिवृद पर जो ये क्षण आए इसका अनुभव मै कर रहा हू, शासनदेव इस सत्य को स्वीकार करने की क्षमता प्रदान करे। आप सभी धैर्य धारण करे। हमारी असीम मैत्री, सवेदना, हार्दिकता आप सभी के साथ है।

असीम मगल मैत्री के साथ,

शिवमुनि

श्री ज्ञानमुनि जी म.सा

17 दिसम्बर 2000

आदरणीय धर्मप्रेमी सुज्ञ सुश्रावक

श्रीमान् ज्ञानचद जी ढेढिया

सादर जय जिनेन्द्र, मगल कामनाए।

आपका दिनाक 26-11-99 का पत्र काफी विलब से मिला तथा ग्रामीण क्षेत्रो मे विहार के कारण समय पर पत्रोत्तर संभव नही हुआ इसका खेद है।

आपके निर्देशन में श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ श्रमण सस्कृति का आचार्य श्री नानेश स्मृति अक प्रकाशित करने जा रहा है। इस स्तुत्य प्रयास के लिए सघ एवं आप धन्यवाद के पात्र है। आचार्य भगवन्त श्री 1008 श्री नानालाल जी म सा इस युग के अद्वितीय, आत्मसाधक महान् सत थे जिनके जीवन का कण-कण गुणों से सुवासित था। ऐसे महान् व्यक्तित्व के गुणो व कार्यो के समीचीन लेखन व स्मरण करना हमारे लिए एव समस्त प्राणीमात्र के लिए प्रेरणा स्त्रोत हो सकता है। मै कामना करता हू कि आपका उपरोक्त सद्कार्य पूर्णतया सफल रहे। इस पत्र के साथ मेरी व्यक्तिगत श्रद्धाजली के भाव व्यक्त कर रहा हू।

गौतमचद डूगरवाल

श्रमण विनय कुमार (भीम)
राष्ट्र सत उप प्रवर्तक
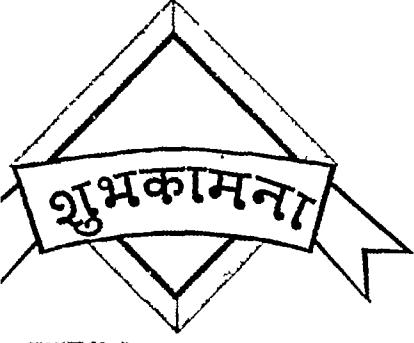
श्री ज्ञानचद जी ढेढिया

सादर जयवीर।

पत्र के माध्यम से यह सूचना मिली कि श्रमण सस्कृति का विशेषाक निकल रहा हैं। इस अक मे आप आचार्य श्री नानेश के विराट जीवन दर्शन पर रोशनी-प्रकाश डालेंगे।

आचार्य नानेश वास्तव मे भव्य मनोरम रत्न थे, श्रमण थे, साधक थे। साधना के माध्यम से लोगो को जो रास्ता बताया वो वास्तव मे प्रशसा के काबिल था। समीक्षण ध्यान योग से सरल सरस जानकारी दी वो समाज वाले कभी नही भूलेगे।

आचार्य प्रवर नानेश युगो-युगो तक दिल और दिमाग में रहेगे। श्रमण सस्कृति की लोकप्रियता के लिए मै अपनी शुभकामना प्रेषित करता हू। आचार्यवर का जीवन श्रेष्ठ था तो लोग भी अपना जीवन श्रेष्ठ और उत्तम बनाएं, यही भव्य भावना।

-श्रमण विनय कुमार

प्रकाशकीय

भारतीय आध्यात्मिक परम्परा में श्रमण सस्कृति का विशेष महत्त्व है। इस संस्कृति ने आत्म जागृति, पुरुषार्थ-पराक्रम, तप त्याग, संयम सदाचार पर सर्वाधिक बल दिया है। इस सस्कृति के महत्त्वपूर्ण अग जैन धर्म मे स्थानकवासी परम्परा का अपना विशेष महत्त्व है। स्थानकवासी परंपरा मे साधुमार्गी जैन संघ अपने विशुद्ध साध्वाचार एवं कठोर संयमी जीवन के लिए विख्यात है। समता विभूति, समीक्षण ध्यान योगी, धर्मपाल प्रतिबोधक जिनशासन प्रद्योतक आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा भगवान् महावीर की शासन परंपरा के 81वें तथा साधुमार्गी संघ के आठवे आचार्य थे।

आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा साधुमार्गी जैन सघ के महान् तेजस्वी और प्रभावक आचार्य हुए। आपने ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य रूप पंचाचार का स्वय पालन करते हुए अपने संघ को भी इस ओर गतिशील किया। ज्ञानाचार के क्षेत्र में आपने कई आगम ग्रन्थों का अध्ययन कर अपने प्रवचनो मे उनकी समसामायिक व्याख्या की। आचार्य श्री द्वारा संपादित साहित्य जैन जगत् को नयी दिशा देने वाला है। आपने अपने संत सतियो को भी संस्कृत प्राकृत का ज्ञान करने, तत्त्वज्ञान बढाने और निरन्तर अध्ययन-अध्यापन की प्रेरणा प्रदान की है। समाज मे सम्यग् ज्ञान का विशेष प्रचार-प्रसार हो इसके लिए आप प्रयत्नशील रहे। दर्शनाचार के क्षेत्र मे आपने अनेक लोगो को धर्म श्रद्धा मे दृढ बनाया और समता दर्शन का सैद्धान्तिक एव प्रायोगिक रूप प्रस्तुत किया। चारित्राचार के क्षेत्र मे आपने लगभग 350 मुमुक्षु आत्माओ को दीक्षित कर वीतराग मार्ग का पथिक बनाया एव धर्मपाल प्रवृत्ति का शुभारभ कर हजारो लोगों को व्यसनमुक्त संस्कारी जीवन जीने की प्रेरणा दी। तपाचार के क्षेत्र में आपने बाह्य एव आभ्यतर तप पर विशेष बल दिया। आपने वर्तमान के तनावपूर्ण जीवन का अंत करने और सुख शांति प्राप्त करने के लिए एव कषायो पर विजय प्राप्त करने के लिए समीक्षण ध्यान साधना का स्वरूप प्रकट किया। वीर्याचार के क्षेत्र मे सम्यक् पुरुषार्थ और आत्मस्वरूप को जगाने की आप सदैव प्रेरणा देते रहे। फलस्वरूप आज सघ में विविध धार्मिक, रचनात्मक प्रवृत्तियां गतिशील है। अतः संक्षेप मे यही कहा जा सकता है कि आचार्य श्री नानेश एक आदर्श संघनायक के रूप मे चतुर्विध संघ को कुशल नेतृत्व प्रदान करते हुए पंचाचार की परिपालना कराने में पूर्णतया सक्षम थे।

ऐसे महामहिम आचार्य देव की विशाल शिष्य सम्पदा भारत के कोने-कोने मे जिनशासन की प्रभावना कर रही है। आचार्यश्री ने एक से बढ कर एक ज्ञानी संत रत्नो का निर्माण कर अपने कर्त्तव्य का सम्यक् निर्वाह किया। उन्ही संत-रत्नो मे एक दुर्लभ रत्न है पूज्य श्री विजयराज जी म सा जिनको आचार्य प्रवर श्री नानेश के स्वर्गारोहण के पश्चात् साधुमार्गी जैन श्रावक संघ के नवमे पट्टधर के रूप मे आचार्य पद प्रदान किया गया है। आज जिनके कुशल नेतृत्व में संघ चहुंमुखी प्रगति कर रहा है। आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा की प्रथम पुण्यतिथि एवं आचार्य प्रवर पूज्य श्री विजयराज जी म सा के आचार्य पदारोहण की प्रथम वर्षगांठ के उपलक्ष में संघ ने श्रमण सस्कृति का समता विभूति 'आचार्य श्री नानेश स्मृति' विशेषांक प्रकाशित करने का निर्णय लिया। तदनुरूप यह विशेषांक पाठको के करकमलो मे पहुंचाते हुए सघ गौरव का अनुभव कर रहा है।

आचार्य प्रवर पूज्य श्री नानेश गुणो के पुंज थे। उनके आदर्श जीवन को शब्दो मे समेट पाना अत्यन्त दुष्कर है फिर भी उनके गुण कीर्तन के रूप मे हमारा यह प्रयास मात्र है। आशा है इस प्रयास से पाठकगण पूज्य श्री जी के आदर्श एवं गरिमामय जीवन से प्रेरित हो अपने जीवन को आदर्श एवं धर्ममय बनाने का सम्यक् पुरुषार्थ करेगे।

हम सभी लेखक, विज्ञापनदाताओ एवं सम्पादक मडल के आभारी है जिनके सम्बल एव सहयोग से यह शुभ कार्य सभव हो पाया है। उन सभी गुणानुरागी महानुभावो के भी हम हृदय से आभारी हैं जिन्होने आचार्य श्री नानेश के प्रति अपनी भावाजलि, शुभकामनाए और श्रद्धासुमन प्रेषित किए हैं। सुंदर एव सुसज्जित विशेषाक को प्रकाशित कराने मे गरिमा ऑफसेट के मालिक श्री रामप्रसाद जी कुमावत एव कम्प्यूटर ऑपरेटर श्री अविनाश कुमावत के प्रति भी हम कृतज्ञता ज्ञापित करते है।

आचार्य श्री विजयराज जी म सा. के कुशल एवं सक्षम नेतृत्व मे सघ निरन्तर प्रगति करता रहे, चतुर्विध सघ मे रत्नत्रयी की अभिवृद्धि होती रहे। इसी शुभ भावना के साथ सभी चारित्रात्माओ के चरणो मे शत-शत वदन।

-समस्त पदाधिकारीगण

आचार्यश्री नानेश : एक विलक्षण व्यक्तित्व

इस विश्व पटल पर कतिपय ऐसे विशिष्ट व्यक्ति अवतरित होते है जिनके अनुपम अवदानो से सारा म नव समाज उपकृत होता है। उनके व्यक्तित्व की सौरभ क्षेत्र और काले सीमा से अतीत होती है। वे अपने पुरुषार्थ और विचार वैभव से समाज में अभिनव चेतना और जागृति का संचार करते हैं। उन महापुरुषों की लडी मे भगवान् महावीर की पाट परम्परा के 81वे तथा हुक्म संघ के आठवे पट्टधर आचार्य श्री नानेश का नाम भी प्रमुख है। वे बीसवीं शताब्दी के शिखर पुरुष हुए हैं।

मेवाड की वीर भूमि चित्तौड़गढ़ जिले के दांता ग्राम मे वि सं. 1977 ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीया को मोड़ीलाल जी पोखरना के घर मे माता श्रृंगारबाई की कुक्षि से इस युग पुरुष का जन्म हुआ। पौष शुक्ला अष्टमी वि.सं 1996 को कपासन मे आपने संसार की नश्वरता एवं जीवन की अनित्यता को समझ गणेशाचार्य से निर्ग्रन्थ प्रव्रज्या अंगीकार की। वि.स 2019 आश्विन शुक्ला द्वितीय को आचार्य पूज्य श्री गणेशीलाल जी म सा. ने उदयपुर मे आपको युवाचार्य पद प्रदान किया। वि.सं 2019 माघ कृष्णा द्वितीया को उदयपुर मे ही आप साधुमार्गी जैन संघ के आठवे आचार्य बने। वि सं 2056 कार्तिक कृष्णा तृतीया को उदयपुर मे ही आपने अपने अतिम मनोरथ को सफल बनाते हुए इस नश्वर देह का त्याग किया।

एक अंग्रेज कवि की सूक्ति है-

So when a great man dies
For years beyond his ken
The light he leaves behind humilities
Upon the paths of men

अर्थात् जब कोई महापुरुष काल करता है तब जो ज्योति वह अपने पीछे छोड़ जाता है वह उसके अनुमान से परे वर्षों तक मनुष्यों के पथ को आलोकित करती रहेगी।

समता विभूति, समीक्षण ध्यान योगी, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा भी ऐसे ही महापुरुष थे। समता दर्शन, समीक्षण ध्यान रूपी जो मशाल वे अपने पीछे छोड गए है वह युगो-युगो सारी मानवता के पथ को आलोकित करती रहेगी।

नमस्कार महामंत्र के पांच पदो मे तृतीय पद '**णमो आयरियाणं**' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस पद के द्वारा उस आचार्य को नमन किया गया है जो निम्न छत्तीस गुणो का पालक हो-

पंचिंदिय संवरणो तह णवविह बंभचेर गुत्तिधरो।
चउव्विह कसायमुक्को इअ अट्ठारस गुणेहिं संजत्तो॥1॥

पंच महव्वय जुत्तो, पंच विहायार पालण समत्थो।
पंच समिओ तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मज्झ॥2॥

-पांच इन्द्रियों पर संयम, नव गुप्तियो के साथ ब्रह्मचर्य का पालन, क्रोध आदि चार कषायो पर विजय, अहिंसा आदि पांच महाव्रतों का पूर्ण पालन, ज्ञानाचार आदि पाच आचारो का पालन, ईर्या समिति आदि पांच समिति तथा मनोगुप्ति आदि तीन गुप्ति के धारक, इस तरह ये छत्तीस गुण आचार्य मे होने आवश्यक है।

आचार्य पूज्य श्री नानेश इन गुणों से पूर्णत: समृद्ध थे। दशाश्रुतस्कंध की चतुर्थ दशा मे आचार विशुद्धि, शास्त्रो का विशिष्ट और तलस्पर्शी वाचन, स्थिर संहनन और पूर्णेन्द्रियता, वचन की मधुरता तथा आदेयता, अस्खलित वाचन व मूल अर्थ की निर्वाहकता, ग्रहण एवं धारणामति की विशिष्टता, शास्त्रार्थ मे द्रव्य क्षेत्र शक्ति की अनुकूलता से प्रयोग करना, साधुओं के संयम निर्वाहार्थ साधन संग्रह की कुशलता के रूप मे जो आठ विशेषताएं बताई गई है वे भी उनमे विद्यमान थी।

आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा हुक्म संघ के आठवे आचार्य थे। आचार्य पद पर जब पूज्य श्री गणेशीलाल जी म सा ने आपका चयन किया उस समय उन्होने फरमाया कि वे संघ को एक ऐसा हीरा दे रहे है जो सब तरफ से सघ को प्रकाशमान करेगा। आचार्य पूज्य श्री नानेश इस कसौटी पर खरे उतरे और उन्होने अपने आचार्यत्व काल मे संघ का चहुंमुखी विकास किया। आचार्य की बहुत बडी जिम्मेदारी होती है और आपने उस जिम्मेदारी का निर्वहन सुयोग्यता के साथ किया।

एक दीपक सैकडो दीपको को जलाता है और खुद भी प्रकाशित रहता है, ऐसे दीपकों के समान आचार्य स्वयं ज्ञान आदि गुणो से दीप्तिमान रहते है और उपदेश दान आदि से दूसरो को भी दीप्तिमान बनाते है। कहा भी है-

जह दीवो दीवसयं पडप्पए जसो दीवो।
दीव समा आयरिया दिव्वंति परं च दिवति।।

आचार्य श्री भी अद्वितीय ज्योतिर्धर आचार्य थे। आपने दीपक की तरह स्वयं प्रकाशित होकर अपनी आत्म ज्योति के प्रकाश से अगणित आत्म दीपो को प्रकाशित करने का कार्य किया। दीप शिखा की तरह आप हमेशा प्रज्ज्वलित रहे। पहले तो आपने साधक रह कर स्वयं का निर्माण किया और तत्पश्चात् आचार्य बन कर चतुर्विध संघ का भावात्मक विकास किया और अपने पूर्ववर्ती आचार्यों से अलग पहचान बनायी। आज इतना बडा सत-सती समुदाय एवं संघ आपकी ही देन है।

आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म सा. हर दृष्टि से महान् थे। आचार निष्ठा, संयम प्रियता, मितभाषिता, सहिष्णुता, तेजस्विता, सरलता, गंभीरता, दीर्घदर्शिता, नम्रता, विद्वता जैसे अनेक गुणो के कारण आप जन-जन के श्रद्धा केन्द्र बने। सतत सजग रह कर आपने विशुद्ध आचार को अपने मे जीया एवं संघ समाज मे विमल आचार विचार का शंखनाद फूंका। यही कारण था कि संपूर्ण जैन समाज आप से प्रभावित रहा। आप श्री का जीवन बहुआयामी था। आपके जीवन मे ज्ञान और क्रिया का विलक्षण सामंजस्य था। समता का गुण आप मे कूट-कूट कर भरा हुआ था। कठिन से कठिन परिस्थितियो मे भी आपका समत्व भाव पूर्णत: अभंग रहा। समता ही धर्म है इसकी व्याख्या करते हुए आपने जिनेश्वर भगवंतो के समता दर्शन को व्यावहारिक रूप प्रदान किया।

आचार्य श्री नानेश गुणों के सागर थे। उनके समस्त गुणो का वर्णन और विराट व्यक्तित्व को शब्दो मे बांध पाना संभव नहीं है क्योकि सिंधु को बिन्दु मे और सुमेरु को कण में समेट पाना मुश्किल है। फिर भी उनके गुणानुवाद के रूप मे इस विशेषांक मे यत्किचित् प्रयास किया गया है। पाठकगण उस गुणो के सागर से प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन को भी गुणमय बनाने का पुरुषार्थ करे क्योकि उस महापुरुष ने तो पचाचार का सम्यक् पालन कर

मोक्ष मार्ग पर अपने कदम आगे बढाते हुए अपने मानव भव को सार्थक कर दिया है। ज्ञानसार मे कहा है कि-

शास्त्रोक्ताचार कर्त्ता च शास्त्रज्ञः शास्त्रदेशकः।
शास्त्रैकदृग महायोगी, प्राप्नोति पदम परम्॥

-शास्त्रोक्त आचार का पालन करने वाला, शास्त्रज्ञ, शास्त्र का उपदेश करने वाला तथा शास्त्र मे एक दृष्टि रखने वाला महान् योगी परम पद को प्राप्त करता है।

महान् एवं विरल व्यक्तित्व के धनी आचार्य श्री नानेश ऐसे ही महान् योगी थे। आज आचार्य श्री हमारे बीच मे नही है किंतु उनके द्वारा बताया हुआ पथ आज भी हमारे समक्ष है। हम उस महापुरुष के बताए मार्ग पर चल कर ही उनके सच्चे भक्त (अनुयायी) कहला सकते है। हमारा यह परम कर्त्तव्य है कि हम अपने आराध्य श्रद्धेय आचार्य भगवंत द्वारा प्रदत्त प्रेरणाओ एवं हित शिक्षाओं को आत्मसात करते हुए उनके द्वारा निर्दिष्ट पथ पर अपने सक्रिय कदम बढाएं। महापुरुषो के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होती है कि हम हमारे जीवन मे आचरण के पक्ष को सशक्त बनाएं। मात्र जय-जयकार कर उनकी आज्ञाओं की उपेक्षा करना महापुरुषो का सम्मान नही अवहेलना है। अतः हम अपने दृष्टिकोण को बदलें और पूज्य श्रीजी के प्रथम स्मृति दिवस के उपलक्ष में यह प्रतिज्ञा करे कि हम उनके द्वारा प्रदत्त समता दर्शन को जीवन और व्यवहार में आत्मसात् करते हुए आपसी फूट और मतभेदों से दूर रहेगे और संघ के प्रति पूर्णतया समर्पित बन कर जिनशासन की जाहोजलाली हेतु सम्यक् पुरुषार्थ करते रहेंगे।

आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा की प्रथम पुण्यतिथि एवं आचार्य पूज्य श्री विजयराज जी म.सा के आचार्य पदारोहण की प्रथम वर्षगांठ के उपलक्ष मे प्रकाशित श्रमण संस्कृति का यह विशेषांक पाठको को समर्पित करते हुए दोनों महापुरुषों के विशिष्ट गुणो को स्मरण करता हू। विशेषाक मे जो कुछ अच्छाई है वह गुरु कृपा का फल है और जो कुछ कमियां हैं उसके लिए मै उत्तरदायी हूं। आशा है सुज्ञ पाठकगण इस विशेषांक से गुण रूपी मुक्ता मणियो का चयन कर अपने आपको समृद्ध बनाएंगे। इसी शुभ भावना के साथ

✍ उम्मेदमल गांधी
सम्पादक

आचार्य श्री नानेश : संक्षिप्त जीवन परिचय

❑ जन्म एवं जन्म स्थान	:	दाता, ज्येष्ठ शुक्ला 2, वि सं. 1977
❑ माता का नाम	:	श्रृंगार बाई पोखरना
❑ पिता का नाम	:	मोडीलाल पोखरना
❑ वैराग्यकाल	:	लगभग तीन वर्ष
❑ दीक्षा	:	कपासन, पौष शुक्ला अष्टमी, वि.सं 1996
❑ अध्ययन	:	संस्कृत, प्राकृत, मागधी, अर्द्ध मागधी, पाली आदि भाषाओ का गहन अध्ययन एवं जैन आगमो के साथ वैदिक एव बौद्ध दर्शन का अध्ययन
❑ युवाचार्य पद	:	उदयपुर, आश्विन शुक्ला द्वितीय, वि सं 2019
❑ आचार्य पद	:	उदयपुर, माघ कृष्णा द्वितीया, वि सं 2019
❑ प्रथम दीक्षित संत	:	शासन प्रभावक श्री सेवन्त मुनि, कार्तिक शुक्ला तृतीया, वि स 2019, उदयपुर
❑ प्रथम दीक्षित महासती	:	महासती श्री सुशीला कंवर जी म सा. प्रथम, माघ कृष्णा द्वादशी, वि सं. 2019
❑ दीक्षा के बाद प्रथम चातुर्मास	:	फलौदी (राज.) वि सं 1977
❑ आचार्य पद के बाद प्रथम चातुर्मास	:	रतलाम (मध्यप्रदेश), वि सं. 2020
❑ धर्मपाल प्रतिबोधन	:	सन् 1963 के रतलाम चातुर्मास के पश्चात् गुराडिया गाव मे बलाई जाति को प्रतिबोध। 'धर्मपाल' सज्ञा से अभिहित।
❑ सामाजिक क्रांति	:	बडीसादडी वर्षावास सन् 1970, सामाजिक क्रान्ति की 19 प्रतिज्ञाओ पर सतरह गांवो के प्रतिनिधियो को उद्बोधन।
❑ ध्वनि विस्तारक यंत्र	:	ब्यावर वर्षावास 1971 भौतिकी के प्रख्यात विद्वान् डॉ दौलतसिंह जी कोठारी द्वारा आचार्य श्री से भेट एवं ध्वनि विस्तारक यंत्र के बारे मे आचार्यश्री के चिन्तन से पूर्ण सहमति।
❑ समता दर्शन शंखनाद	:	जयपुर चातुर्मास, सन् 1972
❑ सांवत्सरिक एकता	:	सांवत्सरिक एकता के लिए बिना किसी आग्रह के शिष्टमंडल

प्रथम खण्ड

अलौकिक आभा

जीवन वृत

आचार्य श्री नानेश : संक्षिप्त जीवन परिचय

❑ जन्म एवं जन्म स्थान	:	दाता, ज्येष्ठ शुक्ला 2, वि सं 1977
❑ माता का नाम	:	श्रृंगार बाई पोखरना
❑ पिता का नाम	:	मोडीलाल पोखरना
❑ वैराग्यकाल	:	लगभग तीन वर्ष
❑ दीक्षा	:	कपासन, पौष शुक्ला अष्टमी, वि.स 1996
❑ अध्ययन	:	संस्कृत, प्राकृत, मागधी, अर्द्ध मागधी, पाली आदि भाषाओ का गहन अध्ययन एवं जैन आगमो के साथ वैदिक एव बौद्ध दर्शन का अध्ययन
❑ युवाचार्य पद	:	उदयपुर, आश्विन शुक्ला द्वितीय, वि सं 2019
❑ आचार्य पद	:	उदयपुर, माघ कृष्णा द्वितीया, वि सं 2019
❑ प्रथम दीक्षित संत	:	शासन प्रभावक श्री सेवन्त मुनि, कार्तिक शुक्ला तृतीया, वि स 2019, उदयपुर
❑ प्रथम दीक्षित महासती	:	महासती श्री सुशीला कंवर जी म सा प्रथम, माघ कृष्णा द्वादशी, वि सं 2019
❑ दीक्षा के बाद प्रथम चातुर्मास	:	फलौदी (राज) वि सं. 1977
❑ आचार्य पद के बाद प्रथम चातुर्मास	:	रतलाम (मध्यप्रदेश), वि.सं 2020
❑ धर्मपाल प्रतिबोधन	:	सन् 1963 के रतलाम चातुर्मास के पश्चात् गुराडिया गाव मे बलाई जाति को प्रतिबोध। 'धर्मपाल' संज्ञा से अभिहित।
❑ सामाजिक क्रांति	:	बडीसादडी वर्षावास सन् 1970, सामाजिक क्रान्ति की 19 प्रतिज्ञाओ पर सतरह गांवों के प्रतिनिधियो को उद्‌बोधन।
❑ ध्वनि विस्तारक यंत्र	:	ब्यावर वर्षावास 1971 भौतिकी के प्रख्यात विद्वान् डॉ दौलतसिह जी कोठारी द्वारा आचार्य श्री से भेट एवं ध्वनि विस्तारक यत्र के बारे मे आचार्यश्री के चिन्तन से पूर्ण सहमति।
❑ समता दर्शन शंखनाद	:	जयपुर चातुर्मास, सन् 1972
❑ सांवत्सरिक एकता	:	सांवत्सरिक एकता के लिए बिना किसी आग्रह के शिष्टमडल

प्रथम खण्ड

अलौकिक आभा

जीवन वृत्त

1. जीवन परिचय
2. जीवन वृत (डॉ. जैन)
3. चातुर्मास
4. चातुर्मासिक उपलब्धियां
5. दीक्षित संत सतिया
6. आचार्य श्री द्वारा लिखित साहित्य और आचार्य श्री से संबंधित साहित्य की सूची
7. विवरणिका

		को आश्वासन, सरदारशहर, वर्षावास सन् 1974
❑ ऐतिहासिक मिलन	:	नोखामंडी वर्षावास, सन् 1976 ई के पश्चात् भोपालगढ़ मे आचार्यश्री हस्तीमल जी म.सा. से ऐतिहासिक मिलन।
❑ विद्वत् गोष्ठी को संबोधन	:	अजमेर वर्षावास, सन् 1979 ई मे अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के उपलक्ष मे बाल शिक्षा पर आयोजित विद्वत गोष्ठी को सबोधन।
❑ चिन्तन सूत्रो का प्रवर्तन	:	सन् 1980 ई , राणावास वर्षावास। चिन्तन के नौ सूत्रो का प्रवर्तन।
❑ आगम अहिंसा समता एवं प्राकृत संस्थान की स्थापना की प्रेरणा	:	सन् 1981 के उदयपुर चातुर्मास की सफल परिणति रूप आगम अहिंसा, समता एवं प्राकृत शोध संस्थान की उदयपुर मे स्थापना हेतु प्रेरणा।
❑ गुजराती साधु-संतो से मिलन	:	अहमदाबाद वर्षावास, सन् 1982 ई
❑ समीक्षण ध्यान पर प्रवचन	:	अहमदाबाद वर्षावास, सन् 1982 ई
❑ ध्वनिवर्द्धक यंत्र के उपयोग पर मौलिक विचार	:	घाटकोपर (मुम्बई) वर्षावास, सन् 1985 ई
❑ सस्कार क्रान्ति अभियान	:	इन्दौर वर्षावास, सन् 1987 ई
❑ पच्चीस दीक्षाओं का कीर्तिमान	:	रतलाम वर्षावास, सन् 1988 ई
❑ संस्कार क्रान्ति की प्रेरणा	:	कानोड वर्षावास, सन् 1989 ई., बुद्धिजीवियो को संस्कार क्रान्ति हेतु प्रेरणा, '*आगम पुरुष*' की परिकल्पना।
❑ 'आगम पुरुष' (ले डॉ. नेमीचंद)	:	उदयरामसर वर्षावास, सन् 1992 ई , 'आगम पुरुष' का लोकार्पण
❑ युवाचार्य घोषणा	:	जूनागढ़, बीकानेर 7 मार्च सन् 1992 ई , मुनि प्रवर श्री रामलाल जी म सा को युवाचार्य चादर प्रदान।
❑ कुल दीक्षित संत-सतियां	:	संत उनसठ (59), महासतिया तीन सौ दस (310)
❑ संथारा प्रत्याख्यान	:	कार्तिक कृष्णा तृतीया वि सं. 2056, प्रात:काल 9 45
❑ स्वर्गारोहण	:	कार्तिक कृष्णा तृतीया वि सं 2056, रात्रि 10 41

जीवन वृत्त

✍ डॉ. श्री नेमीचन्द जी जैन

उदयपुर रियासत की एक जागीरदारी का छोटा-सा गांव। आबादी कम। हरा-भरापन खूब। सुसंस्कृत/व्यसन मुक्त परिवारों की एक साफ-सुथरी बस्ती। खेत-खलिहान। गौ-गौसाल। ताल-तलाई। कुआं-बावडी। चतुर्दिक् एक सांस्कृतिक वातावरण। परस्पर सौजन्य। एक-दूसरे की हीर-पीर मे अवाही-जवाही। सरल हृदय ग्रामवासी। अपनी आत्मीयता और सौजन्य के लिए विख्यात पोखरना-परिवार, जिसकी प्रामाणिकता धूप की तरह उजली और कमल-दल की तरह निर्लिप्त।

मोड़ीलाल का अपना नाम है। वे सद्गृहस्थ है। खेत-खलिहान के धनी हैं। घरेलू कामकाज मे काम आने वाली चीज-बसत का ब्योपार है। यही अनाज-कपडा, किराना। काम छोटा, किन्तु खरा।

पत्नी श्रृंगारबाई की ग्रामांचल मे अपनी जगह है। वे कम बोलती है, किन्तु सबकी मदद पर आठो याम बनी रहती है। छोटा-सा मकान है। दो बेटे, पांच बेटियां। भरापूरा, हराभरा, धर्मनिष्ठ कुटुम्ब है। कोई कमी नहीं है।

उषा काल है। भोर का तारा दिख पड रहा है। सूरज की किरणे ताल-तलाई के जल से अठखेलिया कर रही हैं। कमल खिलने को हैं। सूरज की किरणो ने उनकी पंखुडियो को प्रभाती सुना दी है। पक्षी चहक रहे है। चारो ओर मंद-सुगंध बयार है।

सूरज ने घर-घर में रोशनी बिखेर दी है। लग रहा है हर घर रोशनी का-खेत बन गया है। रोशनी के खेतो मे कर्तव्य के हल चल रहे है। रात-दिन-रूपी बैल हल खींच रहे है। धरती धन्य है। जगत् जगमगा उठा है।

एक सुबह इधर है, दूसरी पोखरना-परिवार मे हुई है। जेठ सुदी दूज (वि सं. 1977)। पुष्कर मे एक कमल खिलने को है। एक नन्हे अतिथी की प्रतीक्षा है। सब अपलक खडे है। मेहमान तक सूरज की किरणो-का-संगीत पहुंच गया है। एक नन्हा-सा रूपस् शिशु परिवार मे आया है। श्रृंगारबाई की गोद मे मां त्रिशला की गोद बनी है। शिशु छोटा है। सबमे छोटा। किसी ने कहा इसका नाम यह रखो, किसी ने कहा यह-पर **'नाना'** नाम चल पडा।

'नाना' कहने से ऐश्वर्य-बोध तो होता ही है, विविधता का संकेत भी मिलता है।

वह शिशु जो वैविध्य-का-विभु है, इस घर कुटुम्ब में आया है। आंगन का कण-कण हर्ष विभोर है। अणु-अणु नृत्य-मुग्ध है। शिशु कभी रोता है, कभी कोई स्वप्न उसके सुकुमार ओठो पर मृदु कम्पन उत्पन्न कर जाता है। चौडा ललाट। सुगठित देह। गेहुँआ रग। **'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'**-उज्ज्वल भविष्य की अपनी स्निग्धता है, अपना वैभव और संकल्प है। प्रज्ञ शिशु के मुख-मण्डल पर विलक्षण आभा है।

वह रोता कम है, सोता-सोचता अधिक है। पता नहीं उसके भीतर ऐसा क्या है जो बाहर आने को मचल रहा है। छोटा-सा पालना है। ग्राम्यभाषा मे हम जिसे 'गोझी' कहते है, उसमे 'नाना' है। कभी कोई झुला जाता है, कभी कोई। वह टुकुर-पुकुर देखता है और चारो ओर अपनी निर्ग्रन्थ मुस्कराहट बिखेर देता है। उसे कुछ नहीं चाहिये, पर जो मिल जाता है, उससे सब्र-सुकून की आदत उसे है। अपनी मां को उसने कभी तंग किया हो, ऐसा लग नही रहा है-'लाड़' बात अलग है-वह न करे तो शिशु कैसा, शैशव कैसा?

शिशु अब बालक हुआ है। घर से जब-तब निकल भागना और मित्रो मे खेलना। अब उसे अच्छा लगता है। अब उसकी जिन्दगी का महल सात मंजला हो गया है। आठवीं मंजिल बनने को है। किन्तु यह क्या? बसन्त आने से पहले पतझार कैसा? अनभ्र आकाश से वज्रपात क्यो? आठ वर्ष की सुकुमार वय-दुस्सह पितृवियोग।

पतझड मे से वीतरागता का बसन्त करवटे लेने लगा। कहने को चचेरे भाई कन्हैयालाल के साथ एक फर्म बन गई है-'कन्हैयालाल नानालाल' किन्तु चित उसमे रमा नहीं है। वे उन्मन हैं। जिन्दगी मे एक नया मोड धडकने लगा है। पिता की दिवगति मे से उन्हे जीवन-मरण की परिभाषाएं मिल गयी है। नाना को लगा संसार असार है। इसमे सारभूत क्या है? सब क्षणभंगुर है। स्थायी यहा क्या है? पिताजी चले गये। सब कुछ यही रह गया। मैं चला जाऊंगा-सब कुछ यहीं रह जाएगा।

सूरज ऊगेगा, भोर होगी। सूरज डूबेगा, सांझ होगी, चिराग जलेगे, चिराग बुझेगे, किन्तु हम शायद नही होगे। नदी की धार होगी, हम नही होगे। तो क्या ऐसा कोई उपाय है कि जन्म ही न हो? यदि हम जन्म देना बंद क. तो शायद हमारा जन्म लेना भी बंद हो सकता है।

ब्रह्मचर्य की यह मृत्युंजयी परिभाषा उनकी चेतना पर आ बैठी। उन्हे लगा अपने अवचेतन मे कि आदमी को ऐसा कुछ अवश्य खोजना चाहिए जो अमर हो-जो अमरणशील हो। यह अंकुर था, जिसकी झकार तो भीतर हुई, किन्तु तुरन्त सम्बल जिसे नही मिला। वह भीतर-भीतर रोमन्थन करती रही। वैराग्य की जुगाली अनजाने मे बनी रही। काम चलता रहा, पांव उठते गये, मन दुनिया से रूठा रहा।

बहिन मोतीबाई ने पचोला (पांच उपवास) किया। करारा तप था। बहिनोई मीठालाल जी भादसौडा मे रहते थे। परम्परा थी कि पिता के घर से ऐसे शुभ अवसर पर सम्मान-के-लिए कोई जाए और सबकी ओर से उपहार दे।

बडे भाई व्यस्त थे-अन्ततः नानालाल को जाना पडा। मन पीछे, तन आगे। जैसे-तैसे चले। भादसौडा मे मुनिश्री चौथमल जी का चातुर्मास था। प्रवचन चलते थे। नाना बैठ गया। मन नही रमा। एक कोने मे उन्मन सुनता रहा। कहानी के लिए उसमे शुरू से एक विचित्र प्यास है। कहानी-मे-से जो मिलता वह बडे-बडे पौथो से नही मिलता। प्रवचन आया-गया हो गया, किन्तु जब मुनिश्री ने कहा कि कल वे एक अद्‌भुत-अपूर्व कहानी सुनायेगे तो नाना का जाना रुक गया। उसने सोचा-कहानी सुन कर ही चलेगे।

बादल तो अपने हिसाब से बरसता है। नीम मे नीम, ईख से ईख, बबूल मे कांटा, आम मे रस। मुनिश्री चौथमलजी का शब्द-शब्द अमृत घूंट बनता गया।

नींद खुलने लगी। पलको के नीचे बैठा जिद्दी अंधियारा टूटने लगा। भीतर-भीतर एक भोर अंगडाई भरने लगी। उन्हे लगा कि काल-चक्र यदि इसी तरह घूमेगा तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। जीवन तो सार्थक करना ही है। उन्होने काल की विकरालता को समझा। दुखमा/दुखमा-दुखमा को लेकर उनके मन मे गहन उदासी छा गयी। उदासी ने उदासीनता का रूप ले लिया। कालचक्र रोम-रोम मे घूमने लगा। दुखमा मे करुणा सिंहासन से उतर जाएगी और क्रूरता उसकी जगह आ जाएगी-यह देख वे कांप उठे।

दुखमा-दुखमा मे तो क्रूरताएं, युद्ध, संत्रास, संहार, आपाधापी के अलावा कुछ रह ही नहीं जाएगा।

उनका रोआं-रोआ अन्तहीन क्रन्दन मे तड़प उठा। काल चक्र घूम रहा था और वे उसके विरुद्ध वीतरागता की परिकल्पना झूम रहे थे। लग रहा था जैसे कोई वैराग्य इस बालक (अब किशोर) के चरण-स्पर्श की तैयारी मे है। वनस्पतियो का ह्रास, पर्यावरण का अधःपतन-दुखमा-दुखमा का अवरोहण सिहर उठे।

भादसौडा की चिनगारी भदेसर के मार्ग पर चली। घोडे पर बैठे कुछ इस तरह कि मन के घोडे पर भी लगाम लगे। मां से मिलने के लिए मन अकुलाने लगा। सोचने लगे मां यहां होती तो अभी उनके पांव पकड लेता। मैने उनकी व्रताराधना मे कितने विघ्न डाले है-अभागा मै कितना कर्त्तव्य-विमुख बना रहा? सोचते जाते, चलते जाते। भादसौडा और भदेसर के बीच का दस मील का फासला कब कट गया-पता ही नहीं चला। ऊहापोह मे क्षण गल गये। भदेसर की सरहद्दी पर पहुंचते-पहुंचते उन्हें लगा कि कोई प्रकाश उनमे प्रवेश कर रहा है-ऐसा प्रकाश जो भीतर अंधकार को पूरी तरह उलीच देगा और भीतर का सारा कल्मष बुहार फैकेगा। प्रकाश को उन्होने अपनी भुजाओ में कस लिया। लगा वह उनके तीव्र संवाद में है।

अश्व पृष्ठ पर सवार नाना/प्रकाश दोनो स्वाध्याय मे निमग्न है। नाना की आंखों से आंसुओ की धार प्रवाहित है। घोड़ा उनकी वीतरागता को नहीं संभाल सका। वह हिनहिनाने लगा। लगा, वह प्रकाश के स्पर्श से बच नहीं सका है।

आसुओं की कुछ बूंदो ने उसे भी उपकृत किया। नाना ने अपना अंगोछा हाथ में लिया और आंसू पोछे। घोडे को सहलाया। घोड़े को लगा कि नाना की हथेलियो मे कोई आशीर्वाद जनम चुका है। भादसौडा ने इन हथेलियो मे **'आत्मवत् सर्वभूतेषु'** की मृदुता उंडेल दी। नाना घोडे को सहलाते जाते और घोडा आत्म-विह्वल अपनी भाषा मे कृतज्ञ हुआ पडता था।

नानालाल ने सीमान्त पर खुद को संभाला। घोडे को बांधा और स्वयं एक सघन वृक्ष की शीतल छांव मे विश्राम करने लगे। मन-ही-मन उन्हे लगा कि जिस सत्य की खोज मे वे है उसकी पहली सीढी उनकी पगतलियो के नीचे आ गयी है। मंजिल दूर है-कंटकाकीर्ण है, किन्तु उसे पाना तो है ही। कुछ देर विश्राम के बाद वे ननिहाल की ओर चल पडे।

घोड़े से उतरे ही थे कि मां दिखाई दीं। उन्होने यह देखा, न वह, वे बिलख-बिलख कर रोने लगे। अश्रुधार थमती न थी। बोले-'मां, मैंने तुझे बहुत कष्ट दिए हैं। धर्मध्यान में कितनी बाधाएं मैने पैदा की। आज जंगल मे मंगल हो गया। मेरा तो जीवन ही बदल गया है। अब मै कोई बाधा नहीं डालूंगा। जैसा कहेगी, वैसा करूॅगा। साधु-दर्शन के लिए तुझे मैं खुद ले चलूंगा। मुझे भंगुरता का सत्य मिल गया है। यहां इस जगत् मे नित्य कुछ नहीं है। सब कुछ नाशवान् है। मैने कालचक्र को उसकी संपूर्ण तीव्रता मे घूमते देखा है। आरोहण-अवरोहण की इस प्रक्रिया मे मुझे अब और नहीं पिसना है, मुक्त होना है। तू तो मुक्ति मार्ग पर है ही-मैं नहीं हूं-अब हूं, भरपूर हू। मुझे अन्तर्बोध हुआ है।'

मां का आंचल कृतकृत्य हो उठा। उसकी आंखे डबडबा आयी। वह सोचने लगी-यह सब कैसे हुआ? सहस्रो प्रश्न उसकी आखों मे बस्ती बना बैठे। वह नाना के भविष्य के बारे मे चिन्तित हो उठी। उसे लगा जैसे यह छोटा-सा तो है, किन्तु इसके भीतर तो पूरे विश्व का कल्याण स्पन्दित है। क्षण-भर को वह सोच बैठी कि कहीं यह भगवान् महावीर की तरह सब कुछ छोड निर्ग्रन्थता को अंगीकार तो नहीं कर लेगा? अंतरंग से प्रतिध्वनित हुआ-'नाना जन्मा ही इसलिए है कि वह दुनियादारी को 'ना-ना' कहे और निर्ग्रन्थता को 'हां-हा'।' वह तब तक खुद मे डूबी रही, जब तक नाना ने उसे 'मां' कह कर नहीं पुकारा और नहीं बताया कि उसने भादसौडा में क्या-क्या देखा-पाया?

नाना अपने अनुभव सुनाता जाता और मां अचम्भे मे डूबी-भीगी सब कुछ सुनती जाती। काल-पुरुष भविष्य

को वर्तमान किये अपनी खिड़की से सब कुछ देख रहा था। इस तरह भादसौडा क़ी संवत्सरी का प्रभात भदेसर की संवत्सरी की शाम बना। भदेसर से दाता आते ही नानालाल का समग्र जीवन ही बदल गया। वह जहां भी अज्ञान, अन्धविश्वास, रूढि, विवशता, दमन, शोषण देखता उसका हृदय चीत्कार उठता।

उसके विद्रोही मन ने इन सबको अस्वीकार करना शुरू कर दिया। अपने बाल मित्रो को वह पढाने लगा। उन्हे धर्म की बाते बताने लगा। जब कभी वह किसी घाट-कुए पर किसी बूढी महिला को, दुर्बल/विवश मा-बहिन को घडे लाते देखता और उसे लगता कि यह सब उसकी सीमा-सामर्थ्य से बाहर है तो वह खुद ही उसे उठाता और घर तक पहुंचा जाता। इस तरह नाना के भीतर करुणा के अनगिनत स्रोत खुल पड़े। उसका व्यक्तित्व नाना आयामी बनने लगा। वह कदम-दर-कदम पर सोचता और सर्वश्रेष्ठ को आकृति देने-उसे अपनी जीवन मे ढालने का प्रयत्न करता।

कालचक्र कहां रुकता है? समय का रथ अनवरत है। नानालाल के भीतर तूफ़ान उठते, शान्त होते, किन्तु अब वह स्वर्ण-क्षण उसके द्वार खटखटाने लगा था जो उसके जीवन का सत्य बनने के लिए उत्कण्ठित था। उसे पता चला कि युवाचार्य श्रीगणेशलाल जी कोटा मे है। उसे लगा कि अब एक समय का प्रमाद भी नही करना है। जो क्षण दहलीज पर आ खड़ा हुआ है, उसका उपयोग तो करना ही है। संकल्प के सुदृढ़ होते ही वह कोटा चल दिया। कोटा मे युवाचार्यश्री को जैसे ही देखा उसे लगा कि जिस गुरु की खोज मे वह था, वह ठीक सामने है। इससे पूर्व वह कई साधुओं से मिला था, किन्तु किसी ने उसकी कसौटियो पर सही होने की सूचना नहीं दी।

कोटा से पहले उसका परिचय ब्यावर/कपासन में भी युवाचार्य श्री से हुआ था, किन्तु आज जिस सुदृढ मनोभूमिका पर युवाचार्यश्री व्यक्तित्व आरूढ हुआ था-वह रोमांचक मधुर, अद्‌भुत-विलक्षण था। नानालाल ने कहा-'भगवन्, शिष्य उपस्थित है। इसे अनुगृहीत कीजिए।'

युवाचार्यश्री ने मुस्कराते हुए कहा-'साधु बनना सरल नही है। यह बच्चों का खेल नही है। पहले साधुत्व को समझो। ज्ञान-तप सीखो। जब तक साधुचर्या को ठीक से जानोगे नहीं, यह मार्ग श्रेयस्कर नही होगा।'

युवाचार्यश्री की इस अनासक्ति और निष्कामता पर वह मुग्ध हो गया। उसके सामने और-और साधुओ की मुख-मुद्राएं आ खडी हुईं।

एक कह रहा है-'बनो साधु, आराम से जिन्दगी बसर होगी।' दूसरे का कथन है-'चेला बन जाओ, फिर सब सिखा दूंगा।' तीसरे का सुर है-'शिष्य बन जाओ, सम्प्रदाय का प्रमुख बनते देर नहीं लगेगी।' चौथे के शब्द हैं-'जैसा संत मै हूं, वैसा तुझे कहीं नहीं मिलेगा-हम संयम का दृढता से पालन करते हैं।'

नानालाल को तमाम उत्तरो मे कोई समाधान नहीं मिला। सत्य या सम्यक्त्व यदि कहीं मिला तो युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी की वाणी मे। वे कह रहे है-'पहले गुरु को परखो, उसके बाद दीक्षा लो। दीक्षा के बाद तो अपनी आत्मा को तप की भट्टी पर चढ़ाना ही है। अभी तो आये हो। रुको, देखो। मुझे भी देखने का अवसर दो।'

नानालाल श्रद्धाभिभूत हो उठे। उन्हे लगा कि मै जन्म-जन्मान्तर से जिस सद्‌गुरु की खोज मे था वह मुझे मिल गया। उन्होने मन ही मन उन्हे अपना गुरु स्वीकार कर लिया। गुरु को तो परख लिया, किन्तु अभी खुद को तो इम्तहान देना था। जीवन का लगभग उन्नीसवां बसन्त चल रहा था। सत्य की खोज के लिए मन मे घनीभूत छटपटाहट थी। कपासन के तालाब के किनारे आम्र वृक्षो के कुज के मध्य एक विशाल आम्रवृक्ष के नीचे युवाचार्य गणेशीलाल ने दीक्षा की महिमा और उसके स्वरूप पर मार्मिक प्रवचन देते हुए वैरागी नानालाल को मुनिश्री

नानालाल के मनोज्ञ रूप में कायाकल्पित किया। नानालाल जी युवाचार्यश्री का प्रथम कर स्पर्श पाकर कृत्य-कृत्य हो उठे। उनके मन-मस्तिष्क मे गूंजने लगा-'दीक्षा का अर्थ है अचचल चित्त से मुक्ति-के-मार्ग पर सतत अप्रमत्त गतिशील होना। दीक्षा की सार्थकता ही इसमे है कि वह साधना-पथ का दीपक बने और जहां भी तमस् हो वहा एक सुदृढ़ दीपस्तम्भ बनाये।'

बारह भावना की यह भावना उनके रोम-रोम पर नृत्य करने लगी-''**ज्ञान-दीप तप-तैल भर, घर सोधै भ्रम छोर। या विधि बिन निकसै नहीं पैठे पूरब चोर।**''

इसके बाद वे स्वाध्याय और तप से अपना जीवन मांजने मे लग गए। उनका दीक्षोपरान्त जीवन अध्ययन-मनन में निर्विघ्न बीतने लगा। व्याकरण, काव्य, योग, न्याय, आगम, कथा, कोश, छन्द, अलंकार, भाषा आदि सभी ज्ञान-क्षेत्रों का अध्ययन उन्होंने किया। संस्कृत, प्राकृत, राजस्थानी, गुजराती, हिन्दी आदि भाषाओ का गहन अभ्यास किया।

मंथन के बाद रोमन्थन की ओर उनका चित्त दौडा। रोमन्थन स्वाध्याय की एक विशिष्ट प्रक्रिया है। पढना और पढ कर जुगाली करना-उसे अपनी चेतना की मुख्य धारा में अटूट/समग्र डालना रोमन्थन है। रोमन्थन में ज्ञान की अभीक्षणता/बारम्बारता होती है ताकि विषय की गहराईयो मे उतरा जाए और उसके किसी भी टापू को अजाना न रहने दिया जाए। वाचन के बाद अधीत विषय का पाचन जरूरी होता है। मुनि श्री नानालाल जी के दीक्षोपरान्त जीवन के मुख्यत: तीन पक्ष थे-गुरु सेवा, संयम-साधना, गहन अध्ययन।

उन्होने धर्म के बहुविध पक्षों का तलस्पर्शी अध्ययन किया, उसके दार्शनिक पहलू देखे। विज्ञान और धर्म के विभिन्न संदर्भों का तुलनात्मक मनन-चिन्तन किया। देखा कि धर्म और विज्ञान परस्पर पूरक है, दोनो मे कोई टकराहट नही है। अब तक लोग विज्ञान को धर्म-विरोधी मानते थे। विज्ञान (साइंस) का झोका पश्चिम से आया था, इसलिए लोगों की उसके प्रति सहज अनास्था थी। मुनिश्री ने इस अन्तर्विरोध को समझा और समाज को एक तर्कसंगत जीवन-पद्धति दी।

उन्होंने कहा-'धर्म को किंचित् वैज्ञानिक और विज्ञान को किंचित् आध्यात्मिक होने की जरूरत है। दोनो एक-दूसरे के विरोधी नहीं, पूरक अस्तित्व है।' उनके इस कृतित्व ने धर्म मे एक अपूर्व यथार्थपरकता को जन्म दिया। अन्धविश्वासो और अंधी परम्पराओ के पांव उखडे। जहा लोग ज्योतिष/मुहूर्त आदि के चक्कर मे आ जाते थे-नानालाल जी महाराज के कृतित्व ने उन्हे यथार्थ की जमीन पर ला खडा किया। उन्होने जैन धर्म के निर्मलतम रूप को लोगो के सामने रखा। अधिकतर लोग कर्मकाण्ड मे फसे/धंसे थे।

आचार्यश्री हुक्मीचंद जी, शिवलाल जी, उदयसागर जी, चौथमल जी, श्रीलाल जी, जवाहरलाल जी, गणेशीलाल जी इन सप्तर्षियो से जो बहुमूल्य विरासत मुनिश्री नानालाल जी को मिली उसके महायोग को उन्होने एक महान् योगी की तरह सिर्फ जैन समाज को ही नहीं वरन् अखिल मानव-समाज को उपलब्ध कराया।

वे एक-अकेले नहीं है, बल्कि वे 'हु' से लेकर 'ग' तक के 'ग्राड टोटल' हैं। उनकी चेतना पर क्रियोद्धारक आचार्य हुक्मीचंद की निर्मलीकरण-क्रान्ति सदैव बनी रही। उन्होने शिथिलाचार और प्रमाद को धर्म के क्षेत्र मे निषिद्ध रखा। मुनिश्री अमरचंद जी का सुई भूलना (कानवन-1963) और फिर लौट कर उसे सबधित गृहस्थ को लौटाना उनकी संघ-साधु-चर्या में शिथिलाचार/प्रमाद के न होने का ज्वलन्त प्रमाण है।

वे मामूली बातों पर इतना अधिक बल देते थे कि किसी बडी घटना की आशंका होती ही नहीं थी। आज भी

उनके संघ मे शिथिलाचार, सुस्ती, प्रमाद आदि के लिए रेशे-भर भी जगह नहीं है। यदि हम गौर से देखते हैं तो आचार्य नानालाल जी के व्यक्तित्व मे हमें साधुमार्गी परम्परा की समग्र शुद्ध चेतना का एक मीजान सहज ही मिल जाता है। साधुमार्ग मे जो आचार-विचारगत उतार-चढाव आए उनकी एक संक्षिप्त रोमांचक सत्यकथा हमे आचार्य नानालाल जी के व्यक्तित्व मे सरलता से मिलती है।

आचार्य हुक्मीचंद जी को यदि हम साधुमार्गी-की-धुरी निरूपित करे तो पायेंगे कि उन्होने आगम-सम्मत आचार-धर्म की पुनः संस्थापना की और साधु-सस्था का पुनर्निर्माण किया। यह बहुत बड़ा काम था। जो खालिस है, उसे बचाए रखना बहुत दु:साध्य कार्य है, किन्तु हुक्मीचंद जी के व्यक्तित्व ने कठोरता से काम लेकर धर्म के मूल स्वरूप की रक्षा की। संयम और साधना की यह कठोरता हमे आचार्य श्री नानालाल जी मे अक्षरशः दिखाई देती है। केथोलिसिटी अर्थात् आचार की शुद्धता, अप्रमत्तता और मर्यादाओ का दृढ़ता से परिपालन आचार्य श्री नानालाल जी को आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी से दाय में मिला।

आचार्य श्री शिवलालजी ने ज्ञान और चारित्र के मणि-कांचन योग को महत्त्व दिया। उन्होने कभी भी आचार-च्युत साधुओं को अपने संघ मे स्वीकार नहीं किया। आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी की परम्परा को वे शत-प्रतिशत निभाते रहे। आचार्य श्री उदयसागरजी का बोध-वाक्य था-संयम पहले, विद्वत्ता तदनन्तर। यह भी आचार्य श्री नानालाल जी को रिक्थ मे मिला। क्रियोद्धार का जो काम आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी ने शुरू किया था संयम के पुनरुद्धार का वह काम आचार्य श्री चौथमलजी तक आकर संपूर्ण हुआ।

आचार्य श्री चौथमल जी ने साफ शब्दों मे कहा-साधुमार्ग को चाहे जितने संकट या आपदाएं झेलनी पडे, किन्तु संयम की रेशे-भर भी क्षति न हो। आचार्य चौथमलजी ने समाज के आन्तरिक गठन और विकास पर बल दिया और एक सशक्त समाज के संस्थापन मे ऐतिहासिक भूमिका का निर्वाह किया। वे प्रतिक्षण शिथिलता और प्रमाद के लिए वज्र-की-भांति कठोर बने रहे। वे इस बात से तो संतुष्ट रहे कि शिष्यो की संख्या कम हो, किन्तु उन्होने शिथिलाचार का कोई सन्धि-द्वार खुले, इसे स्वप्न में भी स्वीकार नहीं किया। आचार्य श्रीलालजी ने अहिंसा के धुंधलाते स्वरूप को धूप की तरह स्पष्ट किया। उन्होने अहिसा को सर्वोपरि माना और उसकी छाया मे जीवदया के स्वस्थ स्वरूप का प्रतिपादन किया।

मेमने की घटना (1944 ई) मे हम जीवदया के इस परिपक्व रूप का अनुभव कर सकते है। स्पष्टतः आचार्य श्री नानालाल जी ने अपने पूर्वाचार्यों के आदर्शों और सिद्धान्तो को अक्षरशः जिया। उन्होने उसमे जोड़ा ही, कम तिल भर भी नहीं किया।

आचार्य जवाहरलाल जी ने धर्म को बहुआयामी बनाया। उन्होने राष्ट्र और धर्म के अलग होते रूपो को अलग होने से रोका। उनमे अदम्य साहस, अखण्ड मानवता/मानवीयता, असीम मनोबल, उदार दृष्टि, राष्ट्रीय चिन्तन, स्वदेशी के प्रति उत्कृष्ट आस्था और शिथिलाचार के प्रति विद्रोह कूट-कूट कर भरे थे। उन्होने बुराइयो, शिथिलताओ और दुर्बलताओं से कभी कोई समझौता नहीं किया। उन्होने पल भर को भी ऐसा कुछ नहीं किया जिससे जैन धर्म/दर्शन की मौलिक छवि धूमिल हो। उनके व्यक्तित्व मे जैन धर्म को एक चिर प्रतीक्षित बहुमुखीनता मिली।

उनका सोलह सूत्री थांदला घोषणा-पत्र (1908) आज भी जीवन्त है। जीवदया, अछूतोद्धार, विधवाओ की दुर्दशा मे सुधार आज भी अपनी स्वस्थ/विस्मृत आकृति ढूंढ रहे है। यदि हम उनके कृतित्व का कोई जीता-जागता रूप देखना चाहते है तो वह हमे आचार्य नानालाल जी में दिखायी दे सकता है। 'तीर्थकर' के 'साधुमार्ग विशेषांक'

के पृष्ठ 202 पर प्रकाशित ये पंक्तिया उनके व्यक्तित्व की एक संक्षिप्त/सशक्त झलक देती है-

1942 मे उन्हे लकवा हुआ। 18 जून 1942 मे उनका जो क्षमापत्र प्रकाशित हुआ। वह उनकी आन्तरिक निर्मलता और शिथिलाचार के विरुद्ध जीवन-भर जूझी गयी लडाई का जीवन्त प्रतीक है। 10 जुलाई को यह सूरज डूब गया-किन्तु क्या हम माने कि वह डूब गया? क्या सूरज कभी डूबता है? जो सूरज रात-भर किसी और मुल्क मे रोशनी देने यात्रा पर निकल गया था वह पुनः आचार्य गणेशीलाल जी और नानालाल जी के रूप मे क्षितिज पर आ गया और उसने सारे समाज को पुनः अभिनव प्रकाश से जगमगा दिया।

जब हम आचार्य गणेशीलाल जी के महान् व्यक्तित्व की समीक्षा करते है तब पाते है कि वे प्राचीनता और नूतनता के बीच एक अपूर्व सेतुबन्ध थे। उन्होने नवीनता के प्रति कभी कोई अप्रसन्नता प्रकट नही की किन्तु प्राचीनता के गौरव को उन्होंने एक क्षण को भी विस्मृत नहीं किया। दोनो से निर्मल सृजनधर्मिता (क्रिएटिविटी) को लिया और समाज को नव्य स्वरूप प्रदान करने मे कोई कसर नहीं रखी।

आचार्य नानालाल जी का जीवन इन सात धन-चिन्हो की गौरव गाथा है-

हु+शि+उ+चौ+श्री+ज+ग=ना

इस समीकरण को ध्यान से देखना चाहिए। यदि हम इतिहास का सिन्धु-मन्थन करेगे तो पता चलेगा कि आचार्य नानालाल जी का व्यक्तित्व एक ऐसा जीवन्त त्रिभुज है जिसे सात शिल्पियो की चूना-माटी ने घडा है। समता-दर्शन, समीक्षण-ध्यान और धर्मपाल-अभियान का त्रिभुज साधुमार्ग का अनुपम अवदान है। हम जानते है कि आचार्य नानालाल जी को यह सब अपने पूर्वाचार्यों से मिला, किन्तु यह उनकी अपनी पारिवारिक/सांस्कारिक विरासत भी है।

करौली से बनबना ग्राम तक दलितोद्धार का जो शंखनाद हुआ, वह साधुमार्ग की मानवीय उपलब्धियो का सर्वोच्च शिखर है। समता-दर्शन सामाजिक और आन्तरिक/आध्यात्मिक क्रान्ति का एक ऐसा सुदृढ आधार है जो पूरे विश्व को शान्ति और अयुद्ध की निर्मल भूमिका प्रदान कर सकता है। सिर्फ मीडिया के युद्ध मे हारते चलने के कारण इस त्रिभुज को भले ही सीमित कर लिया गया हो वरन् इसका सार्वभौम स्वरूप अखिल मानवता के लिए अत्यन्त कल्याणकारी सिद्ध हो सकता है।

30 सितंबर 1962 की सुबह एक ऐसी सुबह है जिसकी रोशनी कभी कम नहीं होगी। मुनिश्री नानालाल जी को युवाचार्य की चादर ओढ़ाई जा रही है। चारों ओर गगनचुम्बी जयघोष है। दांता से उनकी पूज्या माता भी आयी है। ये वही श्रृंगारबाई है जिनके चरणो मे लुढ़क कर उन्नीस वर्षीय तरुण नाना भदेसर मे फफक-फफक कर रोया था। संवत्सरी की वह शाम पूरी दुनिया की एक अविस्मरणीय सुबह बनी है। उस दिन के आंसुओ ने ही बलाइयो के आंसू पोछे है। आंखे बंद कीजिए और इन दो दृश्यो को देखिये।

एक : नानालाल पूज्या मां के चरणो मे झुके हुए है और अपने अपराधो के प्रति क्षमायाचना कर रहे है। मा ने उन्हें उठा कर अपनी छाती से लगा लिया है। मां की यह छाती विश्व की किसी भी माता की पवित्र थाती है। उन्होने नाना को क्षमा तो किया है, उसके लिए वैराग्य की दिशाएं उन्मुक्त कर दीं। नाना का नाना आयामी व्यक्तित्व अपना पूज्या मां का पारस-स्पर्श पाकर खिल उठा।

दो : यह दृश्य उदयपुर का है। मुनिश्री नानालाल जी को युवाचार्य पद की चादर ओढ़ा दी गई है। माता श्रृगार

बाई आचार्य वर गणेशीलाल जी के सामने वन्दना की मुद्रा मे उपस्थित है। आचार्यवर पूछ रहे है-'बेटे के दर्शन किए या नही?'

'अब वह छोटा नहीं रहा है।'

मां के लिए युवाचार्य बेटा भी है, बेटा नहीं भी है। बेटा अतीत मे कहीं खो गया है। वह भदेसर मे अपनी ननिहाल मे आज भी है। सामने बेटा नहीं है, एक संघ का युवाचार्य है। पूज्य है। भदेसर मे मां के चरणो मे एक बेटे का मस्तक झुका था, आज एक मां का मस्तक एक जैन साधु के चरणों मे झुका है। बेटा अब कहां है? बेटे मे से एक युवाचार्य प्रकट हुआ है। मां रोमांचित है। वह अपने मातृत्व को लोरियां गाकर सुला रही है, किन्तु वह सो नहीं पा रहा है।

वह सोच रही है। नाना से कुछ कहे, किन्तु कुछ कह नहीं पा रही है। उसकी आंखो मे अश्रुधार है और देह पर शब्दातीत पुलक। मातृत्व की लिपि कौन समझेगा? यह मोह-माया की भाषा नही है-आत्मोन्नयन की भाषा है। श्रृंगारबाई ने नाना को जन्म देकर पूरी वसुन्धरा का श्रृंगार किया है। उसने इसे जन्म देकर एक ऐसे शीतल निर्झर को जन्म दिया है जो पूरे विश्व को निर्मलताओ से, करुणा से, कान्ति से, क्रान्ति से, शान्ति से, अयुद्ध से, अहिसा से अभिषिक्त करने की क्षमता रखता है।

श्रृंगारबाई का सार्वभौम मातृत्व कह रहा है-'देखना बेटे, मेरे दूध की चादर पर कोई दाग न आए।' यह मात्र दाता के मातृत्व की पुकार नहीं है, सार्वभौम मातृत्व की मर्मस्पर्शी इंगिति है, जिसने आचार्य श्री नानालाल जी मे शुभाकृति ग्रहण की है। जो अभियान/अनुष्ठान आचार्य हुक्मीचंद जी ने शुरू किया था, क्या श्रृंगारबाई के इस वाक्य मे उसी देशना की पुनरावृत्ति नहीं है? आज जबकि जैन साधुत्व की धौली चादर पर असंख्य दाग उभर रहे है, कोई भी गौरव के साथ कह सकता है कि साधुमार्ग की धवल, शुभ्र चादर अभी पूरी तरह निष्कलंक है? क्या इस निष्कलंकता का श्रेय आचार्य श्री नानालाल जी को नही है?

> जो आचार्य जिनेन्द्र के मार्ग का सम्यग् रूप से प्रचार करते है वे तीर्थकर के समान हैं किन्तु जो आचार्य स्वय जिनाज्ञा का पालन नही करते और दूसरो से नही करवाते वे सत् पुरुषो की श्रेणी मे नही होकर कापुरुष कायर है।
>
> -गच्छाचार पइण्णा

चातुर्मास

कुल : 60, साधु-कालीन-23, आचार्य पदोपरान्त-37,
साधुकाल के चातुर्मास-राजस्थान-19, दिल्ली-2, मध्यप्रदेश-2, प्रथम : फलौदी (राजस्थान), तेईसवां-उदयपुर (राजस्थान)

1.	फलौदी (राजस्थान)	1940 ई./वि सं 1997
2	बीकानेर (राजस्थान)	1941 ई./वि सं 1998
3.	ब्यावर (राजस्थान)	1942 ई./वि सं 1999
4.	बीकानेर (राजस्थान)	1943 ई./वि सं 2000
5.	सरदार शहर (राजस्थान)	1944 ई./वि.सं 2001
6	बगड़ी (राजस्थान)	1945 ई./वि सं 2002
7.	ब्यावर (राजस्थान)	1946 ई./वि स 2003
8.	बडीसादडी (राजस्थान)	1947 ई./वि सं 2004
9	रतलाम (मध्यप्रदेश)	1948 ई./वि सं 2005
10	जयपुर (राजस्थान)	1949 ई./वि सं 2006
11.	दिल्ली	1950 ई./वि सं 2007
12	दिल्ली	1951 ई./वि स. 2008
13.	उदयपुर (राजस्थान)	1952 ई./वि सं 2009
14.	जोधपुर (राजस्थान)	1953 ई./वि सं 2010
15	कुचेरा (राजस्थान)	1954 ई./वि सं 2011
16.	बीकानेर (राजस्थान)	1955 ई./वि सं 2012
17	गोगोलाव (राजस्थान)	1956 ई./वि सं 2013
18.	कानोड (राजस्थान)	1957 ई./वि सं 2014
19	जावरा (मध्यप्रदेश)	1958 ई./वि सं 2015
20.	उदयपुर (राजस्थान)	1959 ई./वि सं 2016
21.	उदयपुर (राजस्थान)	1960 ई./वि सं 2017
22.	उदयपुर (राजस्थान)	1961 ई./वि सं 2018
23	उदयपुर (राजस्थान)	1962 ई./वि स 2019

❖ ❖ ❖

आचार्य पदोपरान्त चातुर्मास

कुल-37, 1963 ई.-1999 ई., (राजस्थान)-23, (मध्यप्रदेश)-8, (महाराष्ट्र)-4, (गुजरात)-2, प्रथम-रतलाम (मध्यप्रदेश), सैतीसवां-उदयपुर (राजस्थान)

1	रतलाम (मध्यप्रदेश)	1963 ई./वि.सं 2020
2	इन्दौर (मध्यप्रदेश)	1964 ई./वि सं 2021
3	रायपुर (मध्यप्रदेश)	1965 ई./वि सं 2022
4	राजनांदगांव (मध्यप्रदेश)	1966 ई./वि सं 2023
5.	दुर्ग (मध्यप्रदेश)	1967 ई./वि.स 2024
6	अमरावती (महाराष्ट्र)	1968 ई./वि सं 2025
7	मन्दसौर (मध्यप्रदेश)	1969 ई./वि सं 2026
8	बडीसादडी (राजस्थान)	1970 ई./वि.सं. 2027
9.	ब्यावर (राजस्थान)	1971 ई./वि सं 2028
10.	जयपुर (राजस्थान)	1972 ई./वि.स. 2029
11	बीकानेर (राजस्थान)	1973 ई./वि सं. 2030
12	सरदारशहर (राजस्थान)	1974 ई./वि सं 2031
13	देशनोक (राजस्थान)	1975 ई./वि स. 2032
14	नोखामण्डी (राजस्थान)	1976 ई./वि सं 2033
15.	गंगाशहर-भीनासर (राजस्थान)	1977 ई./वि सं. 2034
16	जोधपुर (राजस्थान)	1978 ई./वि सं. 2035
17	अजमेर (राजस्थान)	1979 ई./वि.सं 2036
18	राणावास (राजस्थान)	1980 ई./वि स 2037
19	उदयपुर (राजस्थान)	1981 ई./वि सं 2038
20	अहमदाबाद (गुजरात)	1982 ई./वि स 2039
21.	भावनगर (गुजरात)	1983 ई./वि सं. 2040
22	बोरीवली-मुम्बई (महाराष्ट्र)	1984 ई./वि सं. 2041
23	घाटकोपर-मुम्बई (महाराष्ट्र)	1985 ई./वि सं 2042

24.	जलगांव (महाराष्ट्र)	1986 ई./वि सं 2043
25.	इन्दौर (मध्यप्रदेश)	1987 ई./वि सं 2044
26.	रतलाम (मध्यप्रदेश)	1988 ई./वि.सं. 2045
27.	कानोड़ (राजस्थान)	1989 ई./वि सं 2046
28.	चित्तौड़गढ़ (राजस्थान)	1990 ई./वि सं. 2047
29	पीपलिया कलां (राजस्थान)	1991 ई./वि.सं 2048
30	उदयरामसर (राजस्थान)	1992 ई./वि सं 2049
31	देशनोक (राजस्थान)	1993 ई./वि सं. 2050
32.	नोखामण्डी (राजस्थान)	1994 ई./वि सं. 2051
33.	बीकानेर (राजस्थान)	1995 ई./वि सं. 2052
34.	गंगाशहर- भीनासर (राजस्थान)	1996 ई./वि.सं 2053
35	ब्यावर (राजस्थान)	1997 ई./वि.सं. 2054
36	उदयपुर (राजस्थान)	1998 ई./वि.सं. 2055
37.	उदयपुर (राजस्थान)	1999 ई./वि स 2056

नमस्कार-मस्तक, दो हाथो और दो पैरों से ही नही होना चाहिए-इन अगो के साथ मन भी नमे, भावना भी नमे तथा श्रद्धा और आत्मा भी नमे, तब सम्पूर्ण आत्मा का नमस्कार होता है और वास्तव मे नमस्कार आत्मा को ही करना है।

-आचार्य श्री नानेश

1. **फलौदी-1940 :** साधु जीवन का प्रथम वर्षायोग, तितिक्षा/क्षमाशीलता का सघन अभ्यास, संयम-साधना, अप्रमत्त-स्वाध्याय, अ-क्रोध तप।

2. **बीकानेर-1941 :** आत्म-शोधन, सेवा, ज्ञान, स्वास्थ्य की साधना, वयोवृद्ध संतो की सेवा-परिचर्या, शरीर गौण, साधना मुख्य, धृति, विनयशीलता और सहिष्णुता की मौन उपासना।

3. **ब्यावर-1942 :** अध्ययन के साथ प्रवचन, दृढता और अविचलता का विकास।

4. **बीकानेर-1943 :** 'सिद्धान्त कौमुदी' का अध्ययन, प्रज्ञ/मनीषी सतों का सत्संग।

5. **सरदार शहर-1944 :** सिद्धान्त और आचरण की दूरियां अनवरत कम।

6. **बगड़ी-1945 :** कथनी-करनी मे एकरूपता का विलक्षण विकास।

7. **ब्यावर-1946 :** गुरु सेवा, अध्ययन, साधना।

8. **बड़ीसादड़ी-1947 :** गुरु-सेवा, संयम, स्वाध्याय, संत-सत्संग।

9. **रतलाम-1948 :** साधु-मर्यादा कसौटी पर, फंसी हुई भेड को सहारा, चातुर्मास समाप्ति पर इन्दौर मे सर्वोदयी संत विनोबा भावे से भेट, विनोबाजी ने कहा-'आप सोचते होगे कि जैनियो की संख्या बहुत कम है, किन्तु मेरी धारणा के अनुसार जैन नाम धराने वालो की संख्या भले ही कम हो लेकिन जैन धर्म के मौलिक सिद्धान्त दूध-मिश्री की तरह दुनिया की सभी विचार-धाराओ मे घुलते जा रहे हैं।'

10. **जयपुर-1949 :** न्याय (तर्कशास्त्र) का अध्ययन, सिद्धान्त और व्यवहार मे दृढता, मूर्च्छा की उत्तरोत्तर अनुपस्थिति, जयपुर-हिण्डौन मार्ग पर करौली के आसपास 'धर्मपाल प्रवृत्ति' का बीजांकुरण।

11. **दिल्ली-1950 :** गुरुदेव का सघन सान्निध्य, रुग्णता, जिह्वाजय।

12. **दिल्ली-1951 :** घाणेराव/सादडी मे साधु सम्मेलन का सूत्र-संचालन, सब्जी मण्डी मे वर्षावास, पूर्ण स्वास्थ्य-लाभ।

13. **उदयपुर-1952 :** इंजेक्शन लगाना सीखा ताकि संकटापन्न स्थिति मे गुरुदेव की परिचर्चा मे कोई कमी न हो, गुरुदेव का अग्लान वैयावृत्य।

14. **जोधपुर-1953 :** गुरु सेवा, अग्लान सेवाशुश्रूषा, अनन्य निष्ठा, अविचल आस्था, ज्ञान-ध्यान।

15. **कुचेरा-1954 :** गुरुदेव को सहयोग।

16. **बीकानेर-1955 :** आचार्यश्री की सेवा शुश्रूषा।

17. **गोगोलाव-1956 :** गुरुदेव का सान्निध्य, उनकी सन्निष्ठ सेवा, स्वाध्याय।

18. कानोड़-1957 : गुरुदेव को सहयोग, सेवा शुश्रूषा, साधना, अध्ययन।

19. जावरा-1958 : गुरुदेव का सान्निध्य, उनकी अनन्य शुश्रूषा, स्वाध्याय।

20. उदयपुर-1959 : निष्काम चित्त से गुरु का वैयावृत्य, अहर्निश जागृत साधना।

21. उदयपुर-1960 : गुरु की सेवा-शुश्रूषा, संयम-साधना, स्वाध्याय, मनन-चिन्तन।

22. उदयपुर-1961 : गुरुदेव द्वारा चतुर्विध संघ की सुव्यवस्था का उत्तरदायित्व प्रदान, 18 अप्रैल 1961/अक्षय तृतीया को सार्वजनिक घोषणा, निष्काम मनीषा और अविचल आस्था के धनी पर श्रमण संस्कृति की रक्षा और उसके अभिभावन की गहन जिम्मेदारी, संयम-साधना के साथ सामाजिक का मौन उद्‌भव।

23. उदयपुर-1962 : आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी की पाट-परम्परा का पुनरुज्जीवन, 22 सितम्बर 1962 को 'युवाचार्य' घोषित, 30 सितंबर को युवाचार्य पद की चादर से अलंकृत, चादर-प्रदान समारोह में पूज्या माता श्रीमती श्रृंगारी बाई की रोमांचक उपस्थिति, उनका यह अजर-अमर वाक्य- 'अन्दाता,ई घणां भोला टाबर हे, यां पर अतरो बोझो मती नाको' (प्रभो, यह बहुत भोला-भाला लडका है, इस पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी न डालिये)। चादर की गौरव-गरिमा को स्पष्ट करते हुए युवाचार्य ने कहा-'यह चादर एक शुभ भावना की प्रतीक है। शुभ भावनाए उज्ज्वल होती है और यह चादर भी उज्ज्वल/खादी की हो कर सादी है। सादगी स्वतन्त्रता की द्योतक है, पूज्य गुरुदेव फरमाया करते है कि सादगी स्वतंत्रता है और फैशन फासी, अतः भारत को इस सादगी की ओर विशिष्ट ध्यान देना चाहिए, विलक्षण नाडी-ज्ञान, 9 जनवरी 1963 को गुरुदेव की नाड़ी मे आशंकित परिवर्तन, संथारा पच्चक्खान का आयोजन, आचार्यश्री गणेशीलाल जी का महाप्रयाण, 'आचार्य-पद' पर प्रतिष्ठित, प्रथम शिष्य सेवन्तमुनि जी, अन्धविश्वास की मिथ्या/ अन्धी परम्पराओ का उन्मूलन।

24. रतलाम-1963 : जावद, जावरा और रतलाम संघो के बीच समरस संबंधो की स्थापना, स्वरूप-बोध के प्रति विशेष जागृति, ऐतिहासिक सामाजिक क्रान्ति का सूत्रपात, गुजराती बलाई समाज के मुखिया सीतारामजी बलाई से भेट, 'धर्मपाल-प्रवत्ति' का श्रीगणेश, गुजराती बलाइयो के छोटे-छोटे गांवो मे सघन विहार, लगभग 1,500 बलाई कुटुम्बो के लगभग 10,000 व्यक्तियो के जीवन मे सामाजिक क्रान्ति की प्रखर किरण का प्रवेश, हृदय-परिवर्तन की जीवन्त मिसाल, आचार्यश्री ने कहा-'आप मांस, मदिरा, शिकार, वेश्यागमन, आत्महत्या आदि दुर्व्यसनो का प्राणपण से पूर्णरूपेण त्याग करे तो उन्नति हो सकती है', बलाई जैन बने और उन्होने उनका उपदेश मान कर प्रगति की, आज उनकी संख्या लगभग एक लाख है, सब सुसमृद्ध और प्रसन्न हैं।'

25. इन्दौर-1964 : रचनात्मक/अहिंसक क्रान्ति के प्रवर्तक संत का अभिनव रूप, अविस्मरणीय वाक्य-मणि- 'किसी भी बात को हमे मान-सम्मान का विषय नहीं बनाना चाहिए।'

26. रायपुर-1965 : आध्यात्मिक उत्क्रान्ति और आत्म-शोधन का चातुर्मास।

27. राजनांदगांव-1966 : पांच मास का चातुर्मास, आत्म-शोधन, सामाजिक क्रान्ति का सातव्य, 'तीर्थ' शव्द की तर्कसंगत व्याख्या, कहा-'असली तीर्थ चार है-साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका।'

28. दुर्ग-1967 : श्रावकीय जिज्ञासाओ के सटीक समाधान, आत्म जागृति, सामाजिक क्रान्ति की निरन्तरता कायम।

29. अमरावती-1938 : सम्यक्त्व-प्रतिपादन, 'उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य' विषय पर गूढ़ प्रवचन।

30. मन्दसौर-1969 : सद्भावना का प्रसार, नये परिवेश का सृजन।

31. बड़ी सादड़ी-1970 : दीक्षाएं, व्यसन मुक्ति, सामाजिक क्रान्ति की उन्नीस प्रतिज्ञाओ के अमल के लिए सतरह गांवो के प्रतिनिधियो का चयन, महत्त्वपूर्ण प्रतिज्ञाएं है क्रं 2, 4, 5, 13 और 17, विवाह मे कोई सौदेबाजी नही होगी, मृत्यु के बाद एक मास से अधिक शोक नही रखा जाएगा, धर्मस्थान मे सादी वेशभूषा मे जाएंगे-प्रवचन मे मौन रखेंगे, विवाह आदि अवसरो पर बैडबाजो आदि पर अनावश्यक खर्च नही करेगे, आध्यात्मिक आहार हेतु धार्मिक पुस्तको का यथाशक्ति पठन-पाठन करेगे।

32. ब्यावर-1971 : विघटन समाप्त, एकता स्थापित, 'ध्वनि विस्तारक यन्त्र' के बारे मे विज्ञान के ठोस संदर्भो मे जानकारी, भौतिकी के प्रख्यात विद्वान् डॉ दौलतसिह जी कोठारी की सहमति, अपने निश्चय पर बरकरार।

33. जयपुर-1972 : समता दर्शन का शंखनाद।

34. बीकानेर-1973 : आध्यात्मिक क्रान्ति का पुनरीक्षण, आत्म-शोधन, मुमुक्षुओं को दिशादृष्टि।

35. सरदार शहर-1974 : एकता की ओर नया कदम, कहा-'अगर संवत्सरी मनाने के बारे मे संपूर्ण जैन समाज का एक मत बन सके तो बडी उपलब्धि हो सकेगी, सावत्सरिक एकता की दृष्टि से अगर हमे अपनी परम्परा भी छोडनी पडे तो मै किसी पूर्वाग्रह को आडे नही आने दूंगा।'

36. देशनोक-1975 : बुद्धिजीवियो को प्रेरणा और दिशादर्शन, आचार-विचार मे धर्ममय परिवर्तन की रचनात्मक पहल।

37. नोखामण्डी-1976 : शारीरिक अस्वस्थता, प्राकृतिक उपचार, समता दर्शन की व्याख्या, भोपालगढ मे आचार्यश्री हस्तीमल जी से ऐतिहासिक मिलन।

38. गंगाशहर-भीनासर-1977 : दीक्षाएं, धर्मोपकार के कार्य।

39. जोधपुर-1978 : नगर प्रवेश से पूर्व उपनगर सरदारपुरा मे पचसूत्री उपदेश, जन-जागृति और सामाजिक क्रान्ति के लिए रचनात्मक दृष्टिकोण की प्रस्तुति, पांच सूत्र-समानता मे आस्था, गुण-कर्म-आधारित वर्गीकरण मे भरोसा, व्यक्तिगत जीवन-शुद्धि का अभ्यास, गरीब-अमीर की विभाजक सामाजिक कुरीतियो का परित्याग, नियमित दिनचर्या-पूर्वक समता-भाव की साधना।

40. अजमेर-1979 : धार्मिक, सामाजिक, आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक उत्क्रान्ति की ठोस पहल, अन्तर्राष्ट्रीय बाल वर्ष के उपलक्ष्य मे बाल-शिक्षा पर अखिल भारतीय संगोष्ठी, लेखक भी सम्मिलित।

41. राणावास-1980 · आध्यात्मिकता का नवप्रस्फुटन, चिन्तन के नौ सूत्रो का प्रवर्तन, सूत्र है-चैतन्य चिन्तन-यह कि 'कौन हू, कहां से हूं, किसलिए हूं, क्या कर रहा हूं, मै ज्ञाता-द्रष्टा हूं, दुर्लभ मानव-देह का लक्ष्य क्या है, समभाव का चिन्तन, अमानवीय भाव और कटु वचनो का त्याग, विभाव-त्याग, स्वभाव बोध, सुदेव, सुगुरु, सुधर्म, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह और स्याद्वाद

आत्मोन्नति के मूल है, स्व-रूप की पहचान, सम्यक् विधि से जीवन की उन्नति।'

42. **उदयपुर-1981** : जन्मभूमि दांता मे आगमन, ज्ञान-साधना/तपाराधना, समीक्षण ध्यान के प्रायोगिक पक्ष का विकास, त्रिमुखीन अभियान की प्रेरणा-1. ब्रह्मचर्यव्रत-अभियान, 2 दहेज-उन्मूलन-अभियान 3 आदिवासी जागरण तथा दुर्व्यसन मुक्ति अभियान। आगम, अहिंसा, समता एवं प्राकृत सस्थान की स्थापना।

43. **अहमदाबाद-1982** : गुजराती सम्प्रदायो के आचार्य/संत-सती से मिलन, श्रावको द्वारा छहसूत्री योजना की प्रस्तुति, समीक्षण ध्यान पर प्रवचन लगभग 7 पुस्तके गुजराती भाषा मे प्रकाशित, ये है-समता दर्शन और व्यवहार, समीक्षण और ध्यान, प्रयोग-विधि, साधना के सूत्र, आचार्य नानेश : एक परिचय, समता-क्रान्ति, अनुभूति नो आलोक, आचार्य श्री नानेश : गुजरात-प्रवास एक झलक

44. **भावनगर-1983** : अनुशासन की प्रेरणा, धर्मोत्साह तपाराधना, कृष्ण कुमार सोसायटी और मेहताशेरी के संघ के मनोमालिन्य की समाप्ति, त्याग-तपस्या में वृद्धि, आगमिक विषयो पर सारपूर्ण प्रवचन।

45. **बोरीवली-बम्बई-1984** : उपनगरो मे सतत् प्रभावी विहार, विश्व-शान्ति, धर्म का सही स्वरूप, श्रमण-संस्कृति की सुदृढ़ सुरक्षा आदि विषयो पर प्रवचन, राणावास-वर्षावास (1980) से पूर्व बिठोडा ग्राम से प्रारम्भ 'जिणधम्मो' की सम्पूर्ति-इन्दौर से प्रकाशन, स्वाध्याय को शाबाशी।

46. **घाटकोपर-बम्बई-1985** : सिद्धान्तनिष्ठ, मौलिक, यथार्थपरक आध्यात्मिक/धार्मिक विषयो की गूढ विवेचना, निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति को गहरी नीव देने का प्रयत्न, लाउडस्पीकर के विवादास्पद विषय पर मौलिक/युक्तियुक्त विचार।

47. **जलगांव-1986** : संस्कार-क्रान्ति अभियान की प्राथमिक तैयारी, स्वाध्याय, तपाराधना।

48. **इन्दौर-1987** : संस्कार-क्रान्ति अभियान का सफल सूत्रपात, चातुर्मास को सतरह हफ्तो (जुलाई से नवबर) मे बांट कर संस्कार-क्रान्ति के बहुविध पक्षो पर प्रवचन, अभियान के सूत्र-महामंत्र नमस्कार, भाषा-विवेक, कर्तव्य-पालन, स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य, पर्यावरण-सुरक्षा, सुसंस्कार-धन, सौंदर्य और सुरूपता, रक्त-रंजित सौन्दर्य-प्रसाधन, गर्भपात-महापाप, कषाय-विसर्जन, प्रत्याख्यान, आत्म-शुचिता, दान का व्यावसायीकरण, विषमता/कुरीतियां, सामायिक, आतिशबाजी, समता-समाज रचना, 'तीर्थंकर' के 'साधुमार्ग विशेषांक' का प्रकाशन।

49. **रतलाम-1988** : संस्कार क्रान्ति अग्रसर, दीक्षाएं, तपाराधन, ज्ञान-ध्यान।

50. **कानोड़-1989** : बुद्धिजीवियों को संस्कार-क्रान्ति की प्रेरणा, 'आगम पुरुष' की परिकल्पना, शाकाहार-अभियान, संस्कार-क्रान्ति पुरस्सर।

51. **चित्तौड़गढ़-1990** : संस्कार-क्रान्ति पुरश्चरित, ज्ञान-साधना, तपाराधना।

52. **पीपलिया कलां-1991** : जैन तत्त्व-ज्ञान स्नातक शिविर, समीक्षण ध्यान के प्रयोग, व्यसन-मुक्ति अभियान मे तेजी, बहुविध धार्मिक/सामाजिक विषयों पर प्रवचन, स्मरणीय वाक्य-'क्षणभंगुर शरीर को गौण करें। शरीर पोशाक है, जिसके फटने या जीर्ण होने पर संताप कैसा? पोशाक पर क्यो रोयें? रूढियो से हटे। आत्मोन्मुख बने। परिवर्तन का स्वागत करे।'
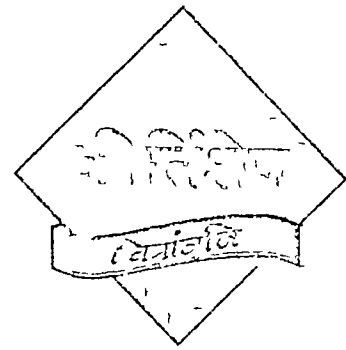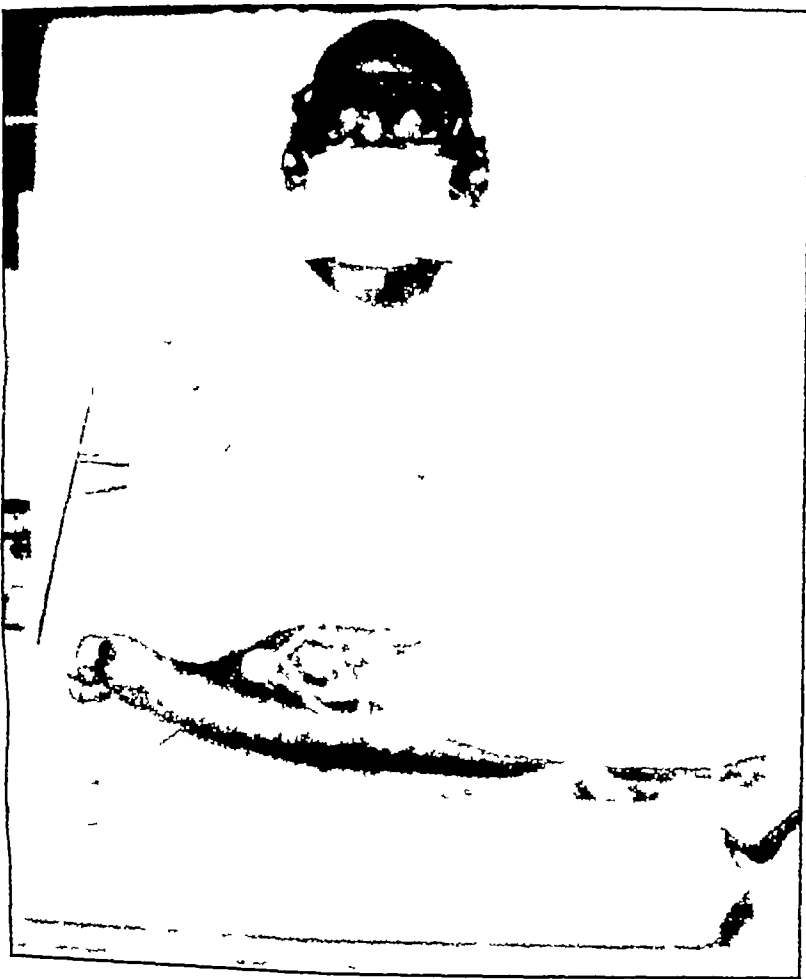
समता विभूति आचार्य श्री नानेश के देहत्याग की एक भावभंगिमा।
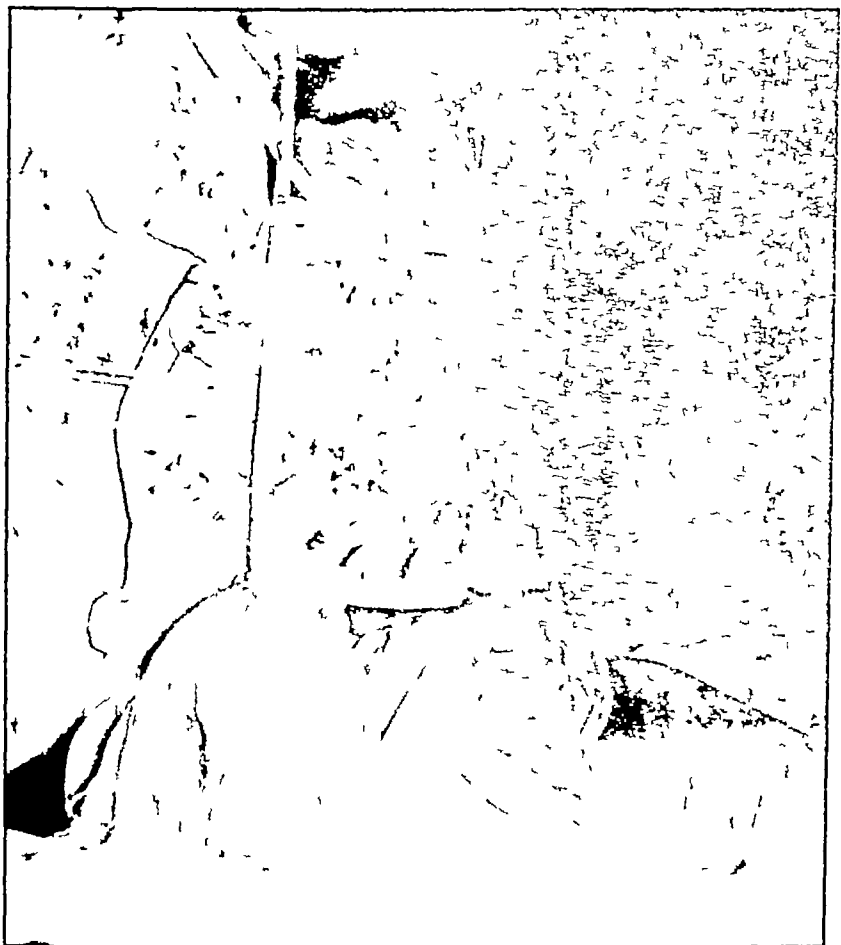
आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा की भक्ति मार्ग सग–सामग्री के साथ अतिम यात्रा की तैयारी।

स्थानक उदयपुर   आचार्य श्री नानेश के अंतिम दर्शनार्थ श्रद्धावनत श्रावकगण।

आचार्य श्री नानेश की देह शोभायात्रा हेतु उपस्थित रजत पुष्पक विमान।
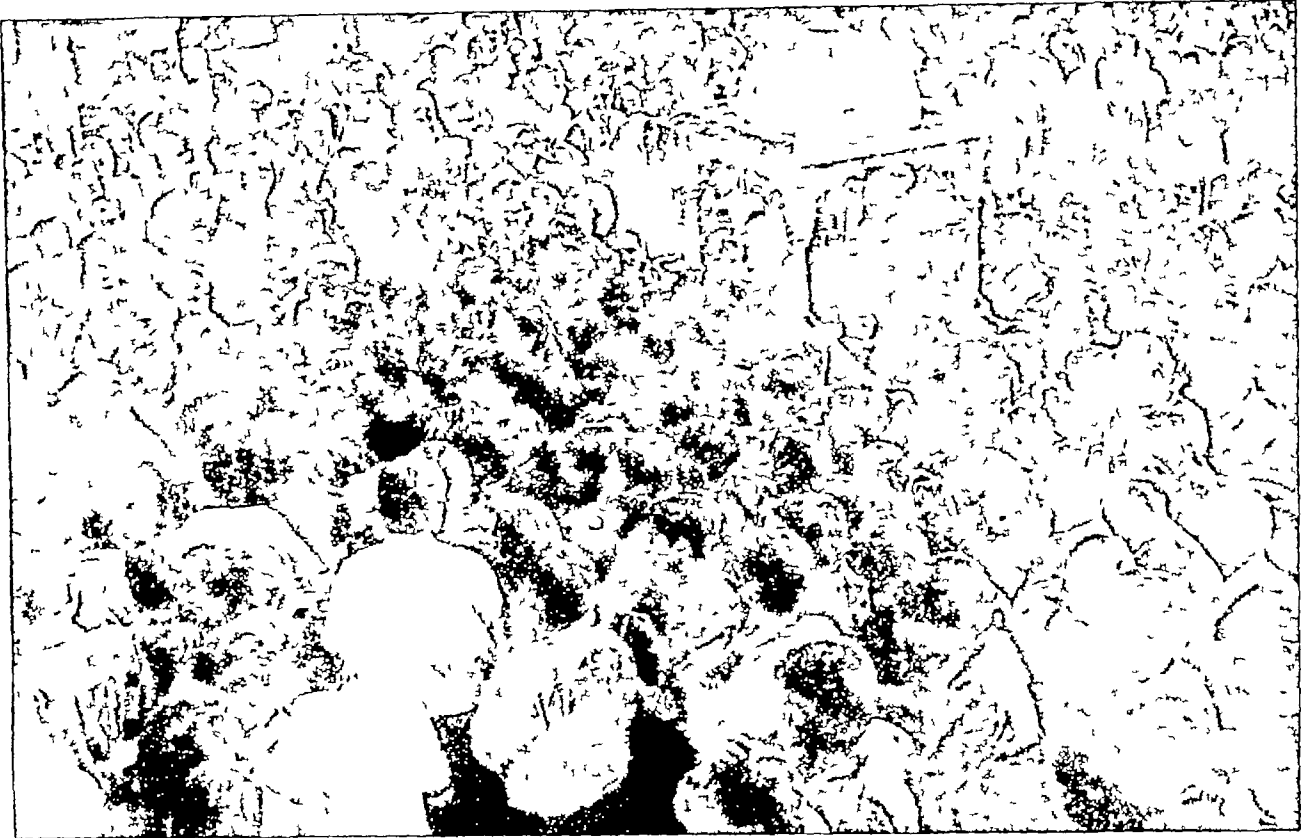
राजस्थान की स्वर्ग नगरी से आचार्य प्रवर का स्वर्गागमन।
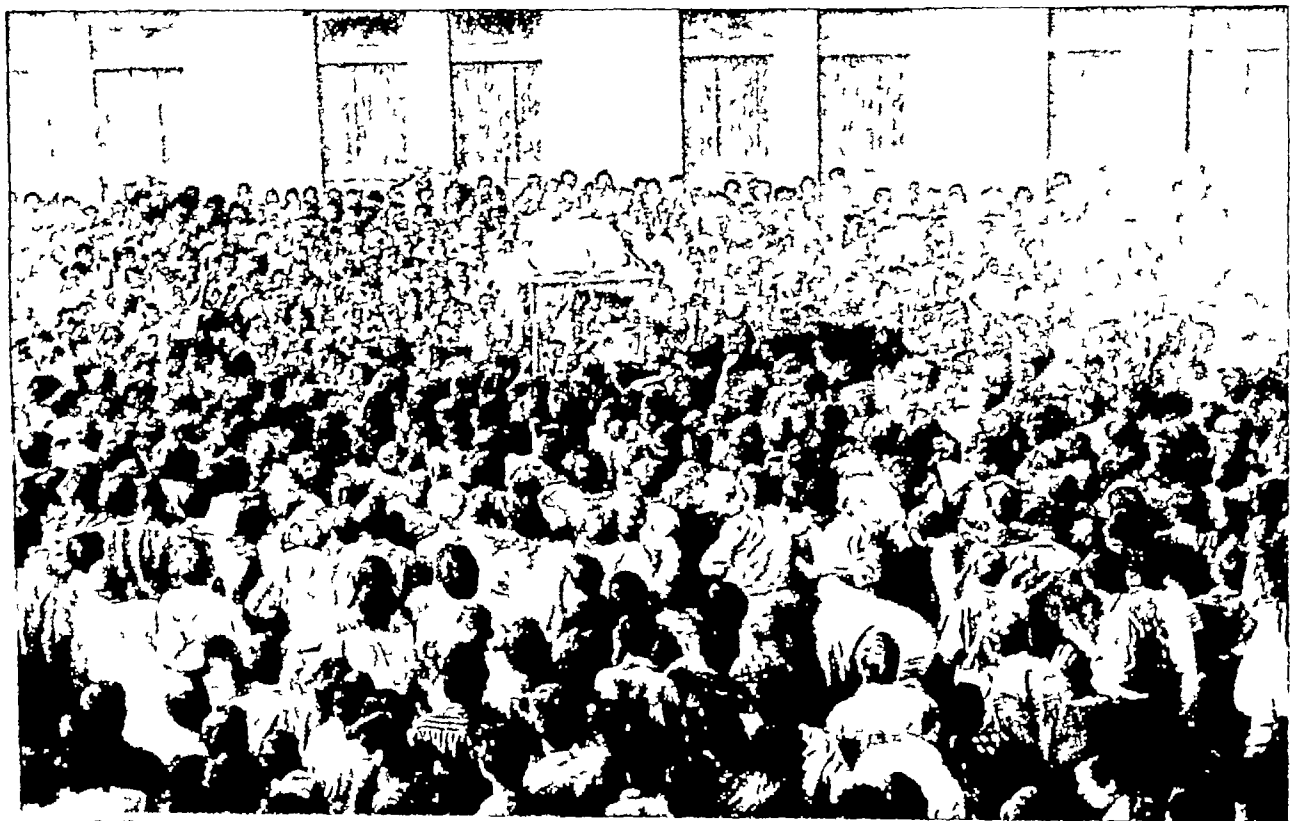
उदयपुर : रजत विमान सहित निकाली वैकुण्ठी यात्रा में उमडता आचार्य श्री के श्रद्धालुओं का सैलाब।

उदयपुर   आचार्य श्री नानेश के अतिम दर्शन हेतु उमडा महिलाओ का अपार समूह।

आचार्य श्री नानेश की पावन देह पचतत्व मे विलीन।
एक प्रचण्ड ऊर्जा पुज का ऊर्जा मे समावेश

53. उदयरामसर-1992 : 'आगम पुरुष' का लोकार्पण।

54. देशनोक-1993 : सन्त दर्शन-अभिगम पालन मे विवेक की विशेष प्रेरणा। 'समता शिक्षण सेवा संस्थान' के तहत मुमुक्षु साधक-साधिकाओं को शिक्षा एवं शोध के लिए व्यवस्था।

55. नोखामंडी-1994 : समता संस्कार जागरण शिविर, श्रावक संगठन-संघ अधिवेशन मे स्मरणीय वाक्य 'एक बनने के लिए नेक बनो' ज्ञान दृष्टि जगाने के लिए विशेष प्रेरणा।

56. बीकानेर-1995 : संघ के सभी साधक-साधिका वर्ग मे सारणा-वारणा-धारणा मे दृढता एवं एकरूपता की पुष्टि के लिए कुछ सैद्धान्तिक विषयो पर विस्तृत विज्ञप्ति।

57. गंगाशहर-भीनासर-1996 : 'संघ निष्ठा-शासन की प्रतिष्ठा' सूत्र को हर बच्चे की रग-रग मे रमाने का दृढ पुरुषार्थ। 'वीर संघ धर्म प्रचार योजना' व्यसन मुक्ति वर्ष की घोषणा। व्यवस्था से विचार भेद और संघ का विभाजन।

58. ब्यावर-1997 : 'सामायिक-प्रतिक्रमण वर्ष की घोषणा' हजारो की संख्या में बालक-बालिकाओ ने सामायिक प्रतिक्रमण कंठस्थ किया।

59. उदयपुर-1998 : 'स्वाध्याय वर्ष की घोषणा' मेवाड़ अंचल मे दीक्षाएं। शरीर के प्रति अनासक्ति का उत्कर्ष, संलेखना के साथ आत्मरमण।

60. उदयपुर-1999 : समता इन्टरनेशनल की घोषणा, अमर साधक की अमर साधना, महाप्रयाण।

सेवा करने वाले व्यक्ति को यह सोचना चाहिए कि मै सेवा अन्य की नही कर रहा हू, अपितु अपने आपकी ही कर रहा हू। अन्य की सेवा के निमित्त से स्वय की ही आत्मा का परिमार्जन कर रहा हू।

-आचार्य श्री नानेश

आचार्य प्रवर श्री नानेश की नेश्राय में विचरण करने वाले एवं दीक्षित संत सतियां जी म.सा.

मुनिराज

क्र.	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
1.	श्री ईश्वरचन्द जी म.सा.	देशनोक	सं. 1999 मिगसर कृष्णा 4	भीनासर
2	श्री इन्द्रचन्दजी म.सा	माडपुरा	सं 2002 वैशाख शुक्ला 6	गोगोलाव
3	श्री सेवन्तमुनि जी म.सा.	कन्नौज	सं 2019 कार्तिक शुक्ला 3	उदयपुर
4.	श्री अमरचन्द जी म.सा.	पीपलिया	सं. 2020 वैशाख शुक्ला 3	पीपलिया
5	श्री शान्तिमुनि जी म.सा.	भदेसर	सं 2019 कार्तिक शुक्ला 1	भदेसर
6	श्री कंवरचन्द जी म.सा.	निकुम्भ	सं. 2019 फाल्गुन शुक्ला 5	बडी सादडी
7.	श्री प्रेममुनि जी म सा.	भोपाल	सं 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनांदगांव
8.	श्री पारसमुनिजी म सा	दलोदा	सं. 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनादगाव
9.	श्री सम्पतमुनि जी म.सा	रायपुर	सं 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनांदगाव
10.	श्री रतनमुनि जी म.सा.	भाडेगांव	सं	सोनार
11.	श्री धर्मेशमुनि जी म.सा	मद्रास	सं 2023 फाल्गुन कृष्णा 9	रायपुर
12.	श्री रणजीतमुनि जी म.सा	कंजार्डा	सं 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बडी सादडी
13.	श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा	गोगुन्दा	सं 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बडी सादडी
14.	श्री गजानंद जी म.सा	देवगढ	सं.	ब्यावर
15	श्री सौभागमल जी म सा.	बड़ावदा	सं 2028 कार्तिक शुक्ला 13	ब्यावर
16	श्री रमेशमुनि जी म सा.	उदयपुर	सं 2029 कार्तिक शुक्ला 13	ब्यावर
17.	श्री सुरेन्द्रमुनि जी म.सा.	बड़ावदा	सं	ब्यावर
18.	श्री वीरेन्द्रमुनि जी म सा.	आष्टा	सं. 2029 माघ शुक्ला 2	देशनोक
19	श्री हुलासमल जी म.सा	गंगाशहर	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
20.	श्री जितेन्द्र मुनि जी म सा.	बीकानेर	सं	भीनासर
21	श्री विजयमुनि जी म सा.	बीकानेर	सं. 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
22.	श्री नरेन्द्रमुनि जी म सा	बम्बोरा	सं 2030 माघ शुक्ला 5	सरदारशहर

23.	श्री ज्ञानेन्द्रमुनि जी म.सा	ब्यावर	सं. 2031 जेठ शुक्ला 5	गोगोलाव
24.	श्री बलभद्रमुनि जी म.सा.	पीपलिया	सं 2031 आश्विन शुक्ला 3	सरदारशहर
25	श्री पुष्पमुनि जी म.सा.	मंडी डबवाली	सं 2031 आश्विन शुक्ला 3	सरदारशहर
26	श्री रामलाल जी म सा	देशनोक	सं 2031 माघ शुक्ला 12	देशनोक
27	श्री प्रकाशचन्द जी म.सा	देशनोक	सं 2032 आश्विन शुक्ला 5	देशनोक
28	श्री जयवंतमुनि जी म सा	देशनोक	सं	देशनोक
29.	श्री गौतममुनि जी म.सा	बीकानेर	सं 2032 मिगसर शुक्ला 13	बीकानेर
30.	श्री प्रमोदमुनि जी म सा	हांसी	सं. 2033 माघ कृष्णा 1	भीनासर
31.	श्री प्रशममुनि जी म.सा	गंगाशहर	सं. 2034 वैशाख कृष्णा 7	भीनासर
32.	श्री मूलचन्द जी म.सा.	नोखामंडी	सं. 2034 मिगसर शुक्ला 5	नोखामंर्ड
33.	श्री ऋषभमुनि जी म सा	बम्बोरा	सं. 2034 माघ शुक्ला 10	जोधपुर
34	श्री अजितमुनि जी म.सा.	रतलाम	सं 2035 आश्विन शुक्ला 2	जोधपुर
35	श्री जितेशमुनि जी म.सा	पूना	सं. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
36	श्री पद्मकुमार जी म सा	नीमगांवखेडी	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
37.	श्री विनयमुनि जी म.सा	ब्यावर	सं. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
38	श्री गोविन्द मुनि जी म सा	ब्यावर	सं.	जगदलपुर
39	श्री सुमति मुनि जी म सा.	नोखामंडी	सं. 2037 पौष शुक्ला 3	भीम
40	श्री चन्द्रेशमुनि जी म सा	फलौदी	सं 2038 वैशाख शुक्ला 3	गंगापुर
41	श्री धर्मेन्द्र कुमार जी म.सा	सांकरा	सं. 2039 चैत्र शुक्ला 3	अहमदाबाद
42	श्री धीरजकुमार जी म सा	जावद	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
43.	श्री कांतिकुमार जी म.सा.	नीमगांवखेडी	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
44	श्री विवेकमुनि जी म सा	उदयपुर मांडपुरा	सं 2045 माघ शुक्ला 10	मन्दसौर
45.	श्री अशोकमुनि जी म सा.	जावरा	सं. 2034 आसोज सुदी 2	गंगाशहर-भीनासर
46	श्री रत्नेशमुनि जी म.सा.	कानोड	दिनांक 6-5-90	कानोड़
47	श्री संभवमुनि जी म.सा	बीकानेर	दिनांक 2-1-91	चित्तौडगढ
48.	श्री इन्द्रेशमुनि जी म सा	चिकारड़ा	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
49	श्री राजेशमुनि जी म सा	फाजिल्का	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
50.	श्री अभिनन्दनमुनि जी म सा	नोखा	दिनाक 6-12-92	वीकानेर

51	श्री निश्चलमुनि जी म.सा.	सोमेसर	दिनांक 24-2-94	देशनोक
52	श्री विनोदमुनि जी म.सा.	विल्लुपुरम्	दिनांक 24-2-94	देशनोक
53	श्री अक्षयमुनि जी म.सा	असावरा	दिनांक 13-5-94	देशनोक
54.	श्री पुष्यमित्रमुनि जी म.सा.	बम्बोरा	दिनांक 17-5-95	बम्बोरा
55	श्री राजभद्रमुनिजी म सा	रठांजणा		प्रतापगढ
56	श्री हेमगिरीजी म.सा	देशनोक	दिनाक 30-6-95	देशनोक
57.	श्री अनन्तमुनि जी म.सा.	सवाई माधोपुर	दिनांक 20-2-97	बीकानेर
58	श्री अचलमुनि जी मसा.	रानीतराई (खींचन)	दिनांक 25-5-97	नीमच

महासतियां जी म.सा.

क्र	नाम	ग्राम	दीक्षा तिथि	दीक्षा स्थान
1.	श्री सिरेकंवरजी म.सा.	सोजत	सं 1984	सोजत
2	श्री वल्लभकंवरजी म सा (प्र.)	जावरा	सं 1987 पौष शुक्ला 2	निसलपुर
3	श्री पानकंवरजी म.सा. (प्रथम)	उदयपुर	सं. 1991 चैत्र शुक्ला 13	भींडर
4	श्री सम्पतकंवरजी म.सा. (प्र)	रतलाम	सं 1992 चैत्र शुक्ला 1	रतलाम
5.	श्री गुलाबकंवरजी म सा. (प्र)	खाचरौद	सं 1992	खाचरौद
6.	श्री केसरकंवरजी म.सा.	बीकानेर	सं 1995 ज्येष्ठ शुक्ला 4	बीकानेर
7.	श्री गुलाबकंवरजी म सा. (द्वि.)	जावरा	स. 1997	खाचरौंद
8.	श्री धापूकंवरजी म.सा. (प्र)	भीनासर	सं 1998 भादवा कृष्णा 11	भीनासर
9.	श्री कंकूकंवरजी म.सा.	देवगढ़	सं 1998 वैशाख शुक्ला 6	देवगढ
10.	श्री पेपकंवरजी म.सा.	बीकानेर	सं 1999 ज्येष्ठ कृष्णा 7	बीकानेर
11.	श्री नानूकंवरजी म.सा.	देशनोक	सं 1990 आश्विन शुक्ला 3	देशनोक
12.	श्री धापूकंवरजी म.सा (द्वि)	चिकारडा	सं. 2001 चैत्र शुक्ला 13	भीलवाडा
13	श्री कंचनकंवर जी म.सा	सवाई माधोपुर	सं 2001 वैशाख कृष्णा 2	ब्यावर
14.	श्री सूरजकंवरजी म सा	बिरमावल	सं 2002 माघ शुक्ला 13	रतलाम
15.	श्री फूलकंवरजी म.सा	कुस्तला	सं 2003 चैत्र शुक्ला 9	सवाई माधोपुर
16.	श्री भंवरकंवर जी म सा (प्र)	बीकानेर	सं. 2003 वैशाख कृष्णा 10	बीकानेर
17	श्री सम्पतकंवर जी म सा.	जावरा	सं 2003 आश्विन कृष्णा 10	ब्यावर पुरानी

18.	श्री सायरकंवरजी म सा. (प्र)	केशरसिंहजी का गुडा	सं 2004 चैत्र शुक्ला 2	राणावास
19.	श्री गुलाबकंवरजी म सा (द्वि)	उदयपुर	सं 2006 चैत्र शुक्ला 1	उदयपुर
20.	श्री कस्तूरकंवर जी म सा. (प्र)	नारायणगढ	स 2007 पौष शुक्ला 4	खाचरौद
21	श्री सायरकंवर जी म.सा (द्वि.)	ब्यावर	सं 2007 ज्येष्ठ शुक्ला 5	ब्यावर
22	श्री चांदकंवरजी म सा	बीकानेर	सं. 2008 फाल्गुन कृष्णा 8	बीकानेर
23	श्री पानकंवरजी म सा (द्वि)	बीकानेर	सं 2009 ज्येष्ठ कृष्णा 6	बीकानेर
24	श्री इन्द्रकंवरजी म सा.	बीकानेर	सं 2009 ज्येष्ठ कृष्णा 5	बीकानेर
25	श्री बदामकंवरजी म.सा.	मेडता	सं. 2010 ज्येष्ठ कृष्णा 3	बीकानेर
26	श्री सुमतिकंवरजी म सा	झज्जू	सं 2011 वैशाख शुक्ला 5	भीनासर
27	श्री इचरजकंवरजी म सा	बीकानेर	सं. 2013 आश्विन शुक्ला 10	गोगोलाव
28	श्री चन्द्राकंवरजी म.सा	कुकडेश्वर	स 2014 फाल्गुन शुक्ला 3	कुकडेश्वर
29	श्री सरदारकंवरजी म.सा	अजमेर	सं 2015 आश्विन शुक्ला 13	उदयपुर
30	श्री शांताकंवरजी म सा (प्र.)	उदयपुर	सं 2016 ज्येष्ठ शुक्ला 11	उदयपुर
31	श्री रोशनकंवरजी म सा (प्र.)	उदयपुर	स. 2016 आश्विन शुक्ला 15	बडीसादडी
32	श्री अनोखाकंवरजी म सा	उदयपुर	सं 2016 कार्तिक कृष्णा 8	उदयपुर
33	श्री कमलाकंवरजी म.सा (प्र.)	कानोड	सं 2016 कार्तिक शुक्ला 13	प्रतापगढ
34.	श्री झमकूकंवरजी म.सा	भदेसर	सं 2017 मिगसर कृष्णा 5	उदयपुर
35	श्री नन्दकंवरजी म सा.	बडी सादड़ी	सं. 2017 फाल्गुन कृष्णा 10	छोटी सादडी
36	श्री रोशनकंवरजी म सा. (द्वि.)	बडी सादड़ी	सं. 2018 वैशाख शुक्ला 8	बडी सादड़ी
37	श्री शांताकंवरजी म.सा (द्वि)	गंगाशहर	सं 2018 फाल्गुन कृष्णा 12	गंगाशहर
38.	श्री सूर्यकांताजी म सा.	उदयपुर	सं 2019 वैशाख शुक्ला 7	उदयपुर
39	श्री सुशीलाकंवरजी म.सा (प्र)	उदयपुर	सं. 2019 वैशाख शुक्ला 12	उदयपुर
40.	श्री लीलावतीजी म सा	निकुम्भ	स 2020 फाल्गुन शुक्ला 2	निकुम्भ
41	श्री कस्तूरकंवरजी म सा (द्वि.)	पीपलिया मंडी	सं 2020 वैशाख शुक्ला 3	पीपलिया मंडी
42	श्री हुलासकंवर जी म सा	चिकारडा	सं 2021 वैशाख शुक्ला 10	चिकारडा
43	श्री ज्ञानकंवरजी म.सा. (प्र.)	मालदामाड़ी	सं. 2021 आश्विन शुक्ला 8	पीपलिया मंडी
44.	श्री ज्ञानकंवर जी म सा. (द्वि)	राणावास	सं 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनांदगांव
45	श्री प्रेमलताजी म सा (प्र.)	सुरेन्द्रनगर	सं 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनांदगांव
46.	श्री इन्दुबालाजी म.सा	राजनांदगांव	सं. 2023 आश्विन शुक्ला 4	राजनांदगांव

47	श्री गंगावतीजी म.सा.	डोगरगांव	सं. 2023 मिगसर शुक्ला 13	डोंगरगांव
48	श्री पारसकंवरजी म.सा.	कलंगपुर	सं. 2023 मिगसर शुक्ला 13	डोगरगांव
49	श्री चन्दनबालाजी म सा.	पीपलिया	स 2023 माह शुक्ला 10	पीपलिया मंडी
50	श्री जयश्री जी म.सा.	मद्रास	सं. 2023 फाल्गुन शुक्ला 9	रायपुर
51	श्री सुशीलाकंवरजी म.सा. (द्वि.)	मालदामाडी	सं. 2024 आश्विन शुक्ला 2	जावरा
52.	श्री मंगलाकंवरजी म.सा.	बडावदा	सं 2024 आश्विन शुक्ला 1	दुर्ग
53.	श्री शकुन्तलाजी म.सा	बीजा	सं 2024 मिगसर कृष्णा 6	दुर्ग
54.	श्री चमेलीकंवरजी म सा.	बीकानेर	स 2025 फाल्गुन शुक्ला 5	बीकानेर
55.	श्री सुशीलाकंवरजी म.सा. (तृ.)	बीकानेर	सं 2025 फाल्गुन शुक्ला 5	बीकानेर
56.	श्री चन्द्राकंवरजी म.सा.	रतलाम	सं. 2026 वैशाख शुक्ला 7	ब्यावर
57.	श्री कुसुमलताजी म.सा	मन्दसौर	सं 2026 आश्विन शुक्ला 4	मन्दसौर
58.	श्री प्रेमलताजी म.सा.	मन्दसौर	सं. 2026 आश्विन शुक्ला 4	मन्दसौर
59.	श्री विमलाकंवरजी म सा.	पीपलिया	सं 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बड़ी सादडी
60	श्री कमलाकंवरजी म सा	जेठाणा	सं 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बडी सादडी
61.	श्री पुष्पलताजी म.सा.	बडी सादड़ी	स 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बडी सादडी
62.	श्री सुमतिकंवरजी म सा.	बड़ी सादडी	सं 2027 कार्तिक कृष्णा 8	बडी सादडी
63	श्री विमलाकंवरजी म.सा.	मोडी	सं 2027 फाल्गुन शुक्ला 12	जावद
64.	श्री सूरजकंवरजी म.सा	बड़ावदा	सं 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
65.	श्री ताराकंवरजी म.सा (प्र)	रतलाम	सं 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
66.	श्री कल्याणकंवरजी म.सा.	बीकानेर	सं. 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
67.	श्री कान्ताकंवरजी म सा.	बडावदा	सं 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
68	श्री कुसुमलताजी म.सा (द्वि.)	रावटी	सं. 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
69.	श्री चन्दनाजी म.सा. (द्वि.)	बडावदा	सं 2028 कार्तिक शुक्ला 12	ब्यावर
70.	श्री ताराजी म.सा. (द्वि)	रतलाम	सं 2029 चैत्र शुक्ला 2	जयपुर
71	श्री चेतनाश्रीजी म सा	कानौड	सं 2029 चैत्र शुक्ला 13	टोक
72.	श्री तेजप्रभाजी म.सा.	अजमेर	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
73	श्री कुसुमकांताजी म सा.	जावरा	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
74	श्री वसुमतीजी म सा	बीकानेर	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
75	श्री पुष्पाजी म.सा.	देशनोक	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर

76	श्री राजमतीजी म सा.	दलोदा	सं. 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
77.	श्री मंजुबालाजी म.सा	बीकानेर	सं. 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
78	श्री प्रभावतीजी म.सा	बीकानेर	सं 2029 माघ शुक्ला 13	भीनासर
79.	श्री ललिताजी म सा (प्र.)	बीकानेर	सं. 2029 फाल्गुन शुक्ला 11	बीकानेर
80.	श्री सुशीलाजी म सा (द्वि)	मोड़ी	सं. 2030 वैशाख शुक्ला 9	नोखा मंडी
81	श्री समताकंवरजी म सा.	अजमेर	सं. 2030 वैशाख शुक्ला 9	नोखा मंडी
82	श्री निरंजनाश्रीजी म सा.	बड़ी सादडी	सं 2030 कार्तिक शुक्ला 13	बीकानेर
83	श्री पारसकवरजी म सा	वांगेडा	सं 2030 मिगसर शुक्ला 9	भीनासर
84	श्री सुमनलताजी म सा	वांगेडा	स 2030 मिगसर शुक्ला 9	भीनासर
85	श्री विजयलक्ष्मीजी म सा	उदयपुर	सं 2030 माघ शुक्ला 5	सरदार शहर
86.	श्री स्नेहलताजी म.सा.	सरदारशहर	सं. 2030 माघ शुक्ला 5	सरदारशहर
87.	श्री रंजनाश्रीजी म सा	उदयपुर	सं 2031 ज्येष्ठ शुक्ला 5	गोगोलाव
88.	श्री अंजनाश्रीजी म सा.	उदयपुर	सं 2031 ज्येष्ठ शुक्ला 5	गोगोलाव
89.	श्री ललिताजी म.सा	ब्यावर	स. 2031 ज्येष्ठ शुक्ला 5	गोगोलाव
90	श्री विचक्षणाजी म.सा	पीपलिया	सं 2031 आश्विन शुक्ला 3	सरदारशहर
91	श्री सुलक्षणाजी म.सा.	पीपलिया	सं. 2031 आश्विन शुक्ला 3	सरदारशहर
92	श्री प्रियलक्षणाजी म सा.	पीपलिया	सं 2031 आश्विन शुक्ला 3	सरदारशहर
93	श्री प्रीतिसुधाजी म.सा	निकुम्भ	सं 2031 माघ शुक्ला 12	देशनोक
94	श्री सुमनप्रभाजी म सा	देवगढ	सं 2031 माघ शुक्ला 12	देशनोक
95	श्री सोमलताजी म सा	रावटी	सं 2031 माघ शुक्ला 12	देशनोक
96	श्री किरणप्रभाजी म सा	बीकानेर	स 2031 माघ शुक्ला 12	देशनोक
97	श्री मंजुलाश्रीजी म सा	देशनोक	स 2032 वैशाख कृष्णा 13	भीनासर
98	श्री सुलोचनाजी म सा.	कानौड	सं 2032 वैशाख कृष्णा 13	भीनासर
99	श्री प्रतिभाजी म.सा	बीकानेर	सं 2032 वैशाख कृष्णा 13	भीनासर
100	श्री वनिताश्रीजी म सा	बीकानेर	सं 2032 वैशाख कृष्णा 13	भीनासर
101	श्री सुप्रभाजी म सा.	गोगोलाव	सं. 2032 वैशाख कृष्णा 13	भीनासर
102	श्री जयन्तश्रीजी म.सा	बीकानेर	सं. 2032 आश्विन शुक्ला 5	देशनोक
103.	श्री हर्षकंवरजी म सा	अमरावती	सं 2032 मिगसर शुक्ला 8	जावरा
104	श्री सुदर्शनाजी म.सा	नोखामंडी	स. 2033 आश्विन शुक्ला 5	नोखामंडी

105. श्री निरुपमाजी म.सा.	रायपुर	सं. 2033 आश्विन शुक्ला 15	नोखामंडी
106 श्री चन्द्रप्रभाजी म सा	मेडता	सं. 2033 मिगसर शुक्ला 13	नोखामंडी
107. श्री आदर्शप्रभाजी म.सा	उदासर	सं 2034 वैशाख कृष्णा 7	भीनासर
108. श्री कीर्तिश्रीजी म.सा	भीनासर	सं 2034 वैशाख कृष्णा 7	भीनासर
109. श्री हर्षिलाश्रीजी म.सा.	गगाशहर	सं 2034 वैशाख कृष्णा 7	भीनासर
110. श्री साधनाश्रीजी म सा.	गंगाशहर	सं 2034 वैशाख कृष्णा 7	भीनासर
111 श्री अर्चनाश्रीजी म.सा.	गंगाशहर	सं. 2034 वैशाख कृष्णा 15	भीनासर
112. श्री सरोजकंवरजी म.सा.	धमतरी	सं 2034 भादवा कृष्णा 11	दुर्ग
113. श्री मनोरमाजी म.सा.	रतलाम	सं 2034 भादवा कृष्णा 11	दुर्ग
114. श्री चंचलकंवरजी म सा.	कांकेर	सं 2034 भादवा कृष्णा 11	दुर्ग
115. श्री कुसुमकंवरजी म.सा.	निवारी	सं. 2034 भादवा कृष्णा 11	दुर्ग
116 श्री सुप्रतिभाजी म.सा.	उदयपुर	सं 2034 आश्विन शुक्ला 2	भीनासर
117. श्री शान्ताप्रभाजी म.सा	बीकानेर	सं 2034 आश्विन शुक्ला 2	भीनासर
118 श्री मुक्तिप्रभाजी म सा	मोडी	सं 2034 मिगसर कृष्णा 5	बीकानेर
119 श्री गुणसुंदरीजी म.सा.	उदासर	सं 2034 मिगसर कृष्णा 5	बीकानेर
120 श्री मधुप्रभाजी म सा.	छोटी सादडी	सं 2034 मिगसर कृष्णा 5	बीकानेर
121 श्री राजश्री जी म.सा.	उदयपुर	सं 2034 माघ शुक्ला 10	जोधपुर
122. श्री शशिकांताजी म.सा.	उदयपुर	सं 2034 माघ शुक्ला 10	जोधपुर
123 श्री कनकश्रीजी म.सा	रतलाम	सं. 2034 माघ शुक्ला 10	जोधपुर
124 श्री सुलभाश्रीजी म.सा.	नोखामंडी	स 2034 माघ शुक्ला 10	जोधपुर
125 श्री निर्मलाश्रीजी म.सा.	देशनोक	सं. 2035 आश्विन शुक्ला 2	जोधपुर
126 श्री चेलनाश्रीजी म.सा.	कानौड	सं 2035 आश्विन शुक्ला 2	जोधपुर
127. श्री कुमुदश्रीजी म सा	गंगाशहर	सं 2035 आश्विन शुक्ला 2	जोधपुर
128 श्री कमलश्रीजी म सा.	उदयपुर	सं. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
129. श्री पद्मश्री जी म सा.	महिन्दपुर	सं. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
130 श्री अरुणाश्रीजी म सा.	पीपलिया	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
131 श्री कल्पनाश्रीजी म सा	देशनोक	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
132 श्री ज्योत्स्नाश्रीजी म सा	गंगाशहर	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
133. श्री पंकजश्री जी म.सा	बीकानेर	स 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर

134	श्री मधुश्रीजी म.सा	इंदौर	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
135	श्री पूर्णिमाश्रीजी म.सा	बड़ी सादड़ी	स. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
136	श्री प्रवीणाश्रीजी म सा.	मन्दसौर	सं. 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
137.	श्री दर्शनाश्रीजी म सा	देशनोक	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
138	श्री वंदनाश्रीजी म सा.	गगाशहर	स 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
139	श्री प्रमोदश्रीजी म सा	ब्यावर	सं 2036 चैत्र शुक्ला 15	ब्यावर
140	श्री उर्मिलाश्रीजी म सा	रायपुर	स 2037 ज्येष्ठ शुक्ला 3	बुसी
141	श्री सुभद्राश्रीजी म.सा	बीकानेर	सं 2037 श्रावण शुक्ला 11	राणावास
142	श्री हेमप्रभाजी म सा.	केसीगा	स 2037 आश्विन शुक्ला 3	राणावास
143	श्री ललिप्रभाजी म सा	विनोता	सं 2038 वैशाख शुक्ला 3	गंगापुर
144	श्री वसुमतीजी म सा	अलाय	सं. 2038 आश्विन शुक्ला 8	अलाय
145	श्री इन्द्रप्रभाजी श्री म सा.	बीकानेर	स. 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
146	श्री ज्योतिप्रभाश्रीजी म सा.	गंगाशहर	सं. 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
147	श्री रचनाश्रीजी म.सा.	उदयपुर	सं 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
148	श्री रेखाश्रीजी म सा	जोधपुर	सं 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
149	श्री चित्राश्रीजी म.सा	लोहावट	सं 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
150	श्री ललिताश्रीजी म सा	गंगाशहर	सं 2038 कार्तिक शुक्ला 12	उदयपुर
151	श्री विद्यावतीजी म सा	सवाई माधोपुर	सं 2038 मिगसर शुक्ला 6	हिरण मगरी
152	श्री विख्याताश्रीजी म.सा	विनोता	सं. 2038 माघ कृष्णा 3	बम्बोरा
153	श्री जिनप्रभाश्रीजी म सा	राजनांदगांव	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
154	श्री अमिताश्रीजी म सा	रतलाम	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
155	श्री विनयश्रीजी म सा	दुरखखान	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
156	श्री श्वेताश्रीजी म सा	केशकाल	स 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
157	श्री सुचिताश्रीजी म सा	रतलाम	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
158	श्री मणिप्रभाजी म सा	गंगाशहर	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदावाद
159	श्री सिद्धप्रभाजी म.सा	नागौर	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदावाद
160	श्री नम्रताश्रीजी म सा	जगदलपुर	सं. 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदावाद
161	श्री सुप्रतिभाश्रीजी म.सा	राजनांदगाव	स 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदावाद
162	श्री मुक्ताश्रीजी म.सा	कपासन	सं 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदावाद

163 श्री विशालप्रभाजी म.सा	गंगाशहर	स 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
164 श्री कनकप्रभाजी म.सा.	बीकानेर	सं. 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
165 श्री सत्यप्रभाजी म सा	बीकानेर	स. 2039 चैत्र कृष्णा 3	अहमदाबाद
166. श्री रक्षिताश्रीजी म सा.	पाली	सं. 2040 आश्विन शुक्ला 2	भावनगर
167 श्री महिमाश्रीजी म सा	अहमदाबाद	सं 2040 आश्विन शुक्ला 2	भावनगर
168. श्री मृदुलाश्रीजी म सा.	वैशाली नगर	सं 2040 आश्विन शुक्ला 2	भावनगर
169. श्री वीणाश्रीजी म.सा.	वैशाली नगर	सं. 2040 आश्विन शुक्ला 2	भावनगर
170. श्री प्रेरणाश्रीजी म सा.	बीकानेर	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
171. श्री गुणरंजनाश्रीजी म सा.	उदयपुर	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
172 श्री सूर्यमणिजी म सा.	मन्दसौर	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
173 श्री सरिताश्रीजी म.सा.	बीकानेर	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
174 श्री सुवर्णाश्रीजी म सा	रतलाम	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
175 श्री निरूपणाश्रीजी म सा.	उदयपुर	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
176 श्री शिरोमणिश्रीजी म.सा	डोंडीलोहारा	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
177. श्री विकासप्रभाजी म.सा.	बीकानेर	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
178. श्री तरुलताजी म सा.	चित्तौडगढ़	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
179. श्री करुणाश्रीजी म सा.	मोडी	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
180. श्री प्रभावनाश्रीजी म.सा.	बडा खेडा	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
181. श्री सुयशमणिजी म.सा.	गंगाशहर	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
182. श्री चितरंजनाश्रीजी म सा	रतलाम	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
183. श्री मुक्ताश्रीजी म सा	बीकानेर	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
184. श्री सिद्धमणिजी म सा	बेगू	सं. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
185 श्री रजतमणिश्रीजी म.सा	बंगमुण्डा	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
186 श्री अर्पणाश्रीजी म.सा	कानोड	स. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
187 श्री मंजुलाश्रीजी म सा	भीनासर	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
188 श्री गरिमाश्रीजी म सा	चौथ का बरवाडा	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
189 श्री हेमश्रीजी म.सा	नोखामंडी	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
190 श्री कल्पमणिश्रीजी म.सा	पीपलिया	स. 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
191. श्री रविप्रभाजी म सा.	जावरा	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम

192 श्री मयंकमणिजी म सा	पीपलिया मंडी	सं 2040 फाल्गुन शुक्ला 2	रतलाम
193 श्री चन्दनबालाश्रीजी म सा	बडी सादडी	सं. 2041 मिगसर सुदी 13	बडी सादडी
194 श्री मिताश्रीजी म सा	गंगाशहर	सं 2041 माघ सुदी 10	गंगाशहर-भीनासर
195. श्री पीयूषप्रभाजी म.सा	बीकानेर	स. 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
196. श्री संयमप्रभाजी म.सा.	शाहदा	सं. 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
197. श्री रिद्धिप्रभाजी म सा	अकलकुवा	सं. 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
198 श्री वैभवप्रभाजी म.सा.	अकलकुवा	सं. 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
199 श्री पुण्यप्रभाजी म सा	शाहदा	सं 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
200. श्री लक्ष्यप्रभाजी म.सा	जांगलु	सं 2042 कार्तिक सुदी 6	घाटकोपर
201. श्री परागश्रीजी म.सा	कपासन	सं. 2043 चैत्र सुदी 4	इंदौर
202 श्री भावनाश्रीजी म.सा.	भीम	सं 2043 चैत्र सुदी 4	इंदौर
203 श्री सुमित्राश्रीजी म सा	बाडमेर	सं 2044 वैशाख सुदी 6	बाडमेर
204 श्री लक्षिताश्रीजी म सा	बाडमेर	सं 2044 वैशाख सुदी 6	बाड़मेर
205 श्री इंगिताश्रीजी म सा.	बाडमेर	सं 2044 वैशाख सुदी 6	बाड़मेर
206 श्री दिव्यप्रभाजी म सा.	डोडीलोहारा	सं 2044 वैशाख सुदी 2	इन्दौर
207 श्री कल्पनाश्रीजी म.सा	रायपुर	स 2044 वैशाख सुदी 2	इन्दौर
208 श्री उज्ज्वलप्रभाजी म.सा	राजनांदगांव	सं 2044 वैशाख सुदी 2	इन्दौर
209. श्री अक्षयप्रभाजी म सा	बडी सादडी	स 2045 जेठ सुदी 2	जावरा
210 श्री श्रद्धाश्रीजी म सा.	उदयपुर	सं. 2045 जेठ सुदी 2	जावरा
211 श्री अर्पिताश्रीजी म सा.	बम्बोरा	सं 2045 जेठ सुदी 2	जावरा
212 श्री समताश्रीजी म सा	खण्डेला	सं 2045 जेठ सुदी 2	जावरा
213 श्री किरणप्रभाजी म सा	नीमच	सं 2045 माघ सुदी 10	मन्दसौर
214 श्री पुनीताश्रीजी म सा	वायतु	सं. 2046 वैशाख सुदी 6	बालोतरा
215 श्री पूजिताश्रीजी म सा	बाडमेर	सं. 2046 वैशाख सुदी 6	बालोतरा
216 श्री विवेकश्रीजी म सा	पाटोदी	सं. 2046 वैशाख सुदी 6	बालोतरा
217 श्री चरित्रप्रभाजी म.सा.	विल्लूपुरम	सं 2046 वैशाख सुदी 6	विल्लुपुरम
218 श्री कल्पनाश्रीजी म सा	नयागांव	सं 2046 वैशाख सुदी 6	निम्बाहेड़ा
219 श्री रेखाश्रीजी म सा	नांदगांव	सं 2046 वैशाख सुदी 6	निम्बाहेड़ा
220 श्री शोभाश्रीजी म सा.	बोलठाण	सं. 2046 वैशाख सुदी 6	निम्बाहेडा

221 श्री गरिमाश्रीजी म.सा.	नादगांव	सं 2046 वैशाख सुदी 6	निम्बाहेडा
222. श्री स्वर्णप्रभाजी म.सा	उदयपुर	सं 2046 पौष सुदी 7	उदयपुर
223 श्री स्वर्णरेखाश्रीजी म सा	ब्यावर	सं 2046 पौष सुदी 7	उदयपुर
224 श्री स्वर्णज्योतिजी म सा.	कोटा	सं 2046 पौष सुदी 7	उदयपुर
225 श्री स्वर्णलताजी म सा	गंगाशहर	सं 2046 पौष सुदी 7	उदयपुर
226 श्री नंदिताश्रीजी म सा	येवला	दिनांक 27-2-90	मद्रास
227. श्री साधनाश्रीजी म सा	गंगाशहर	दिनांक 27-2-90	मद्रास
228 श्री प्रमिलाश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनांक 6-5-90	कानोड
229. श्री शर्मिलाश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनांक 6-5-90	कानोड
230 श्री सुमंगलाश्रीजी म सा	चपलाना	दिनांक 6-5-90	कानोड़
231 श्री पावनश्रीजी म सा.	चिकारड़ा	दिनाक 3-6-90	चिकारडा
232 श्री प्रज्ञाश्रीजी म.सा	चिकारडा	दिनांक 3-6-90	चिकारडा
233 श्री मृगावतीजी म.सा.	पीपाड	दिनाक 20-12-90	रायपुर (म प्र)
234. श्री श्रुतशीलाजी म सा.	धमतरी	दिनाक 20-12-90	रायपुर (म प्र)
235. श्री सौम्यशीलाजी म.सा	मोजर	दिनांक 20-12-90	रायपुर (म प्र)
236 श्री सन्मतिशीलाजी म.सा	श्रीरामपुर	दिनाक 20-12-90	रायपुर (म प्र)
237 श्री विवेकशीलाजी म सा	खापर	दिनाक 20-12-90	रायपुर (म प्र)
238. श्री इच्छिताश्रीजी म सा	रायपुर	दिनांक 25-3-91	बैगलौर
239. श्री सम्बोधिश्रीजी म सा	जम्मू कश्मीर	दिनाक 16-2-92	बीकानेर
240 श्री विपुलाश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनाक 16-2-92	बीकानेर
241. श्री विजेताश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
242. श्री स्थितप्रज्ञाश्रीजी म सा.	देशनोक	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
243 श्री मनीषाश्रीजी म सा	भदेसर	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
244. श्री धैर्यप्रभाजी म.सा	विशनिया	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
245 श्री मणिश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
246 श्री वैभवश्रीजी म सा	बीकानेर	दिनाक 16-2-92	बीकानेर
247 श्री शीलप्रभाजी म सा	जगपुरा	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
248 श्री अभिलाषाश्रीजी म.सा	देशनोक	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
249. श्री नेहाश्रीजी म सा	खण्डेला	दिनांक 16-2-92	बीकानेर

250	श्री कविताश्रीजी म सा.	श्यामपुरा	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
251	श्री अनुपमाश्रीजी म सा	देशनोक	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
252	श्री नूतनश्रीजी म सा	देशनोक	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
253	श्री अंकिताश्रीजी म सा	गगाशहर	दिनाक 16-2-92	बीकानेर
254.	श्री संगीताश्रीजी म सा	बालेसर	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
255	श्री जागृतिश्रीजी म सा	देशनोक	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
256	श्री विभाश्रीजी म सा	श्यामपुरा	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
257	श्री मननप्रज्ञाश्रीजी म सा	भीनासर	दिनांक 16-2-92	बीकानेर
258	श्री चन्दनाश्रीजी म सा	इन्दौर	दिनांक 8-5-92	देशनोक
259	श्री सुनीताश्रीजी म सा.	रतलाम	दिनांक 28-9-92	उदयरामसर
260	श्री प्रियदर्शनाश्रीजी म.सा	उदयपुर	दिनांक 28-9-92	उदयरामसर
261	श्री चिन्तनप्रज्ञाजी म सा.	राजाजी का करेड़ा	दिनांक 4-2-93	बडीसादडी
262	श्री अर्पणाश्रीजी म सा	बड़ीसाद्डी	दिनांक 4-2-93	बडीसादडी
263	श्री शुभाश्रीजी म.सा	देशनोक	दिनांक 12-2-93	देशनोक
264	श्री नमनश्रीजी म सा	नोखा	दिनांक 25-4-93	गगाशहर-भीनासर
265	श्री समीक्षाश्रीजी म सा	नाई	दिनांक 25-4-93	उदयपुर
266	श्री रोशनश्रीजी म सा	उदयपुर	दिनांक 25-4-93	उदयपुर
267.	श्री रश्मिश्रीजी म सा	कानोड	दिनाक 3-12-93	कानोड
268	श्री सुयशप्रज्ञाजी म.सा	राजनादगांव	दिनांक 8-12-93	नागपुर
269	श्री विजेताश्रीजी म सा	रायपुर	दिनांक 23-12-93	रायपुर
270	श्री सुनेहाश्रीजी म सा	खैरागढ	दिनाक 23-12-93	रायपुर
271	श्री सुपद्माश्रीजी म सा	सम्बलपुर	दिनाक 23-12-93	रायपुर
272	श्री सुजाताश्रीजी म सा	नोखा	दिनांक 24-2-94	देशनोक
273.	श्री सुयशाश्रीजी म.सा	रायपुर	दिनांक 24-2-94	देशनोक
274	श्री सुमेधाश्रीजी म.सा	नोखामंड़ी	दिनांक 24-2-94	देशनोक
275	श्री प्रशान्तश्रीजी म सा	बाबरा		
276	श्री अर्जिताश्रीजी म सा	मोडी	दिनांक 13-5-94	देशनोक
277	श्री अर्चिताश्रीजी म.सा	बायतु	दिनांक 13-5-94	देशनोक
278.	श्री नमिताश्रीजी म.सा.	बैंगलोर	दिनांक 24-11-94	सूरत
279	श्री पुनीताश्रीजी म.सा	मद्रास	दिनांक 24-11-94	सूरत

280. श्री समीक्षणाश्रीजी म.सा.	पथारकांदी	दिनांक 9-2-95	बीकानेर
281 श्री लक्ष्यज्योतिजी म.सा	मद्रास	दिनांक 9-2-95	बीकानेर
282 श्री जयप्रज्ञाश्रीजी म सा.	रायपुर	दिनांक 2-5-95	बीकानेर
283 श्री प्रतिभाश्रीजी म.सा.	उदासर		
284. श्री सुरभिश्रीजी म.सा	नगरी	दिनांक 9-2-97	दुर्ग
285 श्री सुरुचिश्रीजी म.सा.	धमधा	दिनांक 9-2-97	दुर्ग
286. श्री सुप्रियाश्रीजी म.सा.	नोखामंडी	दिनांक 9-2-97	दुर्ग
287 श्री सुरभिश्रीजी म सा.	जावद	दिनांक 13-2-97	जावद
288. श्री अस्मिताश्रीजी म.सा	देशनोक	दिनांक 20-2-97	बीकानेर
289. श्री अविचलश्रीजी म सा	भदेसर	दिनाक 20-2-97	भदेसर
290 श्री मल्लिप्रज्ञाजी म.सा	बालोद	दिनांक 15-3-97	उदयपुर
291. श्री सुषमाश्रीजी म.सा.	कानोड	दिनांक 9-5-97	चित्तौडगढ
292. श्री प्रांजलश्रीजी म.सा.	खाचरौद	दिनाक 8-6-97	नीमच
293 श्री उपासनाश्रीजी म.सा.	रतलाम	दिनांक 7-11-97	रतलाम
294 श्री आराधनाश्रीजी म.सा.	रतलाम	दिनांक 7-11-97	रतलाम
295. श्री ऋजुताश्रीजी म.सा.	जदिया	दिनांक 9-12-97	ब्यावर
296. श्री विरलश्रीजी म.सा	कलकत्ता	दिनांक 9-5-98	चित्तौड़गढ
297. श्री आस्थाश्रीजी म.सा	गंगाशहर	दिनांक 9-5-98	चित्तौड़गढ
298. श्री अंजिलीश्रीजी म सा.	चित्तौड़गढ	दिनांक 9-5-98	चित्तौड़गढ़
299 श्री सुरक्षाश्रीजी म.सा.		दिनांक 29-11-98	चित्तौडगढ
300 श्री मुदितप्रज्ञाश्रीजी म.सा.	फलौदी	दिनांक 3-12-98	मगलवाड
301 श्री उन्नतिश्रीजी म.सा		दिनांक 3-12-98	मंगलवाड
302. श्री विशाखाश्रीजी म सा.	कानोड़	दिनांक 7-12-98	कानोड
303 श्री सुशक्तिश्रीजी म.सा.	अतरिया	दिनांक 22-1-99	राजनांदगांव
304 श्री सुमुक्तिश्रीजी म सा	सम्बलपुर	दिनांक 22-1-99	राजनांदगांव
305. श्री सुभक्तिश्रीजी म सा.	सम्बलपुर	दिनांक 22-1-99	राजनांदगांव
306. श्री नीरजश्रीजी म सा.	बायतु (बाड़मेर)	दिनांक 28-4-99	उदयपुर
307 श्री विराटश्रीजी म.सा.	गंगाशहर	दिनांक 21-6-99	उदयपुर

❖ ❖ ❖

साहित्य

अ-स्वरचित

प्रवचन साहित्य

1. अमृत सरोवर
2 आध्यात्मिक आलोक
3 आध्यात्मिक वैभव
4 आध्यात्मिक ज्योति
5 जीवन और धर्म (हिन्दी एवं मराठी)
6 जलते जाएं जीवन दीप
7. ताप और तप
8 नव विधान
9 पावस प्रवचन भाग-1,2,3,4,5
10 प्रवचन पीयूष
11 प्रेरणा की दिव्य रेखाएं
12 मंगलवाणी
13 संस्कार क्रांति
14 शांति के सोपान
15. अपने को समझे, भाग-1,2,3
16 एकै साधे सब सधे
17. जीवन और धर्म
18 सर्व मंगल सर्वदा

कथा साहित्य

1 अखण्ड सौभाग्य
2 कुकुम के पगलिए
3. ईर्ष्या की आग
4 लक्ष्यवेध
5 नल दमयन्ती

चिंतन साहित्य

1 गहरी पर्त के हस्ताक्षर (हिन्दी, गुजराती)
2 अन्तर के प्रतिबिम्ब
3 समता क्रांति का आह्वान (हिन्दी, मराठी)
4. समता दर्शन : एक दिग्दर्शन
5. समता दर्शन और व्यवहार (हिन्दी, अग्रेजी, गुजराती)
6. समता निर्झर
7 समीक्षण धारा
8. समीक्षण ध्यान एक मनोविज्ञान
9. समीक्षण ध्यान प्रयोग विधि (हिन्दी, गुजराती)
10 मुनि धर्म और ध्वनिवर्द्धक यंत्र
11 निर्ग्रन्थ परम्परा मे चैतन्य आराधना
12 कषाय समीक्षण
13. क्रोध समीक्षण
14. मान समीक्षण
15 लोभ समीक्षण
16 कर्म प्रकृति
17. गुण स्थान : स्वरूप विश्लेषण
18 जिण धम्मो
19 उभरते प्रश्न : चिन्तन के आयाम

शास्त्र

1 अन्तकृतदशांग
2 वियाह पण्णति सूत्रं प्रथम भाग

काव्य

1 आदर्श भ्राता (खण्ड काव्य)

आ-आचार्य श्री से संबंधित साहित्य

1 अन्तर्पथ के यात्री : आचार्य श्री नानेश 1982
2. अविस्मरणीय झलक आचार्य श्री नानेश का सौराष्ट्र प्रवास 1984
3 अष्टमाचार्य : एक झलक,
4 अष्टाचार्य गौरव गंगा 1986
5 आचार्य श्री नानेश-एक परिचय (हिन्दी, गुजराती)
6 आचार्य श्री नानेश : विचार-दर्शन
7 गुजरात-प्रवास-एक झलक
8 सफल सौराष्ट्र प्रवास (गुजराती, हिन्दी)
9 आगम पुरुष-1992

श्री हुक्मगच्छीय गौरवशाली आचार्य की विवरणिका

हु.शि.उ.चौ.श्री.ज.ग.नाना
विजय चमकते भानु समाना

1. महान् क्रियोद्धारक, दीर्घ तपस्वी आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री हुक्मीचंद जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
टोडारायसिंह	बूंदी	बीकानेर	जावद
वि स. 1860	वि सं 1879	वि सं 1907	वि स 1917
पौ.शु. 9	मिगसर सुदी 2	माघ सुदी 5	वैशाख सुदी 5

2. प्रकाण्ड विद्वान परम तपस्वी आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री शिवलाल जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
धामनिया	रतलाम	जावद	जावद
वि.सं. 1867	वि.सं. 1891	वि.सं 1917	वि.सं. 1933
पौष सुदी 10	मिगसर सुदी 1	वैशाख सुदी 5	पौष सुदी 6

3. विचक्षण प्रतिभा के धनी आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री उदयसागर जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
जोधपुर	बीकानेर	जावद	रतलाम
वि.सं. 1876	वि सं 1908	वि सं 1933	वि स 1954
आसोज सुदी 15	चैत्र सुदी 11	पौष सुदी 6	माघ सुदी 11

4. निर्ग्रन्थ शिरोमणि महान् क्रियावान आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री चौथमल जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
पाली	ब्यावर	रतलाम	रतलाम
वि सं. 1885	वि सं. 1909	वि सं 1954	वि.स 1957
वैशाख सुदी 4	चैत्र सुदी 12	माघ सुदी 10	कार्तिक सुदी 9

5. अद्‌भुत स्मृति के धारक आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री श्रीलालजी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
टोक	बनेडा	रतलाम	जैतारण
वि सं. 1926	वि.सं 1954	वि सं 1957	वि सं. 1977
आषाढ़ सुदी 12	माघ बदी 2	कार्तिक सुदी 9	आषाढ़ सुदी 3
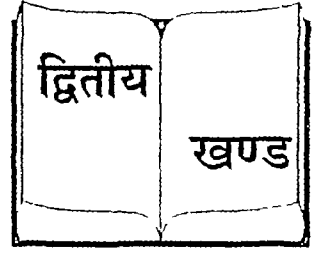
द्वितीय खण्ड

प्रवचन सुरभि

व्याख्यान सार

6. महान् क्रांतिकारी ज्योतिर्धर युगपुरुष आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री जवाहरलाल जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
थादला	लीमड़ी ग्राम	जैतारण	भीनासर
वि.सं 1932	वि.सं. 1948	वि.सं. 1977	वि स. 2000
कार्तिक सुदी 4	मिगसर सुदी 2	आषाढ़ सुदी 3	आषाढ़ सुदी 8

7. संयमित एकता के सूत्रधार आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री गणेशीलाल जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
उदयपुर	उदयपुर	भीनासर	उदयपुर
वि सं. 1947	वि.सं. 1992	वि.सं. 2000	वि.सं. 2019
श्रावण बदी 3	मिगसर बदी 1	आषाढ़ सुदी 8	माघ बदी 2

8. धर्मपाल प्रतिबोधक, समता विभूति, समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री नानालाल जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि	आनन्दधाम
दांता ग्राम	कपासन	उदयपुर	उदयपुर
वि.सं. 1977	वि सं. 1996	वि.सं 2019	वि सं. 2056
ज्येष्ठ सुदी 2	पौष सुदी 8	माघ बदी 2	कार्तिक बदी 3

9. शान्त क्रांति संघ नायक, प्रज्ञानिधि समग्र चारित्र निर्माण के प्रणेता आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री विजयराज जी म.सा.

जन्म स्थान/तिथि	दीक्षा स्थल/तिथि	तरुणाचार्य पद स्थल/तिथि	आचार्य पद स्थल/तिथि
बीकानेर	गंगाशहर-भीनासर	चित्तौडगढ़	अजमेर
वि सं. 2015	वि.सं. 2029	वि.सं. 2055	वि सं. 2056
आसोज सुदी 4	माघ सुदी 13	माघ सुदी 15	कार्तिक बदी 3

1

सेव्य, सेवक तथा सेवा के प्रकार

संभव देव ते धुर,
सेवो सवे रे...

संभवनाथ भगवान् के चरणों मे कवि आनन्दघनजी ने जो भाव अभिव्यक्त किये है, उन भावो की दृष्टि से चिन्तन किया जाना चाहिये। भगवान् की अगर सेवा बन जाये तो इस जीवन मे महत्त्वपूर्ण शक्ति प्रकट हो सकती है। असंभव को भी संभव बनाने की यह शक्ति इस आत्मा को सम्पादित हो सके-इस दृष्टिकोण से इस प्रार्थना से प्रेरणा ग्रहण करनी है।

सेवा करने के भव्य प्रसंग को इसलिए भव्य तरीके से ही समझ लेना है। सेवा करने की जब नम्र भावना का निर्माण होता है और उसका वेग प्रबल बनता है तो सेवा करने वाले के अन्तर्हृदय मे सेवक कहलाने की गहरी इच्छा जागती है। सेवक को तब यह विवेक बनाना चाहिए कि वह किसकी सेवा करे-उसके सेव्य कौन हो सकते हैं? फिर सेवा भी एक प्रकार की नही होती है और वह कई प्रकार से की जा सकती है, अत: उन प्रकारो को समझते हुए एक सेवक अपने सेव्य की यथास्थान यथायोग्य रीति से सेवा करें, तब सेवा का सुफल प्रकट हो सकता है।

मन, वचन, काया के माध्यमों से सेवा के प्रकार :

सेवा के विभिन्न रूप होते हैं। सेवा का एक प्रकार शारीरिक भी होता है जबकि सामान्य जन इस शारीरिक सेवा को ही सम्पूर्ण सेवा का रूप समझता है। किसी के हाथ पैर दबा देना, औषधी आदि लाकर दे देना, भोजन करा देना या अपने शरीर के माध्यम से अन्य किसी प्रकार की सहायता जरूरतमंद को पहुंचा देना-ये सब शारीरिक सेवा के रूप होते है। सामान्य जन तो इतनी सी ही बात को सेवा के रूप मे ले करके अपने आप मे सन्तुष्ट हो जाता है कि हम सेवा कर रहे हैं। लेकिन यह शारीरिक सेवा है और शारीरिक सेवा करने वाले भाई-बहिन अधिक संख्या मे उपलब्ध हो सकेंगे।

परन्तु शारीरिक सेवा के साथ-साथ मानसिक एवं वाचिक सेवा का भी महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। मानसिक, वाचिक एवं शारीरिक सेवाओ का शुभ संयोग बनता है तो वह सेवा का भव्य रूप निराला ही होता है। जहां शारीरिक सेवा बहुत की जा रही है, लेकिन उसके साथ सेवा करने वाला सेव्य के प्रति वचन के तीर छोडता जाता है कि सेव्य के हृदय का छेदन हो जाए तो ऐसा सेवक सेवा करते हुए भी सेवा के लाभ से वंचित रह जाता है। बहुत से ऐसे व्यक्ति दिखाई देगे कि जो शरीर से भरपूर सेवा करते हैं मगर शब्दो के माध्यम से सेव्य को तंग करते रहते है कि तुम्हारी इतनी सेवा कर रहे हैं, फिर भी तुम कोई यश नहीं देते हो। रात दिन सब काम बिगाड कर और हर तरह की तकलीफ देख कर तुम्हारी सेवा करता हूं सो क्या तुम्हारे बाप का नौकर हूं-इस तरह ताने मारते जाते हैं। ऐसे व्यक्ति शरीर के माध्यम से सेवा करते हुए भी वचन के माध्यम को बिगाड कर सारी सेवा के स्वरूप को बिगाड देते है।

ऐसे बहुतेरे प्रसंग कई स्थानो पर आते है। स्व0 आचार्य देव फरमाया करते थे कि दुष्काल के प्रसंग पर एक सेठ ने यह सोचा कि मेरे परिवार के लोगो की सख्या काफी है तथा मेरे पास अन्न सामग्री भी काफी है अत: दुष्काल

के समय मे मै उनकी सेवा करूं। उसने अपने सारे भाई बन्धुओ को इस दृष्टि से निवेदन किया कि दुष्काल से आप घबरा कर कहीं बाहर नहीं जावे तथा न बच्चे-बच्चियो को भटकावे। आप मेरी सेवा को अंगीकार कर मेरी हवेली पर दोनो समय भोजन करते रहे। इस तरह सब लोग सेठ के यहां भोजन करने लगे।

इस तरह बारह माह व्यतीत हो गए और सर्वत्र सुकाल का समय आ गया। तब सेठ ने सोचा कि मैने अपने भाई बन्धुओ की निःस्वार्थ भाव से सेवा की है और अब वायुमंडल सुन्दर बन गया है सो अब सब अपने-अपने घरो को लौट जावें और अपनी भोज्य सामग्री स्वयं जुटा कर अपना निर्वाह चलावे। इसलिए अन्त मे सबको एक प्रीतिभोज दे दू ताकि सारे सेवा कार्य का सुंदर समापन हो जावे। यदि बहुत अच्छा कार्य करने पर भी अंतिम समापन योग्य नहीं बने तो पिछले कार्य मे भी कुछ धूमिलता आ जाती है। सेठ ने सबको प्रीतिभोज का आमंत्रण दिया और सबने कृत भाव से उस आमंत्रण को स्वीकार कर लिया। भोजन की बढिया सामग्री तैयार करवाई गई तथा नम्र व प्रेम भाव से सेठ स्वय परोसगारी करने लगा। उसने अपने परिवार के लोगो को भी कहा कि वे भी खुद परोसगारी करके सेवा का लाभ ले। सभी लोग पंक्तियो मे बैठे थे। सेठ का पुत्र भी परोसगारी कर रहा था। वहां बहिनो की पंक्ति लगी हुई थी। एक बहिन को परोस कर जल्दबाजी मे वह आगे बढ़ गया और बीच में एक बहिन को वस्तु परोसना भूल गया। उस बहिन ने सहज भाव से उसे वस्त्र पकड कर खीचा कि वह उसको भी परोस कर आगे बढे। इतनी सी बात हुई कि सेठ के कुवर साहब का माथा एकदम गर्म हो गया और वह बोल उठा-बारह-बारह महीने हमारे टुकडे खाते हुए हो गये, फिर भी कपड़े पकड़ना नहीं छूटा-कुछ शर्म भी नहीं है। यह सुनते ही सबका सारा खाना पीना जहर हो गया। जितने भी जीमने वाले थे वे सारे के सारे उठ खडे हुए। सेठ नहीं समझ पाया कि यह क्या हो गया? जब उसे सारा वृत्तान्त मालूम हुआ तो वह उस बहिन से और सब लोगों से क्षमायाचना करने लगा और कहने लगा-आप लोग मेरी इज्जत रख लें। बच्चे ने नादानी से कह दिया, उसके लिए मैं माफी मांगता हूं। आपने मुझे सेवा का अवसर दिया-यह आप पर अहसान नहीं है, आप लोगो ने मेरे पर अहसान किया है। सेठ की इस विनम्रता के बाद लोग फिर से भोजन करने बैठे।

कहने का तात्पर्य यह है कि वाचिक सेवा समुचित नही होती है तो जितनी अन्य प्रकार से सेवा की गई हो, उस पर पानी फिर जाता है।

मानसिक सेवा का कार्य और भी अधिक कठिन होता है। मन मे ऊंच-नीच के भाव न लाकर-घृणा या ग्लानि का अंश मात्र भी न रख कर इस दृष्टिकोण से सेवा की जाय कि यह सेव्य की सेवा नहीं है, मेरी अपनी आत्मा की सेवा है। उसको शान्ति पहुचाऊंगा तो वास्तव मे मेरी अपनी आत्मा को ही शान्ति प्राप्त होगी। सेव्य मेरा उपकारी है-मुझे लाभ दे रहा है। मुझे ऐसा लाभ चाहिए और इस लाभ के लिए मै सदा तत्पर रहूं। इस प्रकार मन को अर्पण करके जब सेवक सेव्य की सेवा करता है तो वह सेवा का श्रेष्ठ स्वरूप बनता है।

चतुर्विध संघ मे परस्पर सेवा का संयोग :

प्रभु महावीर के शासन मे चतुर्विध सघ की सेवा का जो प्रसग उपस्थित हुआ है, वह भी एक अपूर्व प्रसंग हे। श्रावक श्रावक के नाते साधर्मी है तो श्रावक श्रावक की सेवा करता है। श्रावक साधु की भी सेवा कर सकता है लेकिन जिस रूप मे वह श्रावक की सेवा करता है उसी रूप मे साधु की सेवा करने का उसके लिए विधान नहीं है। एक श्रावक, श्रावक-श्राविका वर्ग को भोजन कर सकता हे या उनकी अन्य प्रकार से सेवा कर सकता हे। किन्तु वह साधु-साध्वी वर्ग की उस रूप मे सेवा नहीं कर सकता है। यदि कोई श्रावक चाहे कि महाराज के पैर दबाऊं तो वह

उनके पैर नहीं दबा सकता है। यदि महाराज के पैर दबाने के लिए श्रावक बैठता है तो वह महाराज के साधु नियम को भंग करता है-उसकी अवहेलना करता है। तब वह उनकी सेवा नही, कुसेवा बन जाती है।

जिन महात्मा के पैर दबाने का प्रसंग है, वैसा करना कदाचित् आवश्यक हो तो सन्त-सन्त के पैर दबा सकता है, वह श्रावक से पैर नहीं दबवा सकता है। कोई गृहस्थ यह सोचे कि अपने मकान से आहार लाकर महाराज को उनके स्थान पर बहरा दूं तो उनकी सेवा हो जाएगी तो वह भी करने योग्य नहीं है। यह सेवा योग्य सेवा नहीं होगी क्योंकि ऐसा करना सन्त मर्यादा के प्रतिकूल है। कभी बहिनों की यह भावना रहती है कि महाराज बस्ती मे है उस वक्त तो उनकी सेवा हो ही जाती है-भोजन आगे पीछे मिल जाता है। लेकिन जब कभी लम्बा विहार करते है, अनजान बस्ती मे चले जाते है तब भोजन पानी की दिक्कत पड़ेगी सो रास्ते मे जाकर उनकी सेवा कर ले अर्थात् महाराज के लिए टिफिन भर कर ले जावे और उनको आहार पानी बहरा दे। यदि वे नहीं ले तो महाराज जिस अनजान बस्ती मे बिराजे वहां जाकर रसोई बना कर सेवा का लाभ ले ले। कदाचित् महाराज पूछ लें कि रसोई क्यो बनाई तो कह दें कि रसोई हमारे जीमने के वास्ते बनाई है और महाराज उसे ग्रहण कर ले। ऐसी भावना कई बहने रखती है लेकिन वहां पर विवेक रखना चाहिए कि इस तरह साधु की सेवा नहीं की जाती है। समझ भी ले कि रास्ते चल कर एक परिवार आया और उसने कदाचित् अपने लिए भी रसोई बनाई लेकिन तीन व्यक्तियो की जगह पन्द्रह व्यक्तियो की रसोई बना ली और महाराज गोचरी कर ले-यह भी समीचीन नहीं है। प्रथम तो महाराज को ऐसी जगह भिक्षा के लिए जाना नहीं चाहिये और अगर चले भी गये है तो उन्हे पूछकर संतोष कर लेना चाहिये कि रसोई इतनी क्यों बनाई है? अगर नहीं पूछे और दस-ग्यारह सन्तों के योग्य आहार गोचरी मे ले आवे तो स्पष्ट तौर से साधु के महाव्रत मे दोष लगता है। वह साधु की सेवा नहीं, कुसेवा हुई ऐसा समझना चाहिये। इससे जो कुछ भी प्रसंग आयेगा, वह उस श्रावक के लिए हितावह नहीं होगा।

ठाणांग सूत्र के तीसरे ठाणे में शास्त्रकारों ने स्पष्ट बताया है कि जो श्रावक हिंसा करके, झूठ बोल करके यदि साधु को भिक्षा हेता है तो वह अल्प आयु का बंध करता है। अल्प आयु के बंध का अर्थ आप समझ गये होगे। एक तो हिंसा की और दूसरा झूठ बोले-आवश्यकता तीन जनों की रसोई की थी और पन्द्रह जनो की रसोई बनाई तो साफ है कि उसके मन मे साधुओं का निमित्त था और बहराते समय भी झूठ बोला कि रसोई अपने लिये ही बनाई है। तो दोनो पाप हो गए हिंसा का भी और असत्य भाषण का भी। साधु को नहीं कल्पे ऐसा आहार उसे दिया तो ऐसे व्यक्तियो को अल्प वय का कुफल मिलेगा याने कि अगले जन्म मे अच्छे घर में वैसा जीव जन्म तो ले लेगा, मगर चार-पाच वर्ष की आयु मे ही अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेगा। यह शास्त्रकारो की स्पष्ट अभिव्यक्ति है।

प्रत्येक श्रावक को इस दृष्टि से समझने की आवश्यकता है कि जहां भी सेवा की जाय-यथायोग्य रीति से की जाय। मन का भाव शुद्ध होता है, उस पर भी अविधि करने से सेवा का सुफल नहीं मिलता बल्कि उसका कुफल भोगना पड़ जाता है। अत: योग्य सेवा ही की जाए, नियम के विपरीत नहीं।

साधु की सेवा किस विधि से की जा सकती है?

साधु की सेवा करने की शुद्ध भावना अवश्य रखनी चाहिये, लेकिन वह सेवा साधु नियमो के अनुरूप विधि पूर्वक ही की जानी चाहिए। आहार पानी की दृष्टि से भी साधु की सेवा करनी है तो उसे इस विधि से कर सकते हैं कि उस अनजान बस्ती मे महाराज के लिए स्वयं रसोई न बना कर वहां जो भिक्षा लायक घर दीखे, उन कृषक परिवारो को साधु की भिक्षाचरी की रीति का ज्ञान करावे कि तुम्हारे यहां सहज भाव से बाजरे की रोटी या जो भी

खाना बनता हो उसी मे से अगर महाराज आ जावे तो इस प्रकार के विवेक से उनको भिक्षा दे दे। यह भी ज्ञान करादे कि तुम्हारे यहां दूध दही के जो बर्तन आदि धुलते है, उस पानी को फैके नही बल्कि विवेक के साथ महाराज के लिए रहने दे। कदाचित् सन्त आ जाय तो उन्हे बहरा कर सेवा का लाभ ले। उनको आप समझा सकते हैं कि साधु महान् आत्मा होते है, कल्पतरु के तुल्य होते है सो वे तुम्हारे घर भिक्षा के निमित्त से आ जाय तो सेवा का सौभाग्यदायक साधन बनता है।

वे कृषक परिवार या अन्य लोग किसी भी धर्म को मानते हो, उनको ऐसा सहज भाव से समझा दे तो आपके लिए भी धर्म दलाली का कारण बन जाता है। ऐसी धर्म दलाली करने वाले श्रावक महान् पुण्य का बंध करते है।

सन्तो के लिए बनाया हुआ भोजन सन्त ग्रहण नहीं करते है और न वे टिफिन मे लाया हुआ भोजन भी ग्रहण करते है। हा, जहां पांच व्यक्ति जीमने वाले हो, वहां एक व्यक्ति के खाने जितना भोजन बच सकता है तो उतना सन्त ले सकते है। टिफिन मे लाया हुआ भोजन यदि किसी सन्त ने एक बार भी ले लिया तो लोगों को मालूम हो जाएगा कि महाराज ऐसा भोजन ले लेते हैं, तब फिर टिफिनो का तांता लग जाएगा। वहां पर निर्दोषता की स्थिति नहीं रहेगी। इसलिए श्रावक साधु की सेवा किस विधि से कर सकता है-इसकी उसको पूरी-पूरी जानकारी होनी चाहिए।

मर्यादाओं की सुरक्षा सेवा का पहला उद्देश्य रहे :

श्रावक साधु के प्रति अपनी सेवा के पहले उद्देश्य को समझ ले कि उस सेवा से साधु की मर्यादाए सुरक्षित रहनी चाहिए। सेवा का दृष्टिकोण शुभता का होता है लेकिन ऐसी सेवा की जाय जिससे साधु के आचार को दोष लगे तो वैसी अशुभता लानी सेवक के लिए समुचित नहीं होती है। श्रावक इस कारण साधु की मर्यादाओ को सुरक्षित रखने के लिए भी धर्म दलाली कर सकता है। श्रावक को साधु की शारीरिक अस्वस्थता की जानकारी हो जाय तो वह उन्हे डॉक्टर वैद्य के यहां ले जा सकता है और औषधि के लिए कह सकता है। कदाचित् औषधि लेना आवश्यक है और औषधि नहीं दी जाएगी तो संयमी जीवन खतरे मे पड़ जाएगा-यह देखकर वह साफ कह सकता है कि औषधि बाजार से खरीद कर लानी पडेगी, लेकिन आप उसको ग्रहण कीजिए।

शास्त्रकार कहते है कि आवश्यक सेवा सत्यता के साथ की जाय। उसमे अल्प पाप होता है लेकिन महान् पुण्य का उपार्जन होता है। तो सन्तो की सेवा करते समय श्रावक को पूरा विवेक रखना चाहिए। श्रावक लोग अगर मुलाहिजे मे पड़कर सन्तो की मर्यादा भंग करना चाहते है तो वह सन्तो की कुसेवा होगी जिसे कदापि नहीं करनी चाहिए। श्रावक मे तो इतना अधिक विवेक होना चाहिये कि अगर कहीं सन्त भी कमजोर बन कर मर्यादा से अलग हटने की चेष्टा करे तो उन्हे ठीक रास्ते पर बनाये रखे। साधु आचार की मर्यादाओ की रक्षा उसी रूप मे आवश्यक है जिस रूप मे पानी से लबालब भरे एक बांध की पाल की सतर्क रक्षा की जाती है।

साधु दूसरे साधु की सेवा आग्रह भाव से करे :

साधु जब दूसरे साधु की सेवा करे तो वहां वह आग्रह भाव से चले। किसी साधु को मालूम हो जाये कि अमुक सन्त कष्ट पा रहा है और अगर वह अध्ययन भी कर रहा हो तो या अन्य आवश्यक कार्य मे भी व्यस्त हो, तब भी वह सेवा के काय को प्रमुखता दे। अन्य सभी कार्यो को उस समय वह गौण कर ले। ऐसी आग्रह भावना रख कर जब एक साधु दूसरे साधु की सेवा करता है तो उसे अपूर्व लाभ मिलता है।

मनसा, वाचा, कर्मणा सेवा की भावना से ओतप्रोत होकर सेवा करने वाला साधु यही विचारणा करे कि वह रोगी साधु की सेवा करके उसके ऊपर कोई उपकार नहीं कर रहा हे, वल्कि वह अपना ही उपकार कर रहा हे, रोगी

साधु भले ही उसका उपकार माने। सेवा मे स्थिर रह कर वह सेव्य की सेवा करता है और नम्र शब्दों मे कहता है-आप घबरावें नही, मैं आपकी सेवा में जुटा रहूंगा तो वह पूरी तरह से रोगी साधु को साता उपजाता है। मन मे शुद्ध भावना, वचन मे विनम्रता तथा शरीर से पूर्ण सेवा जब किसी साधु की बनती है तो वह पुण्य का महान् फल प्राप्त करता है।

कोई साधु शरीर से तो सेवा कर लें मगर वचन में पूरा संयम न रखे और रोगी साधु को कुछ का कुछ बोलता रहे कि ऐसा नहीं कर रहे हो, वैसा नहीं कर रहे हो या कि औषधि तो दोष युक्त आयी है, लेना हो तो लो और रोगी साधु का दिल दुखाता रहे तो समझिये कि वह साधु होकर भी शास्त्रो के निर्देश के विपरीत चल रहा है। शास्त्रकारों ने स्पष्ट कहा है कि ऐसे प्रसंग पर निर्दोष औषधि मिले तो निर्दोष ले ही सकते है और दोषयुक्त हो तो उससे सन्तोष नही करना है, लेकिन पीडित साधु को डराना सेवा करने वाले साधु के लिए कतई योग्य नही है।

सेवा में आग्रह भाव रखने का यह अर्थ है कि साधु दूसरे साधु की सेवा करने में आगे रहे-विनय भाव से सेवा करने का अवसर मांगे और अवसर आवे तब उत्साहपूर्वक दत्तचित्त होकर सेवा करे। सेवा करने वाला साधु अगर सेवा से दिल चुराता है तो वह उसके लिए योग्य नही है। दिल चुराने का मतलब यह है कि अमुक साधु बीमार है या उसको अमुक सेवा की जरूरत है, यह मालूम पड़ जाने पर भी वह पास मे नहीं जावे, क्योकि पास मे जाने पर आंख की लाज से भी सेवा करनी पड़ेगी। ऐसी वृत्ति रखने से साधु को दोष लगता है।

शास्त्रकारो ने कहा है कि जिस साधु के कान पर रोगी साधु की आवाज पहुंच जाए और वह यह जान जाए कि रोगी साधु को उसकी सेवा की आवश्यकता है, तब भी वह समीप जाकर नहीं पूछे कि उनको क्या रोग है, कैसी औषधि की तलाश की जाए या किस रूप मे वह उनकी सेवा करे तो वह साधु दोष का भागी बनता है, बल्कि अन्य साधु यदि वैसे साधु को ठीक समझता है कि वह सेवा के झंझट से बच गया तो उस अन्य साधु को भी प्रायश्चित्त आता है। वह प्रायश्चित्त का दंड 120 उपवास का होता है। तो जो साधु जान कर भी सेवा नहीं करे और सेवा से दिल चुरावे, उसके दोष का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है।

तत्परता से की जाने वाली सेवा महान् आभ्यन्तर तपस्या होती है :

शास्त्रों मे निर्देश दिया गया है कि एक साधु को दूसरे साधु की सेवा करने के लिए मन, वचन और काया से पूर्ण तत्पर रहना चाहिए। सेव्य की सेवा मे अगर कमी रहती है तो वह सेवक के लिए अच्छा नहीं है। वैसा सेवक दोषी कहलाता है।

किन्तु सेवक भी कैसे-कैसे महान् होते है और वे अपने सेव्य के प्रति कितनी पवित्र सेवा करते है। इसका विवरण शास्त्रो मे मिलता है। नंदीसेन महाराज की कथा से ऐसा बोध प्राप्त होता है। उन्होने प्रण किया था कि मैं जीवन भर सेवा मे रत रहूंगा। वे महान् सन्त थे तथा मनसा वाचा कर्मणा सेवा की भावना के साथ चलते थे। एक बार तपश्चर्या के पारणे के दिन विधि से लाई हुई भिक्षा को ग्रहण करने के लिए बैठे ही थे कि सहसा दरवाजे पर आवाज आई-अरे नंदीसेन, सेवाव्रती कहलाता है सो क्या पेट की ही सेवा कर रहा है या साधु की सेवा भी करता है? एक साधु फलां स्थान पर जंगल मे पडा हुआ भयंकर कष्ट पा रहा है, कोई उसे सम्हालने वाला नहीं है। इतना सुनते ही नंदीसेन मुनि ने हाथ का नुवाला वापिस पात्र में रख दिया और उसे ढक दिया। फिर एक पात्र में पानी लेकर वे अपने स्थान से निकल पडे।

वहां पहुंच कर नंदीसेन मुनि ने निवेदन किया कि वे नगर मे चलें ताकि उनकी औषधि आदि की व्यवस्था हो

साधु भले ही उसका उपकार माने। सेवा मे स्थिर रह कर वह सेव्य की सेवा करता है और नम्र शब्दो में कहता है आप घबरावें नही, मै आपकी सेवा में जुटा रहूंगा तो वह पूरी तरह से रोगी साधु को साता उपजाता है। मन मे शु भावना, वचन मे विनम्रता तथा शरीर से पूर्ण सेवा जब किसी साधु की बनती है तो वह पुण्य का महान् फल प्राप करता है।

कोई साधु शरीर से तो सेवा कर लें मगर वचन मे पूरा संयम न रखे और रोगी साधु को कुछ का कुछ बोलत रहे कि ऐसा नही कर रहे हो, वैसा नही कर रहे हो या कि औषधि तो दोष युक्त आयी है, लेना हो तो लो और रोग साधु का दिल दुखाता रहे तो समझिये कि वह साधु होकर भी शास्त्रो के निर्देश के विपरीत चल रहा है। शास्त्रकारो ने स्पष्ट कहा है कि ऐसे प्रसग पर निर्दोष औषधि मिले तो निर्दोष ले ही सकते है और दोषयुक्त हो तो उससे सन्तोष नहीं करना है, लेकिन पीड़ित साधु को डराना सेवा करने वाले साधु के लिए कतई योग्य नही है।

सेवा मे आग्रह भाव रखने का यह अर्थ है कि साधु दूसरे साधु की सेवा करने मे आगे रहे-विनय भाव से सेवा करने का अवसर मांगे और अवसर आवे तब उत्साहपूर्वक दत्तचित्त होकर सेवा करे। सेवा करने वाला साधु अगर सेवा से दिल चुराता है तो वह उसके लिए योग्य नही है। दिल चुराने का मतलब यह है कि अमुक साधु बीमार है या उसको अमुक सेवा की जरूरत है, यह मालूम पड जाने पर भी वह पास मे नहीं जावे, क्योंकि पास मे जाने पर आंख की लाज से भी सेवा करनी पड़ेगी। ऐसी वृत्ति रखने से साधु को दोष लगता है।

शास्त्रकारो ने कहा है कि जिस साधु के कान पर रोगी साधु की आवाज पहुंच जाए और वह यह जान जाए कि रोगी साधु को उसकी सेवा की आवश्यकता है, तब भी वह समीप जाकर नहीं पूछे कि उनको क्या रोग है, कैसी औषधि की तलाश की जाए या किस रूप में वह उनकी सेवा करे तो वह साधु दोष का भागी बनता है, बल्कि अन्य साधु यदि वैसे साधु को ठीक समझता है कि वह सेवा के झंझट से बच गया तो उस अन्य साधु को भी प्रायश्चित्त आता है। वह प्रायश्चित्त का दंड 120 उपवास का होता है। तो जो साधु जान कर भी सेवा नहीं करे और सेवा से दिल चुरावे, उसके दोष का अनुमान आसानी से लगाया जा सकता है।

तत्परता से की जाने वाली सेवा महान् आभ्यन्तर तपस्या होती है :

शास्त्रो में निर्देश दिया गया है कि एक साधु को दूसरे साधु की सेवा करने के लिए मन, वचन और काया से पूर्ण तत्पर रहना चाहिए। सेव्य की सेवा मे अगर कमी रहती है तो वह सेवक के लिए अच्छा नहीं है। वैसा सेवक दोषी कहलाता है।

किन्तु सेवक भी कैसे-कैसे महान् होते हैं और वे अपने सेव्य के प्रति कितनी पवित्र सेवा करते है। इसका विवरण शास्त्रों में मिलता है। नंदीसेन महाराज की कथा से ऐसा बोध प्राप्त होता है। उन्होने प्रण किया था कि मैं जीवन भर सेवा मे रत रहूंगा। वे महान् सन्त थे तथा मनसा वाचा कर्मणा सेवा की भावना के साथ चलते थे। एक बार तपश्चर्या के पारणे के दिन विधि से लाई हुई भिक्षा को ग्रहण करने के लिए बैठे ही थे कि सहसा दरवाजे पर आवाज आई-अरे नदीसेन, सेवाव्रती कहलाता है सो क्या पेट की ही सेवा कर रहा है या साधु की सेवा भी करता है? एक साधु फलां स्थान पर जंगल मे पड़ा हुआ भयंकर कष्ट पा रहा है, कोई उसे सम्हालने वाला नहीं है। इतना सुनते ही नंदीसेन मुनि ने हाथ का नुवाला वापिस पात्र मे रख दिया और उसे ढक दिया। फिर एक पात्र में पानी लेकर वे अपने स्थान से निकल पड़े।

वहां पहुंच कर नंदीसेन मुनि ने निवेदन किया कि वे नगर मे चलें ताकि उनकी औषधि आदि की व्यवस्था हो

सके। वह साधु क्या था, आग का बबूला था, तेज होकर बोला-नगर तक चलने की क्या मेरी शक्ति है? दस्तो और उल्टियो से छटपटा रहा हूं, मेरे शरीर और कपडो की दुर्दशा तुमको क्या दिखती नही है? नंदीसेन मुनि ने शान्त भाव से सारी सफाई की, साधु को अपने कंधो पर बिठाया और नगर की तरफ चलने लगे। कधो पर बैठे-बैठे उस साधु ने इतनी दस्ते उल्टियां उन पर कर दी कि दुर्गन्ध के मारे सिर फटने लगा, फिर भी उनकी सेवा भावना मे कही ग्लानि की रेखा तक प्रकट नहीं हो रही थी।

नंदीसेन मुनि की ऐसी उत्कृष्ट सेवा को देखकर देवता ने अपनी माया तुरन्त समेट ली और मुनि को वन्दन कर निवेदन करने लगा-हे मुनिराज! इन्द्र ने आपकी उत्कट सेवा भावना की सराहना की तो वह मुझे सहन नही हुई और मै आपकी कठोर परीक्षा लेने चला आया। लेकिन मै आपको कोटि-कोटि वन्दन करता हू कि आप इतने महान् सेवाव्रती है। बिना पारणा किये तत्काल आप पहुचे और कितने आत्मीय तथा अग्लानि भाव से आपने सेवा की वह अनुपम है।

याद रखिये कि तत्परता से की जाने वाली सेवा महान् आभ्यन्तर तपस्या होती है। ऐसी उत्कृष्ट सेवा से जिस रूप मे आत्म स्वरूप उज्ज्वलता से निखर उठता है, वैसा निखार अन्य साधना से कम ही आता है। तत्पर सेवा साधना की महिमा अपूर्व होती है जो जीवन को श्रेष्ठतम बना देती है।

तत्पर सेवा का प्राचीन ही नहीं, आधुनिक उदाहरण भी :

आप सोचते होगे कि तत्पर सेवा का ऐसा उदाहरण तो प्राचीन समय का है, लेकिन आज के जमाने की बात भी आपको बता देता हूं।

स्वर्गीय आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा के दर्शन तो आप लोगों मे से कइयो ने किये होंगे। जब वे दक्षिण मे अध्ययन कर रहे थे तब एक सन्त मोतीलाल जी बीमार थे। उनका मस्तिष्क भी विकृत था। उनको दस्ते और उल्टियां भी होती थी। आचार्य श्री उस समय छोटे मुनि थे। वे अपने से छोटे सन्तो को भी सम्हालते थे तथा गोचरी लेकर आते। पहले सभी सन्तो को भोजन कराते, वृद्ध सन्तो को भी सन्तोष देते और तब कहीं स्वयं भोजन करने बैठते तो मोतीलाल जी म.सा को दस्तें व उल्टिया होने लग जाती तो उस वक्त वे दूसरे सन्तो से नही कहते कि तुमने भोजन कर लिया तो तुम सेवा करो, बल्कि बिना भोजन किये खुद ही उठ जाते और अपने हाथ से उनकी दस्तो व उल्टियां की सफाई करते, उनको कपडे बदलवाते और फिर भोजन करने बैठते।

यह तत्पर सेवा का आधुनिक उदाहरण है। स्वर्गीय आचार्यश्री के जीवन का क्या उल्लेख करूँ? वे परम क्षमाशील, सेवाभावी तथा विशिष्ट व्यक्तित्व वाले महापुरुष थे। जब कोई साधु दीक्षा मे कुछ बडा होता है और छोटा साधु बीमार हो जाय तो उसकी सेवा करने मे तत्परता नहीं बरतता है, लेकिन आचार्य देव की यह स्थिति नही थी। यह उनके आचार्य पद के पहले की लेकिन मेरी दीक्षा के एक साल के बाद की बात है कि हम दो तीन छोटे सन्त ज्वरग्रस्त हो गये। बगडी चातुर्मास के बाद जैतारण मे हम बीमार हुए थे। वे रात मे बार-बार उठकर हमको सम्हालते थे। व्याख्यान देते, समाज के कार्यों को सम्हालते, लेकिन छोटो की सेवा करने से भी नहीं चूकते थे। ऐसे महापुरुष विरले ही होते है।

तत्पर एवं मुक्त भाव से की जाने वाली सेवा के अपार महत्त्व को हृदयंगम करना चाहिए और सेवा मे दत्तचित्तता आनी चाहिए। सेवा के इस समग्र स्वरूप को अपने आचरण मे उतारेगे तभी भगवान् संभवनाथ की सच्ची सेवा कर सकेगे।

गृहस्थाश्रम में भी सेवा को परम धर्म मानें :

सेवा धर्म को भारतीय संस्कृति में परम गहन बताया है और उसे योगियो के लिए भी अगम्य कहा है, लेकिन साधु आचार में नहीं, गृहस्थाश्रम मे भी सेवा को परम धर्म मान कर आप लोगों को चलना चाहिए। बुरा न माने, आपके माता-पिता भी वृद्ध हो जाते है और खाट पर पड़े-पडे चिल्लाते रहते है, तब आप लोगो मे से कितने हैं जो उनकी सेवा में तत्पर रहते है? चार-चार लड़के होंगे लेकिन कोई माता-पिता के पास नहीं सोएगा। पैसे वाले हुए तो नौकर की व्यवस्था कर लेगे। पैसे वाले नहीं होंगे तो चीखते-चिल्लाते रहेंगे। रात्रि मे कोई उनको सम्हालेगा नहीं। कभी प्राण पंखेरु उड़ जाय तो पता भी नहीं चले कि कब उड़े? आज सेवा भावना काफी लुप्त होती जा रही है किन्तु ऐसा नही होना चाहिए।

स्व. आचार्य देव ने सारे साधुओं और साध्वियों को व्यवस्थित बना लिया सो यह वर्ग आज व्यवस्थित है। सब एक ही निष्ठा में चलते हैं-किसी की अपने चेले चेलियाँ नहीं है तो भी चिन्ता की जरूरत नहीं है। निर्देश पाकर बड़ी-बड़ी सतियां भी सेवा मे पहुंच जावेगी तथा ऐसी सेवा होगी जैसी मां-बाप की भी नहीं होती है। बीकानेर में-कपासन मे ऐसी सेवा हो रही है। ऐसी सुव्यवस्था साधु समाज में सर्वत्र नहीं है, हमारे यहां है। और ऐसी व्यवस्था है कि भव्य तरीके से सेवा हो सके। लेकिन क्या आपके गृहस्थाश्रम में ऐसी सुव्यवस्था है? भाई-बहिन इस पर चिन्तन करे। जैसी साधु जीवन में सेवा होती है, वैसी सेवा का परिवार के संबंध मे भी लक्ष्य रखे। गृहस्थाश्रम मे जैसी सेवा की शिक्षा लेंगे और देंगे, उसी के अनुसार आगे जीवन बनेगा।

ऐसी तत्पर सेवा करने वाले गृहस्थ भी होते हैं। मैंने सुना है कि भीखमचंद जी भंसाली और चेतनबाई दोनो पति-पत्नी ने अपने वृद्ध माता-पिता की खूब सेवा की। स्वयं सेवा करना तथा प्रत्येक समय सेवा के लिए तत्पर रहना सहज कार्य नहीं है।

सेवा की सदा सर्वत्र अहर्निश साधना :

भारतीय संस्कृति का सन्देश है कि **मातृदेवो भवः, पितृदेवो भवः** आदि। माता-पिता एवं गुरुजन की सेवा को बड़ा महत्त्व दिया गया है, बल्कि कहा गया है कि यथाशक्ति सेवा की सदा सर्वत्र अहर्निश साधना करते रहना चाहिए। सेवा धर्म को इतना गहन बताया गया है कि योग साधना सहज है, लेकिन सेवा साधना कठिन है।

साधु अपने साधु आचार की मर्यादाओं के अनुसार सेवा के लिए तत्पर रहे तो गृहस्थ अपने कर्त्तव्यो का भान रखते हुए अपने वृद्ध एवं रोगी माता, पिता व वृद्धजनों की हार्दिक सेवा करे। सेवा का क्षेत्र बहुत व्यापक है। सेवा की सीमा संसार के सारे प्राणियो तक पहुंचती है। सबकी सेवा सम्पूर्ण भाव से की जा सके तभी भगवान् संभवनाथ की सेवा हो सकेगी।

गोखा दिनांक 30-9-76

2
जीवन की चरित्र-सम्पन्नता

पंथड़ो निहालूं रे
बीजा जिन तणो...

परम पवित्र सदा सर्वदा अजय स्वरूप को जीवन पटल पर उभारते हुए उनके अजेय मार्ग का अन्वेषण करना है। प्रभु के अजेय मार्ग का अन्वेषण अन्तर्चक्षुओ से ही सभव है जिनमे दिव्य ज्योति की झलक पैदा हो जाय। ऐसी दिव्य दृष्टि सबको चाहिये, क्यो चाहिये न?

जब दिव्य दृष्टि की उपलब्धि होती है तो जीवन की चरित्र सम्पन्नता की ओर ध्यान केन्द्रित होता है। चरित्र सम्पन्नता के बिना जीवन में न सदाशयता प्रकट होती है, न तेजस्विता। व्यक्ति के जीवन मे तो चरित्र सम्पन्नता का अपूर्व महत्त्व है ही, लेकिन समाज और राष्ट्र के जीवन मे भी सामूहिक चरित्र सम्पन्नता के बिना सुख और समृद्धि की कल्पना नहीं की जा सकती है। आध्यात्मिक जीवन तो चरित्र-सम्पन्नता का मूर्तिमान जीवन होता है और ऐसे दिव्य जीवन के माध्यम से ही अन्तःकरण की भाव-धारा पवित्र परम्परा मे ढ़लती है तो उसी से आत्मा के दिव्य स्वरूप को अभिव्यक्त किया जा सकता है। जन मन की ऐसी शुभकामनाओ के प्रसंग से ही सन्त जनो के जीवन को बल मिलता है तो सन्त जनो को भी ऐसी शुभ भावनाओ के निर्माण मे अपना योग देना चाहिए। सन्तों के जीवन की चरित्र सम्पन्नता सामान्य जन के लिए आदर्श बने तथा वही आदर्श उसे स्वयं भी चरित्र सम्पन्न बने रहने की प्रेरणा दे। इसके लिए वीतराग देव द्वारा निर्देशित मूल मार्ग को ग्रहण करना चाहिए।

वीतराग का मूल मार्ग है-चारित्र सम्पन्नता को प्रदीप्त बनाना :

वीतराग का मूल मार्ग है-"**सम्यग् दर्शन-ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः।**" सच्ची श्रद्धा और सच्चा ज्ञान सच्चे चारित्र को विकसित करने के सशक्त साधन बनने चाहिए क्योकि चरित्र सम्पन्नता को प्रदीप्त बनाये बिना लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है। एक तीर्थंकर की देशना का नहीं, चौबीसो तीर्थंकरो की देशना का और अनन्त-अनन्त तीर्थंकरो की देशना का यही निष्कर्ष निकलता है कि इन तीनो सम्यक् साधनों का संगम और तीनो का एकत्व जब जीवन मे अभिव्यक्त होता है, तभी वीतराग का मूल मार्ग प्रकाशित बनता है।

श्रमण संस्कृति की पवित्र गरिमा इसी मूल मार्ग के अनुपालन के साथ अक्षुण्ण बनी हुई है। यह श्रोत भव्य जनों को आनन्द से आप्लावित करने वाला, उन के जीवन को पवित्र बनाने वाला तथा आमूलचूल परिवर्तन के दिव्य मार्ग का संकेत देने वाला है। इसी श्रोत से सबका जीवन प्रभावित बने और इस श्रोत के प्रवाह को वेग दिया जाय तो सब ओर चरित्र सम्पन्नता को प्रदीप्त बनाना कठिन नहीं होगा।

आज का दिवस उस दिव्य एवं चरित्र सम्पन्न आत्मा की स्मृति का प्रतीक है, जहां से क्रान्तिकारी श्रमण संस्कृति की जाज्वल्यमान धारा प्रस्फुटित हुई। जन-जन के अन्तःकरण को पवित्र बनाने वाली पावन गंगा के प्रवाह के तुल्य स्वर्गीय आचार्य देव श्री गणेशीलाल जी म सा थे और पूर्व के आचार्यों और उनका सिलसिला प्रभु महावीर तक जुड़ता है। उन सबकी अमोघ धारा की सुरक्षा के लिए एक विशिष्ट चरण चिह्न का आज के दिन इस भूमडल

पर प्रारंभ हुआ था। एक विशेष परिस्थिति मे निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की चद्दर ओढ़ाई गई थी। दूसरे शब्दो मे कहूं तो द्रौपदी के चीर के तुल्य जो बीच मे छिन्नभिन्नता की स्थिति उपस्थित हो रही थी, उसको सुव्यवस्थित करने के लिए वृहद् सादडी सम्मेलन मे समस्त संत वर्ग के प्रतिनिधियो ने/श्रमण वर्ग के साधको ने एक उद्देश्य निर्मित किया कि एक ही आचार्य के नेतृत्व में इस चतुर्विध संघ की पावन गंगा अबाध गति से प्रवाहित हो। शिक्षा, दीक्षा, प्रायश्चित्त, विहार आदि समग्र क्रियाएं एक आचार्य के नेतृत्व मे आदेशित हों। ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य की एक धारा मिलने से जैसे मोक्ष मार्ग का निर्माण होता है, उसी तरह से चतुर्विध संघ की चरित्र सम्पन्नता की एक ही धारा बहे।

इस उद्देश्य को सर्वानुमति से स्वीकृति मिली थी, लेकिन उसके कार्यान्वयन मे सर्वानुमति से सब महानुभावो के अन्तःकरण की समर्थता सक्षम नहीं हो पाई। दिव्य पुरुष स्व. आचार्य देव के नेतृत्व में यह संरचना हुई थी। चरित्र सम्पन्नता के परमाकांक्षी उस दिव्य पुरुष ने अपने दृढ संकल्प को साकार रूप देने की दृष्टि से सबके लिए द्वार खुले रखते हुए और समग्र संत सती वर्ग को आह्वान करते हुए यह निर्देशन दिया कि सादडी सम्मेलन मे जिस उद्देश्य को साकार रूप नहीं दिया जा सका, उसको मै अपने अतिम जीवन मे साकार रूप दे रहा हूं। उन्होने घोषणा की कि सबके लिए द्वार खुले रखे गये है और अपने सर्वमान्य नियमों का पालन करते हुए जिस दिन सभी अपने मार्ग पर आरूढ हो जायेगे, उस दिन मेरी आन्तरिक भावना परिपूर्ण बनेगी। मै अभी वर्तमान मे जिसको अमली रूप देने के लिए कह रहा हूं, वह पवित्र धारा भी उससे अलग नहीं रह पाएगी।

चरित्र सम्पन्नता के मार्ग को निष्कंटक बनाने की दृष्टि से आचार्य देव का यह अनूठे साहस का कार्य था। वृद्धावस्था मे प्रत्येक दुर्बलता का अनुभव करता है, लेकिन उस पुण्य पुरुष का साहस तरूणो से भी अधिक तेज गति से चल रहा था। शारीरिक बाधाएं तथा वायुमंडल की बाधाएं उन्हे विचलित नहीं कर पाई और उन्होने आज के ही दिन उस उद्देश्य को अमली रूप दिया। वह प्रसंग था निग्रंथ श्रमण संस्कृति की उत्क्रान्ति का, न कि व्यक्ति विशेष के गुणगान का। इसके पीछे एक ही लक्ष्य था कि जीवन की चरित्र सम्पन्नता अभिवृद्ध बने।

एक निष्ठा, एक विचारधारा, एक प्रतिपादन और एक चरित्र की दिशायें :

आचार्य का पद तीर्थंकरो की परम्परा का स्थायी पद होता है। इस पद पर साधक आते है और चले जाते है लेकिन यह पद ध्रुव नक्षत्र की तरह स्थिर रहता है। इस पद का आश्रय लेकर भव्यजन-सन्तजन इस शासन की शरण मे समर्पित होते है तथा अपने जीवन की साधना का-सार्थकता का समुज्ज्वल प्रसंग उपस्थित करते है। इसके अनुरूप दृढ़ संकल्प करने की आज की तिथि आज के मानव समुदाय को उद्बोधन दे रही है कि यदि रत्नत्रय की त्रिपुटि को एकाकार करना चाहते हैं तो चरित्र सम्पन्नता के महद् कार्य को सफल बनाने मे अपने चरित्र निर्माण का समारभ कीजिए।

वर्तमान परिस्थितियो की मीमांसा करे तो प्रतीत होगा कि राग द्वेष की जटिल ग्रंथियां मानव मन को झकझोर रही है तथा जन-जन के मन मे दीवारे खड़ी कर रही हैं। विषमता की ऐसी खाई बनती जा रही है जिससे जन कल्याण का मार्ग अवरुद्ध हो रहा है। जन जीवन की आन्तरिकता को संतप्त बनाते हुए ममत्व की रस्सियो के मजबूत बन्धन और अधिक कसते जा रहे हैं, जिससे विवेक कुंठित बन रहा है। इन विषम परिस्थितियो मे चरित्रशीलता को कार्यरत बनाने की अनिवार्य आवश्यकता है। इस द्वितीया तिथि के प्रसंग को इस सन्देश के रूप मे ले कि राग द्वेष की जड़ो को तथा ममत्व के बन्धनो को दूर करने के लिए कटिबद्ध बन जावे-ममत्व के धरातल को समत्व के धरातल के रूप मे परिणित कर दे।

समत्व की साधना के साथ प्रत्येक मानव का मन मयूर अपनी आध्यात्मिक कला का प्रदर्शन करता हुआ एक निष्ठा के साथ, एक आवाज, एक विचारधारा, एक श्रद्धा, एक सरीखा प्रतिपादन तथा एक सरीखा यथाशक्ति यथास्थान अपने व्यवहार बनावें। प्रत्येक यह दृढ़ सकल्प अपने मन मे बनावे कि चारित्रिक दृष्टि से मन, वचन एव काया का एकीकृत भाव प्रकट होना चाहिए। यह चिन्तन किया जाये कि अनन्त तीर्थंकरो द्वारा प्ररूपित एव व्यवहृत निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति के सभी सहायक बने। यह भी सोचे कि चरित्र सम्पन्नता के इस क्षेत्र मे यथाशक्ति आगे बढेगे लेकिन पीछे हटने या हटाने मे किसी के सहयोगी नही बनेगे।

चरित्र सम्पन्नता की पाठशाला के विद्यार्थी के रूप में :

श्रमण संस्कृति की जो आध्यात्मिक वाटिका है, इसकी शोभा बढ़ाने वाली विभिन्न द्रुम लताएं, रंग बिरंगे फूल और कलियां खिल रही है, जन मानस उनकी सुगंध को भी ग्रहण करे। इस वाटिका को ही दूसरे रूपक मे चरित्र सम्पन्नता की पाठशाला कह दे और सारे चतुर्विध संघ को इस पाठशाला के विद्यार्थी मान सकते हैं जो अलग-अलग स्तर पर अलग-अलग कक्षाओ में चारित्र्य-पालन का अभ्यास कर रहे हैं। चारित्र पालन का अभ्यास जब सुचारु बन जाएगा तो सम्पन्नता उसकी उपलब्धि कहलायेगी।

आज इस द्वितीया के प्रसग से जो कुछ भी बाते, उपदेश, कविताए् आदि विभिन्न रूप मे उपस्थित हुई, वे स्व आचार्य देव की शान्त क्रान्ति को सुदृढ बनावे और सबमें एकत्व की भावना पैदा करे-यही वांछनीय है। मेरे लिये जो कुछ भी गुणगान या प्रशंसा के शब्द कहे गये है, वे सब प्रभु के शासन को समर्पित हैं। मै तो स्वयं इस आध्यात्मिक पाठशाला के एक विद्यार्थी के नाते कुछ संशोधन एवं शिक्षाओ की अभिलाषा रखता हूं। जैसे अभी कुचेरा और राणावास के छात्र अपनी जिज्ञासा अभिव्यक्त कर गये, वैसे ही मेरी छात्रवत् भावना है कि मेरी अपने जीवन की नैतिकता तथा अन्तरात्मा की पवित्र भावना दिन पर दिन बढती रहे और मै आध्यात्मिक परीक्षाओ मे आगे से आगे सफल होता रहूं।

यह सबके लिए भी वांछनीय है कि सभी अपने अन्त:करण मे अपने आपको चरित्र सम्पन्नता की इस आध्यात्मिक पाठशाला के विद्यार्थी के रूप मे देखे और विद्यार्थी भावना की अभिव्यक्ति करे। विद्यार्थी मानकर विद्याओ का अभ्यास किया जाएगा तो जीवन पथ प्रशस्त बनता जायेगा तथा चरित्रशीलता का विकास होता जायेगा। सही ज्ञान एव सही विश्वास के साथ श्रेष्ठ आचरण की आवश्यकता न सिर्फ साधना के पथ पर है, बल्कि वह संसार के कर्म क्षेत्र मे भी उतनी ही है क्योकि सासारिक जीवन मे जितनी अधिक नैतिकता लाई जा सकेगी उतना ही अधिक अनुकूल वातावरण आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी बनेगा। आध्यात्मिक क्षेत्र के साधक भी आखिर सांसारिक क्षेत्र से ही तो आते है। इसलिए विद्यार्थी के रूप मे चरित्र सम्पन्नता का अभ्यास श्रावक अवस्था मे भी जल्दी ही प्रारंभ कर दिया जाना चाहिए।

समाज आज जिन विषम परिस्थितियो मे से गुजर रहा है, चरित्रहीनता की दृष्टि से भ्रष्टाचार के वातावरण मे राष्ट्र की जो कुछ दयनीय दशा बन रही है, वह सबके सामने है। ऊपर से जो कालाबाजारी, मुनाफाखोरी, अव्यवस्था तथा अनुशासनहीनता आदि की बुराइयां बुरी तरह से फैलती हुई दिखाई दे रही है, उनके मूल मे चरित्रहीनता ही मुख्य रूप से जिम्मेदार है। चारो ओर राष्ट्रीय चरित्र का अभाव दिखाई देता है और उसका कारण है कि व्यक्ति स्वयं चरित्रशील नहीं बन रहा है।

राष्ट्रीय चरित्र का अभाव : एक घातक स्थिति :

वास्तव मे किसी भी राष्ट्र मे-उसके नागरिकों मे यदि राष्ट्रीय चरित्र का अभाव हो तो वह उस राष्ट्र के लिए एक प्रकार से घातक स्थिति के समान होता है। राष्ट्रीय चरित्र का अभाव साफ तौर से व्यक्ति की चरित्रहीनता की घोषणा करता है। व्यक्ति की चरित्रहीनता के कारण सामूहिक चरित्र का विकास नहीं हो पाता है और उसके बिना राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण संभव नही।

चरित्र की सामान्य व्याख्या करे तो यही होगी कि आपका जीवन जिस रूप मे दिखाई देता है या कर्त्तव्य निष्ठा की दृष्टि से जिस रूप मे दिखाई देना चाहिए वह वास्तव में अंदर से भी वैसा ही हो-दोहरापन नहीं होना चाहिए। फिर आचरण की सीमाओ में सभी प्रकार की मर्यादाओ का पालन किया जाय जो सामाजिक एवं राष्ट्रीय अनुशासन के लिए आवश्यक होती है। आप अपनी दिनचर्या मे, धन कमाने मे, परस्पर व्यवहार करने मे उन सामाजिक व राष्ट्रीय मर्यादाओं का पालन करते है तो सामान्य रूप से वह राष्ट्रीय चरित्र का रूपक हो जाएगा।

राष्ट्रीय चरित्र का विकास तभी हो सकेगा, जब व्यक्ति पहले अपने जीवन को चरित्र सम्पन्न बनाने का प्रयास करेगा। व्यक्ति के जीवन मे जो चरित्रहीनता है उसका यह कारण है कि जीवन मे वास्तविक उद्देश्य का निर्धारण नहीं हो पाता है और निर्धारण होता भी है तो उसे उसकी गति विचलित हो जाती है। उद्देश्यहीनता चरित्र-सम्पन्नता को उत्पन्न नहीं होने देती है। उद्देश्यहीन व्यक्ति का चरित्र उसके परिवार के लिए सहायक नहीं बनता, अपने सामाजिक दायित्व को ग्रहण नहीं करता तो राष्ट्रीय कर्त्तव्यों के पालन से भी उपेक्षित हो जाता है।

व्यक्ति से समाज और समाज से राष्ट्र की रचना बनती है। व्यक्तिगत चरित्र यदि समृद्ध बन जाता है, समता के धरातल पर ममता के बंधनों से रहित हो जाता है तो उस चरित्र का सुप्रभाव अन्य व्यक्ति पर पडे बिना नहीं रहता है। इस प्रकार व्यक्ति-व्यक्ति की चरित्रशीलता पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय चरित्र सम्पन्नता की ओर गतिशील बनती है। राष्ट्र की वर्तमान घातक स्थिति से त्राण पाने का एक मात्र उपाय यही है कि व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों दिशाओ से चरित्र सम्पन्नता का ऐसा प्रवाह प्रवाहित किया जाय कि एक सुस्पष्ट एवं आदर्श राष्ट्रीय चरित्र का उद्भव हो सके।

राष्ट्रीय चरित्र के विकास से विषमताओं की समाप्ति :

आज सामाजिक जीवन मे मानव-मानव के बीच मे विषमताओं का कुटिल वातावरण दिखाई देता है, लेकिन क्या आपने सोचा है कि यह क्यों है? इन विभेदो को लेकर आलोचनाएं-प्रत्यालोचनाएं होती रहती है, लेकिन मूल तथ्य की ओर ध्यान केन्द्रित करने की कोशिश नही की जाती है। सच बात तो यह है कि मूल केन्द्र यदि सुधर जाता है तो टहनियो और पत्तियो के हरी भरी होने मे कोई संशय नही रह जाएगा। अकेले राष्ट्रीय चरित्र के विकास से विषमताओ की समाप्ति की जा सकती है। राष्ट्रीय चरित्र राष्ट्रीय समस्याओं का मूल केन्द्र होता है।

व्यक्ति का चरित्र डूब रहा है तो आज राष्ट्र का चरित्र भी डूब रहा है। कहां है आज राष्ट्रीय चरित्र एवं कहां है भावात्मक एकता? दोनो के अभाव मे नागरिकों का व्यवहार न तो बाह्य रूप से परस्पर सहयोगात्मक है और न आन्तरिक दृष्टि से सहानुभूतिपूर्ण है। आप जितनी संख्या मे भाई और बहने यहां उपस्थित है, आप अपने जीवन के अंदर व्यक्तिगत चरित्र के साथ-साथ राष्ट्रीय चरित्र की स्थिति को भी संपन्न बनाने का प्रयास करें और कुछ प्रण करे कि हमारा व्यक्तिगत जीवन इतना भव्य उज्ज्वल, ईमानदार, वफादार एवं मन वचन काया के शुभ योग वाला बने कि अपने जीवन मे ज्ञान, दर्शन, चरित्र की त्रिपुटि की साधना सफल हो तो वह प्रभा समाज व राष्ट्र के जीवन मे नैतिकता

को समुज्ज्वल बनावे। यदि व्यक्ति-व्यक्ति अपनी चरित्र सम्पन्नता का सम्बल लेता है और जिस-जिस क्षेत्र में जो जो जिस-जिस प्रकार का कार्य करता है उसमे यदि ईमानदारी से चलने का यत्न करता है तो वह राष्ट्रीय चरित्र के विकास मे भी अपना यथायोग्य योगदान कर सकता है।

जापान के एक गरीब देशभक्त की बात मै समय-समय पर जनता के समक्ष रखता हूं। एक भारतीय सज्जन जापान के जहाज मे बैठ कर यात्रा कर रहे थे। उनको कुछ फलो की आवश्यकता हुई। इधर-उधर खोज करने पर जब उन्हे फल उपलब्ध नहीं हुए तो उनका धैर्य टूट गया। वे असयमित वचनों से जापान देश की निंदा करने लगे। यह निदा एक जापानी देशभक्त सहन नहीं कर सका और वह अपने लिये लाये फल ले आया और उनको देते हुए बोला-'आप ये फल ले ले, लेकिन मेरे देश की निदा न करे।' जब वे भारतीय सज्जन उसे फलो की कीमत देने लगे तब भी उसने यही कहा कि मुझे द्रव्य नहीं चाहिए, इनकी कीमत यही मानूंगा कि आप मेरे देश की गरिमा घटाने वाले वचन न कहे। क्या जापान के उस देशभक्त की तरह भारतीय मन मस्तिष्क मे राष्ट्रीय गौरव की भावना है? अधिकांश में ऐसा शायद ही हो बल्कि कई भारतीय तो अपने देश की खुद खिल्ली उडाने लग जायेगे।

राष्ट्रीय चरित्रहीनता दूर होनी चाहिए और उसके लिए व्यक्ति की चरित्र सम्पन्नता प्रोत्साहित की जानी चाहिए। राष्ट्रीय चरित्र का इस तरह से विकास किया जाये तो चारो ओर व्याप्त विषमताओ की भी समाप्ति होने लगेगी।

जीवन की चरित्र सम्पन्नता एक-एक कदम आगे बढ़े :

किसको क्या कहा जाय-आज सर्वत्र अंधाधुंधी आपाधापी लगी हुई है। व्यक्ति का चरित्र ममता, स्वार्थ और कर्त्तव्यहीनता से भ्रष्ट है तो उसे न समाज मे नैतिकता का ध्यान है तो न राष्ट्रीय धरातल पर अनुशासन का। यही कारण है कि मानवीय संस्कृति-निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति को भी छिन्न-भिन्न करने के दुष्प्रयास किये जा रहे है। अत: आपके मन मे आज के दिवस का जो भी सम्मान है, उसको साथ लेकर जीवन की चरित्र सम्पन्नता के क्षेत्र मे भले एक-एक कदम ही आगे बढे, लेकिन आगे बढ़ना अवश्य आरंभ कर दे।

आपके जीवन में चरित्र सम्पन्नता की दिशा में आगे बढ़ने की गतिशीलता आवेगी और जब आप स्वयं सुधरेगे तो फिर समाज को सुधारने की भी आपकी चेष्टा बनेगी। समाज मे आज कितनी कुरीतियां व्याप्त है और वे किस प्रकार से आपके जीवन को जर्जर करती जा रही है लेकिन आपसे छूटती नही है। दहेज, छुआछूत आदि अनेकानेक कुरूढियो से समाज ग्रस्त बना हुआ है। इस ग्रस्तता को जब तक नहीं मिटा पाते हैं, तब तक सामाजिक वातावरण मे आत्मीय गुणो का प्रसार सभव नहीं है। ये धर्मपाल बंधु भी अछूत कहलाते है और इनकी वहां के सामाजिक क्षेत्र में बडी दुर्दशा थी। मैं रतलाम से नागदा क्षेत्रो मे विहार करने लगा तो मैंने इनकी दुर्दशा प्रत्यक्ष देखी। ये लोग अत्यन्त सन्तप्त अवस्था मे चल रहे थे। उस समय जब इन लोगों को मानवीय भावना का स्पर्श मिला और बाद मे जब सहयोग का हाथ-तो इनके जीवन मे एक अद्‌भुत परिवर्तन होने लगा। ये लोग अपने दुष्चरित्र से हट कर चरित्रशीलता पर आरूढ़ होने लगे। मैंने कुछ संस्कार की बाते इनको दी तो वे जैन धर्म के पवित्र नियमो को अंगीकार करके चलने लगे। यह अगीकरण भी सामूहिक रूप मे करने लगे।

जिस '**अहिंसा परमो धर्मः**' के सहारे भारतीय जनता ने अपनी स्वतंत्रता प्राप्त की-महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय धरातल पर अहिंसा के प्रयोग को साकार रूप दिया, वह भगवान् महावीर की अहिसा भारत के महान् सपूतो का पहले भी आचरण केन्द्र रही है। उस युग के कई अग्रज श्रेष्ठियों और राजाओ ने उसे अंगीकार की थी तथा जैन धर्म

की महिमा बढ़ाई थी। याद रखे, जैन धर्म किसी वर्ग, जाति या व्यक्ति विशेष का धर्म नहीं है, वह तो सदा ही सर्वसाधारण का धर्म रहा है तथा इस धर्म के सिद्धान्तों मे इसी कारण भेद दृष्टि को कहीं भी कोई स्थान नही मिला है। कोई भी व्यक्ति राग द्वेष को जीत कर जब अहिंसा के मार्ग पर चलता है तो समझिये कि वह जैन है। जो जन धर्म है, वही जैन धर्म है। जिन्होने आत्मिक सद्‌गुणो का विकास किया है और जो वीतराग देवो के बताए हुए सिद्धान्तो के अनुसार चलना चाहते हैं, वे जैन धर्म को मानने वाले कहे जा सकते है। आज यही रूपक स्पष्ट हुआ है कि लाखो धर्मपाल भाई अहिंसा के मार्ग पर चलने लगे हैं तथा अपने जीवन मे चरित्रशीलता को प्रमुख स्थान दे रहे है।

जब मैं धर्मपालो के क्षेत्रो में घूमा और वे हजारों की सख्या में अहिंसा धर्म की ओर आकर्षित होने लगे तो साधुमार्गी जैन संघ के नेताओं का ध्यान भी उधर गया और आज वे भी उनको संस्कार देने की दृष्टि से चल रहे है। अब सब लोगों का ध्यान उस ओर खिंच रहा है। डॉ बोरदिया जी जैसे विख्यात डॉक्टर उनके बीच मे कार्य कर रहे हैं तो मानव मुनि जी जैसे सर्वोदयी भी उनकी सेवा में जुट गये है। मेरे इन्दौर चातुर्मास के समय मे मध्यप्रदेश के राज्यपाल श्री पाटस्कर धर्मपाल प्रवृत्ति से बहुत प्रसन्न हुए और मेरे पास दर्शनार्थ आए तो मैने यही कहा कि इनको ऊपर उठाने मे एक हाथ राज्य का भी लग जाये तो इन्हे अपने जीवन में चरित्र सम्पन्न परिवर्तन लाने मे बडी सुविधा हो जायेगी।

सब ओर चरित्र की उन्नति : एक वांछनीय उद्देश्य :

अब बुद्धिवादी व्यक्तियो का युग आ गया है। कटिबद्ध होकर ईमानदारी से ज्ञान-दर्शन की पवित्र भूमिका के साथ चरित्र को उन्नत बनाने का कार्य सभी ओर संभालना है। यह मानवीय कर्त्तव्य है कि अपने चरित्र को उन्नत बनावे तो जहां-जहां पीड़ित और पतित मानवता के दर्शन हो वहां-वहां चरित्र की उन्नति के पुनीत प्रयास करें और यह मानवीय उद्देश्य बन जाना चाहिए जो सर्वथा वांछनीय है।

मैं देश के नेताओं से, कार्यकर्त्ताओं से तथा साधुमार्गी संघ के अगुआओ से कहूंगा कि अब धीरे-धीरे मन्द गति से चलने का युग नहीं है। समता के धरातल पर पीडित मानवता को सहायता देने की कोशिश नहीं की-उसकी चारित्रिक उन्नति मे सम्बल नहीं पहुंचाया तो आगे का समय क्या कहेगा? आपके सद्‌गुण-आपकी चरित्र सेवा और आपका मानव प्रेम द्वितीया के चांद की तरह निरन्तर अभिवृद्ध होता जाय-यही मंगल कामना करता हूं।

नोखा, दिनाक 25-7-76

3

आपत्तियों के सामने अटल आस्था चाहिए!

अभिनन्दन जिन दर्शन तरसिये,
दर्शन दुर्लभ देव।
मत मतभेदे रे जो जई पूछिये,
सहु थापे अहमेवङ्क

जिज्ञासु भव्य आत्मा जब अपने मूल स्वरूप को प्रकट करने का अन्तःकरण पूर्वक संकल्प बना लेती है तो उस संकल्प को सिद्ध करने के लिए उसे पुरुषार्थ का बल लेकर आगे बढ़ने की आवश्यकता रहती है। संकल्प दृढ विचार और निश्चय होता है तो उसकी क्रियान्विती पुरुषार्थ की सहायता से ही हो सकती है। जब सकल्प और पुरुषार्थ के रूप मे दो शक्तियां संयुक्त हो जाती है तो वह आत्मा निर्भीक बन जाती है। संकल्प सिद्धि के मार्ग मे कितनी ही आपत्तियां क्यो न आवे-वह आत्मा अपने लक्ष्य से किसी भी रूप मे विचलित नही होती है क्योकि उसे अपनी अटल आस्था का पूर्ण सम्बल होता है। श्रेष्ठ सकल्प, अटल आस्था एवं प्रबल पुरुषार्थ की त्रिपुटी मिल जाये, तब आपत्तियो पर विजय पाना कठिन नहीं रहता है।

वस्तुतः आत्म विकास के लक्ष्य को जीत लेना कठिन नहीं है। कठिन होता है उस विजय के अनुकूल आन्तरिक पृष्ठभूमि का निर्माण करना। इस त्रिपुटी की एकजुटता वांछित पृष्ठभूमि का निर्माण कर लेती है।

संकल्प से प्रयाण होता है, पुरुषार्थ से गति मिलती है :

आत्मोन्मुख साधक जब अपना दृढ़ सकल्प बना लेता है कि उसे अपने मूल स्वरूप को प्राप्त करना है तो उस संकल्प की प्रबलता से वह आत्मविकास के पथ पर प्रयाण कर लेता है-चल पडता है। उस संकल्प के साथ जब पुरुषार्थ मिलता है तो साधक को उस पथ पर अग्रगामी बनने की गति प्राप्त होती है। वे साधक तब इस संसार रूपी अटवी के अंदर अपनी गति को वेगवती बना कर चलने का प्रयास करते है और यही भावना रखते है कि वे शीघ्र से शीघ्र प्रभु के दर्शन कर ले अर्थात् अपने आत्म-स्वरूप को प्रभु के परमात्म स्वरूप के समकक्ष ले जावे।

कल्पना करे कि दुर्गम पहाडियों के परले छोर पर स्थित भव्य नगर को देखने के लिए एक पथिक चल पडता है। उसका लक्ष्य है उस भव्य नगर तक पहुंचना तो यही उसका संकल्प होता है और संकल्प के बल पर ही वह प्रस्थान कर लेता है। प्रस्थान को पुरुषार्थ का श्रीगणेश कह सकते है, क्योकि पुरुषार्थ ही सकल्प का अमली रूप होता है। ज्यो-ज्यो उसका पुरुषार्थ बल पकडता जाता है, त्यों-त्यो वह अपनी चाल को तेज बनाता जाता है। उसके सामने पहाडियां होती है-साक्षात् आपत्तियो के समान-जिन्हे पार करके ही वह भव्य नगर में प्रवेश कर सकता है।

वह पथिक उन ऊंची-ऊंची पहाडियो की तरफ देखता है और पहाड़ियो के समीप पहुंचने लगता है तो उसका दिल सहमना शुरू होता है। वह आने वाले खतरो को सोचता है तो उन पहाडियो के भीतर होकर जाने मे रुक सा जाता है। वह देखता है कि पहाड़ियो की थका देने वाले चढ़ाई, घने और बीहड़ जंगलो की भयंकरता तथा वन्य पशुओ की गर्जनाएं उसके सामने है और क्या मालूम कि इन सारी आपत्तियो के बीच मे उसका जीवन भी रहेगा या

कहीं उसकी ही इतिश्री न हो जाय। कितनी तरह के जंगली जानवरों से किस तरह सामना होगा-कौन जाने? उसका मन आगे बढ़ने से सहमता है।

मानसिक दुर्बलता के इन क्षणो में फिर संकल्प शक्ति सामने आती है और उसको ललकारती है कि जो उसने सोचा है, क्या उसे वह पूरा नही कर सकेगा? संकल्प शक्ति उस मानसिक दुर्बलता को दबाती है, तब वह पथिक साहस जुटाता है और अपने पुरुषार्थ को सजग बनाता है। जाने की तमन्ना मजबूत होती है तो कोई साथी नहीं होने पर भी वह हिम्मत से आगे बढ़ता है। वह सोचता है कि चलो मैं इष्टदेव का स्मरण करके आगे बढ़ता हूं। संकल्प और पुरुषार्थ की शक्ति उसे आगे बढ़ाती है।

जब आपत्तियां आती हैं तो अटल आस्था पल्ला थाम लेती है :

जो इष्टदेव का स्मरण करता है-वह अपनी आस्था का परिचायक होता है। यह आस्था जितनी सुदृढ़ होती है, पथिक का साहस उतना ही सुदृढ बनता है और यह आस्था जब अटल बन जाती है तो पथिक भी अजेय हो जाता है। तब वह आपत्तियो को जीत लेता है-आपत्तियां उसे पराजित नही कर पाती है। जब संकल्प शिथिल होने लगता है और पुरुषार्थ मन्द बन कर साहस टूटने लगता है, तब अमिट आस्था का सम्बल उस हारे थके पथिक का पल्ला थाम लेता है। वह फिर सन्नद्ध हो जाता है आगे बढ़ने के लिए और हिम्मत के साथ आगे चल पडता है क्योकि उसे अनुभूति मिल जाती है प्रभु के दर्शन की एवं अपनी ही आन्तरिक शक्ति की। उसकी अटल आस्था तब उसे आत्म-विकास के पथ पर से डिगने नही देती है।

वह अटल आस्था के साथ चल पडता है तो समझिये कि वह उस भयंकर अटवी को सुरक्षित रूप से पार भी कर सकता है और उस भव्य नगर मे अपने चरण रख सकता है। लक्ष्य पर पहुंचने के बाद उस अपूर्ण आनन्द का भी उसको अनुभव मिल सकता है जो अन्यथा संभव नही होता।

उस पथिक के समान ही कवि का सकेत इस प्रार्थना में साधक के लिए है। साधक सोचता है कि भगवन्, आप अपने सिद्ध स्वरूप में विराजमान है और सिद्ध स्थिति यहां से ऊपर है। बीहड़ जंगल घाटियां तो इसी भूमडल पर रह जाती है, लेकिन सिद्ध स्थिति तक पहुंचने के लिए भी बीच में बड़ी बीहडता है। परमात्मा के समीप पहुंचने के लिए ऊर्ध्व गमन करके, ऊपर उठना होता है। आप सोचेगे कि ऊपर जाने के लिए तो किसी न किसी वाहन की जरूरत पड़ेगी, लेकिन ध्यान रखें कि वहां तक ले जाने वाला कोई वाहन नहीं है। अपनी यह आत्मा ही वाहन और वाहक दोनों होती है।

इस वैज्ञानिक युग में वैज्ञानिकों ने कुछ यन्त्र तैयार किये है। तथाकथित चन्द्र लोक पर मानव उतर आया है। मंगल ग्रह पर अभी मानव तो पहुंचा नहीं है लेकिन यंत्रों के माध्यम से शोध का काम चल रहा है। ये रॉकेट, ये अवकाश यान तथा आधुनिक यंत्र भी मनुष्य को सिद्ध क्षेत्र तक पहुंचाने मे सक्षम नहीं है, क्योकि मनुष्य यदि अधिक विकास करके और भी तीव्र गति वाले वाहन तैयार कर ले तो भी सूर्य मंडल के समीप ही पहुंच पाएगा। उससे आगे बढने पर तो वह भस्म हो जाएगा। सूर्य मंडल से तो बहुत दूर ऊपर बारह देवलोक है-एक दूसरे के ऊपर से ऊपर। फिर इसी तरह नौ ग्रैवेयक तथा उनसे ऊपर पांच अनुत्तर विमान है। इनके ऊपर एक विशाल शिला है जो औंधे छत्ते के आकार की है। यही वह स्थान है, जहा सिद्ध आत्माएं विराजमान रहती हैं।

इस तरह आत्म विकास यात्रा का लक्ष्य है यह सिद्ध शिला, जहां पहुंचने के बीच मे कर्मबंध की भयावह आपत्तियां खडी हुई हैं। जिन्हे पराजित करना अटल आस्था से ही संभव होता है।

विकास यात्रा में बाहर दूर नहीं भीतर गहरे जाना है :

सिद्धशिला के इस विवरण से हतोत्साहित होने की आवश्यकता नहीं है क्योकि तीर्थंकर देवो ने भगवान् के दर्शन करने के लिए कही दूर तक भटकने की आज्ञा नही दी है और न यह कहा है कि आकाश मे ऊपर उडो या पाताल के भीतर उतरो। यह भी नहीं कहा कि इस भूमंडल के कोने-कोने में भटकते रहो तो भगवान् के दर्शन होंगे। उन्होने तो सुगम किन्तु मार्मिक उपाय बताया है कि यदि तुम्हें सिद्ध भगवान् के तुल्य भगवान् के दर्शन करने है तो कहीं बाहर मत जाओ और शरीर को इधर-उधर मत भटकाओ। जहा शरीर है, वही पर नियमित रूप से सुखासन पर आसीन होकर इन्द्रियो के बाहरी व्यापार को रोक दो अर्थात् कान जो बाहर के शब्द सुन रहे हैं, उन शब्दो के पीछे जो तुम्हारा उपयोग दौड रहा है कि ये किसके शब्द हैं, कहां से आ रहे है, कैसा सुन्दर गायन है, कविता मे कैसा लय है आदि-आदि तो उस उपयोग को बाहर से समेट कर भीतर मे नियोजित करो। चित्त वृत्ति के अनेक रंग बिरंगे दृश्य ये आंखे देखना चाहती है-उन पलको को बाहर से बंद कर लो ताकि उनकी दृष्टि गहरी बन कर भीतर उतरे। नासिका को अच्छी सुगध आ रही है और वह मन को बाहर खींच रही है तो मन उसको बाहर से खींच कर भीतर मे केन्द्रित कर ले। जिह्वा जो स्वादिष्ट पदार्थ चखने की प्रबल लालसा लेकर चल रही है, उसे विराम दे दो। इसी तरह मन की उडान स्पर्श इन्द्रिय के बाह्य सुखो मे हो रही है तो उसे भी विराम दे दो। इन्द्रियो के सभी बाहरी व्यापारो को जितने समय तक रोक सको, रोक कर मन को आत्मस्थ बनाने का अभ्यास करो।

आत्मा की इस विकास यात्रा मे बाहर दूर नहीं, भीतर गहरे जाना है। मन की गतिविधियों को इन्द्रिय सुख मे से निकाल कर उसकी गतिशीलता को आन्तरिकता मे प्रवेश कराना है। यही आत्म-साधना है और यही मन को आत्मस्थ बनाने का अभ्यास है क्योकि इसी साधना और इसी अभ्यास की सहायता से आत्मा अपने लक्ष्य तक पहुंच सकेगी-सिद्ध स्थिति को प्राप्त कर सकेगी। आप अपने आप के अन्दर भव्य स्वरूप को देखने की कोशिश करेगे तो वहीं पर प्रभु के दर्शन होगे।

वास्तव मे प्रभु अत्यधिक समीप है। उनके लिए भूमंडल पर भटकने या आकाश मे उडने की आवश्यकता नहीं है। यह बात जब मनुष्य के मस्तिष्क मे आती है तो वह उपरोक्त सुगम किन्तु मार्मिक उपाय को अपनाने का संकल्प बना कर चलना शुरू कर देता है, लेकिन इस यात्रा मे भी जब वह पांचो इन्द्रियों के व्यापार को रोक कर एवं मन को आत्मस्थ बना कर भीतर देखता है तो वहां भी उसको बीहड वन घाटी तथा भयावह दृश्य दिखाई देते हैं। ये भीतर की वन घाटियां बाहर की वन घाटियो से भी अधिक दुर्गम होती है। प्रभु का दर्शन इन्हीं घाटियो को पार करने के बाद हो सकता है।

आत्मा की अनन्त शक्तियां तथा आठ कर्मों की वन घाटियां :

एक साधक की विकास यात्रा मे परमात्म स्वरूप की उपलब्धि के बीच मे वन घाटियो के रूप मे आपत्तिया सामने लाने वाले होते है आत्म स्वरूप को आच्छादित किये हुए आठ कर्म। ये घाती और घनघाती कर्म आत्मा की अनन्त शक्तियो पर छाये हुए है। इन आवरणो को दूर कर देने पर अपने स्वयं के प्रभु के शीघ्र ही दर्शन हो जाते है।

आत्मा के आठ कर्म बताये गये हैं। आत्मा की अनन्त शक्तियों को आठ विभागो में बांट दिया गया है। जो ज्ञान की उसकी विराट शक्ति है-सारे संसार को जानने वाली एव देखने वाली है, उस पर आच्छादन करने वाले जो कर्म है, उनको ज्ञानावरणीय कर्म कहते है। ज्ञान की शक्ति को दबाने वाला यह कर्म होता है। इन्हीं पदार्थों को सामान्य रूप से नहीं देखने की क्षमता व्यक्त करने वाला दर्शनावरणीय कर्म होता है। सामान्य ज्ञान मे बाधक एक ऐसा कर्म है जो न तो बाहर के और न अन्दर के किसी भी तत्त्व को सही स्वरूप मे देखने देता है और न आत्मा को कभी भी

स्वस्थ होने देता है-वह कर्म होता है मोहनीय कर्म जो घनघाती कर्म होकर सभी कर्मों का राजा कहलाता है। मोह कर्म आत्मा को पागल बनाए रखता है। मिलते हुए पदार्थों मे बाधा देने वाला कर्म होता है अन्तराय कर्म। यह उपलब्ध हो रही वस्तु की उपलब्धि में रुकावट डाल देता है।

इन चार कर्मों को घनघाती कर्म कहते हैं जो ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय तथा अन्तराय होते हैं। उन चार कर्मों को नष्ट किये बिना अपने प्रभु के दर्शन नही हो सकते हैं।

अगले चार कर्म होते है-वेदनीय, नाम, गोत्र और आयुष्य। ये चार कर्म प्रभु दर्शन मे बाधक नही होते बल्कि इनके रहते हुए भी परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है। कवि ने संकेत दिया है कि-'**घाती डूंगर आड़ा अति घणा।**' यह संकेत इन्ही घन-घाती चार कर्मों का संकेत है। ये चारो घनघाती कर्म इस आत्मा के इसी शरीर पिंड में रहने वाले अपने ही परमात्मा के दर्शन करना चाहे तो वन घाटियो और डूंगरों की तरह बीच मे आते है जिनको पार करना जरूरी होता है।

उस पथिक के समान जब साधक इस विकास यात्रा के लिए संकल्पबद्ध होकर प्रयाण करता है तो मिथ्यात्व कर्म उसके साहस को तोडना चाहता है। उनको हटाने की कोशिश की जाती है तो संसार के पौद्गलिक लुभावने हृदय विमुग्ध बनाते है। उसमें पुरुषार्थ पकड़ कर आगे बढते है तो अन्तराय कर्म रोक देता है। इस तरह कर्मों की आपत्तियां एक के बाद एक और कभी सामूहिक रूप मे आती रहती है। आत्मा साधना के क्षेत्र मे बढ़ती है-अन्दर ध्यान लगाती है तो ये घनघाती कर्म उसमे बाधक बन कर आडे आ जाते है जिससे वह ध्यान भी नहीं लगा पाती है। अपने ही भीतर प्रवेश करने एवं अपनी ही आन्तरिकता मे रमण करने के लिए कोई साथी भी नही होता है। आत्मा ही अपनी मित्र होती है यदि वह इन आपत्तियो पर विजय प्राप्त करती हुई आगे से आगे बढती रहती है तथा आत्मा ही अपनी शत्रु बन जाती है अगर वह इन कर्मों के सामने अपनी पराजय स्वीकार करके पौद्गलिक लुभावने दृश्यो में उलझ जाती है।

लेकिन ज्ञानीजनों का कथन है कि घबराओ मत। आत्मा की अनन्त शक्तियों को प्रकट करना चाहते हो तो अपनी आत्मा को ही मित्र और साथी मानो तथा आत्मस्थ बनने का अभ्यास करो। आत्मा का इस कठिन यात्रा मे कोई प्रधान सम्बल है तो वह है अटल श्रद्धा इसे न भूलो।

अटल श्रद्धा का बल एक अपूर्व बल होता है :

इन घनघाती कर्मों की डरावनी वन-घाटियो मे जब प्रवेश करना हो तो संकल्प एवं पुरुषार्थ के साथ श्रद्धा का संगम करा लो और अपने इष्ट का स्मरण करते हुए बढ चलो। अरिहत देवो ने इन घाती कर्मों को हटाया है और नष्ट किया है। वे इस प्रकार वन-घाटियो को लांघ गए और उन्होने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। इन अरिहंतो के प्रति अटल श्रद्धा का बल ग्रहण करें तो वह श्रद्धा बल एक प्रकार का अपूर्व बल होता है।

आप जानते हैं अरिहन्त देवो को? प्रातःकाल प्रार्थना के समय नमस्कार मंत्र का उच्चारण किनके प्रति करते हैं? किन्हे नमस्कार करते है आप? उसमें प्रथम नमस्कार अरिहंत देवो को किया जाता है। उनको नमस्कार करने का यही अभिप्राय है कि उन्होने घनघाती कर्मों को नष्ट कर देने का जो सत्पुरुषार्थ किया है, वह वन्दनीय है क्योकि उनके सत्पुरुषार्थ से ही संसार के भव्य प्राणियो को उस मार्ग पर आगे बढने की प्रेरणा मिलती है। यह प्रेरणा उनके प्रति अटल श्रद्धा धारण करने के बल से फूटती है।

नमस्कार मंत्र के तुल्य अन्य कोई मंत्र नहीं है, लेकिन परम्परा से जिनको यह मंत्र मिला है, वे ही लोग इस मंत्र

के महत्त्व को कम जानते हैं। इसका पहला पद है-'**णमो अरिहंताणं**' अर्थात् अरिहन्त देवों को नमस्कार हो। घनघाती कर्म रूप शत्रुओं को जो भी नष्ट कर दे, वे अरिहन्त होते हैं। यहां पर नाम पूजा नहीं है, गुण पूजा है। सभी को गुणों की दृष्टि से नमस्कार किया गया है।

यदि अटल श्रद्धा हो तो इस नमस्कार मंत्र में अपार शक्ति मानी गई है। यह मंत्र अगर चिन्तन मे रमा हुआ है तो कोई भी आपत्ति या बाधा अपने सामने टिक नहीं सकती है, बल्कि समीप भी नहीं आ सकती है। मेरे भाई कभी सोचते है कि हम तो संसार मे रहते है और ससार की दृष्टि से अनेक प्रकार की आपत्तियां आती है, उनसे पार पाने के लिए कोई सिद्ध मत्र मिल जाये तो बडा अच्छा हो। संसार की क्या-आत्मा की विकास यात्रा की बाधाएं भी इस नमस्कार मंत्र के सामने नहीं ठहर सकती है। मै कहता हूं कि यह नवकार मंत्र सब मंत्रों का सार है- समस्त प्राणियो के लिए मंगल का स्रोत है, गुणो की गरिमा है। चाहिये इसके प्रति अटल श्रद्धा।

अटल आस्था को अपनावें तो आपत्तियों का अस्तित्व ही नहीं रहेगा :

इस नमस्कार मंत्र के प्रति अटल आस्था को अपनावे तो आपत्तियों का अस्तित्व ही नहीं रहेगा-न बाहर और न भीतर। तब मन की गति स्वस्थ भी हो जायेगी तथा निराबाध भी। तब न संकल्प डगमगायेगा, न पुरुषार्थ टूटेगा और न साहस ही छूटेगा। अटल आस्था सभी आत्मिक गुणों को संतुलित बनाये रख कर आत्मा को विजय के पथ पर अग्रसर बना देगी।

कमाई के धंधे कई प्रकार के होते है। कुछ लोग व्यापार करके कमाई करते है, कोई नौकरी करते हैं तो कोई ज्योतिष व हस्तरेखा देख कर आमदनी कर लेते है। कई लोग मंत्रो के शब्दो से अपनी आजीविका उपार्जित करते है। कोई दुःखी व्यक्ति आता है तो वह दो चार शब्दो को इधर-उधर जोड़ कर कहता है-जाओ तुम्हारा दुःख दर्द दूर हो जाएगा। उसका दुःख दर्द तो दूर होगा या नही-मंत्र कहने वाला पैसा प्राप्त करके अपना दुःख दर्द जरूर दूर कर लेता है। इस प्रकार अलग-अलग बाते जितनी आती है, उनमे सार तत्त्व का महत्त्व समझने की कोशिश कम की जाती है और भविष्य पर विश्वास कम होता है। नमस्कार मंत्र के महान् महत्त्व को समझने के लिए भी आंतरिक दृष्टि की आवश्यकता होती है। कई लोग सोचते है कि हमें भी नमस्कार मंत्र याद है- बच्चों को भी याद है, अगर इसमे कोई चमत्कार होता तो वह हमारे जीवन मे प्रकट हो जाता। मैं सोचता हूं कि मनुष्य चमत्कार तो देखना चाहता है लेकिन वह श्रद्धा करना और साधना करना नहीं सीखता है।

यदि मनुष्य जीवन मे अटल आस्था अपनाले तथा उसकी महत्ता को हृदयंगम कर ले तो नमस्कार मत्र का अपूर्व चमत्कार भी वह देख सकता है। इस मंत्र को सिद्ध करने वाले के सामने देवी-देवता भी चरणों में नत मस्तक हो जाते है। इस मंत्र के साधक के सामने इस लोक से संबंधित या परलोक से संबंधित कितनी ही आपत्तियां क्यो न आवे-वे अपने आप छट जाती है।

जिन आत्माओ ने इस महामंत्र को सिद्ध किया, उनकी साधना की अवस्था मे चाहे उनके शरीर की चमड़ी उधेड़ी गई, सिर पर धधकते हुए अंगारे रखे गये या कि अन्य प्रकार के संकट आये, लेकिन वे साधक अपनी साधना से तनिक भी विचलित नहीं हुए। यह उनकी अटल आस्था का ही सुपरिणाम था।

अटल आस्था का चमत्कार : एक आदर्श दृष्टान्त-

जो नमस्कार मंत्र के प्रति यानी कि अपनी ही आत्मा के मूल स्वरूप के प्रति अटल आस्था रखते है, उनकी छोटी-छोटी क्या बड़ी-बडी आपत्तिया भी दूर हो जाती है तथा छोटे-छोटे चमत्कार क्या आत्म-विकास का महान्

चमत्कार उन्हे दिखाई देता है। जयकुमार का कथा प्रसंग अटल आस्था के चमत्कार को प्रदर्शित करता है।

जयकुमार एक राजकुमार था। वह भरतेश्वर के नजदीक पहुंचा तथा वहा से सत्कार पाकर हाथी पर सवार हुआ। नमस्कार मंत्र पर उसका उस समय विश्वास नही था–वह बाह्य दृश्यों मे ही उलझा हुआ था। उसकी धर्मपत्नी का नाम सुलोचना था और वही उसके ध्यान की केन्द्र बिन्दु थी। वह हाथी पर बैठ कर चल रहा था लेकिन उसका ध्यान सुलोचना की ओर ही लगा हुआ था। सहसा हाथी गंगा नदी के प्रवाह मे घुसा। सुलोचना की कल्पना मे उसे पता नही रहा कि हाथी कहां जा रहा है? लेकिन जैसे ही हाथी आगे बढा तो कोई चीज उसके पैर से टकराई। हाथी ने बल लगाया, पर उसका पैर अंदर धंसता ही चला गया। उसके मुह से दर्दनाक चिंघाड निकली तब कही जाकर जयकुमार को होश आया। उसने सोचा कि हाथी की जल समाधि के साथ उसकी भी जल समाधि हो जायेगी, अब वह क्या करे?

जो भौतिक तत्त्वो को ही सब कुछ समझता है तथा आन्तरिक शक्ति को नही पहचानता है, वह ऐसे अवसर पर किंकर्त्तव्यविमूढ बन जाता है। जयकुमार की देह मे बहुत ताकत थी–वह बली शत्रु को भी पराजित कर सकता था, परन्तु उस अज्ञात शत्रु से वह भयभीत हो उठा। हाथी भी चिंघाड रहा था और जयकुमार भी जोर–जोर से चिल्ला रहा था। यह कोलाहल सुन कर उस पार शिविर वाले लोग बाहर निकल आए–इन्ही मे सुलोचना भी थी। उसने पति की दुर्दशा देखी तो उस संकट की बेला मे वह नमस्कार महामत्र का ध्यान करने लगी क्योकि उसकी इस महामंत्र के प्रति अटल आस्था थी।

नमस्कार महामंत्र के अखंड जाप से गगा की अधिष्ठातृ देवी का सिंहासन कम्पायमान हुआ। देवी ने देखा कि सुलोचना पर संकट आया हुआ है। वह वहां से दौडी क्योंकि महामंत्र के प्रति उसकी आस्था को निभाने का प्रश्न था। देखा तो हाथी और जयकुमार दोनो करीब–करीब डूब चुके थे। एक व्यंतरी मगर बन कर यह दुष्ट कार्य कर रही थी। देवी ने उसे तुरन्त रोका। देवी की शक्ति के सामने व्यतरी भाग खड़ी हुई और हाथी जयकुमार को लेकर सकुशल उस पार पहुंच गया। तब देवी ने अपनी शक्ति से एक सिंहासन बनाया और उस पर सुलोचना को बिठा कर वह उसका स्तुति गान करने लगी।

हाथी पर बैठे हुए जयकुमार ने जब यह देखा तो उसे आश्चर्य हुआ कि जिस देवी ने उसके प्राण बचाए है, वह भला उसकी पत्नी का स्तुति गान क्यो कर रही है? उसने देवी से कहा–सुलोचना को आपकी स्तुति करनी चाहिए कि आपके उपकार से उसका वैधव्य दुःख बच गया, लेकिन यह विपरीत व्यवहार कैसे हो रहा है? तब देवी ने कहा–राजकुमार, तुम नही जानते कि यह देव रूप जो मुझे मिला है, वह सुलोचना की घुट्टी से मिला है। इसी ने मेरी श्रद्धा नवकार मंत्र के प्रति अटल बनाई।

देवी ने आगे बताया। विन्ध्याचल के समीप विन्ध्य नगरी मे विन्ध्यपति राज्य करते थे। प्रियगु उनकी रानी थी। यह सुलोचना उनकी राजकुमारी थी। विन्ध्यपति के साथ मेरे पिता कपन महाराज की मित्रता थी। अच्छे संस्कारो के लिए मेरे पिता ने मुझे सुलोचना के पास छोड दिया था। उस वक्त भी सुलोचना की नमस्कार मंत्र के प्रति अटल आस्था थी–उसी के निर्देश से मैं भी इस महामंत्र के प्रति आस्थावान बन गई। एक बार सर्प ने मुझे काट खाया, बहुत उपचार के बाद भी कुछ नहीं हुआ तो अंतिम अवस्था मे सुलोचना ने मुझे नवकार मत्र का ही सहारा दिया जिसके फलस्वरूप मै गंगा में अधिष्ठातृ देवी बनी। इसलिए हे कुमार! सुलोचना मेरी उपकारिणी है और मै इसकी स्तुति कर रही हूं।

देवी ने यह सत्य जब स्पष्ट किया तो जयकुमार को भी नमस्कार मंत्र के प्रति गहरी आस्था हो गई। देवी ने

उसको याद दिलाया कि शीलगुप्त मुनि के पास उसने भी नमस्कार मंत्र सुना था, लेकिन आस्था नही पकडी-उसका महत्त्व नहीं समझा। उसके साथी सर्पगुप्त ने भी इस मत्र को सुना था। बाद में बिजली गिरने से उसका प्राणान्त हो गया। मर कर वह नाग जाति का देव हुआ तब कामेच्छुक बनकर वह पाकोदर नाम की नागिन के साथ रमण करने लगा। देवी ने कहा-राजकुमार, तब तुमने उसको फटकारा जिससे उस नागिन ने तुम्हारे प्रति द्वेष पकड़ लिया। वही नागिन व्यंतरी बनी और उसने तुम्हे डुबोने की चेष्टा की। तब तुम्हारी धर्मपत्नी सुलोचना ने नमस्कार मंत्र का जाप किया जिसके कारण तुम्हारा संकट टला।

यह सुन कर जयकुमार की आस्था अटल बन गई तथा वह साधना के पथ पर प्रस्थान कर गया।

अटल आस्था चाहिए, अन्तिम विजय आपकी होगी :

अगर आप अटल आस्था को अपना लेते है तो मान लीजिये कि अन्तिम विजय आपकी होगी। कोई बाधा नही टिकेगी जो आपको पराजित कर सके-आपको अपने विकास पथ से विचलित बना सके। नमस्कार मंत्र के प्रति अटल आस्था का अर्थ है परमात्मा मे अटल आस्था होना और परमात्मा मे अटल आस्था होगी तो वह अपने ही आत्मस्वरूप के प्रति होगी। आत्मा के प्रति जो अटल आस्था होती है, वही सर्वोच्च आत्म विकास का श्रेष्ठ सम्बल है।

मै बतलाना चाहता हूं कि आप भी यदि भगवान् अभिनन्दन के दर्शन करना चाहते है तो नमस्कार मंत्र के प्रति अटल आस्था का संबल लेकर घनघाती कर्मों को जीत ले। आपको जब यह विजय मिल जायेगी तो आपको अपने प्रभु के दर्शन भी हो जायेगे।

-नोखा दि. 14-10-1976

महामंत्र नमस्कार जाप

- परमात्मा से भेट करने का सीधा, सरल मार्ग प्रभु भजन है।
- नमस्कार महामत्र सभी दु ख दुविधाओ को मिटा कर सुख सुविधाए प्रदान करता है।
- नमस्कार महामत्र के प्रति अविचल श्रद्धा रखने वाला नर से नारायण, जीव से शिव, भक्त से भगवान् और आत्मा से परमात्मा बन जाता है।
- जाप से हृदय मे अपूर्व शाति एव असाधारण सुख प्राप्त होता है।

-आचार्य श्री नानेश

4

महावीर वाणी का अनन्त आनन्द

श्री महावीर नमो वरनाणी, शासन जेह नो जाण रे प्राणी।
धन-धन जनक सिद्धारथ राजा, धन त्रिशला दे मात रे प्राणी।
ज्यां सुत जायो गोद खिलायो, वर्धमान विख्यात रे प्राणी।
प्रवचन सार विचार हिया में, कीजे अर्थ प्रमाण रे प्राणी।

प्रार्थना के माध्यम से शासनाधीश प्रभु महावीर को स्मृति पटल पर लाने का प्रसग आ गया है। प्रभु महावीर का इस जगतीतल पर जो उपकार है, वह अवर्णनीय है। मानव जाति आज जो कुछ भी शान्ति का यत्किचित् अनुभव कर रही है, परिवार, समाज और राष्ट्र के बीच यत्किंचित् भी जो शान्ति की मात्रा एवं सहयोग की भावना चल रही है, वह सब प्रभु महावीर की महिमामयी वाणी की देन है।

स्वयं कठोर संयम एवं तप के मार्ग पर चल कर महावीर ने परम आत्मशुद्धि प्राप्त की तथा उस शुद्धि के साथ उन्होने देशनाएं दी। ये देशनाएं ही वह मार्गदर्शन है जिसे समझ कर आज की भव्यात्माएं दृढ प्रतिज्ञ बन कर आत्म-विकास की यात्रा पर प्रयाण कर सकती है। उन देशनाओं को-उन सत्सिद्धान्तमय उपदेशों को गणधरो ने सुरक्षित रखा और बाद में आचार्य श्री सुधर्मास्वामी की परम्परा ने इन पवित्रतम सिद्धान्तो की सुरक्षा की। इसी के परिणामस्वरूप आज महावीर-वाणी से सारा संसार प्रभावित हो रहा है।

महावीर वाणी सैद्धान्तिकता एवं वैज्ञानिकता का मक्खन है :

जैन सिद्धान्तों में जिस रूप में दार्शनिक तत्त्वों का वर्णन एवं विश्लेषण आया है तथा जिस प्रकार से उनका वैज्ञानिकता और युक्तिसंगतता के साथ विवेचन किया गया है, वैसा वर्णन, विश्लेषण और विवेचन अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता है। जिन महानुभावों को वंश परम्परा से इन सिद्धान्तो का परिचय मिला है, उन्हे कितना प्रसन्न होना चाहिए? उन्हे कितना हर्षोल्लास का अनुभव होना चाहिये कि एक दुर्लभ वाणी उन्हे सजह ही में प्राप्त हो गई है?

जहां महावीर वाणी का अनन्त आनन्द सारे संसार को प्रेरित कर रहा है, वहां महावीर के परम्परागत अनुयायियों को तो आगे बढ़ कर इस वाणी के गहरे तत्त्वो का अध्ययन करना चाहिए, उनको हृदय मे उतारना चाहिये तथा अपने आचरण-आदर्श से संसार के संतप्त मानवो को प्रभावित बनाकर महावीर वाणी के माध्यम से शान्ति प्राप्त कराने का प्रयास करना चाहिए। आज पूर्व और पश्चिम के समस्त दार्शनिक साहित्य को टटोलें, तब भी उनमे वह कल्याणकारी तत्त्व नहीं मिलेगा, जो महावीर वाणी के शब्द-शब्द और अर्थ-अर्थ मे समाया हुआ है।

सच पूछे तो महावीर वाणी सदाशय की ओर उन्मुख सैद्धान्तिकता एवं वैज्ञानिकता का मक्खन है-सारभूत है। महावीर के अनुयायियों के लिए यह दयनीय और चिन्तनीय स्थिति है कि ऐसी आत्मोत्कर्षकारी वाणी को न तो वे स्वयं गहराई से समझ कर अपने जीवन मे उतारने का गंभीर आयास कर रहे है तो न ही वे उसके समुचित प्रसार का सुन्दर प्रबंध कर पा रहे है जिससे कि संसार के जिज्ञासु एवं विकासाकांक्षी जीवो को मार्गदर्शन मिल सके। कई विद्वान् साहित्य का निर्माण कर रहे हैं और पुस्तके लिख रहे है, वे गन्ने के समान है जिसमे कचरा ज्यादा और रस

अत्यल्प होता है, जबकि महावीर वाणी के एक सूत्र मे जितना जीवन्त सार मिलता है, उतना हजारो पुस्तको मे भी नहीं। ऐसे मक्खन की तरफ नही जाकर जो कचरे की तरफ बढ़ता है, उसकी बुद्धि को क्या कहे?

महावीर वाणी उस स्वतंत्र खोज का परिणाम है, जो उनके अपने जीवन के सर्वांगीण विकास से उद्भूत हुई। कठोर साधना से उन्होने अनन्त आत्मिक शक्तियो का प्रगटीकरण किया और उन शक्तियों के प्रकाश मे केवलज्ञान की प्राप्ति करके उन्होने अपना स्वतत्र दर्शन दिया। केवलज्ञान के प्रकाश मे उन्होने संसार के समस्त दृश्य एवं अदृश्य पदार्थों का तथा तत्त्वो का अवलोकन किया, उनके वास्तविक स्वरूप को समझाया तथा आत्मा की यथार्थ उन्नति के लिए सिद्धान्तो का प्रतिपादन किया। वे परिपूर्ण सिद्धान्त न केवल दर्शन की कसौटी पर खरे उतरे हैं बल्कि विज्ञान की कसौटी पर भी खरे उतरे है। इसी कारण उनमे सामयिकता नहीं, बल्कि शाश्वतता है। वे सदा काल सच्ची शान्ति चाहने वाले जीवो को सही मार्गदर्शन देते रहेगे।

अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति से उद्भूत वाणी : महावीर वाणी :

आज किसी व्यक्ति को जाति स्मरण ज्ञान हो जाता है तो चारो ओर आश्चर्य फैल जाता है। जाति स्मरण ज्ञान का तात्पर्य है पूर्व जन्म की बातो को बतलाने वाली ज्ञान की पद्धति। आये दिन अखबारो में समाचार निकलते हैं कि अमुक बच्चे ने अपने पूर्व जन्म की बातें बतलाई है। इसके संबध मे काफी गहराई से जांच पड़ताल होती है और तथ्यो की सत्यता स्थापित की जाती है। इस विज्ञान को परा-मनोविज्ञान की संज्ञा दी गई है। इसे बहुत बडी उपलब्धि मानते हैं। जब परमाणु की खोज की गई तो उसे वैज्ञानिको ने बहुत बडी खोज मानी। ये सब चीजे अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति के धारक महावीर प्रभु के लिए अत्यन्त साधारण थी। आज का यह सारा ज्ञान उनके समक्ष समुद्र मे एक बूंद के तुल्य भी नही है।

महावीर ने अध्यात्म विज्ञान को इस परिपूर्ण रूप से प्रस्तुत किया कि उसमे ससार के सारे विज्ञान समाहित हो जाते है। इसको देखने और समझने की दृष्टि होनी चाहिए। यह दृष्टि भी आत्मानुभूति से प्रबुद्ध बनी हुई हो। फिर कोई प्राकृत भाषा मे लिखित महावीर वाणी के सूत्रो का पाठ करे-उनके भावार्थ की गहराई मे उतरे तो वह ज्ञान की प्रखर ज्योति मे सच्चे आन्तरिक आनन्द को प्राप्त कर सकता है। जो इनमे आनन्द नही ले पाता है, वह आधुनिक साहित्य को टटोलता है और आगम की अमूल्य निधि को छोड कर इधर-उधर भटक जाता है। यह उसके विवेक का दोष होता है क्योकि जिस व्यक्ति को उस वाणी को साधने की विधि मालूम नही हो तो वैसा व्यक्ति उनका अध्ययन कैसे कर सकता है तथा कैसे आन्तरिक आनन्द ले सकता है?

एक दु:खी व्यक्ति को दु:ख मे झूरते हुए किसी समझदार पुरुष ने देखा तो कहने लगा-भाई, इस प्रकार रोता चिल्लाता क्यो है? तुझे क्या दु:ख है? उसने कहा-दु:ख एक हो तो बताऊं, यहा तो हजार दु:ख है। तब समझदार पुरुष ने कहा-बसन्तपुर के नरेश बडे दयालु है, वे सबका दु:ख दूर करते है, तुम भी वहां चले जाओ। वह दु:खी व्यक्ति बसन्तपुर पहुंच गया और राजा के सामने गिडगिड़ा कर कहने लगा-मुझे चारो ओर से दु:ख ही दु:ख है, महाराज आप मुझे सुखी बना दीजिए। राजा ने भंडारी से उसको एक बहुमूल्य रत्न देने का आदेश दिया। भंडारी ने बहुमूल्य रत्न उसको दे दिया। वह वहा से वापिस चला तो बडा दु:खी हो रहा था कि मै इसको क्या करूंगा? मेरे दु:ख मिटने का तो कोई लक्षण ही दिखाई नही दे रहा है। सबसे पहले भूख मिटाने की गरज से उसने रत्न को दांतो से चबाना चाहा, मगर उल्टा उसका एक दांत टूट गया। वह तो और अधिक दु:खी हो गया। तब उसको एक जौहरी मिल गया। उसने सारी कहानी जानकर कहा कि यो भूख कैसे मिटेगी? इसके लिए विधि से चलो। यह रत्न तो सवा

लाख का है मगर इसको गिरवी रख दो और 20-30 हजार रुपए लेकर अपनी भूख भी मिटाओ तथा व्यापार शुरु कर दो सो इस एक रत्न से तो तुम अत्यन्त समृद्धिशाली बन जाओगे। इसलिए कोई भी कार्य विधि से संपन्न होता है। भोजन की सारी सामग्री हो मगर विधि नही हो तो क्या उस सामग्री का सही तरीके से उपभोग किया जा सकेगा? उसी प्रकार महावीर वाणी का विधि से अध्ययन-मनन किया जायेगा तो ज्ञान के कई रत्न उपलब्ध हो सकेगे।

महावीर वाणी अनन्त ज्ञान और अनन्त शक्ति से उद्‌भूत वाणी है तथा इसको जो भी गंभीरतापूर्वक आत्मसात् कर लेता है, वह भी अनन्त ज्ञान एवं अनन्त शक्ति का स्वामी बन सकता है। विकास सूत्रो से परिपूरित यह वाणी ऐसी अमूल्य है कि इसे जीवन मे उतार कर आत्मा परमात्म पद तक पहुंच सकती है।

आत्म विकास के पथ पर शान्ति और आनन्द कहां? :

क्या आज की दुनिया सुखी बनना चाहती है? क्या वह सच्चा आनन्द लेना चाहती है? ज्ञानी और सन्त जन बतलाते हैं कि इस महावीर वाणी में अपार आनन्द भरा हुआ है। यह महावीर वाणी ही वीतराग वाणी है-जिन्होने अत्यन्त कठिनाई से त्याज्य राग को भी समाप्त कर दिया-उन आप्त पुरुषो की वाणी है। इस वाणी की-इसके गूढ़ ज्ञान की क्या किसी से तुलना की जाय? इस वाणी से जागृति ग्रहण करके जो आत्म विकास के पथ पर चल पडता है, वह उत्कृष्टता की सीमा पर पहुंच कर सच्ची शान्ति और सच्चे आनन्द को प्राप्त कर लेता है। सिवाय वीतराग वाणी के आत्म विकास के पथ पर शान्ति और आनन्द कहां?

महावीर वाणी के अमृत को जो अपनी आत्मा के कण-कण में रमा लेता है, वह एक जन्म के क्या जन्म-जन्मान्तरो के दु:खो को नष्ट कर देता है। इस बात को लेकर मेरे भाई कभी शास्त्रों को लेकर बैठ जाते हैं और उनका अध्ययन करते है-उनको कंठस्थ भी कर लेते है। फिर किसी से पूछे कि क्या तुम्हे शांति मिली? वह उत्तर देगा-मैने शास्त्रों को कंठस्थ भी कर लिया, फिर भी जो शान्ति चाहता था वह नहीं मिली-जिस उल्लास को पाने के लिए मन आतुर था, वह उल्लास नहीं आया। जानते है, ऐसा क्यो हुआ? जिस विधि से शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिये, उस विधि से जब तक उनका अध्ययन नहीं किया जायेगा, तब तक वांछित शान्ति और उल्लास की प्राप्ति नहीं हो सकेगी। कंठस्थ करने से ही शास्त्राध्ययन नहीं हो जाता है। शास्त्रों के अर्थ की गहनता मे जाना चाहिए तथा चिन्तन के माध्यम से खोज करनी चाहिए कि मूल तत्त्व कहां और किस रूप मे छिपा हुआ है? यह ज्ञान की ऐसी विशाल निधि है, जिसका उद्‌घाटन बड़े-बड़े आचार्य भी नहीं कर पाये।

ठाणांग सूत्र की टीका आरम्भ करते हुए टीकाकार ने लिखा है कि मेरे पूर्व पुरुष इस सूत्र का उद्‌घाटन नही कर पाये, वे डरते रहे लेकिन मै साहस करके-धृष्टता करके इसका उद्‌घाटन कर रहा हूं। कहने का तात्पर्य यह है कि शास्त्रो का भाव, भाषा व शैली को समझ कर उनके गूढार्थ मे गहरे उतरने वाले विरले ही मिलते है। इसी कारण सामान्य दृष्टि से शास्त्र दूर पड़ते जा रहे है एवं आत्म विकास का सच्चा ज्ञान अबोध होता जा रहा है। परिणामस्वरूप जीवन की वृत्तियां बिखर रही है तथा मन चंचल बन कर भटक रहा है। सामान्य जन त्राहिमाम्-त्राहिमाम् कर रहे हैं। जहां कल्पवृक्ष के समान महावीर वाणी है, विधि एवं विवेक के अभाव में उसका सही उपयोग नहीं हो पा रहा है-यह वैसा ही है जैसा कि पानी पास में होते हुए भी प्यासे मरना। महावीर वाणी के अनुसार आत्म विकास के पथ पर चलें तो शान्ति और आनन्द का पार नहीं है।

महावीर-वाणी के चार मुख्य मुद्दे :

वैसे तो महावीर प्रभु ने संसार, आत्मा तथा परमात्मा के स्वरूप पर अनेकानेक सिद्धान्तो को स्पष्ट किया है

तथा सारी प्रक्रियाओं का सूक्ष्मता से विवेचन किया है, किन्तु यहां अति सक्षेप मे चासनी के तौर पर महावीर के चार मुख्य मुद्दों पर हल्की-सी रोशनी डालें जिससे यह ज्ञात हो सके कि यह वाणी कितनी रत्नगर्भा है? ये चार मुख्य मुद्दे ले रहे है-कर्मवाद, अपरिग्रह, अहिंसा तथा अनेकान्तवाद।

कर्मवाद का सिद्धान्त बहुत ही गहरा सिद्धान्त है। इसके माध्यम से संसार मे जड़ चेतन के स्वरूप, कर्मबध, उदय एवं क्षयोपशम की प्रक्रिया तथा मोक्ष के लक्ष्य का गंभीर अध्ययन हो जाता है। इसको सरलता से समझिये कि संसार मे केवल दो तत्त्व है जड और चेतन-अजीव और जीव। संसार मे जो हलन चलन और रौनक दिखाई देती है वह जड़ और चेतन के सम्मिलन से। कोरा जड़ तो निर्जीव होता है लेकिन चेतन के साथ लग कर क्रियाशील हो जाता है। कार्मण वर्गणा के पुद्गल-कर्म जड होते है जो आत्मा की शुभता और अशुभता के अनुसार उससे संलग्न हो जाते है तो उनके फलस्वरूप आत्मा शरीर धारण करती है। जीव और अजीव मिलते है तो यह जीव के लिए बन्धन होता है। उनकी सक्रियता से कर्मों का बंध होता है। बंध शुभ हुआ तो वह पुण्य तथा अशुभ हुआ तो पाप होता हैं। आस्रव की प्रक्रिया से कर्म आते है तो संवर से वे रोके जा सकते है। निर्जरा के माध्यम से कर्मों का उपशम और फिर क्षय भी होता है। कर्मों के संपूर्ण क्षय के साथ ही जड से चेतन मुक्त हो जाता है-बन्धन से छूट जाता है-यही मोक्ष है। मोक्ष को ही आत्मा का लक्ष्य माना गया है तथा जब आत्मा मोक्ष पा लेती है तो वह परमात्मा बन जाती है।

आत्मा बन्धनो से छूटेगी तो कैसे? उसका सबसे बडा बन्धन होता है ममता का। ममता यानी मोह और मोहनीय कर्म को आठों कर्मों का राजा कहा है। यही कर्म बहुत चिकना होता है। ममता मूर्छा होती है और मूर्छा का ही नाम परिग्रह है। **'मुच्छा परिग्गहो'** मूर्छा ही परिग्रह है और अगर मूर्छा न रहे तो सारा द्रव्य परिग्रह सोना चांदी धन सम्पत्ति आदि धूल बराबर हो जाता है। इसीलिए महावीर ने परिग्रह त्यागने की बात कही-मूर्छा को छोडने का उपदेश दिया। यह सिद्धान्त अपरिग्रहवाद कहलाता है। भावना से परिग्रह का मोह त्यागे और द्रव्य परिग्रह को साधु पूर्ण रूप से छोडे तो श्रावक उसकी मर्यादा बाधे। ममता छूटेगी तो आत्मा मे समता जागेगी-व्यक्ति का जीवन नैतिकता और त्याग वृत्ति पर आधारित बनेगा और परित्याग करने व मर्यादाएं ग्रहण करने से पदार्थों का सारे समाज मे सुखद विकेन्द्रीकरण हो सकेगा। अपरिग्रहवाद से व्यक्ति साम्ययोग की तरफ बढेगा तो समाज समतामय बन जायेगा।

व्यक्ति एवं समाज का अभ्युदय आचरण से होगा और आचरण का मूल माना है महावीर ने अहिंसा को। यह अहिंसा पद्धति बहुत गहरी है। अहिसा के दो पहलू हैं-निषेध रूप और विधि रूप। हिंसा नहीं करना यह निषेध रूप है तो इसका विधि रूप है रक्षा करना। किसी के प्राणो का व्यतिरोपण मत करो तो सबके प्राणों को सच्चा सुख पहुचाओ-जीओ और जीने दो, यह अहिसा का संदेश है। महावीर ने अहिंसा को काया की सीमा तक ही नहीं रखी है बल्कि उसका वचन और मन मे भी समावेश किया है। वचन से किसी को क्लेशकारी बोल न कहो तो मन से भी किसी को कष्ट देने की मत सोचो। मन, वचन और काया मे अहिंसा रम जाये तो वह अहिंसक यथार्थ अर्थ मे छह काया के जीवो का प्रतिपालक बन जायेगा।

आचरण मे ऊंचे सोपानो पर चढते हुए सत्य का दर्शन करने की ललक जागती है तथा सत्य के सर्वांश का दर्शन कराने वाला महावीर का अनुपम सिद्धान्त है अनेकान्तवाद, स्याद्वाद या सापेक्षवाद का सिद्धान्त। अन्धो द्वारा हाथी का वर्णन करने की कहानी आप जानते होगे। जितना एकान्तवाद है-यह ऐसा ही है, वह सब अन्धापन है। ऐसा 'भी' है-यह सत्य जानने की जिज्ञासा है। प्रत्येक के कथन मे कुछ न कुछ सत्यांश होता है, किन्तु दुराग्रह मे पटक दिये जाने से वह सत्यांश भी मिथ्या हो जाता है और यदि सभी विचारो को समझने की चेष्टा की जाय तो कई

सत्यांशों के मिल जाने से पूर्ण सत्य के दर्शन किये जा सकते हैं। यह विचार-समन्वय का सिद्धान्त है जो विचार-संघर्ष को टालता है। सबके विचारों को सुनो-जानो और अच्छाइयों को ग्रहण करो। यह सत्य की ओर गति करने की प्रेरणा है।

इस प्रकार महावीर वाणी का एक-एक सिद्धान्त इतना गहरा, इतना कल्याणकारी और इतना सारभूत है कि सच्चे हृदय से आत्मा यदि एक सिद्धान्त को भी अपना ले तो वह अपार आनन्द से लाभान्वित हो सकती है।

महावीर के सिद्धान्तों पर व्यापक शोध और अन्वेषण :

प्रभु महावीर की वाणी का जिन्होंने अधिक गहराई से अध्ययन किया है और उसमे व्यापक शोध और अन्वेषण जो आज भी कर रहे हैं, वे स्वयं जैन धर्मानुयायियों एवं भारतीयों से भी अधिक विदेशी लोग हैं। मुझे श्री जेठमल जी ललवाणी ने बताया जो विदेशों में रहते हैं कि जर्मनी मे जैन ग्रन्थों पर व्यापक रूप से शोध और अन्वेषण हो रहा है तथा वे अपने गंभीर अध्ययन के निष्कर्ष भी निकाल रहे हैं। विदेशो मे अधिकांशत: तो भौतिक विज्ञानवेत्ता है लेकिन कहा जाता है वे जिस क्षेत्र में भी शोध करना आरम्भ करते है उसमें बड़ी बारीकी और गहराई से काम करते है। भारत में भी कई अध्येता जैन शास्त्रों मे गहरी रुचि ले रहे हैं तथा प्राचीन ग्रन्थों के शोध का कार्य भी चल रहा है।

कर्मवाद, अपरिग्रहवाद, अहिंसा, अनेकान्तवाद आदि प्रमुख सिद्धान्तो के अलावा भी महावीर के इतने अन्य प्रभावकारी सिद्धान्त हैं जिन पर गहरी शोध की जाय तो नई-नई तात्त्विक समीक्षाएं ज्ञान मे आ सकती है। मूलत: शास्त्रों को पढ़ने, समझने और गहरे उतरने की वृत्ति मंद पडती जा रही है और विशेष रूप से उन लोगो मे जो वश परंपरा से अपने को महावीर के अनुयायी मानते है। यह एक विडम्बना जैसी बात है। जो भी बुद्धिशाली अजैन एक बार महावीर के किसी भी सिद्धान्त के बारे मे जानकारी प्राप्त करता है तो वह तब सारे सिद्धान्तों के बारे में अधिक से अधिक जानने की इच्छा करता है, किन्तु उसे यथायोग्य सामग्री नही मिल पाती है।

आज इस कर्त्तव्य को प्राथमिक कर्त्तव्य के रूप में देखना चाहिये कि महावीर वाणी का अधिकाधिक प्रसार किया जाये, उसके सिद्धान्तों के संबंध में व्यापक शोध एवं अन्वेषण की सुगम सुविधाएं उपलब्ध कराई जाय। कई जैन संस्थाओ ने अब इस दिशा में भी रुचि लेनी प्रारंभ कर दी है किन्तु संगठित प्रयासों की आवश्यकता है कि सर्वसम्मत साहित्य का प्रकाशन हो, जिससे आधुनिक युग मे महावीर के सिद्धान्तों से वर्तमान समस्याओ का सुदर समाधान निकाला जा सके और संतप्त मानवता को शांति प्रदान की जा सके।

कोई भी राष्ट्र या समाज दीर्घजीवी तभी बनता है जब वह अपनी ज्ञान निधि की सुरक्षा भी करता है तथा उसकी प्राभाविकता को भी फैलाता है। मनुष्य एक गतिशील प्राणी होता है और जो भी गति वह करता है, यदि उसके साथ उसका सम्यक् ज्ञान जागृत बना रहता है तो उसकी गति सदा स्वस्थ एवं श्रेष्ठ होती है। फिर महावीर के सिद्धान्त तो स्थान और समय की सीमाओ से परे है। उनका प्रभाव सदाकाल एक-सा रहता है तो उनका क्षेत्र सम्पूर्ण मानव जाति ही नहीं समस्त प्राणी वर्ग है। ऐसे सिद्धान्तो के प्रसार मे कार्य करना बहुत बड़ी धर्म दलाली है। इस कार्य से सारे विश्व की सेवा होती है।

स्वयं समाधान लें दूसरों को समाधान दें!

यह महावीर वाणी जिन्हे भी बपौती मे मिली हैं, वे सब और वे सहृदय व्यक्ति भी जो इस वाणी मे गहरी अभिरुचि रखते है-विश्व के कल्याण की भावना से महावीर के सिद्धान्त के संबंध मे कोई जिज्ञासा या शंका उत्पन्न

हो तो अपने से विशिष्ट ज्ञानी के पास जावे और संतोषजनक समाधान प्राप्त करे तथा निर्द्वन्द हृदय से उनका प्रचार-प्रसार करे एवं दूसरे लोग जो भी जिज्ञासाएं या शंकाएं प्रस्तुत करे उनका वे उनको सुंदर समाधान दे।

किन्तु समाधान की स्थिति तभी आवेगी, जब पहले शास्त्रो और सूत्रो का स्वयं गहराई से अध्ययन कर लेगे। पहले स्वय ज्ञान लेगे तभी ज्ञान का प्रसार कर सकेगे। आज आवश्यकता इस बात की है कि प्रत्येक छोटा बड़ा-तरूण वृद्ध ज्ञान-पिपासु बन कर महावीर वाणी के अन्तःस्तल मे प्रवेश करने का आयास करे। आज जो अपने आपको महावीर वाणी के अधिकारी मानते हैं, सोचिये कि कहां जाकर खड़े होंगे? आज की दुनिया भौतिक विज्ञान की प्रगति के साथ छोटी हो गई है। कल्पना करे कि आप किसी जर्मनी के अध्येता के सामने खडे हो और उसे मालूम हो जाय कि अन्य जैन हैं तो वह तत्त्वो की अधिक गहराई जानने के लिए आपको जैन फिलॉसफी के बारे में प्रश्न पूछे, तब बताइये कि आप कैसा अनुभव करेगे? आज की आपकी ज्ञान दशा पर आपको ही चिन्तन करना चाहिए। वह जर्मन शोधकर्त्ता आपको पूछे कि जैन फिलॉसफी का मूल मंत्र क्या है तो आप उसको क्या बता पायेगे? ज्यादा से ज्यादा शब्दो का उच्चारण कर देगे कि **णमो अरिहंताणं** आदि और वह भी शुद्ध कर पायेंगे या अशुद्ध-यह आप जाने। नमस्कार मंत्र मे कितना सार और तत्त्व भरा हुआ है तथा उसके गूढ अर्थ की किस रूप मे मीमांसा की जा सकती है-यह तो आप बिना अपने गहरे अध्ययन के दूसरो को भला कैसे बता पायेगे?

आवश्यकता आज गहरी हो गई है कि आप जैन सिद्धान्तो के विषय मे आपको प्राप्त परम्परागत ज्ञान से आगे बढ़े। यह एक सामान्य स्थिति है और उसमें आवश्यक गतिशीलता का अभाव आ गया है। अब इस दिशा मे नये प्रयत्न अनिवार्य बन गए है। विस्तृत ज्ञानाभ्यास मे आपका परम्परागत ज्ञान भी पृष्ठभूमि का काम करेगा, किन्तु नियमित अध्ययन का नियमित अभ्यास डालना होगा तथा उसके साथ ही चिन्तन की प्रणाली का विकास करना होगा। पढ़ेगे और उस पर सोचेगे तो स्वाभाविक रूप से नई-नई जिज्ञासाएं उत्पन्न होगी। इन्हीं जिज्ञासाओ का स्वयं समाधान लेते हुए चलेगे तो आगे जाकर ऐसी ही जिज्ञासाएं दूसरे लोग आपके सामने रखेगे तो आप उनके सतोष के अनुसार उनका समाधान प्रस्तुत कर सकेगे।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति को सर्वत्र प्रसारित करने की आवश्यकता :

महावीर वाणी के स्वस्थ प्रसार का सुदर उपाय यही है कि स्वाध्याय की नियमित प्रवृत्ति को सर्वत्र प्रसारित की जाय। प्रत्येक ग्राम नगर मे आत्मार्थी व्यक्ति इस प्रवृत्ति का सचालन करे तथा प्रत्येक भावनाशील व्यक्ति स्वाध्यायी बने। नियम बना लिया जाय कि प्रतिदिन प्रातःकाल अमुक समय के लिए एक शान्त और एकान्त स्थानो पर शास्त्रो का अध्ययन और मनन किया जायेगा। इस स्वाध्याय की प्रवृत्ति का सीधा प्रभाव होगा कि ज्ञान चर्चा की प्रवृत्ति भी चल पड़ेगी। स्वाभाविक रूप से पठित विषय पर चर्चा करने की वृत्ति जगेगी और फिर पारस्परिक विचारो के आदान-प्रदान से ज्ञान की अभिवृद्धि होगी।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति मन्द पड जाने से ही वर्तमान ज्ञान दशा मे मन्दता दिखाई दे रही है। स्वाध्याय के अभाव मे ज्ञान दृष्टि मे नवीनता और परिपक्वता नहीं आ पाती है। तब पारम्परिक ज्ञान भी कुछ-कुछ रूढ़ सा हो जाता है। नमस्कार मंत्र की माला फेरेगे, तब भी शुद्ध-अशुद्ध उच्चारण भले कर ले, उस मंत्र के मर्म मे जाने की चेष्टा कितनेक लोग कर पाते होगे? कई लोग नमस्कार मंत्र के पदो के साथ भी और कुछ जोड़ कर उच्चारण करते है जैसे वे अपनी विद्वत्ता दिखा रहे है। कल एक बाई ने मुझे मंगलिक देने को कहा, मैने मंगल-पाठ सुना दिया तो वह बोली कि आपने तो मुझे छोटी मंगलिक ही दी-बडी मंगलिक नहीं दी। मैने बाई को समझाया कि मूल मंगल-पाठ तो मैंने सुना

दिया है, अब उसके साथ कई दूसरी बाते जोड़ कर सुनाई जाती है, वे मै नहीं सुनाता हू–जो विधि हैं उसमे मै अपनी विधि नहीं लगाता हूं। कहने का अभिप्राय यह है कि महावीर वाणी की मौलिकता की रक्षा करते हुए उसकी आन्तरिकता का व्यापक रूप से प्रसार किया जाना चाहिए और उसकी तैयारी इस स्वाध्याय की प्रवृत्ति से तुरन्त शुरू कर देनी चाहिए।

स्वास्ध्याय की प्रवृत्ति स्वयं अपनाने से और सब तरफ फैलाने से महावीर वाणी की आप शुद्ध सेवा कर सकेगे। मै आपको यह संकेत इसलिए दे रहा हूं कि भगवान् महावीर ने अपने उपदेशो से संपूर्ण जगत् का जो उपकार किया है, वह उपकार फिर सक्रियता ग्रहण करे तथा संसार के मुमुक्षु प्राणी इस वाणी के अमृत का रसास्वादन करके अपनी कल्याण साधना संपादित कर सके। इस दृष्टि से आप चिन्तन करे एवं क्रियाशील बने।

श्री महावीर नमो 'वरनाणी' शासन जेहनो जाण रे प्राणी!

कवि ने प्रार्थना में आपको उद्‌बोधित किया है कि आप महावीर प्रभु को नमस्कार करे लेकिन कैसे महावीर को? वे महावीर 'वरनाणी' है अर्थात् श्रेष्ठ ज्ञानी है। और श्रेष्ठ ज्ञान की ऐसी प्रगतिशील दिशा उन्होंने दुनिया को दिखाई कि आज भी उनका धर्म शासन चल रहा है। आज हम सभी उनके शासनस्थ होकर जो चल रहे है, उसकी मूल प्रेरणा उनके श्रेष्ठ ज्ञान की प्रेरणा है।

श्रेष्ठ ज्ञान का उत्कृष्ट प्रतीक केवल ज्ञान होता है। उससे बढ कर और कोई ज्ञान नहीं होता उसी तरह जैसे कि सूर्य के प्रकाश से बढ़ कर और कोई प्रकाश नहीं होता। सूर्य के प्रकाश के सामने दीपक, बल्ब, ट्यूबलाईट, तारो और चन्द्र का प्रकाश भी फीका दिखाई देता है। वास्तव मे तो श्रेष्ठ ज्ञानी को सूर्य की उपमा देना भी उनके योग्य नहीं है। इसीलिए मानतुंगाचार्य ने भक्तामर स्तोत्र मे कहा है कि अनन्त सूर्यों के प्रकाश से भी श्रेष्ठ ज्ञान के दिव्य प्रकाश की तुलना नही की जा सकती है। सूर्य का प्रकाश ताप देने वाला होता है और अधिक सूर्यों का ताप इकट्ठा हो जाये तो मनुष्य भस्म हो सकता है। लेकिन भगवान् का ज्ञान रूपी सूर्य ऐसा है, जिसका प्रकाश पाने पर आह्लाद उत्पन्न होता है, उल्लास जागता है और आन्तरिक आनन्द की वृष्टि होती है।

अनन्त आनन्द के सरोवर में :

महावीर वाणी के ज्ञान चिन्तन से जब अनन्त आनन्दानुभव की श्रेष्ठता तक पहुंचा जा सकता है तो क्यो नहीं, प्रत्येक ज्ञान पिपासु उस सरोवर मे अवगाहन करने का सुन्दर प्रयास करे? जिस शीतलता से आपको आनन्द का अनुभव हो, उस शीतलता की दिशा मे आगे बढना स्वय आपके लिए पहले हितावह है। आप शीतलता का अनुभव करेगे तो दूसरो को भी अपने विषय विकारो का शमन करके शीतलता की ओर बढने की प्रेरणा दे सकेगे।

ऐसे श्रेष्ठ महावीर भगवान् के चरणो मे भावपूर्वक वन्दन करे और श्रद्धा के साथ उनकी अमूल्य वाणी के अध्ययन और अन्वेषण मे लगे। यदि ऐसा आह्लाद और उल्लास के साथ करेगे तो आपको अमित आनन्द और अनन्त आनन्द की प्राप्ति भी हो सकेगी।

–नोखा दि 16-7-1976

सूक्ति-गंगा

स्वयं करना होगा

अपनी आत्मा की मलिनता धोने और उसे संवारने का काम स्वयं को करना होगा। परमात्मा ने मनुष्य-देह में रह कर विकास का जो मार्ग बताया है, उसके अनुरूप यदि मानव चलने की तैयारी कर ले और अपने कार्यकलापो को तदनुरूप ढाल ले तो वह अपने मन की गति को भी एकाग्र बना सकता है तथा अपनी आत्मा के मूल रूप को भी पवित्र बना कर सवार सकता है।

फल मिलता ही है

धैर्य कभी नहीं छोडना चाहिए। कर्त्तव्य-निष्ठा से सत्य कर्म करने वाले को आपत्तियां आने पर भी सफलता अवश्य मिलती है। निष्काम-भाव से कर्त्तव्य-पालन करने वाले को सर्वतोमुखी फल जरूर मिलता है, जिससे वह उन्नति के शिखर पर पहुंच सकता है।

दूरदृष्टि

सूक्ष्म निरीक्षण दूरदर्शिता का द्योतक है। वह इन्सान को आपत्तियो से बचा लेता है।

जितनी प्यास, उतना जल

जिस प्रकार जितनी तीव्र प्यास होती है, जल उतना ही शान्तिदायक होता है, ठीक वैसे ही जीवन की अधार्मिकता के घनत्व के अनुसार गुण-ग्राहकता की वृत्ति भी गहरी होनी चाहिए। अधार्मिकता का अन्त गुण ग्राहकता से ही संभव है।

क्रोध/अभिमान

क्रोध की अपेक्षा अभिमान की अभिव्यक्ति को समझने के लिए अधिक पैनी दृष्टि की आवश्यकता है, किन्तु क्रोध को देखते ही प्रज्ञा समीक्षण-दृष्टि के साथ इतनी सक्षम हो जाती है कि फिर मान को देखने मे सुगमता आ जाती है।

संघर्ष में भय-मुक्त

जो मनुष्य संघर्ष से भय खाता है और उससे अलग रहना चाहता है, वह अपनी कायरता को पुष्ट करता है। सघर्ष कोई बुरी वस्तु नहीं है, वह जीवन-विकास का मुख्य साधन है। जिस जीवन मे सघर्ष नही है, उसे जीवन नही कहा जा सकता है।

यह सोचो

'दुनिया क्या देख रही है', इस पर विचार मत करो। 'तुम क्या देख रहे हो' इसी का विचार करो। 'इस काम से दुनिया क्या कहेगी' यह न सोच कर 'मेरी पवित्र आत्मा क्या कहेगी' यह सोचो।

नया रास्ता भी संभव

इन्सान की बुद्धि नदी-के-पानी की तरह प्राय: अपने दायरे मे घूमा करती है कभी-कभी तूफान आने पर नदी-का-पानी इधर-उधर फैल कर नयी नदी भी तैयार करता है। वैसे ही मनुष्य की बुद्धि भी कभी-कभी नया रास्ता/नयी वस्तु का निर्माण करती है।

विष के झाड़

विष-वृक्ष अनेक प्रकार के होते है, यथा-अफीम, आक, धतूरा आदि। ये विष वृक्ष तो महज ही अभिव्यक्ति पा जाते है, किन्तु कई ऐसे विष-वृक्ष होते है जिनका ऊपरी हिस्सा तो मनोहर/ललित लगता है, किन्तु परिणाम उनका प्रतिकूल होता है। ऐसे विष वृक्ष की तुलना मान से की जा सकती है।

आडम्बर अर्थात् दम्भ

जिसमे जितनी सजावट होगी, उसमे उतना ही नकलीपन होगा। आडम्बर दम्भ का द्योतक है। जिसे वस्तु-स्वरूप का ज्ञान नहीं होता, वही आडम्बर को पसद करता है।

मन को बनायें निश्चल

धर्म को जीवन मे रमाने के लिए मन को पवित्र बनाना होगा, जिसकी पवित्रता का अचूक/अमोघ साधन है-तप। तप के बाद बाह्य/आभ्यन्तर रूपो की आराधना करते हुए मन को निश्चल एवं शुद्ध बनाया जा सकता है।

अनासक्त बनें

चित्त मे अनासक्ति की भावना रहनी चाहिए। यदि आकांक्षाएं पैदा होती हैं तो साधु-जीवन सुरक्षित नहीं रह सकेगा। जिन विषयों या पदार्थों का परित्याग किया है उनके प्रति साधु को नासिका-श्लेष्म की तरह अनासक्त रहना चाहिए।

विकार की पहचान

संकुचित विचारधारा द्वेषभाव की प्रतीक है। बडे-बडे नेता मुझसे मिलें, मेरे भक्त बन कर मेरा यशोगान करे, ऐसी भावना द्वेष युक्त विकारी मन की पहचान है।

विषमता का विष

विषमता मनुष्य के मन को विकृत बनाती है। मनुष्य विकृत मन से अपना व्यवहार विकृत बनाता है और इस तरह विकृति का समाजीकरण होने लगता है।

निर्जीव श्रम

धृति सहित कृति कला का रूप ले लेती है, जबकि धृति रहित कृति निर्जीव परिश्रम मात्र है।

वचन दर्पण

वचन एक दर्पण है। चतुर पुरुष वचनों के अंदर इन्सान का आन्तरिक प्रतिबिम्ब देख सकते हैं।

सफल संस्थाएं

जितनी भी साम्प्रदायिकता से अनुप्राणित संस्थाएं है, वे प्राय: साम्प्रदायिकता के अलावा निर्लक्ष्य होती हैं। निश्चित लक्ष्य न होने से वे प्रतिगामी बनी रहती है। प्रगतिशील संस्थाए निश्चित लक्ष्य को ले कर चलती है, अतएव वे सफल संस्थाएं कही जा सकती है।

जीवन यात्रा

जीवन के यात्रा काल मे किसी भी इन्सान को पापी या दुष्ट, कुपात्र या नीच कहना अथवा समझना, स्वय को वैसा बनाना है। प्रत्येक इन्सान के साथ प्रेमपूर्वक पेश आना, उसकी स्थिति, समय की स्थिति एव उस स्थान के वातावरण को देख कर सहानुभूतिपूर्वक पवित्र एव व्यापक वायुमण्डल का निर्माण करना जीवन यात्रा का कर्त्तव्य होना चाहिए।

विषमता के विस्फोट

विषमता संपन्न और विपन्न दोनो को अशान्त बनाती है। संपन्न इस कारण अशान्त रहता है कि 'क्यो न वह सारी सम्पत्ति को केवल अपने और अपनो के लिए संचित कर ले'-तो विपन्न की अशान्ति का कारण स्पष्ट होता है कि वह अपने पेट की आग को भी बुझाने मे सफल नही होता है। यह अशान्ति ही फैलती हुई अलग-अलग स्थानों और स्तरो पर विविध रूपो मे विस्फोट करती रहती है। विषमता-के-ये-विस्फोट मनुष्य जाति की श्रेष्ठ प्रगति को विनष्ट करते हैं।

समता दर्शन

समता-दर्शन गुण और कर्म की दृष्टि से किये गये मनुष्य जाति के वर्गीकरण में विश्वास करता है। गुण और कर्म का वर्गीकरण चारित्र की प्रेरणा देता है और इस मान्यता से मनुष्य चारित्र संपन्नता की ओर आगे बढे-समता का सही तात्पर्य यही है।

ऊपर उठ कर

आध्यात्मिकता की ओर गति करने का स्पष्ट पाथेय समता है। समता का सही अर्थ जीवन मे स्वार्थवादिता एवं पदार्थवादिता से ऊपर उठ कर सर्वजनहित की कल्याण कामना से आत्मविश्वास है।

सीखें सूरज से

सूर्य समभाव से अपनी गति करता है। बादलो की विषमता से वह विचलित नही होता। वास्तव मे यह भूतल समता-की-दृष्टि से चल रहा है। फिर मानव ही क्यो समता से दूर हटता जाता है?

कर्त्तव्य

फल को देखने वाला आगे नही बढ सकता, कर्त्तव्य को देखने वाला ही आगे बढ़ सकता है।

ज्ञान/चारित्र

ज्ञान तो पण्डितों में बहुत है, पर उन्हें कौन पूछता है? ज्ञान ही श्रेष्ठ होता है वे पण्डित साधुओ की तरह पूजनीय बन जाते है, पर ऐसा है नही। वस्तुतः ज्ञान का नहीं, चारित्र की आवश्यकता है। वह सब कुछ है। यह ज्ञान का अपलाप है। इससे भी बचना होगा। एकान्तिक कथन प्रगाढ़ बध का कारण बनता है।

स्वल्प दुर्गुण

अमरबेल का छोटा-सा टुकडा भी यदि वृक्ष पर रह जाता है तो वह पूरे वृक्ष को सुखा डालता है। स्वल्प दुर्गुण भी अमरबेल की तरह जीवन के सद्‌गुण-रूपी वृक्ष को सुखा डालता है।

भयंकर पाप

छलना भयंकर पाप है। इससे सभी तरह की हानियां है। आन्तरिक जीवन पर पर्दा पड़ता है, विकास मार्ग खत्म होता है, विकसित जीवन की कडिया कुण्ठित होकर दब जाती है, मलिनता का साम्राज्य छा जाता है, मानव-मानव के रूप मे न रह कर दानव/पशु के रूप मे चरण रखता है।

गुणवत्ता का श्रेष्ठ स्तर

पर्यावरण रक्षा का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी है कि वनस्पति, जल, वायु, पृथ्वी तथा उनके उत्पादनो की गुणवत्ता का श्रेष्ठ स्तर कायम रखा जाए, जिसके कारण सूक्ष्म एव स्थूल सभी प्राणियो के प्राणो का पोषण यथारीति होता रहे।

मन-मन्दिर

मन-मन्दिर मे रोज झाडू लगाने की आदत बनायी जानी चाहिए, जिससे ममता की गंदगी हटती जाए और

समता की निर्मलता आती जाए।

जागृत हृदय

जो सदा जागृत हृदय से कथन करता है उसे जागृत हृदय से ही आचरण मे उतारता है, उसकी आत्मा का विकास सहज ही सम्पादित हो सकता है। आत्मा की विराट चैतन्य-शक्ति, चिन्तन, कथन एवं आचरण की शुद्ध जागृति में से प्रस्फुटित होती है।

निर्मलता

आन्तरिक तत्त्वो को देखने के लिए ज्ञान की तीक्ष्णता का होना आवश्यक है अर्थात् ज्ञान की निर्मलता जितनी बढेगी, उतनी ही तीक्ष्णता की स्थिति बनती जाएगी। ज्ञान की निर्मलता जीवन की निर्मल अवस्था पर अवलम्बित है। जीवन को निर्मल बनाने के लिए भौतिक वस्तुओ पर से ममत्व हटाना आवश्यक है।

घुन

ईर्ष्या पतन का भयंकर रास्ता है। यह अमूल्य जीवन का घुन है। यह वह जहर है जो जीवन को श्मशान तक शीघ्र ही पहुंचा देता है। ईर्ष्या एक जीवन को नही, अनेक जीवनों को नष्ट करती है।

गलत भाषा : गलत चिन्तन

मै यदि मानव हू और मुझे मानवता का सात्त्विक गौरव है, तो सबके साथ समता का बर्ताव करना है यानी यथायोग्य व्यक्ति के साथ यथास्थान व्यवहार रखते हुए स्व-पर के विकास का ध्यान रखना है और मान-अपमान की भाषा में कभी नहीं सोचना है।

सम्यग्ज्ञान/मिथ्याज्ञान

जो वस्तु जिस समय, जिस रूप मे रही हुई है, उसे उस समय, उस अपेक्षा से उस रूप मे जानना-मानना 'सम्यग्ज्ञान' है। इससे विपरीत यानी जो वस्तु जिस समय, जिस रूप मे नही है, उस अपेक्षा से उसे उस समय, उस रूप मे जानना या मानना 'मिथ्याज्ञान' है।

जैसा वेश हो

जिस समय जैसा वेश हो, उस समय उसी के अनुरूप कार्य एवं व्यवहार होना चाहिए और जिस समय जैसा कार्य किया जाता हो, उस समय उसी कार्य मे मन, वचन और काया का एकाकार होना जरूरी है।

परावलम्बन

स्वयं का उत्तरदायित्व स्वयं पर है, दूसरों पर नहीं। दूसरे सहायक बन सकते हैं, लेकिन कब? जबकि हम स्वयं अपने कर्त्तव्य पालन मे तत्पर हो तब।

बाधक नहीं, साधक

विचार-शक्ति का सदुपयोग करने वाला सोचता है कि मुझे आपत्ति मे डालने वाला कोई नहीं है। जो मेरी उन्नति मे बाधक दिखता है, वह बाधक नही, साधक है।

अहिंसा का शासन

शासन-रहितता के अभिप्राय उस शासन से है, जो शासन शोषण-या-हिंसा-से-युक्त हो, जिसमे विचार-स्वातन्त्र्य का दमन नही किया जाता है। शासन इन्सानियत से वंचित रखने वाला नहीं हो, बल्कि प्रेम या अहिंसा का शासन हो तो अवश्य हो। इसके बिना प्रगति संभव नहीं है।

❖ ❖ ❖

चिन्तन के गवाक्ष

दर्शन-अमृत
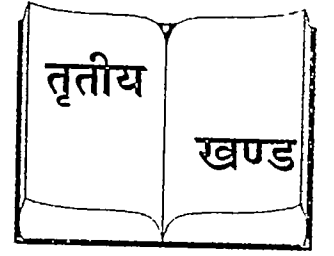
1. सूक्ति गंगा
2. चिंतन कण
3. अनमोल वचन

चिंतन कण

✍ आचार्य श्री नानेश

☆ प्रशसा जहरीले सर्प के समान है। अगर इसका विष तुझे चढ गया तो तू नष्ट हो जायेगा।

☆ ब्रह्मचर्य जीवन का मूल है। इसी से जीवन की सारी रौनक है। आधुनिकता के भुलावे मे आकर इसकी उपेक्षा नहीं करना चाहिए। इसकी उपेक्षा करना सारे जीवन की महत्ता को तिलांजलि देना है।

☆ आवेश दिल की कमजोरी का सूचक है। आवेश मे आकर किया जाने वाला कार्य त्रुटिपूर्ण होता है। अतः सत्यान्वेषक को आवेश से दूर रहना चाहिए।

☆ पॉच महाव्रतो का पालन करने वाला चाहे किसी भी सम्प्रदाय का हो, चाहे किसी स्थान मे हो, उसके साथ मिलने मे एक सच्चा साधु आनन्द का ही अनुभव करता है।

☆ ईश्वर के समग्र स्वरूप का जब प्रार्थना के माध्यम से चिन्तन किया जाता है तो उस समय मानसिक धरातल पर पवित्र संस्कारो का उदय होता है तथा अभ्यास के साथ ये पवित्र सस्कार समुज्ज्वल जीवन का निर्माण करते है।

☆ सेवा करने वाले व्यक्ति को यह सोचना चाहिए कि मै सेवा अन्य की नहीं कर रहा हूं, अपितु अपने आपकी ही कर रहा हूं। अन्य की सेवा के निमित्त से स्वयं की ही आत्मा का परिमार्जन कर रहा हू।

☆ सकल्प मजबूत हो और विश्वास अटल बन जाय, तब सेवा की सच्ची साधना संभव बनती है। वह चाहे किसी भी वेश मे हो-एक सच्चा सेवक कहलाता है।

☆ व्रतो और नियमो के कठोर पालन से साधु इधर-उधर डिगे नहीं, इस दिशा मे निरन्तर प्रयत्नशील रहने वाला ही वास्तविक अर्थों मे साधु को समाधि पहुंचाता है।

☆ श्रावक-श्राविकाओ को तथा सघ को पूरी सावधानी रखनी चाहिए कि साधु के साथ वैसा ही व्यवहार हो, जिससे उसके साधु जीवन की पूर्णतया सुरक्षा हो। इसका संघ पर विशेष उत्तरदायित्व होता है।

☆ समाज मे गुणवान और विद्वान् का पूरा सम्मान हो, धनवान से भी अधिक तथा उनकी सदाशयी शक्ति का संघ की उन्नति मे यथेष्ट रूप से उपयोग किया जाय।

☆ सेवक की सेव्य के प्रति सेवा इस उद्देश्य से होती है कि सेवक भी सेव्य के तुल्य बन जाये और सेव्य की सी सर्वशक्ति, सर्वज्ञता एवं सर्वदर्शिता सेवक की आत्मा मे भी व्याप्त हो जाय।

☆ क्या आप अपनी मृत्यु को जल्दी से जल्दी बुलाना चाहते है? यदि नहीं, तो छोटे और बडे सभी प्रकार के दुर्व्यसनो को तुरन्त त्यागने की तैयारी कर लीजिए।

☆ सच्चा योग यही है कि कोई अपने मन, वचन एवं काया की योग-वृत्तियो को संवृत्त बना कर उन्हे 'कु' से 'सु' की दिशा मे मोड दे। जो योग का सच्चा अर्थ नहीं समझते है, वे विचारहीन शारीरिक क्रियाओ मे योग को ढूढते हैं।

☆ कर्कश, कठोर, मर्मकारी, असत्य आदि भाषा के दूषणो का त्याग हो तथा मन मे सरलता का निवास हो तभी मौन

व्रत का ग्रहण करना सार्थक एवं सफल कहलाता है।

☆ हे साधक! तू यदि सहज योग की साधना के साथ जीवन को अति उत्कृष्ट बनाने का इच्छुक है तो इर्या समिति की सम्यक् पालना के साथ चल।

☆ प्रतिकार करने का सामर्थ्य है, किन्तु सात्विक भावना के साथ वह प्रतिकार के बारे मे सोचता भी नहीं तथा हृदय से सदा के लिए उसको क्षमा कर देता है, यही वास्तविक एवं सात्विक क्षमा होती है।

☆ क्रोध से बच गए तो समझिये कि जीवन के पतन से बच गए।

☆ भेदभाव के विचार मनुष्य के आचरण मे बराबर हिसा को स्थान देते रहते है। भेद समानता की विरोध स्थिति होती है। भेद का अर्थ है कि या तो अपने को बड़ा समझें या अपने को हीन मान्यता के साथ छोटा समझे। बडा समझने पर मदोन्मत्त हिंसा आती है और हीन समझने पर प्रतिक्रियात्मक हिंसा का जन्म होता है। अभिप्राय यह है कि जहां भेदभाव आता है, वहां किसी न किसी रूप में हिंसा भी आती है।

☆ बुद्धि, धन, बल या विद्या किसी की भी शक्ति स्वयं के दास हो तो उसका कर्त्तव्य माना जाना चाहिये कि वह अपनी शक्ति का दूसरों के हित के लिए सदुपयोग करे।

☆ भोजन की आवश्यकता से भी आवश्यक (प्रतिक्रमण) की आवश्यकता ऊपर है।

☆ प्रवचन मूल रूप मे आगमो/शास्त्रो के ज्ञान प्रकाश मे अपनी आत्म साधना के धरातल पर निसृत श्रेष्ठ एवं विशिष्ठ वचन होता है।

☆ कैसा ही पापी, हिंसक या क्रूरतम व्यक्ति क्यो न हो, यदि उसके हृदय मे वात्सल्य भावना उडेली जाय तो वह अपना श्रेष्ठ प्रभाव अवश्य ही दिखाती है।

सच्चा योग यही है कि कोई अपने मन, वचन और काया की योग-वृत्तियो को सवृत्त बनाकर उन्हे 'कु' से 'सु' की दिशा मे मोड दे। जो योग का सच्चा अर्थ नही समझते है, वे विचारहीन शारीरिक क्रियाओ मे योग को ढूढते है।

-आचार्य श्री नानेश

अनमोल वचन

संकलन : साध्वी कुमुदश्री जी

◆ विचार सर्वप्रथम हृदयतल से ही फूटता है और उस प्रस्फुटन का रूप वैसा ही होता है, जैसाकि उसे साधन मिलता है। धरती एक-सी होती है, बरसात एक-सी किन्तु एक ही खेत मे अलग-अलग जैसे एक ओर गन्ना बोया जाय दूसरी ओर अफीम का पौधा लगाया जाय तो दो विभिन्न पौधो का प्रस्फुटन ऐसा होगा कि एक मिष्ट दूसरा विष, एक जीवन का वाहक तो दूसरा मृत्यु का। इसी तरह दो हृदय एक से हो किन्तु एक में समता का बीज बोया जाय और दूसरे मे विषमता का तो दोनो की विचार सरणि एकदम विरुद्ध होगी। समता का विचार जहां जीवन का आह्वान करता है, वहां विषमताजन्य विचार मृत्यु को बुलाता है।

◆ परिवार की सहृदयता एवं स्नेहिल वृत्ति को लूटती हुई विषमता जब फैलती है तो वह समाज व राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रो मे भेदभाव व पक्षपात की असख्य दीवारे खड़ी कर देती है तो पग-पग पर पतन की खाईयां खोद देती है। जिन क्षेत्रो से वास्तव मे दुर्बलता के क्षणो मे मनुष्य को सम्हलने (संभलने) और उठने का सहारा मिलना चाहिए वे ही क्षेत्र आज अपनी ही लगाई हुई आग मे जलते हुए उसकी जलन मे भी वृद्धि ही कर रहे है।

◆ आज विषमता मनुष्य के मन की गहराईयो के भीतर पैठ कर भीतर ही भीतर समाती जा रही है। निश्छल मन छल के तारो मे उलझता जा रहा है। अंतर सोचता कुछ है, किन्तु उसका प्रगटीकरण किसी अन्य रूप में ही होता है। यह द्वैतभरा व्यवहार मनुष्य को सत्य से विमुख बनाता जा रहा है। जहां छल आ गया हो तो वहां सत्य रहेगा ही कहां? यदि सत्य नहीं तो स्व पर का शिव कहां? और आत्मा की सुन्दरता कहां? श्री गणेश नहीं तो प्रगति की कल्पना कैसे की जा सकती है?

◆ स्वार्थ के घेरे मे जो विचार जन्म लेते है वे उदार और त्यागमय नहीं होते है और त्याग के बिना मन अपने मूल निर्मल स्वरूप की ऊंचाईयो मे ऊपर कैसे उठ सकता है?

◆ हमारी संस्कृति का जो मूलाधार गुण और कर्म पर टिकाया गया था, वह इस असुतलित वातावरण के बीच उखडता जा रहा है। शक्ति स्त्रोतो के असंतुलन का सीधा प्रभाव यह दिखाई दे रहा है कि योग्य को योग्य नहीं मिलता और अयोग्य सारा योग्य हडप जाता है, योग्य हताश होकर निष्क्रिय होता जा रहा है और अयोग्य अपनी अयोग्यता का तांडव नृत्य कर रहा है।

◆ स्वार्थ का स्वभाव संकुचित होता है, वह सदा छोटे से छोटा होता जाता है, उसका दायरा बराबर घटता ही जाता है, जितना यह दायरा घटता है, उतनी ही मनुष्यता बौनी होती है, पशुता बडी बनती जाती है।

◆ जब विवेक सो जाता है तो निर्णय शक्ति उभरती नहीं। निर्णय नहीं तो जीवन की दिशा नहीं-भावना का जगत् तब शून्य होने लगता है।

◆ मेरे तेरे की भावना से ऊपर उठने मे ही जागृति का मूलमंत्र समाया हुआ है और इसी भावना की नींव पर त्याग का प्रासाद खडा किया जा सकता है।

◆ जहां व्यामोह है वहां विभ्रम है। व्यामोह विचार को बिगाडता है तो दृष्टि स्वयमेव ही बिगड़ जाती है। पीलिये

का रोगी सभी रंगो को पीलेपन में ही देखने लग जाता है। कोई जैसा सोचता और देखता है, वैसा ही करने भी लगता है।

◆ धरातल जब समतल और साफ होता है तो कमजोर आदमी भी उस पर ठीक व तेज चाल से चल सकता है किन्तु इसके विपरीत अगर धरातल उबड़खाबड और कंटीला पथरीला हो तो मजबूत आदमी को भी उस पर भारी मुश्किलो का सामना करना पडेगा। व्यक्ति की क्षमता का तालमेल यदि सामाजिक विकास के साथ बैठ जाता है तो व्यक्ति की क्षमता भी कई गुणा बढ जाती है।

◆ जब-जब व्यक्ति स्वस्थ धारा से अलग हट कर निरंकुश होने लगता है-शक्ति के मद मे झूम कर अनीति पर उतारु होता है तब-तब यही सामाजिक शक्ति उस पर अकुश लगाती है।

◆ समता मानव मन के मूल में है, उसे भूला कर जब विपरीत दिशा में वह चलता है तभी दुर्दशा प्रारंभ होती है।

◆ समता कारण रूप है तो समानता कार्य रूप, क्योकि समता मन के धरातल पर जन्म लेकर मनुष्य को भावुक बनाती है, तो वही भावुकता फिर मनुष्य के कार्यों पर असर डाल कर उसे समान स्थितियो के निर्माण मे सक्रिय सहयोग देती है।

◆ निरपेक्ष दृष्टि से पक्षपात नही रहता और जब पक्षपात नहीं तो वहां उचित के प्रति निर्णायक वृत्ति पनपती है तथा गुण व कर्म की दृष्टि से समता अभिवृद्ध होती है, अगर एक पिता के मन मे भी एक पुत्र के प्रति राग और दूसरे के प्रति द्वेष है तो वह स्थिति समता जीवन की द्योतक नही है। मै सबकी आंखो मे प्रफुल्लता देखना चाहूं-मै किसी की आंख में आंसू नही देखना चाहूं-ऐसी वृत्ति जब सचेष्ट बनती है, तो मानना चाहिए कि उसके मन मे समता का आर्विभाव हो रहा है।

◆ जीवन मे जितनी विषमता है वह उतना ही भटका हुआ है और जितनी समता आती है वह उसके सच्चे मार्ग पर प्रगतिशील होने का संकेत देने वाली होती है।

◆ जहां भेद है वहां विकार है, पतन है। तेरे मेरे की जब दीवारे टूटती है तब अंतर्मन मे जिस विराटता का प्रकाश फैलता है उसी प्रकाश को समता सुस्थिर, शीतल और सौख्यपूर्ण बनाती है।

◆ समता, साम्यता या समानता मानव जीवन एवं मानव समाज का शाश्वत दर्शन है।

◆ वर्तमान विषमता के मूल में, सत्ता व सम्पत्ति पर व्यक्तिगत या पार्टीगत लिप्सा की प्रबलता ही, विशेष रूप से कारण भूत है और यही कारण सच्ची मानवता के विकास मे बाधक है। समता ही इसका स्थायी व सर्वजन हितकारी निराकरण है।

◆ कहा जाता है कि समय बलवान होता है। यह सही है कि समय का बल अधिकांशत: लोगो को अपने प्रवाह में बहाता है, किन्तु समय को अपने पीछे करने वाले वे ही युगपुरुष होते है जो युगानुकूल वाणी का उद्घोष करके समय के चक्र को दिशादान करते है।

◆ मनुष्य का मन जब तक संतुलित एवं संयमित नही होता तब तक वह अपनी विचारणा के घात प्रतिघातो मे टकराता रहता है। उसकी वृत्तियां चंचलता के उतार-चढावो मे इतनी अस्थिर बनी रहती है कि सद् या असद् का उसे विवेक नहीं रहता।

◆ जानने की सार्थकता मानने मे है और मानना तभी सार्थक बनता है जब उसके अनुसार किया जाय।

◆ व्यक्ति के चिंतन या कृतित्व स्वातंत्र्य का लोप नही होना चाहिए बल्कि ऐसी स्वतत्रता तो सदा उन्मुक्त रहनी चाहिए।

◆ निरपेक्ष चिंतन का फल विचार समता मे ही प्रगट होगा, किन्तु यदि उस चिंतन के साथ दंभ हठवाद अथवा यथलिप्सा जुड जाय तो वह विचार संघर्षशील बनता है।

◆ युग बदलता है तो परिस्थितिया बदलती है। व्यक्तियो के सहजीवन की प्रणालिया बदलती है तो उनके विचार और आचार के तौर तरीको मे तदनुसार परिवर्तन आता है।

◆ सत्य ग्राह्य है तो वह हमेशा ग्राह्य ही रहेगा किन्तु सत्य प्रकाशन के रूपों मे युगानुकूल परिवर्तन होना स्वाभाविक है।

◆ लोकतंत्र के रूप मे राजनीतिक समानता की स्थापना हुई कि छोटे-बडे प्रत्येक नागरिक को एक मत समान रूप से देने का अधिकार है और बहुमत मिला कर अपना प्रतिनिधि का चुनाव किया जाय। यह पक्ष अलग है कि व्यक्ति अपने स्वार्थों के वशीभूत होकर किस प्रकार अच्छी से अच्छी व्यवस्था को भी तहस-नहस कर सकते है, किन्तु लोकतंत्र का ध्येय यही है कि सर्वजनहित एवं सर्वजन साम्य के लिए व्यक्ति की उद्दाम कामना पर नियंत्रण रखा जाय।

◆ सम्पत्ति पर सार्वजनिक स्वामित्व की स्थापना से धन लोलुपता नहीं रहती है। मानवता प्रमुख रहे और धन उसके साधन रूप मे गौण स्थान पर।

◆ जिस वर्ग के हाथों मे अर्थ का नियत्रण रहा, उसी के हाथो में सारे समाज की सत्ता सिमटी रही।

◆ तकली से सूत काता जाता है और कते हुए सूत से वस्त्र बना कर किसी भी नंगे बदन को ढका जा सकता है लेकिन कोई दुष्ट प्रकृति का मनुष्य तकली से सूत न कात कर उसे किसी दूसरे की आंखो मे घुसेड दे तो क्या हम उसे तकली का दोष माने? सज्जन प्रकृति का मनुष्य बुराई मे भी अच्छाई को ही देखता है लेकिन दुष्ट प्रकृति का मनुष्य अच्छे से अच्छे साधन से भी बुराई करने की कुचेष्टा करता रहता है।

◆ क्रांति यही है कि वर्तमान विषमताजन्य सामाजिक मूल्यो को हटा कर समता के नये मानवीय मूल्यो की स्थापना।

◆ मन, वाणी एवं कर्म की समता एवं शुद्धता सभी स्थानो पर-चाहे वह परिवार, समाज, राष्ट्र या विश्व हो, सबमे सद्भावना ही उत्पन्न करेगी। यह संयुक्त सद्भावना ही स्थायी समता का वातावरण बनाती है।

◆ सबके प्रति समान रूप से स्नेह की वर्षा करने मे ही समता की तरल सार्थकता बनती है।

◆ समूह का हित व्यक्ति के हित से बडा होता है, इस तथ्य को भुलाया नही जाना चाहिए।

◆ सामूहिक हित साधना मे व्यक्ति के त्याग को सदा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। सामाजिक व्यवस्था तो सर्वजनहितकारी इसी निष्ठा के साथ बनाई जा सकती है।

◆ समाज मे ऊंची श्रेणी, ऊंचा आदर या ऊंची प्रतिष्ठा उसे मिलनी चाहिए जिसने अपने जीवन में ऊंचे मानवीय गुणो का सम्पादन किया हो तथा जिनके कार्य त्याग एवं जनकल्याण की दिशा मे उन्मुक्त रहते हों।

◆ महावीर ने अपने दर्शन मे व्यक्ति महत्ता को कहीं स्थान नहीं दिया है, सिर्फ गुणो की आराधना पर बल दिया।

◆ ज्ञान, चिन्तन एवं कर्म की त्रिधारा मे कहीं भी सत्य को आंखो से ओझल न होने दिया जाय और सत्य की सारी

कसौटियो में आत्मानुभूति की कसौटी सदा जीवन्त बनी रहनी चाहिए।

- घटाटोप अंधकार होता है उसमें एक लौ जलती है, क्षीण ही सही कुछ प्रकाश फैलता है। वही लौ तेज होती है और हजार-लाख वॉट का बल्ब बन जाती है-चकाचौंध प्रकाश फैल जाता है, कोनो मे भी अंधेरा ढूंढे नहीं मिलता। यही जीवन में निर्मलता के उद्‌गम की स्थिति होती है।
- चोरी का अध्याय वहीं से शुरू होता है, जब समर्थ कमजोर की सम्पत्ति हरने लगे।
- व्यक्ति का श्रमनिष्ठ अर्जन, व्यक्ति और समाज दोनो के जीवन मे नैतिकता, शुद्धता एवं समता का संचार करेगा।
- मर्यादाओं के निर्वाह में भी केवल अंधानुकरण नहीं होना चाहिए।
- त्याग और संयम में ऐसी ही दिव्य शक्ति होती है जो मनुष्य को उसके मनुष्यत्व से भी ऊपर उठ कर देवत्व के समीप ले जाती है।
- कपट नहीं छूटता तब तक मनुष्य अपने क्षुद्र स्वार्थों के लिए हर किसी के साथ विश्वासघात का व्यवहार करता है।
- जब सहयोग एवं सहानुभूति का वातावरण होता है तब समता के विकास का रूप एक और एक मिलकर दो की संख्या मे नहीं बल्कि एक और एक मिल कर ग्यारह की संख्या में ढलता है।
- लोकोपकारी वही बन सकता है जो अपने स्वार्थों को तिलांजलि दे देता है।
- स्वार्थ को एक बांध की तरह भी माना जा सकता है कि जहां इसके सुनियंत्रण मे जरा-सी भी ढील आई कि ये फिर सारी पाल को तोड़ कर चारों ओर फैलते हुए पानी की तरह मनुष्य की नैतिकता को डूबो देता है।
- क्रांति न हठ है, न दुराग्रह है और न रक्तपात है। नए सामाजिक मूल्यों की रचना का नाम क्रांति है जिसका क्रम सदा चलता रहना चाहिए ताकि मूल्यो में विकारो का प्रवेश ही न हो सके।
- कल्पना करे कि किसी भी टिकट खिडकी के बाहर अगर लोग पूरे अव्यवस्थित टिकट लेने के लिए टूट पडे तो भला कितने व कौन टिकट ले पाएंगे? वे ही तो जो शरीर से बल से या किसी तरह ताकतवर होंगे-कमजोर तो बेचारा भीड़ में पिस ही जाएगा। तो आज के विषम समाज की ऐसी अव्यवस्था से तुलना की जा सकती है। जहां सत्ता व सम्पत्ति को लूटने की मारामारी मची हुई है, जो न्याय नीति से नही बल्कि अन्याय अनीति से लूटी जा रही है। इस दुर्व्यवस्था मे दुर्जन आगे बढ़ कर लूट का सरदार बन जाता है तो हजारों सज्जन नीति व न्याय के पुजारी होकर भी विवश खडे देखते रह जाते है।
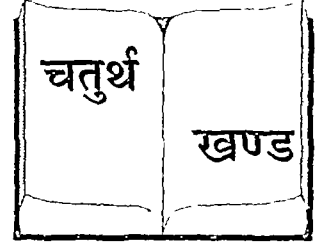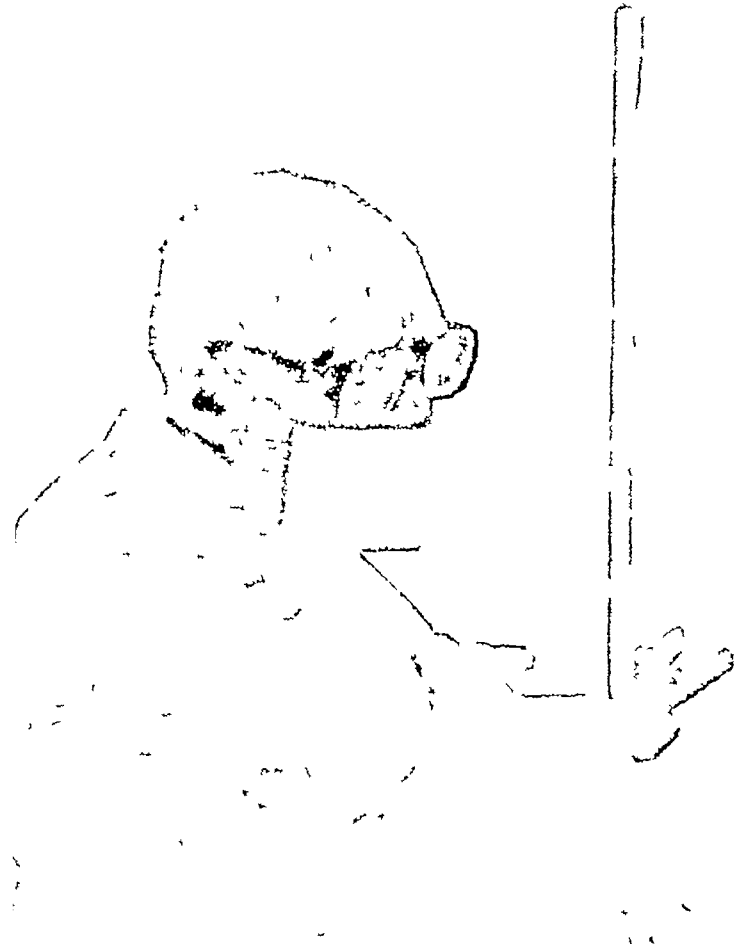
चतुर्थ खण्ड

अवदान

अनुभव-अनुभूति

समता विभूति आचार्य श्री नानेश की समीक्षण ध्यान प्रयोग विधि

मनुष्य असीम शक्ति का स्वामी है। उसके अन्दर अमृत कोष है। यदि वह उस कोष को ध्यान साधना से जागृत कर ले, तो वह असीम साधना को प्राप्त कर सकता है। भारतीय संस्कृति मे आन्तरिक शान्ति और आध्यात्मिक आनन्द की खोज को विशेष महत्त्व दिया गया है, इस खोज में ध्यान साधना की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, जिसके द्वारा साधक आत्मज्ञान की ओर प्रवृत्त हो अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। भगवान् महावीर अपने साधना काल मे अधिकतर ध्यानस्थ ही रहते थे। भगवान् महावीर की ध्यान साधना को ही परम श्रद्धेय, समता विभूति, धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश ने समीक्षण ध्यान के रूप प्रस्तुत किया है।

प्राणायाम :

श्वास की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित गति देने की विधि को प्राणायाम कहा जाता है।

इस प्राणायाम के प्रमुख तीन भेद है-कुम्भक, पूरक एवं रेचक।

हमारे पृष्ठ रज्जु मे तीन प्रमुख नाड़ियां हैं, जिन्हे इडा-इंगला, पिंगला और सुषुम्ना के नाम से पुकारा जाता है। प्राणायाम की प्रक्रिया में इन तीनो की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इन्हीं के आधार पर तीनो प्रकार के प्राणायाम बनते हैं।

सर्वप्रथम इडा या इंगला नाड़ी अर्थात् दाहिनी नासिका के छिद्र से प्राणवायु को धीरे-धीरे उदर अथवा हृदय मे भरा जाता है। उस समय बांयी नासिका को दायें हाथ की तर्जनी अंगुली से बंद रखना होता है। हृदय अथवा उदर में वायु भरने की इस प्रक्रिया को कुम्भक प्राणायाम कहते है। उस वायु को एक सीमित समय तक भीतर ही रोके रखने को पूरक प्राणायाम और उसके पश्चात् पिंगला नाड़ी अर्थात् बांयी नासिका के छिद्र से उस अवरुद्ध वायु को धीरे-धीरे बाहर निकालना रेचक प्राणायाम कहलाता है। यह प्रक्रिया परिवर्तन क्रम से अर्थात् दूसरी बार पिंगला से श्वास लेना और इडा से छोड़ना चलनी चाहिए।

ध्यान मुद्रा :

ध्यान मुद्रा बना ले . .। ध्यान मुद्रा मे किसी सुखासन से बैठे । आसन में किसी भी प्रकार का तनाव खिचाव न हो। ध्यान मुद्रा से मेरु दण्ड सीधी रहे। गर्दन सीधी रहे . । नेत्र बन्द कर ले। पूरे शरीर मे किसी भी प्रकार का तनाव, खिंचाव न हो .। ध्यान मुद्रा में (यदि पर्यंकासन या पद्मासन से बैठे हो तो) हथेलियो को ऊपर की ओर खुली रख कर दोनो घुटनो पर जमा लें. .। हथेली का निचला हिस्सा घुटनो पर टिका रहे. . .। अंगूठे के निकट वाली अंगुली (तर्जनी) को अंगूठे के साथ जोड़ दे. .। शेष तीन उंगलियो को हल्के घुमाव के साथ ऊपर की ओर उठी रहने दे. . .। अब हम बाहर की दुनिया से अलग हट कर अन्तरंग मे प्रवेश कर रहे हैं। हमारी ध्यान मुद्रा सुस्थिर बन रही है. . । हमारा आसन अडोल अकम्प बन गया है। अब बाहर के या शरीर संबंधी कोई व्यवधान हमे विचलित नहीं कर सकते है । अब हम अन्तर यात्रा के लिए पूर्णतया सन्नद्ध हो गये है. . .।

गहरे श्वास-दीर्घ श्वास :

पांच या सात गहरे सास ले. .। बहुत वेग से खीचे . । श्वास नाभि तक जाये. .। फिर धीरे से उसे छोड

दे. . . । श्वास लेते समय भाव करें । प्राणवायु-ऑक्सीजन अधिक मात्रा मे भीतर जा रही है. . । उसके साथ पवित्र विचार भीतर जा रहे हैं. . । श्वास बाहर निकालते समय कल्पना करे . । कार्बन डाय ऑक्साइड गन्दी हवा निकल रही है . . । उसके साथ दूषित विचार बाहर निकल रहे हैं. । श्वास वेग से ले । और पूर्वोक्त प्रक्रिया को दोहराते जाये . । श्वास को लयबद्ध बना ले. . । श्वास धीरे से छोडें और दूषित विचारो के बाहर निकलने के संकल्प को दोहराते चले जाये. . . । श्वास सम मात्रा मे लें । ऑक्सीजन प्राणवायु जितनी अधिक मात्रा मे भीतर जा रही है . . । उतनी मात्रा मे शरीर हल्का हो रहा है . । स्वास्थ्य अच्छा हो रहा है. . । मन भी हल्का हो रहा है . । इस संकल्प को दोहराते जायें . . । श्वास कम वेग से ले . । श्वास धीरे से छोड दे. । भाव करें । सारी गन्दी हवा बाहर निकल गई है. । गन्दी गैस बाहर निकल गई है । उसके साथ सभी दूषित विचार भी बाहर चले गये है . . । बाहर की गन्दगी बाहर निकल गई। तन, मन प्राण सभी कुछ हल्के हो गये. . । बहुत अधिक मात्रा मे प्राणवायु भीतर से प्रवेश कर गई है. . . । अन्दर से शुभ विचारों का अत्यधिक संग्रह हो गया है । शरीर मन प्राणों में ऊर्जा भर गई है. . । शरीर स्वस्थ है . । मन आनन्दित है. . . । प्राण प्रफुल्लित है . । ऑक्सीजन प्राण वायु की अधिक मात्रा जीवन ऊर्जा को संवर्धित करती है . । शरीर मे, मन मे, स्वस्थता, प्रफुल्लता का संचार होता है. । भव करे. । यह प्रक्रिया प्राणों मे शक्ति का संचार करने वाली महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है . ।

शरीर का शिथिलीकरण :

ध्यान मुद्रा मे बैठने के बाद हमारे शरीर मे कोई तनाव न हो। भाव करे. शरीर हल्का हो रहा है। अन्तरंग से भाव करें . । शरीर एकदम हल्का हो रहा है. । पैर हल्के हो गये है. . । पिण्डलियां हल्की हो गई है. । जंघाये हल्की हो रही है. . । पेट कमर हल्के हो गये है. . । सीना पीठ हल्के हो गये है. . . । गर्दन सिर हल्के हो गये हैं . . । हाथ, पांव शरीर पूरा भार रहित हो गया है । शरीर मे कोई भार, कोई वजन ही नहीं रहा है . । शरीर कपास की तरह-रुई की तरह हल्का हो गया है. . . । हल्की वस्तु ऊपर उठती है उसी तरह शरीर भी ऊपर उठ रहा है. । वास्तव मे अनुभव करे, शरीर अधर हो रहा है . . । शरीर को किसी आधार-आश्रय की आवश्यकता नहीं है. . . । शरीर इतना हल्का हो गया है कि वह अधर हो गया है । अनुभव-फीलिंग को गहराई तक ले जायें शरीर हल्का हो गया है . . । पूरे शरीर मे हल्केपन की सरसराहट फैल रही है. . . । जैसे कि पांव सो जाता है. . सन्न हो जाता है. . . । वैसे ही बड़े वेग से पूरा शरीर हल्का होता जा रहा है । अनुभव करे इतना हल्कापन कभी नहीं रहा. . . । कभी कल्पना नहीं की थी कि शरीर इतना हल्का भी हो सकता है . । साठ, पैंसठ-सत्तर किलोग्राम वजन कहां चला गया? शरीर गैस के फुग्गे-गुब्बारे के समान हो गया है . . । शरीर मे कहीं कोई तनाव, कोई खिंचाव नहीं रह गया है. । यह हल्कापन बढ़ता चला जाये. . । शरीर के साथ मन भी हल्का-निर्भार होता चला जाये . ...। हल्के मन का यह अहसास-यह अनुभव बडा प्रीतिकर है. . . । बडा आल्हादक है . . । मन को-प्राण को तृप्ति देने वाला है . . । आत्मा को आप्यायित करने वाला है. . । यह हल्कापन सदा-सदा बना रहे । इस भावना के साथ ध्यान मे प्रवेश कर जाये . ।

क्रोध : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बना ले । (प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराये) भाव करे शरीर एकदम हल्का हो गया है . .शरीर ऊपर उठने को तत्पर है. किन्तु मन अभी भार से लदा है . अब हम मन को हल्का कर रहे है हमारे मन मे अनेक प्रकार के विकारो का भार लदा है. क्रोध .. अहंकार. . छल, कपट लोभ . लालच ईर्ष्या-असूया . विषय विकार आदि अनेक दुर्वृत्तियो ने मन को बोझिल बना रखा है अब हम मन को हल्का करने की

प्रक्रिया का आरम्भ कर रहे है मन की छायी हुई इन दुर्वृत्तियो मे से एक-एक को चुन कर उसे बाहर निकालेगे, उसकी निर्जरा करेगे . देखे जरा अपने ही अन्तरमन को देखे. वहां कितने विकार भरे पडे है. संकल्पना करे. बहुत गहराई से भाव करें . हम अपने मन की सघन पर्तों को देख रहे है। . किन्तु वहां दिखाई क्या दे रहा है क्रोध. क्रोध. क्रोध चारो ओर क्रोध के परमाणु मन को घेरे हुए है कितना विद्रूप हो रहा है हमारा मन।।। ओ हो। क्या इस दूषित विद्रुप मन मे परमात्मा की झलक मिल सकती है नहीं. नही . आज हम इस मन की सफाई करेगे। भाव करे अब हम क्रोध के परमाणुओं को बाहर निकालने को सन्नद्ध हो गये है । जहां-जहां आत्म प्रदेश है वहां सर्वत्र मन भी है । जहां-जहां मन है वहा-वहा क्रोध के परमाणु फैले है ओ, तो देखे जरा ध्यान से देखे . क्रोध के कितने स्तर जम रहे है । अभी हम केवल क्रोध के द्रष्टा बने हुए है हम देख रहे है अपने ही भीतर. .। अब हम द्रष्टा ही नहीं, परिष्कर्ता भी बन रहे है अब हम क्रोध के परमाणुओ को बाहर निकालने की प्रक्रिया प्रारम्भ कर रहे है । भावना करे तीव्रतम भावना करे हमारी ध्यान शक्ति के द्वारा वे क्रोध के परमाणु सभी आत्मप्रदेशो से हटने लगे है उनमे हल-चल मच गई है वे तीव्र गति से पूरे शरीर मे इधर-उधर दौड़ रहे है. कल्पना करे, पूरे शरीर मे एक सनसनाहट फैल रही है भाव करे शरीर की नस-नस मे कंपन हो रहा है । क्रोध के परमाणु बडी तेज गति से ऊपर की ओर उठ रहे है. वे प्रत्येक आत्मप्रदेश से अलग छिटक रहे हैं वे सब मस्तिष्क के अगले भाग-कपाल के पास पहुच रहे हैं उनकी सारी चिपचिपाहट ढीली हो रही है वे सब मस्तिष्क के अगले भाग-कपाल के पास पहुंच रहे है हा तो अब देखे ये क्रोध के सारे परमाणु ललाट के पास कपाल मे इकट्टे हो रहे है वे काली झांई लिये हुए लाल-लाल परमाणु है. और देखे वे सब कपाल के पास इकट्ठे हो गये है अब वे वहां से बाहर निकलने को मार्ग ढूढ रहे है कल्पना करे । क्रोध के बहुत से परमाणु आखो मे उतर आये है । देखे बाहर की आंखो से नहीं अन्दर की आंखो से देखे आंखे लाल-लाल हो गई है क्रोध के परमाणु आंखो मे उतर आये है अब वे परमाणु आखो से नीचे उतर रहे हैं और कल्पना करे अपना मुह अपने आप .। खुल गया है अनुभव करे जैसे अपने मुंह से काली झांई लिए हुए लाल-लाल धुआं निकल रहा है वास्तव मे फीलिंग करे धुएं के गोट के गोट अपने मुंह से बाहर निकल रहे हैं मस्तिष्क एवं आंखे हल्के होते जा रहे हैं मन हल्का होता जा रहा है अपने सामने क्रोध के परमाणुओ का ढेर लग रहा है क्रोध के परमाणु अन्दर जमे हुए थे . अब वे बाहर आकर फूल गये है . बाहर ढेर लगा है किन्तु अन्तरामन एकदम हल्का हो रहा है वहा अब क्रोध के परमाणु नहीं है अब हमे उन्हे बाहर से ही हटा देना है. . अनुभव करे.. भाव करे.. अपनी दोनों आखो से दो तेज किरणे निकल रही है . वे किरणे क्रोध के परमाणुओ मे लग़ गई है और देखे क्रोध के परमाणुओ मे आग लग गई है अपने सामने अपने ही क्रोध के परमाणु जल रहे है। ज्वालाये ऊपर उठ रही है लाल-लाल अंगारे धधक रहे है ज्वालाये बढती जा रही है ज्वालाये धीरे-धीरे शान्त हो रही है अंगारे एकदम बुझ गये हैं ज्वालाये धीरे-धीरे शान्त हो गई है अब हमारे सामने केवल राख का ढेर रह गया हैं . ऐसा कोई दूषित परमाणु-क्रोध का कीटाणु नहीं रह जाए कि फिर निमित्त मिलने पर आत्मा दूषित हो जाये अब देखे भीतर से ध्यान की ऊर्जा से तेज हवा बाहर आ रही है कल्पना करे वास्तव मे अनुभव करे तेज आंधी चल पड़ी हैं और वह राख उडती हुई दूर-सुदूर चली गई है. अब हमारे सामने एकदम स्वच्छ वायुमण्डल हो गया है अब हमारा अन्तरंग भी कुछ साफ हो गया है . हमारा बहिरग भी स्वच्छ हो गया है कल्पना करे. तीव्रतम भाव करे हमारी चेतना क्षमा की मूर्ति बन गई है अब आत्मा मे कोई आवेग-उद्वेग नहीं रहा है. कहीं कोई झुंझलाहट नहीं है क्योकि अब क्रोध के सभी परमाणु बाहर निकल गये है . एक सबसे बडा दुर्गुण-दोष आत्मा से अलग हट गया है हम

आत्मिक आनन्द मे डूब गये है। ओ, हो... क्रोध के स्कंध (परमाणुओ) के चले जाने मात्र से मन आत्मा कितनी अलौकिक ऊर्जा से भर जाते हैं . हमारे तन, मन, सब कुछ आनन्द के केन्द्र बन गये है... क्रोध नष्ट हुआ कि आनन्द उपलब्ध हुआ. . क्रोध विलीन हुआ कि शांति आयी . हमारे चारों ओर शांति .. शांति . शांति . व्याप्त हो गई है हमारा यह आनन्द बढ़ता चला जाये. हमारा यह हल्कापन बढता ही रहे . हमारी आत्म शांति बढ़ती चली जाये इसी कल्पना . इसी संकल्प इस भावोन्मेष में ध्यान से बाहर आ जाये, धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जाये. शरीर-मन-प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे।

अहंकार : समीक्षण और निर्जरा :

ध्यान मुद्रा बना . (प्रथम तीन प्रक्रियाओं को दोहराये) भाव करें. शरीर एकदम हल्का हो गया है. अब हम मन को हल्का करने का प्रयास कर रहे हैं मन मे विविध प्रकार के विकारों का संग्रह है... वह बहुत भार से बोझिल हैं. उसकी विभिन्न विकृतियो को ढूंढ-ढूंढ कर बाहर कर देना होगा... हमारे मन को हल्का करने की प्रक्रिया चल रही है. पहले हम मन की अन्तरंग यात्रा करके उन वृत्तियों का समीक्षण करेंगे .. भाव करें .. हमारे अन्तः चक्षु खुल गये हैं... हमें अपने अंदर की सभी वृत्तियां दिखाई दे रही हैं.. ओ, हो .. हमारी ध्यान साधना ने कितना कमाल कर दिया है. . अरे, यहां क्रोध के परमाणु तो शून्यवत् रह गये हैं . किन्तु अभी हमें बहुत प्रयास करना है .. अब हम अहंकार के स्कन्धो की निर्जरा करेगे . ओ, हो, वहां तो अहंकार. अहंकार ही अहंकार. दिखाई दे रहा है . अहंकार ने हमारे भीतर विभिन्न रूप धारण कर रखे है। वह अनेक रूपो में आसन जमाये बैठा है. हमे अपने सौन्दर्य का अहंकार होता है, जिसे आगमिक भाषा मे रूपमद कहा जाता है .. इस सौन्दर्य के अहंकार ने भी कितने उत्पात मचाये है.. कितने युद्ध करवाये है.. । मै कितने बड़ी कुर्सी-सत्ता का स्वामी हूं.. मेरे पास कितने अधिकार हैं . हम ऊंची जाति के है. हमारा कुल खानदान कैसा ऊंचा है . वे नीच है .. नीचे हैं और इस जातिवाद के संकुचित दायरे ने कितने लोगों का अपमान-अनादर किया है अहंकार के कितने रूप हमारे भीतर बैठे हुए है.. क्या उनकी कोई गणना हो सकती है.. हमे अपने ज्ञानी-विद्वान होने का अहंकार हो जाता है . अरे ज्ञानी होने का अर्थ तो है विनम्र होना. . जो जितना उच्च विद्वान् होगा उतना ही विनम्र होगा. किन्तु हम हम ज्ञानी होने के अभिमान में चूर रहते हैं... हमे तपस्वी होने का, बलवान होने का, हर दृष्टि से दूसरों से श्रेष्ठ होने का अहकार घेरे रहता है.. और ये सूक्ष्म वृत्तियां आत्मा पर छायी हुई है.. अहंकार के ये सारे परमाणु भी क्रोध के परमाणुओं के समान पूरे शरीर मे सभी आत्म-प्रदेशों पर फैले हुए है, संकल्पना करे और पूरी संकल्प शक्ति लगा दे कि अब अहंकार के परमाणुओ मे हलचल मच गई है . पूरा शरीर प्रकम्पित हो रहा है. . वास्तव मे अनुभव करे कि आत्म-प्रदेशों मे एक प्रकम्पन उत्पन्न हो गया है.. सारा शरीर स्पन्दित हो रहा हैं . देखे... अपने ही अन्दर देखे अहंकार के परमाणु कितनी तेज गति से दौड़ रहे हैं जैसे किसी के मकान मे आग लग गई हो और अन्दर रहने वाले लोग इधर-उधर जिधर मार्ग मिलता है भागने लगते हैं.. उसी प्रकार हमारे भीतर ध्यान की ज्योति जल गई है और अहंकार के परमाणु अब भागने को मार्ग खोज रहे है.. अहकार के सभी परमाणु गले-गरदन के आसपास एकत्रित हो रहे हैं.. क्योंकि अहंकार का संबंध हमारी गर्दन से विशेष हैं। अहंकार के समय हमारी गर्दन अकड़ जाती है. चिन्तन करें . अहंकार के परमाणु गरदन के निकट एकत्रित हो गये हैं.. कल्पना करें भाव करें गले के आसपास का हिस्सा अकड़ गया है गले मे कुछ भारीपन-सा महसूस हो रहा है... अब वे सभी परमाणु वहा से बाहर निकलने को उतावले हो रहे हैं .. वे ऊपर उठने लगे है. अनुभव करे वे गले से ऊपर उठ रहे है। अब वे दोनो नासिकाओ से बाहर निकलते जा रहे है. भाव करे अनुभव करें जैसे दोनों नासिकाओं से हवा बाहर निकल रही है . दोनो

नथुनों से अहंकार के उन परमाणुओ का स्पर्श हो रहा है . अनुभव करें . अहंकार के परमाणु अब वेग के साथ निकल रहे है . गले के आसपास का हिस्सा एकदम हल्का हो गया है . हमारा तन, हमारे प्राण, हमारी सम्पूर्ण चेतना एकदम हल्की हो गई है. हमारा मन एकदम हल्का-लचीला विनम्र बन गया है हमारी आत्मा विनय की प्रतिमूर्ति ही बन गयी है अहंकार हो तो भारीपन है विनम्रता ही हल्कापन है . हमारी पूरी चेतना इतनी हल्की हो गई है कि वह बिना किसी आधार के ऊपर उठने लगी है... हमारे भीतर इतनी विनम्रता भर गयी है कि अब कोई भी निमित्त हमे अहंकार-मान-घमण्ड नही दिला सकता है भाव करे देखे हमारे सामने फूली हुई रुई के समान गहरे हरे रग के परमाणुओ का ढेर लग रहा है . अन्दर के परमाणु पर्त हर पर्त जमे हुए थे, बाहर आकर फूल गये हैं, फैल गये है कहीं वे परमाणु पुन: अन्दर प्रवेश कर आत्मा को फिर से अहंकारी न बना दे, अत: हमे उन्हे बाहर भी नही रहने देना है. अब कल्पना करे . अनुभव करे उन परमाणुओ के पीछे-पीछे नाक से ही ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न दो तेज किरणे बाहर निकलती है और अहंकार के स्कन्धो पर पड़ रही हैं देखें अन्तर दृष्टि से देखे... उन अहंकार के स्कन्धो में आग लग गई है ज्वालाये ऊपर उठ रही है. . अपने सामने ज्वालायें ऊपर उठती हुई देखे. अहंकार के सारे गन्दे तत्त्व उस आग में जल रहे हैं. हम अपने ही अहंकार को अपने सामने जलते हुए देख रहे हैं. अनुभव करे ज्वालाये एकदम ऊपर उठ कर अब शान्त होती जा रही है. आग शान्त हो गई है.. अब देखे अपने चारो ओर राख फैली हुई है.. देखे शान्त सौम्यभाव से राख ही राख है उस राख को भी हमें वहा रहने नही देना है। अहंकार को उत्तेजित करने वाला एक ही परमाणु हमारे इर्दगिर्द नहीं रहना चाहिए। अन्तरग से अनुभव करे भीतर से ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न हवा का एक वेगशाली झोंका उठ रहा है.. वह हवा मंडलाकार मे फैलती हुई, सारी राख को लेकर उड़ती चली जा रही है कल्पना करे, देखे साक्षात् देखे... मण्डलिया वायु का मण्डल राख लिये उड़ा जा रहा है.. अब हमारे चारो ओर शुद्ध स्वच्छ, वायु मण्डल हो गया है हमारा बहिरंग और अन्तरग दोनो स्वच्छ-निर्मल निराभिमानी एवं हल्के हो गये है भाव करे सभी आत्म-प्रदेश अहंकार की कालिख से रहित हो गये है आनन्द ही आनन्द फैल गया है . हमारा यह आनन्द बढता चला जाये... हमारा हल्कापन बढता चला जाये.. हमारी विनम्रता बढती चली जाए हमारी आत्म शान्ति बढती चली जाये . इसी भावना इसी संकल्प इस भावोन्मेष के साथ ध्यान से बाहर आ जाये. . अपने तन-मन-प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे ..।

माया : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बना ले.. (प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अच्छी तरह दोहरायें).. भाव करे शरीर एकदम हल्का हो गया है . शरीर का हल्कापन अति सीमा तक पहुच गया है शरीर ऊपर उठने को आतुर है.. किन्तु मन मे अभी भी बहुत भार भरा पडा है अब हम छल कपट, अर्थात् माया जाल सम्बन्धी आवरणो को हटाने का प्रयास करेंगे अब जरा हम आत्म समीक्षण करे वास्तव मे अनुभव करे कि अब हम अन्तर्यात्रा प्रारम्भ कर रहे है . इस समय हमारी दृष्टि बाहर की दुनिया से दूर बहुत दूर अपने ही भीतर की ओर दौड रही है हमारा मन अपनी ही अच्छी बुरी वृत्तियो का अवलोकन कर रहा है देखे यह माया का जाल हम पर कितने रूपो से हावी हो रहा है जिधर देखे उधर, छद्म, कपट, माया ही माया ने मन की आत्मा की सरल वृत्ति को घेर रखा है.. न जाने कितने जन्मों से? नहीं, नहीं, अनन्त काल से माया ने आत्मा के सहज-सरल मूलभूत गुण को आवृत्त कर रखा है.. अरे, यह ठगिनी माया हमारे द्वारा दूसरो को और दूसरो के द्वारा हमे या स्वयं-स्वयं को ही कैसे जाल मे फंसाती हैं. . कैसे नाच नचाती है इसने हमे कितनी कुटिल चाले सिखायी है. और हम इसके जाल मे फंस कर स्वयं को ही प्रताडित करते रहे हैं स्वयं को ही ठगते रहे है देखे जरा अपनी इस दूषित वृत्ति का अवलोकन करे, समीक्षण करे वहां फैले हुए

माया मोहनीय के परमाणुओं को हम स्पष्ट देख रहे है ओ, हो। कितने जन्मों मे की गई माया के स्तर वहां जमे हुए है दो चार दिन या कुछ वर्षों की ही नहीं, अनेक जन्मो की मायावृत्ति ने आत्म प्रदेशो पर आसन जमा रखा है . देखे जरा गहराई से देखे. . चारों ओर माया मोहनीय के परमाणु ही दिखाई दे रहे है अभी हम छल-छद्म में प्रवृत्त नहीं है. अभी हम अपने अन्तर मे बैठे इस दूषण के दृष्टा बने हुए है . अब हम दृष्टा ही नहीं आत्मा के-हम सकल्प करे कि इस माया के जाल को छिन्न-भिन्न कर देगे. देखें . वास्तव मे फीलिंग करे... सम्पूर्ण शरीर मे सभी आत्म प्रदेश तीव्र गति से कांप रहे है हमें अपने शरीर मे कंपन अनुभव हो रहा है अब माया मोहनीय कर्म परमाणुओ मे हलचल मच गई है वे बडी तेजी से इधर-उधर दौड रहे है. माया के परमाणु जो कितने ही जन्मो से आत्मा पर चिपके है.. वे आत्म प्रदेशो से अलग छिटक रहे हैं. अनुभव करे, सम्पूर्ण शरीर मे एक सनसनाहट फैल रही है जैसे बुखार के पूर्व मलेरिया के पूर्व कंपकंपी लग कर ठडी लगती है. उसी प्रकार शरीर के आन्तरिक भाग मे कंपकंपी हो रही है भाव करे माया के परमाणु सारे शरीर से इधर-उधर दौड रहे हैं.. उनमे तीव्रतम गति उत्पन्न हो गई है. पैरो की ओर के समस्त परमाणु नीचे कमर की ओर बढ रहे है.. देखे वे सारे माया के स्कन्ध कमर के निकट अन्दर की ओर ही इकट्ठे हो रहे हैं . अनुभव करे माया के सभी स्कन्ध कमर के पास इकट्ठे हो गये हैं भाव करे . कमर का हिस्सा कुछ भारी हो गया है बाकी पूरा शरीर हल्का हो रहा है अनुभव करे. कमर जैसे वायु से भर गई है.. वादी आ गई है कमर के आसपास बडा भारीपन लग रहा है.. अव वे माया के परमाणु बाहर निकलने को मार्ग ढूंढ रहे है वे अब शीघ्र निकल जाना चाहते हैं।. . संकल्प करे . तीव्रतम संकल्प करे . अब वे माया के परमाणु कमर से कुछ नीचे खिसक रहे हैं देखे . अन्तर चक्षुओ से देखते रहे वे परमाणु रीढ की हड्डी के मध्य सुषुम्ना नाड़ी मे प्रवेश कर रहे है.. अब वे उस मेरुदण्ड-सुषुम्ना के अन्दर ऊपर उठ रहे है . अनुभव करें कमर से हल्कापन आ रहा है और मेरुदण्ड-रीढ की हड्डी में सरसराहट फैल रही है . अब माया के सब परमाणु बड़े वेग के साथ ऊपर बड़े वेग के साथ उठते चले जा रहे है.. वे नाभि तक पहुंच गये है . और अनुभव करे वे सीने से ऊपर उठ रहे हैं.. अब वे गले मे प्रवेश कर गये है भाव करे . पूरे मेरुदण्ड मे गले तक एक सरसराहट हो रही है . हल्के-हल्के कम्पनो का अनुभव करे अब माया के परमाणु बाहर निकलने को मार्ग ढूंढ रहे है अब उन्हे मार्ग मिल गया है.. दोनो कानो से वे बाहर निकल रहे है . कानो के पर्दों पर माया के परमाणुओ का स्पर्श हो रहा है.. कमर के निकटवर्ती परमाणु ऊपर उठते जा रहे हैं और गले से ऊपर उठ कर कानो के छिद्रो से बाहर निकलते जा रहे है देखे अन्तर की आंखो से देखे. अपने दाये-बाये दोनो ओर काली झाई लिये गहरे आसमानी कलर के परमाणुओ का ढ़ेर लग रहा है अब अंदर के माया के सभी परमाणु बाहर निकल गये है अब कमर का हिस्सा एकदम हल्का हो गया है. पूरा शरीर हल्का हो गया है.. मन भी हल्का हो गया है अपने दोनो ओर काली झांई लिये बैगनी परमाणुओं का ढेर लगा हुआ है . अब हमारी चेतना एकदम निष्कपट निश्चल हो गई है अब कोई भी प्रवृत्ति हम मे कपट उत्पन्न नहीं कर सकती हमारा अन्तरंग आत्मा का प्रत्येक प्रदेश निश्छल सा हो गया है किन्तु . किन्तु. अपने दोनो ओर बैंगनी कलर के परमाणु स्कन्धो का ढेर लग रहा है अब हमारे मूलाधार से ध्यान ऊर्जा की सशक्त किरणे ऊपर उठ रही है प्रकाश की दो दिव्य रेखाये गले से ऊपर उठकर दोनो की ओर फैल गई हैं . कानो से बाहर निकलते ही दोनों दिव्य रेखाये अग्नि की चिनगारियों के रूप मे बदलती जा रही है देखे वे चिनगारियां माया के स्कन्धो मे लग गई है.. अनुभव करे . हमारे दोनो ओर आग लग रही हे ज्वालायें उठ रही हैं.. अब यह रूप भी शान्त हो रहा है . देखे अंगारे मन्द पड गये है अब अपने दाये-बाये राख ही राख बच गई है दोनो कानो से ध्यान ऊर्जा से उत्पन्न वायु बडे वेग से बाहर निकल रही है जैसे फुटबाल के ब्लेडर का मुह

एकदम खुल गया है . उसी प्रकार दोनो कानो से बडे वेग से हवा निकल रही है . और वह राख उस हवा के द्वारा दूर-सुदूर उडती जा रही है सारी उड़ . गई है अब अपने आसपास का पूरा वातावरण विशुद्ध हो गया है. अब हमारा अन्तरंग एव बहिरंग दोनो स्वच्छ, निर्मल सरल हो गये है धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जायें . अपने मन-तन-प्राणो को एकदम हल्का अनुभव करे

लोभ : समीक्षण और निर्जरा

ध्यान मुद्रा बना लें (प्रथम तीन प्रक्रियाओ को दोहराये) अत्यन्त गहराई से भाव करे कि शरीर एकदम हल्का हो गया है. शरीर के हल्केपन के भाव को गहरा बनाते जाये शरीर का हल्कापन अद्भुत दशा तक पहुंच गया है शरीर का भार गैस के फुगे जितना-सा रह गया है वास्तव मे हमे अपना मन कुछ-कुछ हल्का, निर्मल-साधना की भूमिका योग्य लगने लगा है. फिर भी अभी यह बहुत से भार से लदा है हमे इस मन को बिल्कुल निर्भार बना देना है .. इसके लिए इसके प्रत्येक भार को चुन-चुन कर उतार फैकना है आज हम मन के प्रबलतम भार आत्मा के बहुत बडे शत्रु को निकल भगाने का प्रयास करेगे . यह शत्रु है लोभ आज इस दूषित वृत्ति का भी निष्कासन कर रहे हैं.. आज हम लोभ के समस्त परमाणु स्कन्धो को बाहर खदेड देगे पहले हम लोभ वृत्ति को देखने का प्रयास करेगे लोभ वृत्ति का प्रमुख रूप है तृष्णा इस तृष्णा की महानागिन ने हमारे मन को ही नहीं, सारे संसार को डस रखा है प्राय: प्रत्येक ससारी प्राणी मे इसका जहर फैला हुआ है इस जहर ने आदमी आदमी को बेभान बना दिया है आम इन्सान की बुद्धि को ही इसने विकृत कर दिया है तृष्णा नागिन का विष धीरे-धीरे अदृश्य प्रभाव जमाता है . जिसे हम आजकल की भाषा मे 'स्लोपोयजन' कहते है. . वैसा ही असर होता है तृष्णा के जहर का. अभी इन क्षणों में भले ही हमे ऐसा लगता हो कि हमारे भीतर ऐसी कोई कामनाए नहीं है किन्तु वास्तव मे इससे अनन्तगुणी आकाक्षाए छिपी हुई है हमारे मन मे इसीलिए तो हजारपति से लखपति बन जाने के बाद भी वही दौड है और लखपति से करोडपति बन जाने के बाद भी वही दौड यही नहीं करोडपति से अरबपति बन जाने के बाद तो दौड और अधिक तेज हो जाती है यही बात यश कीर्ति की कामना के विषय मे है हम थोडा सा दान देकर महादानी कर्ण जैसी कीर्ति प्राप्त कर लेना चाहते है थोडा सा पढ़ लिख कर धुरन्धर पण्डित की प्रतिष्ठा चाहते है. कुछ बोलना सीख कर बहुत बडे व्याख्याता-प्रवक्ता सी इज्जत चाहते हैं . दो-चार उपवास करके बहुत बडे तपस्वी का यश चाहते हैं. इस प्रकार अनेक प्रकार की कीर्ति कामनाओ का बोझ पड़ा है हमारे मन के ऊपर.. और जब हमारी धन, यश, पद, प्रतिष्ठा की कामनाये पूरी नही होती है .. तो तृष्णा की आग ऐसी भडक उठती है कि मन अनहोनी क्रूरता से भर जाता है धन-यश और पद की कामनाओ ने अनेक मनुष्यो के मन को ऐसा उन्मादी बनाया है कि कामनाओ की पूर्ति नही होने पर लाखो लोगो को बेमौत मौत के घाट उतार दिया गया। किन्तु आज हम तृष्णा के इस महाजाल को छिन्न-भिन्न करके रहेगे अब हम अपने भीतर फैले हुए इस महाजाल का समीक्षण कर रहे है.. हम आत्म-प्रदेशो पर फैली लोभ की परतो को देख रहे है हम आत्म समीक्षण कर रहे हैं। हमे दिखाई दे रहा है . प्रत्येक आत्म-प्रदेश पर अनन्त-अनन्त लोभ मोहिनी कर्म परमाणुओ ने अपना प्रभाव जमा रखा है हमे आत्म प्रदेशो पर लगे हुए अनन्त-अनन्त परमाणु स्कन्ध स्पष्ट दिखाई दे रहे है हम उन्हे बाहर निकालने को सन्नद्ध हो गये हैं देखे अन्तर चक्षुओ से देखे लोभ के स्कन्धो की पर्तों मे तीव्रतम उथल पुथल मच गई है वे पर्त ऊपर की नीचे और नीचे की ऊपर हो रही है . हमारे ध्यान की शक्ति बढ़ गई है . ध्यान ऊर्जा की तीव्रता ने आत्म प्रदेशो मे तीव्रतम प्रकम्पन उत्पन्न कर दिये हैं नीचे वाले परमाणुओ की गति ऊपर की ओर और ऊपर वाले परमाणुओ की गति नीचे की ओर हो रही है वे सभी परमाणु पेट के स्थान पर नाभि के आसपास एकत्रित हो रहे हैं . पूरे शरीर मे

एक तीव्रतम सनसनाहट फैल रही है भाव करे. लोभ-तृष्णा के सभी परमाणु पेट के अन्दर एकत्रित हो गये है अब पूरे शरीर मे हल्कापन लग रहा है किन्तु पेट एकदम भारी अनुभव हो रहा है. जैसे पेट एकदम वायु से भर गया हो . ज्यो-ज्यो परमाणु वहां एकत्रित हो रहे है त्यों-त्यो पेट का भारीपन बढता जा रहा है अनुभव करें पेट एकदम फूल रहा है.. फूलावट इतनी तेज हो गई है कि वह सहन शक्ति के बाहर है . अब वे सब परमाणु बाहर निकलने को उद्यत हो गये है .. वे बाहर निकलने का मार्ग ढूंढ रहे हैं अन्य मार्ग नही मिलने से वे नाभि पर जोर लगा रहे हैं.. भाव करे. . नाभि मे एक छोटा-सा छिद्र हो गया है.. और लोभ के परमाणुओ ने बाहर निकलने का मार्ग बना लिया है छिद्र कुछ-कुछ बड़ा होता जा रहा है .. बड़े वेग के साथ वे तृष्णा के परमाणु बाहर निकलने लगे है . जैसे किसी ट्रक के ट्यूब मे बड़ा-सा पंचर हो गया हो या कोई कट लग गया हो और बडे वेग से हवा बाहर निकल रही हो . हमारे सामने 5-7 फीट दूर कत्थई परमाणुओं का ढेर लग रहा है अन्दर के सभी लोभ-लालच-तृष्णा के परमाणु बाहर निकलते जा रहे है. हमारा पेट हल्का होता जा रहा है.. अब समस्त तृष्णा के दूषित परमाणु बाहर निकल गये है . अब हमारा अन्तरंग पूरा मन हल्का हो गया है. हमारा मन एकदम भार रहित हो गया है. आज हमारी समस्त आशाएं-तृष्णा की वासनाएं क्षीण हो गयी हैं... तृष्णा के जहरीले कीटाणुओ के बाहर निकलते ही हमारे भीतर ध्यान का जागरण हो रहा है इसी ज्योतिर्मय ऊर्जा से बड़ी तीव्र किरणे नाभि मण्डल से ही बाहर निकल रही हैं.. अग्नि की ज्वालाये ऊपर उठती जा रही है हमारे सामने ही हमारी तृष्णा के परमाणु जल रहे है. अब हमारे सामने राख ही राख का ढेर दिखाई दे रहा है फिर अन्तरंग से भाव करे हमारी नाभि से बडी तेजी से मण्डलिया वायु का वेग निकल रहा है वह वायु बडी तीव्र गति से गोलाकार मे घूम कर सारी राख को उड़ा कर ले जा रही है... वह राख दूर-सुदूर उडती जा रही हैं हम अपनी अन्तर्दृष्टि से उस राख को उडते हुए देख रहे हैं . हमें स्पष्ट दिखाई दे रहा हैं . सन्तोष वृत्ति का ऐसा आनन्द हमने कभी अनुभव नहीं किया भाव करे आकांक्षा रहित चेतना कितने आनन्द से भर जाती है . तृष्णा के भार के हटते ही ऊर्जा का कैसा जागरण होता है . हमारी सम्पूर्ण चेतना ऊर्जा की संवाहक भर बन गई है. यह ऊर्जा का प्रवाह अलौकिक है. ये आनन्द के क्षण अनुपम है इसी तन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये धीरे-धीरे प्रकृतिस्थ हो जाये अपने तन-मन-प्राण सभी को एकदम हल्का आनन्द परिपूर्ण अनुभव करे ..।

शरीर में आत्म-ज्योति का समीक्षण

ध्यान मुद्रा बना ले (प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अतीव भावपूर्ण तन्मयता के साथ दोहराये) शरीर के परिपूर्ण हल्केपन के अहसास को बहुत गहराई तक अनुभव करे मन के भार रहित होने का अनुभव करे भाव करे आत्मा एकदम उज्ज्वल, निर्मल होती जा रही है आत्मा की उज्ज्वलता का प्रभाव शरीर पर भी पड रहा है आज शरीर मे फैलते हुए आत्म-ज्योति के प्रकाश को देखेगे आज हम चैतन्य प्रकाश का भावपूर्ण समीक्षण करेगे देखे . अपने शरीर के भीतर प्रत्येक अणु-अणु मे चेतना के संचार को देखे शरीर व्यापी चैतन्य की सव्याप्ति का समीक्षण करे.. अभी हमारा सम्पूर्ण शरीर आत्म-ज्योति के संव्याप्त होता जा रहा है तीव्रतम अहोभाव से भर कर देखे हमारा पूरा शरीर पारदर्शी हो गया है. हमारे शरीर के अणु-अणु मे एक अलौकिक प्रकाश संचालित हो रहा है हम उस अद्भुत प्रकाश के द्रष्टा बने हुए हैं.. आज का हमारा द्रष्टा भाव बहुत आनन्द विभोर कर देने वाला है क्योंकि आज हम स्वय की ज्योति का दर्शन कर रहे हैं भाव करे. हमारे शरीर मे हार्ट के पास दोनों फेफड़ो के बीच मे एक तीव्र, किन्तु अत्यन्त आल्हादक मर्करी लाइट जल गई है हमारे सम्पूर्ण शरीर मे प्रकाश ही प्रकाश फैल गया है यह प्रकाश आत्मा की ज्ञान-शक्ति का प्रकाश है यह प्रकाश ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होने वाला प्रकाश है

हमारी चेतना एक प्रकाश पुन्ज ही बन गई है.. हमारा शरीर पारदर्शी कांच के समान हो गया हैं. जैसे हमारी ध्यान मुद्रा स्थित देहाकृति ही कोई कांच की बनी है . हमारे शरीर के रोम-रोम से अद्‌भुत है, अनुपम हैं हमारे तन, मन, प्राण सभी कुछ प्रभास्वर हो गये हैं. यह प्रकाश केवल प्रकाश ही प्रकाश नहीं है . इस प्रकाश मे चन्दन जैसी शीतलता भरी हुई है. इस प्रकार से चन्द्रमा जैसी सौम्यता टपक रही है यही नही, इस प्रकाश से अद्‌भुत सौरभ फूट रही है.. वह सौरभ अथवा सुवास अतुलनीय है.. चन्दन, केवडा, गुलाब या अन्य किसी भी सुगंध से उसकी तुलना नहीं की जा सकती है. वह सुगन्ध हमारे चारित्र की सुगन्ध है भाव करे जैसे किसी ऐसी अगरबत्ती की महक हमारे चारो ओर व्याप्त हो गई है, जिसे हमने कभी देखा ही नहीं जिसकी गन्ध हमने कभी ली ही नही. अहा! कितनी अद्‌भुत महक हमारे चारो ओर होती जा रही है. हमारे आसपास का सम्पूर्ण वायुमण्डल सुवासित हो गया है वह सुवास हमारे चारित्र आराधना की सुवास है. आज हम ज्ञान के प्रकाश एवं चारित्र की सुवास का प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे हैं. हमारे ज्ञान का प्रकाश वायुमण्डल मे व्याप्त हो रहा है तो हमारे चारित्र की सुवास से समस्त वातावरण महक रहा है. कैसे निर्वचनीय महक फैल रही है, हमारे चारो ओर... भाव करें हम इस अकथनीय सुवास में सरोबार हो रहे हैं.. चारित्र आराधना की यह सुवास हमारी समस्त चेतना मे अद्‌भुत आनन्द भर रही हैं. . हम इन क्षणों के अनुपम आनन्द के सागर मे तैर रहे है.. हमारे समस्त संकल्प-विकल्प, जन्य तनाव समाप्त हो गये हैं हमारे शरीर मे प्रकाश और सुगन्ध दोनो निकल रहे हैं हमारा सम्पूर्ण शरीर पुलकित हो रहा है. इन क्षणो हमारा ध्यान शरीर की नश्वरता पर नहीं, उसमे विद्यमान ज्ञान, दर्शन, चारित्र धारक आत्मा पर है शरीर तो उस कांच की बनी शीशी के समान माध्यम है, जिसमे से प्रकाश और सुगन्ध फैल रही है इन क्षणों हमारे चारो ओर प्रकाश ही प्रकाश है, सुगन्ध ही सुगन्ध है . प्रकाश और सुगन्ध के अलावा यहां और कुछ भी नहीं है प्रकाश . प्रकाश. प्रकाश . सुवास सुवास यह प्रकाश अत्यन्त रमणीय, अतीव आल्हादक है और अनुभव पूर्ण भाव करे हम उस दिव्यातिदिव्य प्रकाश का उस अनुपम सुवास का जी भरकर आनन्द ले रहे हैं.. डूबते जाये . उस प्रकाश और सुवास के आनन्द सागर मे. एक तन्मयता, एक तल्लीनता बना ले कितना मन भावन! कितना अलौकिक प्रकाश है यह! . इन क्षणों हम आनन्द ही आनन्द मे मग्न है. ससार के समस्त तनावो से दूर, समस्त विवादो से अलग एकाकी आत्म रमणता का आनन्द.. और यह आनन्द कृत्रिम नही है यह चैतन्य का सहज-सदा सहभागी आनन्द है . ज्ञान, दर्शन, चारित्र चेतना के सहज सहभागी गुण है अत: उनका प्रकाश उनकी सुगन्ध चेतना की सहभागी सहज अवस्थाये हैं अरे! कृत्रिम तत्त्वो मे वह आनंद है ही कहां .. जो आनन्द आत्मा की सहज अवस्था मे है वह इन कृत्रिम पदार्थों मे कभी भी संभव नहीं है.. भाव करे हमारे शरीर में जल रही मर्करी लाईट का वह सौम्य शीतल प्रकाश बढ़ता जा रहा हैं हृदय कमल से उठने वाली वह सौरभ बढ़ती जा रही है. हमारे आसपास के वातावरण मे एक अलौकिक मादकता का भाव गहराता जा रहा है . हमारी चेतना उस मादकता मे सरोबार हो रही है. वह मादकता नशीले पदार्थों मे नहीं . वह मादकता चेतना की सहजावस्था की है.. हम चारो ओर से सुवास और सुगंध से घिरे हुए है आज हमने एक अद्‌भुत दिव्यता का अनुपम आत्म ज्योति का साक्षात्कार किया है आज हमारे ध्यान का आनन्द एक अलग ही प्रकार का आनन्द है आज हम जीवन की अद्‌भुत दिव्यता की यात्रा कर आये हैं हमारी यह दिव्यता की अलौकिक छटा बढती चली जाये हमारे ज्ञान का प्रकाश निरन्तर ऊर्जस्वित होता चला जाये हमारे चारित्र की सुवास दिग्दिगन्त को सुवासित करती रहे हमारी चेतना मे ज्ञान और चारित्र के प्रति अहो भाव बढ़ता चला जाए . इस उल्लसित भाव के साथ . इस कमनीय अहोभाव के साथ ध्यान से बाहर आ जाये .. अपने आपको प्रकाश एवं सुगंध के घेरे मे एकदम हल्का अनुभव करे. यह तरलता, यह सात्विकता उच्च कोटि की है इस

अहोभाव मे रममाण होते हुए ध्यान से बाहर आ जाये।

ऊर्ध्वगमन एवं परमात्म-भाव का समीक्षण :

ध्यान मुद्रा बना ले.. (प्रथम तीन प्रक्रियाओ को अतीव भावपूर्ण तन्मयता के साथ दोहरायें) तीव्रतम भाव करें... हमारे कषायो का विरेचन हो गया है. आत्मा का हल्कापन सीमातीत हो गया है आत्मा ऐसी हल्की हो गई है कि अब परमात्म-भाव तक पहुंचने मे अधिक श्रम की आवश्यकता नही रहेगी . कल्पना करें. इन क्षणो हम किसी शून्य जंगल मे वृक्षो के झुरमुट के बीच एक शिलापट्ट पर बैठे हुए हैं, हमारे चारो ओर हरियाली ही हरियाली फैली हुई है. फूलो की मद-मंद सुगन्ध वायुमण्डल को सुरभित कर रही है। मद-मंद बयार चल रही है जो तन-मन को आल्हादित करने वाली है। अपने पराये सभी व्यक्तियो से एकदम दूर एकात्म भावलीन हैं हम . तेरे-मेरे की सारी परिधियां टूट गई है, . हमारे चारो तरफ दूर-सुदूर तक वातावरण मे नीरव शान्ति छाई हुई है.. हम एक शिलापट्ट पर खुले आकाश मे शान्त-प्रशान्त होकर स्थिरासन मे बैठे हुए है सकल्प करे.. अचानक हमारे शरीर मे अद्‌भुत हल्कापन आ रहा है ऐसा हल्कापन, जैसा हमने पूर्व मे कभी अनुभव नही किया गुब्बारे से भी अधिक हल्का हो गया है हमारा शरीर.. अरे! यह क्या? हमारा शरीर आसन से ऊपर उठने लगा है जैसे हल्की चीज ऊपर उठती है उसी प्रकार हमारा शरीर ऊपर उठता जा रहा है। हमारे शरीर को अब नीचे किसी आश्रय सहारे की आवश्यकता नहीं है वह आसन से लगभग चार अंगुल ऊपर अधर हो गया है हमारे तन के साथ हमारा मन भी एकदम हल्का होता जा रहा है.. इन क्षणो का हमारे तन और मन का हल्कापन अनुपम है भाव करे हमारा शरीर ऊपर उठता जा रहा है। द्रव्य और भाव अर्थात् तन और मन से हम ऊपर उठते जा रहे हैं अनुभव करे अपनी ऊपर उडती हुई स्थिति का अनुभव करे. हम आकाश मे बहुत ऊंचे उठ गये है हम ऐसे वायु मण्डल मे पहुंच गये जहा चारो ओर सुगंध ही सुगंध फैल रही है हम आत्मिक आनन्द से आप्यायित होते जा रहे हैं सहसा हम अधर आकाश में स्थिर हो गये है हमारी अन्तर दृष्टि खुल गई है और हम दूर-सुदूर तक दिखाई दे रहा है सहसा हमारी दृष्टि एक अलौकिक प्रभा-सपन्न दिव्य पुरुष पर पडती है . एक आकाशचारी पुरुष दूर-सुदूर से हमारी ओर चला आ रहा है . उसका संपूर्ण शरीर स्वर्ण कांति जैसा चमक रहा है चेहरे पर अनन्त सूर्यों से भी अधिक तेज दमक रहा है उस तेजस्विता के सामने हमारी दृष्टि चौंधिया रही है हमारी दृष्टि मे चकाचौध उत्पन्न हो रही है अहा! कितनी अनुपम तेजस्विता! कितना अलौकिक रूप! कैसी दिव्य छटा! कितना नयनाभिराम सौन्दर्य। मन मुग्ध हुआ जा रहा है, चेतना आनन्द विभोर हुए जा रही है। ओ हो! वह लोकोत्तर आकाश-पुरुष हमारे निकट आता जा रहा है उसकी तेजस्विता हमारे लिये असह्य होती जा रही है हम उस तेजस्विता मे आकंठ डूबते जा रहे है अरे! वह लोकोत्तर महापुरुष और कोई नहीं परम करुणामूर्ति परम आराध्य हमारे गुरुदेव ही है आज वे अपने मूल रूप मे आ रहे है . हमारी संकुचित दृष्टि ने आज तक उनके आन्तरिक रूप को, उनकी अपरम्पार तेजस्विता को देखा नहीं अपने ही परम गुरु के उस दिव्य रूप को प्रतिपल समीप रहते हुए भी हम देख नही पाये. यह रूप एक अलग ही आभा लिये हमारी अन्तर्दृष्टि के समक्ष उभर रहा है अहा! वे महापुरुष तो हमारे निकट ही आते जा रहे है कितनी करुणा टपक रही है उनकी दृष्टि से .. कितनी सौम्यता व्याप्त हो रही है, उनके चेहरे पर . ओ हो! वे महापुरुष तो सहसा हमारे समीप आकर खड़े हो गये है उनकी अंगुलियां एवं हथेली के मध्य भाग से तेज किरणे निकल रही हैं, जो सीधी हमारी चेतना तक पहुंच रही है हमारी रही सही कलुषता भी उन किरणो की ऊष्मा से भस्म होती जा रही है.. अहो! कितनी करुणा बरस रही है हमारे ऊपर हम उस करुणा की अमृतधारा मे नहा कर सरोबार हो रहे हैं.. परमात्म भाव का दिव्य प्रकाश हमारी चेतना मे भर गया है . हमारी नस-नस मे रक्त नहीं, अमृत-अमृत दौड

रहा हैं हमारे रोग के कीटाणु न जाने कहां विलीन हो गये हैं.. अरे! जहा अमृत धारा ही बहती हो वहां रोगाणु रह ही कैसे सकते हैं सहसा उस स्वर्ण पुरुष के नेत्रो से निकलने वाली किरणे घनीभूत होकर एक धार के रूप मे बन गई है और हमारे प्रवेश केन्द्र-आज्ञ्ञ चक्र के स्थान से हमारे भीतर प्रवेश कर रही है . हमारे शरीर में अलौकिक परमात्म-शक्ति का प्रवेश हो गया है . हमारे मस्तिष्क में एक अलग ही प्रकार की दिव्यता फैलती जा रही है मनोभिराम प्रकाश सम्पूर्ण मस्तिष्क में व्याप्त हो रहा है . उन दिव्य किरणों से हमारा सम्पूर्ण शरीर आलोकित होता जा रहा है. अब अन्य किसी की नहीं, अपनी शरण मे लौट रहे हैं... हम अपनी आत्मा की शरण में जा रहे है. आत्म शरण के इस अहो भाव से भरे हुए ही हम धीरे-धीरे नीचे उतर रहे हैं... बहुत धीरे-धीरे आकाश में तैरते से हम नीचे अपने मूल स्थान पर पहुंच रहे हैं.. अब हम एक अनिर्वचनीय आनन्द भरे हुए अपने मूल स्थान शिलापट्ट पर आ गये हैं.. आज की ध्यान साधना का यह आनन्द शब्दातीत है, वर्णनातीत है, अलौकिक है, अनुपम है.. आज की हमारी ध्यान साधना परमोच्च श्रेणी की ध्यान साधना थी आज हम देहातीत अवस्था मे पहुंच गये थे... आज हम परमात्म मिलन के द्वार पर पहुंच गये थे.. अहा! आज हमारी चेतना कितने आनन्द में डूब गई थी... हमारा यह आनन्द सदा-सदा बना रहे. इस तन्मयता के साथ ध्यान से बाहर आ जाये धीरे धीरे प्रकृतिस्थ हो जाये...।
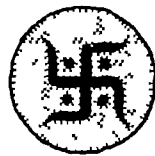
> वर्तमान विषमता की कर्कश ध्वनियो के बीच आज साहस कर समता के समरस स्वरो को सारी दिशाओ मे गुजायमान करने की आवश्यकता है। समस्त जीवन के सभी क्षेत्रो मे फैली विषमता के विरुद्ध मनुष्य को सघर्ष करना होगा क्योंकि इस विषम वातावरण का निरतर ह्रास होता जा रहा है।
>
> -आचार्य श्री नानेश

आचार्य श्री नानेश और समीक्षण ध्यान

✍ महास्थविर पं. र.श्री शान्ति मुनि जी म.सा.

ध्यान-साधना की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए महावीर दर्शन मे कहा गया है-

अहो! अनन्तवीर्योऽयमात्मा विश्व प्रकाशकः।
त्रैलोक्यं चालयत्येव, ध्यान शक्ति प्रभावतः॥

यह आत्मा अनन्तवीर्य-शक्ति-सम्पन्न एवं विश्व के अणु-अणु का प्रकाशक है। जब इसमे ध्यान-ऊर्जा का जागरण हो जाता है तो यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को चलित कर सकता है।

वास्तव मे ध्यान की शक्ति अबूझ है। क्योकि ध्यान का सामान्य अर्थ है चित्तवृत्तियो के भटकाव को अवरुद्ध करके उन्हे किसी एक तत्त्व पर केन्द्रित कर देना। यह वैज्ञानिक सिद्धान्त है कि बिखरी हुई सूर्य-किरणे, सौर-ऊर्जा अकिञ्चित कर होती हैं, किन्तु वे ही किसी आइग्लास पर केन्द्रित होकर, अग्नि उत्पन्न कर देती है। ठीक यही स्थिति चैतन्य ऊर्जा की है। जब ध्यान के द्वारा चैतन्य ऊर्जा का जागरण हो जाता है तो उसके लिए इस विश्व मे कोई भी असंभव कार्य नही बचता है।

ध्यान-ऊर्जा का इतना अचिन्त्य प्रभाव होने पर भी ध्यान-साधना का हो पाना सुकर नही है। जीवन इतना जटिल हो गया है कि उसे सहज बनाना कठिन हो गया है। आज अधिकांश व्यक्तियो का पूरा जीवन विपरीतियो, विसंगतियों एवं तनावो मे जीने का अभ्यस्त बन गया है। उस अभ्यास के कारण विपरीतियां और विसंगतियां वैसी लगती ही नही है। आज का आम मानव भ्रान्तियो मे जीने का अभ्यासी, आदी बन गया है। आज उसे सत्य मे जीना बडा अटपटा लगता है। पाश्चात्य दार्शनिक नीत्से ने एक जगह लिखा है-'आदमी सत्य को साथ लिये नहीं जी सकता है। उसे चाहिये सपने, भ्रान्तिया, उसे कई तरह के झूठ चाहिये जीने के लिए।' और नीत्से ने जो कुछ कहा वह आम मानव की दृष्टि से सत्य ही लगता है। आज इन्सान ने जीने के लिए असत्य को बहुत गहराई से पकड़ा है। अपने इर्दगिर्द भ्रान्तियो की बाड लगा दी है और अपनी ही लगाई उस बाड़ से उसका निकलना कठिन हो गया है।

इस बात को समझना बहुत आवश्यक हो गया है क्योकि इसे समझे बिना हम आनन्द या शक्ति के द्वार तक नही पहुंच सकते हैं और वहां पहुंचे बिना हमारी चेतना को कहीं विश्रान्ति नहीं मिल सकती है। किन्तु भ्रान्तियो की बाड़ या असत्य के चौखटो को समझने के लिए मन को, उसकी वृत्तियो को और उसके सूक्ष्म स्पन्दनो को समझना आवश्यक है। उसे समझने की प्रक्रिया का नाम है-'समीक्षण ध्यान-साधना।' समीक्षण ध्यान-साधना उस जडाभिमुख तन्द्रा को तोड़ती है जिसके कारण व्यक्ति असत्य और भ्रान्तियो मे जीने का अभ्यासी हो गया है। जैसे चमारो को चमड़े की गंध नहीं आती, करीब-करीब वही दशा आम व्यक्ति की बनी हुई है।

आज का विज्ञान भी कहने लगा है कि मनुष्य नीद के बिना तो फिर भी जी सकता है, सपनो के विना इसका जीना मुश्किल है। पुराने युग मे समझा जाता था कि नीद एक आवश्यक प्रक्रिया है, किन्तु आज वह मान्यता बदल गई है। आज का विज्ञान मानता है कि नींद इसलिए आवश्यक है कि आदमी सपने ले सके।

चूंकि आदमी स्वप्नलोकी तन्द्रा में जीने का अभ्यासी बन गया है और उसे वे अभ्यास आनुवांशिक परम्परा के अनुरूप मिलते जाते है। अत: उसके जीने के लिए वे आवश्यक हो जाते है, किन्तु यथार्थ सत्य यह है कि इन्सान का यह विपरीतियो से भरा अभ्यास ही उसे अशान्त बनाये हुए है। आज मानव मन की अशान्ति, उसके तनाव, चरम सीमा का स्पर्श करते दिखाई देते है और इसी दृष्टि से समस्त बुद्धिजीवियो मे एक व्यग्रतापूर्ण भाव भी निर्मित होता जा रहा है कि आखिर विसंगतियो से भरी यह जीवन-प्रणाली हमे कहां ले जाकर डालेगी? हमारे ऐहिक और पारलौकिक दोनो जीवन कब तक असतुलित एवं तनावपूर्ण बने रहेगे? और इसी व्यग्रता ने अनेक साधना-पद्धतियो का आविष्कार किया है। तनाव मुक्ति एवं आत्म-शान्ति की शोध मे हजारो-हजार मानव मन विभिन्न साधना सरिताओ मे प्रवाहित होने लगे। उन्हीं साधना-सरिताओ मे से एक परम पावनी, मन-मलीन-हारिणी, जन-जन तारिणी सुपरिष्कृत साधना पद्धति है-समीक्षण-ध्यान। इस साधना पद्धति के द्वारा हम न केवल बाह्य तनावो से ही मुक्त होते है, अपितु कषाय-मुक्ति एव वासना-विवेचन के द्वारा आत्म साक्षात्कार एवं परमात्म साक्षात्कार का चरम आनन्द भी प्राप्त करते है।

इस साधना पद्धति के आविष्कर्ता समतायोगी आचार्य श्री नानालालजी म सा. स्वय में एक उच्चकोटि के महान् ध्यान-साधक है। साधना ही उनके जीवन का सर्वस्व है। उनका प्रतिपल आत्म-समीक्षण को ही समर्पित है। एक बहुत विराट संघ के नायक-संचालक होते हुए वे भी उससे जल कमलवत् अलिप्त रहने के अभ्यासी है। अत: उनकी यह आविष्कृति पूर्णतया अनुभूतियो से सम्पृक्त अन्तरंग चेतना की भावभूमि से नि:सृत है। अनेक वर्षों की गुरु चरण सेवा एव साधना अनुभवो का निष्कर्ष है-यह साधना पद्धति। अस्तु इसका सर्वजनोपयोगी होना स्वत: निर्विवाद हो जाता है।

साधना के सन्दर्भ मे एक विचारणीय बिन्दु यह है कि केवल चर्चा, तर्क-वितर्क अथवा अध्ययन का विषय नहीं है। यह स्वयं मे साधन कर चलने एवं अनुभूतियो से गुजरने का विषय है, हम आचार्य प्रवर द्वारा प्रदत्त इस साधना पद्धति का अनुशीलन कर स्वयं अनुभव करे कि यह साधना-पद्धति हमारे लिये कितनी उपयोगी एवं आवश्यक सिद्ध होती है?

समीक्षण-ध्यान आगम वर्णित ध्यान विधियों का निचोड़-निष्कर्ष है और आचार्य प्रवर श्री नानेश की दीर्घकालीन साधनात्मक अनुभूतियो का सन्दोह है। यद्यपि अभी यह साधना विधि प्रयोगात्मक प्रणाली के आधार पर अधिक जन प्रचारित नही हुई है, किन्तु जिन आत्म-साधको ने इसकी प्रयोगात्मकता को आत्मसात् किया है, उन्होने आत्मानन्द के साथ मन: सतुलन एवं मानसिक एकाग्रता के क्षेत्र मे आशातीत सफलता प्राप्त की है।

आचार्य प्रवर श्री नानेश ने अनेक बार समीक्षण ध्यान के विविध आयामी प्रयोगो को आत्मसात् ही नहीं किया, अपितु अपने शिष्य-परिकर को भी उन अनुभूतियो का आस्वादन करवाया है। उनकी स्वयं की जीवन प्रणाली तो प्रतिपल ध्यान योग मे लीन एक ध्यान-योगी की प्रणाली है। उनकी चेतना के प्रत्येक प्रदेश मे उनके जीवन के प्रत्येक व्यवहार मे ध्यान-योग प्रतिबिम्बित ही दिखाई देता है। उनकी इस योग मुद्रा का प्रभाव अपने परिपार्श्व को भी प्रभावित करता है। इसीलिए उनके निकट का समस्त वायु मण्डल ध्यान-साधना से अनुप्राणित बना रहता है।

आचार्य प्रवर ने अपनी सुदीर्घ ध्यान-साधना की अनुभूतियो के आधार पर ध्यान की इस नूतन विद्या को अभिव्यक्ति प्रदान की है। यद्यपि यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि यह समीक्षण ध्यान विधा आगम प्रतिपादित ध्यान-विद्या से भिन्न नहीं है, फिर भी इसकी अन्य अनेक प्रचलित ध्यान विधाओ से अलग ही विशेषता

है, इसके द्वारा हम जीवन की सामान्य से सामान्यवृत्ति का समीक्षण करते हुए आत्म-समीक्षण और परमात्म-समीक्षण की स्थिति तक पहुंच सकते है।

ध्यान की यह अप्रतिम विधा अपने आप मे एक नूतन विधा है। यह केवल मानसिक तनाव-मुक्ति तक ही सीमित नहीं है। इसका प्रभाव आत्म-दर्शन की उस भूमिका तक जाता है जो परमात्म दर्शन के द्वार उद्घाटित कर देती है।

समीक्षण ध्यान-साधना में किसी भी प्रकार की हठयोग जैसी प्रक्रियाओं को स्थान नहीं दिया गया है। यह साधना सहज योग की साधना है। समीक्षण द्रष्टाभाव की साधना है। इस प्रक्रिया में हम दुर्वृत्तियो के निष्कासन के प्रति किसी प्रकार की जबर्दस्ती नहीं करते है और न शक्ति जागरण अथवा आत्मोन्नयन के प्रति भी किसी प्रकार की हठवादिता अपनाई जाती है। यहां केवल द्रष्टाभाव आत्म-समीक्षण की सूक्ष्म प्रक्रिया के द्वारा ही सहज, सरलता से अशुभत्व का बहिष्कार एव शुभत्व का संस्कार होता चला जाता है।

समीक्षण ध्यान हंस चोंचवत्-वस्तु के स्वरूप का यथार्थ बोध कराता हुआ अंतर्पथ के राही को ऊर्ध्वारोहण में गति प्रदान करता है।

'ज्ञानार्णव', 'योग दृष्टि समुच्चय' आदि ग्रन्थों मे जिन पदस्थ आदि ध्यान विधियो का उल्लेख मिलता है, वे ही आत्म-समीक्षण की भी विधियां है। आगमो मे आर्त, रौद्ध, धर्म और शुक्ल ध्यान का जो गहनतम विवेचन उपलब्ध होता है, वह सब समीक्षण का ही विविध रूपी विश्लेषण है। धर्म-ध्यान और शुक्ल-ध्यान की जो भावनाएं-अनुप्रेक्षाएं बताई गई हैं, वे समीक्षण की विविध-आयामी पद्धतियां ही हैं।

इस प्रकार मन को किंवा मनोयोग को स्वस्थ दिशा प्रदान करने वाली जितनी भी विधियां/प्रणालियां अथवा पद्धतियां हैं, वे समीक्षण ध्यान की विधियां मानी जा सकती है।

आगमिक परिप्रेक्ष्य मे चिंतन किया जाये तो ध्यान का सम्बन्ध प्रारम्भ मे मानसिक अशुभ वृत्तियो का परिमार्जन एवं शुभ वृत्तियों को आत्म-स्वरूप की ओर दिशा देने से ही अधिक है। इस प्रकार की प्रक्रिया से चलता हुआ साधक जब तेरहवे व चौदहवे गुणस्थान में पहुंचता है तो उन वीतरागी आत्माओं को ध्यान-साधना की विशेष अपेक्षा नहीं रहती है, क्योकि उन स्थानवर्ती आत्माओ के मन की अशुभ वृत्तियां परिमार्जित हो जाती हैं जिससे मन सम्बन्धी चंचलता का आत्यन्तिक अभाव हो जाता है एवं शुभ वृत्तियां आत्म स्वरूप की ओर मोड खाती हुई अप्रमत्त भाव में समाविष्ट हो जाती है। अत: प्रारम्भिकता से लेकर कुछ ऊर्ध्वगमन तक स्थिर रखने के प्रयास की आवश्यकता नहीं रह जाती है। इन दोनो गुण स्थानों में सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाती एवं सम्मुछिन्न क्रिया निवृत्ति रूप दो ध्यान पाते हैं, वे भी मन, वचन, काय के योगो का व्यवस्थितिकरण एवं चरम परिणति की अवस्था मे आत्म-प्रदेशो का स्थिरीकरण होने से सम्बन्धित हैं, क्योंकि वहां ध्यान-साधना की अतिम मंजिल प्राप्त हो जाती है।

निष्कर्ष में हम यह कह सकते हैं कि समीक्षण ध्यान आचार्य श्री नानेश के द्वारा उद्घाटित वह द्वार है, जिससे हम सर्व-समाधानो की मंजिल प्राप्त कर सकते है एवं आत्म-कल्याण के चरम लक्ष्य तक पहुंच सकते हैं।

आचार्य भगवंत श्री नानेश द्वारा घोषित एकादश श्रावक दायित्व प्रतिबोध

समता विभूति आचार्य श्री नानेश द्वारा प्रतिबोधित श्रावक वर्ग का दायित्व बिन्दुवार प्रस्तुत है-

- साधु-साध्वियों की निर्ग्रन्थता बरकरार रहे, उसमे किसी तरह का दोष नहीं लगे। इसकी पूरी सजगता रखी जाय।
- त्यागी आत्माओ के समक्ष व धार्मिक अनुष्ठानो के समय सांसारिक बातें न हो।
- किसी व्यक्ति विशेष के प्रसंग को लेकर अपनी आस्था को चलायमान नही होने देना क्योंकि कभी-कभी सुनी हुई या देखी हुई बात भी भ्रामक या गलत हो सकती है। यदि सच्ची प्रतीत भी हो तो यही चिन्तन करना चाहिए कि व्यक्ति गलत हो सकता है पर जिनेश्वर देवो का सिद्धान्त गलत नही हो सकता।
- संघ के किसी सदस्य की व्यवस्था विषयक कभी कोई अन्यथा बात देखने या सुनने को आवे तो उसकी इधर-उधर चर्चा नहीं करते हुए शासन सेवा की भावना से उस बात को संघ-नायक अनुशास्ता तक पहुंचा देनी चाहिए।
- सघ के किसी सदस्यो के पास अलग-अलग क्षमताएं होती है कोई स्नातक-अधिस्नातक आदि शिक्षित, प्रबुद्ध व बुद्धिजीवी होते हैं। उनके पास बौद्धिक क्षमता होती है। किसी के पास समय होता है तो किसी के पास शारीरिक क्षमता। इसी तरह किसी मे वाचिक व किसी-किसी मे अनेक प्रकार की क्षमताएं होती है।
- उन्हे अपनी क्षमतानुसार अपनी शक्ति/शक्तियो का समविभागीकरण कर बच्चो, युवाओं और बहिनो आदि के लिए धार्मिक शिक्षण व्यवस्था, स्वधर्मी वात्सल्यता, स्वाध्याय प्रवृत्ति, जरूरतमंद स्वधर्मियो की अपेक्षित सेवा, अहिंसा प्रसार, ज्ञान प्रसार, असहाय पीडित मानवता की सेवा, स्वधर्मियो की उन्नति के उपाय आदि विभिन्न रचनात्मक क्षेत्रो मे अपनी क्षमता व शक्ति का सदुपयोग कर धर्म की प्रभावना करना।
- प्रभु महावीर के शासन का अनूठा प्रताप है, जिससे अच्छे-अच्छे घर-घरानो की संताने भौतिकता के इस युग मे भी भौतिक सुख-सुविधाओ से मुख मोड कर संयमी जीवन अंगीकार कर रही हैं। ऐसे संयम साधको के प्रति श्रावक-श्राविका वर्ग का जो दायित्व है उसका निर्वहन करने के प्रति सजग रहना।
- वर्तमान मे साध्वियो की सुरक्षा एक गभीर विषय बना हुआ है। उनके परिजन सघ के विश्वास पर आज्ञा प्रदान करते है। उनके विश्वास को अखंड रखने की दृष्टि से तथा शासन सेवा की भावना से प्रत्येक व्यक्ति अपना दायित्व समझ कर रक्षा-सुरक्षा के प्रति विशेष रूप से जागरूक रहना।
- धार्मिक क्षेत्र मे बढ रही फोटो आदि प्रवृत्तियो के विषय मे मैं समय-समय पर निषेध करता रहा हूं। उन भावो को ध्यान मे रखते हुए, बैनर आदि के द्वारा स्वागत करने की परम्परा बढती जा रही है। उस पर गंभीरता से चिन्तन करना चाहिए। त्यागियो का स्वागत बैनर आदि से नहीं अपितु तप-त्याग से किया जाना चाहिए।
- धार्मिक अनुष्ठान, सामायिक, पौषध, संवर, व्याख्यान, प्रार्थना, प्रतिक्रमण, ज्ञान चर्चा आदि मे तत्परता पूर्वक भाग लेना। हास्य कवि सम्मेलन, लोकरंजन आदि आत्म-साधना के अनुकूल नहीं होने से ऐसे कार्यक्रमो का वर्जन

करना आदि के उस प्रकार से श्रावक-श्राविका वर्ग अपनी क्षमता व शक्ति अनुसार सघ की भव्य सेवा कर सकते हैं।

- आधुनिकता का तूफान जोर पर है। यह तूफान कभी-कभी साधु-साध्वियो को भी विचलित करने वाला बन सकता है। ऐसी स्थिति मे श्रावक-श्राविकाओ का कर्त्तव्य है कि वे गंभीरता, सर्तकता एव विवेक का परिचय दे। अर्थात् विचलित होने वालो को अत्यन्त विनम्र शब्दो मे संघ हित से प्रेरित हो निवेदन करे।

समाज सुधार एवं संस्कार निर्माण हेतु प्रेरणा

समाज सुधार एवं संस्कार क्रान्ति हेतु मन्दसौर वर्षावास के बाद सरवानिया महाराज ग्राम मे सतरह गावो के प्रतिनिधियो को दिया गया उन्नीस प्रतिज्ञाओ का उद्‌बोधन तथा उन प्रतिनिधियो द्वारा ली गई प्रतिज्ञाएं :-

1. मौसर या स्वामी-वात्सल्य आदि किसी भी नाम से किये जाने वाले मृत्यु भोज मे न तो जीमने जायेगे और न ही ऐसा कोई मृत्युभोज देगे।
2 विवाह मे तिलक या लेनदेन की सौदेबाजी नहीं करेगे।
3 सगाई होने के बाद उसे कोई पक्ष नही तोडेगा।
4 मृत्यु के बाद एक मास से अधिक का शोक नही रखेगे।
5 धर्मस्थान पर सादी वेशभूषा मे जायेंगे और प्रवचन मे मौन रहेगे।
6. स्वयं यथाशक्ति धार्मिक शिक्षण लेंगे तथा बालक-बालिकाओ को दिलायेंगे।
7 धर्म स्थान अथवा सामूहिक स्थान पर प्रतिदिन सामूहिक प्रार्थना करेगे।
8 विवाह आदि समारोहों पर गंदे गीत गाने पर रोक लगायेगे/लगवायेगे।
9 जाति एवं धार्मिक रीति-रिवाजो मे व्यर्थ खर्च नही करेगे।
10 प्रातः उठते समय तथा सायं सोते समय ग्यारह बार नवकार मंत्र का जाप करेगे।
11. दीक्षार्थी भाई-बहिनो की दीक्षा भावना मे बाधक नहीं बनेगे बल्कि उन्हे सहयोग देगे और उसे सादगी से संपन्न करवायेगे।
12 कोई भी भाई-बहिन त्यौहारो के दिनो मे शोक वाले के यहां रोने-रुलाने के लिए नही जायेगा।
13 विवाह आदि अवसरो पर बैण्डबाजो मे अनावश्यक खर्च नही करेगे।
14. प्रतिदिन एक या माह मे तीस सामायिक संपन्न करेगे।
15 जाति संबंधी एवं व्यक्तिगत झगड़ो को धर्म मे नही डालेगे।
16 अनमेल विवाह नही करेगे।
17. आध्यात्मिक आहार हेतु धार्मिक पुस्तको का यथाशक्ति पठन-पाठन करेगे।
18 संत-सतियो के यहां जहां भी दर्शनार्थी जायेगे वहां सादा भोजन करेगे।
19 नैतिक एवं चारित्रिक बल बढ़ाने तथा असहायो की सहायता करने हेतु यथाशक्ति उदारता बरतेगे।

समता-विभूति आचार्य श्री नानेश की चिन्तन-मणियां

अक्षय तृतीया के पावन प्रसंग पर अक्षय सुख प्राप्ति के लिए प्रारंभिक साधना के

नव सूत्र

1 हे चैतन्य देव। तू सोच कि * मै कहा से आया हू * किसलिए आया हूं * क्या कर रहा हूं * और क्या करना चाहिए।

2 हे चैतन्य पुरुष। * तू चारगति * चौरासी लाख जीव योनि से * भटकता हुआ * आ रहा है * तूने * अमूल्य मनुष्य जन्म * पाया है * और तू आर्य कुल आदि * उत्तम सयोग से * सम्पन्न है * अतः सोच *तुझे क्या करना है?*

3 हे ज्ञान पुंज। * मनुष्य जन्म की पर्याय मे * तेरा परम शान्ति * बाधा रहित अक्षय सुख * एव ज्ञान दर्शन चरित्रादि * आत्मिक गुणो को * प्राप्ति के लिए * आना हुआ है।

4 हे ज्योतिर्मय आत्मन्। * तू मध्यस्थ भाव से * चिन्तन कर कि * मै क्या सोच रहा हूं * क्या बोल रहा हूं * और क्या कर रहा हूं।*

मै वर्तमान मे * सांसारिक भौतिक * सुख सुविधाओ को ही * सर्वोपरि मान रहा हूं * इन्ही के लिए * झूठ प्रपंच आदि * अनेक वृत्तियो मे * उलझ रहा हूं। * अनिभज्ञता पूर्वक * अमानवीय भावो मे * बहता रहता हू। * कटु शब्दादि का * प्रयोग कर * दूसरो के * दिलो के टुकडे * किये जाने की * प्रवृत्ति भी यदा कदा * करता रहता हू। * क्या यह मेरे * शुभागमन के योग्य है? * उत्तर होगा * कदापि नहीं।

5 हे सुज्ञ चैतन्य। * तुझे तुच्छ भाव से * न सोचना है * न चिन्तन करना है * न बोलना है * और न व्यवहार ही करना है * यही तेरे लिए * शोभास्पद है।*

6 हे प्रबुद्ध चैतन्य। * तू सोच एवं समझ कि * मिथ्या श्रद्धा मेरी नहीं है। * मिथ्या ज्ञान मेरा नही है। * असत्य मेरा नहीं है। * पर पदार्थों पर * ममत्व भाव मेरा नही है। * कषाय मेरा स्वभाव नहीं है। * दूसरो की निन्दा करना * सुनना * क्लेश करना * एवं मिथ्या दर्शन शल्यादि * मन मे रखना * तथा मोह सम्बन्धी * कार्य करना * मेरी आत्मा एव अन्य की आत्मा के लिए * हितकर नहीं है।*

7 हे विज्ञाता। तू अविचल * श्रद्धान कर कि * सुदेव, * सुगुरु, * सुधर्म, * अहिसा, सत्य * अचौर्य, ब्रह्मचर्य, * अपरिग्रह एव स्याद्वादादि * सिद्धान्तो पर ही * मेरी दृढ श्रद्धा है।

8 हे सिद्ध बुद्ध निरजन आत्मन्। सिद्धावस्था की अपेक्षा से * तू दीर्घ नहीं है * तथा ह्स्वादि लौकिक * विशेषणो से युक्त नहीं है। * तेरा कोई * वर्ण गध रस * स्पर्शादि युक्त आकार भी * नहीं है। * न तू स्त्री है, * न पुरुष है * न नपुंसक है * तो फिर क्या है?

अरूपी है * शाश्वत है * अशरीरी है * अजर है * अमर है * अवेदी हे * अखेदी है * अलेसी है * अक्षय सुख रूप है * एवं ज्ञाता व द्रष्टा आदि * सम्परिपूर्ण आत्मीय * गुणो से सम्पन्न है। * अतः अपने स्वरूप को समझ।

9. हे सुज्ञानी आत्मन्! तू ध्यान धर कि * मै समग्र बन्धनो से विनिर्मुक्त बनूं। * आत्मिक स्वरूप के * आदर्श को सामने रखूं। सदा सर्वदा * सम्यक् विधि से * जीवन को उन्नत बनाऊं। * यह मेरी शुद्ध अन्तरात्मा की * श्रद्धा प्ररूपणा है * और आचरण की * परिपूर्णता के लिए * शुभ प्रयत्न है।

यह भावना सदैव बनी रहे-

समत्वं भज भूतेषु निर्ममत्वं विचिन्तय।
अपाकृत्य मनः शल्यं भावशुद्धिं समाश्रय॥

नोट : उपर्युक्त नव सूत्रो को प्रतिदिन प्रातः प्रार्थना के पश्चात् चिन्तन मनन पूर्वक पहले एक बोले फिर सभी संयुक्त रूप से तन्मयता पूर्वक बोले। किन-किन शब्दो को कहां तक बोले इस सुविधा के लिए स्थान-स्थान पर * का चिन्ह लगाया गया है।
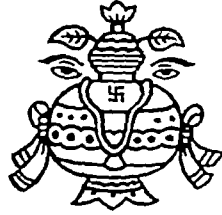
आगम उन वीतराग देवो की उस वाणी का सग्रह है जो उन्होने अपने ज्ञानऔर चरित्र की परिपक्वता की अवस्था मे सर्वज्ञ व सर्वदर्शी के रूप मे ससार के कल्याणार्थ उच्चरित की। इसी पवित्र वाणी मे विश्व-निर्माण का अमोघ उपाय छिपा हुआ है।

-आचार्य श्री नानेश

समता-दर्शन

किसी भी महामानव के महनीय व्यक्तित्व को तब तक सर्वांगीण रूप से नहीं जाना जा सकता, जब तक उसके दार्शनिक विचार अथवा उसकी समाज किंवा राष्ट्रोत्थान के लिए समर्पित दार्शनिक विचारधारा को ठीक से न जान लिया जाय। महान् व्यक्तित्व की गरिमा उसके विचार-वैभव द्वारा ही आंकी जा सकती है। विचार ही उसकी ऐसी धरोहर है जो युग-युग तक उस व्यक्तित्व को अमर रखती है और समाज को निरंतर आलोक प्रदान करती है।

आचार्यश्री एक युगपुरुष है और युग पुरुष वही होता है जो समाज मे चली आ रही गली-सडी मान्यताओ, मानवता विरोधी रूढ धारणाओ को ध्वस्त कर समाज को चिन्तन का नया आलोक प्रदान करे, युगीन समस्याओ का आध्यात्मिक दृष्टि से समयोचित समाधान प्रस्तुत करे तथा जनजीवन मे फैली हुई अन्ध श्रद्धा, विषमता एवं दौर्मनस्यपूर्ण परिस्थितियों पर स्थायी समाधान हेतु अनुभूति मूलक दृष्टि प्रदान करे।

श्रद्धेय आचार्य देव अपने इस दायित्व के निर्वहन मे कितने सक्षम रहे है, इसे हम उनके द्वारा प्रस्तुत समता दर्शन की वैचारिक एव दार्शनिक पृष्ठभूमि के आधार पर समझने का प्रयास करेगे।

आज का जनजीवन जिस विषमता के दलदल मे फंस चुका है, अथवा फंसता जा रहा है, वह अत्यन्त सोचनीय है। चारो तरफ हिंसा का ताण्डव नृत्य हो रहा है, प्रत्येक मानव का मन भयाक्रान्त है, विषमता की इस विभीषिका के भयकर परिणामो से उपराम पाने के लिए ही आचार्यश्री ने समता-दर्शन की मौलिक देन समाज के लिए प्रस्तुत की है।

समता-दर्शन के स्वरूप विश्लेषण एवं वस्तुनिष्ठ विवेचन के पूर्व ''दर्शन'' शब्द की नियुक्ति तथा दर्शन क्षेत्र की वर्तमान दिशा पर कुछ चिन्तन अप्रासगिक नहीं होगा।

दर्शन निर्युक्ति :

दर्शन मानव मस्तिष्क की विचित्र किन्तु तर्कनिष्ठ उपज है। दर्शन, जीवन और जगत् की विचित्रताओ का पर्यावलोकन करने वाला दिव्य चक्षु है। दर्शन शब्द की निष्पत्ति 'दृश्' धातु से हुई है। 'दृश' का अर्थ है देखना। **''दृश्यते अनेन इति दर्शनम्''** जिसके द्वारा देखा जाये, वह दर्शन कहलाता है। नेत्रो का दर्शन चाक्षुष दर्शन कहलाता है, किन्तु प्रस्तुत मे दर्शन शब्द किन्हीं भिन्न अर्थों मे प्रयुक्त हुआ है। जिन तत्त्वो का साक्षात्कार चर्म-चक्षुओं से नहीं किया जा सकता, उनका साक्षात्कार दर्शन-चक्षु का विषय क्षेत्र है। संक्षेप मे दर्शन का अर्थ है तत्त्व का साक्षात्कार।

दर्शन की सार्थकता केवल भौतिक पदार्थों की शक्ति-सीमा के परिबोध मे ही नहीं, अपितु सृष्टि के चराचर तत्त्वो की अपरिमेयता एवं सूक्ष्मता के प्रति अन्तर्दृष्टि जागरण मे है।

दर्शन का उद्देश्य :

विश्व के रंगमच पर प्रतिपल घटित होने वाले घटनाचक्रो की विविधता, विचित्रता, साश्चर्यता एवं रमणीयता का तीक्ष्ण प्रज्ञा से तर्क-पटु विवेचन करना, विश्व मे चेतन-अचेतन-सत्ता का क्या स्वरूप है, उस सत्ता का जीवन और जगत् पर क्या प्रभाव पडता है, प्रकृति प्रदत्त उपादानो की रमणीय व्यवस्थाओ का केन्द्र क्या है, प्रकृति अपने संतुलन को कैसे बनाए रखती है आदि प्रश्नो की गहराई मे पहुंच कर उनकी तर्क-संगत व्याख्या करना दर्शन-शास्त्र

का प्रमुख लक्ष्य रहा है।

पाश्चात्य दार्शनिको के अनुसार दर्शन का उद्देश्य है, विश्व की बौद्धिक एव तर्क-सगत व्याख्या प्रस्तुत करना, अर्थात् पाश्चात्य अवधारणा के अनुसार मानसिक व्यायाम का ही अपर पर्याय दर्शन है। किन्तु पौर्वात्य दर्शन तर्क के साथ श्रद्धा के संबल को समुचित महत्त्व प्रदान करते है, अतएव पूर्व के दर्शन, विशेषकर भारतीय दर्शनों मे श्रद्धा एव तर्क का सुन्दर समन्वय मिलता है। दृश्य एव अदृश्य जागतिक तत्त्वो के प्रति नैसर्गिक श्रद्धा के साथ तर्क-पुरस्सर विवेचना प्रस्तुत करना भारतीय दर्शनो की प्रमुख विशेषता है। तात्पर्य यह है कि भारतीय दर्शन जगत् के साथ जीवन की भी व्याख्या प्रस्तुत करते है। आध्यात्मिक दृष्टि से भारतीय दर्शन आत्मा एवं परमात्मा की सत्ता को उजागर करते है। इस प्रकार यदि भारतीय दर्शन की ऐसी कोई विशेषता है, जो उसे पाश्चात्य दर्शन से पृथक् करती है, तो वह है, आत्मा की परम सत्ता (मोक्ष) का चिन्तन।

सृष्टि के दो प्रमुख घटक है, चेतनामय जगत् और अचेतन सृष्टि। जैन दर्शन की भाषा मे चेतन एव जड, सांख्य दर्शन के शब्दो मे पुरुष और प्रकृति, वैदान्त के चिन्तन में ब्रह्म एव माया का विस्तार कहा जाता है।

उपर्युक्त दोनो तत्त्वों के अन्वेषण की मुख्य दो परम्पराएं कायम हो गई हैं और वे दो परम्पराए ही निरन्तर प्रवहमान सरिता की तरह दर्शन-जगत् की दो धाराएं बन गई है, एक पाश्चात्य और दूसरी पौर्वात्य। पाश्चात्य दर्शन भौतिक तत्त्वो के विश्लेषण की गहराई मे पहुंचे, तो पौर्वात्य दर्शन चेतन-आत्म तत्त्व के अन्वेषण की दिशा मे प्रवृत्त हुए। इसी दृष्टि से भारतीय सभ्यता एवं सस्कृति से प्रभावित सभी पौर्वात्य दर्शनों को आत्मवादी दर्शन कहा जाता है।

भारत के प्रायः सभी दर्शनो का प्रमुख ध्येय आत्मा और उसके स्वरूप का प्रतिपादन करना रहा है। चेतन एव परम चेतन की सत्ता को जिस समग्रता एवं सूक्ष्मता से भारतीय दार्शनिको ने समझने-समझाने का प्रयास किया, वह अपने आप मे अनूठा एव अतुलनीय है।

जैन-दर्शन :

सभी भारतीय दर्शनो मे जैन-दर्शन का अपना गौरवमय स्थान है। आत्म-तत्त्व की विवेचना मे तो उसका सानी कोई दर्शन है ही नहीं, क्योकि दिव्यद्रष्टा प्रभु महावीर का अध्यात्मवादी दर्शन 'आत्मा' का ही दर्शन है। प्रभु महावीर के उपदेश **''से आयावाई, एगे आया''** जैसे आत्मवादी स्वरो से ही प्रारम्भ होते है। आत्मा के सदर्भ मे जितनी सूक्ष्म मीमांसा जैनागमो मे उपलब्ध होती है, उससे सहज समझा जा सकता है कि आत्मा का स्वरूप विवेचन महावीर का प्रमुख प्रतिपाद्य रहा है। इतना होने पर भी वह आत्मा-सम्बन्धी चिन्तन केवल विचारपरक नहीं रहा। विचार के साथ आचारनिष्ठा महावीर दर्शन का प्राण है। महावीर का दर्शन केवल विचारो का एक कोष नही, अपितु जीवन जीने की कला है। वहां केवल सत्य की अन्वेषणा नही, उसके साथ रमणता (आत्मसात् हो जाना) भी अनिवार्य मानी गई है।

यही कारण है कि वेदान्त और मीमांसा, महायान और हीनयान, सांख्य और योग की तरह महावीर-दर्शन, दर्शन और धर्म दो भागो मे विभक्त नहीं हुआ और न वहा किसी प्रकार का विरोध ही उपस्थित हुआ। दर्शन और धर्म वहा विचार और आचार के रूप मे परस्पर पूरक, सहचर अथवा सहगामी रहे है। महावीर दर्शन मे विचार के साथ आचार की भी अतुलनीय महिमा तथा गरिमा है। दर्शन द्वारा विचार प्रस्फुटन और तद्द्वारा तत्त्व प्रतिपादन होता है, तो धर्म उसके क्रियान्वयन किंवा अनुशीलन पर बल देता है।

महावीर दर्शन की इस सक्षिप्त विवेचना के आधार पर हम कह सकते है कि समस्त भारतीय दर्शनो मे जैन दर्शन सर्वाधिक प्रभावशाली दर्शन है। इस दर्शन की अनूठी एव वस्तुनिष्ठ विशेषताएं है। अध्यात्म से सम्बन्धित जड-चेतन, पुण्य-पाप, स्वर्ग-नरक, आत्मा-परमात्मा तथा ससार-मुक्ति, सभी का सागोपांग तर्क-सगत विवेचन तथा तदनुसार जीवन-सर्जन जैन-दर्शन और जैन धर्म के प्रथम प्रतिपाद्य है।

विडम्बना यह कि अन्यान्य दर्शनो की तरह जैन-दर्शन की तात्त्विक विवेचना भी बौद्धिक विलास बन कर रह गई है। आज का चिन्तन बौद्धिक विश्लेषण किवा वैचारिक परिधि तक सीमित रह गया है। जीवन की सम्पूर्ण व्यावहारिक समस्याओ-अभीप्साओ का सम्योचित तथ्यमूलक समाधान दर्शन की परिधि से बाहर रहता जा रहा है। दर्शन की चर्चा केवल तर्क के रूप मे जीवन की नही, मस्तिष्क की खुराक बन कर रह गई है और दर्शन अपने उद्देश्य (सत्य की खोज) से भटक गया है।

वैज्ञानिक दर्शन :

यही कारण है कि पौर्वात्य दार्शनिक चिन्तन प्रणाली की जटिलताओ एव दुरुहताओ से आज की जन चेतना असम्पृक्त-सी होती जा रही है और पाश्चात्य दार्शनिक चिन्तन, जो आज विज्ञान के रूप मे प्रस्तुत है के प्रति समूचा पौर्वात्य जनजीवन भी आकर्षित है। तथ्य यह है कि जीवन के चरम एव परम सत्य का आधार विज्ञान कथमपि नही बन सकता। विज्ञान का प्रारम्भ भौतिक जगत् के सत्य तत्त्व की खोज के लिए और तद्द्वारा जीवन मे बाह्य सुख-सुविधाओं और सुरक्षा जुटा लेने के लिए हुआ है। किन्तु विज्ञान अपने प्रारभिक उद्देश्य से भटक कर ठीक विपरीत दिशा की ओर मुड गया। उसकी तथाकथित उन्नति, अवनति की पराकाष्ठा बन गई है। आनुमानिक तथ्य के अनुसार संसार के बडे देशो मे वैज्ञानिक प्रयोगो पर होने वाले व्यय का लगभग ९९ प्रतिशत युद्ध और जासूसी के साधनो पर हो रहा है।* कैसी विडम्बना है कि जिस विज्ञान से यह अपेक्षा की गई थी कि वह मानव जाति के लिए अधिक जीवन सामग्री, अधिक रोजगार, अधिक विश्राम और अवकाश, अधिक शान्ति और अधिक सौहार्द तथा पारस्परिक विश्वास का निर्माण करेगा, वही विनाश की सामग्रियो के अम्बार लगाने मे नियुक्त है। क्या मनुष्य की मूल प्रवृत्ति सृजनात्मक होने के बजाय विध्वसात्मक है?

आज राष्ट्रीय रंगमंच ही नहीं, सम्पूर्ण जन मानस त्रस्त है। विश्व युद्धो के सृजन मे सलग्न कूटनीति और सर्वनाशी आणविक अस्त्रो की घुडदौड के जिस वैज्ञानिक युग मे हम जी रहे हैं, इसमे मानवीय मूल्य और मापदण्ड भी बदल गये है। लगता है, अब मानवीय अस्तित्व अनिश्चित है। उसमे न तो निश्चितता रह गई है और न निर्श्चितता। यायावरो की तरह हम भटक रहे है और अपने ही भविष्य के प्रति आतंकित बने हुए है। विज्ञान का तथाकथित विकास यहा तक पहुंच गया है कि एक उन्मादी आक्रामक इस धरती की अद्यावधि सचित सभ्यता को चुटकी बजाते भस्मसात कर सकता है और समस्त सुरक्षा-साधन निरर्थक होकर ताकते रह सकते हे।

पाश्चात्य वैज्ञानिक दर्शन की भयावह स्थिति के सुस्पष्ट चिन्ह समक्ष होते हुए भी आज सम्पूर्ण जन चेतना उसी से आप्लावित एवं प्रभावित है तथा पौर्वात्य दर्शन के प्रति एक आम उपेक्षा प्रायः सर्वत्र परिलक्षित हो रही है।

कारण स्पष्ट है कि आज समूचा पौर्वात्य दर्शन केवल वैचारिक सिद्धान्त मात्र रह गया है और दर्शन जव बौद्धिक परिधि मे ही आबद्ध होकर युगीन समस्याओ का समुचित समाधान प्रस्तुत करने मे अक्षम हो जाता है तो वह दर्शन की व्युत्पत्ति मूलक परिभाषा से ही कट जाता है।

*नवभारत टाइम्स, वार्षिकाक 1977।

यह कहा जा चुका है कि दर्शन का अर्थ केवल बौद्धिक व्यायाम ही नहीं है। जीवन की मौलिक समस्याओ के समाधान पर दृष्टि-बोध देना भी दर्शन के कार्य क्षेत्र मे आता है। इस अर्थ मे दर्शन विचार एवं तदनुरूप आचार का भी उत्प्रेरक होता है।

वर्तमान चिन्तन इस बात का प्रबल साक्षी बनता जा रहा है कि आज दर्शन का कार्य क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत हो चुका है और उसकी उपयोगिता भी बढ़ चुकी है, किन्तु आवश्यकता है दर्शन को अपने पुरातन रूढ अर्थों की परिधि से बाहर निकाल कर उसे युगानुकूल शैली एव भाषा मे प्रस्तुत करने की। आज का जनजीवन वैषम्य की जिस ज्वाला में झुलस रहा है, दर्शन के समक्ष यह एक ज्वलन्त चुनौती है। दृष्टिकोण और आचार का सयोजन तो विज्ञान की बुनियाद है, किन्तु जब ध्वस्त आचार पर कोई दर्शन प्रस्तुत कर दिया जाता है, तो उसकी परिणति बड़ी शोचनीय हो जाती है। वही बात आज के वैज्ञानिक भौतिकवादी दर्शन की हो रही है, जो कुटिल युद्ध नीति के अत्याचारी जबड़ो मे आ फंसा है।

दर्शन का वर्तमान रूप : समता दर्शन

श्रद्धेय आचार्य देव ने समता दर्शन की जो विचार-प्रणाली प्रस्तुत की है, वह दर्शन-जगत् की जीवन्त माग को पूरी कर सकती है और दर्शन क्षेत्र के प्रति जो एक उपेक्षा का भाव सर्वत्र व्याप्त हो रहा है, उसे समाप्त करने मे योगदान कर सकती है।

आचार्य श्री ने युगीन समस्याओ को अपने अध्यात्म-चिन्तन के व्यापक फलक पर लेकर तोला है और पाया है कि जब तक दर्शन को समता के धरातल पर युगान्तरकारी रूप मे प्रस्तुत नहीं किया जाएगा, तब तक दर्शन के प्रति विश्व-मानस आश्वस्त नहीं हो सकता।

वर्तमान का भयावह विज्ञान :

मेरी अपनी दृष्टि से, ऐसे समय मे, समता दर्शन की उपयोगिता और अधिक बढ़ जाती है, जबकि समूचा वायुमण्डल विषमता के विष से संपृक्त एवं विस्फोटक बन गया है। आज इस अध्यात्म-प्रधान सांस्कृतिक मानवीयता के नीलाकाश मे भौतिकवाद का विस्फोटक गुब्बारा अपनी चरम सीमा तक फूल कर विनाश के कगार तक पहुंचने को है, क्योंकि मानवीय सभ्यता एवं संस्कृति को भूमिसात करने वाले विध्वसक अणुओं के ढेर पर हर राष्ट्र का अहं ताण्डव नृत्य कर रहा है। सभ्यता और संस्कृति के श्वासो की धड़कन सीमातीत रूप से तीव्र हो चली है। पता नहीं कौन-सा क्षण उसके पर्यवसान की घण्टी बजा दे।

दो प्रलयंकारी महायुद्धो के दुष्परिणाम हम देख चुके है। तीसरे महायुद्ध के घनघोर बादल भी जब कभी तथाकथित राष्ट्राधिपतियो के अमानवीय अन्तराकाश मे मंडराने लगते है। शीतयुद्ध तो प्रायः चलते ही रहते हैं।

ब्रिटिश विज्ञान-शास्त्री गार्डरेटरेटेलर ने अपनी पुस्तक 'द बायलाजिकल टाइम बम' मे कीटाणु-युद्ध की विभीषिकाओ का दिग्दर्शन कराते हुए लिखा है, "अब इन आयुधो के प्रहार से यह संभव हो गया है कि किसी देश को शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्थायी तौर से दुर्बल बना कर शताब्दियो तक पराधीन रखा जा सके। यह कितनी चिन्ताजनक दयनीय और अमानवीय स्थिति होगी? अमेरिकी कृमिविज्ञानी साल्वे डोर लूरिया ने यह आशका व्यक्त की है कि अब सिर्फ राजनेता ही नहीं सामान्य रसायनवेत्ता भी किसी देश अथवा समस्त विश्व को बर्बाद करने की शक्ति से सुसज्जित हो गये है। इससे सार्वभौम विनाश को रोक सकना और भी अधिक जटिल हो गया है।"

कितनी दर्दनाक एव भयावह स्थिति मे पहुच गई, हमारी मानवीय सभ्यता! आज जिधर दृष्टि दौडाई जाय,

उधर ही विषमता एवं अशान्ति का दौर-दौरा मानव-मानव के अन्तःकरण को घेरे खडा है। मानवता टुकडो-टुकडो मे विभक्त हो चुकी है। हिसा का दानव मानवीय हृदयो को कुचल कर सभ्यता और संस्कृति के रहे-सहे चिह्नों को भी दुर्दश्य किंवा अदृश्य बना देना चाहता है।

इस विस्फोटक परिस्थिति का संवेदन राजनैतिक एवं दार्शनिक मनीषियों के आशकित हृदयो को विगत तीन दशो से अत्यधिक झकझोर रहा है। राजनीतिज्ञो की मनश्चेतना व्याकुल हो रही है। दार्शनिको एवं सस्कृति-संरक्षको ने सावधान और सचेत होकर फूंक-फूक कर पैर धरने के स्वर उठाए है, राजनीतिज्ञो ने जलावर्त्तों से बचते हुए नौका खेने का आग्रह प्रदर्शित किया है।

राजनीतिज्ञों द्वारा समाधान :

अन्तश्चेतना को उद्वेलित करने वाले इन दृश्यों को देख कर विभिन्न राजनीतिज्ञ भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से समस्याओ पर समाधान पाने का निष्फल प्रयास कर रहे हैं। कोई समाजवाद का नारा लगाता है, तो कोई राजतन्त्र का। किन्हीं की दृष्टि कम्युनिज्म पर ही केन्द्रित हो जाती है, तो कोई पूंजीपति बन कर शान्ति को हस्तगत करना चाहता है। लेनिनवाद, माओवाद के मनमोहक नारे लगाये जा रहे है।

ऐसे समय मे आवश्यकता है एक ऐसे शान्तिदूत की जो महावीरवत समतापूत, बुद्धवत करुणापूत और जीससवत सेवापूत हो, जिसकी समग्र अन्तश्चेतना अहिंसा एवं समता की अन्तश्चेतना हो, जिसका प्रत्येक उद्‌घोष अहिसक क्रान्ति के साथ समता का सिंहनाद करने वाला हो, जिसकी हर प्रक्रिया अहिंसात्मक समता की गहराई हो, जिसके जीवन के अणु-अणु से मुखरित होता हुआ समता का समवेत स्वर विषमता से आप्लावित जन-जन के कर्ण-कुहरो को अजस्र वाहिनी समताधारा से भरने वाला हो, किन्तु समस्या यह है कि उस समता सर्जक अथवा दर्शक की खोज प्रायः भौतिक, सामाजिक एव राजनैतिक क्षेत्रो मे ही की जा रही है। आध्यात्मिक क्षेत्र की ओर से प्रायः सभी अन्वेषको की दृष्टि बन्द हो चुकी है, जबकि शान्ति एवं समता का वास्तविक प्रवाह-स्रोत अध्यात्म ही है।

जब तक इन उद्‌जन एवं हाइड्रोजन विस्फोटको की सर्वनाशकारी प्रतिस्पर्धा का अन्त न आ जाए और उन चिन्तको की दृष्टि, जो अभी तक भौतिक शक्ति मे ही परिबद्ध रही है, मुड कर अध्यात्म की ओर करवट न ले ले, स्थायी शान्ति का सूत्र हस्तगत नही किया जा सकता।

आश्चर्य तो इस बात का है कि अन्तश्चेतना मे सन्निहित शान्ति का अन्वेषण चन्द्रलोक, मंगलग्रह एवं समुद्र की अतल गहराइयो में किया जा रहा है। शान्ति बाहर नही है, अन्तर मे उपलब्ध होगी। आवश्यकता है, दृष्टि-परिवर्तन अथवा दृष्टि-समन्वय की।

वैसे राजनीतिज्ञो द्वारा शान्ति-स्थापन के छुटपुट प्रयास राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रो मे यदाकदा दृष्टिगत होते रहे है। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान का ताशकंद समझौता उसी प्रयास की एक कडी कहा जा सकता है, किन्तु जब तक सर्वमान्य मानवीय धरातल का सैद्धान्तिक भूमिका के रूप मे गठन नहीं किया जाए, ये छुटपुट प्रयास प्राणवान बन कर स्थायित्व ग्रहण नहीं कर सकते।

अध्यात्मवादियों के छुटपुट प्रयास :

आध्यात्मिक क्षेत्र मे भी स्थायी विश्व शान्ति की उपलब्धि हेतु विभिन्न विचारात्मक एवं समायोजनात्मक

प्रयास किये जा रहे हैं, किन्तु वहा भी कही साम्प्रदायिक हठाग्रह के घेरे मे तो कही व्यक्तिगत अहं के सम्पोषण एव संवर्धन मे ही अवरुद्ध होकर प्राय: वे प्रयास इति श्री प्राप्त करते रहे है।

आचार्य श्री द्वारा स्थायी समाधान :

सम्भवत: इन्ही दृष्टिकोणो को सन्मुख रखते हुए जैन-दर्शन को भाषा एव शैली की दृष्टि से नूतन परिवेश प्रदान कर तथा उसे वैचारिकता की एकान्त परिधि से बाहर निकाल कर स्थायी विश्व शान्ति के अमोघ उपाय प्रशस्त करने के लिए एवं मानव-मानव में परिव्याप्त विषमता का सफल समाधान देने हेतु राष्ट्र के महान् मनीषी, सन्त, युगपुरुष, अध्यात्म जगत् के प्रखर चिन्तक, दार्शनिक गरिमा से युक्त, समता दर्शन एव समता समाज के सृजेता तथा व्याख्याता, तप:पूत, समतासागर, आचार्यवर्य श्री नानालाल जी म सा ने समता-दर्शन का सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। आचार्यश्री द्वारा प्रस्तुत समता-दर्शन वैचारिक, दार्शनिक एवं व्यावहारिक क्षेत्रो मे समता का समुद्घोष कर अहिसक उत्क्राति का आधार रखने वाला, साम्प्रदायिक घेरे-बन्दियो से मुक्त, वैचारिक और व्यावहारिक रूपरेखा तैयार करने वाला है। यदि चिन्तको, दार्शनिको तथा समाज व राष्ट्र के कर्णधारो की चेष्टाएं इस दर्शन के अनुरूप हो, तो मै समझता हूं कि, निर्विवादेन विश्व शान्ति का प्रयास एक आश्वस्त दिशा पा सकता है। इसके साथ ही दर्शन जगत अपने नव्य-भव्य रूप मे पुन: स्थायी आलोक-स्तम्भ के रूप मे प्रस्तुत हो सकता है।

आचार्यश्री की चिन्तन प्रणाली सम्प्रदायवाद तथा व्यक्तिवाद से उन्मुक्त आत्मिक एवं मानवीय मूल्यो को स्पर्श करने वाली है। उनका जीवन चिरपोषित साधना का जीवन है। उनकी साधना एक सच्चे योगी की अनुभूतिपूर्ण साधना है। अत: उनके तप:पूत मानस से नि:सृत चिरसंचित अनुभूतियो से नियोजित समता दर्शन की विचार भागीरथी जन-जन के हृदय क्षेत्र मे परिव्याप्त विषमताजन्य शुष्कता को समता की सरसब्जता मे अवश्य ही बदल सकती है।

आचार्य प्रवर ने अपनी साधना के समुज्ज्वल अतीत में जो कुछ चिन्तन, मनन एवं अनुभव किया है उसी से समता दर्शन की विचारधारा का आकलन प्रस्तुत हुआ है। समता दर्शन एक स्पष्ट दार्शनिक एवं व्यावहारिक विचारधारा है। यह वैचारिक हवाई महलो का निर्माण नहीं है, जहां केवल विचार, विचार तक सीमित रह जाय। जीवन की समस्याओ का स्थायी समाधान केवल वैचारिक उत्क्रान्ति से ही नही होगा। उसके लिए जीवन के व्यवहारो की ओर भी दृष्टि दौडानी होगी। इन्ही दृष्टियो को सम्मुख रखते हुए समता दर्शन की विचार-सरणि मे सैद्धान्तिक एवं दार्शनिक पहलुओ के साथ-साथ व्यावहारिक (Practical) प्रयोगात्मक प्रणालियो का भी समुचित समायोजन किया गया है। संक्षेप मे हम यो कह सकते हैं, वर्तमान विषमताजन्य समस्याओ का स्थायी समाधान समता दर्शन की दार्शनिक तथा व्यावहारिक पृष्ठभूमि के आधार पर ढूंढा जा सकता है।

समता दर्शन का उद्देश्य :

समता दर्शन का प्रतिपाद्य (उद्देश्य) आध्यात्मिक (धार्मिक), सामाजिक, नैतिक एव राजनैतिक क्षेत्र मे परिव्याप्त विषमताओ का वैचारिक तथा प्रवृत्यात्मक स्थायी समाधान प्रस्तुत कर जन-जन मे समत्व, समन्वय, सामंजस्य, सर्वधर्म सद्भाव एवं भावात्मक एकता की प्रबल भावनाओ का विस्तार करना है।

आधुनिक सदर्भ मे युगीन पुकार के आधार पर यह नितान्त वांछनीय भी है कि समता, समन्वय, मैत्री एवं सद एकत्व की भावना जन-जन व्यापी बने। किन्तु इसके लिए पहले एक सुदृढ पृष्ठभूमि चाहिए। सशुद्ध वैचारिक भूमिका पर ही कर्मबीज पल्लवित हो सकता है। **''यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी''** के अनुसार जैसी

विचार-निष्ठा होगी, कर्म-प्रस्फुटन भी तदनुरूप ही होगा। अतः समन्वय और समतामूलक व्यवहार अपने लिए एक ऐसी भूमिका चाहते है जो एतन्मूलक विचारो से ओतप्रोत हो।

यह तभी सभव है, जबकि प्रबुद्ध जन-मानस समता-दर्शन की वैचारिक पृष्ठभूमिका की परिचिति प्राप्त कर लोकव्यापी अहिसक सत्संगठनात्मक आदोलन द्वारा उसके व्यावहारिक क्रियात्मक रूप को विचार, उच्चार एवं आचार द्वारा आत्मसात् करने का सबल प्रयास करे।

उसके सामान्य परिचय (परिबोध) के लिए समता-दर्शन की वैचारिक एव व्यावहारिक रूपरेखा ''समता दर्शन और व्यवहार'' नामक ग्रन्थ मे साधुमार्गी जैन सघ द्वारा प्रस्तुत की गई है। यह आचार्यदेव के चिन्तन का व्याख्यानबद्ध अनुलेख है।

आचार्यश्री द्वारा प्रतिपादित समता दर्शन के उद्देश्य एव विधेय को हृदयगम करने के लिए यह आवश्यक है कि उसके मूल सिद्धांतो पर दृष्टिपात किया जाए। समता-दर्शन के प्रारभिक प्रतिपादन मे सूत्रात्मक शैली के आधार पर आचार्यश्री ने समता-दर्शन को चार सोपानो मे विभक्त किया है। इन सूत्र स्पर्शों की विस्तृत विवेचना आचार्यश्री अपने प्रवचनो मे किया करते है। यहां प्रस्तुत है आचार्यश्री के शब्दो एव विचारो मे ही समता-सिद्धान्त का मूल सूत्रात्मक रूप।

समता-दर्शन के चार मुख्य विभाग किये जा सकते है-(1) सिद्धान्त-दर्शन, (2) जीवन-दर्शन
(3) आत्म-दर्शन, (4) परमात्म-दर्शन।

(1) सिद्धान्त दर्शन :

मानव ही नही, प्राणी समाज से सबधित सभी क्षेत्रो मे यथार्थ की दृष्टि, वस्तुस्वरूप के उत्तरदायित्व तथा शुद्ध कर्तव्याकर्तव्य का ज्ञान एवं सम्यक्, सर्वांगीण व सम्पूर्ण चरम विकास की साधना समता सिद्धान्त का मूलाधार है। इस प्रथम सोपान पर सिद्धान्त को प्रमुखता दी गई है।

(क) समग्र आत्मीय शक्तियो के सम्यक् और सर्वांगीण चरम विकास को सदा-सर्वत्र सम्मुख रखना।

(ख) समस्त दुष्प्रवृत्तियो के त्यागपूर्वक सत्साधना मे विश्वास रखना।

(ग) समस्त प्राणिवर्ग का स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करना।

(घ) समस्त जीवनयोपयोगी पदार्थों के यथाविकास यथायोग्य समवितरण मे विश्वास रखना।

(ङ) गुण एवं कर्म के आधार पर विश्वस्थ प्राणियो के श्रेणी विभाग मे विश्वास रखना।

(च) द्रव्य-सम्पत्ति व सत्ता-प्रधान व्यवस्था के स्थान पर चेना तथा कर्तव्यनिष्ठा को प्रमुखता देना।

(2) जीवन दर्शन :

सबके लिए एक व एक के लिए सब तथा जीओ व जीने दो के प्रतिपादक सिद्धान्तो तथा संयम-नियमो को स्वयं के व समाज के जीवन मे आचरित करना समता का जीवन्त दर्शन करना होगा।

(क) अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह ओर सापेक्षवाद (स्याद्वाद) को जीवन मे उतारना।

(ख) जिस पद पर जीवन रहे, उस पद की मर्यादा को प्रामाणिकता से वहन करने का ध्यान रखना।

(3) आत्म-दर्शन :

विश्व में मुख्य दो तत्त्व है-एक चेतन तत्त्व और दूसरा जड तत्त्व। चेतन तत्त्व स्व-पर-प्रकाश-स्वरूप है और जड़ तत्त्व उससे भिन्न है। इन दोनो तत्त्वों के सम्मिश्रण से कर्म-युक्त ससारी प्राणी-जगत् है। इसमे व्यवस्थित न्यूनाधिक कलापूर्ण विकासशीलता आत्मा का प्रतीक है और घुणाक्षर-न्याय के तरीके से बनने वाली स्थिति का प्रतीक प्राय: जड़ तत्त्व है।

सम्यक् आचरण से आत्मा का साक्षात्कार चिन्तन, मनन व स्वानुभूति द्वारा करना आत्म-दर्शन है। इसके लिए निम्नोक्त भावना एवं नियमितता आवश्यक है-

(क) प्रात:काल सूर्योदय के पहले कम-से-कम एक घण्टा आत्म-दर्शन के लिए निर्धारित करना।

(ख) जो भी घण्टा, जिन मिनिटो से नियुक्त किया जाए, ठीक उन्हीं मिनिटो का हमेशा ध्यान रख कर साधना मे बैठना।

(ग) साधना के समय पापकारी प्रवृत्तियो का निरोध करना और सत्प्रवृत्तियो को आचरण मे लाना।

(घ) समस्त प्राणिवर्ग को आत्मा के तुल्य समझना।

जैसा सुख-दु:ख अपने को होता है अर्थात् सुख प्रिय और दु:ख अप्रिय लगता है, वैसा ही अन्य प्राणियो को भी होता है। अत: हम किसी को दु:ख न दे। सबको सुख हो, इस भावना से अपनी सम्यक् प्रवृत्ति का ध्यान रखना।

किसी भी जीव को हनन करने की भावना रखना अपने आपका हनन करना है। दूसरो के सुख मे अपना सुख समझना और कष्ट मे अपना कष्ट समझना परमावश्यक है। इस प्रकार आत्म-दर्शन की भावना को यथास्थान सम्यक् रीति से आगे बढ़ाते रहना चाहिए तथा इन भावनाओ को पुष्ट करने के लिए सत्साहित्य का यथावकाश अध्ययन करना चाहिए।

(4) परमात्म-दर्शन :

रागद्वेष, आदि विकारो के समूल नाशपूर्वक चरम विकास पर पहुचने वाली आत्मा सही अर्थ मे परमात्म-दर्शन को प्राप्त होती है और परमात्म-दर्शन पद प्राप्त आत्मा ही समग्र आत्मीय तथा अनन्त गुणो का उपयोग करती हुई जगत् मे मंगलमय कल्याण अवस्था की आदर्श स्थिति उपस्थित करती है।

इस विषय मे निरन्तर ध्यान रखते हुए जो व्यक्ति क्रमिक विकास पर चलता है, वह समता-दर्शन की स्थिति से विश्व कल्याण मे महत्त्वपूर्ण योगदान करता है। अत: समता-दर्शन को परिपूर्ण रूप से जीवन मे उतारना चाहिए।

उपर्युक्त चार सूत्र रूप सोपानों को माध्यम बना कर आचार्यश्री अपने प्रवचनो मे समता-समाज की सर्जना के लिए मौलिक प्रकाश डालते हैं, जिसका सीधा संबध वर्तमान मे विषमताजन्य विभीषिका के समाधान से होता है। आचार्य देव सचोट, किन्तु स्पष्ट शब्दो मे फरमाया करते है कि असमानता के नाम से जो सर्वव्यापी विषमता चारो तरफ फैली हुई है, वही जन जीवन मे घृणा, द्वेष, दौर्मनस्य एव असन्तोष का कारण बनी हुई है। अत: इस स्थिति मे उपराम पाने के लिए समता-दर्शन के माध्यम से समता-समाज का निर्माण नितान्त अपेक्षित है। जन-जन मे व्याप्त विषमता की आग की उपशान्ति के लिए समता-सिद्धान्त-सरिता का शीतल जल ही एक अमोघ उपाय सिद्ध हो सकता है।

समता-सिद्धान्त के प्रतिपादन का मूल उद्देश्य है, विषमताजन्य द्वन्द्वो से उपराम पाना। वर्तमान विषमता की

अग्नि का चित्रण आचार्यश्री के भावों में ही प्रस्तुत है।

वर्तमान विषमता की विभीषिका :

आज सारे ससार मे विषमता की सर्वग्राही आग धू-धू करके जल रही है। जहां दृष्टि जाती है, वहीं दिखाई देता है कि हृदय मे अशान्ति, वचन मे विश्रृंखलता एवं जीवन मे स्वार्थ की विक्षिप्तता ने सब ओर मनुष्यता के कोमल और हार्दिक भावो को आच्छादित कर दिया है। ऐसा लगता है कि चंचलता मे गोते लगाता हुआ मनुष्य का मन भ्रष्टता एवं विकृति के गर्त की ओर निरन्तर अग्रसर होता ही चला जा रहा है।

सर्वव्यापी विषमता :

अमावस्या की मध्य रात्रि का अंधकार जैसे सर्वव्यापी हो जाता है, वैसी ही सर्वव्यापी यह विषमता हो रही है। क्या व्यक्ति के हृदय की आन्तरिक गहराईयो मे, तो क्या बाह्य संसार मे, व्यक्ति से लेकर परिवार, समाज, राष्ट्र एवं समूचे विश्व मे प्रायः यह विषमता फैलती जा रही है-गहराती जा रही है।

विषभरी यह विषमता सबसे पहले मानव-हृदय की भीतरी परतो मे घुस कर उसे क्षत-विक्षत बनाती है और हृदय की सौजन्यता तथा शालीनता को नष्ट कर देती है। जो हृदय समता की रसधारा मे समरस बन कर न केवल अपने भीतर, बल्कि बाहर भी सब ठौर आनन्द की उमंग उत्पन्न कर सकता है, वही हृदय विषमता की आग मे जल कर स्वयं तो काला-कलूटा बनता ही है, किन्तु उस कालिमा को बाह्य वातावरण मे भी चारो ओर विस्तारित कर देता है।

फैलाव व्यक्ति से विश्व तक :

यह विषमता इस तरह व्यक्ति के हृदय मे पोषण प्राप्त करके जब बाहर फूटती है, तो उसका सबसे पहला आक्रमण परिवार पर होता है क्योकि परिवार ही आधारगत घटक है। परिवार मे जो रक्त-प्रभाव का सहज स्नेह होता है, वह भी विषम विचारो एव वृत्तियो मे पड कर विषाक्त बन जाता है।

परिवार की सहृदयता एवं स्नेहिल वृत्ति को लूटती हुई विषमता जब आगे फैलती है, तो वह समाज और राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रो मे भेदभाव व पक्षपात की असख्य दीवारे खडी कर देती है और पग-पग पर पतन की खाईयां खोद देती है। जिन क्षेत्रो से वास्तव मे दुर्बलता के क्षणो मे मनुष्य को सम्हलने और उठने का सहारा मिलना चाहिये, वे ही क्षण आज उसकी अपनी ही लगाई हुई आग मे जलते हुए उसकी जलन मे वृद्धि ही कर रहे है।

सहकार के सूत्र मे अतीत से बंधे हुए भारत पर ही यदि दृष्टिपात करे, तो क्या यह स्पष्ट नहीं होगा कि ज्यो-ज्यो सब ओर विषमता पसरती जा रही है, त्यो-त्यो सहकार की कड़ियां ही नहीं टूट रही हैं बल्कि मानवीय सद्गुणो का शनैः शनैः ह्रास भी होता जा रहा है। विषमता के वशीभूत होकर क्या आज सामान्यतया भारतीय जन हृदयहीन, गुणहीन और कर्त्तव्यहीन नहीं होता जा रहा है?

जहा विभिन्न राष्ट्र विषमता के जाल मे ग्रस्त होकर अपने स्वार्थों को अन्तर्राष्ट्रीय हित से ऊपर उठाते जा रहे है, तो उसका स्वाभाविक परिणाम सबके सामने है। वियतनाम-युद्ध, जो अभी-अभी समाप्त हुआ है, क्या मानव सभ्यता के भाल पर सदैव कलंक के रूप मे नहीं बना रहेगा, जहां व्यक्तियो और राष्ट्रो की पशुता ने नंगा नृत्य किया था। युद्ध और विनाश-यह विश्वग विषमता का खुला परिणाम होता है और नित प्रति प्रकट होने वाले परिणामो से स्पष्ट रूप से माना जा सकता है कि व्यक्ति से लेकर विश्व तक समूचे रूप से प्रायः यह विषमता फैली हुई है। इसने

(3) आत्म-दर्शन :

विश्व में मुख्य दो तत्त्व हैं-एक चेतन तत्त्व और दूसरा जड तत्त्व। चेतन तत्त्व स्व-पर-प्रकाश-स्वरूप है और जड तत्त्व उससे भिन्न है। इन दोनों तत्त्वो के सम्मिश्रण से कर्म-युक्त संसारी प्राणी-जगत् है। इसमें व्यवस्थित न्यूनाधिक कलापूर्ण विकासशीलता आत्मा का प्रतीक है और घुणाक्षर-न्याय के तरीके से बनने वाली स्थिति का प्रतीक प्रायः जड तत्त्व है।

सम्यक् आचरण से आत्मा का साक्षात्कार चिन्तन, मनन व स्वानुभूति द्वारा करना आत्म-दर्शन है। इसके लिए निम्नोक्त भावना एवं नियमितता आवश्यक है-

(क) प्रातःकाल सूर्योदय के पहले कम-से-कम एक घण्टा आत्म-दर्शन के लिए निर्धारित करना।

(ख) जो भी घण्टा, जिन मिनिटो से नियुक्त किया जाए, ठीक उन्हीं मिनिटो का हमेशा ध्यान रख कर साधना मे बैठना।

(ग) साधना के समय पापकारी प्रवृत्तियो का निरोध करना और सत्प्रवृत्तियो को आचरण मे लाना।

(घ) समस्त प्राणिवर्ग को आत्मा के तुल्य समझना।

जैसा सुख-दुःख अपने को होता है अर्थात् सुख प्रिय और दुःख अप्रिय लगता है, वैसा ही अन्य प्राणियो को भी होता है। अतः हम किसी को दुःख न दें। सबको सुख हो, इस भावना से अपनी सम्यक् प्रवृत्ति का ध्यान रखना।

किसी भी जीव को हनन करने की भावना रखना अपने आपका हनन करना है। दूसरो के सुख में अपना सुख समझना और कष्ट मे अपना कष्ट समझना परमावश्यक है। इस प्रकार आत्म-दर्शन की भावना को यथास्थान सम्यक् रीति से आगे बढ़ाते रहना चाहिए तथा इन भावनाओ को पुष्ट करने के लिए सत्साहित्य का यथावकाश अध्ययन करना चाहिए।

(4) परमात्म-दर्शन :

रागद्वेष, आदि विकारो के समूल नाशपूर्वक चरम विकास पर पहुंचने वाली आत्मा सही अर्थ मे परमात्म-दर्शन को प्राप्त होती है और परमात्म-दर्शन पद प्राप्त आत्मा ही समग्र आत्मीय तथा अनन्त गुणो का उपयोग करती हुई जगत् मे मंगलमय कल्याण अवस्था की आदर्श स्थिति उपस्थित करती है।

इस विषय मे निरन्तर ध्यान रखते हुए जो व्यक्ति क्रमिक विकास पर चलता है, वह समता-दर्शन की स्थिति से विश्व कल्याण मे महत्त्वपूर्ण योगदान करता है। अतः समता-दर्शन को परिपूर्ण रूप से जीवन मे उतारना चाहिए।

उपर्युक्त चार सूत्र रूप सोपानो को माध्यम बना कर आचार्यश्री अपने प्रवचनो मे समता-समाज की सर्जना के लिए मौलिक प्रकाश डालते है, जिसका सीधा सबध वर्तमान में विषमताजन्य विभीषिका के समाधान से होता है। आचार्य देव सचोट, किन्तु स्पष्ट शब्दो मे फरमाया करते है कि असमानता के नाम से जो सर्वव्यापी विषमता चारो तरफ फैली हुई है, वही जन जीवन मे घृणा, द्वेष, दौर्मनस्य एवं असन्तोष का कारण बनी हुई है। अतः इस स्थिति मे उपराम पाने के लिए समता-दर्शन के माध्यम से समता-समाज का निर्माण नितान्त अपेक्षित है। जन-जन मे व्याप्त विषमता की आग की उपशान्ति के लिए समता-सिद्धान्त-सरिता का शीतल जल ही एक अमोघ उपाय सिद्ध हो सकता है।

समता-सिद्धान्त के प्रतिपादन का मूल उद्देश्य है, विषमताजन्य द्वन्द्वो से उपराम पाना। वर्तमान विषमता की

अग्नि का चित्रण आचार्यश्री के भावों मे ही प्रस्तुत है।

वर्तमान विषमता की विभीषिका :

आज सारे ससार मे विषमता की सर्वग्राही आग धू-धू करके जल रही हे। जहा दृष्टि जाती है, वहीं दिखाई देता है कि हृदय मे अशान्ति, वचन मे विश्रृखलता एव जीवन मे स्वार्थ की विक्षिप्तता ने सव ओर मनुष्यता के कोमल और हार्दिक भावो को आच्छादित कर दिया है। ऐसा लगता हे कि चचलता मे गोते लगाता हुआ मनुष्य का मन भ्रष्टता एव विकृति के गर्त की ओर निरन्तर अग्रसर होता ही चला जा रहा है।

सर्वव्यापी विषमता :

अमावस्या की मध्य रात्रि का अधकार जैसे सर्वव्यापी हो जाता हैं, वेसी ही सर्वव्यापी यह विपमता हो रही है। क्या व्यक्ति के हृदय की आन्तरिक गहराईयो मे, तो क्या वाह्य ससार मे, व्यक्ति से लेकर परिवार, समाज, राष्ट्र एवं समूचे विश्व मे प्राय: यह विपमता फलती जा रही हे-गहराती जा रही हे।

विषभरी यह विपमता सवसे पहले मानव-हृदय की भीतरी परतो मे घुस कर उसे क्षत-विक्षत वनाती है और हृदय की सौजन्यता तथा शालीनता को नष्ट कर देती हैं। जो हृदय समता की रसधारा मे समरस वन कर न केवल अपने भीतर, वल्कि वाहर भी सव ठोर आनन्द की उमग उत्पन्न कर सकता है, वही हृदय विपमता की आग मे जल कर स्वय तो काला-कलूटा वनता ही है, किन्तु उस कालिमा को वाह्य वातावरण मे भी चारो ओर विस्तारित कर देता है।

फेलाव व्यक्ति से विश्व तक :

यह विषमता इस तरह व्यक्ति के हृदय मे पोपण प्राप्त करके जव वाहर फूटती है, तो उसका सवसे पहला आक्रमण परिवार पर होता है क्योकि परिवार ही आधारगत घटक है। परिवार मे जो रक्त-प्रभाव का सहज स्नेह होता है, वह भी विषम विचारो एव वृत्तियो मे पड कर विपाक्त वन जाता है।

परिवार की सहृदयता एवं स्नेहिल वृत्ति को लूटती हुई विपमता जब आगे फैलती है, तो वह समाज और राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रो मे भेदभाव व पक्षपात की असख्य दीवारे खडी कर देती है और पग-पग पर पतन की खाईयां खोद देती है। जिन क्षेत्रो से वास्तव मे दुर्बलता के क्षणो मे मनुष्य को सम्हलने और उठने का सहारा मिलना चाहिये, वे ही क्षण आज उसकी अपनी ही लगाई हुई आग मे जलते हुए उसकी जलन मे वृद्धि ही कर रहे है।

सहकार के सूत्र मे अतीत से बधे हुए भारत पर ही यदि दृष्टिपात करे, तो क्या यह स्पष्ट नही होगा कि ज्यो-ज्यो सब ओर विषमता पसरती जा रही है, त्यो-त्यो सहकार की कडियां ही नही टूट रही है बल्कि मानवीय सद्गुणो का शनै: शनै: ह्रास भी होता जा रहा है। विषमता के वशीभूत होकर क्या आज सामान्यतया भारतीय जन हृदयहीन, गुणहीन और कर्त्तव्यहीन नहीं होता जा रहा है?

जहा विभिन्न राष्ट्र विषमता के जाल मे ग्रस्त होकर अपने स्वार्थों को अन्तर्राष्ट्रीय हित से ऊपर उठाते जा रहे हैं, तो उसका स्वाभाविक परिणाम सबके सामने है। वियतनाम-युद्ध, जो अभी-अभी समाप्त हुआ है, क्या मानव सभ्यता के भाल पर सदैव कलंक के रूप मे नही बना रहेगा, जहां व्यक्तियो और राष्ट्रो की पशुता ने नगा नृत्य किया था। युद्ध और विनाश-यह विश्वग विषमता का खुला परिणाम होता है और नित प्रति प्रकट होने वाले परिणामो से स्पष्ट रूप से माना जा सकता है कि व्यक्ति से लेकर विश्व तक समूचे रूप से प्राय: यह विषमता फैली हुई है। इसने

विश्व के कोने-कोने मे आत्मीयता का मरण-घण्टा बजा दिया है।

बहुरूपी विषमता :

जितने क्षेत्र-उससे कई गुनी भेद की दीवारे-इस विषमता के कितने रूप है-यह जानना भी आसान नही है।

राजनीति के क्षेत्र मे नजर फैलावे, तो लगता है कि सैकडो वर्षों के कठिन संघर्ष के बाद मनुष्य ने लोकतन्त्र के रूप में समानता के कुछ सूत्र बटोरे, किन्तु विषमता के पुजारियो ने मत जैसे समानाधिकार के पवित्र प्रतीक को भी ऐसे व्यवसाय का साधन बना दिया है कि प्राप्त राजनीतिक समानता भी जैसे निरर्थक होती जा रही है। वैसे मत का समानाधिकार साधारण उपलब्धि नही है, इससे स्वस्थ परिवर्तन का चक्र घुमाया जा सकता है। किन्तु देश मे यही चक्र किस दिशा में घुमाया गया और किस तरह घूम रहा है-यह सर्वविदित है।

विषमता के पंक मे से राजनीति का उद्धार तो नही हुआ सो न सही, किन्तु वह तो जब इस दलदल मे गहरी डूबती जा रही है, तब आर्थिक क्षेत्र मे समता लाने के सशक्त प्रयास किये जा सके-यह और भी अधिक कठिन हो गया है। राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत मे आर्थिक प्रगति के सारे दावो के बावजूद इस क्षेत्र की विषमता बेहद बढ़ी है। एक ओर ऐसे भवनो मे ऐश्वर्य तथा विलास के झूलो मे झूलते इठलाते हुए अति अल्पसंख्यक नागरिक तो दूसरी ओर जीवन के आधारभूत आवश्यक पदार्थों साधारण भोजन, वस्त्र एवं निवास से भी वचित, कठिनाईयो एवं कष्टो मे जर्जर बने करोडो नर-कंकालो का विवश और असहाय समूह। यह कैसी दर्दनाक विषमता है?

विज्ञान का विकास और विषमता :

यह कहना सर्वथा उचित ही होगा कि अनियत्रित विज्ञान के विकास ने मानव-जीवन को असतुलित बना दिया है और यह असन्तुलन नित प्रति विषमता को बढ़ाता जा रहा है। विज्ञान जहां वास्तव मे निर्माण का साधन बनना चाहिए, वहां वह उसके दुरुपयोग से विनाश और महाविनाश का साधन बनता जा रहा है।

विज्ञान तो विशेष ज्ञान का नाम है और भला स्वयं ज्ञान और विज्ञान विनाशकारी कैसे बन सकता है? उसे विनाशकारी बनाने वाला है उसका अनियंत्रण अथवा उसका दुष्प्रवृत्तियो के बीच संरक्षण। उस्तरे से हजामत बनाई जाती है, मगर वही अगर बन्दर के हाथ मे पड जाए तो वह उससे किसी का भी गला काट सकता है।

विषमताजन्य समाज मे विज्ञान का जितना विकास हुआ है, वह बराबर बन्दर स्वभावी लोगो के हाथ मे पडता रहा है। आखिर विज्ञान एक शक्ति है, इसके नए-नए अन्वेषण और अनुसधान शक्ति के नये-नये स्रोतो को प्रगट करते है। ये ही स्रोत अगर सदाशयी और त्यागी लोगो के नियंत्रण मे आ जाये तो उनसे समता की ओर गति की जाकर सामूहिक कल्याण की साधना की जा सकती है। परन्तु आज तो यह शक्ति स्वार्थ और भोग के पडो के हाथो में है, जिसका परिणाम है कि तत्त्व अधिक से अधिक शक्तिशाली होकर इस शक्ति का अपनी सत्ता और अपना वर्चस्व बढ़ाने मे प्रयोग कर रहे है।

शक्ति-स्रोतों का असन्तुलन :

वैज्ञानिक शक्तियों का यह दुरुपयोग, सभी क्षेत्रो मे निरन्तर विषमता मे वृद्धि करता जा रहा है। हमारी सस्कृति का जो मूलाधार गुण और कर्म पर टिकाया गया था, वह इस असन्तुलित वातावरण के बीच उखडता जा रहा है। शक्ति-स्रोतों के इस असन्तुलन का सीधा प्रभाव यह दिखाई दे रहा है कि योग्य को योग्य नहीं मिलता और अयोग्य सारा योग्य हड़प जाता है। योग्य हताश होकर निष्क्रिय होता जा रहा है और अयोग्य अपनी अयोग्यता का ताडव

नृत्य कर रहा है।

विलास और विनाश की विषमता :

ससार की बाह्य परिस्थितियो मे विलास और विनाश की विपमता आज पतन के दो अलग-अलग कगारो पर खडी हुई है। विलास की कगार पर खड़ा इसान अट्टहास कर रहा है तो विनाश की कगार पर खडा इन्सान इतना व्यथाग्रस्त है कि दोनो को यह भान नहीं है कि वे किसी भी क्षण पतन की खाई मे गिर सकते ह।

एक विहगावलोकन करे इस विषम दृश्य पर कि स्वार्थ ओर भोग की लिप्सा के पीछे पागलपन किस सीमा तक बढता जा रहा है। भारतीय दर्शन शास्त्रो ने तृष्णा को वेतरणी नदी कहा है, ऐसी नदी जिसका कहीं अन्त नहीं।

तैरते जाइये, तैरते-न कूल, न किनारा। एक परिचमी दार्शनिक ने भी इसी दृष्टि से मनुष्य को उसकी स्वार्थ वृत्ति के कारण भेडिया कहा है। यह वृत्ति जितनी अनियत्रित होती हे, उतनी ही यह विनाश रूपी होती हुई अधिकाधिक भयावह होती जाती है।

वर्तमान युग मे सतोप की सीमाए टूट गई ह ओर वितृष्णा व्यापक हो रही है। जिसके पास कुछ नही है-वह आवश्यकता के मारे कुछ पाना चाहता है, लेकिन जिसके पास काफी कुछ हे, वह भी ओर अधिक पा लेने के लिए और पाते रहने के लिए पागल वना हुआ है। जितना वह पाता है, उसकी तृष्णा उससे कई गुनी अधिक वढती जाती है और फिर सारे कर्त्तव्यो को भूल कर वह ओर अधिक पाना चाहता है। सिर्फ स्वयं के लिए वह पाता रहता है, या यो कहे कि वह लूटता रहता है तो एक शक्तिशाली की लूट का असर हजारो के अभावो में फूटता है। विषमता की दूरिया इसी तरह आज तीखी बनती जा रही है।

आज आदमी धन की लिप्सा मे पागल है, सत्ता की लिप्सा मे मत्त वन रहा है, तो यश और झूठे यश की लिप्सा मे अपने अन्तर को कालिमामय बनाता जा रहा है। सभी जगह सिर्फ अपने लिये वह लेना ही लेना सीख गया है। भोग उसका प्रधान धर्म बन गया है, त्याग से उसकी निष्ठा उठती जा ही है और यही सारी विषमता का मूल है। आज का व्यापार और व्यवसाय इसी कारण नैतिकता की लीक से हट कर शोषण एव उत्पीडन का साधन बनता जा रहा है। धन कम हाथो मे अधिक और अधिक हाथो मे कम-से-कम होता जा रहा है। इसका नतीजा है कि कुछ सम्पन्न लोग विलास की कगार पर इठलाते हे, तो अधिक-संख्य जन अपनी प्रतिभा, अपनी गुणशीलता और अपने सामान्य विकास की बलि चढा कर विनाश की कगार पर खडे हैं।

धन-लिप्सा, सत्ता-लिप्सा मे बदल कर और अधिक आक्रामक बन रही है। आखे मूद कर सत्ता-लिप्सा अपना अणुबम इस तरह गिराती है कि वहा दोषी और निर्दोष के विनाश मे भी कोई भेद नही है। सत्तालिप्सु एक तरह से राक्षस हो जाता है कि उसे अपनी कुर्सी से मतलब-फिर दूसरो का कितना अहित होता है, यह सब उसके लिए बेमतलब रह जाता है। यश-लिप्सा इस परिप्रेक्ष्य मे और अधिक भयानक हो जाती है। ये लिप्साये ही बडा-से-बडा रूप धारण करती हुई आज ससार को विषमतम बनाए हुए है।

विषमता का मूल कहां ?

सारभूत एक वाक्य मे कहा जाये तो इस सर्वव्यापिनी पिशाचनी विषमता का मूल मनुष्य की मनोवृत्ति मे है। जैसे हजारो गज भूमि पर फैले एक वट वृक्ष का बीज राई जितना ही होता है, उसी प्रकार इस विषमता का बीज भी छोटा ही है, किन्तु है कठिन अवश्य। मनुष्य की मनोवृत्ति मे जन्मा और पनपा यह बीज बाह्य और आन्तरिक जगत मे वट वृक्ष की तरह प्रस्फुटित होकर फैलता है और हर क्षेत्र मे अपनी विषमता की शाखाए एव उपशाखाए विस्तारित

करता है।

'समता-दर्शन और व्यवहार' पुस्तक के उपर्युक्त कुछ उद्धरणो से समता-दर्शन का उद्देश्य सुस्पष्ट प्रकाशित हो जाता है। किन्तु किसी भी सिद्धान्त के उद्देश्य प्रतिपादन से ही समस्याओं का समाधान नहीं हो जाता है, चाहे वे उद्देश्य कितने ही सुंदर क्यों न हो? अत: उद्देश्य के साथ विधेय एव उसके क्रियात्मक पक्ष को उजागर करना भी सिद्धान्त की मौलिक प्रतिपादना के लिए आवश्यक है।

प्रस्तुत है आचार्य देव के भावो मे ही उपर्युक्त विषमता का स्थायी एवं रचनात्मक समाधान।

एक जटिल प्रश्न?

वर्तमान विषमता की विभीषिका में इसलिए यह जटिल प्रश्न पैदा होता है कि क्या व्यक्ति और समाज के जीवन को इस विषमता के चहुंमुखी नागपाश से मुक्त बनाया जा सकता है? क्या समग्र जीवन को न सिर्फ अन्तर्जगत में, बल्कि बाहर की दुनिया में भी समता, सहयोगिता और सदाशयता पर खडा किया जा सकता है? और क्या उल्लास, उत्साह और उन्नति के द्वार सभी के लिए समान रूप से खोले जा सकते है?

प्रश्न उत्तर मांगता है :

प्रश्न गहरा है-जटिल भी है, किन्तु प्रबुद्ध वर्ग के सद् विवेक पर चोट करने वाला है-काश, कि इसे वैसी ही गहरी अनुभूति से समझने और अपनी कार्य-शक्ति को कर्मठ बनाने का यत्न किया जाये।

यह प्रश्न उत्तर मांगता है-समाधान चाहता है। यह मांग गूंजती है-उत्तर दीजिये, समाधान कीजिये अथवा अपने और अपने समस्त संगठनों के भविष्य को खतरे मे डालने के लिए तैयार हो जाइये।

इस गूंज को सुनिये और उत्तर तथा समाधान खोजिये। प्रश्न विषमता का है-उत्तर समता में निहित है।

समतामय जीवन :

समता शब्द का अर्थ भिन्न-भिन्न रूपो मे लिया जाता है। वैसे मूल शब्द सम है, जिसका अर्थ समान होता है। अब यह समानता जीवन के विभिन्न क्षेत्रों मे किस-किस रूप मे हो-इसका विविध विश्लेषण किया जा सकता है।

सबसे पहले आध्यात्मिक क्षेत्र की समानता पर सोचे तो अपने मूल स्वरूप की दृष्टि मे सारी आत्माएं समान होती है-चाहे वह एकेन्द्रिय याने अविकसित प्राणी की आत्मा हो या सिद्ध भगवान् की पूर्ण विकसित आत्मा। दोनो में वर्तमान समय की जो विषमता है, वह कर्मजन्य है। कुविचारो एवं कुप्रवृत्तियो का मैला अविकसित अवस्था मे आत्मा के साथ संलग्न होने से उसका स्वरूप भी मैला हो जाता है और जैसे मैले दर्पण मे प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई देता, उसी तरह मैली आत्मा भी श्रीहीन बनी रहती है। तो आध्यात्मिक समता यह है कि इस मैल को दूर करके आत्मा को अपने मूल निर्मल स्वरूप मे पहुंचाया जाय।

एक-एक आत्मा इस तरह समता की ओर मुड़े तो दूसरी ओर परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व मे भी एक ऐसा समतामय वातावरण बनाया जाय जिसके प्रभाव से समूहगत समता भी सशक्त बन कर समग्र जीवन को समतामुखी बना दे। राजनीति मे समानता, अर्थनीति में समानता और समाज नीति मे समानता के जब पग उठाए जायेंगे और उसे अधिक-से-अधिक वास्तविक रूप दिया जायेगा तो समता की द्विधारा बहेगी-भीतर से बाहर और बाहर से भीतर। तब भौतिकता और आध्यात्मिकता संघर्षशील न रह कर एक-दूसरे की पूरक बन जायेगी जिसका समन्वित रूप जीवन के बाह्य और अन्तर को समतामय बना देगा।

यह परिवर्तन समाजवाद या साम्यवाद से आवे अथवा अन्य विचार के क्रियान्वयन से किन्तु लक्ष्य हमारे सामने स्पष्ट होना चाहिए कि मानवीय गुणो की अभिवृद्धि के साथ सासारिक व्यवस्था मे अधिकाधिक समता का प्रवेश होना और ऐसी समता का जो मानव जीवन के आभ्यन्तर को न सिर्फ सन्तुलित रखे, बल्कि उसे सयम-पथ पर चलने के लिए प्रेरित भी करे। धरातल जब समतल ओर साफ होता है तो कमजोर आदमी भी उस पर ठीक व तेज चाल से चल सकता है, किन्तु इसके विपरीत अगर धरातल ऊवड-खाबड और कटीला-पथरीला हो तो मजवूत आदमी को भी उस पर भारी मुश्किलो का सामना करना पडेगा।

व्यक्ति की सक्षमता का तालमेल यदि सामाजिक विकास के साथ बैठ जात े तो व्यक्ति की क्षमता भी कई गुना बढ जाती है।

व्यक्ति और समाज के सबध :

यो देखा जाये तो समाज कुछ भी नहीं है। व्यक्ति-व्यक्ति मिलकर ही तो समाज की रचना करते हे, फिर व्यक्ति से विलग समाज का अस्तित्व कहा है? किन्तु सभी के अनुभव मे आता होगा कि व्यक्ति की शक्ति प्रत्यक्ष दीखती है, फिर भी समूह की शक्ति उससे ऊपर होती हैं, जो व्यक्ति की शक्ति को नियत्रित भी करती है। एक व्यक्ति एक सगठन की स्थापना करता है-उसके नियमोपनियम बनाता हे तथा उनके अनुपालन के लिए दण्ड-व्यवस्था भी कायम करता है। एक तरह से सगठन का वह जनक है, फिर भी क्या वह स्वयं ही नियम-भग करके दंड से बच सकता है यही शक्ति समाज की शक्ति कहलाती है। जिसे व्यक्ति स्वेच्छा से वरण करता है। राष्ट्रीय सरकारो के सविधान मे यही परिपाटी होती है।

जब-जब व्यक्ति स्वस्थ धारा से अलग हट कर निरकुश होने लगता है-शक्ति के मद मे झूम कर अनीति पर उतारू होता है, तब-तब यही सामाजिक शक्ति उस पर अकुश लगाती है। प्रत्येक व्यक्ति यह अनुभव करता होगा कि कई बार वह कुकुर्म करने का निश्चय करके भी इसी विचार से रुक जाता है कि लोग क्या कहेगे : ये लोग चाहे परिवार के हो-पडौस के हो, मोहल्ले, गाव, नगर या देश-विदेश के हो, इन्हे ही समाज मान लीजिए।

व्यक्ति स्वय से नियत्रित हो-व्यक्ति समाज से नियत्रित हो, ये दोनो परिपाटियां समता लाने के लिए सक्रिय बनी रहनी चाहिए। यही व्यक्ति एव समाज के सवधो की सार्थकता होगी कि विषमता को मिटाने के लिए दोनो ही नियंत्रण सुदृढ बने।

समता मानव मन के मूल में है :

प्रत्येक मानव अपने जीवन को सुखी बनाना चाहता है और उसके लिए प्रयास करता है, किन्तु आज की दुविधा यह है कि सभी तरह की विषमताओ के बीच सपन्न भी सुखी नही है, विपन्न भी सुखी नहीं और शान्ति-लाभ तो जैसे एक दुष्कर स्थिति बन गई है। इसका कारण यह है कि मानव अपने साध्य को समझने के बाद भी उसके प्रतिकूल साधनो का आश्रय लेकर जब आगे बढता है तो बबूल उगाने से आम कहा फलेगा?

समता मानव मन के मूल मे है-उसे भुला कर जब वह विपरीत दिशा मे चलता है तभी दुर्दशा आरम्भ होती है।

एक दृष्टान्त से इस मूल प्रवृत्ति को समझिये। चार व्यक्तियो को एक साथ खाने पर बिठाया गया। पहले की थाली मे हलुवा, दूसरे की थाली मे लप्सी, तीसरे की थाली मे सिर्फ गेहू की रोटी तो चौथे की थाली मे बाजरे की

रोटी परोसी गई, तो क्या चारों साथ बैठकर शान्तिपूर्वक खाना खा सकेगे? ऊपर वाला नीचे वाले के साथ घम
ऐंठेगा तो नीचे वाला भेदभाव के दर्द से कराहेगा। इसके विरुद्ध सभी की थालियों मे केवल बाजरे की रोटी
तो सभी प्रेम से खाना खा लेगे। इसलिए गहरे जाकर देखे, तो पदार्थ मनुष्य के सुख और शान्ति के कारण नहीं
बल्कि उसके मन की विचारणा ही अधिक सशक्त कारण होती है। समता का व्यवहार करे-ऐसी जागृति होन
अनिवार्य है।

समता का मूल्यांकन :

समता या समानता का कोई यह अर्थ ले कि सभी लोग एक ही विचार के या एक से शरीर के बन जावे अ
बिल्कुल एक-सी ही स्थिति मे रखे जावे तो यह न संभव है और न ही व्यावहारिक। एक ही विचार हो तो वि
आदान-प्रदान, चिन्तन और संघर्ष के विचार का विकासशील प्रवाह ही रुक जाएगा। इस तरह आकृति, शरीर अथ
संस्कारो में भी समानपने की सृष्टि संभव नही।

समता का अर्थ है कि पहले समतामय दृष्टि बने तो यही दृष्टि सौम्यता पूर्वक कृति मे उतरेगी। इस तरह सम
समानता की वाहक बन सकती है। आप ऐसे परिवारो को लीजिये, जिसमे पुत्र अर्थ या प्रभाव की दृष्टि से विभि
स्थितियो मे हो सकते हैं, किन्तु सब पर पिता की जो दृष्टि होगी, वह समतामय होगी। एक अच्छा पिता ऐसा
करता है। उस समता से समानता भी आ सकेगी।

समता कारण रूप है, तो समानता कार्यरूप : क्योकि समता मन के धरातल पर जन्म लेकर मनुष्य को भावुक
बनाती है तो वही भावुकता फिर मनुष्य के कार्यों पर असर डाल कर उसे समान स्थितियो के निर्माण मे सक्रि
सहायता देती है। जीवन में जब समता आती है तो सारे प्राणियो के प्रति समभाव का निर्माण होता है। तब अनुभू
यह होती है कि बाहर का सुख हो या दुःख, दोनो अवस्थाओं मे समभाव रहे-वह स्वयं साथ-के-साथ की स्थिति
अन्य सभी प्राणियों को आत्म-तुल्य मान कर उनके सुख-दुःख में सहयोगी बने-यह दूसरो के साथ व्यवहार करने
की स्थिति। ये दोनो स्थितियां जब पुष्ट बनती है, तो यह मानना चाहिए कि जीवन समतामय बना रहेगा। कारण कि
सही पुष्ट भावना आचरण में उतर कर व्यक्ति से समाज और समाज से व्यक्ति की दो राहो पर विषमता को नष्ट
करती हुई समता की सृष्टि करती है।

समता का आविर्भाव कब ?

समता का श्रीगणेश चूंकि मन से होना चाहिए, इसलिए मन की दो वृत्तिया प्रमुख होती है-राग और द्वेष। ये
दोनो विरोधी वृत्तियां हैं। जिसे आप चाहते है उसके प्रति राग होता है। राग से मोह और पक्षपात जन्म लेता है। जिसे
आप नही चाहते उसके प्रति द्वेष आता है। द्वेष से कलुष, प्रतिशोध और हिंसा पैदा होती है। ये दोनो वृत्तिया मन को
चंचल बनाती रहती है तथा मनुष्य को स्थिरचित्ती एवं स्थिरधर्मी बनने से रोकती है। चंचलता से विषमता बनती और
बढ़ती है। मन विषम, तो दृष्टि विषम होगी और उसकी कृति भी विषम होगी।

समता का आविर्भाव तभी संभव होगा, जब राग और द्वेष को घटाया जाय। जितनी निरपेक्ष वृत्ति पनपती है,
समता संगठित और संस्कारित बनती है। निरपेक्ष दृष्टि मे पक्षपात नही रहता और जब पक्षपात नहीं है तो वहा उचित
के प्रति निर्णायक वृत्ति पनपती है तथा गुण और कर्म की दृष्टि से समता अभिवृद्ध होती है। अगर एक पिता के मन
मे एक पुत्र के प्रति राग और दूसरे के प्रति द्वेष हो, तो वह स्थिति समता-जीवन की द्योतक नही है। मे सबकी आखो
मे प्रफुल्लता देखना चाहूं-मै किसी की आंख मे आंसू नहीं देखना चाहूं-ऐसी वृत्ति जब सचेष्ट बनती है तो मानना

चाहिए कि उसके मन मे समता का आविर्भाव हो रहा है।

बाह्य समानता के लिए प्रयास करने के पूर्व अन्तर की विषमता नहीं मिटाई ओर कल्पना कर ले कि वाहर की विषमता किसी भी बल-प्रयोग से एक वार मिटा भी दी गई हो, तो भी विषमतामय अन्तर के रहते वह समानता स्थायी नही रह सकेगी। एक ध्वजा, जो उच्च गगन मे वायु मण्डल मे लहराती है-उसकी कोई दिशा नहीं होती। जिस दिशा का वायु वेग होता है, वह उधर ही मुड जाती हे, किन्तु ध्वजा का जो दण्ड या स्तूप होता है, वह सदा स्थिर रहता है। तो समता के विकास के लिए दण्ड या स्तूप वनने का प्रयास करे, जो स्थिर ओर अटल हो। फिर समता का सूक्ष्मतम विकास होता चला जायेगा।

अन्तर्दृष्टि और बाह्य दृष्टि :

समता के दो रूप हे-दर्शन ओर व्यवहार। अन्तर के नेत्रो की प्रकाशमय दृष्टि से देख कर जीवन मे गति करना समता दर्शन का मुख्य भाव है ओर यह जो गति ह उससे समता के व्यवहार का स्वरूप स्पष्ट होता है। अत: अतर और बाह्य दोनो दृष्टियो से समतापूर्ण जीवन का सचालन करने से सार्थक जीवन की उपलव्धि हो सकती है। दर्शन की गति व्यापक नहीं हो, तो व्यवहार मे भी एकरूपता नहीं आती हे। इसके लिए अन्तर्दृष्टि और बाह्य दृष्टि मे सम्यक् समन्वय होना चाहिए।

आप एक मकान को देखते हे। उसमे कहीं पत्थर होता हे कहीं चूना, सीमेट, लोहा, लकडी आदि। साथ ही उसमे रहने या बैठने वालो की स्थिति भी एक-सी नही होती हे। अलग-अलग आकृतिया, वेशभूषा आदि। फिर भी यदि अन्तर्दृष्टि मे सबके समता आ जाय तो इन विभिन्नताओ के वावजूद सारा समूह एकरूपता की अनुभूति ले सकता है। बाह्य दृष्टि की विषमता इसी भाव एव विचार-समता के दृढ आधार पर समाप्त की जा सकती है।

समता दर्शन का व्यावहारिक रूप .

अधिकाश मे दार्शनिक सिद्धान्त विचारो तक सीमित रह जाते हे, किन्तु विचार जब तक आचरण मे ढलें नही, तब तक उनकी उपयोगिता सदिग्ध ही बनी रहती है। हम देखते हैं दर्शन-क्षेत्र जितना विचारो मे परिष्कृत हुआ, उतना आचार मे नहीं। इसीलिए उसकी उपयोगिता आज उपेक्षा का कारण बनी हुई है। आचार्य देव ने इस दृष्टि पर अत्यन्त गभीर मनन एव मथन किया और पाया कि समता दर्शन भी यदि विचारो का एक कोष अथवा हवाई महल ही बना रहा, तो उसकी कोई उपयोगिता नही रह जायेगी। किसी भी सिद्धान्त की व्यावहारिक कसौटी यही है कि सामान्य जनजीवन तथा उसकी सामयिक समस्याओ पर उसका क्या और कैसा प्रभाव पडता है, साथ ही उन दार्शनिक सिद्धान्तो का सामान्य जन चेतना अपने आचरणो के द्वारा किस रूप मे अनुसरण कर सकती है।

इसी दृष्टिकोण से समता-दर्शन के सैद्धान्तिक पक्ष के साथ उसके रचनात्मक रूप अर्थात् क्रिया (आचरण) पक्ष पर भी आचार्य श्री ने पर्याप्त प्रकाश डाला है।

समता दर्शन अपने नवीन परिप्रेक्ष्य में :

समता, साम्य या समानता मानव जीवन एव मानव समाज का शाश्वत दर्शन है। आध्यात्मिक या धार्मिक क्षेत्र हो अथवा आर्थिक, राजनीतिक या सामाजिक-सभी का लक्ष्य समता है, क्योकि समता मानव मन के मूल मे है। इसी कारण कृत्रिम विषमता की समाप्ति और समता की अवाप्ति सभी को अभीष्ट होती है। जिस प्रकार आत्माएं मूल मे समान होती है, किन्तु कर्मों का मैल उनमे विभेद पैदा करता है, वैसे ही मानव-सम्बन्धो मे भी विषमता एव विकार

उत्पन्न होते है। इन्हे संयम और नियम द्वारा समान बनाया जा सकता है। उसी प्रकार समग्र मानव समाज मे भी स्वस्थ नियम-प्रणाली एवं सुदृढ़ संयम की सहायता से समाजगत समता का प्रसारण किया जा सकता है।

आज जितनी अधिक विषमता है, समता की मांग भी उतनी ही अधिक गहरी है। काश, कि हम उसे सुन और महसूस कर सके तथा समता-दर्शन के विचार को व्यापक व्यवहार मे ढाल सकें। विचार पहले और बाद में उस पर व्यवहार-यही क्रम सुव्यवस्था का परिचायक होता है। वर्तमान विषमता के मूल मे सत्ता व सम्पत्ति पर व्यक्तिगत या पार्टीगत लिप्सा की प्रबलता ही विशेष रूप से कारणभूत है और यही कारण सच्ची मानवता के विकास मे बाधक है। समता ही इसका स्थायी व सर्वजन हितकारी निराकरण है।

समता दर्शन का लक्ष्य है कि समता, विचार में हो, दृष्टि और वाणी मे हो तथा समता आचरण के प्रत्येक चरण में हो। वह समता जीवन के अवसरो की प्राप्ति मे होगी, सत्ता और सम्पत्ति के अधिकार मे होगी, वह व्यवहार के समूचे दृष्टिकोण मे होगी। समता मनुष्य के मन, तो समता समाज के जीवन मे। समता भावना की गहराइयो मे तो, समता साधना की ऊचाईयो मे। प्रगति के ऐसे उत्कट स्तरो पर फिर समता के सुप्रभाव से मनुष्यत्व को क्या-ईश्वरत्व को भी उपलब्ध और स्थापित किया जा सकता है।

समता दर्शन का नवीन परिप्रेक्ष्य :

युग बदलता है, तो परिस्थितियां बदलती है, व्यक्तियो के सहजीवन की प्रणालियां बदलती है, तो उनके विचार और आचार के तौर-तरीके मे तदनुसार परिवर्तन आता है। यह सही है कि शाश्वत तत्त्व मे एवं मूल व्रतो मे परिवर्तन नहीं होता। सत्य ग्राह्य है, तो वह हमेशा ग्राह्य ही रहेगा। किन्तु सत्य प्रकाशन के रूपो मे युगानुकूल परिवर्तन होना स्वाभाविक है। मानव समाज स्थगित नहीं रहता, बल्कि निरन्तर गति करता रहता है। गति का अर्थ होता है एक स्थान पर टिके नहीं रहना और एक स्थान पर टिके नहीं रहे तो परिस्थितियो का परिवर्तन अवश्यभावी है।

मनुष्य एक चिन्तनशील और विवेकशील प्राणी है। वह प्रगति भी करता है, तो विगति भी। किन्तु यह सत्य है कि वह गति अवश्य करता है। इसी गति-चक्र में परिप्रेक्ष्य भी बदलते रहते है। जिस दृष्टि से एक तत्त्व या पदार्थ को कल देखा था-शायद समय, स्थिति आदि के परिवर्तन से वही दृष्टि आज उसे कुछ भिन्न रूप मे पायेगी। कोण भी तो देश, काल और भाव की अपेक्षा से बदलते रहते है। अत: स्वस्थ दृष्टिकोण यह होगा कि परिवर्तन के प्रवाह को भी समझा जाय तथा परिवर्तन के प्रवाह मे शाश्वतता तथा मूल व्रतो को कदापि विस्मृत न होने दिया जाय। दोनो का समन्वित रूप ही श्रेयस्कर होता है।

इसी दृष्टिकोण से समता-दर्शन को भी आज हमे उसके नवीन परिप्रेक्ष्य मे देखने एव उसके आधार पर अपनी आचरण विधि निर्धारित करने में अवश्य ही जिज्ञासा रखनी चाहिए। इस अध्याय मे आगे इस जिज्ञासा से विचार किया जा रहा है।

समता के समरस स्वर :

वर्तमान विषमता की कर्कश ध्वनियों के बीच आज साहस करके समता के समरस स्वरो को भी सभी दिशाओ मे गुंजित करने की आवश्यकता है। सम्पूर्ण मानव समाज ही नही, समूचा प्राणी समाज भी इन स्वरो मे आह्लादित हो उठेगा। जीवन के सभी क्षेत्रों में फैली विषमता के विरुद्ध मनुष्य को संघर्ष करना ही होगा, क्योंकि मनुष्यता का इस विषम वातावरण मे निरन्तर ह्रास होता जा रहा है।

यह ध्रुव सत्य है कि मनुष्य गिरता, उठता और बदलता रहेगा, किन्तु समूचे तौर पर मनुष्यता कभी समाप्त नहीं

हो सकेगी और आज भी मनुष्यता का अस्तित्व डूबेगा नहीं। वह सो सकती है, मर नहीं सकती और अब समय आ गया है, जब मनुष्यता की सजीवता लेकर मनुष्य को उठना होगा, जागना होगा और क्रान्ति की पताका को उठा कर परिवर्तन का चक्र घुमाना होगा। क्रांति यही कि वर्तमान विषमता जन्य सामाजिक मूल्यो को हटाकर समता के नये मानवीय मूल्यो की स्थापना की जाय। इसके लिए प्रबुद्ध एव युवा वर्ग को विशेष रूप से आगे आना होगा और व्यापक जागरण का शख फूकना होगा जिससे समता के समरस स्वर उद्भूत हो सके।

जीवन-दर्शन की क्रियाशील प्रेरणा :

क्रियाहीन ज्ञान पंगु होता है, तो ज्ञानहीन क्रिया निरर्थक। जानना, मानना और करना का सतत क्रम ही जीवन को सार्थक बनाता है। जानने को वास्तविकता का ज्ञान कर ले और उस जाने हुए को चिन्तन की कसौटी पर कस कर खरा भी पहचान ले और उसके बाद करने के नाम पर निष्क्रियता धार ले, तो उससे तो कुछ बनने वाला नहीं है। यह दूसरी बात है कि सही जानने और मानने के बाद करने की सबल प्रेरणा जागती ही है। सम्यग् ज्ञान और सम्यग् दर्शन का बल सम्यक् चरित्र का अनुप्रेरक अवश्य ही बनता है, फिर भी कर्मठता का तीव्र अनुभव उत्पन्न होना ही चाहिए।

सिद्धान्त भी वही प्रेरणोत्पादक कहलाता ह, जो तदनुकूल कार्य क्षमता को जागृत करता है। जीवन निर्माण का यही मूल मत्र होता है। ज्ञान और क्रिया की सयुक्त शक्ति ही मनुष्य को बन्धनो से मुक्त करती है। चाहे वे बन्धन कैसे भी हो, विषमता या तज्जन्य विकारो के ही क्यो न हो, इस शक्ति के सामने वे कभी भी टिके नहीं रह सकते हैं।

दृढ एव अटल सकल्प के साथ जब इस शक्ति का पग आगे बढता है, तो विषमता से मुक्ति भी सहज बन जाती है। व्यक्ति का अटल सकल्प अपने क्रम मे परिवार, समाज, राष्ट्र और समूचे विश्व की सकल्प शक्ति को प्राणवान बनाता है और यही सामूहिक प्राण शक्ति समाजगत प्रभाव लेकर ज्ञान एव क्रियाहीन व्यक्तियो को सावधान बनाती है। व्यक्ति के जागने से विकास का विशिष्ट स्तर बनता है, तो समाज के जागने से सभी व्यक्तियो मे विकास का सामान्य स्तर निर्मित होता है।

समतामय आचरण के 21 सूत्र :

समतामय आचरण के अनेकानेक पहलू एव रूप हो सकते है, किन्तु सारे तत्त्वो एवं परिस्थितियो को समन्वित करके उसके निचोड मे इन 21 सूत्रो की रचना इस उद्देश्य से की गई है कि आचरण के पथ पर इन्हे पकड कर समता की गहन साधना आरम्भ की जा सकती है। इन 21 सूत्रो का समायोजन इस भाति किया गया है कि वे मानव के अन्तर्बाह्य को समुज्ज्वलित करने के साथ ही जगत् की आन्तरिक एव बाह्य पीडाओ का निराकरण कर सके। इनको आधार बना कर चलने से जहा व्यष्टि को आत्म-साक्षात्कार तक पहुंचाया जा सकता है, वहीं समष्टिगत जीवन मे शान्ति, सद्भाव एव समत्व की स्थापना हो सकती है। यह समझना चाहिये कि यदि समुच्चय रूप से एक समता-साधक इन 21 सूत्रो को आधार मानकर सक्रिय बनता है, तो वह साधना के उच्चतर स्तरों पर सफलता प्राप्त कर सकता है। ये 21 सूत्र इस प्रकार है :

(1) ग्रामधर्म, नगरधर्म, राष्ट्रधर्म आदि की सुव्यवस्था अर्थात् तत्सम्बन्धी सामाजिक (नैतिक) नियमो का पालन करना। उसमे कोई कुव्यवस्था पैदा नही करना एव कुव्यवस्था पैदा करने वालों का सहयोगी नहीं बनना।

(2) अनावश्यक हिंसा का परित्याग करना तथा आवश्यक हिसा की अवस्था मे भी भावना तो व्यक्ति, परिवार,

समाज व राष्ट्र आदि की रक्षा की रखना तथा विवशता से होने वाली हिंसा में लाचारी अनुभव करना, न कि प्रसन्नता।

(3) झूठी साक्षी नही देना। स्त्री, पुरुष, पशु, भूमि, धन आदि के लिए झूठ नहीं बोलना।

(4) वस्तु में मिलावट करके धोखे से नहीं बेचना।

(5) ताला तोडकर, चाबी लगाकर तथा सेंध लगा कर वस्तु नही चुराना। किसी की अमानत को हजम नहीं करना।

(6) परस्त्री का त्याग करना, स्व-स्त्री के साथ भी अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य का पालन करना।

(7) व्यक्ति, समाज व राष्ट्र आदि के प्रति दायित्व-निर्वाह के आवश्यक अनुपात से अतिरिक्त धन-धान्य पर अधिकार नही रखना। आवश्यकता से अधिक धन-धान्य हो तो ट्रस्टी बन कर उसके यथा आवश्यक सम-वितरण की भावना रखना।

(8) लेन-देन और व्यवसाय आदि की सीमा एव मात्रा का अपनी सामर्थ्य के अनुसार मर्यादा रखना।

(9) स्वयं के, परिवार के, समाज के एवं राष्ट्र के चरित्र में कलंक लगाने वाला कोई भी कार्य नहीं करना।

(10) आध्यात्मिक जीवन के निर्माणार्थ नैतिक संचेतना एवं तदनुरूप सत्य प्रवृत्ति का ध्यान रखना।

(11) मानव जाति मे गुणकर्म के अनुसार वर्गीकरण पर श्रद्धा (विश्वास) रखते हुए किसी भी व्यक्ति से घृणा व द्वेष नही रखना।

(12) संयम की मर्यादाओं का पालन करना एव अनुशासन को भंग करने वालो को अहिंसक-असहयोग के तरीके से सुधारना, परन्तु द्वेष की भावना न लाना।

(13) प्राप्त अधिकारो का दुरुपयोग नहीं करना।

(14) कर्त्तव्य-पालन का पूरा ध्यान रखना, लेकिन प्राप्त सत्ता मे आसक्त (लोलुप) नहीं होना।

(15) सत्ता और सम्पत्ति को मानव-सेवा का साधन मानना न कि साध्य।

(16) सामाजिक व राष्ट्रीय चरित्र-पूर्वक भावात्मक एकता को महत्त्व देना।

(17) जनतत्र का दुरुपयोग नहीं करना।

(18) दहेज, बींटी, तिलक, टीका आदि की मागनी, सौदेबाजी तथा प्रदर्शन नहीं करना।

(19) सादगी मे विश्वास रखना और बुरे रीति-रिवाजो का परित्याग करना।

(20) चरित्र-निर्माण पूर्वक धार्मिक शिक्षण पर बल देना एवं नित्य प्रति कम से कम एक घण्टा धार्मिक क्रियात्मक स्वाध्याय, चिंतन, मनन करना।

(21) समता दर्शन के आधार पर सुसमाज-व्यवस्था मे विश्वास रखना।

उपर्युक्त 21 सूत्रो पर गंभीर चिन्तनपूर्ण हृदयस्पर्शी विस्तृत विवेचना श्रद्धेय आचार्यश्री के पावन प्रवचनो मे उपलब्ध होती है। ग्रन्थ-विस्तार के भय से उसे यहां प्रस्तुत नही किया जा रहा है।

समता दर्शन : सामाजिक परिप्रेक्ष्य में :

इस प्रकार समता-दर्शन के सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक पहलू को स्पष्ट करने के पश्चात् उसके सामाजिक रूप

को भी एक सुनियोजित क्रम मे प्रस्तुत किया गया है-समता-समाज-रचना के रूप मे।

प्रश्न है कि समाज का प्रत्येक घटक समता-दर्शन को अपने आचरण के आधार पर जीवन मे किस प्रकार आत्मसात् कर सकता है तथा तद्द्वारा समता-समाज का निर्माण किस रूप मे हो सकता है। प्रारम्भ मे समता साधको की योग्यता एवं शक्ति के अनुसार उन्हे तीन श्रेणियो मे विभाजित किया गया है, तदनन्तर उसके सामाजिक सगठनात्मक रूप को प्रस्तुत किया गया है। समता-दर्शन के इस सामाजिक पहलू को आचार्यश्री के भावो मे ही समझाने का यहां विनम्र प्रयास है।

आचरण की आराधना के तीन चरण :

साधुत्व से पूर्व स्थिति मे समता-साधक की साधना के तीन चरणो या सोपानो का इस हेतु निर्धारण किया जा रहा है, जिससे साधक को स्वय प्रतीति हो तथा समाज मे उसकी पहचान हो कि समता की साधना मे वह किस स्तर पर चल रहा है। इस प्रतीति और पहचान से साधक के मन मे उन्नति की आकाक्षा तीव्र वनी रहेगी। ये तीन चरण निम्न हैं :

(1) समतावादी, (2) समताधारी, (3) समतादर्शी।

समतावादी की पहली श्रेणी :

पहली एव प्रारभिक श्रेणी उन समता-साधको की है, जो समता-दर्शन मे गहरी आस्था, शोध की जिज्ञासा एव अपनी परिस्थितियो की सुविधा से समता के व्यवहार मे सचेष्ट होने की इच्छा रखते हो। पहली श्रेणी वालो को समतावादी इस कारण कहा है कि वे समता के दर्शन एव व्यवहार-पक्षो का सर्वत्र समर्थन करने वाले एव सबके समक्ष 21 सूत्री एवं तीन चरणो की श्रेष्ठता प्रतिपादित करने वाले होगे और किन्हीं अशों मे आचरण का श्रीगणेश कर चुके होगे। ऐसे साधको के लिए निम्न प्रारम्भिक नियम आचरणीय हो सकते हे-

(1) विश्व मे रहने वाले समस्त प्राणियो मे समता की मूल स्थिति को स्वीकार करना एव गुण तथा कर्म के अनुसार ही उनका वर्गीकरण मानना। अन्य सभी विभेदो को अस्वीकार करना और गुण-कर्म के विकास से व्यापक समतापूर्ण स्थिति वनाने का संकल्प लेना।

(2) समस्त प्राणिवर्ग का स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकारना तथा अन्य प्राणियो के कष्ट-क्लेश को स्व-कष्ट मानना।

(3) पद को महत्त्व देने के स्थान पर सदा कर्त्तव्यो को महत्त्व देने की प्रतिज्ञा करना।

(4) सप्त कुव्यसनो को धीरे-धीरे ही सही पर त्यागते रहने की दिशा मे आगे बढना।

(5) प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व कम से कम एक घण्टा समय नियमित रूप से समता-दर्शन के स्वाध्याय, चिन्तन एवं समालोचन मे व्यतीत करना।

(6) कदापि आत्मघात न करने एवं प्राणि-रक्षा करने का सकल्प लेना।

(7) सामाजिक कुरीतियो को त्याग कर विषमता जन्य वातावरण मिटाना तथा समतामयी नई परम्पराए ढालना।

सक्रिय, सो समताधारी :

समता के दार्शनिक एव व्यावहारिक धरातल पर जो दृढ चरणो से चलना शुरू कर दे, उसे समताधारी की दूसरी उच्चतर श्रेणी मे लिया जाय। समताधारी दर्शन के चारो सोपानो को हृदयगम करके 21 सूत्रो पर व्यवहार करने

मे सक्रिय बन जाता है। आशय है कि समतामय आचरण की सर्वांगीणता एवं सम्पूर्णता की ओर जब साधक गति करने लगे तो उसे समताधारी कहा जाय। समताधारी निम्न अग्रगामी नियमो का अनुपालन करे-

(1) अपने विषमताजन्य विचारों, संस्कारों एवं आचारो को समझना तथा विवेकपूर्वक उन्हे दूर करना। अपने आचरण से किसी को.भी क्लेश न पहुंचाना व सबसे सहानुभूति रखना।

(2) द्रव्य, सम्पत्ति तथा सत्ता-प्रधान व्यवस्था के स्थान पर समतापूर्ण चेतना एवं कर्त्तव्यनिष्ठा को मुख्यता देना।

(3) अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह एवं अनेकान्तवाद के स्थूल नियमो का पालन करना, उनकी मर्यादाओं में उच्चता प्राप्त करना एवं भावना की सूक्ष्मता तक पैठने का विचारपूर्वक प्रयास करते रहना।

(4) समस्त जीवनोपयोगी पदार्थों के सम-वितरण मे आस्था रखना तथा व्यक्तिगत रूप से इन पदार्थो का यथाविकास, यथायोग्य जन-कल्याणार्थ परित्याग करना।

(5) परिवार की सदस्यता से लेकर ग्राम, नगर, राष्ट्र एव विश्व की सदस्यता को निष्ठापूर्वक आत्मीय दृष्टि एवं सहयोगपूर्ण आचरण से अपने उत्तरदायित्वो के साथ निभाना।

(6) जीवन मे जिस किसी पद पर या कार्य क्षेत्र मे रत हो, उसमे भ्रष्टाचार से मुक्त होकर समताभरी नैतिकता एवं प्रामाणिकता के साथ कुशलता से कार्य करना।

(7) स्व-जीवन में संयम को तो सामाजिक जीवन में सर्वदा नियम को प्राथमिकता देना एवं अनुशासित बनाना।

साधक की सर्वोच्च सीढ़ी-समतादर्शी :

समतादर्शी की श्रेणी मे साधक का प्रवेश तब माना जाय, जब वह समता के लिए बोलने और धारने से आगे बढ़ कर संसार को समतापूर्ण बनाने व देखने की दृष्टि और कृति प्राप्त करता है। तब वह साधक व्यक्ति के व्यक्तित्व से ऊपर उठ कर एक समाज और संस्था का रूप ले लेता है। उसका लक्ष्य परिवर्तित निजत्व को व्यापक परिवर्तन में समाहित कर लेना बन जाता है। ऐसा साधक साधुत्व के सन्निकट पहुंच जाता है, जहां वह अपने स्वहित को भी परहित मे विलीन कर देता है और समाज मे सर्वत्र समता लाने के लिए जूझने लग जाता है। वह समता का वाहन बनने के बजाय, समता का वाहक बन जाता है। समतादर्शी निम्न उच्चस्थ नियमो को अपने जीवन मे रमा ले-

(1) समस्त प्राणिवर्ग को निजात्मा के तुल्य समझना व आचरना तथा समग्र आत्मीय शक्तियो के विकास मे अपने जीवन के विकास को देखना। अपनी विषमताभरी दुष्प्रवृत्तियों को त्याग करके आदर्श की स्थापना करना एव सबमें समतापूर्ण प्रवृत्तियों के विकास को बल देना।

(2) आत्म-विश्वास की मात्रा को इतनी सशक्त बना लेना कि अन्य प्राणियो के साथ अथवा स्वयं के साथ जाने या अनजाने भी विश्वासघात संभव न रहे।

(3) जीवन-क्रम के चौबीसो घंटो मे समतामय भावना एवं आचरण का विवेकपूर्ण अभ्यास एवं आलोचन करना।

(4) प्रत्येक प्राणी के प्रति सौहार्द, सहानुभूति एवं सहयोग रखते हुए दूसरो के सुख-दुःख को अपना सुख-दुःख समझना-**आत्मवत् सर्वभूतेषु।**

(5) सामाजिक न्याय का लक्ष्य ध्यान मे रख कर, चाहे राजनीति के क्षेत्र मे हो अथवा आर्थिक या अन्य क्षेत्र मे, आत्मवल के आधार पर अन्याय शक्तियो से सघर्ष करना तथा समता के समस्त अवरोधो पर विजय प्राप्त करना।

(6) चेतन व जड तत्त्वो के विभेद को समझ कर पर से ममता हटाना, जड की सर्वत्र प्रधानता हटाने मे योग देना तथा चेतन को स्वधर्मी मान उसकी विकासपूर्ण समता मे अपने जीवन को नियोजित कर देना।

(7) अपने जीवन मे और वाहर के वातावरण मे राग और द्वेष दोनो को सयमित करते हुए सर्व प्राणियो मे समदर्शिता का अविचल भाव ग्रहण करना, वरण करना तथा अपनी चिन्तन धारा मे उसे स्थायित्व देना। समदर्शिता को जीवन का सार वना लेना।

साधुत्व तक पहुचाने वाली ये तीन श्रेणिया

इन तीनो श्रेणियो मे यदि एक समता-साधक अपना समुचित विकास करता जाय तथा समदर्शी श्रेणी मे अपनी हार्दिकता एव कर्मठता को रमा ले, तो उसके लिये कहा जा सकता है कि वह साधक भावना की दृष्टि से साधुत्व के सन्निकट पहुंच गया है। तीसरी श्रेणी को गृहस्थ-धर्म का सर्वोच्च विकास माना जायगा।

तीनो श्रेणियो के जो नियम वताये गये हे, इनके अनुरूप एक से दूसरी व दूसरी से तीसरी श्रेणी मे अग्रसर होने की दृष्टि से प्रत्येक साधक को अपना आचरण, विचार एव विवेकपूर्ण पृष्ठभूमि के साथ स्वय को सन्तुलित एव सयमित करते रहना चाहिए, ताकि समता व्यक्ति के मन मे और समाज के जीवन मे चिरस्थायी रूप ग्रहण कर सके। यही आत्म-कल्याण एव विश्व-विकास की सही प्रेरणा है।

समता-साधना के इस क्रम को व्यवस्थित एव अनुप्रेरक स्वरूप प्रदान करने के उद्देश्य से एक समता-समाज की स्थापना की जाय, उसकी सदस्यता हो, सदस्यो के विकास का सम्पूर्ण लेखा-जोखा रखा जाय एव अन्य प्रवृत्तियां चलाई जाय-इसके लिए यहा एक सक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत की जा रही हे-

आचरण शुद्धि का पहला पग

सप्त कुव्यसन का त्याग :

समता-मार्ग के साधक को प्राथमिक शुद्धि रूप सप्त कुव्यसनो का त्याग तो करना ही चाहिए। ये कुव्यसन जीवन को पतन के गर्त मे डुवोने वाले तो होते ही हे, समाज मे भी बुरा असर पडता है और पतन की संभावनाओ को स्थायी भाव मिलता है। इन सात कुव्यसनो के सम्बन्ध मे निम्न जानकारी जरूरी है-

(1) मांस-भक्षण : समता के संसार मे प्रत्येक जीव को दूसरे जीव की रक्षा मे आस्था रखनी चाहिए- **"जीवो जीवस्य रक्षणम्।"** फिर मास खाने का मूल अभिप्राय इस वृत्ति के विपरीत बन जाता है। अपने लिए जीव को मारे और मास-भक्षण करे-यह तो विषमता को पूजना हुआ। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी आज पश्चिमी संसार मे शाकाहार की आवाज उठ रही है और मास-भक्षण को हानिकारक बताया जाता है। यह तामसिक भोजन विकारो को भी पैदा करता है। अतः इसको छोडना अनिवार्य समझा जाना चाहिए।

(2) मदिरा-पान : देशभर मे आज शराबबन्दी के बारे मे उग्र आन्दोलन चल रहा है। सरकार आय का लोभ नही छोड पा रही है, वरना शराब की बुराई को तो त्याज्य मानती है। इससे शराब के कुप्रभाव का अनुमान कर लेना चाहिए। शराब को समस्त बुराईयो की जड कह दे तो भी कोई अत्युक्ति नही होगी। गाजा, भाग, धतूरा और आज की एल एस.डी की गोलियां आदि के सारे नशो का त्याग मदिरा-त्याग के साथ ही आवश्यक समझा जाना चाहिए।

(3) जुआ : जहां भी बिना परिश्रम के अनर्थ तरीको से धन आने का स्रोत हो, उसे जुए की ही श्रेणी मे लेना चाहिए। इस नजर मे सट्टा व तस्कर व्यापार भी त्याज्य है। बिना श्रम का धन व्यसनो की बढोतरी मे ही खर्च होता है।

(4) चोरी : चोरी की व्याख्या को भी सूक्ष्म रीति से समझने की जरूरत है। दूसरे के परिश्रम की आय को व्यक्त या अव्यक्त रूप से स्वयं ले लेना भी चोरी है। यही आज के आर्थिक शोषण का रूप है। टैक्स चोरी भी इसका दूसरा रूप है। चोरी सदा सत्य का हनन करती है, अत: त्याज्य होनी चाहिए।

(5) शिकार : सर्वजीव रक्षण की भावना मे अपने मनोविनोद के लिए जीव हरण सर्वदा निन्दनीय है।

(6) परस्त्री गमन : समाज मे सैक्स की स्वस्थता को बनाये रखने के उद्देश्य से ही विवाह-संस्था का प्रारम्भ हुआ था। काम का विकार अतिप्रबल होता है और उसे नियमित एवं संयमित करने के लिए संसारी मनुष्य के लिए स्वस्त्री सन्तोष का व्रत बताया गया है। यदि काम के अन्धेपन को छूट दे दी जाय, तो वह कितने अनर्थों एवं अपराधो की लड़ी बांध देगा-इसका कोई हिसाब नही। परस्त्री गमन तो इस कारण भी जघन्य अपराध माना जाना चाहिए कि ऐसा दुष्ट पुरुष दो या अनेक परिवारो के सदाचरण को नष्ट करता है।

(7) वेश्या गमन : यह कुव्यसन सारे समाज के लिए घातक है, जो नारी जैसे पवित्र जीवन को मोरी के कीडो की तरह पतित बनाता है। आज राज्य और समाज इसके विरोधी बन चुके है तथा वेश्याओ के धन्धे को समाप्त किया जा रहा है। फिर भी व्यक्ति का सयम इसे समाप्त करने मे विशेष सहायक बन सकेगा।

इन सातो कुव्यसनो के वैयक्तित्व एवं सामाजिक कुप्रभावो को ध्यान मे रखते हुए इनके त्वरित परित्याग की ओर कदम आगे बढने ही चाहिए।

समता-समाज की संक्षिप्त रूपरेखा :

अन्तर मे जो कुछ श्रेष्ठ है, वह गूढ हो सकता है, किन्तु जब तक उसे सहज रूप से बाहर प्रकट नहीं करें उसकी विशेषताओ का व्यापक रूप से प्रसार नही हो सकता है। समता-दर्शन के सम्बन्ध मे भी यह कहा जा सकता है कि यदि इसके भी बाह्य प्रतीक निर्मित किये जाय, तो इसके प्रचार-प्रसार मे सुविधा होगी। कोई समता-दर्शन का अध्ययन करे तथा उसके व्यवहार पर भी सक्रिय हो, किन्तु यदि ऐसे साधको को एक सूत्र मे आबद्ध रहने हेतु किसी संगठन की रचना की जाय तो साधको को यह सुविधा होगी कि वे पारस्परिक सम्पर्क से अपनी साधना को अधिक सुगठित एवं सुचारु बना सकेगे और साधारण रूप से संगठित साधको का सुप्रभाव समूचे समाज पर इस रूप से पड़ेगा कि लोग इस दिशा मे अधिकाधिक आकर्षित होने लगेगे।

एक प्रकार से समता के दर्शन एवं व्यवहार पक्षो का मूर्त रूप ऐसा समता-समाज होना चाहिये जो समता-मार्ग पर सुस्थिर गति से अग्रसर हो और उस आदर्श की ओर सारे ससार को प्रभावित करे।

समता-समाज क्यों?

सारे मानव समाज को यदि भिन्न-भिन्न भागो मे विभाजित करे, तो विविध विचारधाराओ, मान्यताओ एव सम्बन्धो पर आधारित कई वर्ग निकल आवेगे। सम्पूर्ण मानव समाज विभिन्न समाजो का एक समाज ही है। प्रश्न है समता-समाज के नाम से एक और समाज की वृद्धि क्यो?

मानव-समाज इतना विशाल समाज है कि एक ही बार मे एक मानव उसे समग्र रूप से आन्दोलित करना चाहे, तो एक दुस्साध्य-सा कार्य होगा। कार्य एक साथ नहीं साधा जाता, क्रमबद्ध रूप से ही आगे वढते हुए उसे साधना सरल एवं सुविधाजनक होता है। सारे संसार मे याने कि सभी विभिन्न क्षेत्रो मे समतामय जीवन की प्रणाली की स्थापना एक साथ सरल नही हो सकती। अपने नवीन परिप्रेक्ष्य मे समता के विचार-विन्दु को हृदयगम कराना

तथा उसके आचरण को जीवन मे उतारना एक क्रमबद्ध कार्यक्रम ही हो सकता है। समता समाज इस क्रमबद्ध कार्यक्रम को सफल बनाते हुए समता के निरन्तर विस्तार का ही एक सगठन कहा जा सकता है। सगठन की शक्ति उसके सदस्यो पर आधारित होती हें तथा समता-समाज भी कितना शक्तिशाली वन सकेगा, यह इसके साधक सदस्यो पर निर्भर करेगा।

समता समाज के नाम से कायम होने वाला यह सगठन एक जीवन्त सगठन होना चाहिये, जो बिना किसी भेदभाव के सिर्फ मानवीय धारणाओं को लेकर मात्र मानवता के धरातल पर मानवीय समता की उपलब्धि हेतु कार्य करे एव विभिन्न क्षेत्रो मे विषमता भरे वातावरण को हटा कर समतामय परिस्थितियों के निर्माण मे योग दे।

समता-समाज का कार्य क्षेत्र :

समता-समाज का कार्य क्षेत्र भौगोलिक सीमा मे आवद्ध नही होगा। जहा-जहा विपमता है और जहां-जहा समता के साधक खडे होते जायेगे, वहा-वहा समता समाज के कार्य क्षेत्र खुलते जायेगे। प्रारम्भ मे किसी भी एक बिन्दु से इस समाज का कार्यारम्भ किया जा सकता है। फिर उस केन्द्र से ऐसा यत्न किया जाय कि देश मे चारो ओर इस समाज के ऐसे सदस्य बनाये जाये, जो निष्ठापूर्वक चार सोपानो, इक्कीस सूत्रो एव तीन चरणो मे आस्था रखे तथा व्यावहारिक रूप से अपने जीवन मे समता तत्त्व को यथाशक्ति समाहित करे। यदि प्रारम्भिक प्रयास सफल बने तथा देश मे समता-समाज का स्वागत हो और समता-समाज के सदस्य चाहे, तो कोई कठिन नहीं कि इस अभियान को विदेशो मे भी लोकप्रिय बनाया जा सके। समाज के उद्देश्य सवको छूने एव सव मे समाने वाले हो।

समाज के उन्नायक उद्देश्य .

जो अब तक विश्लेषण किया गया है, उससे स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्ति एव समाज के आन्तरिक एव बाह्य जीवन मे समता रम जाय एव चिरस्थायी रूप ग्रहण कर ले-यह समता-समाज को अभीष्ट है। कहा नही जा सकता कि इस अभियान को सफल बनाने मे कितना समय लग जायेगा, किन्तु कोई भी अभियान कभी सफलता तभी प्राप्त कर सकेगा, जब उसके उद्देश्य स्पष्ट हो एव उसमे जनकल्याण की व्यापक भावना झलकती हो।

समाज के उन्नायक उद्देश्यो को सक्षेप मे निम्न रूप से गिनाया जा सकता है-

1 व्यक्तिगत रूप से समता-साधक को समतावादी, समताधारी एव समतादर्शी की श्रेणियो मे साधनारत बनाते हुए अपने व्यक्तित्व को विकेन्द्रित करने की ओर अग्रसर बनाना।

2 मन की विषमता से लेकर विश्व के विभिन्न क्षेत्रो की विषमताओ से सघर्ष करना एव सर्वत्र समता की भावना का प्रसार करना।

3 व्यक्ति और समाज के हितो मे इस भाति तालमेल बिठाना, जिससे दोनो समतामय स्थिति लाने मे पूरक शक्तिया बने। समाज व्यक्ति को धरातल दे तो व्यक्ति उस पर समता-सदन का निर्माण करे।

4 स्वार्थ, परिग्रह की ममता एव वितृष्णा को सर्वत्र घटाने का अभियान छेड कर स्वार्थों एव विचारो के टकराव को रोकना तथा सामाजिक न्याय एवं सत्य को सर्वोपरि रखना।

5 स्थान-स्थान पर समता-साधको को सगठित करके समाज की शाखाओ-उपशाखाओ की स्थापना करना, साधारणजन को समता का महत्त्व समझाने हेतु विविध सयत प्रवृत्तियो का संचालन करना एवं सम्पूर्ण समतामय परिवर्तन के लिए सचेष्ट रहना।

समता-समाज किनका?

यह समाज किसी देश-प्रदेश, जाति-सम्प्रदाय, वर्ण-वर्ग या दल विशेष का नहीं होगा। प्रारम्भ मे समाज का आकार छोटा हो सकता है, किन्तु इसका प्रकार कभी छोटा नही होगा। जो अपने आपको सीधे और सच्चे रूप में मनुष्य नाम से जानता है और मनुष्यता के सर्वोपरि विकास मे रुचि रखता है, वह इस समाज का सदस्य बन सकता है।

दूसरे शब्दो में यो कहे कि समता-समाज उन लोगों का संगठन होगा, जो समाज के उद्देश्यो मे विश्वास रखते होगे, इसके 21 सूत्रो तथा 3 चरणों को अपनाने के लिए आतुर होगे एव अपने प्रत्येक आचरण मे समता के आदर्श की झलक दिखायेगे। समाज अपने सदस्यों की कर्मठता का केन्द्र होगा, तो अन्य सभी के लिए प्रेरणा का स्रोत भी, क्योंकि अन्ततोगत्वा समाज का लक्ष्य राजनीतिक, आर्थिक एवं अन्य सभी क्षेत्रो मे मानवीय समता स्थापित करके आध्यात्मिक क्षेत्र में समता के महान् आदर्श को प्रकाशमान बनाना है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि समता समाज 21 सूत्रो के पालक एवं 3 चरणो मे साधनारत साधको का सगठन होगा, जो गृहस्थ धर्म मे रहते हुए भी उज्ज्वल नक्षत्रो के रूप मे संसार के विविध क्षेत्रो मे समता के सुखद सन्देश को न केवल फैलावेगे, बल्कि उसे क्रियान्वित कराने के काम मे सर्वदा एव सर्वत्र निरत रहेगे।

विषमता से संघर्ष : मन को हर्ष

आपके सामने पग-पग पर विषमताओं के जाले बुने हुए है, जिनमें उलझ-उलझ कर अपने कई साथियो को ही गिरते हुए आप नही देखते, बल्कि जानते-अजानते खुद भी उनमें उलझ-उलझ कर गिरते रहते है। इन्हीं जालो को काटते जाना जीवन का उद्देश्य बन जाना चाहिए और यही समता की साधना का मार्ग है, क्योकि जहा-जहां अंधेरा मिटेगा वहां-वहां प्रकाश का फैलते जाना अनिवार्य है। विषमताओ को काटने का अर्थ ही होगा कि वहां-वहा आत्मीय समता का प्रसार सुगम होता जायेगा।

समता-समाज के सदस्यों को अपने जीवनक्रम मे इसी उद्देश्य को सर्वोपरि रखना होगा। वे एक क्षण के लिए भी न भूलें कि अपने मन, वचन या कर्म से किसी भी रूप मे विषमता पैदा करने वाले न बने। उन्हे तो स्वय सम बनकर प्रत्येक स्थान से विषमता को नष्ट करना है और समता की दृष्टि पनपानी है। विषमता से सघर्ष उनकी भावना, वाणी और कृति का श्रृङ्गार बन जाना चाहिए।

व्यक्ति और समाज का समन्वित स्वर

यह आन्दोलन, यह संघर्ष, व्यक्ति और समाज के समन्वित स्वर से उठना और चलना चाहिए। व्यक्ति समाज की ओर उन्मुख हो तथा समाज एक-एक व्यक्ति को गले लगावे-तब ऐसे सहज समन्वय का स्वर मुखर हो सकेगा। व्यक्ति और समाज इस आन्दोलन के साथ एक-दूसरे की प्रगति के अनुपूरक बनते रहेगे और समता की ऊंचाईयो पर चढ़ते रहेगे। व्यक्ति-व्यक्ति से समाज बनता है और समाज व्यक्ति से अलग नहीं है, फिर भी दोनो शक्तिया एक दूसरे की सहायक होकर चलेगी तभी अन्दर-बाहर की सच्ची समता भी प्रकट हो सकेगी। जितनी विषमता है, वह व्यक्ति के स्वार्थ के गर्भ से जन्म लेती है। जितने अंशो मे स्वस्थ रीति से इस स्वार्थ का सफल समाजीकरण कर दिया जायगा उतने ही अंशो मे विषमता की मात्रा घटेगी और व्यक्ति एवं समाज का समन्वय बढेगा। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है।

समता-समाज इस लक्ष्य की ओर अग्रसर बने कि व्यक्ति का सत्ता और सम्पत्ति के स्वार्थों पर अधिक से

अधिक स्वैच्छिक नियंत्रण किया जाय। यह नियत्रण भावात्मक होना चाहिए एवं जहां आवश्यकता हो, वहा सामाजिक नियंत्रण-प्रणाली द्वारा व्यक्ति के स्वार्थ के भूत को फैलने से रोका जाना चाहिए। अपने ही सदस्यो के माध्यम से यदि समता-समाज इस लक्ष्य को पकड सका, तो यह सन्देश रहित भविष्यवाणी की जा सकती है कि समता समाज की सर्वोच्च उन्नति होकर रहेगी।

क्रान्ति का चक्र और कल्याण :

कल्पना करे कि किसी भी टिकट-खिडकी के वाहर अगर लोग पूरे अव्यवस्थित रूप से टिकट लेने के लिए टूट पडेगे तो कितने और कौन लोग टिकट ले पायेगे? वे ही जो शरीर से, वल से या किसी तरह ताकतवर होगे कमजोर तो बेचारा भीड मे पिस ही जायेगा। आज के विषम समाज की ऐसी अव्यवस्था से तुलना की जा सकती है जहां सत्ता और सम्पत्ति को लूटने की मारामारी मची हुई है। जो न्याय से नहीं, नीति से नहीं, बल्कि अन्याय और अनीति से लूट जारी है। इस दुर्व्यवस्था मे दुर्जन आगे वढ कर लूट का सरदार वन जाता है तो हजारो सज्जन नीति और न्याय के पुजारी होकर भी विवश खडे देखते रह जाते है।

टिकट-खिडकी के वाहर ऊपर उचकने वालो को समझा-वुझा कर उनकी वाहे पकड कर एक क्यू मे खडा कर देने का जो प्रयास है, उसी को समाज के क्षेत्र मे क्रान्ति का नाम दे दिया जाता है। सारी भीड उमडे नहीं, अपनी-अपनी बारी से हर एक को टिकट मिल जाये, यह किसी क्रान्तिपूर्ण व्यवस्था का ही फल हो सकता है। मानव समाज मे अपराधवृत्ति मिटे, विषमता कटे और सभी मानव न्याय और नीति का फल प्राप्त करे-यही क्रान्ति का उद्देश्य हो सकता है।

क्रान्ति का चक्र यदि योजनाबद्ध नीति से घुमाया जाय तो निस्सन्देह वह विषमता को भी काटेगा और समता की रक्षा भी करेगा। इस चक्र को जन-कल्याण का चक्र कहा जा सकता है। समता-समाज का यही प्रयास होना चाहिये कि वह अपनी सशक्त गति से क्रान्ति के चक्र को पूरे वेग से घुमावे ताकि नये समाज की नई धारणाए और परम्पराएं जन्म ले तथा उनका निर्वहन करने-कराने वाली नई पीढी का निर्माण किया जा सके।

सर्वव्यापी समता :

सर्वरूपी समता सर्वव्यापी भी बननी चाहिए। जीवन के सभी रूपो मे समता ढले, किन्तु अगर वह सभी जीवनो मे नही ढले तो समता का सामूहिक चित्र साकार नहीं हो पायेगा और इसके बिना समता का सर्वव्यापी बन पाना भी संभव नही होगा। सर्वव्यापी समता को जीवन के स्थूल स्थानो से लेकर सूक्ष्म स्थानो तक प्रवेश करना होगा। अन्तर्मन यदि समता के मूल्यो को गहराई से धारण कर ले, तो राजनीति, अर्थ या समाज के क्षेत्र मे भी समता की प्रतिष्ठा करने मे अधिक कठिनाई नही आवेगी। किन्तु अगर मनुष्य का अन्तर्मन ही स्वार्थ और विकार मे डूबा हो, तो समता के स्थूल क्षेत्रो मे परिवर्तन काफी टेढा और कठिन होगा।

यही कारण है कि पहले आन्तरिक विषमता को मिटाने का निर्देश किया जाता है। किसी भी सामूहिक कार्य का सफल श्रीगणेश भी इसी अवस्था मे किया जा सकता है, जब कुछ ऐसे लोग तैयार होते है, जो अपने अन्तर की विषमता को घटा कर समता का सन्देश लेकर आगे बढते है। साथ मे यह भी सत्य है कि ऐसे लोग किसी भी संगठन अथवा आन्दोलन के जरिये जिस वातावरण का निर्माण करते है, वह भी अन्य व्यक्तियो की जागृति का कारण बनता है। कुछ लोगो की आन्तरिक समता बाह्य समता की स्थापना मे योग देती है, तो वह स्थापित बाह्य समता भी अन्य व्यक्तियो की आन्तरिक समता को जगाती और प्रेरित करती है। सर्वव्यापी समता की पारस्परिक प्रक्रिया ऐसी ही

होती है।

समता-समाज को यह बिन्दु ध्यान मे रखते हुए अपने कार्यक्रमो मे आन्तरिक विषमता को घटाने व मिटाने के अभियान को प्राथमिकता देनी चाहिए ताकि आन्तरिक समताधारियो की एक सशक्त अहिंसक सेना तैयार की जा सके और उसका वह जूझना न सिर्फ बाह्य समता की स्थापना को यत्र-तत्र और सर्वत्र साकार रूप दे, बल्कि बहुसंख्यक लोगो की आन्तरिक समता को भी प्राणवान् बनावे।

समता-साधक का जीवन धन्य होगा ही :

अन्त में यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि जो समता की साधना करेगा, उसका स्वयं का जीवन तो धन्य होगा ही, वह समाज के जीवन को भी धन्य बनायेगा।

समता-समाज के साधकों के लिए यह ऊंचा लक्ष्य प्रकाश स्तम्भ का काम दे और वे जीवन के सभी अन्दर-बाहर के क्षेत्रो मे समता का प्रसार करे, यह वाछनीय है। क्रान्ति की मशाल को जो अपने मजबूत हाथो मे पकडते है, वे उस मशाल से विकृति को जलाते है तथा साथ ही प्रगति की दिशा भी प्रकाशित करते है। समता की मजिल इसी मशाल की रोशनी मे मिलेगी।

आचार्य देव के समता दर्शन रूपी चिन्तन-सागर से कुछ ही मुक्ताकण यहां प्रस्तुत किये गये हैं। ये समता दर्शन के लिए दिग्बोध का काम करते है।

वास्तव मे समता को आचार्य श्री ने पूर्णत: आत्मसात् किया है, उसे सम्पूर्ण रूप से जिया है। अनुभूति के उन क्षणो को शब्द-बद्ध कर पाना शक्य नही है। यह जो कुछ दिग्दर्शन है, वह केवल आचार्यश्री के अनुभूति मूलक चिन्तन से नि:सृत विचारो का एक सन्देश मात्र है इससे आचार्यश्री के दार्शनिक एवं सामाजिक विचार जगत् का सामान्य परिबोध हो सकता है। यह परिबोध आचार्यश्री के जीवन दर्शन की जाज्वल्यता का प्रथम परिचायक हो सकता है।

अन्त में यह कहते हुए किन्चित् मात्र भी संकोच नहीं करूंगा कि वह दिन भारत के लिए क्रान्तिकारी एव सौभाग्य का होगा जब विश्व मानव समता-दर्शन की पुनीत छाया मे जाति, भाषा और वर्ण आदि के कृत्रिम भेदो को भूल कर विश्व मानवता के आदर्श को अपनायेगा।

"नाना" निर्देशित समता का-
समुद्रघोष यदि विश्व सुने,
दूर हो जन-जन व्याप्त विषमता,
सत् "शान्ति" साम्राज्य बने।

पंचम खण्ड

साक्षात्कार

अन्तरंग बातचीत

प्रश्न मेरे-उत्तर आचार्यश्री के

✍ पं र. श्री शान्तिमुनि जी म.सा.

युग पुरुष वह होता है जो युग की पुकार को, तत्कालीन समस्याओ एव ज्वलन्त प्रश्नो को समझ कर उन्हे समाहित करने की क्षमता रखता हो।

आज का युग वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास का युग है। एक दृष्टि से इसे हम आध्यात्मिक सक्रान्ति काल भी कह सकते हैं, क्योकि आज अध्यात्म के समक्ष सख्यातीत प्रश्न मुह वाए खडे ह, जो अध्यात्म को वैज्ञानिक तुला पर तोलना चाहते हे। अध्यात्मवादियो के समक्ष यह चुनौती खडी है कि वे अध्यात्म को वैज्ञानिक परिवेश प्रदान करे।

आज का सामाजिक परिवेश भी अध्यात्म से कटा-कटा-सा जा रहा है। अध्यात्म एव सामाजिकता के सवध टूट-से गये है। स्थिति यहा तक उत्पन्न हो गई है कि समाज ओर अध्यात्म दो भिन्न-भिन्न किनारो पर खडे दिखाई दे रहे है। ऐसी स्थिति मे अध्यात्मवादियो के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वे समाज को वह दिशा प्रदान करे, जिससे वर्तमान समाज अध्यात्म की ओर उन्मुख हो सके, अपनी सडी गली अन्ध परम्पराओ से मुक्त हो सके।

यही नहीं, आज आध्यात्मिक क्षेत्र स्वय ही स्वय के लिए प्रश्न वाचक वन गया है। कुछ रूढ धारणाओं एवं क्रियाकाण्डो ने आज के युवा मानस के समक्ष अनेक ज्वलन्त प्रश्न खडे कर दिये हे।

इन सभी स्थितियो मे एक युग पुरुष के समक्ष क्या कर्त्तव्य आ पडते हे और वह उनका कैसा मार्मिक चिन्तन प्रस्तुत करता है, यह हम यहा पढेगे।

वर्तमान परिवेश को आन्दोलित करने वाले कुछ मोलिक प्रश्नो का ही समाधान यहा प्रस्तुत है, जिसके माध्यम से हम आचार्यश्री के व्यक्तित्व के उस पक्ष से परिचित होगे, जो उनके अन्तर-वाह्य, अध्यात्म-समाज दोनो पक्षो को उजागर करता है।

प्रश्न-1

निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति का उद्भव किस युग की देन है? वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसके सास्कृतिक मूल्यो पर प्रकाश डालने की कृपा करें।

उत्तर-

प्रश्न अति मौलिक है। उत्तर की गभीरता तक पहुचने के लिए आवश्यक है कि शब्दश· व्याख्या का आश्रय लिया जाए। चूकि प्रश्न, निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति के सन्दर्भ मे पूछा गया है, अतः सस्कृति शब्द पर कुछ दृष्टिपात आवश्यक है।

निर्युक्ति की दृष्टि से सस्कृति का अर्थ होगा सम्यक् कृति। अर्थात् शुद्ध सस्कार-सम्पन्न कृति, संस्कृति कहलाती है। "कृति" शब्द यहा किन्हीं मौलिक अर्थों मे प्रयुक्त हुआ है। "कृति" क्रिया के भावात्मक या प्रत्यक्ष रूप को कहते है और "सम" उपसर्ग है।

लाक्षणिक दृष्टि से अंग्रेजी का कल्चर शब्द हिन्दी के सस्कृति शब्द का प्रति रूप माना जा सकता है। कल्चर

का अर्थ है, वह गुण जो उत्पन्न किया गया हो, संस्कृति का भी कुछ-कुछ यही अर्थ है, जिसे हम सामान्य भाषा मे संस्कार कहते है।

इस प्रकार सस्कृति का अर्थ हुआ अच्छी कृति। समाजगत सामूहिक श्रेष्ठ कृतियां भी संस्कृति कही जा सकती है। व्यक्ति की कृतियो मे चेतना का सम्पुट रहता है, अतएव समष्टि की कृतियो मे चेतना अवश्यम्भावी है। समाज की समष्टि रूप से विकासोन्मुखी चेतनामयी कृतियां ही संस्कृति है।

संस्कृति को मुख्य दो धाराओं में विभक्त किया जा सकता है। एक भौतिक और दूसरी आध्यात्मिक। भौतिक सुखो तथा संस्कृति के ऊपरी आवरणो मे भौतिक संस्कृति का दर्शन किया जा सकता है-नाटक, खेलकूद, अध्ययन, साहित्य, मानवीय व्यवहार, रहन-सहन, पहनाव एवं रीति-रिवाज आदि भौतिक कर्मों मे संस्कृति की छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है, जिसे सभ्यता के नाम से पुकारते हैं। इसके विपरीत आध्यात्मिक संस्कृति से तात्पर्य है, मानवता की अन्तरात्मा और उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा का प्रयत्न। इसमे ऐसे सभी आचारो, अभ्यासो एवं उपकरणो का समावेश हो जाता है, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आध्यात्मिक उत्थान मे सहायक सिद्ध हो। महान् विचारक श्री मैथ्यू आरनाल्ड के अनुसार "इसके मूल मे पशुता से भिन्न अन्तःकरण की मानवता, सतत विकासशीलता, अखिल-मानव समाज की सामूहिक उत्क्रान्ति एवं मानव की समग्र शक्तियो के व्यापक विस्तार की भावना छिपी हुई है।"

यथार्थ मे अध्यात्म संस्कृति समाजबद्ध मानव की वह श्रेष्ठतम उपलब्धि है, जिसमे ज्ञान, विश्वास, कला, विनयशीलता, सात्विकता आदि समाविष्ट है। इस प्रकार मनुष्य की श्रेष्ठतम साधनाओ को संस्कृति की संज्ञा दी जा सकती है। भारतवर्ष के भूतपूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली डॉ राधाकृष्णन ने संस्कृति की एक विचित्र-सी व्याख्या की है। उनके अनुसार "स्कूलो-कॉलेजो तथा सभी शिक्षण-संस्थानो मे जो कुछ पढ़ा जाता है, वह भुला देने के पश्चात् जो कुछ शेष रह जाए, वही संस्कृति है।"

वस्तुतः संस्कृति मात्र रीति-रिवाज, नृत्य-गायन, त्यौहार एवं वेश-विन्यास ही नहीं है, सस्कृति इनकी अन्तरात्मा है। प्रसिद्ध साहित्यकार सम्पूर्णानन्द जी ने "संस्कृति" की व्याख्या करते हुए कहा कि संस्कृति वह साचा है, जिसमे समाज के विचार ढलते हैं, वह बिन्दु है, जहां से जीवन की समस्याए देखी जाती है। सस्कृति विभिन्न संस्कारो द्वारा व्यक्ति की प्रतिभा और योग्यता के पूर्ण विकास मे समुचित योग देती है।

संक्षेप में कहें तो व्यक्तित्व की पतनोन्मुखी वृत्ति का नाम है विकृति अथवा निकृति तथा विकासोन्मुखी आदर्श व्यक्तित्व की कृति का नाम है संस्कृति। संस्कृति व्यक्ति का आत्म-परिष्कार करती है, तो सभ्यता जिसे हमने भौतिक संस्कृति के नाम से पुकारा है, उसे बाह्य जीवन के व्यवहारो की युग-युगान्तर से चली आ रही अवस्थाओ को अनुसूचित करती है, तो सभ्यता दैहिक एवं भौतिक क्रम को स्पष्ट करती है।

"संस्कृति" शब्द की उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अध्यात्म-संस्कृति न किसी क्षेत्र-विशेष की देन होती है और न किसी काल विशेष की। चूंकि निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति एक गंगा के निर्मल प्रवाह की तरह धारा प्रवाही सस्कृति है, अतः उसके काल-संबंधित छोर को पाना उतना ही कठिन है, जितना कि सृष्टि के आदिकाल को। इस दृष्टि से निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति प्रवाह की अपेक्षा से अनादिकालीन संस्कृति है। उसके अनुसार अनन्त युग बीत गये है और प्रत्येक युग मे यह अपने अस्तित्व मे कायम रही है। हां, संस्कृति के इस प्रवाह मे सरित धारा के प्रवाह की तरह ह्रास-विकास अवश्य हो सकता है। कोई काल अपना सांस्कृतिक मूल्य बहुत अधिक बना लेता है, तो किसी काल मे संस्कृति अति मंथर गति से चल पाती है अर्थात् बौद्धिक युग सस्कृति के विकास का युग माना जा सकता है जिसमे युग के सांस्कृतिक मूल्य प्रस्थापित होते हैं।

जैन दर्शन के अनुसार काल को दो भागो मे विभक्त किया गया है, जिसे आज की भाषा मे प्राक्ऐतिहासिक एवं ऐतिहासिक काल कहते हैं। जैन दर्शन उसे अकर्मभूमिक एव कर्मभूमिक काल के नाम से पुकारता है। आपेक्षिक दृष्टि से निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति कालातीत सस्कृति है, किन्तु काल चक्र के प्रवाह मे इसका कभी आविर्भाव तो कभी तिरोभाव होता रहा है।

जैसाकि शब्द से ही स्पष्ट है, निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति ''श्रम'' की संस्कृति है, अत: इसका सम्बन्ध कर्मभूमिक काल से अधिक है। भारतीय दर्शनो के सिंहावलोकन से ज्ञात होता है कि ''निर्ग्रन्थ'' एवं ''श्रमण'' जैन दर्शन के मौलिक शब्द हैं तथा जैन दर्शन मे ये लाक्षणिक अर्थों मे प्रयुक्त हुए है।

''निर्ग्रन्थ'' का शाब्दिक अर्थ होगा ग्रन्थि रहित अर्थात् गाठ रहित और इसका लाक्षणिक अर्थ होगा राग-द्वेष, कषाय-कल्मष की गाठों का छेदन करने वाला साधक। ''श्रमण'' शब्द उसी साधक की श्रमपूर्ण साधना का अभिव्यंजक है। व्युत्पत्ति के अनुसार ''**श्राम्यति इति श्रमण**'' अर्थात् जो श्रमजीवी है, वह श्रमण है। तात्पर्य यह है कि जो राग-द्वेषादि आन्तरिक विकारो की ग्रन्थियो के शमन मे निरन्तर श्रमरत है, वह निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति का समुपासक है।

उपर्युक्त शब्द-व्याख्या के आधार पर यह निष्कर्ष फलित होता है कि निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति ''श्रम'' अर्थात् कर्म की संस्कृति है अत: इसका सम्बन्ध अकर्म से नही कर्मभूमिक युग से अधिक है और इस प्रकार इसका वर्त्तमानिक रूप आदि तीर्थंकर प्रभु ऋषभदेव के द्वारा प्रदत्त माना जा सकता है।

चूंकि, प्रभु ऋषभ देव के पूर्व कर्म अर्थात् श्रमपूर्वक जीवनयापन की व्यवस्था नही थी, अत: वह युग युगलिक-अकर्म भूमिकाल से पुकारा जाता है। जैन परम्परा अथवा ऐतिहासिक दृष्टि के अनुसार प्रभु ऋषभदेव से पूर्व का युग ऐसा युग था, जब मनुष्य का अपना जीवन प्रकृति पर ही आधारित था, उस समय वह न कर्म करना जानता था और न उसका कर्म पर विश्वास ही था। उसकी प्रत्येक आवश्यकता प्रकृति से पूरी होती थी। भूख-प्यास से लेकर जीवन की हर समस्या मे वह प्रकृति के सहयोग पर ही जीता था। कल्पवृक्षो के माध्यम से प्राप्त सामग्रियो के आधार पर अपना जीवन निर्वाह करता था। इस प्रकार उस आदि युग का मानव प्रकृति के हाथो खेला था। उत्तरकालीन ग्रन्थो से ज्ञात होता है कि उस युग के मानव की आवश्यकताएं अति सीमित थी। उस समय भी पति-पत्नी होते थे, किन्तु उनका वह वैवाहिक सूत्र सामाजिक बन्धनो से असम्बद्ध था। जन्म से भाई-बहिन ही समय की परिपक्वता के अनुसार पति-पत्नी का रूप ले लेते, किन्तु उनको एक-दूसरे पर कोई उत्तरदायित्व का बोध एवं भार नहीं होता था। एक-दूसरे के सहारा पाने की भावना उनमे नाम मात्र को भी नहीं होती थी। एक प्रकार से वह युग उत्तरदायित्वहीन तथा सामाजिक एव पारिवारिक सीमाओ से मुक्त एक स्वतत्र जीवन था। कल्पवृक्षो के द्वारा तात्कालीन आवश्यकताओ की पूर्ति होती थी, अत: किसी को भी उत्पादन-श्रम एवं उत्तरदायित्व की भावना से बांधा नहीं गया था, सभी अपने मे मस्त एवं आनन्दित थे।

अकर्म भूमि के उस अकर्मण्यकाल मे मनुष्य अनेक सागरो अर्थात् असंख्य वर्षों तक चलता रहा, मानव की पीढियां-दर-पीढ़ियां बीत गई, किन्तु फिर भी उस जाति का विकास नहीं हुआ। उनका जीवन क्रम उसी नपीतुली रेखा मे परिबद्ध रहा। विकास का एक चरण भी नहीं बढा सका। यद्यपि उनके जीवन मे लालसाए और आकांक्षाए कम थीं, अत: संघर्ष भी कम थे। कषाय की परिणतियां कम थीं, पूरा जीवन सरलता एवं भद्रता से व्याप्त था। किन्तु ये सब गुण उनमे ज्ञानपूर्वक नही थे, तत्कालीन नैसर्गिक प्रकृति ही वैसी थी। उनकी प्रकृति ही शान्त एवं शीतल थी।

भौतिक दृष्टि से सुखी होते हुए भी उनके जीवन मे ज्ञान एवं विवेक का अभाव था। वे केवल शरीर-निर्वाह के क्षुद्र घेरे मे बंद थे। आत्मोत्कर्ष के लिये संयम-विवेक एवं साधना का आदर्श उनके जीवन से कोसो दूर था।

संक्षेप मे वह युग अतिवासना का युग नही, तो साधना का युग भी नहीं था। उस जीवन मे पतन के द्वार नहीं थे किन्तु उत्थान के द्वार भी अवरुद्ध थे। जीवन की यह निर्माल्य दशा त्रिशकु की तरह महत्त्वहीन ही मानी जाती है। यही कारण है कि उक्त अकर्म युग मे कोई भी आत्मा मोक्षगामी नहीं बन सकती थी।

कालः पचति भूतानि, कालः संहरति प्रजा।
कालः सुप्तानि जागर्ति, कालोहि दुरतिक्रमः॥

कालवादियो के इस सिद्धान्त के अनुसार, जिसे जैन दर्शन सापेक्ष सत्य मानता है, कालक्रम के प्रवाह मे पदार्थो मे नूतनता-पुरातनता का सचार होता है। यही स्थिति अकर्म भूमि की समाप्ति और कर्मभूमि के उदय का हेतु बनती है। धीरे-धीरे कल्पवृक्षो का युग समाप्त हुआ, क्योंकि कालस्थिति के अनुसार प्रकृति के उत्पादन क्षीण होने लगे और उपभोक्ताओं की संख्या बढने लगी। जब आवश्यक उत्पादन कम होते है और उपभोक्ताओ की संख्या अधिक होती है, तो संघर्ष अनिवार्य है। यही स्थिति उस युग मे भी बनी। पारस्परिक प्रेम एवं स्नेह टूट कर घृणा, द्वेष, कलह और द्वन्द्व बढने लगे। संघर्ष की ज्वालाएं झुलसने लगी, चारो ओर हाहाकार मचने लगा, अभावो से पीडित जनता त्राहि-त्राहि करने लगी।

मानव जाति की उस संकटापन्न बेला मे, संक्रमण की उन घडियो मे, संकटहर्ता, जन-त्राता आदि तीर्थकर प्रभु ऋषभदेव ने मानवीय भावना का उद्‌बोधन दिया। तत्कालीन सत्रस्त मानव जाति के लिए उनके करुणापूर्ण स्वर थे कि अब हमे प्रकृति की परावलम्बनता से ऊपर उठना होगा। स्वयं के पुरुषार्थ के बिना इस दयनीय स्थिति से उपराम नहीं पाया जा सकेगा, अतः यह आवश्यक है कि अब अपने पैरो पर खडा हुआ जाये। प्रभु ने कहा, अब युग बदल गया है। वह अकर्म-युग का मानव कर्म-युग (पुरुषार्थ युग) मे प्रवेश कर रहा है। अभी तक पुरुष अपने हाथो का उपयोग भोग मे, खाने में ही कर रहा था, अब उसे खाने के साथ कमाने-उपार्जन के पुरुषार्थ पर भी सन्नद्ध होना होगा। उसकी भुजाओं में ही वह शक्ति है, जिसके सम्यग् उपयोग से इस संक्लेश-मय स्थिति से मुक्ति पाकर आनन्द प्राप्त किया जा सकता है।

मानव-मानव के मन मे व्याप्त निराशा, दौर्बल्य एवं दैन्य स्थिति के उस काल मे प्रभु ऋषभदेव ने युग को एक नया मोड दिया। सम्पूर्ण मानव जाति को जो धीरे-धीरे अभावग्रस्त हो रही थी, प्रकृति की पराधीनता के फदे मे फस कर अपनी स्वतंत्र स्थिति को भुला बैठी थी, कर्म-उत्पादन का मंत्र दिया, श्रम और स्वतत्रता का मार्ग दिखाया और मानवीय चेतना फिर से सुख और समृद्धि के साथ आनन्द की सांस लेने लगी। जन जीवन अश्रम की पराधीनता से निकल कर श्रम की स्वतंत्रता मे जीने लगा।

भगवान् ऋषभदेव की उस अनन्त करुणा का प्रतिफल था कि मनुष्य अकर्मभूमि से कर्मभूमि मे प्रविष्ट हुआ और उसके चारो ओर अपने ही श्रम से निष्पन्न भौतिक आनन्द की स्रोतस्विनी बहने लगी। प्रभु ने तत्कालीन परिस्थितियो का अपने ज्ञान से अवलोकन किया और एक प्रजापालक नृपति के दायित्व के आधार पर मानव जाति को अपनी प्राथमिक आवश्यकताओ के प्रति पूर्णरूपेण अपने आप पर निर्भर करने के लिए पुरुष को 72 एवं नारी को 64 कलाओ का अल्पारम्भ के रूप मे मधुर संदेश दिया ताकि अपने अभावो की सम्पूर्ति के साथ जन-मानस अपने दायित्वो को भी भलीभाति समझ सके।

इस प्रकार उस नये युग का नया सदेश जन-जीवन मे कई चेतना का आदर्श बन गया, सर्वत्र सुख-समृद्धि का उल्लास छा गया। अभी तक का मानव सामाजिक दायरो से अपरिचित था, अब उसमे सामष्टिक समूहगत व्यवहारो के प्रति सजगता फैलने लगी, इतना सब कुछ हो जाने पर जीवन के अध्यात्म पक्ष के बोध से जनता अभी भी अपरिचित थी। भौतिक उत्पादनो के उपार्जन एव उपभोग के परिज्ञान तक ही उसका बोध सीमित था। इसके अतिरिक्त जीवन का कोई अविनाशी तत्त्व है और उसके विकास के प्रति सजग होना मानव-जीवन का अनिवार्य अग है, इस विषय का परिबोध उन्हे सर्वथा नही था।

ऐसी स्थिति मे प्रभु ऋषभदेव ने अध्यात्म का मधुर सदेश दिया। बस यही से भरत-क्षेत्र की अपेक्षा से निर्ग्रन्थ श्रमण सस्कृति का उद्भव माना जा सकता है।

प्रभु ने अपने सदेश मे गृहस्थावस्था मे रहते हुए जीवन जीने की कला अर्थात् भौतिक विज्ञान से जीवन को सुख एवं शातिमय बनाने का बोध देने के पश्चात् जीवन के दूसरे चरण मे जन-मानस को अध्यात्म की ओर प्रेरित किया कि "जीवन का उद्देश्य केवल भौतिक समृद्धि ही नही है, अपितु जीवन का प्रथम लक्ष्य है, स्वरूप बोध। हम शारीरिक, पारिवारिक एव सामाजिक सम्वन्धों के सकुचित घेरे तक ही सीमित न रहे, जीवन की विराटता को समझ कर सभी आत्माओ के प्रति आत्मोपम्य की भावना का विस्तार करे। इसके लिए आवश्यक है कि पारिवारिक, सामाजिक सम्बन्धो के बीच एक-दूसरे की आत्मा को समझने का प्रयास हो। केवल शरीर और उसकी आवश्यकताओ को ही महत्त्व नही देकर आत्मिक पवित्रता के प्रति भी सजग बने। शरीर-निर्वाह के लिए जितना किया जाना आवश्यक है, वह भी आसक्तिपूर्वक नहीं, कर्त्तव्य समझ कर किया जाय। शरीर एव इन्द्रियो के साथ रहते हुए भी उनके दास नही, स्वामी बन कर रहा जाय, भोग के झूले मे मस्त होकर योग की महत्ता को न भुला बैठे। भव्य गगनचुम्बी अट्टालिकाये, ऊचे सिहासन एवं विशाल ऐश्वर्य के मध्य रहते हुए भी इनके गुलाम न बन जाये। जब भौतिक सम्पदा को ही सब कुछ मान लिया जाता है तो विद्वेष एव भटकाव बढते है। धन एवं सत्ता मूर्तिमान शैतान है, जब ये सर पर चढ बैठते है तो इन्सान को भी शैतान बना देते है। अत: जीवन का लक्ष्य भोग नही, योग है।"

प्रभु ऋषभदेव के उपर्युक्त सदेश मे निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति की अध्यात्मवादी धारा के प्रमुख सूत्र है, जिन्हे प्रभु ने स्वय जीवन मे आत्मसात् करके दिखाया। वे सदेश केवल उपदेश मात्र नही थे। राजकीय वैभव, भव्य भवन तथा समस्त भौतिक सुखो को छोड कर सर्वप्रथम वे स्वयं साधना पथ पर अग्रसर हुए। उनकी वह साधना तितिक्षा की दृष्टि से अत्यन्त कठोर साधना थी। साधना मे प्रवेश का अर्थ है, भौतिक सुख-लिप्सा के प्रति निरीह बन जाना, अत: देहासक्ति को छोडकर उन्होने जंगलो मे भ्रमण प्रारम्भ किया। अपने छद्मस्थ काल अर्थात् कैवल्य की उपलब्धि के पूर्व तक मौनव्रत स्वीकार किया ताकि सामान्य जन-मानस उनकी हर क्रिया से कुछ सीख ले सके।

तप: साधना मे गति करते हुए यदाकदा वे नगरो मे भिक्षार्थ प्रवेश करते, तो श्रमण-मर्यादा से अपरिचित भावुक जनता यह सोच कर कि अन्नादि पदार्थों के आविष्कर्ता महाप्रभु को भोजनादि सामान्य पदार्थ क्या समर्पित करे, हाथी-घोडे एव रथ सम्मुख करते और निवेदन करते कि आप जगलो मे भ्रमण करते हुए थक गये होगे, अत· इन पर आसीन हो, हमे कतार्थ करें।

प्रभु मौनपूर्वक शातभाव से आगे बढ जाते पर एक सीख दे जाते कि निर्ग्रन्थ श्रमण को इन साधनो की आवश्यकता नहीं होती। अगर ये इनका उपयोग करते, तो जगलों मे क्यो जाते?

इसी प्रकार बहुमूल्य आभूषण आदि पदार्थों के परित्याग से अपरिग्रह का तथा अपनी हर क्रियान्विति से किसी

भी चेतना को संक्लेश नहीं पहुंचाने से अहिंसा का मूर्त उपदेश अपने जीवन के आचरणो द्वारा ही प्रस्तुत कर देते। बस यही निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति का आधार स्तम्भ है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि वर्तमान युगीन निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति का मूल उद्‌गम आज से असंख्य वर्ष पूर्व इतिहास की पहुंच से परे, ऋषभदेव द्वारा हुआ और उत्तरवर्ती तीर्थंकरो ने उसे समय-समय पर संबल प्रदान कर अद्यावधि तक अक्षुण्ण बनाए रखा।

चूंकि, यह प्रतिपादन प्रागैतिहासिक है, अत: सहसा आज के वैज्ञानिक तथ्यो के आधार पर ही जीने वाला जन-मानस इस पर विश्वास नही कर पायेगा। किन्तु ऐतिहासिक युग-पुरुष तीर्थंकर महावीर के युग की जो विरासत हमे मिली है, उससे तथा कुछ वेदकालीन सांस्कृतिक सकेतो के माध्यम से, आनुमानिक तौर पर उस युग की सांस्कृतिक चेतना का साक्षात्कार किया जा सकता है।

प्रश्न के पूर्वार्ध की सामान्य विवेचना में निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति के उद्‌भव के काल-संबंधी विवेचन के पश्चात् वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसके सांस्कृतिक मूल्यो पर प्रकाश डालने का आग्रह है, जिसे सक्षेप मे समाहित करने का प्रयास है।

प्रश्न के पूर्वार्ध के उत्तर में बताया जा चुका है कि निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति का उद्‌भव तत्कालीन अराजकता के परिष्कार, अभावग्रस्त हिंसक वृत्तियो से संत्रस्त मानव समुदाय के परित्राण एवं आत्मिक आनन्द की उपलब्धि हेतु हुआ था, जिसके मूल मे अहिंसा के स्वर रहे हुए है।

इतने विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति की सांस्कृतिक विरासत मे अहिसा सिद्धान्त का मूल्य सर्वाधिक है अथवा यो कहे, निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति अहिसा-दर्शन का ही अपर पर्याय है और अहिंसा का सांस्कृतिक मूल्य प्रत्येक युग मे अपना समान महत्त्व रखता है। हां, जब कभी हिंसा की पैशाचिक बर्बरता बढ जाती है, मानव-मानव संत्रस्त एवं भयाक्रान्त हो उठता है, उस समय अहिंसा-दर्शन की महत्ता उपयोग की दिशा मे कुछ बढ़ जाती है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति किंवा अहिंसा-दर्शन की उपयोगिता सर्वविदित है।

आज का युग लोकतंत्र का युग है, कोई भी इन्सान अपने पर किसी के शासन तन्त्र को स्वीकारना नही चाहता। पर ऐसा क्यों है? इसलिए कि प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वतंत्र अस्तित्व चाहता है, उसे गुलामी एवं असमानता से सख्त नफरत है। यह समानता ही लोकतंत्रात्मक शासन प्रणाली का आधार है। प्रजातत्र का अर्थ ही है प्रजा के द्वारा, प्रजा के लिए, प्रजा का शासन, जिसमे सभी व्यक्ति अपने स्वतत्र अस्तित्व का बोध कर पाते है। जहां भय, आतंक, घृणा और वैर समाप्त हो जाते है, सभी में समानता का बोध जागृत होता है और चारों ओर प्रेम, करुणा, दया, ममता एव स्नेह की वर्षा होने लगती है।

बस, यही मधुर अध्यात्म आत्मतंत्र का संदेश देती है निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति, जिसे हम अहिंसा, अनेकान्त एव आत्म-परिष्कार के नाम से पुकारते है और आधुनिक परिप्रेक्ष्य मे जिसकी सर्वाधिक उपयोगिता है।

वर्तमान युगीन जन चेतना पर दृष्टिपात करे, तो परिलक्षित होता है कि चारो तरफ अभावो की आग धू-धू करके जल रही है। इन्सान चाहे दिन हो या रात, शरीर कंपा देने वाला शीत हो या देह झुलसा देने वाली गर्मी, हमेशा कहीं पत्थर फोड रहा है, कहीं लोहा पीट रहा है, कहीं खेत खोद रहा है, तो कहीं कारखाने की चारदीवारी मे पसीना बहा रहा है। और यह सब प्रयास उन सब अभावो की आग को शान्त करने के लिए हो रहे हैं। पर इन उपायो के

जो परिणाम है, वे सब हमारे सामने स्पष्ट है।

"पारस्परिक मनोमालिन्य, अनैतिक जीवन का ताण्डव नृत्य, हिसा की बर्बरता, आक्रान्ताओ की पैशाचिकता, एक ओर साधनहीन व्यक्तियो का शोषण और दूसरी ओर साधनो का भयकर अपव्यय एवं दुरुपयोग। इन सभी कारणो से असमानता-जनित अशांति एव अराजकता का साम्राज्य अठखेलियां कर रहा है।"

इस भयकर सत्रासपूर्ण वातावरण मे अगर परित्राण का मार्ग कही उपलब्ध हो सकता है, तो वह अहिसामूलक निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति की पुनीत छाया मे ही।

क्या लौकिक और क्या लोकोत्तर, दोनो ही प्रकार के मगल जीवन की आधारशिला भगवती अहिंसा ही है। अहिसा मानवीय चिन्तन की उच्च भूमिकाओ का सर्वोच्च विन्दु है। व्यक्ति से परिवार, परिवार से समाज, समाज से राष्ट्र और राष्ट्र से विश्व बन्धुत्व का जो विकास हुआ है अथवा यत्किंचित् हो रहा है, उसके मूल मे अहिंसा-सिद्धान्त की पवित्र भावना काम कर रही है। मानव सभ्यता के उच्चतम आदर्शों का सही-सही मूल्यांकन अहिसा के रूप मे ही किया जा सकता है। हिसा, विनाश, अधिकार लिप्सा, असहिष्णुता, स्वार्थान्धता के विष से उत्पीडित ससार मे अहिसा ही सर्वश्रेष्ठ अमृतमय विश्राम-भूमि है, जहां पहुंच कर मनुष्य शांति की सास लेता है। स्व-पर को समान धरातल पर देखने के लिए अहिसा की निर्मल आख का होना नितान्त आवश्यक है।

संसार के समस्त धर्मों ने किसी न किसी रूप मे अहिसा-दर्शन को स्वीकार किया है, किन्तु निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति का तो यह प्राण ही है। निर्ग्रन्थ सस्कृति और अहिसा-दर्शन एक-दूसरे के पर्याय माने जा सकते है।

'प्रश्न व्याकरण' सूत्र के अनुसार निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति के प्रवचन का उद्देश्य ही अहिसा-दर्शन का प्रतिपादन है।

"सव्व जग जीव रक्खण दयट्ठयाए पावयणं भगवया सुकहियं।"

इस उपर्युक्त विवेचन के आधार पर स्पष्ट कहा जा सकता है कि आज हाइड्रोजन, उद्जन एवं न्यूट्रान बमों के विनाशकारी युग मे भ्रातृत्व-भाव, विश्व-वात्सल्य, समता-दृष्टि, आत्मोत्कर्ष एवं परम शान्ति का मधुर सदेश देने वाली निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति के सांस्कृतिक मूल्य कितने गहरे है और वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे वे अपना दार्शनिक जगत् मे कितना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है। साथ ही यह स्पष्ट हो जाता है कि निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति का सदेश न किसी युग-विशेष के लिए है और न किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए, अपितु यह सन्देश युग-युगीन सदेश है, जो जन-जीवन, आत्मा-परमात्मा आदि के प्रति चिरन्तन सार्वकालिक सास्कृतिक मूल्यो की प्रतिष्ठा करता है।

यद्यपि कालप्रवाह के कारण इसकी बाह्य पथ-दिशा मे पात्र की योग्यतानुसार साधना मे अभिरुचि की न्यूनाधिकता का वर्गीकरण मुख्य गौण भाव से दृष्टिगोचर होता है और सामयिक परिवर्तन अथवा मोड आते रहते हैं, तथापि इसकी आत्मा, इसकी अन्तरंग जल राशि मे कभी परिवर्तन नहीं आता। वह तो युगो-युगो से पिपासार्त प्राणियो की पिपासा को शान्त करने वाली चिरन्तन शाश्वत धारा है, जिसके द्वारा मानव-जगत् ही नही, सम्पूर्ण प्राणी वर्ग, पथ का आलोक प्राप्त कर, चिरशान्ति की सास ले सकता है।

प्रश्न-2

जैन दर्शन की साधना पद्धति में ध्यान-योग के स्वरूप, महत्त्व एवं उपयोगिता पर कुछ विस्तृत विवेचन करने का अनुग्रह करें?

उत्तर :

स्वरूप : साधना-पद्धति मे, चाहे वह जैन दर्शन की हो अथवा अन्य किसी दर्शन की, ध्यान अनिवार्य अग है। बिना ध्यान के साधना ही नही, ससार के किसी भी कार्य में सफलता अर्जित नहीं की जा सकती है। अत: साधना और ध्यान का अविनाभावी सम्बन्ध है। उसमे जैन दर्शन की साधना तो ध्यान से ही अनुप्राणित है। या यो कहे, वह ध्यान की साधना है। भगवान् महावीर एवं उनके साधक-जीवन पर दृष्टिपात करे, तो ज्ञात होगा कि उन्होने तथा उनके साधको ने महीनों ध्यान-योग की साधना में बिताए थे। चूंकि ध्यान, शब्द अभिव्यंजना का नहीं, अनुभूति का विषय है, अत: उसे परिभाषित करना अथवा उसके स्वरूप का कथन कर पाना उतना ही कठिन है, जितना कि एक जन्मान्ध व्यक्ति को किसी रंग-रूप अथवा प्रकाश का साक्षात्कार कराना। जन्मान्ध व्यक्ति, जिसने कभी किसी भी वस्तु के रूप का अवलोकन नहीं किया हो, उसे हम लाख प्रयास करके भी प्रकाश तो क्या अन्धकार का भी बोध नहीं करा सकते कि "प्रकाश ऐसा होता है।" ठीक उसी प्रकार अनुभूति के अभाव मे "ध्यान" शब्द को स्वरूप की दृष्टि से व्याख्यायित नही किया जा सकता है तथापि अनेकानेक ऋषि-महर्षियो एव पूर्वाचार्यो ने ध्यान को विविध रूपो एव आयामो मे व्याख्यायित किया है। बस, इसी दिशा मे यहां पर भी वही सामान्य प्रयास है।

"ध्यान" का सामान्य अर्थ होता है विचारो का केन्द्रीकरण, विविध दिग्गामी विचार-प्रवाह को एक व्यवस्थित दिशा प्रदान करना। विशेष अर्थो मे "ध्यान" प्रत्येक जीवन-चेतना की अवश्यम्भावी वृत्ति है। जहा जीवन है, वहा भला-बुरा चिन्तन अवश्यम्भावी है और जहां भले-बुरे का चिन्तन है, वहा ध्यान सहज घटित होता है। इस प्रकार जीवन के प्रत्येक क्षण मे ध्यान की धारा दिशा-परिवर्तन के साथ निरन्तर प्रवाहित होती रहती है। कभी उसमे सक्रियता बढ जाती है, तो कभी घट जाती है, किन्तु चिन्तन-धारा को ही "ध्यान" संज्ञा दी जाती है। चिन्तन की उस धारा की प्रमुख दो ही दिशाए है-एक निम्न, दूसरी ऊर्ध्व। निम्नगामी विचार-प्रवाह की भी दो धाराएं है-एक तो अत्यन्त निकृष्टता की ओर ले जाती है, दुर्गति मे पहुचाती है। उसको अप्रशस्त एवं अशुभ कहा जाता है। दूसरी आत्मिक संपरिपूर्णता की अपेक्षा से तो न्यून कही जा सकती है, किन्तु आत्मिक परिपूर्णता मे सहायक होने से तथा लोक-परलोक-संबंधी भौतिक उपलब्धियो का कारण होने से प्रशस्त। उस सर्व आपेक्षिक अथवा ऊर्ध्वगामी को अशुभ और ऊर्ध्वमुखी विचार-प्रवाह को शुभ ध्यान कहा जाता है और जो विचार-प्रवाह केवल ऊर्ध्वगामी हो, उसे शुभ ध्यान कहा जाता है। विचारो की अशुभता के सामान्य परिणाम भयंकर, क्रूरतापूर्ण होते है। अशुभता चेतना को उसके मूल स्वभाव से निकृष्ट स्थिति से भटकाने का कार्य करती है।

निम्नगामी विचार-प्रवाह की अपेक्षा प्रशस्तता जो शुभ भी कहलाती है भौतिक उपादानो की समुपलब्धि मे कुछ सहयोग कारण है। परलोक संबंधी समृद्धि एव आत्मिक सपरिपूर्णता मे यह ध्यान भी साधारण निमित्त बनता है। किन्तु संपरिपूर्ण अध्यात्म-साधक के लिए, जो लोक-परलोक की भावना से ऊपर उठ जाता है, यह ध्यान-अनावश्यक हो जाता है।

जब जीवन के चरम विकास का लक्ष्य निर्धारित हो जाता है और तदनुरूप स्वरूप उपलब्धि की दिशा मे स्थायी शान्ति की प्राप्ति हेतु विचार प्रवाह चलता है, तो वह शुभ ध्यान की कोटि मे आता है। इस ध्यान-प्रवाह मे भी प्रारम्भ मे प्रशस्त संकल्पो एवं विचारो की बहुलता रहती है, किन्तु जब चरम-विकास की दृढता वृद्धिंगत होती जाती है, तब प्रशस्त संकल्पनात्मक भावनाओ की क्रमश: अल्पता एवं अनुभूति का आलोक स्पष्ट होता है, वैसे-वैसे आत्मीय चेतना की अमरता एवं दिव्य शक्तिमत्ता का बोध जागृत होता है। समग्र विश्व के प्रति सहज उपेक्षा-भाव के साथ स्वरूप उपलब्धि की सक्रियता बढती है। विनश्वर पदार्थो की उपेक्षा के साथ जीवन को विमुक्त करने से सम्यग

बोध होता है।

ध्यान की इस प्रारम्भिक भूमिका का स्पर्श होने के पश्चात् ध्यान की गहराई मे प्रवेश पाने के लिए विभिन्न विधियो का अवलम्बन लिया जाता है। प्रारम्भ मे अध्यात्मोन्मुख ध्यान-धारा मे अवगाहन के लिए आदर्श जीवन के विघातक अलीक प्रवंचन, आसक्ति, मोह, भावनिद्रा आदि दुर्विचार रूप शत्रुओ को सत्य, सरलता, अनासक्ति, निर्ममत्व एव समता रूप भावो के द्वारा परास्त करना होता है तथा इन्ही प्रशस्त भावो के द्वारा आत्म-जागृति की साधना की जाती है।

जैसे बडे नगरो की अत्यन्त दुर्गन्धिपूर्ण नाली के पानी मे अवगाहन करने वाला व्यक्ति, अपने बहुमूल्य वस्त्रो के साथ ही उत्तम स्वास्थ्य से भी वचित रहता है, वैसे भी अलीक आदि मलिन विचारो के प्रवाह मे डुबकिया लगाता हुआ इन्सान प्रशस्त ध्यान की अमूल्य साधना रूप स्वास्थ्य को सपादित नहीं कर पाता है। अत: ध्यान-साधना के जिज्ञासुओ के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पहले अपने वर्तमान जीवन मे प्रवहमान अन्ध श्रद्धाओ, मलिन विचारो एवं असत् आचारो मे सशोधन-परिवर्तन करे। इसके बिना पुनीत आध्यात्मिक मार्ग पर गति असभव है।

अशुद्ध श्रद्धा एवं मलिन विचारो के परित्याग का अर्थ श्रद्धा एवं विचारो की मूल शक्ति के त्याग से नही, अपितु उनके संशोधन से है। सागर का क्षार आदि का जीवन-नाश तत्त्वो के घोल-युक्त पानी को संशोधित (फिल्टर) कर जीवनी-शक्तिदायी रूप मे परिवर्तित करने के समान विचारो मे संशोधन किया जाता है। यह विचार-शुद्धि का मार्ग है, विचार-शून्यता का नहीं।

ध्यान-साधना की भूमिका का दूसरा चरण है, जीवन व्यवहार का सम्यक् अवलोकन। अनायास उठने वाली विचार-तरंग का अवलोकन करते हुए उसके गूढ रहस्यो का विश्लेषण करना तथा उनके सम्यक् वर्गीकरण एवं फलाफल अथवा हिताहित का निर्णय करना होता है। शुद्ध एव हितप्रद विचारो को, जो शाश्वत परम शान्ति के हेतु है, दृढतर बनाना तथा अन्य विचार-तरंगो को भी उसी दिशा मे मोडने का प्रयत्न करना साधना के इस बिन्दु की आवश्यकता है। विचारो के अनुरूप ही आचरण के सोपानो पर बढते जाना भी ध्यान-साधक के लिए आवश्यक होता है।

बाह्य दृश्य पदार्थों को देखने, सुनने आदि के द्वारा जो व्यवहार बनता है, उस पर स्वीकृत निर्माण के अनुसार सजग रहने का अभ्यास भी ध्यान-साधक के लिए अपेक्षित होता है।

जीवन के व्यावहारिक क्रियाकलापो मे समुचित परिवर्तन के साथ ही साधना अन्तरंग रूप से परिष्कार पर बल दिया जाना चाहिए। ध्येय के स्वरूप की गरिमा को समझ कर उसके साथ स्वरूप का तुलनात्मक अंकन करने के लिए आवश्यक है कि अपनी आन्तरिक वृत्तियो का सूक्ष्म दृष्ट्या अवलोकन किया जाए।

बिखरी हुई मानसिक वृत्तियो को सम्यक् निर्णीत ध्येय-बिन्दु पर केन्द्रित करने के लिए प्रारम्भ मे विधिपूर्वक श्वास-प्रश्वास-प्रक्रिया का अवलम्बन भी लिया जा सकता है। श्वासानुसन्धान पर अभ्यास के स्थिर होने पर प्राण-केन्द्रो, उनके क्रियाकलापो और व्यवहारो को ठीक समझने का प्रयास किया जाय। तदनन्तर विचार-प्रवाह के संशोधित रूप से जाज्वल्यमान, उज्ज्वल प्रशान्त स्वरूप का साक्षात्कार करते हुए अन्त मे आपेक्षिक ध्येय की उपलब्धि का प्रयत्न प्रारम्भ होता है।

इस प्रकार क्रमिक सशुद्धि-प्रक्रिया के द्वारा आत्मस्वरूप के साक्षात्कार के सोपानो पर यथाशक्ति आरोहण को सहजिक प्रक्रियाओ के साथ वरण करना ही ध्यान की प्रारम्भिक भूमिका के रूप मे अंकित किया जाता है। यह ध्यान

का प्रारम्भिक रूप भी माना जाता है।

आधुनिक युग में विभिन्न ध्यान-साधकों ने अपने-अपने प्रयोग पर ध्यान-योग को व्याख्यायित किया है। हठयोग, कर्मयोग, राजयोग, ज्ञानयोग, लययोग, शब्दयोग आदि उसी के रूप माने जा रहे हैं। इसी प्रकार इसकी षडचक्र-भेदन, कुण्डलिनी-जागरण, सुषुम्ना-सबोधन, खेचरी मुद्रा आदि प्रायोगिक विधियां काफी प्रचलित हुई हैं, किन्तु वे अधिकाशत: वैयक्तिक प्रयोग पर ही आधारित है। यह आवश्यक नहीं कि एक व्यक्ति की प्रयोग-विधि किसी अन्य के लिए भी सार्थक हो जाए। अतः प्रचलित-प्रणालियो मे बहुत कुछ संशोधन, परिवर्तन एवं परिवर्धन अपेक्षित है।

यद्यपि इन प्रयोग-विधियो मे कुछ प्राचीन ग्रन्थों का आधार भी लिया जाता है, किन्तु ग्रन्थो मे जो कुछ, विवेचन उपलब्ध होता है, वह बीज अथवा ताले के रूप मे ही है, जिसकी कुंजी (चाबी) अनुभवी साधको के पास ही रह जाती है। अत: जैसे विधिवत् कुंजी के अभाव मे ताला नहीं खुल सकता है, उसी प्रकार अनुभवी साधक गुरु के अभाव मे ध्यान-साधना भी अभीष्ट फलदायिनी नहीं सिद्ध हो पाती है।

ध्यान-साधना की इसी दुरुहता के कारण जैन दर्शन मे हठयोग, राजयोग आदि को अधिक महत्त्व न देकर सहजयोग को महत्त्व दिया गया है। आज ध्यान-साधना की क्लिष्टताओ का मुख्य कारण भी यही है कि अधिकांश साधक सहज योग की साधना से अनभिज्ञ है, जबकि सहजयोग ही विशिष्ट योग है और वही ध्यान-साधना की मूलभित्ति है। जैन दर्शन के व्याख्याता एवं अनुसर्ता भी अधिकांशतः ध्यान-विवेचना में हठयोग आदि के प्रसगोपात वर्णन को ही प्रमुखता देकर मौलिक सहजयोग से प्रायः तटस्थ बनते जा रहे हैं। फलस्वरूप ध्यान, जो जीवन-विकास का परम पवित्र, अमोघ साधन है, पल्लवित-पुष्पित नहीं हो पा रहा है।

आधुनिक ध्यान-साहित्य के अवलोकन से कभी-कभी लगता है कि कुछ व्यक्ति अपनी क्षुद्र प्रतिष्ठा की प्यास को शान्त करने के लिए ध्यान जैसी पवित्र क्रिया का दुरुपयोग कर रहे है और सामान्य जनता को दिग्भ्रमित कर अपनी स्वार्थपूर्ति कर रहे है।

सहजयोग की ध्यान-साधना साधक को इन सभी छलनापूर्ण वृत्तियो से बचाकर सहज जीवन की ओर गतिशील करती है। वास्तव में ध्यान की विभिन्न पद्धतियो मे सहजयोग का जो महत्त्व है, वह अलौकिक है और उसी के द्वारा व्यक्ति स्वप्रतिष्ठित होकर परम सत्य एव शाश्वत शाति को उपलब्ध हो सकता है। यह कथन अतिशयोक्तिपूर्ण प्रतिभासित हो सकता है, किन्तु अनुभूति का आलोक इन शब्दो की सत्यता को प्रमाणित कर सकता है।

महत्त्व : जैन दर्शन से उपदर्शित ध्यान-योग किंवा सहजयोग का कितना महत्त्व है, यह तो अनुभूति का विषय है। अत: सम्यक् ध्यान-साधक ही उसकी अनुभूति का रसास्वादन कर सकता है। किन्तु यह ध्रुव सत्य है कि आज के भौतिक जगत् मे विज्ञान के क्षेत्र मे अग्नि, विद्युत, भाप, गैस, तेल, अणु विस्फोटक लैसर आदि का जितना महत्त्व है, उससे सहस्राधिक महत्त्व (साधना के क्षेत्र मे) ध्यान का है।

हठयोग, कर्मयोग आदि अन्यान्य साधना-पद्धतियो मे एकान्तिक आग्रह मूलक दृष्टि का प्राधान्य होने से, विकृति एवं विक्षिप्तता की अधिक संभावनाएं रहती है, जबकि सहजयोग इन सभी विकृतियो से अलग हट कर अपना महत्त्व स्थापित करता है।

जैनागमो मे सहजयोग की मौलिक प्रक्रियाओ का आध्यात्मिक अनुसधानपूर्वक वैज्ञानिक विवेचन वटवृक्ष की

शाखाओ की भाति बहुआयामी विस्तार मे उपलब्ध होता है।

साकेतिक रूप से ध्यान का वर्गीकरण आगम की भाषा में यो हुआ है-

"चउव्विहे झाणे, पण्णत्ते तंजहा-अट्ठे झाणे, रुद्दे झाणे, धम्मे-झाणे, सुक्के झाणे।" (स्थानाग सूत्र-4) आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्म ध्यान ओर शुक्ल ध्यान। इन चारो ध्यानो के स्वरूप एवं भेद-प्रभेदों का विस्तृत विवेचन उत्तरवर्ती साहित्य मे उपलब्ध होता है, जो जैन-दर्शन कथित ध्यान की महत्ता पर गहरा प्रकाश डालता है।

आवश्यकता है नित नूतन आविष्कर्ता वेज्ञानिको की भाति अन्तरग खोज के प्रति सपूर्ण समर्पणा की। जैसे भौतिकी अनुसंधानो मे अनुरक्त वेज्ञानिक अपनी शारीरिक एव पारिवारिक दृष्टि तक के प्रति अनासक्त बन कर केवल आविष्करणीय तत्त्व के प्रति ही तन्मय हो जाता है, ठीक उसी प्रकार ध्यान-साधक के लिए भी आवश्यक है कि वह केवल ध्यान की शव्दात्मक एव भेदात्मक विवेचना तक ही अटक कर नहीं रह जाये, अपितु ध्यान मे ध्येय के प्रति सपूर्ण रूप से समर्पित हो जाये। सर्वतोभावेन समर्पणा के आधार पर ही ध्यान के अनुभूति मूलक महत्त्व को हृदयगम किया जा सकता हे।

उपयोगिता : शरीर-निर्वाह के लिए शुद्ध अन्न, जल एव वायु (ऑक्सीजन) की जो उपयोगिता है, वही उपयोगिता अध्यात्म के लिए ध्यान की है।

कहा जा चुका है कि ध्यान की मुख्य दिशाए दो हे-शुभ ओर अशुभ। जिस प्रकार दूषित अन्न, जल एव वायु व्याधि एवं दु:ख के कारण वन जाते हैं, उसी प्रकार दुर्ध्यान एव दुश्चिन्तन आत्मिक शाति के क्षेत्र में व्याधि, शोक, संक्लेश आदि के निमित्त वन जाते हे। जेसे शुद्ध वायु आदि की आवश्यक जीवनोपयोगी तत्त्वो के अभाव मे शारीरिक ऊर्जा को क्षति पहुंचती है अथवा ऊर्जा क्षीण हो जाती है। उसी प्रकार प्रशस्त ध्यान किवा पवित्र विचारो के अभाव मे चेतनागत ऊर्जा अथवा भाव प्राण की शक्ति क्षीण होती चली जाती है। अत: पवित्र विचारयुक्त ध्यान प्रारंभिक ध्यान-साधको के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है।

चिन्तन की पवित्र धारा जीवनरत राग-द्वेपात्मक कूडे-करकट को ध्वस्त करती है। फलस्वरूप जीवन मे नैतिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक जागरण होता है,जो जीवन निर्माण मे पाथेय का कार्य करता है।

चिन्तन की वही पवित्र धारा जिसे हमने ध्यान की सज्ञा दी है आगे विकासोन्मुख होती हुई सागर की अतुल गहराई मे रूपान्तरित हो जाती है, जहां ध्याता और ध्येय एकाकार बन जाते है, साधक साध्य मे रूपान्तरित हो जाता है।

इस प्रकार संक्षेप मे इतना ही कहा जा सकता है कि ध्यान के मौलिक स्वरूप, महत्त्व एवं उसकी उपयोगिता को आधुनिक ध्यान-साधक ठीक से हृदयगम कर अनुभूति के प्रकाश का वरण करे तो ध्यान साधना मे आशातीत सफलता मिल सकती है।

प्रश्न-3 :

धर्म और विज्ञान परस्पर विरोधी हैं या पूरक?

उत्तर :

चूंकि प्रश्न युगसापेक्ष है, अत: उत्तर मे सापेक्षता होनी सहज है। वैसे जैन दर्शन अनेकान्त दर्शन है, अत: वैज्ञानिक विश्लेषण भी अनेकान्त दर्शन के आधार पर धर्म का विरोधी अथवा पूरक हो सकता है।

अगर विज्ञान की शाब्दिक व्याख्या की जाये, तो वह होगी ''**विशिष्टं ज्ञानं विज्ञानम्**'' अर्थात् विशेष ज्ञान को विज्ञान कहते है। शाब्दिक अर्थ की दृष्टि से विज्ञान धर्म का विरोधी नही हो सकता है, क्योकि ज्ञान आत्मा का मौलिक धर्म है और विशेष ज्ञान-आत्म-परिष्कार का ही कारण बनता है, किन्तु विज्ञान शब्द का आज जो भौतिक आविष्कारो के लिए रूढ अर्थ मे प्रयोग हो रहा है, उस विज्ञान शब्द से धर्म का सम्बन्ध उसके प्रयोग की दिशा के आधार पर पूरक अथवा विरोधी दोनों अर्थों मे हो सकता है।

धर्म की मौलिक परिभाषा है-आत्म स्वरूप मे लीनता। जैनागमो मे ''**वत्थुसहावो धम्मो**'' के अनुसार वस्तु के स्वभाव को धर्म कहा गया है, किन्तु यहां हम जिस धर्म के सम्बन्ध मे विचार कर रहे है, वह है शुद्ध चैतन्य का स्वरूप-रमण रूप स्वभाव अर्थात् परम चेतना का आत्मभाव। शुद्ध चैतन्य इस दृष्टि से कि संसारगत कर्मयुक्त चेतना को साक्षेप दृष्टि से रूपी भी माना गया है। रूपी का धर्म आत्मा का शुद्ध स्वभाव नहीं बन सकता है। अस्तु, धर्म से तात्पर्य है-राग, द्वेष, मोह, ममत्व आदि दुष्प्रवृत्तियो से रहित आत्मा का मूल स्वभाव।

इसके विपरीत आज के रूढ अर्थ वाला विज्ञान आत्म धर्म को गौण कर भौतिक ऊर्जा के विकास-परिष्कार से अधिक सम्बन्धित है, अत: दोनो का कोई मौलिक सम्बन्ध स्थापित करना समन्वय की अति होगी तथापि विज्ञान को उसके उपयोग के आधार पर धर्म की बाह्य परिधि मे अथवा आत्म-कल्याण सम्पादन मे सहयोगी माना जा सकता है, बशर्ते कि उस भौतिक विकास का उपयोग जनकल्याण, जनशांति एव चेतना के परम विकास के लिए हो।

अहिसा, सत्य, अस्तेय आदि सिद्धान्त धर्म के मूर्त्त रूप है। विज्ञान यदि इन सिद्धान्तो की सुरक्षा का कवच बनता है और सम्पूर्ण मानव समाज के संत्रास को समाप्त करने का कार्य करता है तो वह निश्चित धर्म किवा जीवनोत्थान के मार्ग मे पूरक बन कर उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

तात्पर्य यह है कि मात्र विज्ञान अपने आप मे धर्म का न पूरक हो सकता है, न विरोधी। उसका प्रयोगकर्त्ता ही उसमे पूरकता अथवा विरोध का समारोप करता है। कलम सत्य-लेखन मे प्रयुक्त हो सकती है और असत्य-लेखन मे भी। सौ रुपए का उपयोग किसी अपंग को सहयोग देकर भी किया जा सकता है और शराब पीकर पागल बनने मे भी। वास्तव मे पदार्थ अथवा साधन अपने आप मे न बुरे होते है न अच्छे। उसका प्रयोग करने वाला जिस दिशा मे चाहे, उनका उपयोग कर सकता है।

ठीक यही स्थिति वैज्ञानिक अनुसंधानो की है। वर्तमान विज्ञान ने भौतिक साधनो के विकास मे आशातीत सफलता अर्जित की है, इसलिए वर्तमान युग का अपर नाम वैज्ञानिक युग बन गया है। मानव जीवन को सुखी और समृद्ध बनाने हेतु विज्ञान ने अनेकानेक भौतिक सुविधाएं उपस्थित की है, इसमे दो मत नहीं हो सकते।

वैज्ञानिक गवेषणाओ के द्वारा शल्य-चिकित्सा का जो विकास हुआ है, उसमे मरणासन्न व्यक्ति का उपचार हो सकता है और उसकी रक्षात्मक प्रक्रिया के द्वारा अहिंसा को पुष्ट किया जा सकता है। यातायात एवं समाचार-संचार के साधनो द्वारा दुर्भिक्ष से पीडित क्षेत्रो मे आवश्यक साधन-सामग्री पहुचा कर हजारो प्राणियो के प्राण बचाये जा सकते है। इसी प्रकार विज्ञान की अन्य अनेक सृजनात्मक उपलब्धियो पर सन्तोष व्यक्त किया जा सकता है और उन्हे धर्म मे पूरक माना जा सकता है।

शक्ति (ऊर्जा) पर जब तक विवेक और नीति का नियंत्रण रहे, तभी तक उसकी उपयोगिता है। दुष्टता के साथ उसकी दुरभिसंधि जुड जाने पर विकास एवं जन कल्याण के स्थान पर विनाश एवं संहार के दुष्परिणाम ही उपस्थित होगे।

आज के वैज्ञानिक विकास को देखकर सामान्य जनमानस एक ओर प्रसन्नता से झूमता दिखाई देता है, तो दूसरी ओर इसके संभावित दुष्प्रयोग की विभीषिका से चिन्ताग्रस्त भी दिखता है।

क्षुद्र स्वार्थी मनुष्यो ने विशेषकर सत्ता-लोलुप राजनीतिज्ञो ने वैज्ञानिक आविष्कारो का भयंकर अणु-आयुधो के रूप मे जो दुरुपयोग किया है, वह निश्चित ही जन-साधारण मे विज्ञान के प्रति घृणा का कारण बन गया है। हिरोशिमा और नागासाकी पर बम वर्षा से विनाश का जो ताण्डव नृत्य हुआ है, वह विज्ञान के प्रति सहज भयाक्रान्तता का भाव पैदा कर देता है। निकट भविष्य मे हुए वियतनाम-युद्ध मे वैज्ञानिक अस्त्रो का जो दुरुपयोग हुआ और उसके द्वारा लाखो निरपराध प्राणी स्वाहा हो गए, यह किसी से छिपा नही है।

विज्ञान का सहारा पाकर मानव दैत्य बनता जा रहा है। घातक अस्त्रो के निर्माण ने मानवी सस्कृति को, जिसे विकसित होने मे लाखो वर्ष लगे, विनाश के कगार पर लाकर खडा कर दिया है। अपनी सामान्य-सी सत्ता-लिप्सा के कारण, वैज्ञानिक साधनो का नर-सहार के रूप मे जो उपयोग हो रहा है, वह धर्म का पूरक नही है, घातक ही कहा जा सकता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इस विध्वसनात्मक स्थिति मे विज्ञान को दोषी मानकर क्या हेय मान लेना चाहिए? इसका छोटा-सा उत्तर होगा एकान्त रूप से ऐसा नहीं माना जा सकता है। प्रश्न हो सकता है कि भौतिक विज्ञान जो कि आशिक सत्य की खोज है, वह हेय अथवा सर्वथा बुरा कैसे हो सकता है? बुरा तो वह इंसान है, जो अपने निहित स्वार्थ के लिए विज्ञान का दुरुपयोग करता है। ऑपरेशन के चाकू से यदि रक्षात्मक भावना से ऑपरेशन किया जा रहा है, तो वह उस चाकू का सदुपयोग होगा और उसी से स्वार्थवश किसी का गला काटा जाय तो वह उसका दुरुपयोग होगा। इसमे चाकू को दोषी कैसे कहा जा सकता है? दोषी तो उसका उपयोगकर्त्ता है।

जिन लेजर किरणो के रचनात्मक उपयोग से कैसर जैसे दु.साध्य रोगो पर नियंत्रण पाया जा सकता है, आख की पुतली या किसी कोने मे ट्यूमर आदि हो जाने पर एक सैकण्ड मे हजारवे भाग मे ऑपरेशन द्वारा रोगी को रोग-मुक्त किया जा सकता है, उन्ही लेजर किरणो के विध्वंसक उपयोग द्वारा महाविनाश की लीला प्रस्तुत की जा सकती है। वैज्ञानिको के अनुसार लेजर किरणो का युद्ध अणुयुद्धो से सस्ता पड़ेगा और पलक झपकते ही अभीष्ट क्षेत्र के सैनिक और नागरिक ही नहीं, वृक्ष, फसल, घास-पात सब भस्म हो जायेगे। लेजर किरणो का प्रयोग एक जादुई चिराग-सा है जो सृजन और विनाश दोनो क्षेत्रो मे विस्मयकारी भूमिका अदा कर सकता है। रूस और अमेरिका दोनो देशो के हजारो वैज्ञानिक सैकडो प्रयोगशालाओ मे इस महाशक्ति की साधना मे अहर्निश जुटे हुए है।

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-शोध-अनुसधान सस्था के निदेशक डॉ फ्रेकवारनेवी ने संसार को चेतावनी दी है कि जिस क्रम मे उत्साह से प्रकृति विजय के अन्तर्गत मारक शक्तिया विकसित और उपलब्ध कराने की होड चल रही है, उसके परिणाम घातक होगे।

जैन दर्शन की अनेकान्त शैली से कहे तो विज्ञान धर्म का पूरक भी हो सकता है और घातक भी। जो वैज्ञानिक प्रयोग अहिसा, सत्य आदि की प्रतिष्ठा मे सहयोग प्रदान करते है वे धर्म एवं मानव कल्याण के पूरक है और जो प्रयोग क्षुद्र स्वार्थों से प्रेरित हो विनाशलीला की रचना कर रहे है, वे धर्म और मानव-कल्याण मे बाधक है। अत: आवश्यक है कि वैज्ञानिक प्रयोग पर आत्मदर्शन एव विवेकपूर्ण सम्यग् निर्णय का नियत्रण रहे, ताकि प्रचण्ड वैज्ञानिक शक्ति का जन कल्याण एवं विश्व कल्याण के लिए समता के धरातल पर सही उपयोग हो सके।

प्रश्न-4.

आत्म-साधना की दृष्टि से जैन धर्म की यह ध्रुव मान्यता है कि प्रत्येक आत्मा समान रूप से शक्ति संपन्न

है, फिर लिंग भेद को मुख्यता देकर साधना में समान होते हुए भी साध्वी को द्वितीय स्थान क्यों दिया गया?
उत्तर

यह सत्य है कि जैन दर्शन की मौलिक मान्यता के अनुसार ससार की सभी आत्माए स्वरूप की दृष्टि से समान हैं। भगवान् महावीर का स्पष्ट उद्घोष है कि "**अप्पसम मन्निज्ज छप्पिकाए**" अर्थात् संसार की समस्त आत्माओ को अपनी आत्मा के तुल्य समझो, अथवा "**एगे आया**" संसार की सभी आत्माएं स्वरूप की दृष्टि से एक है। जो अनन्त ज्योति स्वरूप परमात्मा का है, वही संसार की एक छोटी-से-छोटी आत्मा का भी है।

इतना होते हुए भी ससार के समस्त प्राणियो मे कर्म-जनित इन्द्रिय एव देह सम्बन्धित भेद-रेखा भी स्पष्ट दिखाई देती है। एक वनस्पति की क्षुद्रतम योनि मे रहने वाली आत्मा है, तो दूसरी कीडो-मकोडो, पशु-पक्षी की देह मे रहने वाली आत्मा है और इससे विकसित मानव देहधारी और देव वपुधारी आत्माएं भी हैं। ये सब भिन्नताएं स्पष्ट परिलक्षित होती है। इतना ही नही, मानव तनधारी आत्माएं भी सभी समान कहां है? उनमे भी कर्म-जनित, वर्गजनित अनेकानेक भिन्नताएं देखी जाती है।

उपर्युक्त भिन्नताओ का कारण जैन दर्शन मे प्राणियो के अपने-अपने शुभाशुभ कर्म को माना गया है। अपने पूर्वार्जित कर्म के आधार पर ही विभिन्न प्रकार के शारीरिक रचना-भेद एवं संगठन भेद उत्पन्न होते है। एक पुरुष की शारीरिक रचना सुगठित एव सुडोल होती है, उसके देह की मजबूती फौलादी होती है। इसके विपरीत दूसरा व्यक्ति कुरूप, विकलांग, वीभत्स एव कमजोर शरीर वाला होता है। इसके पीछे जो कारण है, वे अपने-अपने पूर्वोपार्जित कर्म हैं। प्रारम्भ मे भले ही हम इसे आनुवांशिक संस्कार अथवा प्राकृतिक उपादान मान ले, किन्तु वैसा संयोग भी कर्म-जनित ही हो सकता है।

तात्पर्य यह है कि दैहिक भिन्नता का मुख्य कारण जैन धर्म मे कर्म को माना गया है और यही स्थिति स्त्री-शरीर और पुरुष-शरीर की रचना भेद के सन्दर्भ मे है। स्त्री और पुरुष की शारीरिक भिन्नता भी कर्म जनित है।

अब प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार के कर्म के कारण स्त्री शरीर की उपलब्धि होती है और किस कर्म के कारण पुरुष शरीर की। इस प्रश्न के उत्तर की गहराई में जाने के लिए आगमिक कर्म-सिद्धान्त का आश्रय अपेक्षित होगा।

आगम के अनुसार स्त्रीवेद कर्म का बन्धन मायाचार की प्रधानता से होता है और वह भी प्रथम एवं द्वितीय गुणस्थान जैसी विचारो की निम्न स्थिति मे, जबकि पुरुषवेद के बन्धन का कारण सरल प्रकृति होता है और गुणस्थान की दृष्टि से नवें गुणस्थान जैसे उच्च भावो तक होता है।

इस आगमिक सैद्धान्तिक दृष्टिकोण के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्री शरीर की उपलब्धि निम्न विचारो के कारण होती है और पुरुष देह का निर्माण उच्च विचार जनित होता है। इस भेद-रेखा को प्राकृतिक शरीर रचना के माध्यम से भी स्पष्ट समझाया जा सकता है। प्राकृतिक दृष्टि से स्त्री शरीर स्वसुरक्षा मे पराश्रित रहता है। स्त्री शरीर की यह प्राकृतिक कमजोरी है कि वह अपने शील की सुरक्षा प्राण देकर ही कर सकती है, अन्यथा बलात्कारी आक्रामक से बचना उसके सामर्थ्य के बाहर है। पुरुष पर कोई उसकी इच्छा के बिना आक्रमण कर उसे चारित्रिक पतन की ओर नहीं ले जा सकता। यह और ऐसे ही कुछ अन्य प्राकृतिक तथ्य यह मानने को बाध्य कर देते है कि शारीरिक दृष्टि से स्त्री का दूसरा स्थान है।

अब प्रश्न हो सकता है कि यह सब तो देह रचना से सम्बन्धित ऊपरी भेदरेखा है, किन्तु साधना के क्षेत्र मे

देह-रचना और वह भी पूर्वजन्मोपार्जित कर्म का क्या सम्बन्ध है? वन्दन केवल शरीर को तो किया ही नही जाता है, वन्दन मे वन्दनीय के गुणो की मुख्यता होती है।

जिज्ञासा समीचीन है। वन्दन एवं सत्कार भाव मे भावात्मक दृष्टि की मुख्यता रहती है। शरीर की दृष्टि से कोई कैसी ही आकृति वाला क्यो न हो, वन्दन का भाव उसमे निहित गुणो के प्रति ही होगा, किन्तु वह वन्दन भावात्मक होगा और उस भावात्मक वन्दन मे मतभेद की गुजाइश भी नही है। भाववन्दन, जो गुणो के आधार पर होता है, वह एक पचास वर्ष का दीक्षित मुनि भी दो दिन की दीक्षा पर्याय वाली साध्वी को करता है। प्रतिदिन **'णमो लोए सव्वसाहूणं'** का उच्चारण जो पच्चीसो वार होता है, एक आचार्य भी करते है, उसमे साधु-साध्वी की कोई भेद-रेखा नही खीची गई है। प्रात: और सन्ध्या प्रतिक्रमण मे पचपदो की वन्दना मे साधु-साध्वी सभी को वन्दन किया जाता है। इस प्रकार भाव-वन्दन का जहा तक प्रसग है, वह एक सामान्य साध्वी के प्रति भी साधु का होता ही है।

किन्तु द्रव्य वन्दन, जो देहपिण्ड एव वर्तमान साधना स्तर के आधार पर होता है, वह साधु के द्वारा दीर्घ दीक्षा पर्याय वाली साध्वी को भी नहीं होता है। इसका कारण वर्तमान देहपिण्ड और तदनुरूप भावना जगत् है। वीतराग सिद्धान्त किसी एकान्तिक आग्रह को नहीं मानता है। वहा प्रत्येक क्रिया को द्रव्य और भाव दो दृष्टियो से आका जाता है। भाव-वन्दन मे समर्पित होते हुए भी द्रव्य-वन्दन नहीं करना वीतराग-सिद्धान्त की गभीर सैद्धान्तिक दृष्टि पर आधारित है। जिन पूर्व कर्मों के परिणाम स्वरूप वर्तमान पुरुष अथवा स्त्री का शरीर मिला, उन्ही कर्मों के अनुसार देह के अनुरूप भावनाएं बनती हैं। जैनागमो के अनुसार पुरुष, स्त्री और नपुसक दैहिक व्यक्तियो के बीच मोहजनित भावनाओ का बहुत अधिक अन्तर होता है और यह सैद्धान्तिक अवधारणा है कि गुणो का तारतम्य मोह की न्यूनाधिकता पर अवलम्बित है। मोहनीय, प्रसगत: वेद मोहनीय की जिसमे जितनी न्यूनता रहती है, भावात्मक दृष्टि से साधना मे वह उतनी ही उच्चता का वरण करता है और मोह की जितनी उत्कृष्टता रहती है, उतनी ही वह गुणात्मक क्षेत्र मे अविकसित माना जाता है।

दीक्षा-पर्याय सम्बन्धी ज्येष्ठत्व एवं कनिष्ठत्व भी किसी सीमा तक मोहजनित भावना के तारतम्य पर आधारित होता है। चूंकि पुरुष, स्त्री और नपुसक वेद के उदय में वैकारिक भावनाएं क्रमश: अधिकाधिक होती है, अत: तीनो की गुणात्मक स्थिति भी उसी अनुपात मे न्यूनाधिक होती है। आगमो मे पुरुष, स्त्री और नुपसक की वैकारिक भावनाओ को अग्नि से उपमित करते हुए कहा गया है कि पुरुष वेद-जनित वैकारिक भावना तृणाग्नि के तुल्य होती है और स्त्री वेद-जनित वैकारिक भावना करिषाग्नि के समान होती है, जबकि नपुंसक वेदजनित वैकारिक भावना अरण्य-दाह (दावाग्नि) के समान होती है। जैसे घास के तिनके आग से शीघ्र प्रज्वलित होते है और पुन: शान्त भी शीघ्र हो जाते है, वैसे ही पुरुष मे वैकारिक भावनाओ का वेग तीव्रता के साथ आता है, किन्तु वह क्षणिक होता है। इसके विपरीत करिषा (कण्डा) प्रज्वलित भी धीरे-धीरे होता है और उपशांत भी शनै: शनै: होता है। ठीक उसी प्रकार स्त्री वेदोदय-जनित भावना कुछ अधिक वैकारिक एवं स्थायी होती है। इसी प्रकार नपुंसक वेद अरण्य-दाह अर्थात् भयंकर वन के जलने के समान बहुत अधिक स्थायी विकारो वाला होता है।

इस प्रकार भावात्मक दृष्टि भी मुख्यतया स्त्री को द्वितीय स्थान ही प्रदान करती है। यद्यपि उपर्युक्त मोहजनित भावनाओ का कथन बहुलता का है उसमे कुछ आपवादिक उदाहरण मिल सकते हैं किन्तु आम्र-वन मे सौ आम्र-वृक्षों के साथ पांच-दस नीम के वृक्ष होते हुए भी उसे आम्रवन ही कहा जाता है।

इस प्रकार भावो की इस दृष्टि से मोह कर्म का उदय पुरुष वेद मे सबसे अल्प होता है और मोह की अल्पता की प्रधानता के कारण पुरुष को ज्येष्ठत्व स्वत: प्राप्त हो जाता है क्योकि पूर्व जन्मोपार्जित वेद मोहनीय कर्म के

अनुरूप ही देह की उपलब्धि होती है।

इतना सब कुछ होते हुए भी कभी-कभी मुनि की अपेक्षा साध्वी, साधना मे विशेष प्रगति कर सकती है, जहा उसके पूर्व कर्म एक तरफ छूट जाते है। किन्तु यह उसका वर्तमान पुरुषार्थ के द्वारा भावात्मक विकास होता है, वर्तमान शरीर की निर्मिति के साथ उसका कोई सम्बन्ध नही है और उस स्थिति को पूर्व मे भाव-वन्दन के प्रसग मे स्वीकार किया जा चुका है। परन्तु व्यक्ति-पिण्ड-शरीर वन्दन का जहां तक प्रसंग है, उसमें पुरुष का ज्येष्ठत्व मानना पडेगा।

यहां यह स्पष्ट हो जाता है कि भावात्मक साधना मे अथवा गुणस्थानो के आरोहण मे समान स्थिति होते हुए भी द्रव्य देह-पिण्ड की दृष्टि से द्रव्य-वन्दन पुरुष को ही होगा। कोई विरक्त आत्मा भावो की दृष्टि से उत्कट वैराग्य के क्षणो मे सातवे गुणस्थान मे पहुंच जाती है, तो भी वन्दन-व्यवहार साधु पोषाक के आधार पर षष्ट गुणस्थानवर्ती मुनि को ही होगा। षष्ट गुणस्थानवर्ती मुनि भावात्मक दृष्टि से अपने से श्रेष्ठ समझते हुए भी सप्तम गुणस्थानवर्ती वैरागी को नमस्कार नही करता है।

इस प्रकार गृहस्थाश्रम में स्थित तीर्थंकर एक सामान्य मुनि से ज्ञान एव श्रद्धा की दृष्टि से अधिक योग्य होते है, तथापि वे साधुओ द्वारा वन्दनीय नही होते है। वैसे ही साध्वी, भावो की दृष्टि से कुछ उच्चस्थिति पर पहुंच जाए, तथापि वन्दन ज्येष्ठ पदयुक्त मुनि को ही करेगी।

इन्हीं उपर्युक्त दृष्टिकोणो से जैनागमो मे पुरुष को गुणात्मक, देहात्मक एवं भावात्मक दृष्टि से प्रधान मान कर ज्येष्ठत्व प्रदान किया गया है। जिन आगमों की पुनीत छाया में हमारी समस्त साधना गतिशील है, अतः इन्हीं आगमो मे उपदर्शित सघीय व्यवस्था को झुठलाया नही जा सकता है।

स्थानांग आदि सूत्रों मे दस कल्प (मर्यादाओ) का विवेचन हुआ है। उसमे पुरुष ज्येष्ठत्व कल्प का भी वैधानिक प्रारूप है।

कुछ आधुनिक विचारको का कथन है कि नियम-मर्यादाओ का निर्धारण पुरुष ने किया है, अतः उसने अपने को महान् अथवा ज्येष्ठ घोषित कर दिया है, किन्तु ये विचार छिछली बुद्धि के है। मर्यादाओ का निर्धारण किसी सामान्य व्यक्ति के द्वारा नहीं हुआ है बल्कि परम वीतरागी सर्वज्ञ-सर्व द्रष्टा महाप्रभु के द्वारा मर्यादाओ का निर्धारण हुआ है। वे कभी भी पक्षपात नही कर सकते। जैनागमो के परिशीलन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होने नारी-जाति के उत्थान के लिए कितने सशक्त स्वर दिए और नारी को अध्यात्म साधना की कितनी उच्च भूमिका पर प्रतिष्ठित किया है, किन्तु जो नैसर्गिक भिन्नताएं है, उन्हे झुठलाया भी नहीं है।

मानव निर्मित मर्यादाओ के प्रति तो हम उक्त तर्क कर सकते है, किन्तु प्रकृति के अन्य उपादानो पर दृष्टिपात करे तो वहां भी हमे वही व्यवस्था दिखाई देती है।

वनराज सिंह, जगल का राजा होता है, सिंहनी नहीं। हाथियो के यूथ का नायक गजराज ही होता है। बन्दर समूह मे पच्चासो बन्दरियो का स्वामी बलवान बन्दर ही होता है। पशु जगत् की प्राकृतिक व्यवस्था से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि वहा भी पुरुष को ज्येष्ठत्व ही नहीं नायकत्व भी प्रदान किया गया है। तो वहां की मर्यादाओ का निर्धारण किसने किया और क्या उसमे भी पक्षपात किया गया है?

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि पुरुष प्राकृतिक एव आगमिक दृष्टियो से ज्येष्ठ सिद्ध होता है और जो ज्येष्ठ होगा, उसे वंदन आनुषगिक ही होगा। व्यावहारिक जीवन मे भी देखा जाता है कि दस वर्ष की उम्र वाले

चाचा एवं मामा को 25 वर्ष की उम्र वाले भतीजे-भानजे नमस्कार करते है। सादगी एवं सद्‌गुण सम्पन्न 40 वर्षीय बहू पुन: विवाहित 20 वर्षीय सास को प्रणाम करती है। यही नही, मुनि-परम्परा मे भी पर्याय ज्येष्ठ पुत्र को लघु दीक्षा पर्याय वाला पिता सम्मान देता है। एक 20 वर्षीय आचार्य के नेतृत्व मे बडे-बडे स्थविर महामुनि चलते है और उनका सत्कार-सम्मान करते है। यह सब पद की महत्ता है। राष्ट्रपति-पद राष्ट्रीय प्रजातत्र मे सर्वोच्च माना जाता है। अतएव एक पेतीस वर्षीय राष्ट्रपति का आदर सत्कार बडे-बडे अनुभवी राष्ट्र नेता करते हैं।

उपर्युक्त तथ्यो के आधार पर यह निष्कर्ष फलित होता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से केवल्यज्ञान जैसी सर्वोच्च सत्ता की अधिकारिणी मानी जाने के उपरान्त भी व्यावहारिक एव शारीरिक दृष्टि से स्त्री को द्वितीय स्थान ही प्राप्त होता हैं। इस स्थिति को कुछ आधुनिक क्रातिकारी जागरुक महिलाओ ने भी स्वीकार किया है। विश्रुत विद्वान् श्री जैनेन्द्रजी ने अपनी कृति ''समय और हम'' मे एक विदुषी अमेरिकन महिला का प्रसंग देते हुए लिखा है कि उनके कथानानुसार हमे पुरुषो से द्वितीय स्थान स्वीकार कर लेना चाहिए। इसी प्रकार भारतीय सस्कृति मे, जो अति प्राचीन संस्कृति है, नारी का पितृ पक्ष सम्बन्धी गोत्रादि परिचय बदल जाता है। उसे पुरुष के माध्यम से ही पहचाना जाता है। सन्तान की परम्परा भी पुरुष वशानुसार मानी जाती है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जैनागमो एव तीर्थंकरो ने नारी को जो द्वितीय स्थान अपनी सघीय व्यवस्था मे प्रदान किया है, वह यौक्तिक एव समीचीन है। इसमे नारी जाति के अनादर की भावना अथवा उसे हीन समझने की कल्पना करना निरी मूर्खता ही होगी। उपर्युक्त व्यवस्था प्रकृति, कर्म सिद्धान्त एवं सामाजिक संघीय व्यवस्था के आधार पर वनी है, न कि हीन बुद्धि से।

प्रश्न-5

वर्तमान सन्दर्भ में युवा वर्ग में धार्मिक असतोष के कारण क्या है? उनके समाधान क्या हो सकते हैं?

उत्तर

युवावस्था कुछ कर गुजरने की अवस्था होती है और युवा खून क्रान्ति पथ का अनुगामी होता है। यौवन की इस क्रान्तिकारी वेला मे युवक नित नूतन दिशा की खोज करता है। उसे सदियों से चला आ रहा पुरातन-पथ समीचीन नहीं लगता है। अत: वर्तमान सन्दर्भ मे ही नही युवावस्था सदैव ही अपनी पुरातन मान्यताओ के प्रति असन्तुष्ट रही है। आज से नहीं, सदियो से यही क्रम चल रहा है। प्रत्येक युग मे पुरानी पीढ़ी के स्वर रहे है कि युवक अनास्थावान बनते जा रहे है, उन्हे धर्म पर विश्वास नही है आदि। और जब वे सीनियर होते है, तो अपने जूनियरो के प्रति उनके भी वे ही स्वर होते हैं। इस असन्तोष मे काल क्रम के अनुसार उतार-चढाव अवश्य हो सकता है, किन्तु वह अपने वर्तमान से सन्तुष्ट कभी नही हो पाता है। और जब वह असन्तुष्ट होता है, तो सास्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक सभी क्षेत्रों मे क्रान्ति चाहता है, परिवर्तन चाहता है।

चूकि धार्मिक उत्कर्ष के मूल सिद्धान्त अपरिवर्त्य होते है, अत: अन्यान्य क्षेत्रो मे परिष्कारात्मक सामन्जस्य बिठाते हुए भी धार्मिक क्षेत्र मे वह सामन्जस्य नही बिठा पाता है और उससे विरोध करता चला जाता है।

वर्तमान सन्दर्भ मे भी कुछ ऐसी ही स्थिति परिलक्षित होती है। चूंकि आज का वातावरण अत्यधिक भौतिकता प्रधान बन गया है, अत: युवा वर्ग पर उसका प्रभाव सहज होता है और एत द्वारा अध्यात्म के प्रति उनकी उपेक्षा भी अपने आप बनती है।

यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि वातावरण का प्रभाव प्रत्येक चेतना पर पडता है। जैसा वातावरण होगा,

भावात्मक निर्माण एवं पतन भी तदनुरूप होगा। आज के वातावरण की ओर दृष्टिपात करे, तो स्पष्ट हो जाता है कि उसमे अध्यात्म के प्रति उपेक्षा ही नही, अपितु परोक्ष तिरस्कार की भावना भी बढती जा रही है और उस वातावरण का प्रभाव युवा वर्ग पर सर्वाधिक एवं बहुत शीघ्र होता है। उपन्यास आदि साहित्य, सिनेमा आदि मनोरंजन के साधन एवं कॉलेज मे सह-शिक्षा से अनुबंधित वातावरण सभी कुछ ऐसे अश्लील वायुमंडल का निर्माण करते है कि युवा वर्ग उनकी ओर खिंचता चला जाता है और उसकी सीधी ही प्रक्रिया होती है अध्यात्म पर। किन्तु यह एकान्तिक दृष्टिकोण नही है। कुछ सीमा तक युवक अपने आपको इस वातावरण के प्रभाव से बचा भी लेता है। यह उसमे क्षमता है। यही नही उसकी जिज्ञासु प्रतिभा जिज्ञासा की भूख को लिए हुए चलती है और उस भूख के शमन के लिए खुराक की खोज भी रहती है और ऐसा होना इस युग की देन है, क्योकि भौतिक अनुसंधान एवं आविष्कारो ने इसको सूक्ष्मता से समझने का सुंदर अवकाश प्रदान किया है। परिणामस्वरूप उसकी बुद्धि इतनी पैनी एव सूक्ष्मदर्शी बन चुकी है कि वह इस छोर से उस छोर तक पहुंचने के लिए मचल उठती है। किसी रूप मे वह बाहर प्रस्फुटित होने का अवसर देखती है और अवसर पाकर कुछ प्रकट भी होती है। किन्तु अधिकांश लोगो मे उसको देखने समझने की क्षमता प्राय: नही होती है। परिणामस्वरूप कई आघातो से आहत होकर या तो कुठा का रूप धारण करती है या मुड कर भौतिकता को ही सब कुछ मान बैठती है अथवा विद्रोह का रूप धारण कर लेती है। वैसी स्थिति मे मस्तिष्क के तनाव को हल्का करने के लिए उपन्यास, सिगरेट, सिनेमा आदि का सहारा लेती है, जिससे उसकी गति विचित्र बन जाती है। किन्तु दूसरी ओर उसके सामने समस्या है कि वह अध्यात्म के साथ अपना संयोजन कैसे करे? क्योकि वर्तमान के मतभेदपूर्ण धार्मिक क्षेत्र की ओर उसकी दृष्टि जाती है, तो वह हतप्रभ-सा रह जाता है। जिस धर्म का उद्देश्य विश्ववात्सल्य, पारस्परिक प्रेम, सामाजिक सौहार्द है, उसी धर्म के उपासक सामान्य-सी बातो के लिए एक-दूसरे को समाप्त करने पर तुले हुए है। चीटी तक की रक्षा करने वाले अहिंसा के पुजारी सामाजिक कुरीतियो एव तुच्छ भौतिक स्वार्थों के पीछे कितने जघन्य हिंसा कृत्य कर जाते है।

कदाचित् वह इस समूहगत सैद्धान्तिक अवहेलना की उपेक्षा कर ले, किन्तु जब वह अपने अभिभावकों, अध्यात्म-साधना के प्रति उत्प्रेरको की ही द्वेषपूर्ण स्थिति देखता है, तो हैरान-सा रह जाता है। अभिभावक एव अपने बुजुर्ग कहते क्या एवं करते क्या हैं, उनके जीवन मे धार्मिक स्थानो के आचरण एवं कथन कुछ और होते है और धर्मस्थान से बाहर के व्यावहारिक जीवन के आचरण कुछ और। वे ही अभिभावक जब युवको को धार्मिक क्रिया हेतु प्रेरित करते है, तब युवक सहज प्रश्न करते है-क्या परिवर्तन आया है आप मे इन तथाकथित धार्मिक आचरणो से? बुजुर्ग जब उचित समाधान नहीं दे पाते है, तो उस तर्कनिष्ठ मानस को नास्तिकता का फतवा प्रदान कर देते है। फलस्वरूप युवा मानस धर्म से कटता चला जाता है।

होना यह चाहिए कि अभिभावक, युवको के सामयिक एवं तर्कनिष्ठ प्रश्नो के उत्तर मे शान्त मस्तिष्क से काम ले और अपने जीवन की वास्तविक स्थिति को नग्न सत्य के रूप मे स्पष्ट कर दे कि वे धार्मिक सिद्धान्तो की बहुत गहराई मे नही उतरे है, वे जो कुछ धर्माचरण कर रहे है वह श्रद्धा के आधार पर कर रहे है। साथ ही यह मेरी कमजोरी है कि मै प्रवचनो आदि मे जो कुछ सुनता हूं उसे जीवन मे पूरी तरह नही उतार पा रहा हूं। इसके पीछे अनेक कारण है, पारिवारिक समस्याये, आय के स्रोत के अभाव के कारण आर्थिक विपन्नता, सामाजिक कुरीतियो का बाहुल्य, व्यापारिक सहयोगियो का अभाव एवं कानूनगत व्यवस्था की पेचीदगी। इन परिस्थितियो मे मे अपने-आपको उच्च्व आदर्श श्रावकत्व की भूमिका पर प्रतिष्ठित नहीं कर पा रहा हू। इसे मैं अपनी कमजोरी मानता हू। किन्तु तुम चाहो तो अभी से अपने जीवन को नियमित एवं व्यवस्थित बना सकते हो। मेरी कमजोरी को देखकर तुम्हे

उसका अनुसरण नही करना चाहिए। तुम उच्च आदर्श श्रावक का अनुकरण कर सकते हो। इसके अतिरिक्त धार्मिक सिद्धान्तो के विषय मे तुम्हारी जो जिज्ञासाएं है, उन्हे विद्वान् मुनियो के समक्ष जाकर समाहित करो।

इस प्रकार मधुर शब्दो मे यदि युवको को सम्बोधित किया जाए तो कोई कारण नहीं कि वे अपने अभिभावको की इच्छा के विपरीत कार्य करे। किन्तु होता इससे विपरीत है। अभिभावक अपनी सैद्धान्तिक अनभिज्ञता एव आचरण की कमजोरी को छिपाने का प्रयास करते है। युवा वर्ग पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। यह भी युवक को धर्म से दूर करने का एक कारण वन जाता है।

अभिभावको के समान ही कुछ वर्तमान श्रमण वर्ग की स्थिति है। उनके समीप भी अधिक प्रेरित करने पर कदाचित् युवक चला जाए, किन्तु वहा भी उन्हे अपनी जिज्ञासाओं का समुचित समाधान नही मिल पाता है। क्योकि अधिकाश श्रमणो की स्थिति यह है कि वे स्वय वहुत कम स्वाध्यायशील है और जो कुछ अध्ययन है वह भी केवल तोता-रटन्त-सा। उसके पीछे गहरा चिन्तन नही है तथा इस सैद्धान्तिक ज्ञान को आज के वैज्ञानिक परिवेश मे किस प्रकार प्रस्तुत किया जाए, यह कला प्राय: नहींवत् है। आज आवश्यकता यह है कि जैन तत्त्व-ज्ञान के सिद्धान्तो को, जो कि वास्तव मे वैज्ञानिक सिद्धान्त है, नूतन शैली मे वैज्ञानिक सिद्धान्तो के साथ समन्वित करके प्रस्तुत किया जाय। यह कहा जा चुका है कि युवक हर चीज में नूतनता चाहता है। यदि आत्मा-परमात्मा, कर्म एव पुनर्जन्म सम्बन्धी गूढ सिद्धान्तो को आज के परिवेश मे समझाने का प्रयास किया जाय, तो युवक निश्चित उस ओर आकर्षित होगा। आज का युवक वुद्धिजीवी है। रूढ अवधारणाओ का समादर नही करता है तो तर्कसंगत वैज्ञानिक प्रतिपादन समझ पूर्वक स्वीकारने मे भी एतराज नहीं करता हे। किन्तु हम देखते हे कि आज का श्रमण वर्ग प्राय: इस विषय में निश्चेष्ट है। कुछ सचेष्ट भी है जो अत्यन्त आधुनिकता की वाते करते है। उनके आचरण सिद्धान्त विपरीत है। जब ऐसे विश्रुत विद्वान् मुनियो की भी कथनी-करणी मे अन्तर दिखाई देता है, तो युवक असमंजस मे पड जाता है।

तात्पर्य यह है कि धर्म को वैज्ञानिक एव मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के रूप मे प्रस्तुत किया जाए और श्रमण वर्ग अपने इस दायित्व को महसूस करे, तो किसी हद तक युवको मे धार्मिक चेतना जागृत की जा सकती है।

इतना सव कुछ होते हुए भी सम्पूर्ण दोष अभिभावक एवं श्रमण-वर्ग पर ही नही थोपा जा सकता है। कुछ कमजोरिया युवा वर्ग की स्वयं की है। वे स्वय अपने जीवन के मौलिक उद्देश्यों के प्रति अनभिज्ञ रहते है और तदविषयक ज्ञान के प्रति वे सचेष्ट नही बन पाते। अपने बाहरी बनाव-श्रृंगार एवं फैशन परस्ती मे ही वे इतने व्यस्त रहते हैं कि जीवन के मूल उद्देश्य को समझने तक का अवकाश नही मिल पाता।

अपने-आपको अत्यधिक आधुनिक एवं बुद्धिजीवी दिखाना आज का एक फैशन बन गया है। जो अपने-आपको आधुनिक दिखाने का प्रयास करेगा, उसके लिए यह भी सहज होगा कि वह पुराणपन्थी नहीं होने का दिखावा करे। हमारे जीवन की अधिकांश सामाजिक, रीति-नीतियां पुरातन रूढ मान्यताओ के आधार पर ही चलती है। हम उन सभी मान्यताओं को विवाह-त्यौहार आदि के प्रसगो पर भयकर आडम्बरो के माध्यम से पोषित करते हैं। उन गलत एव अपव्ययकारी परम्पराओ में क्रान्तिकारी परिवर्तन की कल्पना तक नही की जाती है। किन्तु धर्म के शाश्वत सिद्धान्त का क्रान्ति के बहाने से बदलने का प्रयास किया जाता है। यह भी एकागी भौतिकी बुद्धि का दुरुपयोग मात्र है।

युवको को सर्वप्रथम अपने जीवन के प्रति सजग होना चाहिए। किन्तु वे उस विषय मे उतने ही प्रमत्त दिखाई देते हैं। आज युवा वर्ग भौतिक वातावरण मे इतना आप्लावित हो गया है कि उसकी दृष्टि एकदम एकांगी बन गई

है। आज का उनका लक्ष्य ही भौतिक समृद्धि है। इन्द्रियाकर्षी पदार्थों एवं तडक-भड़क के साधनो मे इतनी अधिक रुचि उत्पन्न होती जा रही है कि जीवन का कोई आध्यात्मिक पहलू भी है, इसे वे सोच ही नही पाते है। जहां कहीं अपनी समवयस्क सोसायटियो मे बैठेगे, प्रसाधन, चलचित्र एव उपन्यास आदि की ही चर्चा करेगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि युवको मे धार्मिक असंतोष का कोई एक कारण नहीं है। वातावरण, अभिभावको की कथनी एव करनी में असमानता एव धर्म के नव्य-भव्य वैज्ञानिक शैली मे प्रतिपादन का अभाव आदि कई कारण हैं।

प्रश्न का दूसरा पक्ष है कि उक्त असंतोष का समाधान क्या हो? वैसे तो उपर्युक्त विवेचन मे असतोष के जिन मूल कारणो को स्पष्ट किया गया है, उन कारणो को समाप्त कर देने से असतोष अपने आप समाप्त हो सकता है, तथापि संक्षेप मे इतना ही कहा जा सकता है कि प्रथम तो ऐसा वायुमण्डल निर्मित किया जाये कि युवक स्वय यह समझने का प्रयास करे कि जिस भौतिक चकाचौध मे वे जी रहे हैं, जीवन का लक्ष्य उतना भर ही नहीं है। जीवन बहुत मूल्यवान है और किसी महान् शक्ति-सत्ता की उपलब्धि के लिए प्राप्त हुआ है। यह जीवन अनन्त संभावनाओ का छिपा हुआ कोष है। हम जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों को भी समझने और तद् द्वारा अदृश्य सत्ता से साक्षात्कार करने का प्रयत्न करे। यदि इतना न भी कर पाये, तो कम से कम जीवन को नैतिक धरातल पर पूर्ण रूपेण प्रतिष्ठित करे।

मै सोचता हूं कि इतनी-सी समझ का उद्‌भव युवको के मानस मे हो जाये, तो वे निश्चित अपने-आपको उस रूप मे ढालने का प्रयास करेगे जब तक युवा वर्ग के समक्ष कोई रचनात्मक कार्य नही आते है, तभी तक वे भटकते है। अत: आवश्यकता इस बात की भी है कि युवको के समक्ष कुछ आध्यात्मिक रचनात्मक कार्य रखे जाये और वे यह समझने लगे कि जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए इन कृत्यो की भी आवश्यकता है।

जब जीवन-निर्माणकारी सुन्दर कार्यो का एक मार्ग उन्हे मिल जाता है तो फिर अन्यान्य असत्कार्यों के लिए उनके पास अवकाश ही नही बचेगा। परिणामत: उनकी सोसायटी और तत्सम्बन्धी वातावरण भी अपने आप बदल जाएंगे।

समाज एवं राष्ट्र के कर्णधार एम पी एव एम एल ए (लोकसभा एवं विधानसभा सदस्य) आदि अग्रगण्यो का यह पुनीत कर्त्तव्य हो जाता है कि वे जीवन निर्माणकारी वातावरण बनाने के लिए अश्लील एव अनैतिकता पूर्ण साहित्य एव सिनेमा आदि पर वैधानिक प्रतिबंध लगाएं। कानूनी प्रतिबध के साथ ही अध्यात्म स्तर के मनोरजन के साधन भी प्रस्तुत किए जा सकते है जिससे सुन्दर वातावरण के निर्माण के साथ ही प्रत्येक युवक के मानस मे अध्यात्म के प्रति जागरण उत्पन्न हो।

साथ ही अभिभावक भी अपनी कथनी एवं करनी को एक नही कर पाए, तो कम-से-कम अपनी उस कमजोरी को तो सरलतापूर्वक स्वीकार करे कि मै धार्मिक नियमो के अनुसार नही चल पा रहा हूं। तुम मेरा अनुकरण नही करके अपने जीवन को व्यवस्थित बनाओ। मेरा धार्मिक अध्ययन भी विशेष नही है। अत: तुम अपनी जिज्ञासाओ का समाधान विद्वान् मुनियो के पास जाकर प्राप्त करो और इसी प्रकार श्रमण परम्परा भी अपने पुनीत दायित्व को समझ कर अपने अध्ययन क्षेत्र को कुछ विस्तृत बनावे और युवको की जिज्ञासाओ का वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समाधान दे, तो कुछ हद तक युवको का धार्मिक असंतोष समाप्त हो सकता है।

यदि दस पांच युवको मे भी ऐसी जागृति का संचार हो सके, तो वे अपने अनेक साथियो पर प्रभाव अकित

कर सकते है ओर व्यक्ति से समाज आर समाज से राष्ट्र एव इस प्रकार विश्व का समस्त युवा जगत् अपनी अमूल्य जीवनी-शक्ति को सही दिशा प्रदान कर सर्जनात्मक अध्यात्म की ओर उन्मुख हो सकता है।

चूकि राष्ट्र एव समाज का दायित्व-भार युवको के सशक्त कंधो पर ही आने वाला होता है, अतः युवा वर्ग अध्यात्मनिष्ठा, नेतिक एव चरित्र सम्पन्न होगा, तो आने वाली पीढी ही नही, समूचा देश एव विश्व, अध्यात्म, नैतिक निष्ठा एवं चरित्र उत्थान की ओर करवट ले सकता है।

प्रश्न-6.

आपने साधना-मार्ग में निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति का ही अनुसरण क्यों किया? उसके द्वारा क्या उपलब्धिया हुई?

उत्तर :

साधना का मार्ग जीवन के चरम विकास का मार्ग हे। इसमे मानवीय तन की सर्वोच्च सत्ता के साक्षात्कार का उद्देश्य होता हे। अत: जीवन की सर्वोच्च उपलब्धि के मार्ग का चयन उतनी गहरी खोज एव तर्कनिष्ठ प्रज्ञा के द्वारा होना चाहिये। लक्ष्य किवा ध्येय का अर्थ ही हे कि उसके प्रति सम्पूर्ण रूप से समर्पण हो जाए। साधना का मार्ग भी सम्पूर्ण समर्पणा का मार्ग है। जिस मार्ग का हम चयन करते ह, उसमे सर्वतोभावेन समर्पित होना होता है। एक बार यदि मार्ग के निर्धारण मे गलती रह जाए, तो हमारी समर्पणा ही विपरीत हो जायेगी और हम गन्तव्य की विपरीत दिशा मे ही वढते चले जाएगे। अत· जीवन के सर्वांगीण विकास के लक्ष्य निर्धारण मे गभीर चिन्तन की आवश्यकता होती है। साथ ही पथ-प्रदर्शक एव समीचीन साधना के प्रति सत्प्रेरक भी साधना की उच्च कोटि पर प्रतिष्ठित महापुरुष होना चाहिए।

जिस समय मेंने साधना-पथ का निर्धारण किया, यद्यपि उतनी गहरी तर्क-पटु प्रज्ञा मुझ मे नही थी, अपनी सामान्य बुद्धि के आधार पर मेंने तत्कालीन सामान्य जन-चेतना को प्रभावित करने वाले अनेक मत-पथ एव धार्मिक सम्प्रदायो का परिचय प्राप्त किया। मेंने उन्हे निकट से पहचानने का प्रयास किया। उनमे से कुछ मे मैने पाया कि वहा साधना की सम्यग् दिशा का अभाव है, केवल कुछ रूढ एव विपथगामी अवधारणाओ के आधार पर अपनी साम्प्रदायिक परम्पराओ का पोपण किया जा रहा है। कुछ साधना-पथ, राग-द्वेष की तीव्र ग्रन्थियो से आवेष्टित है। कुछ साधना-मार्ग अधूरे, अवैज्ञानिक, असस्कारित एव मानवीय सभ्यता से भी विपरीत दिखाई देते है।

मैंने यथाशक्ति-यथासाध्य उनका सम्यग् विश्लेषण करने का प्रयास किया, तो पाया कि जो साधना-पथ स्वय राग-द्वेष की जटिल ग्रन्थियो से परिवेष्टित है, वह सम्यग् दिग्बोधक नही हो सकता है तथा उसका अनुसरण साधना-मार्ग को समुज्ज्वल नही वना सकता है। जीवन की बहुमूल्य उपलब्धि के लिए आवश्यक है कि जिस पथ का अनुगमन किया जाए, वह जीवन-गत जटिल राग-द्वेषात्मक ग्रन्थियो को तोडने मे सक्षम हो और वह मुझे निर्ग्रन्थ श्रमण-सस्कृति की पुनीत छाया मे दिखाई दिया। जिस संस्कृति का नाम ही निर्ग्रन्थ (ग्रन्थि रहित) है वह निश्चित ही राग-द्वेष की ग्रन्थियो को तोडने मे सहयोगी बन सकती है। इसी चिन्तन के आधार पर मैने अपना मार्ग निर्धारित किया। तत्कालीन साम्प्रदायिक मान्यताओ एव साधना-पद्धतियो की भी बहुआयामी विस्तृत जानकारी के पश्चात् अपने लक्ष्य का चयन किया था और आज मुझे अपने उस चयन पर सात्विक गर्व है। मार्ग चयन के पश्चात् विभिन्न दर्शनो एव साधना-प्रणालियो का मैने सूक्ष्म अध्ययन किया और पाया कि मेरा चयन अपनी उस समय की बुद्धि के अनुसार भी बहुत सुन्दर हुआ था।

निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए सर्वोत्तम संस्कृति है। मेरा ध्रुव विश्वास है कि इस संस्कृति की आराधना एवं उपासना पद्धति से मै अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त कर सकूंगा।

प्रश्न का उत्तरार्ध कुछ अपने मौलिक उत्तर के लिए असमन्जस मे डाल देता है। साधना पथ की उपलब्धिया अदृश्य उपलब्धियां होती है। उन्हें भौतिक शब्द-श्रृंखला मे आबद्ध नहीं किया जा सकता है। अनुभूतिगत तत्त्व का साक्षात्कार अनुभूति के आलोक से ही किया जा सकता है तथापि शब्दो के माध्यम से उन उपलब्धियो के संकेत मात्र दिए जा सकते हैं।

साधना-पथ पर पद-चरण करने से पूर्व की स्थिति पर चिन्तन करे तो अन्धकार और प्रकाश-सा अन्तर परिलक्षित होता है। पूर्व का वह ग्रामीण जीवन अज्ञानता, काषायिक प्रचण्डता एवं राग-द्वेष की परिणतियो से संव्याप्त जीवन था। ममत्व की गहरी श्रृंखला जीवन के चारो ओर जकडी हुई थी, सामान्य से तुच्छ स्वार्थों मे सम्पूर्ण जीवन उलझा हुआ था।

संक्षेप में कहूं तो अज्ञान-अन्धकार मे एवं विषमता के दल-दल मे पूरा जीवन फंसा हुआ था। संयोगतः कहे या और कुछ निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की शांत क्रान्ति के जन्मदाता अनन्त आराध्य गुरुदेव आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा. का सान्निध्य एवं निर्ग्रन्थ श्रमण-संस्कृति की पुनीत छाया मिली और जीवन कुछ व्यवस्थित रूप से गतिशील बना। साधना मार्ग मे जितनी गति हुई, मुझे उससे आंशिक सन्तोष हुआ है, पूर्ण नहीं। ऐतिहासिक महापुरुषो के जीवन चित्रों पर जब भी चिन्तन चलता है, लगता है, अभी तो सागर मे बूंद जितना भी विकास नहीं हो पाया है। भावना सदा यही बनी रहती है कि किन्वित् मात्र भी प्रमाद न बने, आत्मा नित नूतन उपलब्धियो के द्वार उद्घाटित करती जाए और एक दिन अपने परम और चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सके।

इस प्रश्न का उत्तर प्रसंगतः संक्षिप्त ही दिया जा सकता है, क्योकि अपने आप पर कुछ बोल पाना बहुत कठिन है।

व्यक्ति अपने जीवन पर, अपने यौवन पर, अपनी शक्ति और सम्पन्नता पर एव अपने शरीर पर अभिमान करता है-मै ऐसा कर रहा हू, मेरे अन्दर ऐसी शक्ति आ गई है, इस प्रकार अहवृत्ति जब आत्मा पर छा जाती है तब वह आत्मा अपने विकास को अवरुद्ध कर डालती है।

-आचार्य श्री नानेश

प्रश्न मेरे-उत्तर आचार्यश्री के

✍ डॉ. सुभाष कोठारी

प्रश्न-1.

आप आज समता दर्शन के व्याख्याता के रूप में बहुत चर्चित हैं, इस नये मौलिक दर्शन की प्रेरणा आपको कहां से मिली? यह आपकी अन्तःस्फूर्त प्रेरणा थी अथवा किसी अन्य पर आधारित?

उत्तर-

समता दर्शन की प्रेरणा ने मेरे अन्तःकरण मे जन्म लिया। इसका आधार कहीं बाहर नही, मेरे भीतर ही था। यो निमित्त सहयोग मुझे मेरे स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा से प्राप्त हुआ। वे श्रमण संस्कृति के रक्षक एवं शान्त क्रान्ति के जन्मदाता थे। जब उनके मंगलमय स्वर्गारोहण के पश्चात् सघ नायकत्व का उत्तरदायित्व मेरे कधो पर आया तो मेरी अन्तर्चेतना की जागृति ने भी नवरूप धारण किया और भीतर ही भीतर विचार-मंथन होने लगा। समता दर्शन को मै उसी मथन का नवनीत कहू तो समीचीन होगा। इस (आचार्य) रूप मे उत्तरदायित्व बढा तो मेरा समाज-सम्पर्क भी विस्तृत हुआ, अनुभव की सीमाएं व्यापक बनीं। उसके साथ-साथ मेरे चिन्तनक्रम का अभिवृद्ध होना अनिवार्य ही था। जिज्ञासुओ के विविध प्रश्न भी सामने आने लगे तो देश व समाज की विभिन्न परिस्थितियॉ एवं समस्याएं भी सामने आयीं, तब विचार-मथन गहरा होने लगा। सर्व प्रकार की समस्याओ के समाधान के रूप मे तब मेरा ध्यान समता, समभाव, समानता आदि पर केन्द्रित होने लगा। यही ध्यान बहुआयामी समता दर्शन का स्वरूप ग्रहण करने लगा। फिर तो निरन्तर विचार-विमर्श एवं चर्चा-समीक्षा से उस स्वरूप मे निखार आता गया। इस समता दर्शन मे केवलीभाषित परम समता के भाव ही समाविष्ट है जिनका सम्बन्ध व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व से जोडते हुए सम्पूर्ण आत्म-समता पर अतिम रूप से बल दिया गया है।

मेरी मान्यता है कि जन समुदाय मे विचरण करने वाले साधुओ के समक्ष आपके द्वारा अपनी जिज्ञासाए रखना तथा उनका श्रेयस्कर समाधान प्राप्त करना आप का अधिकार है। इसका दोनो पक्षो का लाभ मिलता है। मेरा अनुभव है कि प्रश्नोत्तरी के कार्यक्रम से मेरा अपना आत्म-सशोधन होता है तो गूढ विचारो का उद्भव भी। इसी प्रक्रिया से समता दर्शन का स्वरूप गढा गया है जो मानव मात्र को कल्याण की दिशा मे ले जाने के अतिरिक्त विश्व शांति स्थापित करने मे भी समर्थ है। बीज रूप से इस दर्शन का निरन्तर विस्तार होता आ रहा है।

समता दर्शन के प्रति मेरा आत्म विश्वास स्वय की अन्तर्चेतना से ही प्राप्त हुआ है, अन्य कोई आधार नहीं रहा। निमित्त रूप मे केवली प्ररूपित धर्म एवं गुरुदेव के आशीर्वाद की तो विशिष्ट भूमिका है ही।

प्रश्न-2.

आज साम्प्रदायिक विद्वेष चरम सीमा पर है जिससे प्रतिदिन जैनियों का विभाजन होता जा रहा है। आपकी सम्मति में क्या इसे रोकने के लिए कोई सार्थक प्रयास किया जा सकता है?

उत्तर-

आपका प्रश्न सद्भावना पूर्ण है, क्योकि आप समाज की एकता स्थापित करने के पक्ष मे है। आप इसके लिए

कोई उपाय चाहते है तो आपको तनिक चिन्तन करना होगा कि क्या कार्य करने से और किन कार्यों को न करने से वाछित उपाय दृष्टिगत हो सकते है। इसकी रूपरेखा ध्यान मे लेकर प्रयास किया जाय तो वैसा प्रयास स्थिर भी होगा एवं फलदायी भी।

जैन समाज की सभी सम्प्रदायो की एकता का जहा तक प्रश्न है, उसे आरभ करने का कोई न कोई एक बिन्दु तो निर्धारित करना ही होगा, जहां से सबके चरण साथ-साथ आगे बढे। मेरा मानना है कि वह बिन्दु सवत्सरी का आयोजन हो सकता है अर्थात् सारी चर्चा-समीक्षा करके सभी लोग एक दिन पर एकमत हो जाय कि प्रतिवर्ष उस दिन समस्त जैन समाज एक साथ इस महापर्व को मनायेगा। इससे आरंभ हुई एकता भविष्य मे अग्रगामी भी बन सकती है।

एक सवत्सरी के विषय पर पिछले कुछ वर्षों से काफी चर्चा चलती रही है और मैने सदा ही अपनी यह भावना व्यक्त की है कि बिना किसी पूर्वाग्रह के सर्वानुभूति से सवत्सरी-आयोजन के लिए जो भी दिन निश्चित हो जायगा उसे मै भी मान लूंगा। उसके लिए भी मेरी तैयारी रहेगी कि स्थानकवासी समाज के सभी घटक ही नहीं, स्थानकवासी एवं श्वेताम्बर मूर्तिपूजक समाज भी एक संवत्सरी का निर्धारण कर ले। सारा जैन समाज सवत्सरी-आयोजन के सम्बन्ध मे एकत्र हो तो एकता की दृष्टि से इसके लिए मेरी पूर्ण भावना एव शुभकामना है। मै तो भावना रखता हू कि सम्पूर्ण मानव जाति की एकता बनाने का अवसर आज हमारे सबके सामने उपस्थित है और उस दिशा मे हमारे प्रयास सार्थक बने। एकता से सम्बन्धित प्रयासो मे त्याग एवं पूर्ण सहयोग की तत्परता होनी ही चाहिए।

लेकिन एक तथ्य की ओर मै सब को सावधानी दिलाना चाहूगा। एक हाथ से ताली नहीं बजती और जब तक एकता की भावना सर्वत्र व्याप्त नही होती तब तक किसी योजना पर एकमत होना भी संभव नहीं बनता है। तद्हेतु जनमानस का निर्माण होना भी जरूरी है जिसके दबाव से एक सवत्सरी की मान्यता की ओर सबको झुकाया जा सके और किसी का हठाग्रह टिके नही। अब तक इस सम्बन्ध मे जो प्रयास हुए वे इसी कारण विफल रहे है। सबकी तैयारी न होने से सफलता नहीं मिली। मेरी तो आज भी पूर्ववत् ही तैयारी है।

एक संवत्सरी के आयोजन के मंगलाचरण के रूप मे समग्र जैन समाज का समाचरण बने तथा एकता सुदृढ हो-यही मेरी मंगल भावना है।

प्रश्न-3.

समाज में व्याप्त कुरीतियों यथा बाल विवाह, दहेज प्रथा, मृत्यु भोज आदि को दूर करने के लिए आपकी ओर से क्या प्रयास चल रहे हैं?

उत्तर-

हम साधु है तथा हमारी मर्यादाओं मे रहकर ही हम किसी भी उद्देश्य के लिए प्रयास कर सकते है। जहा तक सामाजिक कुरीतियो को दूर करने के प्रयासो का सम्बन्ध है, इस दिशा मे हमारी मर्यादाओ के अनुरूप लम्बे समय से हमारे प्रयास चल रहे है।

हम साधु मुख्यत: विचार-क्रान्ति के वाहक बन सकते है और जो लोग मेरे व्याख्यानो से परिचित हे, वे जानते है कि पिछले कई वर्षों से मृत्यु-भोज, दहेज-प्रथा, बाल-विवाह जैसी अन्यान्य सामाजिक बुराईयो को त्यागने की प्रेरणा दी जाती रही है तथा महिलाओ और युवाओ को समझाया गया है कि वे इन कुरीतियों के प्रति स्वय का त्याग समक्ष रख कर आदर्श रूप उपस्थित करे।

निरन्तर दिए जाते रहे ऐसे उपदेश के प्रभाव से स्थान-स्थान पर सघो ने तथा व्यक्तियो ने मृत्युभोज करने के त्याग लिये है तथा चन्द ग्राम ही रह गये होगे जो इस कुप्रथा को चिपकाये हुए है। वहा भी इतना अज्ञान नही रहा है तथा नई पीढी के लोग जाग रहे है। दहेज प्रथा एव अन्य कुरीतियो को छोडने मे भी युवा वर्ग आगे आया है और वह समाज मे क्रान्ति फैला रहा है।

मै मानता हू कि इन कुरीतियो के विरुद्ध जो एक सामूहिक क्रान्ति जागनी चाहिए और इन्हे मूलत: मिटा दिया जाना चाहिए, वैसी परिस्थिति अभी तक उत्पन्न नही हो पायी है। इसका एक कारण यह है कि हमारे मर्यादापूर्ण प्रयासो को आगे बढाने के लिए तथा उनकी निरन्तरता को बनाये रखने के लिए जिन सामाजिक सस्थाओ की निर्मिति होनी चाहिए तथा उनके तत्त्वावधान मे युवा वर्ग की टोलिया सोत्साह कार्यरत होनी चाहिए वैसे वातावरण एव कार्य प्रणाली की रचना नही की गई है जो गृहस्थो का कर्त्तव्य है। प्रेरणा जगाने के बाद आन्दोलनात्मक प्रयास तो उन्हे ही करने होते है।

इस अभाव के कारण ही यथार्थ मे उत्पन्न हुआ विचार-क्रान्ति का स्वरूप भी सामान्य जनता की दृष्टि मे स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त नही हो पाता है। आज उसी विचार को तेजी से अमली जामा पहिनाने की जरूरत है ताकि व्यक्ति ही नही, परस्पर विचार-विमर्श करके गावो-नगरो के पूरे के पूरे सघ ही इन कुरीतियो का परित्याग कर दे। जो अनुदार व्यक्ति इनके आडे आवे, उन्हे भी प्रत्येक विधि से सहमत बना ले। कार्य प्रणाली का ऐसा ढग बनाया जाएगा तो सम्पूर्ण कुरीतियो के निवारण मे भी सफलता प्राप्त हो सकेगी।

प्रश्न-4.

साधु समाज की मुख्यत. अध्यात्मिक भूमिका होती है, इस दृष्टि से समाज में वैमनस्य को समाप्त करने, युवकों को धर्माभिमुख बनाने एव खान-पान व रहन-सहन की विकृतियों को दूर करने में साधु-कर्त्तव्यों के विषय मे आपके क्या विचार है?

उत्तर-

साधु समाज का यह कर्त्तव्य मै मानता हू कि वे जन समुदाय को उनकी भाति-भाति की विकृतियो के विरुद्ध सचेत बनाते हुए इस प्रकार से शिक्षित करे कि अन्तत: वे आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर हो सके।

इस दृष्टि से समाज मे स्थान-स्थान पर फैले या फैलने वाले वैमनस्य के दुर्भाव साधु समाज के उपदेश से समाप्त हुए है और होते है। युवक भी निरन्तर जागृति की दिशा मे आगे बढते हुए धर्माचरण के मर्म को समझ-बूझ रहे हैं। खानपान, रहन-सहन एव सामान्य जीवन के शुद्धिकरण की अपेक्षा से भी महत्त्वपूर्ण कार्य समाज के विशाल क्षेत्र मे स्थल-स्थल पर हो रहे है। इस विषय मे मालवा के क्षेत्र मे हो रहा कार्य उल्लेखनीय है। वहा पर धर्मपाल समाज की रचना हुई है तथा हजारो की सख्या मे लोगो ने अपने खान-पान, रहन-सहन तथा समूचे जीवन क्रम को शुद्ध बनाने एव शुद्ध बनाए रखने की प्रतिज्ञा ग्रहण की है। ऐसे लोगो की सख्या इस समय मे अस्सी हजार से भी अधिक बताई जाती है। सन्तो के उपदेश एव इन लोगो के हृदय परिवर्तन के बाद भी समाज के कर्मनिष्ठ व्यक्ति इनसे बराबर सम्पर्क साधे रखते है। इनके क्षेत्रो मे पदयात्राए करते रहते है तथा उनकी विभिन्न समस्याओ के समाधान मे अपनी सहायता पहुचाते रहते है। फलस्वरूप यह नव सस्कारित धर्मपाल समाज निरन्तर प्रगति पथ पर आगे बढता जा रहा है। इस प्रकार कई दिशाओ मे शुभ प्रयास हो रहे है।

सन्त समुदाय तो अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहता है पर उसका सकलन करना तथा उसे सामान्य जन मे

प्रकट करते रहना यह गृहस्थ वर्ग का कर्त्तव्य है। सन्त तो अपनी स्थिति से कार्य करते हैं और उस कार्य को गृहस्थ वर्ग चाहे जितना आगे बढ़ा सकते है। ऊपर मैने आपको धर्मपाल प्रवृत्ति का उल्लेख किया है उसकी अपूर्व प्रगति मे सभी वर्गो के कर्त्तव्यो के सुचारु निर्वहन का ही योगदान है।

ऐसा ही सभी प्रकार की विकृतियो को दूर करने मे तथा आध्यात्मिक दिशा मे गतिशील बनने मे कर्त्तव्यो का निर्वहन होता रहे और उसमे पर्याप्त जन सहयोग मिलता रहे तो कोई कारण नहीं है कि सफलता की उपलब्धि न हो। मै समझता हूं इस विषय मे मेरा विचार आपको स्पष्ट समझ मे आ गया होगा।

प्रश्न-5.

बहुत से युवक-युवतियां भावुक होकर दीक्षा ले रहे हैं, फिर दुःखी होते हैं। क्या आपके संघ में भी ऐसा प्रसंग आया? यदि हां, तो उस पर आपने क्या कदम उठाया?

उत्तर-

सर्वप्रथम तो संघ की व्यवस्था ऐसी है कि अधिकांश युवक एवं युवतियां तो दीक्षा ग्रहण करने से पूर्व सन्त एवं सती वर्ग के समक्ष रह कर दीक्षा एवं मुनिव्रत पालन सम्बन्धी समुचित तथा आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर लेते है और दीक्षा के बाद मे भी व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान की प्रगति के लिए भी सघ ने प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था कर रखी है।

इस प्रकार जब मुनिव्रत के सम्यक् पालन सम्बन्धी आवश्यक ज्ञान एवं निष्ठा का विकास हो जाता है तो दीक्षा लेकर दुःखी होने जैसा प्रसंग आने की संभावना नहीं रहती है। कारण, दीक्षार्थी इस मूल तत्त्व को हृदयगंम कर लेता है कि उसकी आत्म-शान्ति किस आधार पर कायम हो सकेगी। आत्मिक भावो मे स्थिरता आ जाने पर सयम के अनुपालन मे भी स्थिरता आ जाती है। पूर्व प्रशिक्षण एवं पश्चात् का स्वस्थ वातावरण इस स्थिरता मे पूरी तरह से सहायक होता है। यो दीक्षा ही हृदय-परिवर्तन पर आधारित होती है तथा यही परिवर्तन प्रबुद्ध संरक्षण मे स्थायी होता जाता है। आत्मसुख की आनन्दानुभूति इसकी प्रेरणा बन कर प्रवाहित होती रहती है।

वस्तुतः इस कारण जहां पर भी दीक्षार्थियों ने दीक्षा ग्रहण की है और दीक्षा देने का प्रसंग आया है, आपके प्रश्नानुसार प्रसंग बना हो, ऐसा नहीं लगता है। फिर भी यदि कही पर प्रकृति या व्यवहार सम्बन्धी कोई बात मेरे सामने आती है तो सम्बन्धियो को यथार्थ वस्तुस्थिति की दृष्टि से मैं समझा देता हूं।

प्रश्न-6.

क्या आपने दीक्षार्थियों के लिए दीक्षा से पूर्व शिक्षण के लिए कोई केन्द्र या पाठ्यक्रम बना रखा है जहां वे संयमी जीवन के कठोर परीषहों की जानकारी प्राप्त कर अध्ययन कर सके?

उत्तर-

दीक्षा ग्रहण करने वाले भावुक वैरागी एवं वैरागिनो के लिए दीक्षा से पूर्व संयमी जीवन के कठोर परीषहो को समझने एवं उनकी जानकारी सहित अध्ययन करने के लिए संघ ने समुचित व्यवस्था कर रखी है। ऐसी व्यवस्था अन्यान्य स्थानो पर है तथा जिस व्यवस्था के अन्तर्गत अपने जीवन को पवित्र बनाने की अभिलाषा रखने वाली ये भावुक आत्माएं शिक्षा लेना चाहती है, वहां वे ऐसा कर सकती है। शिक्षा के साथ-साथ यथाक्रम एवं यथा समय परीक्षा ली जाने की भी व्यवस्था की हुई है यह परीक्षा निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार भी होती है। परीक्षा प्रणाली

से शिक्षार्थी यह समझता चला जाता है कि ज्ञान के क्षेत्र मे वह किस रूप मे विकास कर रहा है।

इसके सिवाय दीक्षार्थी सन्त एव सती वर्ग के समक्ष रह कर भी व्यावहारिक रूप मे उनके सयमाचरण से कठोर परीषहो की आदर्श जानकारी ले लेता है। यह प्रत्यक्ष ज्ञान उनके प्रशिक्षण को अधिक सुदृढ बना देता है।

प्रश्न-7.

आप अपने वैरागी एवं वैरागिनों को शीघ्र ही दीक्षा देने का मानस रखते हैं या उनकी गुणवत्ता को देखने के बाद अपना मानस बनाते है? यदि उनकी गुणवत्ता को देखने के बाद मानस बनाते हैं तो क्या वह उनकी गुणवत्ता शैक्षणिक या धार्मिक अथवा दोनों प्रकार की मानी जाती है?

उत्तर-

दीक्षार्थियो को शीघ्र ही दीक्षा दे देने की भावना मै नही रखता। प्रथमत: तो मै उनकी मानसिकता को परखता रहता हूं तथा उनकी गुणवत्ता को जाचता रहता हू तदनन्तर जिस दीक्षार्थी मे उत्साहपूर्ण मानसिकता एवं गुणवत्ता का अनुभव पाया जाता है, उसे ही दीक्षा देने का विचार करता हू। ऐसे दीक्षार्थियो को तब दीक्षा देने का प्रसंग आता है।

यो ऐसे प्रसंग भी मेरे सामने आये हैं जब दीक्षार्थी ही नहीं, दीक्षा की अनुमति देने वाले उनके अभिभावक भी दीक्षा देने के लिए उतावले हो जाते है। तब मेने भलीभाति समझाया है कि ऐसी ताकीदी मत करो, दीक्षा की पूर्व योग्यता की प्राप्ति आवश्यक है। किसी दीक्षार्थी मे वैसी योग्यता दिखाई दी है तो दीक्षार्थी एव उसके अभिभावको के अत्यन्त आग्रह पर दीक्षा देने का प्रसंग भी आया है।

प्रश्न-8

आज प्रचार-प्रसार का युग है और अनेक सम्प्रदाय इसके लिए माईक आदि का उपयोग करने लगे हैं। क्या आप नहीं चाहते कि जैन धर्म का प्रसार हो और आपके ज्ञान व उपदेश का सभी लाभ ले सकें? आज जबकि सूर्य के प्रकाश से बैटरियां बनती हैं, उसमें तो जीव हिंसा नहीं होती फिर उसका प्रयोग आप क्यों नहीं करते?

उत्तर-

युग प्रचार-प्रसार का हो या आचार का, युग को देखकर सन्त जीवन मे उसकी मर्यादाओ का परिवर्तन नही किया जा सकता है। कारण, युग परिवर्तित होता रहता है किन्तु जीवन के शाश्वत सिद्धान्त परिवर्तित नही होते। युग को मानव के अनुसार चलना चाहिए-मानव युग के अनुसार परिवर्तित नहीं हो सकता है। मानव का सच्चा धर्म वही है जो वीतराग प्रभु के सिद्धान्तों के अनुरूप होता है। आज के युग मे तो निरा भौतिकवाद भी है और नास्तिता का बोलबाला भी हो रहा है तब क्या युग के अनुसार साधु भी भौतिकवादी एव नास्तिक बन जाय? इसका निर्णय आप ही करे।

सन्त जीवन का एक लक्ष्य होता है कि साधु आध्यात्मिक साधना के माध्यम से जीवन मे पूर्ण चिन्तन-मनन के साथ आत्मिक विकास को साधे। उसका जीवन न प्रचार के लिए होता है और न प्रसार के लिए-वह तो मात्र आत्म-शुद्धि के लिए होता है। इस प्रकार आत्म-शुद्धि साधु-जीवन का प्रधान लक्ष्य है। जब संयमी जीवन अगीकार किया जाता है तो उसके अन्तर्गत पांच मूल महाव्रतो को स्वीकार करना होता है और उनका स्वस्थ रीति से पूर्ण पालन ही साधुव्रत ग्रहण करने वाली मुमुक्षु आत्मा का परम कर्त्तव्य बन जाता है। यह कर्त्तव्य सदा लक्ष्योन्मुख रहना चाहिए।

वास्तविक आत्म-शुद्धि के लक्ष्य के साथ पाच महाव्रतो का यथाज्ञा पालन करते हुए जितना प्रचार-प्रसार का कार्य किया जा सकता है, उसकी पूरी चेष्टा रहती है। मर्यादा के भीतर रहते हुए जिनता प्रचार-प्रसार किया जा सकता है, हकीकत मे वह तो हो ही रहा है। किन्तु महाव्रतों को भूल कर या उनके पालन मे शिथिलता बरत कर अथवा उनमे दोष लगाकर प्रचार-प्रसार करने की भावना साधु जीवन मे कदापि नही आना चाहिए, क्योकि सन्त जीवन का प्रधान लक्ष्य प्रचार-प्रसार करना नही है, अपितु आत्म-शुद्धि करना है।

वैसे एक सन्त आजीवन मौन साधना को साधकर भी आत्मशुद्धि के रूप में अपने जीवन का परम लक्ष्य प्राप्त कर सकता है, उसके लिए प्रचार-प्रसार करना आवश्यक नहीं। आत्म-शुद्धि की दिशा मे गतिशील रहते हुए प्रचार-प्रसार के कार्य मे वह संलग्न होता है तो यह उसका अतिरिक्त उपकार है। किन्तु इसके लिए वह जीव-हिसा आदि मे लगे और महाव्रत को भग करे-यह कतई समीचीन नही। यह निश्चित है कि माईक आदि के प्रयोग से अनेकानेक जीवो की हिंसा होने की सभावना रहती है, बल्कि संभावना क्या, जीवहिसा होती ही है। वैसे माईक के उपकरण तो निर्जीव होते है, परन्तु उनके उपयोग में आने वाली विद्युत आदि के माध्यम से तेजस्काय के जीवो की हिसा के साथ पृथ्वीकाय, वायुकाय एवं वनस्पतिकाय के जीवो की भी हिंसा होती है और किसी भी रूप मे हिसक प्रवृत्ति को अपनाने से साधु अपनी मर्यादा से तो डुलता ही है तथा महाव्रत (अहिंसा) का खडन भी करता ही है, पर साथ ही वह अपनें प्रधान लक्ष्य से भी दूर हट सकता है।

यदि साधु माईक पर प्रवचन देने लग जायेगा तो फिर माईक पर ही प्रवचन देने की उसकी आदत बन जाएगी जिसके परिणामस्वरूप वह वही पर प्रवचन देने के लिए तैयार होगा जहां पर माईक उपलब्ध हो सकेगा। अन्य स्थलो पर वह प्रवचन देने से कतराने लगेगा, क्योकि यह अभ्यास दोष उसमे पनप जाएगा। जहा माईक नहीं मिलेगा, वहा प्रवचन नहीं दिया जायेगा तो इसके फलस्वरूप आशा के विपरीत स्थिति होगी कि अधिकाश क्षेत्र प्रचार-प्रसार से वंचित रहने लगेगे तथा वास्तव मे प्रचार-प्रसार का कार्य घट कर, जनता की लाभ प्राप्ति मे कमी आ जायेगी।

किसी न किसी रूप मे हिसा के आधार पर चलने वाले वैज्ञानिक साधनो से यो भी जैन धर्म का सही प्रचार नहीं हो पायेगा। धर्म के प्रति रुचि रखने वाला विवेकशील युवक जब यह जानेगा कि माईक आदि के प्रयोगो से जीव हिसा होती है और साधु ऐसी हिसक प्रवृत्ति करता है तो उसके मन मे साधुत्व की गरिमामयी छवि का लोप होने लगेगा। इस प्रकार महिमापूर्ण सन्त जीवन का अवमूल्यन होगा।

आप सामान्य रूप से भी चिन्तन करे कि जब बादलो मे चमकने वाली घर्षण से उत्पन्न बिजली भी भूमि पर गिरती है तो उससे भी छहकाय की हिंसा हो जाती है-मनुष्य, पशु तक उसकी चपेट मे आ जाय तो मर जाते हे और प्रयोग मे ली जानी बिजली भी अन्ततः तो बिजली ही है। वह प्राकृतिक है और यह बिजलीघरो मे बनाई जाती है। दोनो के स्वरूप मे कोई खास अन्तर नही होता है-यह विज्ञान का सामान्य विद्यार्थी भी जानता है। विद्युत-प्रयोग मे जीव हिंसा होती है या नहीं यह प्रसंग मेरे सामने ही नही नहीं, बल्कि पूर्व के महापुरुषो के सामने भी आया था और उन्होने भी इसमे हिसा बताकर प्रयोग करना उचित नही समझा था। युगद्रष्टा आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा जब एक बार जयपुर मे विराज रहे थे तब उनके सामने ऐसा प्रसंग आया-लोगो ने उनसे माईक प्रयोग का सविनय निवेदन किया किन्तु उन्होंने उसे उचित नहीं माना तथा माईक का प्रयोग नही किया। वही प्रयोग यदि अब किया जाता है तो क्या महाव्रत के उल्लंघन के साथ उन महापुरुषो के मार्गदर्शन का भी उल्लघन नहीं होगा। मै उस समय उनके ही चरणो मे वहा था। इससे स्पष्ट है कि साधु को माईक आदि का प्रयोग नही करना चाहिए। किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट माना जाना चाहिए कि यदि माईक का प्रयोग किया जाता है तो फिर साधु का प्रधान लक्ष्य प्रचार-प्रसार ही बन

जाता है। ऐसी दशा मे आत्मशुद्धि और अन्तर की खोज उसके लिए कठिन हो जायगी। इस रूप मे प्रचार-प्रसार के ऐसे साधन साधु को उसके प्रधान लक्ष्य से दूर हटाने वाले है अर्थात् आत्मशुद्धि मे बाधक है।

समझिये कि प्रचार-प्रसार मे सहायक नवीन साधनो का प्रयोग करना ही है तो उसके द्वारा सन्त जीवन को सकारात्मक प्रवृत्तियो से विमुख करना कतई उचित नहीं है-यह कार्य गृहस्थो का हो सकता है अथवा प्रचारक वर्ग का। वैसे प्रचारक प्रवास भी कर सकते है, प्रचार-प्रसार मे साधन-प्रयोग भी कर सकते है क्योकि वे खुले है, पर साधु तो अपनी व्रत-मर्यादा मे बधा हुआ होता है। उसे मर्यादाहीन बनाने का प्रयास कतई श्रेयस्कर नही।

साधु जीवन एक प्रकार से प्रकाश स्तम्भ होता है, अपनी ज्ञान की महिमा एव आचरण की उच्चता के साथ। यदि वह उपदेश न भी दे तब भी उसके आदर्श-जीवन से भव्य आत्माओ को प्रकाश प्राप्त होता है। उस प्रकाश से आखे मूद कर माईक पर उपदेश दिलाने से कैसा प्रकाश फैलाने की अपेक्षा की जाती है? इस प्रकाश के बिना क्या इस प्रकाश मे वैसी उज्ज्वलता की आशा रखी जा सकती है? ऐसी अवस्था मे कौन चाहेगा कि साधु उपदेशक बन जाय पर साधु न रहे? साधुत्व खोकर क्या कोई साधु प्रभावशाली उपदेशक बन भी सकता है? मूल है साधुत्व, अत: मूल सुरक्षित और निर्दोष रहे वैसी कोई भी उपकारक प्रवृत्ति साधु कर सकता है, उसमे कोई मतभेद नही। सच्चे साधु के तो दर्शन प्रभावपूर्ण होते है क्योकि उसका सारा उपदेश उसके आचरण मे सजा-सवरा दिखाई देता है। क्या आप यह चाहेगे कि पवित्र साधु जीवन को पतित बनाकर आप उपदेश-श्रवण की अपनी स्वार्थपूर्ति करे? मै समझता हू, आप कभी ऐसा नही चाहेगे। इसलिए आप जरा तटस्थ भाव से सोचिये कि मै प्रचार-प्रसार के लिए अपनी मर्यादा को कैसे त्याग सकता हू?

आपके मन मे यह प्रश्न उठ सकता है कि आधुनिकता की दृष्टि से मनुष्य अपने मे आवश्यक परिवर्तन क्यो न लावे? सामान्य रूप से इसमे मेरा मतभेद नही है कि हम सब आधुनिक युग के अनुसार अपने जीवन मे परिवर्तन लावे। लेकिन आधुनिक युग भी यह नहीं चाहता हैं कि माईक का प्रयोग करके ध्वनि-प्रदूषण को बढावा दिया जाय। आधुनिक वैज्ञानिको ने ही जाच करके यह निष्कर्ष निकाला है कि मनुष्य के कान जितनी आवाज को सुनकर सहन कर सकते है, माईक की आवाज उससे कई गुनी अधिक होती है जिससे कान के पर्दों को क्षति पहुचती है। क्षतिग्रस्त होते-होते कान के पर्दे फट जाते है। ध्वनि प्रदूषण से अन्य कई प्रकार के रोग भी उत्पन्न हो जाते है जिनमे मस्तिष्क की विक्षिप्तता भी शामिल है। आप तो जानते है कि कई बार माईक प्रयोग न करने के सरकारी आदेश निकलते रहते है। एक ओर विज्ञान स्वय एव सरकारी तत्र माईक प्रयोग को घातक बता रहा है तो दूसरी ओर इसे धार्मिक प्रचार-प्रसार के लिए योग्य बताना कहा तक उचित है? सरकार तो समय-समय पर जन सहयोग मागती रहती है कि माईक के प्रयोग को रोक कर ध्वनि प्रदूषण के दुष्परिणामो से बचा जाय।

अत: वैसे साधनो के प्रयोग का क्यो आग्रह किया जाय जिससे साधु की मर्यादा भग होती है तथा जिसके विरुद्ध वैज्ञानिको के निष्कर्ष भी हैं? यह प्रयोग सर्वदृष्ट्या हिंसाकारी है। हिंसा साधु कभी नहीं अपना सकता क्योकि वह तीनो करण और तीनो योगो से हिसा का परित्याग करता है। यदि साधु को साधु रहना है और साधु कहलाना है तो वह माईक आदि का कभी भी प्रयोग नही कर सकता है। आत्मशुद्धि का लक्ष्य उसके लिए सर्वोपरि है।

किसी के मन मे यह प्रश्न भी उठ सकता है कि परोपकार के लिए हिंसा हो भी जाय तो उसका प्रायश्चित क्यो नहीं हो सकता? मेरी सम्मति मे यह संभव नहीं है। इसे एक स्थूल उदाहरण से समझे। एक व्यापारी यदि सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य सूची से किसी वस्तु का अधिक मूल्य किसी उपभोक्ता ग्राहक से वसूल करता है तो उस पर एक अपराध बनता है और इसके लिए अर्थदड भी किया जाता है। ऐसा प्रावधान जनहित के लिए रखा गया है। यदि

दंडित व्यापारी यह कहे कि मैने अधिक वसूले गये मूल्य का धन जनहित परोपकार मे ही लगाया है अतः मुझ पर अपराध न लगाया जाय तो क्या सरकार उसे छोड़ देगी? मर्यादा तोडने से अपराध बनता है, उससे साधे गए परोपकार से भी वह छूटता नही है। इस कारण परोपकार भी सही विधि से ही किया जाना न्याय-सगत माना जाता है। अब साधु मर्यादा भंग करने के अपराध कर ले और उसे परोपकार के संदर्भ में छुड़ाना चाहें तो क्या वह अपराध मुक्त हो सकेगा? अतः मेरी स्पष्ट मान्यता है कि माईक आदि के प्रयोग से हिंसक प्रवृत्ति का भागीदार बन कर साधु आत्मशुद्धि के अपने प्रधान लक्ष्य का सम्यक् रीति से अनुसरण नही कर सकता है-इस कारण संयमी जीवन के सिद्धान्तो को छोड कर तथा उसकी मर्यादाओं को तोडकर प्रचार-प्रसार मे साधु को संलग्न नहीं बनना चाहिए।

जहां तक सूर्य-ऊर्जा से बैटरियां बनाने की बात कही गई है-ये कैसे बनती है तथा इनके बनने में हिंसा का कोई योग रहता है या नही, इस सम्बन्ध की मुझे कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं होने से इस विषय पर कोई विशेष कथन नहीं किया जा सकता है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि सूर्य की किरणो को संकुचित करने वाले विशेष कांच के नीचे यदि रुई आदि कोई शीघ्र ज्वलनशील वस्तु रखी जाती है तो उससे अग्नि पैदा होती ही है-वैसी ही अग्नि जैसी कि अरणी आदि की लकड़ी के घर्षण से पैदा होती है। उस उत्पन्न अग्नि से रसोई आदि बनाने का काम हो सकता है। इस तरह से आग पैदा होती है तो तेजस्काय की जीवोत्पत्ति का प्रश्न सामने आता ही है। परन्तु विशेष जानकारी नही होने से इस विषय पर मैं विशेष कथन करना नहीं चाहूंगा।

प्रश्न-९

संघ के साधु, साध्वियों के लेख आदि प्रकाशित क्यों नहीं होते, जबकि इससे उनके ज्ञान, अध्ययन एवं योग्यता का सही मूल्यांकन होता है?

उत्तर-

संत-सती वर्ग के लेख आदि प्रकाशित होने मे कई बातें सामने आती हैं। आरम्भ मे चाहे सत-सतियो का बौद्धिक विकास इन लेख आदि के प्रकाशन के माध्यम से हो सकता हो परन्तु आगे का उनका सर्वतोमुखी विकास इससे हो, यह कोई निश्चित नहीं है, क्योकि यदि सत-सतियां इन लेख आदि के लिखने और उन्हे प्रकाशित करवाने मे रम जाते है, तब आत्मशुद्धि के लिए चिन्तन-मनन करना तथा नवीन तत्त्वो की शोध करना उनके लिए कुछ कठिन बन जाता है। वैसी मानसिकता में वे फिर साधु-मर्यादाओ का निर्वहन भी सुगमता पूर्वक नहीं कर पाते है। लेख आदि की तरफ अधिक रुचि बढ जाने पर प्रिंटिग प्रेसो पर आने-जाने का दौर भी बढ जाता है तथा अन्य सलग्नताए भी, जिनके कारण साधुचर्या की पालना अवश्य अवरोधित हो जाती है।

यदि इस प्रवृत्ति के पीछे योग्यता-वृद्धि का ही उद्देश्य है तो यह उद्देश्य इसी प्रवृत्ति से पूरा हो, यह आवश्यक नहीं। यह समीचीन प्रवृत्तियो से भी इस उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है। उन प्रवृत्तियो के लिए मै तत्पर रहता हूं। मेरी दृष्टि मे साहित्य की चोरी वह कहला सकती है कि साधु कोई लेख लिखे और उसे किसी अन्य के नाम से छपवावे अतः साधु इससे दूर ही रहे तो श्रेष्ठ है।

प्रश्न-10.

श्वेताम्बर परम्परा में जैन गृहस्थ विद्वानों की कमी से आप स्वयं परिचित हैं तो इस क्षेत्र में आपका क्या प्रयास रहा है? यह एक गंभीर समस्या है कि जैन विद्वानों एवं शिक्षाविदों को वह सम्मान प्रदान नहीं किया जाता जितना धनपतियों को किया जाता है, क्या इसके समाधान हेतु आपने कोई प्रयास किये हैं?

उत्तर-

यह सही है कि श्वेताम्बर परम्परा मे आगम शास्त्रो के मर्मज्ञ ज्ञाता-विद्वानो की आवश्यकता रहती है और इस आवश्यकता पूर्ति के लिए यथाशक्ति प्रयत्न करने के भाव भी रहते है किन्तु श्रद्धानिष्ठ आगम-ज्ञाता विद्वान् उपलब्ध नही हो पा रहे है। इस दिशा में आचार्यश्री हस्तीमल जी म सा. ने भी पर्याप्त प्रयास किये है तथापि सुनने मे यही आया है कि वाछित सफलता नहीं मिल पा रही है।

इस विषय मे मै मानता हू कि पूर्ण प्रयत्न किया जाना अपेक्षित है। साथ ही समाज को भी अपने प्रयत्न अधिक तेज करने चाहिए।

प्रश्न-11.

राष्ट्रीय स्तर पर आए दिन दिल दहलाने वाली घटनाएं घटती हैं, क्या वे घटनाएं आपको भी प्रभावित करती है? यदि हां तो उनके बारे में आप किस प्रकार की प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं?

उत्तर-

राष्ट्रीय धरातल पर दिल दहलाने वाली ऐसी घटनाए जब कर्णगोचर होती है जिनका सम्बन्ध जनता की अहिंसा भावना एव नैतिक प्रवृत्तियो को विकृत बनाने से होता है तो गहन चिन्तन उभरता है कि यदि इस प्रकार सामान्य जन समुदाय की जीवनचर्या कठिनाईयो से जटिल बनती हुई विकारपूर्ण होती रही तो सारे राष्ट्र के स्वस्थ विकास का क्या भविष्य होगा?

जहां तक समुचित प्रतिक्रिया व्यक्त करने का सम्बन्ध है, वह यथायोग्य रीति से प्रवचनो के माध्यम से, प्रश्नोत्तरो या चर्चा मे प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अवश्य अभिव्यक्त होती है ताकि सस्कार-क्रान्ति को बल मिले तथा जन समुदाय मे सभी प्रकार की अनैतिकताओ से संघर्ष करने की प्रेरणा जागे। हमारी ओर से इसी प्रकार का प्रयत्न संभव हो सकता है।

प्रश्न-12.

आपको दीक्षा लिए 50 वर्ष बीत गए हैं। पहले वैरागी, फिर साधु, फिर युवाचार्य और अब आचार्य- इस बदलते परिवेश में आपको कैसा-कैसा अनुभव हुआ?

उत्तर-

मेरे हृदय मे वैराग्य भाव जागृत हुआ उससे पहले साधु जीवन के प्रति मेरी कोई रुचि नहीं थी। यही ख्याल था कि व्यापार, धधा या खेती आदि से जीवन निर्वाह के योग्य बनना है, किन्तु ससार की विभिन्न क्रियाओं के बीच भी प्रतिक्रिया रूप भाव तो उभरते ही हैं। उनके पीछे अमुक परिस्थितियां भी रहती है।

अल्पायु मे मेरे पिताश्री का देहावसान हो गया। साथ ही विद्यालयी शिक्षा भी अवरुद्ध हो गई। मुझे ध्यान है कि उस समय की शिक्षा का सामान्य पाठ्यक्रम भी बडा प्रभावी था। उससे मन-मस्तिष्क के विकास मे बड़ी सहायता मिलती थी। मेरा अनुभव है कि उससे भी मेरी बुद्धि का विकास हुआ, साहस की मात्रा में वृद्धि हुई तथा चिन्तन-मनन की अभिरुचि प्रखर बनी। मैंने एक बार छ: आरो का वर्णन सुना। उसके पश्चात् भादसोड़ा से भदेसर घोडे पर बैठकर जाते समय बीच के वनखंड मे चिंतन उभरा कि आत्मा और परमात्मा क्या है? आत्मा की शक्ति कैसे बढ सकती है? क्या परमात्मा का कहीं दर्शन भी हो सकता है? आदि-आदि। और इसी निरन्तर चिन्तन से मेरे

हृदय में वैराग्य भाव का अंकुर प्रस्फुटित हुआ। उस समय मुझे परमात्मा की कल्पना भी होने लगी और अपनी भूलो की तरफ भी ध्यान जाने लगा। मै अपनी आत्मालोचना में ज्यों-ज्यों डूबता गया, त्यो-त्यों मेरा वैराग्य भाव अधिकाधिक मुखर होने लगा।

मैंने विचार किया कि मै अपनी माता के धार्मिक कृत्यो मे भी बाधाएं डालता रहा हू, क्यो नहीं उसका अनुसरण करके अपने जीवन को भी धार्मिक बना लूं? इस प्रकार अनेकानेक बातें सोचता हुआ मैं रो पड़ा-और कई बार एकान्त में रोता ही रहता था। ऐसी ही अवस्था मे एक बार मै माताजी के पास पहुंचा। कंठ तो रूंधा हुआ था ही, प्रायश्चित्त के स्वर में बोलने लगा-माताजी, मैं कैसा हूं जो आपके साधु-सतियो के यहां जाने से टोकता हूं या सामायिक आदि धार्मिक क्रियाएं नही करने देता हूं? यह मेरी बडी गलती है। किन्तु अब मै आत्मा और परमात्मा पर सोचने लगा हूं, अब ऐसी गलती नहीं करूंगा। मै स्वयं आपको सन्तो के पास ले जाऊगा जो जीवन सुधार की अच्छी-अच्छी शिक्षाएं देते हैं। मेरे मुख से ऐसे भाव सुनकर मेरी माता को आश्चर्य हुआ और आनन्द भी। उन्हे चिता भी हुई कि कहीं मै वैरागी तो नहीं हो गया हू। सचमुच मेरी वह अवस्था वैरागी की ही हो गई थी और मन ही मन मैंने साधु बनने की ठान ली थी।

मन मे सदा परमात्मा का चिन्तन चलता रहता था और बाहर योग्य गुरु की खोज मे घूमता रहता था। मै एक साधु के पास जाता, उनसे शिक्षा ग्रहण करता और जब मुझे योग्यतर साधु के दर्शन होते तो मैं उनके पास चला जाता। इस प्रकार कई साधुओं के समीप रहने का मुझे अनुभव मिला, परन्तु पूरी तरह से आत्म सन्तुष्टि नही मिली। घर पर मेरा मन बिल्कुल नही लगता था और इसी धुन मे इधर-उधर घूमता फिरता था। इसी क्रम मे मैंने आचार्य जवाहरलाल जी म.सा. के विषय मे सुना कि वे खादी पहिनते है तथा भावप्रवण प्रवचन दिया करते है। मेरे मन को लगा कि जिनकी मुझे अब तक खोज थी वे मुझे मिल गए है। उस समय मेरा चिन्तन उभरा-अब तक कई साधुओ के पास गया, मुझे बडा आदर उन्होंने दिया और दीक्षा का आग्रह किया परन्तु वहा आत्मशुद्धि हेतु मुझे उचित वातावरण नहीं लगा। मेरे मन मे आदर या पद की लालसा कतई नही थी, आत्मशुद्धि का भाव ही सर्वोपरि था। आचार्य श्री जवाहर के दर्शन तो उस समय मैं नहीं कर पाया पर उन्हीं के संत युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी म.सा उस समय कोटा विराज रहे थे, दर्शन किए। मैने महाराज सा के सामने अपनी दीक्षा लेने की भावना व्यक्त कर दी। युवाचार्य श्री ने फरमाया-यह तुम्हारी भावना अच्छी है परन्तु दीक्षा से पूर्व तुम्हे समुचित अध्ययन करना होगा। इसके सिवाय दीक्षा के लिए न उन्होने मुझे कोई प्रलोभन दिया और न ही कोई ऐसी-वैसी बात कही। मै उनके भव्य व्यक्तित्व के प्रति आकृष्ट हो गया और उनके समीप अध्ययन करने लगा। इस बीच घर वाले वहा आ गये और बलात् मुझ घर लेकर चले गये। मैं फिर भाग आता, फिर वे मुझे ले जाते-इस तरह प्रसग बनता रहा। उस समय मैंने सुना कि आचार्य जवाहरलाल जी म.सा. केवल दूध छाछ पर ही अपना निर्वाह कर रहे है तो मेरा भी विचार बना कि मैं केवल जल पर ही निर्वाह करू। इस विचार से मै अन्न की मात्रा कम करता गया-आधी और पाव रोटी तक पहुच गया। तब गुरुदेव ने फरमाया-आचार्य श्री को तो शक्कर की बीमारी है इस वास्ते अन्न नहीं लेते, परन्तु तुम्हे तो आत्मशुद्धि हेतु जीवन चलाना है। आहार नही करोगे तो शरीर दुर्बल हो जायेगा और सयम का पालन कठिन। इस मनुष्य जीवन को यों व्यर्थ थोड़े ही करना है। वह बात मैने स्वीकार कर ली और वापस धीरे-धीरे आहार की वृद्धि की-आत्मशुद्धि का प्रश्न मेरे अन्तर्मन मे समाया हुआ था।

एक विचित्र प्रसंग भी बना। मेरे वैराग्य भाव को समाप्त करने के लिए मेरे भाईसाहब ने कोई तांत्रिक प्रयोग भी किया। मैं विचारमग्न वैसे ही लेटा हुआ था कि भाईसाहब आए और मुझे नीद मे सोया हुआ जानकर मुझ पर राख

(भभूत) छिड़कते हुए कुछ टोटका करने लगे। मैने उठ कर साफ कह दिया कि मुझे दीक्षा लेनी है और आप उसके लिए सहर्ष आज्ञा दे दीजिए। फिर भी उन्होने कई तरह के प्रयास किये कि मै दीक्षा न लू, पर हार थक कर उन्होने मुझे आज्ञा दे दी और मैंने स्वर्गीय आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा के चरणो मे दीक्षा अगीकार कर ली। मैं साधु बन गया। दीक्षा के समय गुरुदेव ने मुझे यह शिक्षा दी थी कि तुम्हे जितने भी सच्चे साधु और योग्य श्रावक मिले- सबसे यह कहना-मेरे मे कोई त्रुटि दिखाई दे तो उसे कृपा करके मुझे अवश्य बतावे। कोई त्रुटि बतावे तो उस पर गुस्सा कभी मत करना एवं सशोधन यथार्थ हो तो उसे सविनय स्वीकार कर लेना। मैने गुरुदेव की इस शिक्षा को विनयपूर्वक हृदय मे धारण की है और इसको सदा याद रखता हू-चाहे मै युवाचार्य हुआ या आचार्य, समाज और संघ के उत्तरदायित्व का वहन करते हुए भी यह शिक्षा मेरे लिए पूर्ण उपयोगी सिद्ध हुई है। तब मैने गुरुदेव को और संघ को स्पष्ट निवेदन किया था कि आप यह पद किसी अधिक योग्य साधु को देवे-मेरी इसके लिए इच्छा नहीं है। परन्तु जब किसी ने मेरा निवेदन नही सुना तो मुझे यह दायित्व लेना ही पडा।

और आज मैं आपके समक्ष हूं। इस बीच कई प्रकार के अनुभव मुझे हुए पर उनको अभी बताने का समय नहीं है। अब तक मेरा विशिष्ट अनुभव यही समझिये कि मे आत्मशुद्धि के नये-नये प्रयोग खोजता रहा हूं और यथासाध्य उन्हे प्रकट भी करता रहा हूं। उनमे प्राप्त सफलता के विषय मे मेरा यही कथन है कि अभी तक मैं पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हू।

आपसे यही अपील है कि आत्मशुद्धि एव शाति के जो उपाय मै खोजूं, उनमे आप आवश्यक संशोधन सुझावे। मेरा यही चिन्तन चलता है कि साधु मर्यादा मे रह कर वैज्ञानिक विधि से भी प्रयोगो को साधकर आत्मशुद्धि एव शान्ति के लिए नए-नए सिद्धान्तो का प्रतिपादन कर सकूं और यही नम्र प्रयास आज भी चलता रहता है।

-शोध अधिकारी आगम अहिंसा समता एवं प्राकृत संस्थान, उदयपुर

शव्द अनत विचारो के वाहक है। विचार शब्दो पर आरुढ होकर बाहर आते है। शब्द कैसे भी हो, वाहन का महत्त्व नही है, महत्त्व सवार का है।

-आचार्य श्री नानेश

जिज्ञासाएं एवं आचार्यश्री नानेश के समाधान

✍ डॉ. नरेन्द्र भानावत

प्रश्न-1.

आपकी दृष्टि में मानव जीवन का क्या महत्त्व है?

उत्तर-

मानव जीवन सहित संसार की सभी चौरासी लाख योनियो मे भवभ्रमण करती हुई आत्माएं तथा सिद्धात्माए भी अपने मूल स्वरूप मे समान होती हैं। उनके बीच जो अन्तर होता है वह होता है वर्तमान स्वरूप की अशुद्धता व शुद्धता का। संसारगत आत्माओं मे जो अशुद्धता होती है वह है कर्म रूपी मल की। इसी मल के सर्वथा अभाव मे आत्मा की सिद्धि होती है अर्थात् पूर्ण शुद्धि।

मानव जीवन का इसी सन्दर्भ में सर्वाधिक महत्त्व है कि आत्मा की पूर्ण शुद्धि की स्थिति केवल इसी जीवन में प्राप्त की जा सकती है, किसी भी अन्य जीवन मे नही। सांसारिकता बनाम कर्मों से अन्तिम संघर्ष करने तथा उसमे चरम सफलता प्राप्त करने का मानव जीवन ही श्रेष्ठतम रणक्षेत्र है। इसी जीवन मे सम्यक् निर्णय की असीम शक्ति अर्जित की जा सकती है एवं सम्पूर्ण समता की उपलब्धि। अत: मेरी दृष्टि मे इसका सर्वोपरि महत्त्व है जहा वर्तमान स्वरूप मे रमण करती हुई आत्मा अपने परम शुद्ध मूल स्वरूप का वरण कर सकती है।

प्रश्न-2.

वह कौनसी शक्ति है जो मानव जीवन में ही पाई जाती है, अन्य जीवन में नहीं?

उत्तर-

मानव जीवन एवं अन्य प्राणी जीवनों मे जो समानताए होती है, वे सर्वविदित है यथा-भोजन, विश्राम, भय एवं संतानोत्पत्ति का निर्वहन आदि परन्तु वह विशिष्ट शक्ति जो मानव जीवन मे ही पाई जाती है, अन्य जीवन मे नहीं-वह होती है आत्म-विकास को उसकी उच्चतम श्रेणियो तक पहुंचा देने की शक्ति।

मानव जीवन में यह शक्ति संचरित होती है कि मानव यदि उसका सदुपयोग करते हुए ज्ञान, दर्शन एव चारित्र रूप धर्म की श्रेष्ठ उपासना मे प्रवृत्त बने तो वह मुक्ति के चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। धर्मोपासना की यह शक्ति इसी जीवन की अति विशिष्ट शक्ति होती है और इसी शक्ति का नाम है आध्यात्मिक शक्ति।

आध्यात्मिक शक्ति के माध्यम से उत्तम ज्ञानार्जन, प्रगाढ श्रद्धा, कठोर आचरण, शुद्धिकरण, प्रक्रिया, दिव्य सक्षमता आदि आत्म गुणो का विकास होता है जो आत्मा के सम्पूर्ण विकास तक पहुचा सकता। यह सारा सामर्थ्य इसी जीवन की शक्ति में निहित होता है। इसी कारण मानव जीवन को उत्तम एवं दुर्लभ कहा गया है।

प्रश्न-3.

नाम से जैन हैं और इनमें जैनी परिग्रहियों की सख्या अधिक तथा अपरिग्रहियों की संख्या कम है, ऐसा क्यों है ?

उत्तर-

जैनत्व किसी व्यक्ति, जाति या वर्ग विशेष से सम्बन्धित नही है। जहां अहिसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, स्याद्वाद आदि सिद्धान्तो की विचार तथा आचार मे भूमिका वर्तमान है, वही जैनत्व निरूपित है-ऐसा माना जा सकता है। यह कह सकते हे कि वहीं जैन शब्द अपनी सार्थकता ग्रहण करता है।

मूलत: जैन धर्म के सिद्धान्त मानव जीवन की उस मौलिकता को अनुप्राणित करते है जिसकी आवश्यकता प्रत्येक मानव को होती है। यदि कोई मानव मात्र नाम से ही जैन जाना जाता है तो वह स्थिति उचित नहीं है न उसके स्वय के जीवन के लिए एवं न ही उससे सम्वद्ध समाज के लिए, जीवन के लिए। इसके विपरीत यदि कोई मानव नाम से जैन न कहलाते हुए भी अपने अहिसा आदि श्रेष्ठतम सिद्धातो की अनुपालना की परिधि मे आ जाता है तो उसमे जैनत्व का निरूपण किया जा सकता है। कोई व्यक्ति जन्मजात जैन होकर भी जैन सिद्धान्तो के अनुरूप मौलिक जीवन जीने की कसौटी पर खरा नहीं उतरता है तो समझिये कि उसकी जैनत्व की संज्ञा वास्तविक नहीं है। आशय यह है कि मात्र नाम से जैन कहलाने के महत्त्व का अधिक अंकन नहीं किया जाना चाहिये।

इस सन्दर्भ मे मैं एक पूर्व घटना की याद दिलाना चाहूंगा। स 2006 मे शान्तक्रान्ति के जन्मदाता स्व आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा के विराजने का प्रसग इन्दौर नगर मे था, उस समय महू मे सर्वोदय सम्मेलन आयोजित हुआ और उसमे भाग लेने के लिए आचार्य विनोबा भावे आये। विनोबाजी तब आचार्यश्री के दर्शनार्थ भी आये। चर्चा के दौरान उन्होंने कहा-आप सोच रहे होगे कि विश्व में जैनियो की संख्या कम है, किन्तु मै सोचता हूं कि जैन नाम की संख्या भले ही कम हो सकती है पर जैन धर्म के मौलिक सिद्धांत अहिसा, सत्य, अचौर्य, अपरिग्रह आदि मे व्यक्त या अव्यक्त आस्था रखने वालो की संख्या बहुत है। मानवीय मूल्यो की महत्ता जानने वाले व्यक्तियो के मन-मानस मे ये सिद्धान्त दूध मे मिश्री के समान घुले हुए है-एकरूप है। दूध मे मिश्री घुल जाती है तो उसका अस्तित्व दिखाई नहीं देता किन्तु क्या उसका अस्तित्व मिट जाता है? कदापि नहीं, वह तो मिठास के रूप मे कई गुना बढा कर दूध पीने वाले को आह्लादित बना देता है। यही स्थिति जैन धर्म के इन मौलिक सिद्धान्तो की है। जैन नाम धराने वाले इन सिद्धांतो की निष्ठा और पालना मे पीछे है अथवा जैन न कहलाने वाले उनसे आगे है-यह विशेष महत्त्वपूर्ण नहीं। महत्त्व है उन सभी लोगो का जो मिश्री के मिठास का रसास्वादन करते हुए सच्चे आत्मिक आनन्द की अनुभूति लेते है।

जिस प्रकार गंगा और यमुना ये दोनों नदियां बहती हुई अन्त मे एक ही समुद्र मे जाकर मिलती है, उसी प्रकार कहलाने की दृष्टि से जैन हो या अजैन जो अहिसा, अपरिग्रह आदि सभी सिद्धान्तो के प्रति सम्यक् आचरण का भाव रखते हैं, वे अन्तत: आत्म विकास के एक ही स्थान पर पहुच कर एकरूप हो जाते है। हां, जैसे ये दोनो नदियां समुद्र मे मिलने से पहले तक अपने पाट, जल, बहाव, भूमितल आदि की दृष्टि से भिन्न या अन्तर वाली दिखाई देती है, वैसे ही अपने बाह्याचार, विचार शैली या जीवन निर्वाह पद्धति मे जैन या अजैन समुदायो मे अन्तर देखा जा सकता है, परन्तु उनमे आतरिक समता के कई सूत्र खोजे जा सकते है।

अत: यदि तटस्थ भाव से विश्व के सम्पूर्ण मानव समाज का सर्वेक्षण किया जाय तो नाम की दृष्टि से जैन कहलाने वाले व्यक्तियो की अपेक्षा नाम नहीं धराने वाले किन्तु जैनत्व से युक्त व्यक्तियो की संख्या अधिक ज्ञात होगी जो अपरिग्रही है तथा अपरिग्रहवाद मे विश्वास रखते है। वैसे इस हेतु उपदेश भी दिया जाता रहा है तथा अन्यथा प्रयास भी किया जाता है कि जैनों की भी अपरिग्रहवाद की दिशा में अधिक प्रगति हो। उपदेश श्रवण के समय कइयो को इसका प्रतिबोध भी होता है और उनमें यह विचार भी जागता है कि हमे भावना एवं आचरण से

अपरिग्रही बनना चाहिए। अपनी परिग्रही वृत्तियो के लिए कई चिन्तन और पश्चात्ताप भी करते हैं, किन्तु अधिकांशतः वह चिन्तन और पश्चात्ताप सम्भवतः उस उच्च सीमा तक नहीं पहुंच पाता है जो सीमा परिग्रह-मुक्ति की दृष्टि से निर्धारित मानी जाती है।

यह विडम्बना ही कही जायेगी कि कई बार मानव पापाचरण करते हुए भी उसे पापमय नही मानता। उसी प्रकार परिग्रह की मूर्छा से ग्रस्त होने पर भी जब वह उस आत्मपतन को नहीं समझ पाता है तब वह अपरिग्रह के अपरिमित महत्त्व को भी हृदयंगम नहीं कर पाता है। ऐसी मनःस्थिति में वह चिन्तन एवं पश्चात्ताप की वाछनीय सीमा तक नहीं पहुंचता है और इसी कारण अपरिग्रहवाद की श्रेष्ठता की ओर अग्रसर नही बनता है। फिर भी यदि दान देने की दृष्टि से सर्वे किया जाये तो आपको दीन, असहाय, रोगी, अभावग्रस्त आदि के लिए अन्नदान देने वाले दानवीरो की संख्या जैनियो मे बहुलता से प्राप्त होगी जो अपरिग्रहवाद की परिचायक है। गृहस्थो के लिए अपरिग्रह से तात्पर्य निर्धन बनना नहीं अपितु धन से मोह-मूर्च्छा हटा कर उसका निःस्वार्थ दृष्टि से अनुदान करना है। बहुत से विवेकशील जैनेत्तर व्यक्ति भी उक्त सीमा की ओर आगे बढ़े है तथा परिग्रहवादी जटिलताओं से मुक्त होने का प्रयास कर रहे है, वे जन्म या नाम से जैन न होने पर भी अपनी भावना, धारणा और क्रिया से जैन सिद्धांतो की परिधि मे आ रहे है।

इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि कुल मिलाकर वर्तमान समय मे भी अपरिग्रहवादियों की संख्या कम नही है। हम सन्त-सतियों का सतत प्रयास रहता है कि परिग्रह की घातक मूर्च्छा को समझ कर लोग उस वृत्ति से हटे तथा अपने विचार एवं आचार से अधिकाधिक अपरिग्रही बने।

प्रश्न-4.

अधिकांश व्यक्ति यश, कीर्ति, नाम आदि के लोभ से दान देते हैं, क्या यह उचित हैं ? यदि नहीं तो दान किस भावना से किस प्रकार देना चाहिए?

उत्तर-

यश, कीर्ति, नाम आदि कमाने की दृष्टि से जो दान दिया जाता है, वस्तुतः उसको दान कहना मै दान शब्द का दुरुपयोग मानता हूं। इस प्रकार के दान को दान की संज्ञा नहीं देनी चाहिए बल्कि एक प्रकार से दान का आड़म्बर कहना चाहिए। व्यापारी द्वारा मूल्य चुका कर खरीदी बेची जाने वाली वस्तु की दान के साथ समानता नहीं की जा सकती कि उसे भी कोई मूल्य चुका कर खरीद ले। दान किसी भी प्रकार से व्यापार की क्रिया नही होता। दान सदा ही भावना प्रधान कर्म होता है।

दान किस प्रकार का होना चाहिए, इसकी यह व्याख्या की गई-'**अनुग्रहार्थ स्वस्यात्तिसर्गो दानम्** (तत्त्वार्थ सूत्र 33)' अर्थात् अनुग्रह के हेतु अपना उत्सर्ग ही सच्चा दान होता है। दान का मूल एवं सर्वोच्च लक्ष्य होता है आत्म शुद्धि और इस दृष्टि से दिया गया दान ही वस्तुतः दान कहलाता है। विगत काल मे आत्मस्वरूप पर जो कर्मो का मैल लिपा हुआ है उसे धो डालने के लिए जो देने के रूप मे त्याग किया जाता है, वही दान है-यश, कीर्ति आदि की लालसा से दिया हुआ दान सच्चे अर्थों मे दान नही है।

इस प्रकार कर्म बन्धन से मुक्ति पाने की भावना के साथ निःस्वार्थ भाव से जो कुछ दिया जाता है और जव उसका लक्ष्य किसी पीड़ित को पीड़ामुक्त करने के लिए उस पर अनुग्रह-उपकार करना हो, तभी वह सच्चे अर्थों में दान कहलाता है। जो दान यश, कीर्ति या नाम के लोभ से दिया जाता है अथवा किसी भी प्रकार के स्वार्थ को पूरा

करने की दृष्टि से दिया जाता है, वह दान का वास्तविक स्वरूप नहीं है।

अत: दानवृत्ति को हृदय से अपनाने वाले सत्पुरुष को बाह्य रूप से नि:स्वार्थ दृष्टिकोण के साथ एव आंतरिक रूप से आत्मशुद्धि के लक्ष्य के साथ हो इस क्षेत्र मे अग्रगामी बनना चाहिए। इस रूप मे जब उसकी वृत्ति का विकास होता है तो एक ओर सच्चा दानशील बन कर वह अपनी आत्मशुद्धि कर लेता है तो दूसरी ओर दान के वास्तविक स्वरूप को सम्पूर्ण संसार के समक्ष प्रकाशमान बनाता है। दान के सही स्वरूप से ही दान की महत्ता प्रतिष्ठित हो सकती है।

प्रश्न-5.

तपस्या कर्मों की निर्जरा के लिए की जाती है किन्तु इसमे जो जुलूस, जीमण या आडम्बर की प्रक्रिया कहीं-कहीं अपनाई जाती है, क्या वह उचित है? क्या इससे कर्मबन्धन नहीं होता?

उत्तर-

तपश्चर्या के निमित्त से जो तपश्चर्या करने वाली आत्मा स्वय यदि जुलूस, जीमण, भेट आदि की आडम्बरपूर्ण प्रवृत्ति अपनाती है, उसके लिए यही कहा जायेगा कि वह सही अर्थों मे तपस्या का सही स्वरूप ही नही समझ पाई है।

तपश्चरण का यही आत्म लक्ष्य होता है और होना चाहिए कि पूर्व मे बाधे गए कर्मों के वेग को शिथिल समाप्त किया जाय अर्थात् कर्म-निर्जरा ही उसका प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए किन्तु ऐसे तपश्चरण के साथ जो कोई भी आडम्बर जोडा जाता है वह मेरी दृष्टि मे अनुचित है और ऐसे आडम्बर को परम्परा का रूप देना तो और भी ज्यादा गलत है। तपकर्त्ता यदि भौतिक वस्तुओ के लेन-देन की भावना से तप करता है तो मै उसे एक प्रकार के व्यवसाय की सज्ञा देता हूं। इसका यही कारण है कि तप करने वाला तपस्या के आत्मशुद्धि के वास्तविक लक्ष्य को भुला कर उसके निमित्त से जुलूस, जीमण आदि के आडम्बर मे फस जाता है तो सोचिये कि उसके द्वारा कितने जीवो की हिसा का प्रसंग बन जाता है।

तपश्चर्या सयम की साधिका होती है और यदि कोई साधक सासारिक इच्छाओ के नागपाश से अपने को मुक्त नहीं कर पाता है तो उनसे होने वाली जीवहिसा के दौर से गुजरता हुआ वह भला अपनी विशिष्ट आत्मशुद्धि कैसे कर पाएगा? वह साधक तो त्याग की भूमिका पर आरूढ होता है, फिर भेट आदि लेने से उसका क्या सम्बन्ध होना चाहिए?

महावीर प्रभु का स्पष्ट संदेश हैं-

नो खलु इहलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा, नो
परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा, नो खलु कित्ती-
वण्णसद्दसिलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा,
नन्नत्थ णिज्जरट्ठयाए-तवमहिट्ठिज्जा।

-दशवैकालिक सूत्र ९/४

अर्थात्-इस लोक की कामना के लिए तप नहीं किया जाय, परलोक की कामना के लिए तप नही किया जाय और न ही कीर्ति, यश, श्लाघा या प्रशसा की भावनाओ को लेकर ही तप किया जाय। मात्र कर्मों की निर्जरा करने के लिए ही तप करना चाहिए।

इसका अभिप्राय यही है कि तपश्चर्या केवल कर्मों की निर्जरा अर्थात् कर्म-बन्धन से मुक्ति की भावना हेतु ही की जानी चाहिए। तपस्या के जो बारह भेद बताए गये है उनमें एक अनशन भी है। परन्तु यदि कोई तपस्वी आत्मा इस एक भेद को भी आडम्बरों का निमित्त बनाती है तो वह अनुचित ही है, चाहे उस द्वारा की गई तपस्या से कर्म कुछ हल्के हो सकते है किन्तु उन आडम्बरों से तो नवीन कर्मबध की ही संभावना मानी जा सकती है।

प्रश्न-6.

क्या तपश्चर्या के लिए भूखा रहना आवश्यक है?

उत्तर-

तपश्चर्या के लिए भूखा रहना ही आवश्यक नहीं है। प्रभु महावीर ने बारह प्रकार का तप प्रतिपादित किया है। अनशन, उसमे पहला तप है। जिसमें उपवास, बेला, तेला आदि तपानुष्ठान लिये जाते हैं, जिसमे निराहार रहना होता है। पर यह निराहार भी सम्यक्त्व के साथ कषाय (क्रोध-मान-माया-लोभ) के उपशमन पूर्वक होना चाहिए। जिस आत्मसाधक से यह तप सम्भावित न हो, उसके लिए अन्य ग्यारह तपो का वर्णन भी किया गया है। भूख से इच्छापूर्वक कम खाना भी तप है। जो मानसिक वृत्तियां विभाव मे भटक रही है उन्हे रोक कर स्वभाव मे नियोजित करना भी तप है। खानपान के रस पर समभाव रखना, दूसरों की निंदा मे रस नही लेना, सांसारिक विषयो मे रस नही लेना, स्त्री कथा, भक्त कथा, देश कथा एवं राज कथा जैसी विकथाओ मे रस नहीं लेना, सासारिक विषयो मे रस नहीं लेना भी तप है। सम्यक् साधना करते हुए, सेवा-वैयावृत्य करते हुए या अन्य किसी आत्मसाधक के प्रसंगों पर होने वाले कायक्लेश में समभाव रखना भी तप है। जो इन्द्रियाएं, विषयो के पोषण की ओर भाग रही हैं, उन्हे सम्यक् ज्ञानपूर्वक आत्मलीन बनाना भी तप है। इसी प्रकार अपने अपराधों को स्वीकार करते हुए प्रायश्चित्त लेना, गुरुजन एवं गुणवान व्यक्तियों के प्रति यथोचित सम्मान के भाव रखना, उनकी शारीरिक, मानसिक, वाचिक दृष्टि से वैयावृत्य (सेवा) करना, शास्त्राभ्यास करना, स्वयं की गलतियों को देखना, स्वात्म चिन्तन करना, वीतराग महापुरुषों के जीवन चरित्र का अहोभावपूर्वक ध्यान करना, अपने शरीर से मोहभाव हटा कर आत्मलीन होना आदि भी तपश्चर्या है। आत्मसाधक इनमे यथानुकूल तप करता हुआ कर्म-निर्जरा कर सकता है।

प्रश्न-7.

आज जल, वायु आदि शुद्धिकारक तत्त्व स्वयं अशुद्ध होते जा रहे हैं और पर्यावरण प्रदूषण का संकट बढ़ रहा है, तब इस समस्या के निवारण हेतु क्या किया जाना चाहिए?

उत्तर-

वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति तथा अनियंत्रित भोगलिप्सा ने तो चारो ओर प्रदूषण का विस्तार किया है। यह विस्तार दो क्षेत्रों में एक साथ हो रहा है।

एक ओर कोयला, तेल, पेट्रोल, डीजल आदि के जलने से, सडको पर टायरो के घिसने के कारण वैसी गंध हवा मे फैलने से युद्धस्त्रों के प्रयोग से बारुदी विस्फोटों के धमाके होने से विविध भाति की किरणो और तरंगो के ताप से, वायुयानों आदि से हद बाहर ध्वनि के फूटने से, परमाणु परीक्षणो के विषैले प्रभाव से, सूर्य एवं चन्द्रग्रहणो के खगोलीय उपद्रवों, कल-कारखानों से निकलने वाले विषाणुओं के विस्तार से और इस प्रकार के अनेकानेक कारणो से जो प्रदूषण फूटता है, उसके विषैले वातावरण का शारीरिक क्रियाओ पर भयकर प्रभाव होता है और कई तरह की विषम समस्याएं पैदा हो जाती है।

दूसरी ओर मानसिक एव आत्मिक प्रदूषण भी उसी अनुपात मे बढता रहता है जो स्वस्थ विकास की जडो पर ही कुठाराघात कर देता है। इसे स्वय से उत्पन्न पदूषण कहा जा सकता है। ईर्ष्या, क्रोध, घृणा, घमड, चिन्ता, तनाव आदि की उत्पत्ति भी अधिकाशत: इसी वैज्ञानिक प्रगति की देन होती है। यह विकार बाहर से फूट कर भीतर मे फैल जाता है। जीवन मे सर्वत्र असन्तुलन की उपज इसी वैज्ञानिक प्रगति के प्रदूषण से सामने आई है।

किसी भी समस्या का सम्यक् रीति से निवारण करना है तो पहले उसके कारणो को खोजना चाहिए। कारण के बिना कोई भी कार्य नहीं होता। जरा-सी भी बारीकी से देखे तो पर्यावरण प्रदूषण के कई कारण साफ तौर पर ज्ञात हो सकते हैं, यथा-

(1) उद्योगो का दुष्प्रवन्ध-कई प्रकार के रासायनिको एव अन्य पदार्थों के उद्योगो की स्थापना एव व्यवस्था पर्यावरण सन्तुलन को नजरन्दाज करके की जाती है। घातक तत्त्व भूमि पर या नदी नालो मे बहा दिये जाते है अथवा धुआं आदि के रूप मे चिमनियो से आकाश मे उडाये जाते हैं, फलस्वरूप भूमि, जल एवं वायु सभी प्रदूषित हो जाते हैं। एक प्रकार से प्रदूषण सारे वातावरण मे फैल जाता है जो सभी जीवो को हानि पहुचाता है अत: उद्योगो का दुष्प्रवध दूर किया जाना चाहिये। भोपाल गेस काड आदि अनेक घटनाए इस दुष्प्रवन्ध का ही परिणाम है।

(2) जीव हिंसा के प्रयोग-कई ऐसे दुष्ट प्रयोग किये जाते हैं जिनके द्वारा जीवो की हिसा होती है। ऐसे प्रयोगो से भूमि अशुद्ध वनती है तथा वायुमडल में भी विकार फैलते है। इनसे अन्तत: पर्यावरण प्रदूषित होता है अत: ऐसे प्रयोग रोके जाने चाहिए।

(3) वन-विनाश-पर्यावरण को असन्तुलित वनाने का एक प्रमुख कारण निहित स्वार्थियो द्वारा वनो का विनाश करना भी है। हरे-भरे वनो को उजाड देने से वनस्पति आदि के जीवो की हिसा तो होती ही है किन्तु उससे वर्षा आदि के न होने से जीवों के सरक्षण मे भी व्यवधान पहुचता है जबकि वन्य जीव पर्यावरण का सन्तुलन निबाहने मे बडे मददगार होते हैं। इस दृष्टि से वनो एव वन्य जन्तुओ का सरक्षण किया जाना चाहिए।

(4) जल का अशुद्धिकरण-इस युग मे लोगो की जीवनशैली कुछ ऐसी अविवेकपूर्ण बन गई है कि केवल जल का दुरुपयोग ही नहीं किया जाता वल्कि नाना प्रकार से जैसे मैलै बहाकर, गटर डालकर, शव फैक कर बहते या भरे जल को अशुद्ध वना दिया जाता है। इससे जल अशुद्ध एव रोगकारक बन जाता है। यह अप्काय की जीव हिसा तथा अन्य प्राणियो की शरीर हानि का कारण बनता है। जल शुद्धि के विविध उपाय आज के वैज्ञानिक युग से अदृश्य नहीं है। पानी की व्यर्थ वरवादी पर सबसे पहले रोक लगानी चाहिए।

(5) ध्वनि-प्रदूषण-वाहनो, ध्वनि विस्तारक यत्रो अथवा कलकारखानो आदि का शोर इतना बढने लगा है कि पर्यावरण को बिगाडने मे ध्वनि प्रदूषण भी मुख्य बन रहा है। इस सम्बन्ध मे कई उपायो से शात वातावरण को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

पर्यावरण को दोषमुक्त एवं सतुलित बनाये रखना स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक है।

प्रश्न-8.

आध्यात्मिक साधना करने वाला व्यक्ति केवल स्वकल्याण तक ही सीमित रह जाता है, उसे समाज कल्याण की ओर किस प्रकार कर्त्तव्य निभाना चाहिए?

उत्तर-

आध्यात्मिक साधना के वास्तविक स्वरूप को चिन्तन मे लेने एव तस्युत्पन्न अनुभूति को जीवन मे समग्रतया

स्थान देने की नितान्त आवश्यकता है। मानव की सद्‌वृत्तियां किस प्रकार से सामाजिक लाभ-हानि का कारण बनती है, उसको जानने से आध्यात्मिक साधना के सामाजिक सन्दर्भ का स्पष्टीकरण हो सकता है।

सूक्ष्म रूप से देखे तो मानव की आंतरिक वृत्तियां हिंसा, झूठ, चोरी, परिग्रह आदि दुर्गुणो से ग्रस्त होकर स्व के साथ पर जीवन को भी दूषित बनाती है। एक आत्मा की आंतरिक अशुद्धि अनेकानेक आत्माओ की सम्पर्कगत अशुद्धि का कारण बनती है और तब ऐसी अशुद्धि प्रगाढ होकर सम्पूर्ण समाज के वातावरण को विकृत बना डालती है। वही सामाजिक विकृत वातावरण फिर व्यापक रूप से उस विकृति को बढावा देता है। इस प्रकार एक आत्मा की आध्यात्मिक-हीनता सारे समाज की नैतिकता को छिन्न-भिन्न कर डालती है।

ठीक इसके विपरीत इसी प्रकार एक आत्मा द्वारा साधी जाने वाली आध्यात्मिक साधना एक से अनेक को सुप्रभावित करती है तथा अन्ततोगत्वा सारे समाज की गतिशीलता को नैतिकता, विशुद्धता एवं उन्नति की ओर मोड देती है। व्यक्तिगत आध्यात्मिक साधना भी इस रूप मे सारे समाज को प्रभावित करती है और करती है अपने सामाजिक कर्त्तव्य का सम्यक् निर्वहन।

सांसारिक व्यामोह से आध्यात्मिक साधना के पथ पर अग्रसर होना सरल कार्य नहीं होता है। जीवन-व्यवहार मे जब दुष्वृत्तियां एव दुष्प्रवृत्तिया सिलसिला बांधकर निरन्तर चलती रहती हैं तो उससे आन्तरिक एवं बाह्य प्रदूषण छा जाता है। प्रवचनो, उपदेशो एवं प्रेरणापूर्ण सामग्री के माध्यम से जब ऐसे प्रदूषण को रोकने की सीख दी जाती है तब मानवीय मूल्यो से अनुप्राणित आत्माओ मे एक विरल जागृति का संचार होता है और वही जागृति उन्हे आध्यात्मिक साधना की जीवन-यात्रा मे प्रवृत्त बनाती है, अतः यह मानना चाहिए कि आध्यात्मिक साधना की प्रेरणा भी व्यक्ति एवं समाज की परिस्थितियो से ही प्राप्त होती है। इस दृष्टि से भी इस साधना का सामाजिक आधार एवं स्वरूप स्पष्ट होता है।

आध्यात्मिक साधना जहा व्यक्ति के बाह्य एव आतरिक प्रदूषण का शमन करती है, वहा सामाजिक समस्याओ के समाधान का द्वार भी खोल देती है। तब व्यक्ति एवं समाज का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध बन जाता है तथा आध्यात्मिक साधना इन सम्बन्धों को निरन्तर विकसित बनाती रहती है। इसे दूसरे शब्दों मे इस प्रकार कह सकते है कि आध्यात्मिक साधना की चरम अवस्था समाज-कल्याण के कर्त्तव्य निर्वहन मे ही प्रतिफलित होती है।

प्रश्न-9.

बहुधा देखा जाता है कि धार्मिक क्रियाओं में रचा-पचा व्यक्ति दोहरा जीवन जीता है, इसका क्या कारण है? उसे अपने जीवन के रूपांतर के लिए क्या करना चाहिए?

उत्तर-

वास्तव में धार्मिक जीवन कैसा हो-इस विषय का ज्ञान अन्तर्चेतनापूर्वक होना चाहिए। जीवन का सच्चा रूपांतरण ही तो धार्मिक बनाता है, परन्तु जब ऊपर से धार्मिक क्रियाओ को करने वाले पुरुष को ही धार्मिक मान लेने की दृष्टि बन जाती है, तभी भ्रान्त धारणाओ का जन्म होता है। किसी की आन्तरिकता मे झाक कर निर्णय लेना सरल नही होता और जब ऊपरी धार्मिक क्रियाएं (जिन्हे भावपूर्ण नहीं कह सकते) करने वाले लोग समाज मे सम्मान, श्रद्धा और प्रतिष्ठा पाने लगते है तो धार्मिक क्रियाओ की गहनता अस्पष्ट रह जाती है। ऐसी धार्मिक क्रियाओं को करने वाले ही दोहरा जीवन जी सकते है वरना सच्चे धार्मिक पुरुष का जीवन तो सदा ही स्पष्ट, एकरूप और स्वस्थ होता है। क्योकि उसकी धार्मिक क्रियाओ की आराधना मे आत्मशुद्धि का भाव एव प्रभाव

सर्वोपरि होता है।

अधूरी धार्मिक क्रियाओ के दिखावे से कपट पूर्वक बाह्य प्रतिष्ठा भले ही प्राप्त कर ली जाये किन्तु उनसे जीवन मे आमूलचूल परिवर्तन कभी नही आता अर्थात् रूपातरण तो भाव एव त्यागपूर्वक आराधी गई धार्मिक क्रियाओ से ही सम्भव हो सकता है।

सच पूछे तो वास्तविक ज्ञान के अभाव मे ही धार्मिक क्रियाओ का अपरूप प्रचारित हो जाता है। किसी भी धार्मिक क्रिया के स्वरूप एव उसकी साधना विधि की जब सही जानकारी होती है तो उसके प्रति बनने वाली निष्ठा भी सच्ची बनती है तथा उसकी आराधना भी सर्वांगत: श्रेयस्कर। वैसी क्रिया प्रत्येक चरण पर जीवन मे सदाशयी रूपातरण लाती रहती है। ज्ञान एव श्रद्धा दोनो आचरण के साथ सयुक्त रहते है और तब वैसी दशा मे आत्मोन्नति का ही मार्ग प्रशस्त होता रहता है।

इसके स्थान पर जब सम्यक् श्रद्धा तो हो पर आचरित तत्त्व जानकारी सही नही हो और किसी क्रिया पर आचरण किया जाय तो उसमे रूपातरण की गति तीव्र नही हो सकती है तथा आत्मशुद्धि का लाभ भी विशिष्ट जानकारी के अभाव मे सामान्य-सा ही रहता है। जीवन का आमूलचूल परिवर्तन उसके लिए सुलभ नही होता, जबकि सही जानकारी और सही श्रद्धा के अभाव मे स्वार्थ बुद्धि या अन्ध दृष्टि से आचरित धार्मिक क्रियाओ का स्वरूप भ्रामक होता है और ऐसा व्यक्ति ही दोहरा जीवन जीने का आडम्बर रचता है। आधुनिक युग से उत्पन्न अन्य कई परिस्थितियां भी धार्मिक क्रियाओ के अधूरे आचरण को प्रोत्साहित करती है। इस कारण पनपती हुई दोहरी वृत्ति पर अवश्य ही सुधारात्मक आघात किये जाने चाहिए ताकि धार्मिक क्रियाओ की आराधना सच्ची और स्तरात्मक बन सके एव जीवन की रूपान्तरणकारी भी।

प्रश्न-10.

आपके गृहस्थ अनुयायी आपकी दृष्टि मे आपके धर्मोपदेश का पालन किस सीमा तक कर रहे हैं? क्या आप उससे सन्तुष्ट है?

उत्तर-

गृहस्थ वीतरागदेव की वाणी से अनुयायी है। उस वाणी का कथन यथाशक्ति मुझसे जो बन पाता है, वह मै करता हू। इतने मात्र से वे मेरे अनुयायी हो गये-ऐसा चिन्तन मै नही करता।

वीतराग देव की उस विराट् वाणी का अनुसरण कितने लोग किस मात्रा मे और किस प्रकार से कर रहे है-इसका सर्वेक्षण मैने नहीं किया और न ही कभी इस हेतु मै समय निकाल पाया हू। इसका सर्वेक्षण तो कोई तटस्थ व्यक्ति ही कर सकता है, जो वीतराग वाणी का आस्थावान् ज्ञाता हो। फिर वीतराग वाणी प्रधानत: अन्त:करण द्वारा ग्रहण की जाने वाली अनुभूति होती है और ऐसी आन्तरिक अनुभूति का वस्तुत: वही सत्य परिचय पा सकता है जो स्वय वीतराग एव सर्वज्ञ हो। अन्य व्यक्ति तो मात्र किसी के बाह्य व्यवहार के आधार पर ही उसके आंतरिक मनोभावो का अनुमान भर लगा सकता है। अत: वीतराग वाणी से गृहीत धर्मोपदेश का कौन कितनी मात्रा मे पालन कर रहा है-इसका यथावत् निर्णय, कहा जा सकता है कि आज के समय मे शक्य नहीं है।

मुझे उन अनुयायियो को लेकर अपनी सन्तुष्टि अथवा असन्तुष्टि का नाप भी नही बनाना है। मेरे लिये तो अपनी स्वय की अन्तर्चेतना के प्रति ही अपनी सन्तुष्टि का मापदण्ड निर्धारित करना है ताकि मेरी अपनी आत्मालोचना का क्रम स्वस्थ बना रह सके। इस दिशा मे मेरा अपना निरन्तर प्रयास चलता रहता है। अन्य की अन्तर्चेतनाओ के

आधार पर तथा उनके लिए मेरी अपनी सन्तुष्टि या असन्तुष्टि की तुलना करना उपर्युक्त नहीं हो सकता।

सन्त-सती वर्ग इसे अपना कर्त्तव्य मानता है कि वीतराग वाणी पर धर्मोपदेश दिया जाय। यह श्रोता आत्माओ की भव्यता पर निर्भर करता है कि वे उस धर्मोपदेश को कितनी गहरी भावना के साथ ग्रहण करती है। भावना की उस गहराई का प्रत्येक भव्य आत्मा ही अपने लिए अंकन कर सकती है जबकि वह भी अन्तःकरण पूर्वक वैसा करे। अन्तरात्मा की आलोचना की सम्पूर्ण परिधियां विशिष्ट अन्तरात्मा ही ज्ञात कर सकती है।

प्रश्न-11.

तथाकथित जैन समाज के अतिरिक्त अन्य समाज के क्षेत्रों में आपका विचरण कितना हुआ है और उसका क्या प्रभाव पड़ा है?

उत्तर-

प्रश्न के अन्तर्गत विचरण की बात आयी है। इसमें मैं समभाव की नीति को महत्त्व देता हूं-उस तुला के अनुसार ही तथाकथित समुदाय का विभाजन मै गुण एवं कर्म के आधार पर करता हूं। हजारो हजार लोग या उससे भी अधिक लोग मेरे सम्पर्क में आये होगे तथा विस्तृत विचरण भी हुआ होगा, किन्तु उन पर मेरा क्या प्रभाव पड़ा-इसका सर्वे मैने नहीं किया और न ही इस प्रकार के सर्वे की मै आकांक्षा रखता हूं। यह मेरा कार्य भी नही है।

इस विषय की यदि कोई जानकारी ली जा सकती है तो वह विचरण क्षेत्रो मे सम्पर्कगत व्यक्तियो से मिलने व चर्चा करने से ही ज्ञात हो सकती है। उन्हीं के हृदयोद्गार इस जानकारी के, एक दृष्टि से सही पैमाने बन सकते है। ऐसी जानकारी के लिए मै अपना समय लगाऊं-यह मेरे लिए उपर्युक्त नही है।

प्रश्न-12.

जैन समाज सब प्रकार से सम्पन्न समाज है, पर भारतीय राजनीति में उसका वर्चस्व नहीं के बराबर है, इसके लिए क्या किया जाना चाहिए?

उत्तर-

जैन धर्मानुयायी अपनी गुण-कर्म की गरिमा के साथ सम्पन्न माना जाना चाहिए। इन अनुयायियों के सामने जब तक धर्म सेवा का सार्थक कार्य क्षेत्र नहीं आता है, तब तक उन्हे अपनी इस सम्पन्नता का निरर्थक उपयोग भी नही करना चाहिए।

वर्तमान की भारतीय राजनीति मे जनतंत्र का प्रावधान है, तथापि विशुद्ध जनतंत्र का धरातल प्रायः कम ही दृष्टिगत होता है। कई बार तो ऐसा प्रतीत होता है कि जनतंत्र के नाम पर कुछ न्यस्त स्वार्थी व्यक्ति ऐसे कार्य भी कर गुजरते है जो नैतिकता एव मानवता से भी परे कहे जा सकते है। ऐसी परिस्थिति मे जैन धर्मानुयायी ही नहीं, कोई भी मानव तक अपनी शक्ति-सम्पन्नता का दुरुपयोग करना पसन्द नहीं करेगा।

तथापि जैसे एक साधक अपनी आत्मा के विकारो से अहिंसा, त्याग आदि सिद्धान्तो के आधार पर सघर्ष करता है, वैसे ही समाज या राष्ट्र मे फैल रहे विकारो से भी प्रत्येक मानव को सद्भावी की सफलता के लिए संघर्ष करते रहना चाहिए।

प्रश्न-13.

आज की राजनीति विभिन्न प्रकार के दबावों की शिकार बनी हुई है, ऐसी स्थिति में गृहस्थ मतदाता अपना मत कैसे उम्मीदवार को दें?

उत्तर-

मतदाता यदि अपने मत का सही मूल्याकन समझता है तो उसे अपनी भावना एव मान्यता के अनुरूप ही अपना मतदान करना चाहिए। उपस्थित उम्मीदवारो में जो व्यक्ति उसे नि:स्वार्थी, सदाशयी, कुव्यसनत्यागी एव सेवाभावी प्रतीत हो उसका समुचित रीति से परीक्षण कर अपनी स्वस्थ प्रज्ञानुसार ही मत देना सर्वथा उचित मानना चाहिए। किन्तु यदि कोई मतदाता यह विचार करे कि अमुक व्यक्ति (उम्मीदवार) को मत देने और उसके विजयी बनने से मुझे या मेरे परिवार को अमुक-अमुक प्रकार से लाभ प्राप्त हो सकेगा तथा मेरी स्वार्थपूर्ति हो सकेगी तो वैसे अवैध लाभ को प्राप्त करने का उसका विचार तथा मतदान प्राय: अनुचित ही कहा जायेगा। कई बार उम्मीदवार भी अपनी अनुचित स्वार्थपूर्ति के लिए आम लोगो को झूठे ओर थोथे आश्वासनो के जरिये अपने पक्ष मे मत दिलाने के लिए फुसलाते हैं या अन्य अवाछित कार्यवाहिया भी करते हें। सभी मतदाताओ को ऐसे उम्मीदवारो की सही पहचान भी बनानी चाहिए।

आशय यह है कि मतदान जैसे दायित्वपूर्ण कर्त्तव्य का निर्वहन मतदाता को अपनी स्वस्थ प्रज्ञा एव परीक्षा के अनुसार ही करना चाहिए।

प्रश्न-14.

विदेशों में शाकाहार की प्रवृत्ति बढ़ रही है, किन्तु भारत में मांसाहार की, ऐसा क्यों?

उत्तर-

इससे यह लगता है कि विदेशो मे रहने वाले कई चिन्तनशील मानव समय-समय पर अपने जीवन की उचित अथवा अनुचित दशाओ का अन्वेषण करते रहते हैं और उस प्रक्रिया मे जब उन्हे ज्ञात होता है कि अमुक वस्तु का उपयोग जीवन के लिए हितावह नही है तो वे उसे त्यागने की बात को दिल खोल कर कह देते है, चाहे वह वस्तु उन्हे पहले से कितनी ही पसन्द क्यो न रही हो?

शायद, भारतीयो मे ऐसी वृत्ति का समुचित विकास नहीं हो पाया है, बल्कि कई बार उनका आचरण अपने हितो के विरुद्ध भी चलता रहता है। इसका प्रधान कारण यह हो सकता है कि उनमे अन्वेषण की बजाय अनुकरण की प्रवृत्ति अधिक है। किसी भौतिक प्रभावशाली व्यक्ति का कोई कथन सुना अथवा कि उसकी कोई प्रवृत्ति देखी, एक सामान्य भारतीय उसका अनुकरण करने के लिए तैयार हो जाता है, बिना यह देखे कि उससे उसके जीवन का कोई हित सधता है या नहीं। इस प्रकार वह अपने अहित को अनदेखा कर देता है। मासाहार का अन्धा अनुकरण करने के सम्बन्ध मे भी उसकी इसी प्रवृत्ति का कुप्रभाव देखा जा सकता है। कहते है, जब कोई नकल करता है तो उसमे अधिकाशतया अकल का जरूर घाटा होता है।

प्रश्न-15.

जैन समाज भी अण्डे और मांसाहार की प्रवृत्ति से विकृत होता जा रहा है तथा नशीले पदार्थो के सेवन की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है, इसकी रोकथाम के लिए क्या किया जाना चाहिए?

उत्तर-

दोनो प्रकार की प्रवृत्तियां अवश्य ही चिताजनक है तथा एक अहिंसक समाज के लिए तो अतीव गंभीर ही कही जा सकती है, जिसकी सफल रोकथाम के लिए शीघ्र कठिन प्रयत्न किये जाने चाहिए। शुद्धाचार की दृष्टि से

इस समस्या की ओर सबको अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

इन प्रवृत्तियों की रोकथाम के लिए मेरी दृष्टि में मुख्य तौर पर ये दो उपाय कारगर हो सकते है-

1. टी.वी एवं अन्य प्रचार माध्यमों के जरिये अडों, मांस आदि के आहार के पक्ष मे जो गलत विज्ञापनबाजी होती है उसे शीघ्र बन्द कराने के प्रयास होने चाहिए। कारण, ऐसे निरन्तर प्रचार से बालको एवं सरल व्यक्तियो के मानस पर विकृत प्रभाव पडता है तथा उनकी हिताहित की बुद्धि कुठित हो जाती है। वे उस प्रचार से दुष्प्रभावित होकर अहितकर को भी हितकर मान बैठते है एवं हिंसाकारी आहार तथा घातक नशेबाजी की ओर झुक जाते है। जैसे कि 'संडे हो चाहे मंडे, रोज खाओ अण्डे' जैसी बाते बोलते हुए बच्चे मिल जाएंगे। अत: ऐसे विज्ञापन बन्द होना आवश्यक है।

2 ऐसे कुप्रचार के विरुद्ध अति व्यापक सुप्रचार की भी आवश्यकता है जिसके द्वारा आम लोगो को यह समझाया जा सके एवं उनके दिलों मे मजबूती पैदा की जा सके कि वे गलत प्रचार की ओर कतई प्रभावित न हो तथा वर्तमान मे यदि पहले की खराब आदतो के कारण अण्डा, मांसाहार या नशीले पदार्थों का सेवन कर रहे हों तो उनका भाव एव संकल्प पूर्वक त्याग कर दे। इस प्रकार ऐसे सुप्रचार के ये दो मोर्चे हो।

इस तथ्य को स्पष्टत: स्वीकार करना चाहिए कि कोई भी गलत प्रचार वही पर कामयाब होता है जहा हिताहित का विवेक नही होता है तथा प्रचारित सामग्री की सही जानकारी सामने नहीं आती है। लोहे से लोहे को काटने की तरह सुप्रचार से ही ऐसे कुप्रचार को समाप्त किया जा सकता है। जब लोगो को समझ मे आ जाएगा कि अमुक-अमुक पदार्थों का सेवन उनके जीवन एवं स्वास्थ्य के लिए कितना अहितकारी एव घातक है तो वे उनका सेवन नही करेंगे अथवा उनका सेवन त्याग देगे।

इसी रीति से इन दुष्प्रवृत्तियो से लोगो को छुटकारा दिलाया जा सकता है तथा इसी प्रकार जैन समाज के उन क्षेत्रो मे भी हिताहित का विवेक जाग्रत किया जा सकता है। जहां यह लगे कि अण्डा, मासाहार व नशीले पदार्थों के सेवन की प्रवृत्तियां बढ़ रही है। किसी भी दुष्प्रवृत्ति की रोकथाम सघन कार्य करने से ही की जा सकती है। (इसके लिए आचार्य प्रवर द्वारा प्रवेचित वर्णन ''**अहिंसक देश में घोर हिंसा**'' नामक लघु पुस्तिका मे प्रचारित किया जा चुका है)।

प्रश्न-16.

शास्त्रों में उल्लेख आता है कि साधु को दिन में दो प्रहर स्वाध्याय, एक प्रहर ध्यान ओर रात्रि में दो प्रहर स्वाध्याय व एक प्रहर ध्यान करना चाहिए। स्वाध्याय और ध्यान में क्या अन्तर है तथा ये कैसे किये जाने चाहिये?

उत्तर-

स्वाध्याय का अर्थ गूढ व्यापक एव मननीय है। प्रचलित अर्थ यह है कि शास्त्रों एवं ग्रन्थों मे मानव के आध्यात्मिक एवं व्यावहारिक जीवन के सांगोपांग हेतु विकास आत्मचिन्तन से सम्वन्धित जिन मूल पाठो का उल्लेख आया है उनका वाचन किया जाय एव अर्थ विन्यास भी। स्पष्टीकरण की आवश्यकता अनुभव करने पर उनके सम्बन्ध मे ज्ञाता पुरुष से पृच्छा की जाय। जो वाचन अर्थ एव अध्ययन किया जाय उसे पुन: पुन: अपने स्मृति पटल पर उभारते रहने का प्रयास भी किया जाता रहे। तत्पश्चात् उस अध्ययन की चिन्तन-मनन की विधि से समीक्षा की जाय और समीक्षा-परीक्षा के उपरान्त जो निष्कर्ष रूप तत्त्व सामने आवे, उनका सही विज्ञान अन्य जिज्ञासुओ के

समक्ष उपस्थित किया जाय तथा उससे जो चिन्तन के नये सूत्र उभरे उनके प्रकाश मे यदि आवश्यक हो तो उस निष्कर्ष मे उचित सशोधन स्वीकार किया जाय। इस प्रकार के निर्णय प्रेरक अध्ययन को स्वाध्याय की सज्ञा दी जा सकती है।

स्वाध्याय के माध्यम से जो निष्कर्ष रूप सम्यक् निर्णायक आध्यात्मिक दृष्टि प्राप्त होती है, उस दृष्टि को उदाहरण मान कर अपने अमित आत्मबल की सहायता से अन्तर्चेतनापूर्वक समीक्षण की प्रवृत्ति मे समाविष्ट करना चाहिए। ऐसा ध्यान वास्तविक ध्यान होता है तथा समीक्षण ध्यान साधक को पुष्ट रूप से आत्म-केन्द्रित बना देता है।

समीक्षण ध्यान तक की स्थिति पर पहुचने से पहले एक निर्धारित साधना पथ स्वीकार किया जाना चाहिए। वह साधना नियमित हो तथा उसमे किसी प्रकार का स्खलन न आवे। यह साधना पथ है कि प्रतिदिन साधक अपनी सम्पूर्ण दिनचर्या का अन्वेषण करे और निश्चित करे कि कब और कहां पर उसने आत्मविरोधी आचरण किया है। उसका वह अवलोकन करे, ध्यान करे एव पश्चात्ताप करे-साथ ही यह सकल्प कि भविष्य मे वह वैसा न करने का जागरूक प्रयास करेगा। सम-ईक्षण के इसी ध्यान को समीक्षण ध्यान की सज्ञा दी गई है।

स्वाध्याय का उत्तरीय अर्थ स्वय के स्वरूप का अध्ययन करना है, आत्मा के निज स्वरूप की अनुभूति का निरन्तर अध्ययन करते रहना है। इस आध्यात्मिक स्वरूप चिन्तन मे स्थिरता का अनुभव हो, ऐसा अध्ययन ध्यान कहलाता है।

स्वाध्याय और ध्यान इस रूप मे साधु जीवन के प्राण तुल्य है। इसी कारण इनके विषय मे शास्त्रो का उक्त उल्लेख है।

प्रश्न-17.

विदेशों में जैन धर्म के प्रचार-प्रसार की अधिक आवश्यकता है, उसके लिए जैन धर्म को क्या करना चाहिए?

उत्तर-

ऐसी आवश्यकता अनुभव करने वालो को एक निष्ठावान प्रचारक वर्ग की स्थापना की ओर ध्यान देना चाहिए, जो वर्ग प्रचार-प्रसार के आवश्यक साधनो के उपयोग की छूट रख कर अपने जीवन मे धर्म के आदर्शो का प्रभाव भी यथोचित रीति से उत्पन्न करे ताकि वह प्रचार-प्रसार अतिशय प्रभावपूर्ण हो। ऐसे प्रचारक यथासाध्य अपने जीवन को नियमपूर्ण बना कर यदि आवश्यक समय देने का सकल्प करे तो समाज विदेशो मे जैन धर्म के सम्यक् प्रचार-प्रसार का उत्साह जाग्रत कर सकता है।

वस्तुत: ऐसा प्रचारक वर्ग वह तीसरा वर्ग होगा जो रत्नत्रय (ज्ञान, दर्शन, चारित्र) की दृष्टि से गृहस्थ वर्ग से ऊचा तथा साधु वर्ग तक पहुंचने के लिए उन्मुख होगा। इस वर्ग मे त्याग का सन्देश लेकर व्यक्ति गृहस्थ वर्ग से ही आयेगे, अत: इसकी स्थापना, कार्यशैली आदि के सम्बन्ध मे गृहस्थ वर्ग को ही निर्णय करने होगे। साधु वर्ग तो अपनी मर्यादाओ मे अनुबधित होता है और अपने पच महाव्रतो पर आधारित, अत: उनका प्रचार-प्रसार का कार्य तदनुसार सीमित होता है। अत: विदेशो मे या देश मे भी साधनों सहित प्रचार-प्रसार के कार्य का दायित्व गृहस्थ वर्ग को समझ कर ऐसी प्रचारक वर्ग की योजना को कार्यान्वित करना चाहिए। इसके लिए क्रान्तदृष्टा स्व. आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा ने 'वीर सघ' के नाम से पूरी योजना आज के 50-60 वर्ष पूर्व ही रख दी थी। उसी का

परिणाम कहा जा सका है कि अनेक स्वाध्यायी संघ उभरे हैं। पर इस योजना का व्यापक स्वरूप अब तक उभर नहीं पाया है। अतः प्रबुद्ध जैन उपासको को चाहिए कि वे इस दिशा मे प्रयत्नशील बने।

प्रश्न-18.

आपने ढ़ाई सौ से अधिक जैन साधु-साध्वियों को दीक्षित किया है, यह एक अभूतपूर्व ऐतिहासिक योगदान है, पर आपकी प्रेरणा से कितने ऐसे समाजसेवी गृहस्थ तैयार हुए हैं जो अपने व्यवसाय से निवृत्त होकर पूर्णरूपेण समाजसेवा में लगे हों?

उत्तर-

गृहस्थ वर्ग मे समाज सेवा की वृत्ति का वर्तमान मे अवश्य ही विशिष्ट विकास हुआ है। इतना ही नहीं, वह वृत्ति तुलनात्मक दृष्टि से अधिक व्यापक एवं अधिक सघन भी बनी है।

इस निरन्तर विकासशील वृत्ति का परिचय समाजसेवा की विभिन्न प्रवृत्तियो, उनकी सफलता तथा उनमे कार्यरत गृहस्थ वर्ग के कार्यकर्त्ताओं की कर्मठता से पाया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर समता प्रचार संघ के कार्य को लिया जा सकता है, जिसमे सैकड़ो की संख्या मे गृहस्थ वर्ग के कार्यकर्त्ता विविध प्रकार की समाजसेवा प्रवृत्तियो में संलग्न है। जिन स्थानो पर सत-सतियां नही पहुंच पाते है, वहां इस संघ के सदस्य पहुंच कर उचित उद्बोधन देते है तथा लोगो को सत्कार्यों के लिए प्रेरित करते है। उनका यह कार्य समाज सेवा का महत्त्वपूर्ण कार्य माना जा सकता है तथा यह समता प्रचार संघ इस दिशा मे अधिक सक्रिय दिखाई देता है।

प्रश्न-19.

जैन समाज प्रमुखतः व्यवसायी वर्ग है। जैसे सरकारी कर्मचारी एक निश्चित आयु के बाद सेवानिवृत्त हो जाते हैं, क्या व्यवसायी वर्ग को भी इस प्रकार निवृत्त नहीं हो जाना चाहिए? यदि हां, तो इस दिशा में आपकी क्या प्रेरणा रहती है?

उत्तर-

शास्त्रो में श्रावको के जीवन क्रम का इस प्रकार उल्लेख आता है कि वे श्रावक अपने श्रावक व्रतो की मर्यादाओं का पालन करते हुए अपना व्यापार, व्यवसाय आदि किया करते थे और जब उन श्रावकों के पीछे उनकी सन्तान उनके व्यापार, व्यवसाय को संभालने में सक्षम हो जाती थी तब वे श्रावक अपने व्यवसाय आदि से निवृत्त होकर पूर्ण रूप से धर्म-ध्यान में ही अपना समय व्यतीत करना आरम्भ कर देते थे।

इसी प्रकार वर्तमान में भी यदि व्यापारी-व्यवसायी वर्ग उपर्युक्त समय पर अपना काम-धंधा अपनी योग्य सन्तान को संभला कर निवृत्त होने के लिए तैयारी कर ले तो वह स्वस्थ परम्परा का पालन होगा। निवृत्त होकर वे धर्म ध्यान, समाजसेवा आदि में अपना समय एवं अपनी शक्ति नियोजित कर सकते हैं। ऐसी भावना जगाने के लिए समय-समय पर उपदेश दिया जाता है तथा देते रहने की भावना रहती है। अनेक व्यक्ति सेवारत भी है, पर उनकी सेवाओ का पूर्ण उपयोग लेने के लिए संघ के जागरूक होने की भी आवश्यकता रहती है।

प्रश्न-20.

जैन समाज में अधिकांश महिलाएं कामकाजी न होकर सद्गृहस्थ महिलाएं है, उन्हें अपने अवकाश का समय किन कार्यों में लगाना चाहिए?

उत्तर-

गृहस्थी मे कर्मरत महिलाओं को गृहस्थ धर्म के कर्त्तव्यो को भलीभाति समझना चाहिए। यह उनका प्राथमिक

कर्त्तव्य भी है। उन्हे यह महसूस करना चाहिए कि जितनी जो कुछ पारिवारिक जिम्मेदारियां हैं, वे सिर्फ पति के ऊपर ही नहीं है। जहां पुरुष वर्ग अपनी जिम्मेदारियो को निभाता है, वहां महिला वर्ग को भी उन जिम्मेदारियो मे अपना हिस्सा बंटाना चाहिए। महिला वर्ग घर के कामकाज मे तो मुख्य रूप से हिस्सा लेता ही है लेकिन उसको यह सोचना भी कर्त्तव्योचित्त होगा कि वह किस प्रकार पुरुष वर्ग के व्यापार-व्यवसाय या अन्य कार्यों के भार को अपना योगदान देकर हल्का बना सकता है।

सद्‌गृहस्थ महिलाओ मे यह विवेक भी जागना चाहिए कि वे पतियो के कामकाज पर अपनी दृष्टि भी रखे। यदि उस कामकाज मे अनीति या भ्रष्टता घुसने लगे तो पत्नी वर्ग को हस्तक्षेप करके व्यापार, व्यवसाय आदि को नीतियुक्त बनाये रखने की प्रेरणा देनी चाहिए। पतियो को सत्पथ पर चलाते रहने का पत्नियो का नैतिक और धार्मिक कर्त्तव्य कहा गया है। वे अपना व्यवहार ऐसा सुचारू बनावे कि परिवार मे समस्याएं उत्पन्न न हो और हो तो सहजता से सुलझ जाय। यो उनके लिए कार्यों की कमी नही है।

प्रश्न-21.

आज की शिक्षा में नैतिक एवं आध्यात्मिक संस्कारों का प्रावधान नहीं है, आपकी दृष्टि में किस प्रकार शिक्षा पद्धति में सुधार अपेक्षित है ताकि नई पीढ़ी संस्कारित एवं चरित्रनिष्ठ बन सके?

उत्तर-

यह सही है कि देश की वर्तमान शिक्षा पद्धति मे आध्यात्मिकता एव नैतिकता के संस्कार नई पीढी मे प्रस्थापित करने हेतु कोई सीधे प्रावधान नहीं है और इसके कारण उत्पन्न नैतिकता एव चारित्र का संकट सबके सामने है जो समाज हित की विरोधी प्रवृत्तियो मे परिलक्षित होता रहता है।

ऐसे सुसस्कारो को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए वस्तुत: वर्तमान शिक्षा पद्धति मे सुधार से ही काम नहीं चलेगा। उसे पूर्ण सोद्देश्य एवं सार्थक बनाने के लिए नए ढाचे मे ढालना होगा जो भारतीय संस्कृति के अनुरूप हो। जहां तक सुधारो का प्रश्न है, उसमे सकारात्मक नैतिक शिक्षण का प्रावधान किया जाना चाहिए जो आगे जाने पर स्वार्थी एवं भ्रष्ट मनोवृत्तियो पर सफल अंकुश लगा सके। ऐसे शिक्षण के लिए तदनुरूप योग्य शिक्षको की भी आवश्यकता होगी। इसके लिए शिक्षा विभाग मे ठोक बजा कर चारित्रशील एवं विद्वान् व्यक्तियो को ही प्रवेश देना होगा।

ज्ञातव्य है कि नैतिक एवं आध्यात्मिक संस्कारो के अभाव मे आज के मानव जीवन की दशा प्राणहीन शरीर जैसी ही दिखाई देती है।

प्रश्न-22.

वैज्ञानिक दृष्टिकोण बड़ी तेजी से विकसित हो रहा है और रहन-सहन के तरीकों में बदलाव आ रहा है, ऐसी स्थिति में पारिवारिक श्रावकाचार तथा श्रमणाचार में आप क्या परिवर्तन आवश्यक समझते हैं?

उत्तर-

वैज्ञानिक प्रगति का प्रभाव दृष्टिकोण के निर्माण पर कम, किन्तु रहन-सहन के बदलाव पर अवश्य ही ज्यादा पड रहा है, जिसके कारण एक दिशाहीन दौड आरम्भ हो गई है। जो पहले की सादगी भरी जीवन प्रणाली थी उसमे वैज्ञानिक सुख-सुविधाओ ने इतना अधिक स्थान घेर लिया है कि जीवन मे प्राकृतिक तत्त्वो का लोप-सा होता चला जा रहा है। परिणामस्वरूप जीवन एक ओर भ्रान्तिमय, तो दूसरी ओर विकारमय हो रहा है।

आज चारो ओर आंख उठा कर देखे तो वैज्ञानिक साधनो की चकाचौध मे मानव अपने निजत्व तक को भुला बैठा है। आधुनिक सुख-सुविधाओ मे रम कर उसने अपनी सांस्कृतिक जीवन-शैली को ही परिवर्तित कर डाला है एवं समग्र वातावरण को दूषित बना दिया है। विड़म्बना तो यह है कि वह इस दूषित वातावरण को भी अपने और समाज के लिए हितावह मान कर चल रहा है जिसके कारण उसके विचार ही भ्रान्तिपूर्ण हो गए है। यह भ्राति जीवन के सही ज्ञान के अभाव का परिणाम है और इसी कारण यह भ्रान्ति कई प्रकार के प्रदूषणो का हेतु भी बन गई है।

भ्रात आधुनिकता के इस दलदल मे फस कर मानव कई तरह के मानसिक एवं शारीरिक रोगो की मार भी सह रहा है और आश्चर्य है कि इन रोगो के कारणो को भुगत कर भी समझ नही रहा है-उन कारणो से दूर हट जाने या उन्हें त्याग देने का विचार करना तो आगे की बात है। अभी तो वह इन सबका आदी हो रहा है और सारी पीडाए भोग कर भी वैज्ञानिक सुविधाओ के दोषो से दूर हटने को तैयार नही है। यह अवश्य है कि जब भी उसे इस दूषितता का भलीभांति बोध हो जायेगा, वह अपने जीवन को तब उधर से मोड लेगा। आवश्यकता है कि इस भ्रमित मानव को परिवर्तनकारी बोध का अवसर मिले, अत: इस दिशा मे सामूहिक प्रयास किया जाना चाहिए।

अब आपकी श्रावकाचार एवं श्रमणाचार मे परिवर्तन की बात ले। ये दोनों प्रकार के आचार शाश्वत आचार है जो सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक है। विज्ञान की जो प्रगति स्वय मे दोषपूर्ण सिद्ध हो रही है तथा जनसमुदाय मे नानाविध विकारो का प्रसार कर रही है, क्या उसी वैज्ञानिक प्रगति के लिए शाश्वत आचार पद्धति मे परिवर्तन की बात सोची जाय? परिवर्तित तो उसे करे जो असत्य हो। सत्य को परिवर्तित करके उसे क्या बनाना चाहेगे? अत: आवश्यकता है कि जनसमुदाय मे स्व-विवेक को जागृत किया जाय उसमे धर्म एवं कर्त्तव्य की निष्ठा पैदा की जाय तथा आध्यात्मिकता से अन्तर्चेतना को आत्माभिमुखी बनाया जाय।

प्रश्न-23.

आज यातायात एवं दूरसंचार माध्यमों के विकास के कारण जीवन में गतिशीलता बढ़ गई है, ऐसी स्थिति में क्या ध्यान-साधना व्यक्ति को स्थिर बना कर उसकी प्रगति में बाधक तो नहीं होती?

उत्तर-

आज यातायात एवं दूरसंचार माध्यमो के विकास के कारण जीवन मे गतिशीलता बढी है या चचलता-इसका सही निर्णय निकालना होगा। गतिशीलता में मन इतना अस्थिर हो जाता है कि सामान्य से कार्य मे भी सफल नही हो पाता है। अत: चंचलता मन की दुरावस्था का नाम है जो तेजी से भागने वाली इस व्यवस्था से उत्पन्न हुई हैं। ऐसी अस्थिरचित्तता मे सामान्य मानव का ध्यान-साधना मे केन्द्रस्थ होना आसान नहीं रहता।

किन्तु यह भी एक सत्य है कि यदि कोई साधक दृढता धारण कर ले तो कैसी भी जटिल परिस्थितिया क्यो न हो, वह ध्यान-साधना मे सफलता प्राप्त कर सकता है। इसके लिए भौतिक इच्छाओ से ऊपर उठ कर आध्यात्मिक क्षेत्र मे रमण करना होता है। जब लगन निष्ठापूर्ण होती है तो स्थिरता को बना लेना आसान भी हो जाता है।

शास्त्रों मे ऐसे एकनिष्ठ साधको का उल्लेख तो है ही, किन्तु मै इस युग के एक तपस्वी मुनिराज का वृत्तान्त बताना चाहता हूं। वे मुनिराज सडक के पास एक शान्त स्थान मे ध्यान करके खडे हुए थे। वे तो ध्यान मे तल्लीन थे, पर उसी समय किसी उत्सव के प्रसंग से उग्र आवाजे करती हुई एक भीड बाजो गाजों के साथ उधर से निकली। वह निकल गई थी और उसके बाद जब उन मुनिराज ने अपना ध्यान समाप्त किया तब उनसे किसी ने उस भीड की अशांति के बारे मे पूछा। वे आश्चर्य से उस पूछने वाले का मुह ताकने लगे, क्योकि वे समझे नहीं कि वह क्या पूछ

रहा है। उन्होने कहा-ध्यानस्थ अवस्था मे मैने तो कोई ध्वनि सुनी ही नही, फिर अशान्ति कैसी? ध्यान-साधना की ऐसी एकचित्तता भी होती है।

अत: ध्यान-साधना आज के मानव की प्रगति मे बाधक है अथवा आज की वैज्ञानिक, यातायात व दूरसंचार माध्यमो की प्रगति ध्यान-साधना मे बाधक है-इस पर विचार तो आप ही करे। ध्यान-साधना की बाधाओ को दूर कर दे अथवा ध्यान-साधना मे सुदृढता उत्पन्न हो जाय तो मानव की वास्तविक प्रगति मे चार चांद ही लगेगे-बाधा का तो प्रश्न ही नही। क्योकि ध्यान-साधना सर्वतोमुखी प्रगति की वाहिका होती है।

ध्यान-साधना की सुदृढता के लिए जहां बाह्य वातावरण की शान्ति आवश्यक है, वहां उससे भी अधिक आन्तरिक विचारणा मे शांति की आवश्यकता होती है। आन्तरिक शान्ति आ जाय तो बाह्य शान्ति महत्त्वहीन सी हो जाती है। एक ध्यान साधक शरीर की भौतिक दौड से जरूर दूर हट जाता है, किन्तु आत्मा की आध्यात्मिक दौड मे वह निश्चय ही आगे बढ जाता है। वास्तविक प्रगति तो आत्मा की आध्यात्मिक दौड मे आगे बढना ही है।
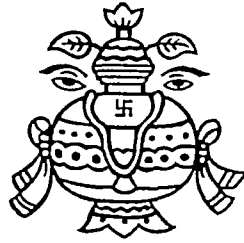
प्रतिकार करने का सामर्थ्य है किन्तु सात्विक भावना के साथ वह प्रतिकर के बारे मे सोचता भी नही तथा हृदय से सदा के लिए उसे क्षमा कर देता है-यही वास्तविक एव सात्विक क्षमा होती है।

-आचार्य श्री नानेश

समता दर्शन के प्रणेता आचार्य श्री नानालाल जी महाराज साहब से एक साक्षात्कार

✍ पं. रामगोपाल शर्मा
प्राचार्य, जैन विद्यालय, मदसौर

आज से ठीक 11 वर्ष पूर्व फरवरी 1989 मे श्रद्धेय जैनाचार्य श्री नानालाल जी महाराज साहब का दीक्षार्थी भाई-बहिनो को दीक्षा प्रदान करने हेतु दशपुर (मंदसौर) की पावन धरा पर दूसरी बार पदार्पण हुआ। इससे नगर के परम धार्मिक श्रावक वर्ग में भावना की जो हिलोर उठी उससे तरंगायमान होकर आचार्य श्री से मैने एक साक्षात्कार जिज्ञासा पूर्ति हेतु लिया था। मेरे साथ धार्मिक गतिविधियो मे अग्रणी समाजसेवी एवं धर्मनिष्ठ श्रावक श्री कांतिलाल जी रातड़िया एवं नगर के साप्ताहिक दशपुर केसरी के प्रबंध सम्पादक श्री बलवंत फांफरिया भी थे। आचार्यश्री ने प्रश्नो के जो उत्तर उन्होने उद्भट प्रतिभा एव अकाट्य विवेचन शैली से जन साधारण उद्बोधनार्थ दिये, उन्हे अविकल रूप से प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रश्न : 'समत्व प्रज्ञा' या समत्व दर्शन जिस पर आप गतिशील है उससे जैनेत्तर समाज को कैसे लाभ हो सकेगा?

उत्तर : जैन धर्म का अभ्युदय प्राणी मात्र के हित के लिए हुआ है। इसके प्रत्येक सिद्धान्त का प्रभाव प्राणी मात्र पर पडता है। 'समत्व प्रज्ञा' का अर्थ सही सम्यग् ज्ञान से है और समता सिद्धान्त का अर्थ सम्यक् आचरण की आचरण संहिता से है, जिसे जैन और अजैन सभी अपना सकते है।

प्रश्न : शिक्षा के क्षेत्र मे परम्परागत धारणा से हट कर आपने कौनसी परीक्षा प्रणाली का शुभारम्भ किया है, उसके सम्बन्ध मे संक्षिप्त प्रकाश डालने का कष्ट करे?

उत्तर : प्राचीन शिक्षा पद्धति मे सभी बुराईयां है अथवा अर्वाचीन मे सभी उपादेय है ऐसा न मान कर मै इन दोनो की समीक्षा कर मनोविज्ञान सापेक्ष समन्वित शिक्षा पद्धति पर विश्वास करता हूं उसके प्रयोग कुछ सामने है जिससे कुछ साधको के जीवन मे आशातीत सफलता मिली है। इस सबध मे महाराजश्री ने अपने कतिपय अनुभूत प्रयोगो की जानकारी दी।

प्रश्न : वर्तमान युग मे श्रमण संस्कृति, राष्ट्र व समाज को किस प्रकार दिशा दर्शन दे सकती है?

उत्तर : श्रमण संस्कृति एक ऐसी संस्कृति है जिसने अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकांतवाद जैसे सिद्धान्तो से देश को संतुलित दिशाये दी है। सापेक्ष दृष्टि के माध्यम से इस सिद्धान्त ने नई समस्याओ को हल किया है। जैसे श्रावकों के 12 व्रतो मे अनर्थदण्ड, मिलावट, परिग्रह आदि दोषों से बचने का निर्देश दिया है।

प्रश्न : परिग्रह को समग्र जैन दर्शन जडता, मृत्यु और विनाश मानता है किन्तु क्रिया मे ऐसा नही पाया जाता। इस वैपरीत्य स्थिति का कारण क्या है, कुछ उपाय बतायेंगे?

उत्तर : हर सिद्धान्त पालनकर्ताओ पर निर्भर करता है। जैन दर्शन थोपने की अपेक्षा हृदय परिवर्तन पर बल देता है। इसी उद्देश्य से प्रवचन, प्रतिबोध द्वारा जन जागरण अपरिग्रह का वातावरण बनता है। मेरे विचार से देश मे

व्यक्ति को परिग्रह के कारण सम्मान न देकर यदि गुणात्मक सम्मान दिया जाए तो परिग्रह की प्रतिस्पर्धा समाप्त हो सकती है। परिग्रह मे मै और मन की भावना ही मुख्य कारण है।

प्रश्न : जब विश्व की प्रत्येक साधना प्रणाली 'साम्प्रदायिक' रूप ले चुकी है फिर आपका समता दर्शन विश्व व्यापी कैसे बन सकेगा?

उत्तर : मेरी दृष्टि मे व्यवस्था की दृष्टि से सम्प्रदाय गलत नही है। यदि व्यक्ति और समष्टि मे गुणात्मक सम्बन्ध स्थापित हो जाये तो समता सिद्धान्त सभी से ऊपर उठकर साम्प्रदायिक या विश्व बन्धुत्व का आदर्श उपस्थित कर सकता है।

प्रश्न : 'समता' के अविकोण के लिए 'राग द्वेष' से उन्मुक्त कैसे रहा जा सकता है जबकि दोनो का ही त्याग अत्यन्त कठिन है?

उत्तर : रागद्वेष के त्याग के लिए हम अपने प्रति जिस दृष्टिकोण से सोचते हैं उसी प्रकार दूसरों के प्रति सोचने का अभ्यास डालना जरूरी है, कल्पना कीजिए कि मार्ग में पडी हुई कांच की गिलास आपके पैर से फूट जाए तो आप कहेगे कि किस नासमझ ने मार्ग मे गिलास रखी है और वही गिलास अन्य के पैर से फूटे तो कहेगे कि अंधे, देखकर नहीं चलता, प्यासा व्यक्ति अपेक्षा को ही दूसरे के लिए सोचे तो रागद्वेष से मुक्त रहने मे उतारने के लिए आत्मभाव जरूरी है।

प्रश्न : 'समता मय' आचरण के लिए जो आपने 21 सूत्र निर्धारित किये है, क्या आप ऐसा मानते है कि अत्यन्त आदर्शवादी इन सूत्रों का वर्तमान युग के मनुष्य निर्वहन कर सकेगे?

उत्तर : इक्कीस सूत्रो का निर्देश वर्तमान देशकाल के अनुसार किया गया है। यह सूत्र आदर्शों की चटक मटक वाले न होकर आचरण का अंग बनने मे समर्थ है।

प्रश्न : अहं विसर्जन करना एक जटिल समस्या है इससे छुटकारे का सरल उपाय क्या है?

उत्तर : भारतीय संस्कृति मे महापुरुषो के गुणानुवादो का जो प्रचलन है इसलिए है कि उनके जीवन से हम अपनी तुच्छता देखे। यही देखना अहं विसर्जन के लिए पर्याप्त है।

प्रश्न : 'रूढि' की सर्वसम्मत परिभाषा क्या हो सकती है?

उत्तर : 'रूढि' का व्यवहार पौराणिक कुरीतियो से लिया जाता है, जबकि रूढि शब्द का औचित्य समाज हितैषी परम्परा से लेना चाहिए।

मेरे दिल-दर्पण में मेरे गुरुदेव

✍ श्रद्धेय आचार्य श्री विजयराज जी म.स

आदित्य पूर्व मे उदित होकर विशाल गगन मे गमन करता हुआ पश्चिमांचल मे जाकर छिप जाता है, कि भगवान् महावीर के शासन का ये आदित्य जिसकी रश्मियो से हम प्रकाशित है, ये कभी भी नही छिप सकता।

वह आदित्य है कौन?

फूलो से महकते, मोती से चमकते, दीप से जगमगाते, परम श्रद्धास्पद मेरे गुरुदेव। प्रातः स्मरणीय, सम विभूति, समीक्षण ध्यान योगी, धर्मपाल प्रतिबोधक, जिनशासन प्रद्योतक 1008 आचार्यश्री नानालालजी महारा साहब।

उन स्वास्तिक पुरुष के विषय मे लिखने का प्रयास करते ही कलम ठिठक-सी जाती है। उनके विरा व्यक्तित्व को कैसे अक्षरो मे आबद्ध किया जाय? उनके सुन्दर जीवन को कैसे लिपिबद्ध किया जाय? उनके अनुपम व्यक्तित्व और अद्भुत कृतित्व के अनेकानेक दृश्य नयनो के समक्ष तैरते रहते है, कैसे उन्हे शब्दो की सीमा मे बाध जाय? नामुमकिन है।

फिर भी मेरे दिल-दर्पण मे परमोपकारी गुरुदेव की जो छवि है, उसे अन्तर्मन बार-बार शब्द सीमा मे आपके समक्ष रखने के लिए प्रेरित कर रहा है। मेरे सामने तीन दशक के छोटे से कालखण्ड का एक झरोखा है।

प्रथम दर्शन : ओज आहार

मैंने ब्यावर चातुर्मास सन् 1971 मे गुरुदेव के निकटता से प्रथम दर्शन में ही वो अलौकिक आत्मीयता अनुभू की जो आज तलक भी गम के क्षणो मे आनन्द से सरोबार कर देती है। वो अमिय झरती आंखे। वात्सल्य बरसात रूप। समता का छलकता दरिया। आहा! मेरे लिये तो वो प्रथम दर्शन ओज आहार के रूप मे विशिष्ट टॉनिक था। श्री भगवती सूत्र में उल्लेख आता है कि जीव गर्भ मे आते ही जो प्रथम आहार ग्रहण करता है, वो ओज आहा कहलाता है। यही ओज आहार जन्म व जीवन पर्यन्त उसके साथ रहता है। वैसे ही वे वात्सल्यमय प्रथम साक्षात्का के क्षण आज भी मुझे रोमांचित करते रहते है, मेरे जख्मो को भर देते है।

उस वक्त दर्शन करते ही हृदय श्रद्धा सागर मे डुबकियां लगाने लगा। इच्छा हुई सिर चरणो से उठाऊ ही नहीं श्रद्धा हृदय की वह मौलिक मनोभावना है जो हर किसी को समर्पित नहीं की जा सकती। श्रद्धा प्रेरणा व उपदेश भी जगाई नहीं जा सकती है, जो महान् आत्माएं विशिष्ट गुण सम्पन्न होती है उनके प्रथम दर्शन मे ही हृदय स्वत प्रणत हो जाता है।

गुरुदेव के गुणमय चुम्बकीय व्यक्तित्व ने मेरे अन्तःकरण को आह्लादित व आकर्षित किया। मुझे ही नहीं, मे जैसे सैकड़ो मुमुक्षु आत्माओ को भी आकर्षित किया उन्होने। लाखो भक्तो के लबो पर "जय गुरु नाना" की गू गुंजारित की उन्होने। सिर्फ इतना ही नहीं, सबमे एक जिजीविषा पैदा कर दी कि वे सब आत्मा से परमात्मा की रा पर चल पड़े।

षष्ठम खण्ड

प्रतिध्वनि

विविध दृष्टिकोण
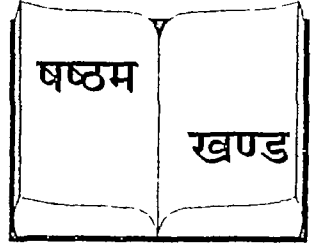
1. संदेश
   (i) अणगार (साधक)
   (ii) आगार (श्रावक)
2. संघ एवं संगठनों के श्रद्धासुमन
3. काव्यधारा

नन्हा-सा दीप आगे चल कर महासूर्य बना :

मुस्कानो के निधान गुरुदेव का जन्म विलक्षण था, जीवन अति विलक्षण। मातुश्री श्रृंगारा ने यह स्वप्न मे भी नही सोचा होगा कि उनके उदर से आने वाली दिव्य चेतना सबका पथ-प्रदर्शक बनेगी। प्रारम्भ मे शिक्षा की सुविधा से वचित बालक के भविष्य के बारे मे कोन सोच सका होगा कि नन्हा-सा दीप आगे चल कर महासूर्य बनेगा। अपनी रश्मियो से सबको जगमगायेगा।

किसलय-सा शैशवकाल, फूल सी तरुणिमा ओर फल सा वार्धक्य मनमोहक होता है। मेरे गुरुदेव, परम आदरणीय आचार्यश्री नानेश एक ऐसे ही व्यक्तित्व के धनी थे।

अनघड़ पत्थर से पात्र बना :

मुझे अपरिमित स्नेह दिया उन्होने। अनघड पत्थर से पात्र का रूप दिया उन्होने। प्रथम दर्शन मे ही मेरे भीतर वैराग्य की उर्मियां अगडाइयां लेने लगीं। वैरागी बने मेरे मन को तब तक सन्तुष्टि नही मिली जब तक पूज्य गुरुदेव की ओर से दीक्षा की स्वीकृति न मिली। आज्ञा पत्र हो चुका था, जयपुर सन् 1972 के वर्षावास में। पर दीक्षा कब, कहा होगी, यह कोई निश्चित नही था। मैने उनसे बालहठ की कि आपको शीघ्र बीकानेर पधार कर मुझे आपके चरण-कमलो मे सदा-सदा के लिए स्थान देना होगा। वे मेरी बात सुनते रहे, उन्होने फरमाया कुछ नही।

यह बात है दातरी गाव की। मुझे लगा गुरुदेव स्पष्ट स्वीकृति नहीं दे रहे है तो मै रोने लगा और कमरे से बाहर जाकर मैने स्वयं ने ही घोषणा कर दी कि "मेरी दीक्षा निश्चित हो गई, आचार्य प्रवर का विहार शीघ्र ही बीकानेर की दिशा मे होने वाला है।" गुरुदेव के कर्णों मे मेरी बात गई तो उन्होने भी मेरी बाल हठ स्वीकार कर ली। बच्चो का दिल तो वे कभी नहीं दु:खा सकते थे। बच्चों से विशेष लगाव था। वे जीवन के अन्तिम समय तक भी सभी को यही त्याग कराते कि बच्चो का दिल न दु:खाया करो। बच्चे बहुत नाजुक, कोमल होते है, उन्हे मारा न करो। मेवाड मे बच्चो को 'नाना' कहा जाता है। उनका नाम भी 'नाना' ही था और वे विशिष्ट प्यार भी 'नाना' को ही करते थे क्योकि बच्चे मन के सच्चे।

सिन्धु मे दुग्धपान :

फिर गुरुदेव बीकानेर पधारे। 15 फरवरी 1973 के दिन बारह दीक्षाओ के प्रसग से मेरी दीक्षा हो गई। संयम स्वीकार के बाद और कही भी रहना मुझे अभीप्सित नहीं था। जिसने क्षीर सिन्धु मे दुग्धपान कर लिया हो उसे पानी का कूप क्या अच्छा लगेगा? जिसने चक्रवर्ती की खीर का रसास्वादन कर लिया उसे औरों की खीर क्या पसन्द आए? मै मात्र गुरुदेव की सन्निधि मे ही रहना चाहता। वे मुझे प्राणो से भी प्रिय लगते थे। मै उन्हे कई बार अपलक अनिमेष निहारता रहता। उनकी हृदय की कोमलता, माता-सी वत्सलता, उज्ज्वल चरित्रशीलता, अन्त:करण की शीतलता मुझे शांति प्रदान करती थी। बडी आनंदानुभूति होती थी।

प्रथम चातुर्मास मे मेरी वय लघु थी। सहिष्णुता कम थी। स्वास्थ्य अस्वस्थ था। महापर्व संवत्सरी से पूर्व केश लूचन का समय आया। रत्नाधिक संतो ने मेरा लूंचन प्रारम्भ किया। मेरी आह! ऊह! की आवाज से उनके हाथो की गति मद हो गई। पारदर्शी दृष्टि के धनी गुरुदेव प्रवचन फरमा कर पधारे। उन्हे मेरा विशेष ख्याल था, वे शीघ्र मेरे पास आये, देखा, अरे अभी तक इतना-सा ही लूचन हुआ।

"आ मेरे पास आ विजय, तेरा लोच मै करूंगा।" उनकी स्नेहस्तिक वाणी सागर मे मै निमज्जित हो गया। उन्होने मेरा सिर अपनी गोद मे ले स्फूर्ति से लूंचन कर दिया। उनकी आत्मीयता ने मेरी जबान सील दी। मै विशेष

कुछ न बोल सका, रत्नाधिक सन्त भी देखते रह गए कि गुरुदेव की कितनी विशेषता और कला है कि मुनि विजय ने शांति से पूरा लूंचन करा लिया। उस प्रसंग से मेरा मन विचलित-सा हो गया। कुछ दिनो बाद स्वस्थ हो जाने पर एक दिन आचार्यश्री अपने उपपात मे बिठा कर फरमाने लगे-''इस आत्मा ने नरक-निगोद आदि गतियों मे कितनी दारुण वेदनाएं सही है, वहां कैसा-कैसा कष्ट भोगा है, आज हमे उनकी स्मृति नहीं, पर आगम वचनो के आधार पर यह सत्य है, वर्तमान जीवन मे हमे वैसी वेदनाएं तो नही सहनी है। वर्तमान मे कुछ सहे तो कुछ बनेगे। वे वेदनाए तो परवश होकर सह कर आये है। यहां अब स्ववश होकर सहेगे तो कर्म बोझ से हल्के बनेगे और आत्म स्वरूप से शुद्ध-विशुद्ध बनेगे।'' मंगल उद्‌बोधन चल रहा था। मै उन पीयूष घूंटो का रसपान करते हुए अनहद आनन्द मे सराबोर हो रहा था। आचार्यश्री मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहने लगे-क्यो लोच करवाते हुए ऊंचे-नीचे भाव-परिणाम आये है? . मै सकुचाता हुआ कहने लगा-हां, गुरुदेव। ऐसा ही कुछ बना है, तो सोचो-क्या बिना कुछ सहे तुम महान् बन सकते हो, जितने भी महापुरुष हुए हैं-वे सब सह कर ही तो महान् बने है। थोडी-सी देर की थोड़ी सी पीडा मे बैचेन हो जाओगे तो मुक्त कैसे बनोगे? गुरुदेव की वह सीख आज भी जब-जब स्मृति मे लेता हू तो मन अलौकिक आलोक से दीप्तिमत हो उठता है। गुरु, गिरते हुए शिष्य की पतवार को थामते ही नही, मजिल तक पहुंचा देते है।

गुरुदेव के बारे मे मै क्या लिखूं। उनके अनन्त-अनन्त उपकारो को मै इस जन्म मे तो क्या, जन्म-जन्म मे नहीं भूला सकता। मेरे पिताश्री जी म सा. की चर्म व्याधि भी उनकी चरण रज लगाने से ही समाप्त हुई जिस कारण मातुश्री, पिताश्री और लघु भगिनी के साथ मेरी दीक्षा शीघ्र सम्पन्न हो सकी।

ममतामयी मां सा प्यार :

मेरा प्रथम विहार गुरुदेव के साथ थली प्रान्त मे हुआ। मै बच्चा था, छोटा था। साधु जीवन की मर्यादा के अन्तर्गत 'सन्त बहत्तर हस्त' प्रमाण से अधिक वस्त्र नहीं रख सकते है। विचरण के समय ग्रामो मे मकानो की कई बार खिड़कियां, दरवाजें आधे हिलते कभी आधे टूटे मिलते। सर्द रात्रियों मे गुरुदेव कई बार स्वय के वस्त्र मुझे ओढा देते। मै सुबह उठकर देखता अरे यह क्या? मै गुरुदेव से कहता ''भगवन्! मुझे आपके वस्त्र न ओढाया करे।''

गुरुदेव फरमाते-''तू ठण्ड मे ठिठुरता रहे, यह मै नही देख सकता। तू बच्चा है, तेरा ख्याल रखना मेरा कर्त्तव्य है।'' मैं कई बार मना करता किन्तु गुरुदेव नहीं मानते। वे ममतामयी मां सा प्यार सदा ही बरसाते रहते। कभी-कभी पिता-सी फटकार भी लगाते। पढते वक्त बाल स्वभाव के कारण कभी विशेष हंसी-मजाक कर लेता तो गुरुदेव की एक तिरछी नजर या ''विज्जू'' की ध्वनि ही मुझे कंपित कर देती। मुझे कम्पित होता देख गुरुदेव पुन: वात्सल्य उंडेल कर मुझे अध्ययनरत कर देते।

अनुशासन में रहकर अनुशास्ता बनें :

गुरुदेव प्रारम्भ से ही अनुशासन प्रिय थे। वे स्वयं अनुशासन मे रहे। जो अनुशासन मे रह नहीं सकता वह अनुशासन कर भी नही सकता। अनुशासन मे रहने के पश्चात् अनुशास्ता बन कर आप मे और निखार आया। शासक शासितो के साथ घुलमिल जाय यह अनुशास्ता की कसौटी होती है। आप इस कसौटी मे पूर्ण सफल रहे। आचार्यश्री का अनुशासन न तो किसी प्रकार से बल से थोपा जाता था, न किसी प्रकार की उसमे बाध्यता ही होती। उनके अनुशासन मे रहने वाला शिष्य वर्ग उनके प्रति पूर्ण समर्पण की भावना रखता। आपश्री फरमाया करते कि ''हमारा साधनात्मक जीवन है, यहां बल प्रयोग को कोई स्थान नहीं।'' जो कुछ होता है वह हृदय परिवर्तन के साथ होता है।

आचार्य अनुशासन व व्यवस्था प्रदान करते है, सारा संघ उसका पालन करता है। इसके बीच श्रद्धा व आस्था के अलावा और कोई शक्ति नही है। श्रद्धा व विनय, ये शिष्य के जीवन मंत्र है और अनुशासन व वात्सल्य ये गुरु के जीवन मन्त्र है। आपश्री को अनुशासन करने की तमन्ना न थी किन्तु मात्र दायित्व का निर्वहन करते थे। पद-प्रतिष्ठा-विशेषण आज कौन नही चाहता? हर व्यक्ति किसी न किसी विशेषण से अलंकृत होना चाहता है पर उसी व्यक्ति का विशेषण सार्थक होता है जिसने विशेषण की गरिमा को शतगुणित किया हो। आप असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे। आपको पद की चाह नही थी। वैसे भी महान् आत्माए विशेषण प्राप्ति के लिए कोई कार्य नही करती पर उनकी कार्यशैली से प्रभावित विशेषण स्वय उनके चरण चुमते है तथा उपाधिया चरणो मे नतमस्तक हो स्वय को महिमा मंडित करती है।

सेवानिष्ठ कई रत्नाधिक सन्त-महात्मा थे, अतः गुरुदेव मुझे अध्ययन का पूरा समय देते। उन्हे अध्ययन-अध्यापन की विशेष रुचि थी। कभी-कभी प्रमाद भी कर लेता। वे स्वयं मुझे कई बार रात्रि मे थोकडे कंठस्थ कराते व सुनते। उनका जीवन अप्रमत्त था। वे स्वयं जब शिष्य रूप मे थे तब 18 से 20 घटे तक अथक परिश्रम करते। दीवाल की तरफ मुंह करके मात्र अध्ययन करते।

जिनशासन प्रद्योतक :

अध्ययन की उम्र मे उन्हे जनसम्पर्क पसन्द नही था। इसी कारण जब शांतक्रान्ति के अग्रदूत गणेशाचार्य इन्हे 'युवाचार्य' बनाना चाह रहे थे, उस वक्त साधु-साध्वियो के हस्ताक्षर लिये गये। उनमे से कई कहने लगे कि ''ये तो किसी से बातचीत भी नहीं करते, इन्हे बोलना भी पसन्द नही, फिर वे पद भार को कैसे सम्भाल पाएंगे।''

श्रीमद् गणेशाचार्य ने फरमाया-''मै ऐसा हीरा देकर जा रहा हू कि लोग उसकी चमक देखते ही रह जायेगे।''

वस्तुतः गुरुदेव के चमक की घोषणा तो अद्‌भुत स्मृति के धारक आचार्यश्री श्री लाल जी म सा कर ही गये थे-''मुझे क्या देखते हो, अष्टम पाट के ठाठ देखना।''

महापुरुषों की वाणी कभी रिक्त नहीं जाती। वाणी अनुसार गुरुदेव ने भगवान् महावीर के शासन को ऊंचाईयो पर पहुंचा दिया। इसी कारण भक्त ''जिनशासन प्रद्योतक'' उपमा से आपको उपमित करते है।

धर्मपाल प्रतिबोधक :

आगम पुरुष आचार्य भगवन् ने पाव-पाव चल कर इस देश की धरती को मापा। वे जहा-जहां गये, हर वर्ग उनके सम्पर्क मे आया। उन्होने व्यक्ति, समाज और राष्ट्र की समस्याओ को खुली आंखो से देखा और खुले मस्तिष्क से उसका समाधान खोजा। उन्होने चिन्तन की नई दिशाये दी। वे घटनाओ के प्रवाह मे नही बहते बल्कि परिस्थितियां उनका अनुगमन करती थी। वे कभी भी परिस्थितियो से पराजित नही हुए। पूर्वाग्रहो से मुक्त जो भी उनके सम्पर्क मे आता, वह उनका होकर रह जाता। उनके रोम-रोम से झरने वाले वात्सल्य को पाकर पत्थर दिल भी मोम की तरह पिघल जाता।

बलाई जाति के अनेक लोगो का दिल उनके सम्पर्क व प्रभावशाली जीवनोद्धारक प्रवचन से ही परिवर्तित हुआ। प्रवचनकार प्रवचन करते हैं और श्रोता अप्रमत्त सुधा का रसपान करते है। यह प्रवचन की सफलता का प्रथम चरण है। अग्रिम चरण उपदेश का आचरण मे ढलना। आचरण मे ढालने के लिए श्रोता की ग्रहणशीलता के साथ वक्ता की साधना भी एक विशेष भूमिका अदा करती है। गुरुदेव के प्रवचन का प्रभाव था कि जिनके हाथो मे चाकू-

छुर्रे रहते, जो जुआ, मास, शराब आदि सप्त कुव्यसन मे आकण्ठ डूबे रहते, उन्हीं अनार्य जैसे लोगो को उन्होने संस्कारित कर जैन बनाया। उन्हे 'धर्मपाल' संज्ञा से अभिसंज्ञित किया गया, इसी कारण उनके ''धर्मपाल प्रतिबोधक'' उपमा लगी।

समता विभूति :

समुद्रो मे स्वयंभूरमण समुद्र की महत्ता है, रसो मे इक्षु रस की महत्ता है, फलो मे आम की महत्ता है, फूलो मे गुलाब की महत्ता है वैसे ही साधना के जीवन मे समता की महत्ता है। शास्त्रो मे कहा है ''**समियाए धम्मे**''–समता मे ही धर्म है। आचार्यश्री की साधना का यह महत्त्वपूर्ण अध्याय था, वे समता के उपदेशक ही नही थे वरन् समता के परम साधक थे।

गुरुदेव के व्यक्तित्व का एक विशिष्ट अंग था उनकी जिन्दादिली। उनके जीवन मे अनेक ऐसे पल आये जो समता का बांध तोडने के लिए उत्कंधर थे। किन्तु टूटन तो दूर उसमे लचक तक नही आयी। कुछ हादसो मे तो उनकी अविचल समता ने दर्शको को अभिभूत कर दिया। चतुर्विध सघ के सर्वोच्च शास्ता होने के नाते उन्हे अनेक बार ऐसे निर्णय लेने पडे जिनके पूर्व या पश्चात् व्यक्ति सहज नहीं रह सकता। उन स्थितियो मे गुरुदेव की समता ने शिखा ध्वज का स्थान प्राप्त किया।

सयत वर्ग मे अनेक तरह की प्रवृत्ति के सत होते है पर उनमें सौहार्द-स्नेह-सद्भाव बनाए रखना कठिन है। इसके लिए आचार्यश्री ने अनुकूल परीषह भी खूब सहे तो प्रतिकूल परीषहो को सहने मे भी कोई कमी नही रखी। जब कोई निकटस्थ शिष्य भी उनकी अवज्ञा-अवहेलना कर देता तो भी उसे क्षमा करना और शात भाव मे बने रहना उनकी मौलिक विशेषता थी।

कई सस्मरण है, उनके समता साधना के। व्यक्तिगत किसी का नाम लेकर कहना उचित नहीं कहा जा सकता, पर जब उन्हे आगाह किया जाता तो वे यही फरमाते-''भाई! ये मेरी साधना के अध्याय है। ये अवज्ञा करने वाले भी मेरे लिए करुणा-वत्सलता के पात्र है।'' इस अभिव्यक्ति के साथ वे अतरंग से उनके प्रति विशेष नरम-सरल-सहज हो जाते।

संघ समाज मे कितनी ही गंभीर स्थितियां क्यो न चल रही हो, गुरुदेव जब आहार के माडले मे पधारते तो एक बार सबको हंसा ही देते थे। ऐसा था उनका जिन्दादिली व्यक्तित्व। उनके रोम-रोम से समता का परिमल प्रवाहित होकर विश्व के वातावरण को सुरभित करता। इसी हेतु ''समता विभूति'' के नाम से जगत् प्रसिद्ध हुए।

शिव शंकर :

सन् 1987 मे इन्दौर वर्षावास के अन्तर्गत एक दिन हम गुरुदेव की सन्निधि मे सन्त व महासतिया जी म सा भगवती सूत्र के सूत्रो पर नया लिखा हस्त लिखित विवेचन पर चिन्तन मनन कर रहे थे तभी एक लघु मुनि गुरुदेव के लिए धोवन पानी लेकर आए। गुरुदेव पात्र पकड़ने लगे उससे पूर्व ही मुनि के हाथ से पात्र छूट गया और हस्तलिखित कागज भीग गए। कई जगह से तो शब्द ही मिट गए। ऐसी विषम स्थिति मे भी गुरुदेव ने सेवाभावी मुनि से यही कहा-''मेरी भूल हो गई, कितना अच्छा होता अगर मै शीघ्र पात्र पकड लेता। तुम तो सेवा करते हो, मै भूले करता हू।''

सभी का चिंतन चल पडा-ओहो! धन्य हो ऐसी महान् आत्मा को, जिन्होने डांटना तो बहुत दूर बल्कि दूसरे

की भूल को भी स्वय के सिर ओढ ली। ऐसे शिव शकर सा जीवन बनाना अति दुष्कर है। दूर से तो उनके जीवन की न तो गहराई मापी जा सकती है और न ही ऊंचाई। और निकटता से गुरुदेव की समता को मापना, नमक के पुतले द्वारा सागर को मापने के समान है।

समीक्षण ध्यान योगी :

उन्होने अपने जीवन काल मे सघ एव धर्म की सेवा व प्रभावना के लिए जो महान् स्तुत्य कार्य किए वे जैन इतिहास मे स्वर्ण अक्षरो मे लिखने योग्य है। हमारे यहा अनेक बडे विद्वान, तपस्वी, सयमी, वक्ता व प्रभावी आचार्य हुए है, परन्तु गुरुदेव ने जो प्रतिष्ठा व प्रसिद्धि प्राप्त की वह असाधारण थी। असाधारण इसलिए कि उन्होने अपनी शक्ति को न केवल पहचाना बल्कि उसका विकास किया। उन्होने ''समीक्षण ध्यान प्रयोगो'' द्वारा वह राह दिखा दी कि मानव अपनी शक्ति को सही दिशा मे समायोजित करे। वे फरमाया करते थे कि स्वर्गीय गुरुदेव श्री गणेशाचार्य ने मेरे नन्हे कधो पर विश्वास किया और यह गुरूत्तर दायित्व मुझे प्रदान किया, इसके लिये तो मै उनका कृतज्ञ हूं। साथ ही आप सभी साधु-साध्विया भी बडे विनीत, अनुशासित व इगित को समझने वाले है। इस दृष्टि से मुझे तनिक भी विचार नही है। पूर्वाचार्यों की तरह ही मै सघ की अधिक से अधिक सेवा कर सकू तथा आपके ज्ञान-दर्शन-चारित्र रूप सयमी जीवन मे सहयोग कर सकूं, ऐसी मेरी तमन्ना है।

आचार्यश्री ने देखा-आज व्यक्ति, परिवार, समाज और विश्व समस्याओं से संकुल बना हुआ है। व्यसन, तनाव, क्रोध, असहिष्णुता आदि समस्याओ का समाधान समीक्षण ध्यान के प्रयोगो के द्वारा उन्होने सभव करके दिखा दिया। 'समीक्षण ध्यान पद्धति' न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से बल्कि शारीरिक, मानसिक व वैज्ञानिक दृष्टि से भी परिपूर्ण है।

संयम के शिखर पुरुष :

साधना के शिखर पुरुष का व्यक्तित्व करुणा का महासमन्दर था। वे जितने व्यावहारिक थे उतने ही संयम मे सख्त। सख्त क्यो न हो क्योकि उनका जन्म ही मेवाड की माटी मे हुआ। जहां शौर्य और वीरता के परमाणु सदैव प्रवाहमान रहे है। जो देश की स्वतन्त्रता और गौरव की रक्षा के लिए सैकडो वर्षों तक बलिदान करते रहे है। जहा के वीर योद्धाओ ने अपने रक्त से मातृभूमि को सींचा। अपने प्राणो से भी अधिक मातृभूमि को प्यार किया। उसकी रक्षा के लिए वहां के पुरुष ही नहीं बल्कि वीर नारियों और बालको ने भी प्राणो की आहुतियां दी। इतिहास साक्षी है कि मात्र आन, बान और शान के लिए ही स्वय को न्यौछावर नहीं किया बल्कि धर्म के लिए भी हंसते-हंसते प्राण दिए। उन्होने ऐसी मिसाले कायम की जिससे नई पीढी प्रेरणा प्राप्त करे।

एक बार हम गुरुदेव के साथ विहार करते हुए भीम के रास्ते चल रहे थे। गुरुदेव को प्यास लगी। साधु जीवन की मर्यादा है कि खडे-खडे धोवन पानी नहीं पीना। अगर एक बूद भी ऊपर से गिर जाय तो एक उपवास का प्रायश्चित्त आता है। धोवन पानी बैठकर पीने का स्थान 1-2 किलोमीटर तक भी नही आया, कारण कि खेत की पतली-सी पगडडी पर चल रहे थे। पैर रखने जितना ही स्थान था, बैठने पर हरी घास से संघट्ट की सभावना थी। ऐसी स्थिति मे सत फरमाने लगे-'भगवन्! आप खडे-खडे ही धोवन आरोग ले, कब तक प्यासे विहार करेगे।' गुरुदेव का चिन्तन चल रहा था-''आज मै परिस्थितियो से पीऊगा, कल मुझे देखकर कोई बिना परिस्थिति भी पी सकता है। मेरे द्वारा मर्यादा भंग होना उचित नहीं है। अनुशास्ता ही अनुशासन तोडे तो अनुशासितो का कहना ही क्या?'' ऐसी थी गुरुदेव की संयम के प्रति निष्ठा। छोटी-छोटी क्रियाओ के प्रति विवेक। इतिहास के पन्ने स्वय मे

कुछ नहीं होते। उस पर अंकित किए जाने वाले प्रेरक प्रसग उसे स्मरणीय, मननीय व पठनीय बना देते है।

एक बार विचरण करते हुए गुरुदेव की राह मे हरी घास आ गई। गुरुदेव ने कई किलोमीटर का चक्कर लेकर उस ग्राम मे पहुंचना मंजूर किया किन्तु एक कदम भी हरी घास पर नही रखा। ऐसी थी उनकी अप्रमत्त साधना और सयमी जागरूकता।

कभी किसी वस्त्र का एक छोर भी गुरुदेव को हिलता हुआ दिख जाता तो वे उसे भी उठा कर सही तरीके से रख देते ताकि वायुकाय की अयतना न हो। एकेन्द्रिय जीवो के प्रति जिनके दिल मे ऐसा हमदर्दी का दरिया बहता हो वो गुरुदेव ध्वनि वर्धक यंत्र का प्रयोग कैसे कर सकते है? घाटकोपर चातुर्मास मे संवत्सरी पर सात स्थल पर प्रवचन देना मंजूर कर लिया लेकिन ध्वनि वर्धक यंत्र का प्रयोग नही किया। उन्हें महाव्रतो के साथ समझौता पसन्द नही था। उसी घाटकोर चातुर्मास मे संघ अध्यक्ष श्री वज्जू भाई ने बडे आह्लाद भाव से यह कहा था कि **''आचार्य महाराज मर्यादा मां मक्कम छे।''**

जो सत्य है वो मेरा है :

वैसे उनका चिन्तन पूर्वाग्रहो से मुक्त था। जो मेरा है वही सत्य है, इस चिन्तन को उन्होने उचित नही समझा। जो सत्य है, वो मेरा है उन्होने इस चिन्तन-दर्शन पर बल दिया। भगवान् महावीर का अनेकान्त दर्शन उनके रग-रग मे रमा था। संवत्सरी एकता के इच्छुक जैन कांफ्रेस एवं भारत जैन महामंडल के कार्यकर्त्ताओ से उन्होने स्पष्ट फरमाया कि ''मुझे तो स्वयं को एकता पसंद है। पूरा जैन समाज जिस भी दिन संवत्सरी मनाना चाहे मैं उसी दिन मनाने के लिए तत्पर हूं। फिर मेरे लिए भादवा शुक्ला चौथ या पचमी का कोई आग्रह नहीं होगा। इन दो तिथियो की बात तो दूर पूरे वर्ष मे अगर किसी भी एक दिन सवत्सरी मनाई जाय तो मै उस दिन मनाने से सहमत हूं।''

उनकी स्नेहिल नजरें :

गुरुदेव का आभा मण्डल जितना उज्ज्वल था, उतना ही आकर्षक। उनके अवग्रह क्षेत्र मे बैठने वाले लोगो को जिस अनिवर्चनीय आनन्द की अनुभूति होती, वे उसे जीवनभर नही भूल पाते। जिस पर भी नेहिल नजरे टिक जाती वो निहाल हो जाता। उनकी नजरो से अविरल प्रवाहित होने वाली करुणा एवं वत्सलता की गगा-यमुना का वर्णन अति दुष्कर है। एक बार भी वे नजरे उठ जाती तो एक अनिवर्चनीय तृप्ति का अहसास करा देती। उसी नजर को पाने हेतु लोग हजारो-हजारो मीलो से दौडे चले आते थे और दर्शन करके ही लौटते थे। कभी-कभी व्यस्तता एव शारीरिक अस्वस्थता से दर्शन नहीं होते तो लोगों के दिलो मे एक अजीब-सी छटपटाहट होने लगती। उस छटपटाहट को वात्सल्यमयी आंखे ही शान्त कर सती थी या 'दया पालो' शब्द ध्वनि के साथ ऊपर उठा अमृत निर्झर हस्त। जब तक दो मे से एक भी प्रक्रिया नहीं होती, खडे व्यक्ति कदम लौटाने को तैयार नहीं होते।

गुस्सा काफूर हो जाता :

गुरुदेव ने सेवा, सयम व साधना से अपना जीवन निखार लिया था। उनकी सेवा भावना बेजोड थी। उनकी सेवा से उग्र रत्नाधिक सत भी प्रसन्न रहते। रत्नाधिक सत स्वयं शांत क्रान्ति के अग्रदूत गणेशाचार्य से अपनी कमजोरी प्रकट करते हुए कहते-''भगवन्! हमे इतना गुस्सा आता है लेकिन इस 'नाना मुनि' मे न जाने क्या विशेषता है कि इसे देखते ही गुस्सा काफूर हो जाता है। इसकी सहिष्णुता, समता व सेवा से हम बहुत प्रसन्न है।'' गुरुदेव बडों की तो सेवा करते ही थे, लघु शिष्यो का सामान्य से सामान्य परठने का कार्य भी रुग्ण अवस्था मे नि:सकोच करते। कोई जरा-सा अस्वस्थ होता, उनका ममतामयी दिल तन-मन से उसे स्वस्थ करने मे सन्नद्ध हो

जाता। वे अहर्निश उसकी सेवा मे रहते। उनमें बडप्पन के भाव नही थे कि मै बड़ा हूं क्यो सेवा करूं? वे रात्रि मे भी उठ-उठ कर कई बार उसे संभालते। किसी का भी दर्द उन्हे अपना दर्द ही लगता था।

सन् 1979 के अजमेर चातुर्मास की बात है, मुझे बुखार आ गया, वह भी काफी तेज था। मेरा पूरा शरीर तप रहा था। गुरुदेव अपना सारा कार्य छोड़कर मेरी परिचर्या मे लग गए। ठंडे पानी की पट्टियां लगाना, उतारना, साथ मे सत भी कार्य कर रहे थे पर गुरुदेव की जागरूकता, स्फूर्ति देखने लायक थी। थोडी देर बाद श्री गुमानमल जी नाहटा डॉ. साहब को लेकर आये, तब तक बुखार कुछ कम हो गया था, फिर डॉक्टरी उपचार चालू हुआ। उस समय श्री नाहटा जी ने गुरुदेव से पूछा-आपका स्वास्थ्य कैसा है? गुरुदेव मुस्करा कर रह गये। नाहटा जी ने चरणो का स्पर्श किया तो कहने लगे-"गुरुदेव! पैर तो गरम हो रहे है, कही आपको भी तो बुखार नही है?" कहने लगे-कोई खास बात नही। नाहटा जी आग्रह करने लगे, डॉक्टर साहब से थर्मामीटर लिया, देखा तो 103 डिग्री बुखार थर्मामीटर मे आ रहा था। सबको बडा आश्चर्य हो रहा था कि स्वयं गुरुदेव ज्वराक्रात है, पर जता नहीं रहे है। स्वयं बुखार मे भी रुग्ण शिष्य की परिचर्या मे सन्नद्ध है। ऐसी थी सेवा की उदात्त भावना।

एक प्रसंग और कहूं-गुरुदेव के साथ हम अहमदाबाद के रास्ते विहार कर रहे थे। बीच मे गुरुदेव ब्लड प्रेशर के बढ़ने से अस्वस्थ हो गए। अब विचार बदलने लगे कि वापस राजस्थान की ओर मुड जाय, ज्यादा दूर नही आये हैं, रास्ता विकट है, दूरी भी बहुत है, पहुंचना कठिन लग रहा है। हम सतो मे बडा जोश था। हमने कहा-बढना तो अब आगे ही है, पीछे नहीं लौटना। पालखी तैयार की गई, हम चार संत ही विशेष रूप से उठाने वाले थे। अपने कधो पर अपने आराध्य को बिठा कर विहार का अनहद आनंद उठा रहे थे। पाव हमारे थक जाते, मंजिल तक पहुंच कर हमारी हालत बुरी हो जाती। उस समय हम देखते-गुरुदेव हमे पानी पिला रहे है, प्रतिलेखना कर रहे है, हमारे लिए सोने-बैठने की व्यवस्था कर रहे हैं। लगता था उस समय कि वास्तव में अग्लान भाव से जो आचार्य अपने संघ की सेवा करता है वह तीसरे भव का अतिक्रमण नही करता।

अजीवकाय संयम :

अजीवकाय के प्रति भी उनका विशेष सयम था। कोई भी बिना कवर लगाये पुस्तक पढता तो गुरुदेव फरमाते-"अरे दिगम्बर पुस्तक क्यों पढते हो, खराब हो जायेगी।" कोई पुस्तक चौडी करके पढता तो गुरुदेव फरमाते-"अरे लाला! किताब चौडी न कर, फट जाएगी।" छोटी-छोटी बातो का विवेक ही व्यक्ति को महान् बनाता है।

प्रभुता में लघुता :

गुरुदेव अध्यापन के साथ-साथ मुमुक्षु आत्माओ को भी विशेष समय देते। 21 दीक्षा, 25 दीक्षा एक साथ होना। सामूहिक दीक्षा एक आचार्य के नेश्राय मे होना इतिहास मे नया कीर्तिमान ही था। इतनी प्रभुत्ता प्राप्त होने के पश्चात् भी उनके जीवन मे लघुता ही परिलक्षित होती। वे किसी भी साधु-साध्वी को शिष्य-शिष्या के रूप मे नहीं मानते थे। यही फरमाया करते थे कि "आप सब तो मेरे भाई-बहिन हो।" कितनी लघुता-विनम्रता?

बोटाद (काठियावाड) विचरण का प्रसंग है-लिम्बडी सम्प्रदाय के एक संत थे। उत्तराध्ययन सूत्र के 32वें अध्ययन की एक गाथा-"**कप्पं न इच्छेज्ज सहाय लिच्छु**" के अर्थ को समझना चाहते थे। आचार्यश्री के पास पहुंचे-उक्त गाथा के अर्थ को समझाने की जिज्ञासा व्यक्त की। आचार्यश्री ने फरमाया-यह गाथा उस भिक्षु से संबंधित है जो इन्द्रिय विषयो का लोलुपी है, जो वासनाओ के शिकजे मे है, ऐसा साधु किसी भी कल्प-मर्यादा की

इच्छा नहीं करता। जितनी भी मर्यादाए है, वे उसे बन्धन स्वरूप लगती है, वह उनमे बधना नही चाहता इसलिए वह कल्प नही चाहता। काफी विस्तार से जब इस गाथा के पूर्वापर सन्दर्भों को सामने रख कर समझाया तो सत बडे प्रभावित हुए। और गुरुदेव की ज्ञान गरिमा की प्रशंसा करने लगे। कहने लगे-कईयो से मैने यह जानना चाहा पर पूर्ण सन्तुष्टि नही हुई। आज मै पूर्ण संतुष्ट हो गया।

एक बार कुछ नए जिज्ञासु युवक उनके पास आए और उनसे कहने लगे-''हमे आचार्यश्री नानालाल जी म सा के दर्शन करने है। उनका नाम तो बहुत सुना है, अब साक्षात्कार करना है। वे कहा विराज रहे है?''

गुरुदेव ने लघुता व विनम्रता से कहा-''मै ही नाना हू।'' युवक देखते रह गए। अरे! इतने विशाल सघ के आचार्य होते हुए भी ये स्वयं को नाना कह रहे है। जिस सघ का नायक इतना विनम्र है, उस सघ का विकास तो निश्चित है।

''लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर'' गुरुदेव का विकास उनके स्वय के विचारो से ही हुआ, क्योकि व्यक्तित्व विकास की यात्रा वस्तुतः विचार विकास की ही परिणति है।

मैं पर्दे में नहीं हूं :

बगिया मे विभिन्न पुष्प खिलते है और मुरझा जाते है। नीले गगन मे असंख्यात तारे टिमटिमाते है और विलीन हो जाते है। उदय और अस्त यही तो दुनिया का क्रम है। इस आने-जाने के क्रम मे कुछ ऐसे व्यक्तित्व होते है जो अपनी अमिट छाप लोगो के दिल पर छोड जाते है। ऐसे ही व्यक्तित्व के सम्राट गुरुदेव की एक अविस्मरणीय घटना-

रायपुर मे रोड के ऊपर गुरुदेव के विराजने का स्थल का उल्लेख करता हुआ एक बेनर लगाया हुआ था। मुसलमानो का जुलूस उस सदर बाजार से गुजर रहा था। जुलूस मे उपस्थित कुछ युवको ने शोर मचाते हुए उस बेनर को तोड दिया। आचार्य भगवन् का यह अपमान भक्तो के लिए असहनीय हो गया। भक्तो ने जुलूस को रोक दिया। आगे बढ़ने न दिया। घटनास्थल पर कोहराम मच गया। पुलिस आ गई। कोई निर्णय नही हो पा रहा था। दोनों पक्ष अपनी दलीले पेश कर रहे थे। गन्तव्य स्थल पर पहुचने मे विलब न हो जाय अतः मौलाना साहब जल्दी करना चाह रहे थे। उन्होने कहा-''बच्चो ने आपके धर्मगुरु की तौहीन की पर्दा फाडकर। मै कल स्वयं आपके धर्मगुरु से क्षमा माग लूगा। आज हमे जाने दो।''

इतना सुन कर समता विभूतिजी के भक्तो ने उन्हे जाने दिया। जुलूस आगे बढ गया।

दूसरे दिन प्रवचन स्थल पर अपार सैलाब उमडा कि देखे, आज मौलाना जी माफी मागते हैं या नहीं। पुलिस इस्पेक्टर भी आए। मौलाना साहब पर्दा साथ मे लाए क्षमायाचना करने लगे।

गुरुदेव ने प्रवचन मे फरमाया-''मै यहा आग लगाने नही, बाग लगाने आया हू। झगडा पैदा करने नही, समता संदेश फैलाने आया हूं। हिन्दू या मुसलमान सभी मेरे भाई है। पर्दा फाडने से मै मेरा अपमान नहीं मानता हू तो क्षमा किसे करूं? मै पर्दे मे नही हू। मेरी दृष्टि से तो कोई भूल नही हुई। फिर भी आपको बार-बार लगता है कि हमसे भूल हुई तो मै कोई मिट्टी के घडे जैसा नही हू जो टूटने पर जुडता नही।''

तांबा, सोना सुघड़ नर, टूटे जुड़े सौ बार।
मुरख, हाण्डा कुम्हार का, जुड़े न दूजी बार॥

मौलाना साहब को लगा जैसे मुझे आज साक्षात् भगवान् के ही दर्शन हो गए। ऐसी महान् आत्माये तो पर्दों मे नहीं भक्तो के दिलो मे ही रह सकती है। सारी जनता भी गद्गद् हो गई। पुलिस इस्पेक्टर विशेष प्रभावित होते हुए कहने लगे-"आज तक मै जहां भी गया, लडाई, झगडा, चाकू, छुरे व बम ही देखे। प्रथम बार ऐसी जगह आया जहा शाति के झरने बहते देखे और प्रेम के फव्वारे छूटते।"

समत्वाकांक्षा से सुसज्जित :

समता विभूति की ऐसी कई घटनाए है। किस-किस घटना को शब्दो का जामा पहनाऊं। वैसे हमारे शात क्रान्ति संघ के अग्रदूत महास्थविर श्री शातिमुनि जी द्वारा रचित "**अन्तर्पथ के यात्री आचार्य श्री नानेश**" एव ओजस्वी वक्ता विद्वद्वर्य श्री ज्ञानमुनि जी द्वारा रचित "**अष्टाचार्य गौरव गंगा**" मे कई सत्य तथ्यो का उल्लेख आ चुका है।

गुरुदेव का जीवन समत्वाकाक्षा से सुसज्जित था, महत्वाकाक्षा से कोसों दूर। उनका चिन्तन निखरा हुआ था और लेखन परिष्कृत। वे नित्य कुछ न कुछ अपनी डायरी मे लेखन कार्य करते किन्तु कदापि छपाई के लिए नही देते। एक बार किन्ही श्रावको के हाथ मे उनकी डायरी आ गई। श्रावको ने उसे पठनीय समझ कर के "गहरी पर्त के हस्ताक्षर" नामक पुस्तक के रूप में निकाल दिया। अन्य जितनी भी पुस्तके आप श्री की निकली हुई है वे या तो प्रश्नोत्तर की या श्रावको द्वारा सुने प्रवचनो के सकलित रूप की।

सरस्वती के पुत्र :

ज्ञानालोक से जगमगाता जीवन, सरस्वती के पुत्र गुरुदेव की मेधा और प्रज्ञा से प्रबुद्धजन भी अभिभूत थे। वे प्रवचनो के गागर मे सागर भर देते। प्रारम्भ के दशको मे उनकी शैली दर्शन निष्ठ और अति गहरी होती थी। जिससे सामान्य श्रोता उसमे प्रवेश ही नहीं कर पाते। वे एकाग्रचित्त से सुनने का प्रयास करते। यह दृश्य देख गुरुदेव फरमाते-"मैं क्या करू , बहुत सरल कहने की कोशिश करता हू फिर भी कठिन हो जाता है। अब सरल कहता हूं।"

उसी प्रवचन मे विद्वद् जनो को विशेष आनन्द आता। पिछले दशको मे गुरुदेव ने अपनी प्रवचन शैली बहुत सरल बना ली थी। दर्शन एव आगम की गूढ बाते भी कथा के माध्यम से सुपाच्य, रसीले भोजन की तरह लोगो के गले उतर जाती। शैली क्लिष्ट थी या सरल। हर स्थिति मे मैने तो श्रावको का बरसाती नदी की तरह उमडता बहाव ही देखा। जगल मे भी प्रवचन फरमाते तो वहां भी सैलाब उमड पडता। उनके तलस्पर्शी और सूक्ष्म विश्लेषण ने युवा क्षमताओ को प्रेरित किया जिससे वे व्यसन मुक्त होकर क्रियान्विति के क्षेत्र मे अग्रसर हुए। युवाओ के प्रति उनका विशेष ध्यान था क्योकि वे युवाओ को रीढ की हड्डी मानते थे। उनके प्रवचनो का युवाओ पर विशेष प्रभाव था क्योकि वे पहले स्वय पालन करते फिर उपदेश देते।

सघ के सर्वांगीण विकास के लिए आचार्यश्री ने बहुत बडा कार्य किया। उनके शासन मे साधु-साध्वियो का शैक्षणिक विकास भी स्तरीय हुआ। विधिवत् पाठ्यक्रमो के आधार पर समान रूप से साधु-साध्वियो का अध्ययन हो, साथ ही साथ अध्यापन भी हो। अध्ययन कार्य से अध्यापन कार्य कहीं अधिक कठिन होता है। अध्ययन मे स्वयं को ही खपाना पडता है जबकि अध्यापन मे पर के लिए भी अपने को खपाना पडता है। छोटी-छोटी उम्र मे युवक-युवतियां सयम जीवन मे प्रवेश करे और अध्ययन-अध्यापन की सुविधा न हो तो विकृतिया प्रविष्ट हुए बिना नही रह सकती। इस दृष्टि से कई साधु-साध्वियो ने जैन सिद्धान्त रत्नाकर परीक्षा उत्तीर्ण कर दर्शन-न्याय साहित्य आदि मे पारंगतता प्राप्त की।

क्रियाओं के हिमायती :

वे क्रियाओं के बडे हिमायती थे। कोई भी सन्त भूल करता तो वे उसे उपालम्भ देने के बजाय स्वय पौरषी कर लेते। उनके पौरषी होते ही सारे सन्त स्तब्ध रह जाते। न जाने आज किससे खता हुई कि हमारे निमित्त से पौरषी करनी पड़ी। जिससे भी खता होती, वह संभल जाता, गुरु चरणों में जाकर स्वयं ही माफी मांग लेता और आगे से न करने की भावना व्यक्त करता। शिष्यो को सुधारने का इतना सुंदर तरीका अन्यत्र उपलब्ध होना बहुत मुश्किल है।

किसके भाग्य में क्या लिखा :

उनकी साधना अनुपमेय थी। ध्येय के साथ तादात्म्य स्थापित हो जाने पर ध्याता ध्येय बन जाता है। उन ध्येय से एक पल भी दूर रहना मुझे इष्ट नही था। गुरुदेव से दूर प्रथम चातुर्मास रतलाम करने भेजने के लिए उन्हे मुझको पूना मे बहुत मानना पड़ा था। उसके पश्चात् मैने उन्हे कह दिया-''गुरुदेव अब मुझे आपसे दूर न करना। आपके बिना मेरा मन नही लगता।'' वे हंसने लगे। उसके पश्चात् लगातार तीन चातुर्मास उनकी सन्निधी मे किए। तीसरे कानोड चातुर्मास के बाद होली चातुर्मास कपासन था। चैत्र बदी द्वितीया, चातुर्मास स्थल खुलने का दिन। मै प्रवचन मे कह रहा था-''किसके भाग्य मे क्या लिखा है, क्या मालूम? आप कई संघ वाले गुरुदेव की विनती कर रहे है, न जाने किसी लाटरी खुलेगी।'' सारे सघ वाले भी विशेष उत्सुक हो रहे थे। मैने अपना वक्तव्य पूरा किया फिर गुरुदेव ने चातुर्मास खोले। ब्यावर संघ के विशेष आग्रह से मेरा चातुर्मास ब्यावर खोल दिया। मैने स्वप्न मे भी नही सोचा था कि मुझे आराध्य देव से विलग वर्षावास करना पड़ेगा। मुझे मेरा ही वाक्य याद आने लगा कि ''किसके भाग्य मे क्या लिखा है क्या मालूम?'' मेरे शब्द मुझ पर ही फलीभूत हो गए।

भादसोडा मे रात्रि मे गुरुदेव मेरे शयनासन के पास आये और धीरे से कहने लगे-''जाग रहे हो या सोये हो?'' मै गुरुदेव की आवाज सुनकर बैठ गया, कहने लगा-''भगवन्! आपने क्यो कष्ट किया, मुझे बुला लेते।'' फरमाने लगे-''कोई बात नहीं, मै ही आ गया। अब क्या करना?'' मै असमंजस में था कि क्या कहूं? मैने कहा-क्या करना, मै समझा नही? देखो! मै तुम्हारा हित ही सोचता हू, अच्छे के लिए ही सोचता हू। मैने कहा-भगवन्! इसमे कोई सन्देह ही नही। आप सदैव मेरे हित के लिए ही सोचते हैं। दरअसल बात क्या है? आप श्री फरमाओ-मेरे सिर पर अपना हाथ फैरते हुए फरमाने लगे-'चातुर्मास के लिए ब्यावर वालो को कुछ कह दिया है, अब उसके बारे मे क्या करना?' मैंने पूरे उत्साह के साथ निवेदन किया-'भगवन्! आपकी सेवा मे ही मै रहना चाहता हूं।' गुरुदेव फरमाने लगे-'तुम मेरे से अलग हो ही कहां? मै तुम्हारे साथ हू और तुम मेरे साथ हो।' इस अभिव्यक्ति से मेरा हृदय अत्यत आह्लादित-प्रमुदित हुआ। गुरुदेव के चरणो मे सिर रखकर मै अश्रुपात करने लग गया। वे बोले-देखो! तुम जाओ और कोई बात हो तो मुझे याद कर लेना, मै तुम्हारे सामने होऊंगा। मै कहने लगा-'गुरुदेव! आप तो मुझे बहला रहे हो, मन को समझा रहे हो।' गुरुदेव ने कहा-'तुमने मुझे पहचाना नही।' मै कुछ बोल नही सका। उसी दिन सुबह ही गुरुदेव का विहार जन्मस्थली दांता की ओर होना था और मेरा चित्तौड की ओर। मैं करीब 4-5 किलोमीटर सुबह विहार मे साथ-साथ गया। अंत मे गुरुदेव से यही कह कर कि मेरा मन नही लगा तो मै वापस लौट आऊगा गुरुदेव ने हंसते हुए कहा-अच्छा, आ जाना। वर्षावास की दृष्टि से मै ब्यावर पहुंचा। वाकई मे यह मेरे जीवन का वह स्वर्णिम समय था, जब-जब भी मै आख बंद कर गुरुदेव का स्मरण करता, उनका सौम्य मुखमंडल मेरे सामने होता। जब-जब भी मेरे सामने कोई समस्या आती, तब-तब वे मुझे समाधान देते। जब भी मे सोचता कि आज प्रवचन मे क्या बोलूंगा, वे मुझे मार्गदर्शन देते। मै वडा आश्चर्य करता-जैसा कहा था गुरुदेव ने, वैसा ही कर दिखाया। उसी चातुर्मास मे एक बार संघ मे किसी बात को लेकर मतभेद हो गया। संघ अध्यक्ष ने इस्तीफा दे दिया

स्थिति बडी विकट बन गई। मै भी उलझन मे आ गया, संघ के वरिष्ठ सदस्यो के सारे प्रयत्न निष्फल हो गए। अंत मे संघ के सदस्यों ने कहा–महाराज! अब आप ही स्थिति को संभाल सकते है, हमसे कुछ नही होना। मैंने गुरुदेव का स्मरण किया और गुरुदेव ने मुझे सुझाव दिया कि तुम अभी जाओ, संघ अध्यक्ष जी से ये शब्द कह दो। मै तत्काल उनके आवास पर पहुचा। सघ अध्यक्ष बडे अचम्भित थे। कहने लगे–अभी आप कैसे पधारे? मैंने कहा–ऐसी ही बात है और जो–जो शब्द गुरुदेव ने मुझे ध्यान मे कहे थे, वे सारे दोहरा दिए। सघ अध्यक्ष जी ने विनम्रता व सरलता से सारी बात स्वीकार कर ली। स्थिति संभल गई। यह अनुभव मुझे मात्र उसी चातुर्मास मे हुआ, उसके बाद नहीं। इस रहस्य का पता मुझे आज तक नही लग पाया। आखिर यह क्या था? बाद मे गुरुदेव से पूछा भी पर वे मौन ही रहे। यह मै उनका अनन्य आत्मीय भाव ही कहूंगा। साथ ही आंतरिक शुभ·आशीर्वाद।

वे सुनहरे पल जो भुलाए न भूले जा सके :

सन् 1988 का चातुर्मास मालवा के प्रमुख नगर रतलाम मे पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य मे था। प्रात:कालीन प्रार्थना के पश्चात पूज्य गुरुदेव और मैं, दो ही होते, कोई श्रावक भी नहीं और बाहर निपटने की दृष्टि से करीब दो–ढाई किलोमीटर की विहार यात्रा हो जाती। ये सुनहरे क्षण मेरी जिन्दगी के अमूल्य धरोहर है। आज भी उन क्षणो व वार्ता प्रसगो की स्मृति करता हूं तो गद्‌गद् हुए बिना नही रह सकता। वहां अंतरंग जीवन व संघीय जीवन के विविध पहलुओ पर विचार चिंतन, आत्म मथन चलता रहता। पूज्य गुरुदेव ने चार माह की दीर्घावधि मे तकरीबन साढे तीन माह की अवधि तक जो अपने अनुभवो का अमृत प्रदान किया वे आज मेरे जीवन को प्राणवत बनाए हुए है और सदैव प्राणवंत बनाए रखेगे।

खिलता आनन :

मैं मानता हू कि हम आज बहुत समृद्ध है। कुशल शासक कहे या कुशल माली कहे, कुछ भी कहे, वह कितना महान् होता है जो अपनी भावीपीढी के लिए विशाल सम्पदा छोड कर जाता है। कितना सम्पन्न उन्होने इस संघ को बनाया, कितना समय दिया। वे केवल आदेश–निर्देश ही नहीं देते बल्कि स्वय 19–20 घण्टा प्रतिदिन शासन के लिए देते। शासन के पीछे उन्होने अपने शरीर को शरीर नही माना। कई बार अनुशास्ता होने के नाते उन्हे निराहार रहना पडता क्योकि 12 बजे के बाद वे भोजन नही लेते। वे समय के पूरे पाबंद थे। रात्रि मे शीघ्र उठ साधना करते। उनकी साधना का ही कमाल था कि वृद्धावस्था मे भी बिना सहारे विराजते थे। शरीर पर भी रोगो का आक्रमण होने पर उसके साथ समझौता नहीं कर लेते। रोग को मात्र एक परिस्थिति के रूप मे देखते। कभी भी कोई दर्शनार्थी पूछ लेता–भगवन्! आपका स्वास्थ्य कैसा है? वे मुस्कराते हुए फरमाते–तुम्हे कैसा दिख रहा है? अपने मुख से स्वय को अस्वस्थ नहीं कहते, न ही वैसी मानसिकता रखते। उनका खिलता आनन बीमारी को प्रकट ही नहीं होने देता। वैसे वे मेवाड़ के होते हुए भी नाजुक बहुत थे। उनका रईस शरीर था। थोडीसी ठडी हवा चली नही कि उन्हे जुकाम हो जाता और थोडी गर्म हवा लगते ही बुखार। ये दोनो ही चीजे वर्षों से सखा बन कर उनका साथ निभा रही थी। अन्य कई बडी–बडी बीमारिया भी उनको थी किन्तु वे मुख से 'उफ' भी नहीं निकालते।

वो सौभाग्य नहीं मिल सका :

यह बात है सन् 1994 के बडी सादडी चातुर्मास की। चातुर्मास के अंतराल मे साधुमार्गी जैन संघ के वरिष्ठ श्रावक, पदाधिकारियो का आवागमन निरन्तर बना रहा। एक बार संघ के वरिष्ठ श्रावक श्री धनराज जी बेताला अपने साथियो के साथ आए हुए थे। चर्चा चल रही थी–आचार्य देव के स्वास्थ्य की। उन्होने कहा–संभवतया आचार्यश्री

क्रियाओं के हिमायती :

वे क्रियाओ के बडे हिमायती थे। कोई भी सन्त भूल करता तो वे उसे उपालम्भ देने के बजाय स्वय पौरषी कर लेते। उनके पौरषी होते ही सारे सन्त स्तब्ध रह जाते। न जाने आज किससे खता हुई कि हमारे निमित्त से पौरषी करनी पड़ी। जिससे भी खता होती, वह सभल जाता, गुरु चरणो मे जाकर स्वयं ही माफी मांग लेता और आगे से न करने की भावना व्यक्त करता। शिष्यो को सुधारने का इतना सुंदर तरीका अन्यत्र उपलब्ध होना बहुत मुश्किल है।

किसके भाग्य में क्या लिखा :

उनकी साधना अनुपमेय थी। ध्येय के साथ तादात्म्य स्थापित हो जाने पर ध्याता ध्येय बन जाता है। उन ध्येय से एक पल भी दूर रहना मुझे इष्ट नहीं था। गुरुदेव से दूर प्रथम चातुर्मास रतलाम करने भेजने के लिए उन्हे मुझको पूना मे बहुत मानना पडा था। उसके पश्चात् मैने उन्हे कह दिया-''गुरुदेव अब मुझे आपसे दूर न करना। आपके बिना मेरा मन नहीं लगता।'' वे हंसने लगे। उसके पश्चात् लगातार तीन चातुर्मास उनकी सन्निधी मे किए। तीसरे कानोड चातुर्मास के बाद होली चातुर्मास कपासन था। चैत्र बदी द्वितीया, चातुर्मास स्थल खुलने का दिन। मै प्रवचन मे कह रहा था-''किसके भाग्य मे क्या लिखा है, क्या मालूम? आप कई सघ वाले गुरुदेव की विनती कर रहे है, न जाने किसी लाटरी खुलेगी।'' सारे सघ वाले भी विशेष उत्सुक हो रहे थे। मैने अपना वक्तव्य पूरा किया फिर गुरुदेव ने चातुर्मास खोले। ब्यावर सघ के विशेष आग्रह से मेरा चातुर्मास ब्यावर खोल दिया। मैने स्वप्न मे भी नही सोचा था कि मुझे आराध्य देव से विलग वर्षावास करना पडेगा। मुझे मेरा ही वाक्य याद आने लगा कि ''किसके भाग्य में क्या लिखा है क्या मालूम?'' मेरे शब्द मुझ पर ही फलीभूत हो गए।

भादसोडा मे रात्रि मे गुरुदेव मेरे शयनासन के पास आये और धीरे से कहने लगे-''जाग रहे हो या सोये हो?'' मै गुरुदेव की आवाज सुनकर बैठ गया, कहने लगा-''भगवन्! आपने क्यो कष्ट किया, मुझे बुला लेते।'' फरमाने लगे-''कोई बात नही, मै ही आ गया। अब क्या करना?'' मै असमंजस मे था कि क्या कहूं? मैने कहा-क्या करना, मै समझा नही? देखो! मै तुम्हारा हित ही सोचता हू, अच्छे के लिए ही सोचता हू। मैने कहा-भगवन्! इसमे कोई सन्देह ही नही। आप सदैव मेरे हित के लिए ही सोचते है। दरअसल बात क्या है? आप श्री फरमाओ-मेरे सिर पर अपना हाथ फैरते हुए फरमाने लगे-'चातुर्मास के लिए ब्यावर वालो को कुछ कह दिया है, अब उसके बारे मे क्या करना?' मैने पूरे उत्साह के साथ निवेदन किया-'भगवन्! आपकी सेवा मे ही मे रहना चाहता हू।' गुरुदेव फरमाने लगे-'तुम मेरे से अलग हो ही कहा? मै तुम्हारे साथ हू और तुम मेरे साथ हो।' इस अभिव्यक्ति से मेरा हृदय अत्यत आह्लादित-प्रमुदित हुआ। गुरुदेव के चरणो मे सिर रखकर मे अश्रुपात करने लग गया। वे वोले-देखो! तुम जाओ और कोई बात हो तो मुझे याद कर लेना, मैं तुम्हारे सामने होऊगा। मे कहने लगा-'गुरुदेव! आप तो मुझे वहला रहे हो, मन को समझा रहे हो।' गुरुदेव ने कहा-'तुमने मुझे पहचाना नही।' मै कुछ वोल नही सका। उसी दिन सुवह ही गुरुदेव का विहार जन्मस्थली दांता की ओर होना था और मेरा चित्तौड की ओर। मै करीव 4-5 किलोमीटर तक सुबह विहार मे साथ-साथ गया। अंत मे गुरुदेव से यही कह कर कि मेरा मन नही लगा तो मे वापस लोट आऊगा। गुरुदेव ने हंसते हुए कहा-अच्छा, आ जाना। वर्षावास की दृष्टि से मे व्यावर पहुंचा। वाकई मे यह मेरे जीवन का वह स्वर्णिम समय था, जव-जव भी मे आख बंद कर गुरुदेव का स्मरण करता, उनका सोम्य मुखमडल मेरे सामने होता। जव-जव भी मेरे सामने कोई समस्या आती, तव-तव वे मुझे समाधान देते। जव भी म सोचता कि आज प्रवचन मे क्या वोलूगा, वे मुझे मार्गदर्शन देते। मे वडा आश्चर्य करता-जैसा कहा था गुरुदेव ने, वैसा ही कर दिखाया। उसी चातुर्मास मे एक वार संघ मे किसी वात को लेकर मतभेद हो गया। संघ अध्यक्ष ने इस्तीफा दे दिया।

स्थिति बडी विकट बन गई। मैं भी उलझन मे आ गया, संघ के वरिष्ठ सदस्यो के सारे प्रयत्न निष्फल हो गए। अंत मे संघ के सदस्यों ने कहा-महाराज! अब आप ही स्थिति को संभाल सकते हैं, हमसे कुछ नही होना। मैंने गुरुदेव का स्मरण किया और गुरुदेव ने मुझे सुझाव दिया कि तुम अभी जाओ, सघ अध्यक्ष जी से ये शब्द कह दो। मै तत्काल उनके आवास पर पहुचा। सघ अध्यक्ष बडे अचम्भित थे। कहने लगे-अभी आप कैसे पधारे? मैने कहा-ऐसी ही बात है और जो-जो शब्द गुरुदेव ने मुझे ध्यान मे कहे थे, वे सारे दोहरा दिए। संघ अध्यक्ष जी ने विनम्रता व सरलता से सारी बात स्वीकार कर ली। स्थिति सभल गई। यह अनुभव मुझे मात्र उसी चातुर्मास मे हुआ, उसके बाद नही। इस रहस्य का पता मुझे आज तक नही लग पाया। आखिर यह क्या था? बाद मे गुरुदेव से पूछा भी पर वे मौन ही रहे। यह मै उनका अनन्य आत्मीय भाव ही कहूगा। साथ ही आंतरिक शुभ-आशीर्वाद।

वे सुनहरे पल जो भुलाए न भूले जा सके :

सन् 1988 का चातुर्मास मालवा के प्रमुख नगर रतलाम मे पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य मे था। प्रातःकालीन प्रार्थना के पश्चात पूज्य गुरुदेव और मै, दो ही होते, कोई श्रावक भी नहीं और बाहर निपटने की दृष्टि से करीब दो-ढाई किलोमीटर की विहार यात्रा हो जाती। ये सुनहरे क्षण मेरी जिन्दगी के अमूल्य धरोहर है। आज भी उन क्षणो व वार्ता प्रसगो की स्मृति करता हूं तो गद्गद् हुए बिना नही रह सकता। वहां अतरग जीवन व संघीय जीवन के विविध पहलुओ पर विचार चिंतन, आत्म मंथन चलता रहता। पूज्य गुरुदेव ने चार माह की दीर्घावधि मे तकरीबन साढे तीन माह की अवधि तक जो अपने अनुभवो का अमृत प्रदान किया वे आज मेरे जीवन को प्राणवंत बनाए हुए है और सदैव प्राणवंत बनाए रखेंगे।

खिलता आनन :

मै मानता हूं कि हम आज बहुत समृद्ध है। कुशल शासक कहे या कुशल माली कहे, कुछ भी कहे, वह कितना महान् होता है जो अपनी भावीपीढी के लिए विशाल सम्पदा छोड कर जाता है। कितना सम्पन्न उन्होने इस संघ को बनाया, कितना समय दिया। वे केवल आदेश-निर्देश ही नही देते बल्कि स्वयं 19-20 घण्टा प्रतिदिन शासन के लिए देते। शासन के पीछे उन्होने अपने शरीर को शरीर नही माना। कई बार अनुशास्ता होने के नाते उन्हे निराहार रहना पड़ता क्योकि 12 बजे के बाद वे भोजन नही लेते। वे समय के पूरे पाबद थे। रात्रि मे शीघ्र उठ साधना करते। उनकी साधना का ही कमाल था कि वृद्धावस्था मे भी बिना सहारे विराजते थे। शरीर पर भी रोगो का आक्रमण होने पर उसके साथ समझौता नहीं कर लेते। रोग को मात्र एक परिस्थिति के रूप मे देखते। कभी भी कोई दर्शनार्थी पूछ लेता-भगवन्! आपका स्वास्थ्य कैसा है? वे मुस्कराते हुए फरमाते-तुम्हे कैसा दिख रहा है? अपने मुख से स्वय को अस्वस्थ नहीं कहते, न ही वैसी मानसिकता रखते। उनका खिलता आनन बीमारी को प्रकट ही नहीं होने देता। वैसे वे मेवाड के होते हुए भी नाजुक बहुत थे। उनका रईस शरीर था। थोडीसी ठडी हवा चली नही कि उन्हे जुकाम हो जाता और थोडी गर्म हवा लगते ही बुखार। ये दोनो ही चीजे वर्षो से सखा बन कर उनका साथ निभा रही थी। अन्य कई बडी-बडी बीमारियां भी उनको थी किन्तु वे मुख से 'उफ' भी नहीं निकालते।

वो सौभाग्य नहीं मिल सका :

यह बात है सन् 1994 के बडी सादडी चातुर्मास की। चातुर्मास के अंतराल मे साधुमार्गी जैन सघ के वरिष्ठ श्रावक, पदाधिकारियो का आवागमन निरन्तर बना रहा। एक बार सघ के वरिष्ठ श्रावक श्री धनराज जी बेताला अपने साथियो के साथ आए हुए थे। चर्चा चल रही थी-आचार्य देव के स्वास्थ्य की। उन्होंने कहा-संभवतया आचार्यश्री

के आंख का ऑपरेशन शीघ्र ही होने वाला है, नई आंख बिठाई जा सकती है आदि।

मेरे अंतरंग में स्फुरणा हुई, उनसे मैने कहा कि आप नोखा मे युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा से अर्ज कर देना कि मै अपनी एक आंख आचार्यश्री के लिए देने को तैयार हूं। पूज्य गुरुदेव के आंख बदलने का प्रसंग हो तो मुझे शीघ्र समाचार मिले, मैं अतिशीघ्र श्री चरणो में पहुंचने के भाव रखता हूं। गुरुदेव के आंख किसी और की नहीं लगाई जानी चाहिए। आदि भाव मैंने श्री धनराज जी बेताला से कहें। शायद उन्होंने कहा भी, पर यह सौभाग्य मुझे नहीं मिल पाया। काश, शिष्य के भक्ति युत समर्पण का कोई महत्त्व आंका गया होता। खैर।

बिना ताज के सरताज :

इस चातुर्मास में श्रद्धेय आचार्यश्री के संथारे के समाचार मिलते ही कई मिनट तक तो कानों को विश्वास नहीं हुआ। फिर चारों तरफ से समाचार आते गए। आखिर सच्चाई को नकारा नही जा सका। फिर उसी रात्रि को गुरुदेव के महाप्रयाण के समाचार मिले। मन का आसमान रो उठा, धरती कांप गई, प्रकृति ने सन्तुलन खो दिया। नयन अविरल अश्रु बहाने लगे। वे बिना ताज के सरताज कहां चले गये?

उपलब्धियों का नन्दावर्त :

वे आज हमारे बीच नहीं रहे, यह सत्य है किन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि वे नही होते हुए भी सतत् हमारे बीच विद्यमान है। लगभग 6 दशक तक उन्होंने अपने करिश्माई व्यक्तित्व से विश्व को अनवरत प्रभावित किया। अपने देह को सदैव समाज का माना। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व आज भी हमारे मध्य है और सदा-सदा रहेगा। वे विश्व के फलक पर उपलब्धियों का नन्दावर्त उकेरने वाले थे। वे स्मृति पथ से कभी ओझल नहीं होते। उन्हे हम कभी भूले ही नहीं तो याद क्या करें। जमीन से उठा आदमी जमीन में ही समा जाता है मगर वे अमर हो जाते है जो दुनिया को नई राह बता जाते हैं।

व्यथित हृदय :

पढते-पढ़ते आपको महसूस हो रहा होगा कि गुरुदेव का आपके प्रति असीम स्नेह और आपकी गुरुदेव के प्रति अनन्य आस्था, फिर आपने गुरुदेव को कैसे छोड़ा?

आपके मस्तिष्क मे उभरते इस प्रश्न का भी मै किंचित् समाधान कर देता हू। तरु से फल न चाहते हुए भी आंधी के झौंके के कारण तरु से छूट जाता है वैसे ही परिस्थितियों की भयंकर आंधी चली। न चाहते हुए भी गुरुदेव देह पिण्ड से व्यथित हृदय से इतना ही कहूंगा/लिखूंगा कि वे मेरी नयनो से ओझल हो गये। वे देह पिण्ड से अवश्य छूटे लेकिन उनके आदर्श हर पल दिशा-निर्देश देकर संयम की पगडंडी पर कदमो को प्रवर्धमान करते है। मात्र उलाहना समय व परिस्थितियो को ही है कि मैं उनके अतिम दर्शन न कर सका।

वही है जमी, वही आसमां, वही है मौसम, वही फिजा। फिर भी न जाने क्या जादू था उस शख्सि

सयत में जिसके बिना सब कुछ सूना-सूना और बेजान-सा लगता है।

पुष्प में सुगंध :

उनके विराट व्यक्तित्व के एक कोण का भी मै वर्णन न कर सका। उनके व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मे हर शब्द बौना-सा लगता है। शब्दो की भी सीमा है। शब्दो मे उन्हे नहीं बांधा जा सकता। उनके व्यक्तित्व की अमिट छवि करोड़ो दिलों में यो समाई है जैसे मेहंदी मे रंग और पुष्प मे सुगंध।

समां मे समाये उनके मौन व्यक्तित्व से लाखो-लाखों व्यक्ति मार्गदर्शन प्राप्त करे। सहस्त्रो-सहस्त्रो छोटे-मोटे दीप प्रज्जवलित हों। नन्हे-नन्हे पुष्प निरन्तर फिजाओ मे महके।

मूर्तिकार की कलाकृति मे सजीवता व लालित्य तभी आता है जब उसे उपर्युक्त शिलाखंड प्राप्त हो। माली की कला कुशलता तभी प्रस्फुटित होती है जब उसे उर्वरा भूमि उपलब्ध हो, साहित्यकार की लेखनी मे रस संचार तभी होता है जब उसे भावानुकूल विषय सामग्री प्राप्त हो, यह प्रकृति का क्रम है। यद्यपि मूर्ति की सजीवता, सुन्दरता, सुघडता का श्रेय मूर्तिकार को जाता है, वाटिका की सुरम्यता-कमनीयता का श्रेय माली को तथा साहित्य की रसमयता का श्रेय साहित्यकार को मिलता है। यह वास्तविक है पर कलाकृति के पृष्ठाधार को परिष्कृत-परिमार्जित करने वाले उस मूक सूत्राधार को कभी भूला नहीं जा सकता।

अत मे पूज्य गुरुदेव-

अहो वण्णो, अहो रूवो, अहो अज्जस्स सोमया।
अहो खंति अहो मुत्ति, अहो भोगे असंगया।।

आप सब कुछ अहो, आश्चर्य थे, है और रहेगे।

विनम्र श्रद्धांजलि।

यह ध्रुव सत्य है कि मनुष्य गिरता, उठता और बदलता रहेगा किन्तु मनुष्यता कभी समाप्त नही होगी, उसका सूरज डूबेगा नही। वह सो सकती है, मर नही सकती। अब समय आ गया है जब मनुष्य की सजीवता को लेकर मनुष्य को उठना होगा-जागना होगा और क्रान्ति-पताका को उठाकर परिवर्तन का चक्र घुमाना होगा। क्रान्ति यही कि वर्तमान विषमताजन्य मूल्यो को हटा कर समता के नये मानवीय मूल्यो की स्थापना की जाय। इसके लिए प्रबुद्ध एवं युवा वर्ग को विशेष रूप से आगे आना होगा और एक व्यापक जागरण का शख फूकना होगा ताकि समता के समरस स्वर उद्‌बुद्ध हो सके।

-आचार्य श्री नानेश

सन्तुलित एवं संयमित व्यक्तित्व

✍ आचार्य प्रवर पूज्य श्री विजय मुनि जी म.सा.

मैं अपने गुरु को सूर्यातिशायी प्रकाश पुञ्ज के रूप मे देखता हूं, जिन्होने एक प्रभात मुझे नवज्योति से आलोकित किया।

संवत् 2028 कार्तिक शुक्ला द्वादशी के दिन आचार्यश्री नानेश की दिव्य ज्योति से ज्योतिर्मान होने वाली 9 मुमुक्षु आत्माओ का दीक्षा प्रसंग था। बीकानेर संभाग परिसर से श्रद्धालु भक्तो की एक विशाल भीड उक्त प्रसग पर उपस्थित थी। मै बीकानेर बालक मडली के सस्थापक, सम्पोषक सरक्षक श्रीमान् जयचन्द लालजी सुखानी के नेतृत्व मे आई बालक मण्डली की करीब 50-60 लडको की टीम के साथ मण्डली के सदस्य रूप मे ही साथ था। मुझे यह पता नही था कि मेरा भविष्य-भाग्य किस ओर मुडने वाला है? पर अर्न्तमन मे एक अपूर्व उत्साह था, बाल सुलभ मन की तरंगें गुरु भक्ति मे अत्यन्त उग्र थी। इसी का फलित था कि हमने एक दिन पूर्व गुरुवर के चरणो मे एक प्रार्थना की थी-मुझे आज भी याद है उस प्रार्थना के प्रारम्भिक बोल जो हमारे अन्तर्मन से उद्‌गीत हुए थे-

म्हारे हिवडे री सुण लो पुकार,
गुरुवर चालोनी।
म्हारे मनडे री सुन लो पुकार
गुरुवर चालोनी।...

उसी टीम मे मुझ जैसे कई ऐसे बालक थे जिन्होने प्रथम बार ही गुरु दर्शनो से अपने नेत्र पवित्र किये थे, गुरुवाणी सुन कर अपने मन को पावन किया था। मेरे लिये ये प्रथम दर्शन ही सच्चे जीवन दर्शन का वरदान लेकर आये थे। प्रथम गुरु वचन ही सम्यक् दिशा बोध दर्शन का अभियान लेकर आये थे।

प्रथम दर्शन से प्राप्त हुई नई ताजगी, नई स्फूर्ति, नई प्रेरणा लेकर अपने आप मे एक अजीब-सी अनुभूति लिए मै अपने संचालक महोदय के साथ आवास स्थल पर आ गया। पूरा दिन अन्तर्मन के आनन्दोल्लास के साथ सपन्न हो गया। इधर धीरे-धीरे रात्रि का सघन अन्धकार घिर रहा था, उधर मन को नव सूर्य के साक्षात्कार की प्रकाश किरणे आलोकित कर रही थी। साथियो की बातों के साथ रात्रि का समय व्यतीत हो गया। प्रातः अन्य साथियो से पहले ही मै तैयार हो गया था। रात्रि मे हुआ एक विशिष्ट अनुभव जो बडा ही रोमांचक, मनोहारी, पुलकित एव प्रेरित करने वाला था। आज भी वह अनुभव जब स्मृति-पटल पर उभरता है तो रोआ-रोआ हर्षित हो उठता है।

संक्षेप मे-उस दिव्य अनुभूति को शब्दो का परिवेश दू तो वह इस प्रकार होगी-प्रातःकाल उठने के पहले करीब 2 घण्टे भर पहले का समय होगा-मुझे कोई शक्ति झकझोर रही है और पुकार रही है-'सोया क्या है-उठ जल्दी कर, गुरुदेव के दर्शन करने जाना है, सभी चले जायेगे, तू पीछे रह जायेगा।' इस तरह करीवन दो-तीन मिनट तक वह शक्ति मुझे आवाज लगाती रही। मे हडबडा कर उठा, इधर-उधर देखने लगा-सभी सो रहे हें, कोई भी अभी तक जगा नही है। उठ कर वाहर आया-देखा तो अभी रात भी काफी लग रही है। मैं सोचने लगा-मुझे किसने जगाया? कोई जगाने वाला नजर नहीं आया, काफी देर इधर-उधर देखता रहा, कुछ नजर नहीं आया। आखिर सोचा-कोई न कोई शक्ति ही मुझे जगा रही है, अव नही सोना है, जगता रहा। कल की सारी स्मृतिया उभरने लगीं,

व्याख्यान मे बोलने की, सम्यक्त्व लेने की, परिचय की, इस तरह दिनभर की अनुभूत स्मृतियो मे खोया रहा। धीरे-धीरे सभी उठने लगे। एक-एक करके सभी से मैने पूछा-किसी ने मुझे आवाज लगाई सभी ने मना कर दिया। तब यह विचार दृढीभूत हो गया कि किसी दिव्य शक्ति ने ही मुझे झकझोरा है, उसी ने जगाया है। मैने अपने साथियो से भी यह बात कही। सबने आश्चर्य व्यक्त किया।

हम सभी साथी एक ही परिवेश मे, एक साथ चल पडे-गुरु दर्शन के लिए। हम सभी मुनिवरो के दर्शन करते हुए महावीर भवन के ऊपरी भाग जहां आचार्यश्री जी विराजित थे, वहां पहुचे पता चला कि वे उसी क्षण मुझ मे क्रांतिकारी परिवर्तन घटित करने के लिए मुनिपुगव मेरे समक्ष उपस्थित हुए। मेरा मत्था उनके श्री चरणो की ओर झुक गया। मुनिश्री कहने लगे-तुझे कुछ नियम लेना है? मै सोचने के लिए मजबूर हो गया-एक-दो क्षण सोच कर मैने कहा-जरूर नियम लूंगा, क्या नियम दिलवायेगे? उन्होने कहा-जो मै कहूंगा वो नियम लेना पड़ेगा। मैं क्या विचारो मे खो गया। किन्तु अन्तःचेतना ने तत्काल जीवट होते हुए कहा-मंजूर। जो आप नियम दिलवायेगे वो लेने के लिए मजूर हूं। मुझे कुछ पता नही चला कि वे क्या नियम दिलवायेगे। पर मन की मकम्मता जो अभिव्यक्त हुई उससे मै खुद आश्चर्याभिभूत हो गया। मुनिश्री मुझे अकेले को लेकर चल पडे जहा समत्व साधना की अटल गहराई मे डूबे आचार्य श्री ध्यानस्थ थे। मैं पूज्य गुरुदेव की उस अप्रतिम मंगल मूर्ति को अपलक देखता रहा। थोडी देर बाद पूज्य गुरुदेव की वह ध्यान प्रक्रिया पूर्ण हुई-उन्होने अपने निर्विकार नेत्रो से मुझे खडें देखा, मेरा तन-मन सम्पूर्ण अतरग पूर्ण श्रद्धा के साथ झुका था, आचार्य देव ने अपनी मधुरिम वाणी मे पूछा-कौन हो भाई तुम? यहा क्यो खडे हो? क्या बात है? पूज्य गुरुदेव की मधुर वाणी इतनी सन्निकटता से आज ही, इस जन्म मे पहली बार ही सुनने को मिल रही थी। मैं कुछ कहना चाह ही रहा था कि वे मुनिपुंगव जो भीतर खडा कर चले गये थे, पुनः उपस्थित हो गए और गुरुदेव से विनम्र हो निवेदन करने लगे, गुरुदेव! इसे इस जीवन मे शादी नहीं करने का नियम दिलवा दीजिए। कहकर वे मुझे देखने लगे-मै मन्द स्मिति के साथ गर्दन हिलाकर अनुमति दे रहा हू मेरी अनुमति सूचक अवस्था देख कर वे मुनिश्री बाहर हो गये। बाद मे मुझे पता चला वे मुनिपुंगव थे-विद्वद्वर्य श्री प्रेममुनि जी म सा। पूज्य गुरुदेव मुझे अपार स्नेह और आत्मीयता की भावधारा बहाते हुए देखने लगे-मैंने कहा-''गुरुदेव आप मुझे नियम दिलवा दीजिए कि मैं इस जन्म मे शादी नहीं करूगा-मुझे मुनि बनना है। मै आपका शिष्य बन कर आत्म-कल्याण करना चाहता हूं।''

पूज्य गुरुदेव ने मेरी सहज अभिव्यक्ति की सच्चाई को जानने के लिए पूछा-क्या समझते हो भाई तुम शादी मे? वैसे यह प्रश्न सामान्य है, परन्तु गुरुदेव के कहने मे बडा रहस्य भरा था, मैने इतना ही निवेदन किया-इसमे समझने की क्या बात है, सारा ससार इस प्रपंच मे उलझा हुआ है, मै इस उलझन मे नही फसना चाहता। मै तो अपने जीवन को प्रारम्भ से ही भव्य बनाना चाहता हूं। मेरी अभिव्यक्ति को सुन कर गुरुदेव ने बात को मोड देते हुए कहा-अच्छा-अच्छा कौन है तुम्हारे पिताजी? कहां के हो तुम? मैने अपना सामान्य परिचय दिया। गुरुवर्य ने उस समय इतना ही कह कर मुझे आश्वस्त किया कि तुम अपने पिताजी को लेकर उपस्थित होना। फिर सोचेगे? मै कमरे से वैसे तो खाली हाथ बाहर हो गया। किन्तु निश्चय यह करके निकला कि मै पिताश्री को लेकर यह नियम लूगा और अपने आपको सयम-साधना के योग्य साबित करूंगा। पूज्य गुरुदेव की सन्निकटता का वह क्षण वास्तव मे बडा आनन्दकारक था।

अन्तर्मन मे अनेक विचार तरंगें तरगित हो रही थी। मैं कुछ समय पश्चात् अपने पूज्य पिताश्री को लेकर गुरुदेव के चरणो मे उपस्थित हुआ। वही मेरा निश्चय अब आग्रह में बदल गया-मैने पूज्य गुरुदेव के समक्ष पिताजी से

कहा-मैं दीक्षा लेना चाहता हूं इसके लिए मैं यह नियम लेना चाहता हूं कि मै इस जीवन मे शादी नही करूंगा। इसके लिए आपकी अनुमति चाहिए। पूज्य गुरुदेव ने भी मेरी भावनाओ मे मौन संबल प्रदान किया। पिताश्री हलुकर्मी आत्मा थे। उन्होंने कहा-गुरुदेव मेरे नियम है। मैंने तो स्वर्गीय गुरुदेव से बचपन मे ही नियम ले रखा है कि मेरे परिवार से कोई भी दीक्षा लेना चाहेगा तो मैं कभी उसके मार्ग मे बाधक नहीं बनूंगा। यह बच्चा चाहता है तो मेरा इसमे कोई विरोध नही है-आप जैसा उचित समझे। पूज्य पिताजी की अनुमति के बाद तो मेरे हर्ष की सीमा नहीं रही। मेरा निश्चय साकार हो रहा है, इस बात की बड़ी खुशी हो रही थी। पर गुरुदेव जो एक महान् निस्पृह साधक हैं, उन्होने अपनी उसी अल्हड निस्पृहता को अभिव्यक्त करते हुए कहा-भाई! अभी तुम बच्चे हों, अपरिपक्व हो, इसलिए मै तुम्हे 25 वर्ष तक अर्थात् 25 वर्ष की तुम्हारी वय-अवस्था न हो जाय तब तक के लिए शादी नहीं करने का त्याग करवा देता हूं। उसके बाद ..इतना कह ही रहे थे-मैने चरण पकड लिए, नही गुरुदेव। ऐसा नहीं होगा, मुझे तो आप आजीवन के लिए ही त्याग करवा दीजिए। मेरी भावना देख कर गुरुदेव कहने लगे भाई अभी बच्चे हो ..बच्चे हो.. बाद में कर लेना।...तुम अपने निश्चय मे दृढ़ रहो ...यही सोचो कि मै तो आजीवन का त्याग कर रहा हूं...आदि कहते हुए मुझे समझाने लगे। उस समय मेरा मन बड़ा आनन्दित था। मैं अपने आप मे आत्मा की अनन्त विराटता का अनुभव कर रहा था।

उस समय पूज्य गुरुदेव के एक संक्षिप्त किन्तु मर्मस्पर्शी उदबोधन की अमृत वर्षा मुझ पर हुई-

पूज्य गुरुदेव ने जीवन की सार्थकता का स्वरूप समझाते हुए फरमाया कि-"हमें यह जीवन मौज शौक, आमोद-प्रमोद करने के लिए प्राप्त नहीं हुआ है। इस जीवन से जितनी संयम की साधना कर ली जाय, उतना ही आत्म-गुणो का विकास किया जा सकता है। साथ ही हमें अपनी आत्मा पर अनादिकाल से लगे विकारो को धोने का यही सुन्दरतम अवसर है। काम, क्रोध, मोह, माया, छल-कपट, ईर्ष्या, द्वेष आदि से सारा ससार भरा हुआ है। जिधर देखो उधर इन्हीं का बोलबाला है-इनसे निवृत्त होने के लिए जिनशासन मे आचार साधना का जो श्रेष्ठतम मार्ग बताया गया है, वही सर्वोत्तम है।"

मै पूज्य गुरुदेव के अमृत वचनों का एकरस होकर रसपान करता रहा। अपूर्व आत्म जागृति का अभिनव संसार पाकर मन गद्‌गद् हो गया। मैं निर्णायक चिन्तन मे स्थिर हो गया, वहां से अपूर्व निर्णय लेकर मै अपनी आत्म साधना की भव्यता मे एवं वैराग्य भावना की अभिवृद्धि मे जागरूक रहने के लिए अनन्त उपकारी कर्मठ सेवाभावी, धायमातृ पदालंकृत श्री इन्द्रचन्द जी म.सा की सन्निधि मे रहने लग गया। मुनि भगवन् ने बड़ी आत्मीयता से हमारे ज्ञान एव चारित्र की विकास भूमि को प्रशस्त किया।

मेरे दीक्षित होने के निर्णय से मेरे पिताश्री, मातुश्री एवं लघु भगिनी के भी ये ही विचार बने और वे भी आचार्य श्री नानेश के शासन मे दीक्षित हुए।

उत्तर-2.

आपने आचार्यश्री के साधनागत जीवन की मौलिक विशेषताओ के बारे मे पूछा है। पूज्य गुरुदेव का साधनामय जीवन सभी दृष्टिकोणो से सर्वोत्तम है। उनका अंतरंग जीवन इतना सध चुका है कि वे अब कैसी भी परिस्थिति क्यो न हो, सदैव प्रसन्न रहते हैं। कई बार ऐसी विकटसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती है जिनमे हम चिंतित से हो जाते है परन्तु गुरुदेव की समता मे कोई फर्क नहीं पड़ता।

प्रारम्भ से ही अर्थात् मुनि अवस्था से ही गुरुदेव मन से पवित्र हैं, वाचा से संयमित है और काय से सेवा

परायण है। प्रभु महावीर ने आगम मे आत्म साधक की भव्यताओं की ओर जो संकेत उपदेश एवं महत्त्व बताये हैं वे सारे अक्षरशः पूज्य गुरुदेव के जीवन मे प्रतिबिम्बित हो रहे है।

हम कतिपय आगम की आलोक किरणो मे पूज्य गुरुदेव श्री के जीवन को झांकने का प्रयास करेगे-

यथार्थ निश्चय-प्रभु ने कहा-'**दुल्लहे खलु माणुसे भवे**'-मनुष्य जन्म निश्चित ही दुर्लभ है। इस दुर्लभ जन्म को पाकर आचार्यश्री ने उसका सदुपयोग करने की तीव्र ललक गुरुणांगुरु श्रीमद् गणेशाचार्य के श्री चरणो मे अपना सर्वस्व समर्पित किया। पूज्य गुरु चरणो में आपश्री ने रत्नत्रय की साधना के लिए-

सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं
जाव सव्वाओ राइ भोयणाओ वेरमणं....

अर्थात् सर्वथा रूप से प्राणातिपात-हिंसा, झूठ, चोरी, मैथुन, परिग्रह एवं रात्रि भोजन-पान का आजन्म के लिए त्याग-परित्याग किया। बाह्य संयोगों का त्याग साधना जीवन का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है लेकिन हमारे आचार्यश्री इस पहलू तक ही सीमित नहीं रहे किन्तु वे इस त्याग के साथ अतरंग जीवन-साधना के प्रति प्रणत हो गए-

महापथ समर्पण-'**पणयावीए महावीहिं**'-वीर वही है जो महावीथि-महापथ-साधना जीवन के प्रति समर्पित हो। आचार्यश्री की साधना का महापथ कैसा रहा-

अकुसलमण निरोहो
कुसलमण उदीरणं चेव

अकुशल-अशुभ विचारो का निरोध तथा कुशल-शुभ विचारो का उदीरण-उदीपन (संविकास) करने की साधना हमारे आराध्य देव की रही। अशुभ से शुभ को और शुभ से शुद्ध को प्रकट करना ही प्रत्येक वीतराग साधक का लक्ष्य होता है, यही लक्ष्य रहा आचार्यश्री का। क्योकि इस लक्ष्य के बिना न धर्म की साधना होती है और न आत्मशुद्धि-

पवित्रता के पुञ्ज-"**मनो पुण्णं गमा धम्मा**"-मन की पवित्रता से ही धर्म-साधना की पवित्रता साधी जा सकती है। मन की पवित्रता ही वचन एवं काया मे प्रतिबिम्बित होती है। आचार्यश्री का मनोभाव हर समय पवित्र भावो से ओतप्रोत रहता है। वे '**मित्ति मे सव्वभूएसु**' मैत्री है मेरी समस्त प्राणियो के साथ-इस अमृत वचन मे सदा सराबोर रहते है। वे कभी भी किसी को अपना शत्रु नहीं मानते। जब कोई व्यक्ति अज्ञानता से या गलतफहमी से कुछ निंदा-अपमान के भावो मे बह कर कुछ कह देता है या लिख देता है तो भी उसके प्रति कोई द्वेष नहीं, रोष नहीं। मानसिक पवित्रता के पुञ्ज हैं आचार्यश्री।

समत्व के शिखर पर-निम्न आगम वाक्यो पर आचार्य देव का जीवन स्थिर है-

चरित्त खलु धम्मो
धम्मो जो सोम्मो त्ति निद्दिडो।
मोह क्खोह विहीणो
परिणामो अप्पणो हु मखो।

समत्व वही होता है जहां आत्मा मोह और लोभ से मुक्त होती है। यही निर्मल, शुद्ध वीतराग भाव से सम्पन्न चारित्र साधना है। आचार्य प्रवर के जीवन से यह बात सुस्पष्ट है कि उनमे न शिष्यो का मोह है और न ही किसी

घटना या परिस्थिति से क्षोभ पैदा होता है। समत्व साधना के उत्तुंग शिखिर पर विराजित आचार्य देव की यह भ
चारित्र साधना है।

तप से प्रदीप्त चर्चा-आगमो मे-**'उग्गतवे, दित्ततवे घोरतवे'** के विशेषण गौतमादि गणधरो के लिए प्रयु
हुए है। इस तपस्तेज से आचार्य प्रवर की जीवनचर्या हर क्षण अनुप्राणित रहती है। आभ्यतर विनय, वैयावृ
स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग मे समर्पित गुरुदेव उग्रतपस्वी, दीप्त तपस्वी एवं घोर तपस्वी हैं।

सेवा के आदर्श-'जे गिलाणं पडियरइ से धन्ने'-जो ग्लान की सेवा मे अभिरत रहते हैं, वे धन्य है। पू
गुरुदेव आचार्य जैसे विशिष्ट पद पर आसीन है फिर भी कोई अहं नही, किसी कार्य को करने मे ग्लानि का अनुभ
नही करते। शैक्ष, तपस्वी, रुग्ण मुनियों की सेवा मे अहर्निश तत्पर रहते है। फलतः **'वेयावच्चेणं तित्थयर नाम गो
कम्मं निबंधइ'** सेवा का यह उदात्त भाव आपको तीर्थंकर नाम कर्म की सर्वोत्तम पुण्य प्रकृति का बोध करवाने वा
बन सकता है।

लोकैषणा से मुक्त-

न लोगसेस्सणं चरे
जस्स नत्थि इमा जाइ
अण्णा तस्स कओ सिया?

साधक को लोकैषणा से मुक्त होना चाहिए? आचार्यश्री को नाम की, प्रतिष्ठा की, यशकीर्ति की, अपने
व्यक्तित्व एवं कर्त्तव्य को प्रचारित, प्रसारित करने की किंचित् भी लोकैषणा नही है। अगर यह लोकैषणा होती तो
पद एवं प्रतिष्ठा के मान, सम्मान के बहुतेरे अवसर आये पर आपने श्रमण संस्कृति के प्राण स्वरूप श्रमण जीवन की
आचार-संहिता के विरुद्ध समझौता नहीं किया।

जागरूकता-आचार्यश्री हर समय जागरूक रहते है, कौन-सा कार्य किस समय करना है, इस बात के लिए
आप विशेष रूप से सजग रहते हैं। आगम वचन के अनुसार आप असमय मे किसी कार्य को करके पश्चातापित नहीं
होते-**'जेहिं कालं परक्कंतं, न पच्छा परितप्पइ'**-प्रत्येक कार्य को करने मे एक विशेष प्रकार की तन्मयता आपश्री
की जीवनशैली है। आपश्री अपनी कर्मण्य शक्ति कभी गोपन करके नहीं रहते। **'नो निह्नवेज्ज वीरियं'**-साधक को
अपनी साधना मे आत्म शक्ति नही छिपाना चाहिए-आप इस बात के सजग साधक है।

इस तरह अनेक प्रकार की आचार्य श्री के अन्तरग साधना जीवन की विशेषताएं है जो आगम पुरुष के रूप मे
प्रत्येक साधक के लिए प्रेरणास्पद है।

संक्षेप मे पूज्य गुरुदेव का जीवन, अध्ययन, अध्यापन, चितन, मनन, साधना, ध्यान, योग सभी से सर्वोत्तम है।
आज आपश्री उस परम अवस्था की भाव स्थिति पर प्रतिष्ठित है, जहां अनुकूल-प्रतिकूल, सुख-दुःख, सयोग-
वियोग जन्य विविधताएं-विचित्रताएं परिव्याधित नही करतीं। एक अलौकिक आलोक पुञ्ज के रूप मे आपश्री युग
चेतना को दिशा एव दृष्टि प्रदान कर रहे है। आपश्री का आगम की भाषा मे-

समाहियस्सग्गी सिहा व तेयसां
तवो य पन्ना य जस्सो वड्ढइ।

अग्नि शिखा के समान प्रदीप्त एवं प्रकाशमान रहने वाले अन्तर्लीन, आत्म साधक के तप ओर यश निरन्तर
प्रवर्धमान रहते है।

उत्तर-3.

आचार्यश्री नानेश के द्वारा प्रदत्त समीक्षण ध्यान-साधना के बारे मे आपने पूछा है। वैसे जब से आचार्य देव के चरणों मे दीक्षित होने का सौभाग्य मिला तब से जीवन का प्रशस्त विकास किस तरफ से हो इस दिशा मे पूज्य गुरुदेव का सतत मार्गदर्शन मिलता रहा है, यह कहने मे किचित् भी सकोच नही और न किसी प्रकार की अतिशयोक्ति ही है कि हमे दीक्षित होने के अनन्तर पूज्य गुरुदेव का जो संबल, संरक्षण प्राप्त हुआ, वह अपने आप मे अद्भुत है। उसकी अभिव्यक्ति शब्दो से नही की जा सकती है। शब्द सीमित है और गुरुदेव के उपकार असीम है।

ध्यान-साधना के बारे मे वैसे प्रारम्भ से ही गुरुदेव श्री के संकेत मिलते रहे है, परन्तु अहमदाबाद चातुर्मास मे आचार्यश्री भगवन् ने हमारी योग्यता पात्रता को देखकर सक्रिय रूप से ध्यान और योग की दिशा मे गतिशील होने के लिए प्रेरित किया। वैसे प्रेरणा तो सतत मिलती ही रहती थी, किन्तु इतनी सक्रिय रूप से नहीं। जब से प्रेरणा के साथ स्वयं आचार्य देव का साक्षात् मार्गदर्शन मिलने लगा तब से मन मे ध्यान-साधना के प्रति जिज्ञासा, पिपासा एव अभिरुचि विशेष रूप से उभरने लगी। पूज्य गुरुदेव ने स्वयं कई प्रयोग करवाये और इस दिशा मे अब तक कई प्रयोग, परीक्षण एव मार्गदर्शन मिलते रहे है। पूज्य गुरुदेव के द्वारा अभिहित प्रयोगो से हमारे जीवन मे जो कुछ घटित हुआ है, वह अपने आप मे अलौकिक है, सामान्य कल्पना से परे हैं।

सबसे बडी उपलब्धि हमे हमारे जीवन मे महसूस होती है वह यह कि हमारी वृत्तियो मे एव प्रवृत्तियो मे एक अतिशयकारी परिवर्तन हुआ है। सामान्य तौर पर काफी समय लग जाता है, कई वर्ष लग जाते है साधना जीवन मे, वृत्तियो के रूपान्तरण मे, किन्तु हमे यह अनुभव होता है-यह कोई गर्व की बात नहीं है कि बहुत थोडे समय मे हमारे मे जो रूपान्तरण घटित हुआ है, वह वास्तव मे गुरुदेव की ध्यान साधना का चमत्कारिक परिणाम है। आज भी इस दिशा मे हम आगे बढ रहे है। यह कहने मे किचित् भी सकोच नही कि इसी उत्साह, अभ्यास एवं आशीर्वाद से हम बढते रहे तो निश्चित है-दीक्षित-प्रवर्जित होने का लक्ष्य बहुत शीघ्र ही प्राप्त करने मे सक्षम बन सकेगे। वैसे अनुभूति गम्य बातो की अनुभूति ही श्रेयस् होती है, उनको शब्दों का परिवेश नही दिया जा सकता। ध्यान साधना से हुए अनुभव, हो रहे अनुभव तक ही सीमित रखने के विचार ही इस समय उपर्युक्त है।

उत्तर-4.

आचार्यश्री जी की सरलता व सहजता बडी गजब की है, वे कृत्रिमता जरा भी पसन्द नही करते। बाते बहुत सामान्य-सी होती है, पर होती है बहुत बडी प्रेरक। जब कभी भी किसी शहर मे प्रवेश करने का प्रसग होता है या दीक्षा प्रसंग होता है या कोई विशेष अवसर होता है तो हम शिष्यो का एक स्वाभाविक आग्रह होता है कि आज आपको यह नया परिवेश धारण करना है। हालाकि वह कोई विशिष्ट-अतिविशिष्ट नहीं होता, किन्तु फिर भी पूज्य गुरुदेव आनाकानी करने लग जाते है, उनका यह स्वर अन्तस्तल को छूने वाला होता है-अरे भाई! हमे क्या दिखावा करना है, जो है वही अच्छा है। जो प्रतिदिन पहना या धारण किया जा रहा है, वही ठीक है। यह केवल पहनावे के सम्बन्ध मे ही सहजता या स्वाभाविकता नही होती। इस तरह की जितनी भी कृत्रिमता वाली बाते होती है उन सब बातो मे गुरुदेव अत्यन्त सहज एव सरल होते है।

पूज्य गुरुदेव की एक अन्य विशेषता है कि वे हर समय अत्यन्त संतुलित रहते हैं। उनके सन्तुलन का स्वभाव बड़ा जबर्दस्त है। किसी भी बात को लेकर वे क्षणिक सोच भले ही कर ले किन्तु उस सोच ही सोच मे उलझे नही रहते है। गुरुदेव श्री के पास सभी तरह के अलग-अलग स्वभाव के साधु हैं, उनमे कोई मुनि या साध्वी किसी तरह

की गलती कर देता है तो गुरुदेव उसे शिक्षा के प्रसंग से कह देते हैं किन्तु बाद मे हर समय उसको टोंचना, उपालम्भ देना या हीन दृष्टि से देखना उनका स्वभाव नहीं है। वे उसको उसी प्रेम, स्नेह और आत्मीयता के नजरिये से देखते हैं। क्षणिक-क्षणिक बातो में न वे उलझते हैं और न अपने नजरिये को बदलते हैं।

पूज्य गुरुदेव की विशेषताओ में एक विशेषता है कि वे संयम जीवन के सजग प्रहरी है। किसी को दिखाने के लिए नहीं, किन्तु निश्छल आत्म-भावना से वे छोटी-सी, सामान्य-सी बात के लिए अत्यंत सजग रहते हैं। सामान्य मुनि या साध्वी यह कह देती हैं कि क्या है इसमें? छोटी-सी बात है-ध्यान रखो तो ठीक नहीं तो कोई खास बात नहीं? किन्तु गुरुदेव कभी यह बर्दास्त नही करते। वे कहते हैं-छोटी बात है क्या? उसका भी बराबर ध्यान रखो। यह मात्र उनका आदेश ही नहीं होता बल्कि वे पालन करते हैं। ऐसे पालन करने के सैकडो उदाहरण हैं।

पूज्य गुरुदेव की मनोवैज्ञानिक समझाईश बड़ी महत्त्वपूर्ण होती है। मनोविज्ञान का बडा गहरा प्रभाव अनुभव एवं अध्ययन है आपश्री को। यही कारण है कि आप किसी भी बात के लिए हठात् निर्णय नहीं लेते। बहुत सोच-विचार करके निर्णय पर पहुंचते हैं। जब निर्णय ले लेते हैं तो फिर उस पर स्थिर रहते हैं। उस निर्णय मे हेराफेरी करना आपका स्वभाव नही है। इसका मतलब यह नहीं कि आप सत्य की स्वीकृति के लिए सदा के लिए दरवाजा बंद कर देते है। सत्य के लिए आपके द्वार सदैव खुले रहते है। सत्य-हकीकत अगर कोई छोटा बच्चा भी कहता है तो उसे आप बेहिचक स्वीकार करते हैं और अगर सत्य के विपरीत कोई बात बड़ा व्यक्ति भी कहता है तो उसे आप स्वीकार नहीं करते। ऐसे अनेक प्रसंग रोजमर्रा जीवन में आते हैं।

पूज्य गुरुदेव का जीवन कई विशिष्टताओं को लिए हुए हैं। आप मे '**वज्रादपि कठोराणि, मृदुनि कुसुमादपि**' दोनों प्रकार की अवस्थाए रही हुई है।

संक्षेप मे आप निश्छल मानस, वाक्पटु एवं व्यवहार कुशल हैं। आप मे साधना की अतल गहराई है, ज्ञान की उच्चतम ऊंचाई है, सागर सम-गांभीर्य है। सुमेरुसम विराटता है। आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के बावजूद आप निराभिमानी है और सर्वाधिक विशेषता है आपकी कि आप सहिष्णुता के प्रज्ञावतार है।

उत्तर-5.

हमारे संयम जीवन को पुष्ट बनाने वाली ऐसी अनेक विशेषताएं हैं जो हमारा सतत मार्गदर्शन करती हैं। अबूझ अवस्था मे सबोध का अवसर देती हैं। तनाव विमुक्ति एवं आत्म शांति का मार्ग प्रशस्त करती है।

-विजय मुनि के भावो मे

आचार्यश्री नानेश : शिष्यों की दृष्टि में

(प्रश्नों के माध्यम से)

प्रश्न जो पूछे गए-

1 आपको संयम धारण करने मे आचार्यश्री से किस प्रकार प्रेरणा मिली?

2 आपकी दृष्टि मे आचार्यश्री के संयमी जीवन की क्या मौलिक विशेषताएं हैं?

3 आचार्यश्री द्वारा प्रतिपादित समीक्षण ध्यान मे आपकी क्या उपलब्धि रही है?

4 आपके संयमी जीवन को पुष्ट बनाने मे आचार्यश्री का किस प्रकार योगदान रहा है?

5 आचार्यश्री के चातुर्मास एवं विहार-काल मे घटित ऐसे घटना प्रसंगो का उल्लेख कीजिए, जिसने आपको सर्वाधिक प्रभावित किया हो।

(1)

निर्लिप्त जीवन : क्षमाशील स्वभाव

✍ महास्थविर श्री शांति मुनि जी म.सा.

उत्तर-1

मुझे संयम धारण करने मे आचार्यश्री नानेश की ओर से कोई सीधी प्रेरणा नही मिली है। मेरे संयम-साधना के प्रेरक थे आचार्य प्रवर के गुरु भ्राता श्री सुमेरचन्द जी महाराज। आचार्यश्री ने प्रत्यक्ष प्रेरणा प्राप्त नही होने का कारण है कि आचार्य प्रवर का व्यक्तित्व अपनी साधना के प्रारम्भ से ही आत्म-केन्द्रित व्यक्तित्व रहा है। उनका सम्पूर्ण मुनि जीवन-काल परिचय विस्तार से बच कर अधिक से अधिक अध्ययन एवं साधना की गहराई मे पैठने में ही व्यतीत हुआ है। यहां तक कि जब मै सयम साधना मे प्रवेश का संकल्प लेकर आपश्री के चरणो मे पहुचा, अध्ययन करने लगा, तब भी आपश्री अपने आराध्य देव स्वर्गीय आचार्य प्रवर श्री गणेशीलाल जी म सा की सेवा मे ही लीन रहते थे। हमे समय पर अध्यापन हेतु पाठ देने के अतिरिक्त कभी यह प्रेरणा तक नहीं दी कि विलम्ब क्यो करते हो, यथाशीघ्र मुनि जीवन मे प्रवेश करो। हा, साधना की कठिनाईयो का शिक्षण आप अवश्य प्रदान करते थे।

मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि जब आपश्री युवाचार्य पद पर समासीन हो गये थे और आपश्री के प्रथम शिष्य के रूप मे श्री सेवन्तीलाल जी (वर्तमान मुनिश्री) की दीक्षा के प्रयास चल रहे थे, कर्मठ सेवाव्रती धायमातृ पदालकृत श्री इन्द्रचन्द जी म सा ने एक बार आपश्री को निवेदन किया कि वैरागी जी की दीक्षा के लिए प्रयास करे, आपश्री उनके माता-पिता को समझाएं तो कुछ कार्य हो सकता है। इस पर आचार्यश्री का सीधा-सपाट उत्तर था-"आप जानो, आपका काम जाने।"

और यह प्रसंग उस समय का है जबकि आपश्री के साथ शौचादि के लिए साथ जाने वाला एक भी सहयोगी सन्त नही था। इतनी निस्पृहता वाले व्यक्तित्व के विषय मे हम सहज समझ सकते है कि उनकी प्रत्यक्ष प्रेरणा किसी को कैसे प्राप्त हो सकती है? हा, आचार्यश्री का व्यक्तित्व अवश्य प्रेरणा का अविरल स्रोत है। आपके जीवन के अणु-अणु से, सम्पूर्ण परिपार्श्व से साधना की प्रेरणा नि:सरित होती रहती है। और मेरे अपने चिन्तन के अनुसार वाणी की प्रेरणा की अपेक्षा व्यक्तित्व की मूक प्रेरणा ही अधिक प्रभावक होती है। एक आर्ष वाक्य है-"**गुरवस्तु मौन व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्न संशया।**" अर्थात् गुरुओं का मौन प्रवचन होता है और शिष्यो के संशय छिन्न-भिन्न हो जाते हैं। अस्तु मैं यह कह सकता हूं कि सयम मे प्रवेश हेतु मुझे आचार्य देव की यो प्रारम्भिक वचनात्मक प्रेरणा तो नही मिली किन्तु उनके भव्यतम व्यक्तित्व ने मुझे साधना मे प्रवेश की अबूझ एवं अद्‌भुत प्रेरणा अवश्य प्रदान की है और आज भी वह प्रेरणा प्रतिपल प्राप्त होती रहती है।

उत्तर-2.

आपने अपने द्वितीय प्रश्न मे आचार्यश्री नानेश के जीवन की मौलिक विशेषताएं जाननी चाही है किन्तु इस प्रश्न मे आपने मेरे समक्ष एक अगाध-अथाह सागर खडा कर दिया है और चाहा है कि इसके अन्तरग मे छिपे मणि-मुक्ताओ को खोज दीजिये। आप स्वय बुद्धिनिष्ठ-प्रज्ञाजीवी हें-विचार करे कि क्या सागर के गर्भ मे छिपी रत्न-राशि का पार पाया जा सकता है? फिर भी चूंकि आपने मौलिक शब्द प्रयुक्त किया है अत: मे उस रत्न राशि-मुक्तानिधि मे से कुछ मणि-मुक्ता निकालने का प्रयास करूँगा।

1. जहा अन्तो तहा बहिं-आचार्य प्रवर के जीवन मे मैने जो सबसे मौलिक एवं महत्त्वपूर्ण विशेषता पाई, वह है उनके जीवन की निश्छलता अथवा अन्तर्बाह्य एकरूपता। **''जहा अंतो तहा बहिं, जहा बहिं तहा अंतो,''** का आगम वाक्य उनके व्यक्तित्व मे पद-पद पर प्रत्येक कोण मे एकाकार-सा प्रतीत होता है। 'अन्दर मे कुछ और बाहर मे कुछ' यह द्विरूपता उनको अच्छी नही लगती। मैं जहां तक सोचता हूं साधक की सच्ची पहचान भी यही है कि वह कितना ऋजुभूत है, अन्तर्बाह्य एकरूप है। धार्मिकता की पहचान कराते हुए प्रभु महावीर ने कहा है-'**सोहि उज्जुय भूयस्स धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई।**' ऋजुभूत, सरल एव शुद्ध हृदय मे ही धर्म ठहर सकता है। कुटिलता अथवा द्विरूपता में धर्म का निवास नही हो सकता है। अन्तर्बाह्य की एकरूपता ही साधक को आत्मा के दर्शन करवाती है और यह एकरूपता ही आचार्य भगवन् के साधक जीवन की विशेषता है।

2. द्रष्टाभाव-आचार्य भगवन् के जीवन की दूसरी मौलिक विशेषता है-स्थित प्रज्ञता अथवा द्रष्टाभाव। किसी भी प्रकार की शुभाशुभ परिस्थिति हो, अपने मन को, अपने परिपार्श्व को अप्रभावित बनाए रखना, आचार्य प्रवर की साधना का मूर्त रूप है। मैंने अनेक बार प्रत्यक्षत: अनुभव किया है कि संघीय व्यवस्थाओ मे जब कभी उतार-चढाव आए, एक सर्वतोमहत् दायित्व पूर्ण पद पर प्रतिष्ठित होने के कारण, उन परिस्थितियो मे मन का उद्वेलित होना स्वाभाविक था, किन्तु आचार्य प्रवर उन क्षणो मे भी द्रष्टाभाव मे स्थिर हो जाते। मेरे जैसे सामान्य साधको के मन मे कई बार उथल-पुथल मच जाती कि आचार्य प्रवर ऐसा निर्णय क्यो नहीं ले रहे है, किन्तु उनका द्रष्टाभाव अद्भुत ही रहता।

यो साधना एवं अनुशासकता दोनो को समन्वित करके चलाना सामान्य बात नही है। बिना आन्तरिक सन्तुलन अथवा द्रष्टाभाव के अनुशासकता हो सकती है, साधना नहीं। आचार्य देव इतने विशाल सघ के अनुशास्ता होते हुए भी साधक है, उच्चकोटि के साधक। हानि-लाभ की सभी परिस्थितियो मे अपने आपको समत्व मे प्रतिष्ठित बनाए रखते है। इस रूप मे आप समत्व योगी तो है ही स्थितप्रज्ञ एवं द्रष्टाभाव के उच्चतम साधक भी हैं।

3. निर्लिप्तता-आचार्य प्रवर के जीवन की तीसरी मौलिक विशेषता मैने देखी 'निर्लिप्तता'। यो साधक जीवन निर्लिप्त जीवन ही होता है किन्तु आचार्य प्रवर महत्तम दायित्वो का निर्वहन करते हुए भी उन सबसे जल कमलवत् निर्लिप्त रहते है।

आम लोगो की यह धारणा होती है कि श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन सघ इतनी प्रवृत्तिया चला रहा है, उसका सालाना लाखो का बजट होता है। क्या यह सब आचार्यश्री के संकेतो के बिना हो सकता है? ये अवश्य इन सभी प्रवृत्तियो मे भाग लेते होगे। लाखो रुपए साहित्य प्रकाशन पर व्यय होते हैं, क्या यह सब बिना आचार्यश्री की प्रेरणा से हो सकता है?

किन्तु मै यहां किसी प्रकार के पूर्वाग्रह से रहित होकर आन्तरिकता पूर्वक कह सकता हूं कि आचार्य प्रवर इन सब प्रवृत्तियो से सर्वथा निर्लिप्त रहते है। यह बात मै इसलिए नही कह रहा हूं कि मै एक गुरुभक्त शिष्य हू-अपितु यह एक नग्न सत्य, यथार्थ का प्रतिपादन है। आचार्य प्रवर की निर्लिप्तता के अनेको प्रसंग मैने अपनी आंखो से देखे है। मुझे अभी भी अच्छी तरह स्मरण आता है-जब आचार्य प्रवर का बम्बई बोरीवली मे वर्षावास था। मे भी उस वर्षावास मे श्री चरणो की सन्निधि मे ही था। एक दिन श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन सघ के तत्कालीन मंत्री श्री पीरदानजी पारख एवं सघ के प्रति सर्वाधिक समर्पित दानवीर श्री गणपतराजजी बोहरा दोनो आचार्य प्रवर से कुछ चर्चा करना चाहते थे। दूसरी मजिल मे, जहा आचार्य प्रवर विराज रहे थे, वहा एकान्त स्थान नही होने से वे आचार्य भगवन् को निवेदन कर ऊपरी तीसरी मजिल पर जहा मै अध्ययनादि किया करता था, लेकर आए। आचार्य भगवन्

एक तरफ खडे हुए थे कि श्री पारखजी ने मुझे संकेत किया कि आप भी चलिये, आचार्यश्री से कुछ चर्चा करना है। मैंने पूर्व में तो कहा-आप ही कर लीजिये किन्तु उन्होने आग्रह किया कि आप भी चलिये, तो मैं भी आचार्य प्रवर के चरणो मे वही निकट खडा हो गया।

बात प्रारम्भ करते हुए श्री पारखजी ने कहा-''हम संघ अध्यक्ष पद के लिए श्री चुन्नीलाल जी मेहता का चयन करना चाहते हैं, आपश्री की क्या राय है?'' आचार्य प्रवर ने बड़ा सीधा और स्पष्ट उत्तर दिया-''क्या आज तक कभी आपने इस विषय में मुझे पूछा है? मैंने कभी आपके ऐसे कार्य मे सुझावात्मक भी भाग लिया है? फिर आज आप मुझे इस विषय में क्यो घसीटते हो?''

इतना कहते ही आचार्य प्रवर सीधे नीचे उतर गए। दोनों सघ प्रमुख अवाक् एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। मैं स्वयं आश्चर्यचकित रह गया कि इतना सचोट स्पष्ट उत्तर कितनी निर्लिप्तता को अभिव्यक्त करता है। जहां तक मेरी स्मृति में है आचार्य प्रवर की शब्दावली उपर्युक्त प्रकार की ही थी।

कुछ क्षणोपरान्त दोनो संघ प्रमुख मेरी ओर उन्मुख होकर कहने लगे-''आचार्य प्रवर तो कुछ नही फरमाते-आप तो कुछ राय दीजिए?''

मैंने कहा-''जब आचार्य भगवन् कुछ नही फरमाते है तो मै क्या बोलूं?''

मूल बात यह कि आचार्य प्रवर संघ के शास्ता होते हुए भी जल-कमलवत् निर्लिप्त रहते है। ऐसी एक नहीं अगणित विशेषताएं आचार्य-प्रवर के व्यक्तित्व मे समाई हुई है या यो कहें गुणात्मक विशेषताओ का पूजीभूत रूप ही आचार्य श्री नानेश का व्यक्तित्व है।

उत्तर-3.

आचार्य प्रवर द्वारा प्रतिपादित समीक्षण ध्यान की उपलब्धि के सन्दर्भ मे आपका प्रश्न कुछ बौना-सा लगता है। आप ध्यानगत अनुभूति या उपलब्धि को शब्द का परिवेश दिलाना चाहते है, जो कि मुझे असम्भव-सा प्रतीत होता है। ध्यान होता है-अन्तर्रमणता मे। और क्या अन्तर्रमणता को अथवा अन्तरंग अनुभूतियो को शब्दो मे व्यक्त किया जा सकता है? शब्दो के द्वारा तो हम अनुभूति के उथले रूप को ही व्यक्त कर पाते है। फिर भी चूंकि आपने पूछा है तो मै चन्द शब्दों मे उस उथले रूप को ही व्यक्त करने का प्रयास कर रहा हूं-

समीक्षण ध्यान की साधना मेरी दृष्टि मे अन्त:प्रवेश की बेजोड प्रक्रिया है। चूंकि मैने इसके अनेक प्रयोग किये हैं-हजारो व्यक्तियो को इसके प्रयोग करवाये है अत: मै अपने प्रत्यक्षीकृत अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि यह साधना आत्म-रमणता की गहराई मे पैठने की सर्वाधिक उपयोगी साधना है। मै जहा तक सोचता हूं समीक्षण ध्यान साधना की सर्वाधिक प्रायोगिकता से एवं अनुभूतियो मे मैं गुजरा हूं। चूंकि मैंने इस ध्यान विद्या पर सैकडो पृष्ठों मे विशालकाय ग्रन्थ भी लिखे हैं जो व्याख्यात्मक ही नही प्रयोगात्मक भी हैं। अस्तु मै अनेक प्रसंगो पर इस भाव भूमिका से अभिभूत हुआ हूं कि उसे शब्दो मे अभिव्यक्ति नही दी जा सकती है। प्रयोगात्मक प्रक्रिया के क्षणो मे अनेक बार देहातीत अवस्था की अनुभूति का प्रसंग आया है। यो ध्यान-साधना की जो सामान्य उपलब्धिया होती है-वृत्तियो का संशोधन, प्रशस्त वृत्तियों का उन्मेष, इन्द्रियों का संयमन, कषायो का शमन, विनय-विवेक का जागरण, अन्तराभिमुखता आदि। इस विषय मे मै कह सकता हूं कि समीक्षण ध्यान साधना के प्रयोगो के पश्चात् इन सभी विषयो मे मुझे यथेष्ट लाभ प्राप्त हुआ है। किन्तु मे इसे समीक्षण ध्यान की अवान्तर उपलब्धियो के रूप में स्वीकार करता हूं। उसकी जो मूल उपलब्धि है वह है साक्षी भाव का जागरण-आत्म रमणता। उसी स्थिति मे अधिक

पैठने का प्रयास अनवरत गतिशील है।

उत्तर-4.

एक गुरु का शिष्य की साधना को सम्पोषित करने मे जो योगदान होना चाहिए, वही योगदान मुझे आराध्य गुरुदेव का प्राप्त हुआ है-हो रहा है। किन्तु जिस रूप मे, जिस अहोभाव एव आत्मीयता के परिवेश मे मुझे योगदान प्राप्त हो रहा है-वह अनुलेख्य है, शब्दातीत है।

आचार्य प्रवर का जीवन ही-जीवन का प्रत्येक क्रियाकलाप अपने आप में मार्गदर्शक होता है। उनके जीवन की संयमीय क्रियाओ के प्रति सजगता अपने आप मे पथ प्रदर्शन का कार्य करती है। उनके आचरण-अनुशीलन का यह दृष्टिकोण मेरी साधना मे सर्वाधिक सहयोगी रहा है कि सयमीय मर्यादाओ की सामान्य सी स्खलनाओ मे **'वज्रादपि कठोर'** होकर सचेत करना एवं शिक्षा प्रदान करते समय **मृदुनि कुसुमादपि** की स्थिति मे प्रवेश कर जाना। राजस्थानी कविता के अनुसार-

गुरु प्रजापति सारखा, घट-घट काढ़े खोट।
भीतर से रक्षा करे ऊपर लगावे चोट॥

आचार्य भगवन् का व्यक्तित्व उस कुम्भकार के समान है जो, ऊपर से चोट करते हुए भी भीतर से रक्षा करता है और इसी व्यक्तित्व का प्रभाव मुझे अपनी सयम साधना मे प्रत्यक्ष परिलक्षित होता है। निष्कर्ष की भाषा मे कहूं तो मेरे जीवन मे संयम-साधना का जो कुछ भी है, वह आचार्य प्रवर का ही प्रदेय है। मेरा अपना तो अपने पास कुछ है ही नहीं।

यहा एक बात और स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि आचार्य प्रवर का योगदान तो वायुमण्डल मे बिखरी ऑक्सीजन के समान प्रतिपल बरस रहा है। यह मेरी ही अपात्रता है कि मै उसे उतने रूप मे ग्रहण नहीं कर पा रहा हूँ।

उत्तर-5.

आपके पांचवे एवं अन्तिम प्रश्न के उत्तर मे अनेक घटना प्रसंग मेरी आंखो के समक्ष चलचित्र की भांति उभरने लगे है, जिन्होने मेरे मानस पर अमिट प्रभाव अंकित कर दिया है। मेरे समक्ष एक समस्या-सी खडी हो गई है कि मै किन घटना प्रसंगो को शब्दो का परिवेश प्रदान करूं और किन्हे छोडूं? फिर भी एक-दो ऐसे प्रसग है, जो भुलाएं नहीं भूले जाते है।

क्रोध-विजय-घटना उस समय की है जब चरितनायक आचार्य पद पर आसीन हो रतलाम एवं इन्दौर के गौरवशाली ऐतिहासिक चातुर्मास पूर्ण कर छत्तीसगढ़ संघ की आग्रह भरी विनती पर छत्तीसगढ़ प्रान्त की ओर पधार रहे थे। मार्ग में कुछ दिन बैतूल विराजना हुआ। वहां अमरावती (बैतूल से 110 मील दूर) से समाज के प्रतिष्ठित श्रावक श्री जवाहरलाल जी मुणोत अपने कुछ साथियो के साथ दर्शनार्थ उपस्थित हुए। आचार्यश्री बैतूलगंज मे गोठीजी के मकान की दूसरी मंजिल पर ठहरे हुए थे। रात्रि में नित्यप्रति की तरह ज्ञान-चर्चा का दौर आरम्भ हुआ। एक बन्धु ने ध्वनिवर्धक यंत्र साधुमर्यादा के अनुकूल है या प्रतिकूल, इस सन्दर्भ मे प्रश्न प्रस्तुत किया। इस पर श्री मुणोतजी खुलकर चर्चा करने लगे। लगभग तीन घण्टे तक तर्क-वितर्क चलता रहा। मुणोत जी आचार्य देव के समक्ष कुछ उत्तेजनापूर्ण शव्दावली का भी प्रयोग करते चले जा रहे थे। समीपस्थ हम सन्तो एवं श्रावको को भी उत्तेजना आ रही थी कि एक आचार्य के समक्ष कैसे बोलना चाहिए, इसका भी विवेक नहीं है। समय अधिक हो जाने के

एक तरफ खड़े हुए थे कि श्री पारखजी ने मुझे संकेत किया कि आप भी चलिये, आचार्यश्री से कुछ चर्चा करना है। मैंने पूर्व मे तो कहा-आप ही कर लीजिये किन्तु उन्होने आग्रह किया कि आप भी चलिये, तो मैं भी आचार्य प्रवर के चरणों में वहीं निकट खड़ा हो गया।

बात प्रारम्भ करते हुए श्री पारखजी ने कहा-''हम संघ अध्यक्ष पद के लिए श्री चुन्नीलाल जी मेहता का चयन करना चाहते हैं, आपश्री की क्या राय है?'' आचार्य प्रवर ने बड़ा सीधा और स्पष्ट उत्तर दिया-''क्या आज तक कभी आपने इस विषय मे मुझे पूछा है? मैंने कभी आपके ऐसे कार्य मे सुझावात्मक भी भाग लिया है? फिर आज आप मुझे इस विषय मे क्यों घसीटते हो?''

इतना कहते ही आचार्य प्रवर सीधे नीचे उतर गए। दोनो संघ प्रमुख अवाक् एक-दूसरे का मुंह देखने लगे। मै स्वयं आश्चर्यचकित रह गया कि इतना सचोट स्पष्ट उत्तर कितनी निर्लिप्तता को अभिव्यक्त करता है। जहां तक मेरी स्मृति मे है आचार्य प्रवर की शब्दावली उपर्युक्त प्रकार की ही थी।

कुछ क्षणोपरान्त दोनों संघ प्रमुख मेरी ओर उन्मुख होकर कहने लगे-''आचार्य प्रवर तो कुछ नहीं फरमाते-आप तो कुछ राय दीजिए?''

मैंने कहा-''जब आचार्य भगवन् कुछ नही फरमाते है तो मै क्या बोलूं?''

मूल बात यह कि आचार्य प्रवर संघ के शास्ता होते हुए भी जल-कमलवत् निर्लिप्त रहते है। ऐसी एक नहीं अगणित विशेषताए आचार्य-प्रवर के व्यक्तित्व में समाई हुई है या यो कहे गुणात्मक विशेषताओं का पूजीभूत रूप ही आचार्य श्री नानेश का व्यक्तित्व है।

उत्तर-3.

आचार्य प्रवर द्वारा प्रतिपादित समीक्षण ध्यान की उपलब्धि के सन्दर्भ में आपका प्रश्न कुछ बौना-सा लगता है। आप ध्यानगत अनुभूति या उपलब्धि को शब्द का परिवेश दिलाना चाहते है, जो कि मुझे असम्भव-सा प्रतीत होता है। ध्यान होता है-अन्तर्रमणता में। और क्या अन्तर्रमणता को अथवा अन्तरंग अनुभूतियो को शब्दों मे व्यक्त किया जा सकता है? शब्दो के द्वारा तो हम अनुभूति के उथले रूप को ही व्यक्त कर पाते है। फिर भी चूंकि आपने पूछा है तो मैं चन्द शब्दो मे उस उथले रूप को ही व्यक्त करने का प्रयास कर रहा हूं-

समीक्षण ध्यान की साधना मेरी दृष्टि मे अन्तःप्रवेश की बेजोड प्रक्रिया है। चूकि मैने इसके अनेक प्रयोग किये है-हजारो व्यक्तियो को इसके प्रयोग करवाये है अतः मैं अपने प्रत्यक्षीकृत अनुभव के आधार पर कह सकता हूं कि यह साधना आत्म-रमणता की गहराई मे पैठने की सर्वाधिक उपयोगी साधना है। मै जहां तक सोचता हू समीक्षण ध्यान साधना की सर्वाधिक प्रायोगिकता से एवं अनुभूतियो में मै गुजरा हूं। चूंकि मैंने इस ध्यान विद्या पर सैकडो पृष्ठो मे विशालकाय ग्रन्थ भी लिखे है जो व्याख्यात्मक ही नही प्रयोगात्मक भी हैं। अस्तु मै अनेक प्रसंगों पर इस भाव भूमिका से अभिभूत हुआ हूं कि उसे शब्दो मे अभिव्यक्ति नही दी जा सकती है। प्रयोगात्मक प्रक्रिया के क्षणों में अनेक बार देहातीत अवस्था की अनुभूति का प्रसंग आया है। यो ध्यान-साधना की जो सामान्य उपलब्धियां होती है-वृत्तियों का संशोधन, प्रशस्त वृत्तियों का उन्मेष, इन्द्रियो का संयमन, कषायो का शमन, विनय-विवेक का जागरण, अन्तराभिमुखता आदि। इस विषय में मै कह सकता हूं कि समीक्षण ध्यान साधना के प्रयोगो के पश्चात् इन सभी विषयो मे मुझे यथेष्ट लाभ प्राप्त हुआ है। किन्तु मै इसे समीक्षण ध्यान की अवान्तर उपलब्धियो के रूप मे स्वीकार करता हूं। उसकी जो मूल उपलब्धि है वह है साक्षी भाव का जागरण-आत्म रमणता। उसी स्थिति मे अधिक

पैठने का प्रयास अनवरत गतिशील है।

उत्तर-4.

एक गुरु का शिष्य की साधना को सम्पोषित करने मे जो योगदान होना चाहिए, वही योगदान मुझे आराध्य गुरुदेव का प्राप्त हुआ है-हो रहा है। किन्तु जिस रूप मे, जिस अहोभाव एव आत्मीयता के परिवेश मे मुझे योगदान प्राप्त हो रहा है-वह अनुलेख्य है, शब्दातीत है।

आचार्य प्रवर का जीवन ही-जीवन का प्रत्येक क्रियाकलाप अपने आप मे मार्गदर्शक होता है। उनके जीवन की संयमीय क्रियाओ के प्रति सजगता अपने आप मे पथ प्रदर्शन का कार्य करती है। उनके आचरण-अनुशीलन का यह दृष्टिकोण मेरी साधना में सर्वाधिक सहयोगी रहा है कि सयमीय मर्यादाओ की सामान्य सी स्खलनाओ मे **'वज्रादपि कठोर'** होकर सचेत करना एव शिक्षा प्रदान करते समय **मृदुनि कुसुमादपि** की स्थिति मे प्रवेश कर जाना। राजस्थानी कविता के अनुसार-

गुरु प्रजापति सारखा, घट-घट काढ़े खोट।
भीतर से रक्षा करे ऊपर लगावे चोट॥

आचार्य भगवन् का व्यक्तित्व उस कुम्भकार के समान है जो, ऊपर से चोट करते हुए भी भीतर से रक्षा करता है और इसी व्यक्तित्व का प्रभाव मुझे अपनी सयम साधना में प्रत्यक्ष परिलक्षित होता है। निष्कर्ष की भाषा मे कहूं तो मेरे जीवन मे संयम-साधना का जो कुछ भी है, वह आचार्य प्रवर का ही प्रदेय है। मेरा अपना तो अपने पास कुछ है ही नहीं।

यहां एक बात और स्पष्ट कर देना चाहता हू कि आचार्य प्रवर का योगदान तो वायुमण्डल मे बिखरी ऑक्सीजन के समान प्रतिपल बरस रहा है। यह मेरी ही अपात्रता है कि मै उसे उतने रूप मे ग्रहण नहीं कर पा रहा हूँ।

उत्तर-5.

आपके पांचवे एवं अन्तिम प्रश्न के उत्तर मे अनेक घटना प्रसंग मेरी आंखो के समक्ष चलचित्र की भाति उभरने लगे है, जिन्होने मेरे मानस पर अमिट प्रभाव अंकित कर दिया है। मेरे समक्ष एक समस्या-सी खडी हो गई है कि मै किन घटना प्रसंगो को शब्दो का परिवेश प्रदान करूँ और किन्हे छोडू? फिर भी एक-दो ऐसे प्रसंग है, जो भुलाएं नहीं भूले जाते है।

क्रोध-विजय-घटना उस समय की है जब चरितनायक आचार्य पद पर आसीन हो रतलाम एवं इन्दौर के गौरवशाली ऐतिहासिक चातुर्मास पूर्ण कर छत्तीसगढ सघ की आग्रह भरी विनती पर छत्तीसगढ प्रान्त की ओर पधार रहे थे। मार्ग में कुछ दिन बैतूल विराजना हुआ। वहां अमरावती (बैतूल से 110 मील दूर) से समाज के प्रतिष्ठित श्रावक श्री जवाहरलाल जी मुणोत अपने कुछ साथियो के साथ दर्शनार्थ उपस्थित हुए। आचार्यश्री बैतूलगज मे गोठीजी के मकान की दूसरी मंजिल पर ठहरे हुए थे। रात्रि मे नित्यप्रति की तरह ज्ञान-चर्चा का दौर आरम्भ हुआ। एक बन्धु ने ध्वनिवर्धक यंत्र साधुमर्यादा के अनुकूल है या प्रतिकूल, इस सन्दर्भ मे प्रश्न प्रस्तुत किया। इस पर श्री मुणोतजी खुलकर चर्चा करने लगे। लगभग तीन घण्टे तक तर्क-वितर्क चलता रहा। मुणोत जी आचार्य देव के समक्ष कुछ उत्तेजनापूर्ण शब्दावली का भी प्रयोग करते चले जा रहे थे। समीपस्थ हम सन्तों एवं श्रावको को भी उत्तेजना आ रही थी कि एक आचार्य के समक्ष कैसे बोलना चाहिए, इसका भी विवेक नही है। समय अधिक हो जाने के

कारण हमने दो-तीन बार इतना ही निवेदन किया कि समय हो गया है। उत्तेजनापूर्ण वातावरण होते हुए भी आचार्यश्री अपनी उसी गम्भीर एव शांत मुद्रा मे कहते जा रहे थे-''मुणोतजी! जरा तटस्थ बन कर चिन्तन करिये। किसी बात का आग्रह हो सकता है, किन्तु दुराग्रह नही। आप चाहे ध्वनिवर्धक यंत्र को श्रमण जीवन के लिए उपयोगी मान सकते है, किन्तु सैद्धान्तिक दृष्टि से आगमिक आधार के बल पर यदि थोडा गंभीरता से सोचेगे तो स्पष्ट हो जावेगा कि यह बात हमे अभी मामूली-सी लग रही है, किन्तु आगे चल कर श्रमण संस्कृति को ही ध्वस्त करने वाली बन जायेगी'' आदि। किन्तु मुणोत जी उस समय आवेशपूर्ण स्थिति में थे अत: वे किसी भी तर्क को मानने को तैयार नही थे।

समय अधिक हो जाने से चर्चा बीच मे ही समाप्त कर दी गई। मुणोत जी उसी समय मांगलिक सुनकर चले गये। दूसरे दिन पुन: अमरावती से लौट कर चले आए और चरणो मे सिर रख कर क्षमायाचना करने लगे। आचार्यश्री के पूछने पर कि रात्रि में ही जाकर प्रात:काल ही वापिस चले आने का क्या कारण हुआ? उनका साथी कहने लगे-महाराजश्री! यहां से कार मे ज्योही रवाना हुए, मैने मुणोतजी से कहा, यदि ऐसी उत्तेजना पूर्ण चर्चा होनेकी सभावना होती तो मै प्रश्न ही नहीं छेडता, किन्तु एक लाभ अवश्य हुआ है कि इस प्रसंग से एक जैनाचार्य को पहचानने का मौका मिला। मैने देखा, तुम अधिक आवेशशील बनते चले गये, उत्तेजना दिलाते चले गए, किन्तु महाराजश्री के चेहरे पर क्रोध की रेखा पैदा होना तो दूर, आवाज मे भी तेजी नही आई। बडे अद्‌भुत योगी साधक है वे। मेरा इतना कहना हुआ कि मुणोतजी मे पश्चात्ताप की अग्नि प्रज्वलित हो उठी और यह पश्चात्ताप अमरावती तक चलता रहा। प्रात: उठकर कहने लगे, ''मैने उस महापुरुष की बहुत आशातना की है, उनकी उस शान्ति ने मेरा हृदय बदल दिया है। मैं अभी पुन: जाकर क्षमायाचना करूंगा।'' और हम सब पुन: सेवा मे उपस्थित हो गए। आचार्य देव ने कहा, ऐसी कोई अवज्ञा की बात नही थी, जहा चर्चा-विचर्चा होती है, स्वर कुछ तेज हो ही जाता है। इसमे अपराध और क्षमायाचना की क्या बात है? आदि।

ऐसी एक नही, अनेक घटनाएं हमारे चरितनायक के जीवन में घटी है, जिनके द्वारा कई व्यक्तियों ने आपकी शान्ति, निष्क्रोध वृत्ति से प्रभावित होकर सदासदा के लिए क्रोध के प्रत्याख्यान ले लिए है।

असह्य वेदना बनाम अदम्य साहस :

दूसरा प्रसंग है जिसने मेरी चेतना को झकझोर दिया। आचार्य देव सहवर्ती संत समुदाय के साथ आरंग से रायपुर की ओर बढ रहे थे कि अशुभ कर्मोदयजनित एक दुर्घटना घटित हो गई। प्रात:काल आरंग से रायपुर की ओर प्रस्थान किया। लगभग ढाई मील पर मार्गवर्ती ग्राम रसनी मे ग्रामवासियो के आग्रह को देखते हुए लगभग आधा घण्टे तक धर्मामृत का पान कराया, तत्पश्चात् वहां से साढे तीन मील पर स्थित लाखोली ग्राम के बाहर विश्राम-गृह पर पधारे। आहार आदि से निवृत्त हो पुन: चार मील पर स्थित नावगांव के लिए प्रस्थान कर दिया। लगभग दो मील मार्ग पार किया होगा कि वर्षा की संभावना को देखते हुए उमरिया मोटर स्टैड पर यात्रियो के लिए निर्मित छपरे मे कुछ समय रुक गए। वर्षा बन्द होने पर पुन: विहार किया और लगभग एक मील चले होगे कि सामने से आते हुए ट्रक से उडने वाले पानी के छीटो से बचने हेतु सडक को छोड़ कर एक ओर बढ रहे थे कि मिट्टी की चिकनाहट एवं सड़क के ढलान के कारण अचानक पैर पिसल गया और सम्पूर्ण शरीर का भार दाएं हाथ पर आ गिरा। परिमाणत: दाएं हाथ की कलाई की हड्डी दो जगह से टूट गई तथा लगभग आधा इंच हड्डी चमडी सहित ऊपर निकल आयी।

उस समय आचार्य देव के साथ श्री कवर मुनिजी चल रहे थे। घोर तपस्वी श्री अमरचन्द जी महाराज एव मै

(लेखक) लगभग पचास कदम की दूरी पर पीछे थे। आचार्य देव को गिरते हुए देखते ही शीघ्र गति से हम भी घटनास्थल पर पहुंच गए। आचार्य देव ने तत्काल जिस अदम्य साहस का परिचय दिया वह वर्णातीत है। आचार्य देव ज्योही बाएं हाथ का सहारा लेकर खडे हुए और दाएं को देखा तो लगभग एक-डेढ इंच हड्डी कलाई से ऊपर चढ आई। आचार्यश्री ने तुरन्त सहवर्ती सन्तो से कहा-"हाथ को दोनो ओर से पकड कर जोर से खींचो।" सोचता हूं कि उस समय की अपनी दशा को, तो तरस आती है अपने आप पर। आचार्य देव ने दुबारा कहा, तब भी मैं तो अधीर बन रोता रहा। हाथ को खींचना तो दूर रहा, उसे स्पर्श करने मे भी काप रहा था, परन्तु घोर तपस्वी श्री अमरचन्दजी म सा तथा मधुर व्याख्यानी श्री कंवरचन्दजी म सा ने दोनो ओर से हाथ पकड कर खींचा, जिससे बाहर निकली हुई हड्डी अन्दर बैठ गई और ऊपर से कपडे की पट्टी कस कर बांध दी गई।

उस असह्य वेदना के क्षण मे भी आचार्य देव की उस सौम्य मुद्रा मे तनिक भी अतर नहीं आया। उसी शात एव सहज मुद्रा मे एक मील का विहार कर नावां गाव पहुचे। सन्त समुदाय कपडो का प्रतिलेखन एवं आर्द्र कपडो को सुखाने मे व्यस्त हो गया। इधर रायपुर श्रावक संघ को इस दुर्घटना की जानकारी मिली तो संध्या प्रतिक्रमण प्रारम्भ होने के कुछ समय पश्चात् विरक्तात्मा श्री सम्पतराज जी धाडीवाल डॉक्टर साहब को लेकर उपस्थित हुए। किन्तु धैर्य की प्रतिमूर्ति आचार्य देव ने सूर्यास्त हो जाने के कारण डॉक्टर साहब को हस्त स्पर्श के लिए सर्वथा निषेध कर दिया कि "मै रात्रि मे कुछ भी उपचार नहीं ले सकता। यदि आप कुछ समय पूर्व पहुच जाते तो उपचार लिया जा सकता था।"

चिकित्सक महोदय ने बडे विनम्र शब्दो मे आचार्य देव से निवेदन किया-"आचार्यश्री, हमने बहुत शीघ्र ही यहां पहुचने का प्रयास किया किन्तु दुर्भाग्य कहे या और कुछ मार्ग मे कार खराब हो गई और हमे कुछ विलम्ब हो गया। अब आप उपचार नही लेना चाहते हे, तो कम से कम मुझे हाथ एवं अगुलियां हिला कर दूर से ही दिखला दीजिए, मुझे उसमे भी कुछ सन्तोष हो जाएगा।"

तदनुसार आचार्य देव ने अपनी कलाई एवं अगुलियो को हिलाने का प्रयास किया किन्तु असह्य वेदना के कारण वैसा नहीं किया जा सका। चिकित्सक महोदय वदन के साथ यह कहते हुए चले कि "स्पर्श किए बिना पूरा निर्णय नहीं लिया जा सकता है, किन्तु सूजन बहुत बढ जाने से लगता हैं हड्डी टूट गई है। अतः कल पुनः आकर योग्य उपचार की व्यवस्था की जानी चाहिए।"

रात्रि मे वेदना असह्य हो गई। हाथ कोहनी तक सूज गया। सामान्य से आघात पर असह्य पीडा का अनुभव होता है, किन्तु आचार्य देव के मुख-कमल पर झलकने वाले सस्मित सौम्य भाव में कहीं कोई परिवर्तन परिलक्षित नहीं हो रहा था। दूसरे दिन उसी वेदना मे वहां से 6-7 मील का विहार कर जोरा गाव पधारे। तब मध्यान्ह तीन बजे के लगभग चिकित्सक आए और अस्थि को व्यवस्थित कर पक्का प्लास्टर बांध दिया। वहा से दूसरे दिन रायपुर पधार गए।

ऐसी कई घटनाए है जिन्हे शब्दो का परिवेश दिया जाय तो विशालकाय ग्रन्थ लिखे जा सकते है। सार संक्षेप मे कहू तो आचार्य प्रवर का व्यक्तित्व ऐसी अनेकानेक घटनाओ का मूर्त रूप है जो चेतना पर सीधा प्रभाव अंकित करता है।

(2)

व्यक्तित्व आज भी जिन्दा है

✍ महास्थविर श्री शांतिमुनि जी म.सा.

जीवन की महत्ता का अंकन :

इस सृष्टि का एक सनातन नियम है, जन्म होता है और मृत्यु होती है। जन्म और मृत्यु के बीच की अवस्था को जीवन कहते है। जीवन के दो रूप आपके समक्ष उपस्थित होते है। एक बाह्य रूप, जो परिदृश्य होता है, जिसे आप सभी देख सकते है, कुछ अंशो मे अनुभव कर सकते है। जीवन का एक दूसरा रूप होता है, जो अदृश्य होता है। उसे केवल जाना जा सकता है, अनुभव किया जा सकता है, किन्तु स्थूल दृष्टि से देखा नही जा सकता। आमतौर पर दृश्यात्मक जीवन पक्ष को आप जीवन कह दिया करते है, उससे जुड़ी घटनाओ के जोड को जीवन कह दिया करते है, लेकिन महापुरुषो का जीवन केवल घटनाओ के आधार पर ही नहीं देखा जा सकता। वस्तुतः जीवन का जो भाव पक्ष होता है, उससे किञ्चित् मात्र ही आप जीवन की महत्ता को समझ सकते है। चूंकि आपकी दृष्टि सूक्ष्मता मे नही जाती, वैसी नहीं बन पाती कि आप भाव पक्ष को देख ले। अतः आपका अंकन होता है-जीवन के बाह्य पक्ष से।

आप देखते है, गुलाब के फूल को जो बाहर से बडा कमनीय और सुदर लगता है। उसका रंग नेत्रों को लुभाने वाला होता है लेकिन उसका महत्त्व केवल रूप-रंग, आकार-प्रकार आदि बाह्य रूप से ही नही होता, उसका महत्व होता है-सुगंध से, सुवास से। जिसे आप देख तो नही पाते लेकिन उसके अस्तित्व का किसी न किसी रूप मे एहसास जरूर करते है।

सूक्ष्मता में गहरा प्रवेश :

आज का सन्दर्भ सर्वविदित है। आचार्यश्री के महनीय जीवन के सन्दर्भ मे विचार करे। आचार्यश्री का जो व्यक्तित्व था, वह एक अलग ही प्रकार की छवि लिए हुए था। आचार्य श्री का आन्तरिक व्यक्तित्व चुम्बकीय व्यक्तित्व था जो दूरस्थ व्यक्ति को भी बरबस खीच लेता था। हालाकि उनके जीवन का बाह्य पक्ष भी कोई कम प्रभावी नही था, लेकिन मै बाह्य पक्ष को इतना महत्त्व नहीं देता। यद्यपि शास्त्रो मे आचार्य के बाह्य पक्ष को भी लिया है। आचार्य की आठ संपदा मे शरीर सपदा और रूप संपदा भी बताई जिसमे शरीर सपदा लगभग बाह्य पक्ष होता है। आचार्य का शरीर कमनीय होना चाहिए। रूप सपदा बताई, जिसमे आचार्य रूप सम्पन्न भी होना चाहिए। इन उल्लेखो से यह जाहिर होता है कि आचार्य मे बाह्य विशेषताए भी होनी चाहिए। शास्त्रकारो ने यह उल्लेख भी किन अर्थो मे किया है, इसे भी जरा गहराई से समझा जाए।

सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि शरीर, फेस कट अच्छा हो, लम्बाई-चौडाई, आकार-प्रकार भी सुदर हो, वह रूपवान् है, लेकिन शास्त्रकारो की दृष्टि इतनी स्थूल नही होती कि शरीर का डीलडौल आदि आकर्षण कैसा है? यथार्थ मे शरीर संपदा का अर्थ है कि शरीर साधना करने व करवाने मे कितना सक्षम है? आचार्य को स्वय को साधना करनी होती है। साधना की सूक्ष्मता मे गहरा प्रवेश करना होता है, साथ ही साथ अपने अधीनस्थ को भी साधना करवानी होती है। तो साधना मे यह शरीर साधन रूप है। वह कितना नीरोग है? कितना सशक्त है? कितना

सामर्थ्यवान् है? शरीर संपदा के अन्तर्गत यह देखा जाता है। इसी प्रकार रूप संपदा मे भी बाह्य रूप नहीं लिया जाता है। अधिकांशतया आप जीवन के बाह्य पक्ष को देखते है, जेसा कि आचार्य श्रीजी के विषय मे अनेकों बार बोला जाता था, मैं भी कई बार कहा करता हू कुछ प्रसगो का ग्रन्थ मे भी उल्लेख किया गया कि आचार्यश्री के सान्निध्य मे बैठना मात्र भी अच्छा लगता है। चेहरे को देखते रहना मात्र भी अच्छा लगता है।

कहने का आशय इतना ही हे कि इस प्रकार का उल्लेख उनके शरीर की सुन्दरता के सन्दर्भ मे नहीं, बल्कि भाव पक्ष की सुन्दरता के सन्दर्भ मे है। शरीर कितना भी सुन्दर क्यो न हो? चेहरा भी कितना ही आकर्षक क्या न हो? लेकिन यदि भाव पक्ष सुन्दर नही तो उनके पास बेठना मात्र आर उन्हे देखना मात्र भी अच्छा नहीं लगता ह। विचार आपके अच्छे है, पवित्र है तो आपके इर्दगिर्द का अेटमॉस्पीयर भी पवित्र होगा, चित्त को आह्लादित आर तृप्त करने वाला होगा।

अद्‌भुत प्रभावकारी व्यक्तित्व :

आचार्यश्री का चरित्र पक्ष भी काफी निर्मल ओर उज्ज्वल रहा ह। मने उनकी लम्बी सन्निद्धि प्राप्त की, उस सान्निध्य मे मैने उनमे कभी विकार नही देखा। अन्यथा साधक बन जाने मात्र से विकार नहीं चले जाया करते। विकार तो अनादिकाल से इस चेतना मे समाये हुए हैं। इस ससार मे जितनी भी आत्माए ह, सभी आत्माओ मे 3 वेद मे से एक वेद का उदय निरतर बना रहता है जो 9वे गुण स्थान से अतीत हो गए, वे अवेदी होते ह, अन्यथा तो एक-न-एक वेद का उदय तो बना ही रहता है। उत्कृष्ट भाव वाली आत्मा हो तो स्त्रीवेद ओर पुरुष वेद का तथा निकृष्ट आत्मा हो तो नपुंसक वेद का उदय रहता है। कुछ विरली आत्माएं होती ह, जो वेदोदय को अकिंचित्कर बना देती है, निस्तेज बना देती है। इस आधार पर मे यह कह सकता हू कि आचार्यश्री की आत्मा एक निर्मल आत्मा थी। यह उनके भाव पक्ष का ही असर था कि जो व्यक्ति को बरबस अपनी ओर खींच लिया करता था।

इस सदर्भ मे बहिने भी कई बार कह दिया करती-'गुरु महाराज भले काई नी बोले, मे अठे बैठी रेवा, तोई जीव राजी व्हे जावे।'

कहने का मतलब है कि केवल देखते रहने मात्र से भी ऊर्जा, एनर्जी मिल जाया करती थी। ऐसे कई व्यक्ति है जो दो मिनट की सन्निधि से भी सतुष्टि पा लिया करते थे। हम भी महिनो, वर्षों बाद विचरण करके दूर-दूर से लौट कर सन्निधि मे आते थे तो सैकडो कि मी की थकान भूल जाया करते थे। आचार्यश्री का कर स्पर्श मिला, सन्निधि मिली कि सब कुछ विस्मृत कर जाते थे। मेरा सन् 1973 का चातुर्मास सरदार शहर हुआ और सन् 1974 का चातुर्मास भी आचार्यश्री की सन्निधि मे वहीं हुआ, चातुर्मास समाप्ति के बाद वहा से आचार्यश्री का देशनोक पदार्पण हुआ, जहां कुछ दीक्षाओ का प्रसंग बना, उनमे से पुरुष मे दो दीक्षाए हुई, जिनमे से एक तो थे गगाशहर के सुराणा परिवार के स्व श्री मोतीलाल जी म सा और दूसरे थे राममुनि जी म सा , जिन्होने सरदार शहर चातुर्मास मे वैराग्य अवस्था मे मेरे पास रह कर अध्ययन किया था। तो इस प्रकार दोनो दीक्षाए सम्पन्न हुई थी। बडी दीक्षा सम्पन्न होते ही उसी दिन आचार्य भगवन् ने मुझसे कहा कि अब तुम छत्तीसगढ जाओ। आप सोचिए, उस समय मे 11 वर्ष की मेरी दीक्षा पर्याय थी, मैने आनाकानी की कि इतनी दूर जाऊगा, मेरा मन कैसे लगेगा? इतनी दूर चला भी जाऊंगा, तो वहा कई वर्ष रहना पडेगा, अपने सघ के कोई भी साधु वहा नही मिलेगे, कैसे क्या होगा?

आचार्यश्री ने बडे गंभीर शब्दो मे फरमाया कि चिता मत करो, सब कुछ अच्छा ही होगा। मैने उसी वक्त हाथ जोड कर कह दिया-''तथास्तु''। मेरे साथ श्री मोतीलाल जी म सा को भेजने का निश्चित किया। वे वृद्ध तो थे ही,

मैं कभी दो मिनट भी उनके पास बैठा नही, मैं उनकी प्रकृति से जरा भी परिचित नहीं। मैंने पुनः निवेदन किया- "गुरुदेव! मैं कैसे रहूंगा?" तो आचार्यश्री ने पुनः कहा कि सब अच्छा होगा। मैंने पुनः तथास्तु कहकर स्वीकार कर लिया। इंगित इशारों पर चलना अपना परम कर्त्तव्य मानकर विहार की तैयारी की। विदाई के समय मुझे खूब रोना आया। लोग कहने लगे कि यह विद्वान् शांति मुनि रो रहा है। स्कूल तक मैं रोता हुआ गया, मांगलिक भी आधी सुनाई, पूरी इन्दरचंद जी म.सा. ने की। वे भी मुझे काफी आश्वस्त करते रहे।

कभी भूल नहीं सकते :

मूल बात मैं यह बता रहा हूं कि उन महापुरुष ने हम सब को काफी स्नेह दिया, वात्सल्य देकर हमारा जीवन घड़ा, हमे पाला, उस उपकृति को कभी विस्मृत नहीं कर सकते। धूल धूसरित पाषाण खण्डों को यह वन्दनीय स्वरूप प्रदान किया, पाट पर बैठने लायक बनाया। उनके समीप आने मात्र से शांति मय और वात्सल्य पूरित वायुमण्डल मिलता था। नवदीक्षित सतों की आचार्यश्री अपने हाथो से सेवा करते थे। कोई बीमार संत यदि साथ मे होते तो रात-रात भर जाग कर सेवा करते थे।

आचार्य पद पर आसीन होने के बाद, उनका प्रथम चातुर्मास रतलाम हुआ। वहां से धार, राजगढ़, झाबुआ की ओर विचरण हुआ, उस समय श्रमण संघ व इस संघ में परस्पर विरोध चलता था। वे गांव वालों को आगे जाकर सिखा दिया करते थे कि मुंह बांधे को आहार पानी नही देना और लोग भी देते नही थे। इंजिन का उबलता हुआ गरम पानी झेल कर बहराया। रेल का संघटा लगता है। एक उपवास का प्रायश्चित्त लेकर लेने की परम्परा देखी है। आचार्यश्री उस गरम पानी को गरने से ठण्डा करके पहले छोटे संतो को पिलाते थे, इतनी उनकी सेवाभावना थी, इतना वात्सल्य उन महापुरुष ने छोटे-छोटे संतों के प्रति उण्डेला था।

उस महापुरुष का चारित्र पक्ष और भाव पक्ष भी काफी निर्मल था। चारित्र पक्ष के अन्तर्गत कभी संयम साधना में किसी प्रकार की स्खलना का प्रसंग बना हो, ऐसी मेरी आत्मा नहीं मानती। यो तो साधना में थोड़ा बहुत उतार-चढ़ाव छद्मस्थ होने के नाते आ जाता है, लेकिन चारित्र पक्ष में कोई वीक पॉइन्ट (Weak Point) हो, ऐसा मैं नहीं मानता। लोगों ने युवाचार्य चयन के सन्दर्भ मे कुछ चर्चाएं उठाई कि राम मुनि के हाथ मे कोई वीक पॉइन्ट (Weak Point) है आदि। परन्तु मेरी आत्मा इसे स्वीकार नहीं करती।

एक बार आचार्यश्री ने स्पष्ट शब्दों मे फरमाया था कि मैं समझ रहा हूं आप लोगो की भावना को, पर मेरी कुछ विवशता है कि मुझे ऐसा निर्णय लेना पड़ रहा है। मैं ये शब्द आज आप लोगो के सामने कह रहा हू। आज हमारे सामने वो विभूति तो नहीं रही। उन्होंने ये शब्द किस कारण से कहे थे यह तो विश्लेषण का विषय है। लेकिन इस विवशता के कारण आज यह संघ इस स्थिति में पहुंचा है। अन्यथा तो आचार्यश्री की पुण्याई पहुंची हुई थी। सारे जैन समाज मे आचार्यश्री जी की प्रभावकता का डंका बज गया था। श्रमण संघ में से भी यही आवाजे उठती कि यदि चरित्र और अनुशासन की निर्मलता चाहिए तो आचार्य नानेश को देखो। तो उन महापुरुष मे चारित्र सम्बन्धी कोई कमजोरी रही तो, ऐसा मैं नहीं मानता। लेकिन समाज सम्बन्धी या और कोई वैचारिक विवशताएं रही हो, यह एक अलग बात है।

बात सत्य सिद्ध हुई :

स्वर्गीय श्रमणी श्रेष्ठ श्री मनोहर कुंवर जी म.सा. जो कि 17 वर्ष पूर्व चातुर्मास काल मे जावरा विराज रहे थे, उस समय आचार्यश्री का चातुर्मास अहमदाबाद मे था। तो वे श्रमणी श्रेष्ठ साधना में विराजे थे। लघुवय मे ही संयम

अंगीकार कर सतत साधना मे संलग्न रहने से उनकी साधना मे काफी निर्मलता आ चुकी थी। उस साधना की अवस्था मे बैठे-बैठे ही उन्हे ऐसा कुछ आभास हुआ और उन्होने भविष्यवाणी करते हुए अपनी शिष्याओ से कहा कि मंगल गान गाओ, विजय मुनि जी आचार्य बनेंगे। साधना की निर्मलता से उन्हे भविष्य का आभास हो जाया करता था, तो उन्होने अन्तर्प्रज्ञा से ऐसी घोषणा कर दी थी।

जब बीकानेर मे युवाचार्य पद की घोषणा होने वाली थी, उस समय मे स्वर्गीय श्रमणी श्रेष्ठा, मरुधरा सिंहनी श्री नानूकवर जी म.सा. चिकपेट बैगलोर मे विराज रही थी। घोषणा सम्बन्धी बात को सुनते ही श्रमणी श्रेष्ठा ने विस्तार से एक पत्र लिखवाया, उस विस्तृत पत्र को लेकर एक आदमी तत्काल वायुयान से आचार्यश्री की सेवा मे पहुंचा और वह पत्र आचार्यश्री को दिया। जिसमे मुख्य रूप से संकेत यही था कि इतनी जल्दी न की जाय। तो इस प्रकार इन दोनो विभूतियो पर सघ को नाज था। इतना लिखवाया, इतना संकेत किया, फिर भी क्या विवशता थी? कह नहीं सकता। मैं तो यह समझता हूं कि ऐसी ही भवितव्यता थी और महान् साधिका श्री मनोहर कंवर जी म.सा ने जो घोषणा की वह भी असत्य सिद्ध नहीं हो सकती थी। उन्होने जो देखा कि विजय मुनि जी आचार्य बनेगे, वह बात सत्य सिद्ध हुई। जो भी हो, लेकिन इस संघ का भविष्य तो उज्ज्वल है।

जाने-माने साधु-संत और बुजुर्ग श्रावको को देखिए आप और सोचिए कि क्या उम्र हैं। वर्षों से पीढ़ियो से इस सम्प्रदाय के श्रावक है और कितने अनुभवी है। कुछ तो अपने अनुभवो के आधार पर इन्होने भविष्य का दर्शन किया होगा, जो कि इस संघ से जुडे हैं। इस संघ के आचार्यश्री विजयराज जी म सा. का व्यक्तित्व गरिमापूर्ण और विनम्रता से भरपूर है। महापुरुष वे ही बनते है जिनमे विनम्रता होती है। बिना विनम्रता के संघ नायक पद मे सुशोभित नहीं होते। बडो के प्रति विनम्रता और छोटो के प्रति आत्मीयता पूर्ण अनुशासन ही संघ नायक की सबसे बडी विशेषता होती है।

असीम आनन्दानुभूति हुई :

बहुत उपकार आचार्यश्री ने हम सभी पर किया। लेकिन पिछले वर्षों मे ऐसी ही कुछ परिस्थितियां निर्मित हुई जिसकी वजह से हमे निकलना पड़ा। जिस घर को इतनी मेहनत करके बनाते है और उस घर को छोड़ कर निकलना कितना मुश्किल हो जाता है, यह आप भी जानते है और यह हम जानते है कि कैसी-कैसी विकट परिस्थितियो से हमे सामना करना पडा और जिस कण्डीशन मे हम निकले, उस वक्त स्थिति यह थी कि अब हमे जगह भी मिलेगी या नहीं? खैर, जो कुछ भी हुआ, जैसे भी हुआ आप सभी देख ही रहे हैं तो हमारी पीड़ा को हम ही जानते है।

उस महापुरुष ने अब तक जो स्नेह दिया, प्यार दिया उस बदौलत आज भी बच्चा-बच्चा कुर्बान है। मैंने श्री राममुनि जी से कहा था कि जो स्नेह आचार्यश्री ने दिया, आप भी वहीं देगे तो आपका शासन चलेगा। डंडे के बल पर धर्म शासन नहीं चलता है। लोग कहते थे कि आचार्यश्री ने भेड़ो को चराया था और प्रेम मुनि जी म.सा ने कहा कि इनको तो शेरो को चराना है। इन शेरो को डडे के बल पर नही बल्कि प्रेम और स्नेह से बकरी बना कर चरा सकते हो, तो अनेक रूपो मे परिस्थितियां उत्पन्न हुई। कहने का आशय इतना ही है कि आचार्यश्री का आशीर्वाद हम सभी पर रहा है और रहेगा, ऐसा विश्वास है।

वैसे पूर्व मे भी संघ अनेक विकट परिस्थितियों से गुजरा है और जब-जब ऐसी स्थितियां निर्मित हुई है तब-तब क्रांति घटित हुई है। पूर्व मे भी आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. के नाम की सम्प्रदाय चली जो हुक्मगच्छीय सम्प्रदाय के नाम से जानी जाती है। क्रातिकारी आचार्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा. भी अपने गुरु श्री लालचंद जी म सा.

को छोड़ कर निकले, उस समय भी चार वर्ष तक उनकी खूब बुराई की। लोगो से कहते कि इन्हें आहार-पानी नहीं देना, इनके व्याख्यान नहीं कराना आदि। इसका सारा उल्लेख उसी सघ से निकली पुस्तक मे मिलता है। बाद मे चार साल बाद उन्ही गुरु ने कहा कि वह तो महान् आत्मा है, यह चौथे आरे की बानगी है। मैने इनकी बुराई मे कोई कसर नही रखी और इन्होने मेरे गुणगान करने मे कसर नही रखी। इस प्रकार उतार-चढ़ाव की घाटियां पार करता हुआ आज यह संघ विस्तृत हुआ है।

तो मूल बात मै बता रहा हूं कि जब आचार्यश्री के संथारे की बात मैने सुनी, तत्काल मै पहले निष्कर्ष पर पहुचा और जब मै वहां गया तो 15-20 मिनट के पिरीयड में लगभग मै लगातार टकटकी लगाए आचार्यश्री को देखता रहा और आचार्यश्री भी मुझे देखते रहे। उस वक्त ऐसा लगा जैसे आचार्यश्री मुझे खूब जी भर कर देख लेना चाहते हो और मै भी उन्हें देख लेना चाहता हूं। उनकी आत्मा बहुत तृप्त हुई। वे तो विवशता से बंधे थे, उन्हे तो सब कुछ निभा कर चलना था। जो भी हो दर्शन करके मेरी आत्मा काफी आह्लादित हुई।

चातुर्मास सार्थक हो गया :

जब हम संघ से अलग हुए थे, तब लास्ट मे मैने आचार्यश्री से कहा था कि गुरुदेव, हम आपके और आप हमारे दिल मे बैठे हुए है। न आप हमे भूल सकते हैं और न हम आपको भुला सकते है। आप तो हमारे रोम-रोम मे समाए हुए है। हम आपको न तो भूले है, न भूलेगे। यह तो प्रकृति का नियम है। जो भवितव्यता है, उसे टाला नहीं जा सकता। तीन वर्ष 25 दिन बाद पुनः मुझे अतिम दर्शन हुए। मुझे तो उनका आशीर्वाद अंतरंग से प्राप्त हो गया। इसे केवल मै मेरा ही सौभाग्य नही मानता, बल्कि पूरे संघ का सौभाग्य मानता हूं। इन अर्थों मे सेक्टर 4 का मेरा चातुर्मास सार्थक हो गया।

हम तो आचार्यश्री के हाथो घडे हुए है और उन्ही के उच्च संस्कार हम मे आए हुए हैं। उनका महनीय व्यक्तित्व था। जो कुछ भी उतार-चढ़ाव आए, ऐसे पूर्व मे भी आए थे। लेकिन हमने क्षमायाचना कर ली थी और आज भी कर रहा हू। उनकी वह साधना उन्हे चरमोत्कर्ष तक पहुंचाए। यह तो संयोग-वियोग होते हैं। खेद जरूर होता हैं लेकिन हम दुःख न माने। हमें दुःख तब होता है जब हमारा स्वार्थ बाधित होता है।

गत वर्ष श्रमणी रत्ना श्री नानूकंवर जी म.सा. हमारे बीच से उठ गए, लेकिन मेरी आंखो मे आंसू नहीं आए। वैसे मै दिल का इतना कमजोर हूं कि किसी को मरते देख लूं तो मेरी आंखों मे भी आसू आ जाते हैं। लेकिन उस समय नही आए। जीवन के शाश्वत सत्य को समझ ले तो क्या हम रोएं? हम उन्हे कभी नहीं भूल सकेगे। जिस व्यक्तित्व से आंतरिक जुड़ाव हो जाता है, उससे कभी अलग नही हुआ जा सकता है। आचार्यश्री का व्यक्तित्व भी ऐसा ही था। उनका भाव पक्ष हमारे अंतरंग से जुडा हुआ है। जो आशीर्वाद, अंतिम समय मे हमें मिला वो सदा साथ मे रहेगा। अभी-अभी कुछ पंक्तिया बनाई है, उन्हे प्रस्तुत कर रहा हूं-

कभी न भूल सकेंगे जिसको, वह व्यक्तित्व गया कहां है?
देखें अपने निर्मल मन में, कण-कण में है अभी यहां है।
उपकृति उनकी जो हम पर, उसे कभी ना भूलेंगे हम,
इसी रूप में जीवन सृष्टा गए कहां वे जहां-तहां है॥

(3)

आचार्य नानेश का स्वर्णिम अतीत

✍ महास्थविर पूज्य श्री शान्ति मुनि जी म.सा.

किसी भी व्यक्ति के जीवन वृत्त को कलमबद्ध करना सामान्य लेखक के लिए भी सहज सुकर होता है, क्योकि वृत्त का अर्थ होता है घटनाओ की परिक्रमा, घटनाओ को भाषा का परिवेश देना। यह कार्य उतना कठिन नही है किन्तु किसी महनीय/आदर्श व्यक्तित्व को शब्दबद्ध करना सहज नहीं है। घटनाए परिदृश्य होती है जबकि व्यक्तित्व अदृश्य होता है। अत: घटनाओ के आधार पर व्यक्तित्व का अकन करना व्यक्तित्व को बौना बनाना है या उसके साथ अन्याय करना है।

अनन्त-अनन्त उपकृति के केन्द्र आचार्य श्री नानेश के साधनागत व्यक्तित्व के विषय मे कुछ लिखना उनके व्यक्तित्व को बौना बनाना ही होगा किन्तु अधिकाश व्यक्तियो की दृष्टि स्थूलग्राही होती है। उन्हे स्थूल घटनाए ही प्रभावित करती है। यही नहीं उनकी प्रज्ञा घटनाओ को ही समझ पाती है, अत: उन्हीं का लेखन जीवन वृत्त माना जाने लगा।

आचार्य श्री नानेश का साधनाकालीन व्यक्तित्व अत्यन्त सौम्य किन्तु तेजस्वी रहा है। अपने साधनाकाल मे उन्होने जिस गहराई का स्पर्श किया वह वर्णनातीत है। ज्यो-ज्यो वे साधना की गहराई मे उतरते गये त्यो-त्यों उनका आन्तरिक व्यक्तित्व निखरता गया।

मेरी अपनी दृष्टि से उनके सम्पूर्ण जीवन का लगभग एक चौथाई भाग साधना काल रहा है। विक्रम सवत् 1996 मे उन्होने अपने आराध्य आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा के चरणो मे साधना हेतु अपने आपको समर्पित कर दिया था और विक्रम सवत् 2019 मे उन्होने उत्तराधिकार के रूप मे सघ व्यवस्था का दायित्व अपने सशक्त कधो पर ले लिया था। इसके बीच का जो तेईस वर्ष का काल रहा वही मेरी दृष्टि मे साधना या साधना के समुत्कर्ष का काल रहा है। इस अवधि मे वे ज्ञानार्जन, सेवा और समर्पण के प्रति अनन्य भाव से समर्पित हो गए थे। यही काल उनके भविष्य की आधारशिला का काल रहा है।

मेरी दृष्टि मे साधना काल ही जीवन का स्वर्णिम काल माना जा सकता है, जिसमे निरन्तर चेतना के ऊर्ध्वारोहण का सकल्प ही नहीं बना रहता अपितु जीवन का प्रत्येक क्षण उसी के प्रति समर्पित रहता है, गतिशील रहता है।

साधना से यहा मेरा अभिप्रेत चैतन्य जागरण से है। जैसा कि प्रभु महावीर ने अपनी प्रथम देशना आचाराग सूत्र मे कहा है-

"सुत्ता अमुणि मुणिणो सया जागरन्ति"

अर्थात् जो जागृत चेतन्य है वही मुनि है, वही साधक है। आचार्य श्री नानेश अपनी साधना काल मे ऐसे ही जागृत चेता रहे हैं। उनके साधना काल का जितना मैंने अध्ययन किया, उसके अनुसार वे अधिकाश क्षणों में ज्ञानार्जन एव गुरु सेवा समर्पण मे तल्लीन रहा करते थे। सामाजिक या साम्प्रदायिक चर्चाओ से दूर अपने उच्चतम लक्ष्य के प्रति ही समर्पित रहते थे। उनके व्यक्तित्व मे जितना भी चुम्बकीय आकर्षण था, वह उनकी उस साधना का ही

प्रतिफलन था। गुरु सन्निधि में की गई उस साधना ने ही उनमें सागर-सी गहनता-गभीरता उत्पन्न की थी तो चन्द्र सी सौम्यता के साथ सूर्य-सी तेजस्विता भी निर्मित की। उनके विराट व्यक्तित्व पर दृष्टिपात करें तो उनके जीवन में घटित होने वाली वे सभी घटनाएं बचकानी बौनी-सी प्रतीत होती हैं, यही नहीं उनके व्यक्तित्व को बौना बनाती-सी प्रतीत होती हैं, जिनका कि हम जीवन वृत्त में बड़े गर्व से उल्लेख करते हैं। आचार्य श्री नानेश के गरिमा मण्डित व्यक्तित्व में घटनाओं का कोई महत्त्व नहीं है।

यों भी हम चिन्तन करें तो एक साधक जो साधना का समुज्ज्वल लक्ष्य लेकर चलता है, उसका घटनाओ या चमत्कारों से कोई सम्बन्ध कैसे हो सकता है? क्योकि साधना का सम्बन्ध स्थूल जीवन से नहीं, भावात्मकता से होता है और भावात्मकता घटनाओं से सम्बद्ध नहीं होती हैं। साधना अर्थात् चेतना का विशुद्ध-विशुद्धतम भाव जो कि शब्दबद्ध भी नहीं हो सकता है।

इसी आधार पर मैं प्रारम्भ में ही कह गया हूं कि व्यक्तित्व वह चाहे आचार्य श्री नानेश का हो या और किसी का शब्दबद्ध नहीं हो सकता। यह सब मैं साधिकार लिख या बोल सकता हूं क्योंकि मैं आचार्य श्री नानेश का अनन्य कृपापात्र अन्तेवासी साधक रहा हूं और उनकी साधना के ऊर्जस्विल आभावलय से प्रभावित-आप्लावित रहा हूं। मेरे जीवन के सृजन में उनके आभावलय का विशेष योगदान रहा है। मुझ पर ही नहीं मेरी जैसी अनेक आत्माओ पर उस आभा मंडल ने अपना अदृश्य प्रभाव छोड़ा है। आज जो उनका पुण्य स्मरण किया जा रहा है वह उनकी उपकृति के समक्ष ना कुछ ही है। उनकी उपकृति को शब्दो से व्यक्त करके चुकाया नहीं जा सकता है।

यह तो हुई आचार्य श्री नानेश के उपकृति पूर्ण साधनाकाल की चर्चा। इस अवधि अर्थात् विक्रम संवत् 2019 के बाद उनके जीवन का अनुशासकत्व काल प्रारम्भ होता है। मेरी दृष्टि मे साधक होने का जो महत्त्व है वह अनुशासक होने में नहीं है। इसी आधार पर मैंने उनके साधनाकाल को स्वर्णिम काल की संज्ञा दी है।

साधकत्व स्व केन्द्रित होता है तो अनुशासकत्व पर केन्द्रित। साधक चेतना का सम्बन्ध स्वचेतना से होता है तो अनुशासक को स्व केन्द्र से हट कर पर चेतना पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है। साधना वैयक्तिक होती है और अनुशासकत्व में वैयक्तिकता छिन्न-भिन्न होती है। साधना का सम्बन्ध निजत्व-एकत्व से होता है तो अनुशासकत्व का सम्बन्ध समूह से होता है। मैं तो अपने अनुभवों के आधार पर यहां तक कहने को तैयार हूं कि साधना चेतना को ऊर्ध्वगमन को प्रतिबंधित करता है। अतएव एक सामान्य साधक होना जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना एक कुशल अनुशासक होना महत्त्वपूर्ण नहीं है। एक अच्छे से अच्छे अनुशासक के लिए अपनी आत्मा की सहजता-सरलता एव अप्रभावकता बनाये रखना अत्यन्त कठिन हो जाता है, जबकि एक साधक उन्हे सहज बनाए रख सकता है। यही कारण है कि जैन धर्म-दर्शन ने वीतराग भगवन्तों को अनुशासक के पद पर नहीं बिठाया क्योंकि वीतरागता का अनुशासन के साथ तालमेल नहीं बैठता है। साधना वीतरागत्व की उपलब्धि के लिए होती है और अनुशासकत्व वीतरागत्व को प्रतिबंधित करता है। सदैव विनम्रता-सरलता साधकत्व का अग है तो अनुशासक को **"वज्रादपि कठोराणि मृदुनि कुसुमादपि"** का मार्ग अपनाना पडता है और वज्र से भी कठोर होना साधना का लक्ष्य या साधक का अभिप्रेत कथमपि नहीं हो सकता है। साधक का आदर्श तो सदैव **"मृदुनि कुसुमादपि"** ही रहना चाहिए क्योंकि वह ऋजुता एवं मृदुता ही अपने चरम-परम लक्ष्य मुक्ति के द्वार उद्घाटित करती है।

अस्तु, मैं साधना काल को ही जीवन का स्वर्णिम काल मानने को कटिबद्ध हूं। अनुशासकत्व का काल चाहे वह आचार्य श्री नानेश का हो या अन्य किसी का, उतना महत्त्वपूर्ण नहीं माना जाता।

आचार्य श्री नानेश को अपने अनुशासकत्व काल मे अनेक उतार चढ़ावो से गुजरना पडा है। अनेक विप्रतिपत्तियो का सामना करना पडा है, जिनका कि मैं प्रत्यक्ष साक्षी रहा हू।

आचार्य श्री नानेश को आचार्य पद पर समासीन होते ही श्रमण सघ (एक साधु सस्था) से अलग हो जाने से सम्बन्धित चर्चाओ से झूझना पडा और कई वर्षों तक आचार्य श्री का बहुमूल्य समय इन्हीं समाधानो में लगा रहा। इस समस्या से उबरे न उबरे कि एक अन्य श्रमण सस्था पडित श्री समर्थमल जी म सा से सम्बन्ध विच्छेद क्यो हुआ, इस जिज्ञासा ने एक लम्बा समय ले लिया। इसी प्रकार की अन्य अनेक समस्याओ के समाधान मे ही उनके अनुशासकत्व का बहुत-सा काल जाया हो गया, जिसमे कि उनकी साधना को बहुत कम समय मिल पाया।

जिनशासन मे आचार्य का पद सघ नेतृत्त्व के दायित्व का पद होता है और सघ कोई एक प्रकार की मानसिकता वाले व्यक्तियो का समूह नहीं होता है। इस विषय मे आचार्य श्री स्वयं कई बार कहा करते थे कि "भाई, ये वन-वन की लकडियां हैं, इन्हे सगठित रखना सरल काम नहीं है।" तो इससे स्पष्ट निष्कर्ष निकलता है कि आचार्य को सघीय व्यवस्थाओ के संदर्भ मे अनेक बार ऊचे-नीचे विचारो से जूझना पडता है, जहां उनकी अपनी वैयक्तिक साधना गौण हो जाती है और सामाजिक स्थिति मुख्य हो जाती है जो कि साधक का अभिप्रेत नहीं है।

आचार्यत्व की गरिमा को एक धूमिल-सा लाभ, जिसे मैं लाभ नहीं मानता, अवश्य प्रतीत होता है कि उसे अत्यधिक सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त होती है, मान-सम्मान अधिक मिलता है। उसकी यश-कीर्ति सुदूर एव सुदीर्घ काल तक फैलती है। किन्तु यह तो एक पुण्य प्रकृति का उदय मात्र है और उदय भाव तो मोक्ष का प्रतिबन्धक ही माना गया है। अस्तु, यह लाभ भी यथार्थ मे साधकत्व का प्रतिबन्धक ही बनता है।

आचार्यश्री नानेश ने अपने साधनाकाल मे जो कुछ भी अर्जित किया वह अमूल्य था, जबकि उनके आचार्य काल की उपलब्धि को उतना बहुमूल्य नहीं कहा जा सकता क्योकि साधना काल की उपलब्धि संवर और निर्जरा के रूप मे थी और आचार्यत्व काल की उपलब्धि पुण्योदय या पुण्यप्रकर्ष के रूप मे थी।

मैं एकान्ततः यह नहीं कहता हूं कि आचार्यत्व के काल मे सवर-निर्जरा या किसी प्रकार की साधना नहीं होती है, किन्तु साधना काल की तुलना मे उसे बिठा पाना बहुत कठिन है। आचार्य श्री नानेश ने अपने आचार्य काल मे जिनशासन की प्रभावना का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। जो इतिहास की धरोहर मानी जा सकती है। विश्व समस्याओ के समाधान के लिए उनकी देन समता दर्शन एवं समीक्षण ध्यान महत्त्वपूर्ण आयाम माने जा सकते हैं, किन्तु सामाजिक अकर्मण्यता के कारण ये सिद्धान्त भी एक सीमित दायरे मे सिमट कर रह गये। इनके द्वारा आम जनमानस को अथवा विश्व चेतना को जो लाभ मिलने चाहिए थे, नहीं मिल सके और ये आचार्य प्रवर की एक सामान्य-सी प्रतिष्ठा के हेतु बन कर रह गए।

आचार्य श्री नानेश निश्चित ही एक तेजस्वी पुण्य पुरुष थे। उनकी पुण्य प्रभा ने उन्हे एक विशाल संघ का नायक बनाया, एक बृहत् शिष्य शिष्या समुदाय का आचार्य बनाया, अपनी धवल कीर्ति को सुदूर तक फैलाया और उन्हे बेहद ख्याति प्राप्त करवाई, किन्तु मैं इसे अमूल्य उपलब्धि नहीं मानता। यह सब पुण्योदय का खेल है जो किसी भी पुण्य पुरुष के जीवन मे हो सकता है। इससे आचार्य श्री नानेश के जीवन को उच्चतम प्रतिष्ठित नहीं किया जा सकता है।

जैनत्व दर्शन दृष्टि से पुण्योदय उच्चता या आदर्श जीवन का मानदण्ड नहीं हो सकता है। आचार्यत्व की गरिमा उसके त्याग, उसकी साधना एव उसकी चारित्रिक सुवास मे रही हुई है और वह भी आचार्य नानेश के जीवन

मे भरपूर थी। अपने साधनाकाल में उन्होने त्याग, साधना एव चारित्र की बहुत अधिक सौरभ एकत्रित की थी और वही उनके जीवन की अमूल्य धरोहर थी, जो उन्हे आचार्यत्व के पद पर प्रतिष्ठित कर गई किन्तु आचार्यत्व के पद पर प्रतिष्ठित होने के बाद उनके जीवन मे जो संघर्षों का दौर चला, सामाजिक, साम्प्रदायिक स्थितियों का विस्फोट हुआ और सर्वत्र द्वन्द्वों का सामना करना पड़ा उसने उस मौलिक साधना में व्यवधान प्रस्तुत किए। यह अलग बात है कि आचार्य श्री ने इन सघर्षों में भी अपने संतुलन को विचलित नही होने दिया। विकट से विकट परिस्थितियो मे भी उनका समत्व यथावत् बना रहा। भयंकर आवेश उत्पन्न करने वाली परिस्थितियो मे भी समत्व मे स्थिर रहते हुए मैने उन्हे देखा है, जबकि उनकी आंखें गरल के समक्ष अमृत बरसाती रही। यही नही सामने वाले व्यक्ति को भी मोम की तरह पिघलते हुए मैंने देखा है, जिसका कि उल्लेख मैने "**अन्तर्पथ के यात्री आचार्य श्री नानेश**" नामक ग्रन्थ मे किया है।

इस समत्व और सन्तुलन को मै उनकी साधना का चमत्कार ही मानता हू। अपने साधना काल मे उन्होंने इतना मनोबल आत्मबल अर्जित कर लिया था कि कोई भी परिस्थिति उनके अपने समीकरण को ध्वस्त नहीं कर सकती थी और इसी आधार पर उन्होने अनेक प्रसगो पर अपने प्रबल विरोधियो को भी झुकने को विवश कर दिया था। उनकी साधना का अपना एक आभावलय था, जिसकी परिधि में आकर विरोधी भी विरोध को भूल कर समर्थक ही नही उपासक बन जाता था।

इतना सब होने पर भी मै यह कह सकता हूं कि उनकी साधना का यह चमत्कार पूर्ण प्रभाव आपके जीवन के सध्याकाल तक यथावत् नहीं रह पाया। जैसे एक सामान्य व्यक्ति के जीवन मे अनेक उतार-चढाव, आरोह-अवरोह के प्रसंग आते हैं, जीवन अनेक प्रकार की पेचीदगियो मे उलझ जाता है और साधना के प्रभाव मे कुछ अतर पड़ जाता है अर्थात् कभी साधना की गहराई बढ जाती है तो कभी उसमे कुछ उथलापन-सा आ जाता है। यही स्थिति आचार्य प्रवर के जीवन की अपने संध्याकाल मे रही है। आचार्य प्रवर का जीवन चूंकि एक सम्प्रदाय के अनुशासक का जीवन था और जहां सम्प्रदाय है वहा कहीं न कही 'वाद' का प्रवेश भी हो जाता है अतः वहां सम्प्रदाय और सम्प्रदायेतर के भाव मुखर हो जाते हैं। ऐसी स्थिति मे अनुशासक का जीवन अनेक विप्रतिपत्तियो का शिकार हो जाता है। आचार्य प्रवर ने अपने जीवन को इन स्थितियो से बचाये रखने का भरसक प्रयास किया है किन्तु जीवन के सांध्य की विवशता ने वैसा नही होने दिया। उनके इर्द-गिर्द की परिस्थितियो ने सृजन-संगठन के बजाय विध्वंस-विघटन का वातावरण निर्मित किया। उसका परिणाम था संघ विभाजन के द्वारा एक बहुत बडे प्रबुद्ध समुदाय का आचार्य श्री के प्रति अनन्य आस्था होते हुए भी हस्तान्तरित व्यवस्था से अलग हो-जाना अथवा अव्यवस्था से अपने आप को अलग कर देना।

यह आचार्य श्री नानेश की साधना का अथवा उनकी पुण्यप्रकर्षता का प्रभाव ही था कि उनके अनुशासन को कभी किसी ने नहीं नकारा न किसी ने उनके अनुशासकत्व से बगावत की कल्पना ही की। चूंकि उनका अनुशासन धर्मानुशासन था, स्नेह प्यार दुलार भरा अनुशासन था। उनका अनुशासन साधना के प्रकर्ष से उपजा अनुशासन था। उनके अनुशासन मे जीवन्त आत्मीयता, मृदुलता व निश्छलता का त्रिवेणी सगम था। अतएव ऐसे आत्मीयतापूर्ण अनुशासन से अलग हटने की कल्पना ही क्यो कर हो सकती है, किन्तु अनुशासन हस्तान्तरित होने पर जब उसमें स्नेह, प्यार, दुलार, आत्मीयता, मृदुलता, निश्छलता जैसा व्यवहार तो दूर वैसे शब्द भी नदारद होने लगे तो सघ-विभाजन जैसी परिस्थितियां निर्मित हुई। किन्तु आचार्य श्री नानेश के प्रभावक अनुशासन, उनकी अनल्प अनन्य उपकृति को कभी किसी ने नहीं नकारा। संघ का प्रत्येक सदस्य चाहे, वह किसी भी सघ का हो, जो उनकी उपकृति

का पात्र रहा है वह उनके उपकारो को कभी भुला नहीं सकता।

मै अपने लिए तो निर्विवाद रूप से यह कह ही सकता हूँ कि मे आज भी उस महनीय व्यक्तित्व की उपकृति के तले अवनत हूँ। मेरे लिए उनके गुरुत्व की गरिमा बेजोड थी। उन्होंने मुझ जैसे अनघड पत्थर को कुछ आकार देने का प्रयास किया, किन्तु मै उसका प्रतिसाद कुछ भी नहीं दे सका। इन अर्थों मे मै अपने आपको कृतघ्न भी कह दूँ तो चलेगा। किन्तु यहाँ इतना स्पष्ट कर दूँ कि यह सघीय अव्यवस्था जन्य मेरी विवशता थी। मे अन्त: करण की साक्षीपूर्वक कह सकता हूँ कि उनकी हुई अवज्ञा के उपरान्त भी उनकी जिनशासन से अनुप्राणित आज्ञाओ का मैने तहे दिल से पालन किया है। और आज भी मैं उनकी आज्ञाओ की अनुपालना ही कर रहा हूँ। सामान्य व्यक्ति या बद्धमूल धारणा वाले व्यक्ति भले ही इस को उस रूप मे न समझ पायें किन्तु यह नितान्त अनाग्रह पूर्ण यथार्थ है। वैसे आचार्य प्रवर ने हम बालको पर जो उपकार किया है उसका कोई परिदेय हो भी नहीं सकता है। ऐसे महत् उपकार का परिदेय बदला केवल अन्तिम समय ही कुछ शारीरिक सेवा कर देना कथमपि नही हो सकता है। यह सेवा तो एक सामान्य-सा सेवक भी कर सकता है। थोथा-सा आर्थिक सयोजन भी कर सकता है। साधना के क्षेत्र मे किये गये महत उपकार को शारीरिक सेवा से तोलना नितान्त बचकाना पन या नासमझी है। जैसे सामायिक साधना का कोई भौतिक मूल्य नही होता-उसकी तुलना ससार के किसी भी पदार्थ से नही की जा सकती, वैसे ही गुरु के उपकार को उनकी शारीरिक सेवा से नहीं तोला जा सकता है।

गुरु का परिदेय हो सकता है उसके पद चिन्हो पर-निर्देशो पर चलकर उनके पथ को प्रशस्त करना उनके द्वारा बताये मार्ग को आत्मसात कर लेना। और इन अर्थों मे मुझे आत्म सतोष है कि उनकी सान्ध्य बेला मे उनके द्वारा दैहिक भिन्नता या दूरी के उपरान्त भी मैंने अपने शिष्यत्व को धूमिल नही किया है।

यहाँ मै एक बात और स्पष्ट कर देना चाहूँगा कि आचार्य श्री नानेश अपने साधना काल की तरह आचार्यत्व के पिछले वर्षों मे स्व केन्द्रित या स्वस्थ नहीं रह पाये थे और किसी बहुत बडी विवशता की स्थिति मे ही उन्होने अपनी अनुशासन व्यवस्था को हस्तान्तरित करने का निर्णय लिया था, अन्यथा उनके द्वारा अनुशासित सघ-सन्त सती समुदाय इस रूप मे कभी विभाजित नहीं होता। उनकी जीवन्त साधना का प्रभाव इतना कमजोर नही था कि उनके द्वारा पालित-पोषित साधु-साध्वी उनके अनुशासन से यो किनारा कर ले। किन्तु उनकी मजबूरी केवल व्यवस्थाओ के हस्तान्तरण मे ही रही थी और फिर तीर उनके हाथ से निकल चुका था। अनुशासन और किन्ही अशक्त हाथो मे चला गया था, जिसका कि परिणाम था सघ-विभाजन।

इसे हम नियति या भवितव्यता भी कह सकते है कि ऐसा होना ही था हुआ। पर आचार्य श्री नानेश के प्रति श्रद्धा-आस्था मे कही कोई न्यूनता परिलक्षित नही हुई। उनकी करुणापूत दृष्टि, उनका अनन्य आत्मीय भाव, उनकी स्नेहपूर्ण हार्दिकता एवं उनके मृदुल व्यवहार को कभी भुला नही पाया और न कभी भुला पायेगा,यही उनके गुरुत्व की गरिमा है, यही उनकी साधना का परिपार्श्विक प्रभाव है। इसी आधार पर मै प्रारम्भ मे कह गया हूँ कि उनकी साधना का वह काल स्वर्णित काल था, जिसमे उन्होंने बहुत कुछ सृजित किया था, जो अपने परिपार्श्व को ताजन्म -प्रभावित आप्लावित करता रहा।

अन्त मे मेरी यही मगल अभिप्सा है कि मै सदा-सदा उनके द्वारा निर्देशित जिनशासन सेवा एव आत्मोत्कर्ष के मार्ग पर गतिशील रह कर उनके उपकारो से उऋण होता रहूँ। और शिष्यत्व की योग्यता तक पहुच सकूं, यही मेरी अपने अनन्त-अनन्त उपकृति के केन्द्र आराध्य गुरुदेव के प्रति हार्दिक श्रद्धाजलि है। इत्यल ❖ ❖ ❖

मैंने मिश्री के माधुर्य को चखा है

✍ प्रवचनकार : श्री प्रेममुनि जी म.सा.

मिश्री के माधुर्य का जितना अनुभव जीभ करती है, उसे व्यक्त करने की सामर्थ्य शब्दों में नहीं। क्योकि माधुर्य अनुभूति का विषय है। अभिव्यक्ति का नहीं।

मैंने पूज्य गुरुदेव श्री के सान्निध्य में जीवन के 2+30 तथा आत्म सान्निध्य में 35 वर्ष व्यतीत किये हैं। मैंने गुरुदेवश्री को कभी प्रेम पियूष रूपी पुष्करावर्त मेघ के रूप में बरसते देखा हैं, तो कभी वात्सल्य निर्झर और करुणा सिन्धु के रूप में अविरल बहते भी देखा है। कभी कर्मठता के कठोर पथ पर तो, कभी कर्त्तव्य परायणता के कुसुमों पर भी चलते देखा है। वास्तव में गुरुदेवश्री होने को एक थे किन्तु स्याद्वाद के अर्थों में नाना-अनेक थे।

स्याद्वाद 'नाना' इस नाम मे अभिहितार्थ ही नहीं चरितार्थ भी था। ऐसे स्वनाम धन्य गुरुदेवश्री की अनन्य कृपा से अनुगृहीत होने का मुझे भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह मेरे जीवन की सफलता के साथ-साथ गौरवानुभूति का भी विषय है। इसीलिए मै कह गया हूं कि शब्दों मे अनुभूति को व्यक्त करना सम्भव नहीं। फिर भी अभिव्यक्ति के माध्यम शब्द है जिनकी बैसाखी के सहारे गुरु गुण गीता गाने का सुअवसर नहीं छोडा जा सकता। गुरुदेवश्री आचार मे कठोर और व्यवहार मे अत्यन्त मृदु थे। वे संयमी क्रियाओ के सजग प्रहरी थे।

संवत् 2024 दुर्ग चातुर्मास मे गुरुदेवश्री के सान्निध्य में पर्युषण पर्व की आराधना मण्डी प्रांगण में हो रही थी। मैं भी गुरुदेव की सेवा में था, संध्या के प्रतिक्रमण स्वाध्याय प्रश्नोत्तर के बाद विश्राम की तैयारी संतों की आवश्यकी क्रियान्विति के बाद मैं परिष्ठापन भूमि की ओर गया। परठ कर ध्यान और विश्राम को तत्पर हुआ। गुरुदेवश्री! परठने कौन गये थे? मैं अत्यन्त तत्परता से बोला-गुरुदेव श्री मै गया था। गुरुदेवश्री उपालम्भ की भाषा मे फरमाते हैं। परठने की विधि का ध्यान है। घर बार किसलिए छोड़ा है? आदि-आदि...। शब्दो मे डांट पडी। सुन कर स्तब्ध रह गया। सारी रात्रि नींद नहीं, अविरल अश्रुधारा बहती रही। मै समझ नहीं सका कहां त्रुटि हुई? मैं परठने को परिष्ठापन भूमि की ओर आगे था, गुरुदेवश्री पीछे थे। मैं मुडूं उसके पूर्व गुरुदेवश्री अपने आसन पर विराजमान थे। मै हतप्रभ रह गया मेरे लिए यह बात एक अबूझ पहेली के रूप में थी।

मै हतप्रभ हो सेवाभावी मुनि श्री इन्द्रचन्द्रजी म.सा की सेवा में ओसवाल भवन पहुंचा और कहा कि अब मैं यहीं आपके पास रहूंगा। पर्युषण पर्व का अंतिम दिन आया और पारणे के पूर्व गुरुदेवश्री ने मुझे अपने पास एकान्त मे बुलवाया। मैंने सविधि वन्दन कर अपने मस्तक को श्री चरणो में रखा, गुरुदेव श्री ने मेरे मस्तक को अपनी छाती से चिपकाते हुए कहा कि मै आपको खमाता हूं। मैं पुनः हतप्रभ हो किंकर्त्तव्यविमूढ हो गया। उस समय मेरे पास शब्द नहीं केवल अश्रुधारा का अविरल प्रवाह था।

गुरुदेव श्री फरमाते हैं कि भाई परिष्ठापन सयमी जीवन की महत्त्वपूर्ण क्रिया है। इसमे प्रमाद आत्मा की बहुत बडी हानि है। परिष्ठापन के दोषों को टालते हुए '**दूरमोगाढ़े**' अर्थात् चार अंगुल ऊपर से नहीं परठना चाहिए। आपने एक पक्तियें ऊपर से ही परठ दिया। ध्यान रखने की बात है। अभी नवदीक्षित हो, जैसी आदत पड जायेगी जीवन पर्यन्त बनी रहेगी।

गुरुदेवश्री ने फरमाया कि मै नही कहता कि आप ही परठने मे प्रमाद करते हैं। अन्य सन्त भी गलती करते है आपके निमित्त से अन्य संतों को भी परिष्ठापन समिति का बोध दिया था। खमत-खामणा है। मैंने भी शर्मिन्दगी के साथ क्षमापना की-धन्य थे वे गुरुदेव अपने सयमी जीवन की सजगता मे। कहां वे महान् आचार्य एवं कहां मेरे जैस एक अकिञ्चन ..

संवत् 2032 के चातुर्मास मे संध्या प्रतिक्रमण के बाद कुछ सन्त-श्रावक के बीच परिचर्चा संवाद के दौर चलत पहर रात बीत चुकी थी। एक व्यक्ति पहुचा और खड़े रह सुनने लगा। सन्तो ने कहा-कौन हो आप? सुनना ही है तो दया पालो 'नाना' कहकर गुरुदेव श्री पीछे लौट गये। सभी स्तब्ध रह गये सयम के जागरूक प्रहरी के इस परिदृश्य को देखकर। हम सब कह उठे

गुरु कारीगर सारीखा, टांची वचन विचार।
पत्थर से प्रतिमा करे, पूजा लहे अपार।।

गुरुदेवश्री शिष्यो की संख्या बढाने मे इतने दिलचस्प नहीं थे जितने कि शिष्यो को योग्य बनाने मे दिलचस्प थे। गुरुदेवश्री की शिष्यो के संबध मे अत्यन्त सजगता रही है। वे प्रहरी की तरह रात्रि मे शिष्यो के बीच गस्त दिया करते थे।

गुरुदेवश्री की सजगता के अनेक ज्वलंत उदाहरण स्मृति कोष मे सुरक्षित है जिन्हे विस्तार भय से संक्षिप्त करना ही उचित है। गुरुदेवश्री के विचारो की निर्भयता और गंभीर चिन्तन भी बेजोड था। एक बार गुरुदेवश्री जी ने

ण वा लभेज्जा णिउणं सहायं, गुणाहियं व गुणओ समं वा।
एगोवि पावाइं विज्जयंतो, विहरेज्ज कामेसु असज्जमाणो।।

उत्तरा0 अ 32/5

गुरुदेवश्री जी ने इस गाथा का मर्म समझाते हुए फरमाया कि शिथिल वातावरण से शिथिल बनने की बजाय, पृथक् रहकर संयमी क्रियाओ का दृढता से पालन श्रेयस्कर है।

गुरुदेव श्री के ये अविस्मरणीय सदेश हमारे जीवन की सजगता के सम्बल बने रहे और हम "**जाए सद्धाए निक्खन्तो तमेवमणुपालेज्जा**" के सूत्र को चरितार्थ करते रहे। इसी मे गुरुदेवश्री के प्रति सच्ची श्रद्धा, सुशिष्यत्व की सार्थकता है।

काश! हम सब इस कसौटी पर खरे उतर सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सके। विभाजित संघ की दो धाराएं गंगा और यमुना के रूप मे हैं। जो युगो-युगों तक हमारी पवित्रता का आत्मा-बोध करती रहेगी। निर्मलता से बहते रहना "गुरु नानेश" की वसियत है।

गुरु तुम्हारे मंत्र को, घर-घर में पहुंचायेंगे।
आंधी हो या तूफान, आगे बढ़ते जायेंगे।।

प्रस्तुति : **अशोक जैन**

गिरा अनयन नयन बिनु बानी

✍ प्रवचनकार पं. र. श्री प्रेममुनि जी म.सा

जब मुझे कहा गया कि आचार्य श्री नानेश को लेकर अपने अनुभव लिखो तब मुझे यू लगा जैसे कि अणु को ब्रह्माण्ड के बारे मे लिखने को कहा जाय। आचार्यश्री के साथ बिताये गये क्षण एव प्राप्त अनुभूति को सचित्र लिपिबद्ध करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है। कारण आचार्यश्री मेरे लिए एक व्यक्ति नहीं अपितु एक घटना है-

रामचरित्र मानस के एक प्रसग के माध्यम से मैं अपनी विवशता बतला सकता हू। राजा रामचन्द्र प्रतिदिन वन मे जाया करते थे जिसके लिये उन्हे एक नदी पार करनी होती थी। सदैव एक केवट उन्हे नदी पार करवाता था। पडौसी केवट को ईर्ष्या होती थी और वह प्रतिदिन यही स्वप्न लेकर सोता था कि किसी दिन रामचन्द्र जी को वह अपनी नोका मे ले जायेगा। इस प्रतीक्षा मे उसकी उम्र बीतने लगी। शरीर क्षीण होते हुए भी वह प्रतिदिन नोका पर जाता था, लेकिन एक दिन रामचन्द्र जी का केवट समय पर नहीं आ सका और उसे अपना सपना साकार होता दिखाई दिया। उसने रामचन्द्र जी से आग्रह किया और नदी पार करवा लाने मे सफल हो गया।

उक्त प्रसग उसके जीवन का धन्यतम दिन था। लोगों ने पूछा कि रामचन्द्रजी के पास बैठना तुम्हें कैसा लगा तब उसने कहा कि उसे चित्रित करना उसकी सामर्थ्य के बाहर है, उसकी विवशता को कवि ने इन पक्तियो मे लिखा है कि-

"गिरा अनयन नयन बिनु बानी"

अर्थात् जो मैं तुम्हे बतला रहा हू वह दिखा नहीं सकता। कारण जिह्वा नेत्रहीन है और जो मैंने देखा है वह तुम्हे कह नहीं सकता। कारण नयन जिह्वाहीन है, कुछ ऐसी विवशता मैं आचार्य श्री के बारे मे लिखते हुए महसूस कर रहा हू कि मैं आचार्य श्री जी के उस निर्मल स्वरूप को शब्दो मे कैसे प्रस्तुत करूँ

◆ अर्चनीयता, वन्दनीयता की परम पराकाष्ठा पर प्रतिष्ठित

◆ पुष्कल प्रव्रज्या, पौरुष के परम पुरुष,

◆ प्रतिपल प्रवचन प्रवणता की परिणति मे कुशल

◆ समता दर्शन के प्रणेता, चतुर्विध सघ के नेता

◆ आचार्य श्री 1008 श्री नानेश का पुण्य स्मरण

◆ श्रद्धा के सुमन सादर समर्पण, गुण स्मरण

आचार्य श्री नानेश क्या थे?

● ज्ञान और क्रिया के सुन्दर समन्वय।

● समता, समरसता, सहिष्णुता के आकार।

● उपाधि व्याधि से मुक्त, उत्तम समाधि सुधाकर।

● विरक्ति मे विवेक, अनुरक्ति मे सवेग से युक्त

आचार्य श्री के क्रांतिकारी सूत्र

- व्यक्ति नही व्यक्तित्व का समादर
- परम्परा नही परमार्थ का समादर
- धनवान नहीं गुणवान का आदर
- परिग्रह नहीं परिश्रम की प्रतिष्ठा
- समतामय समन्वय

प्रस्तरों की पुनीत श्रृखला मे श्रृगार मां .

भारतीय सस्कृति के गौरवशाली उतुङ्ग शिखर पर सुप्रतिष्ठित, समुन्नत नगर चित्तौडगढ के अन्तरवर्ती ग्राम दाता के उज्ज्वल-धवल पाषाण प्रस्तरो की पुनीत श्रृखला मे, श्रृगारा मा की कुक्षी से जन्मने वाले बालक 'नाना' ने जन्म ले अपने जीवीतव्य को सफल बना, एक अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है। जिसे हम श्रम साध्य श्रमण चर्या के रूप मे जानते पहचानते है।

श्रम से श्रमण :

'श्रम' और 'श्रमण' मे परस्पर गुण-गुणी भावात्मक सम्बन्ध है। श्रम से श्रमणत्व की निष्पति हो सकती है। श्रम के बिना श्रमणत्व घटित नही हो सकता। नाना मे श्रम, श्रम मे नाना ये दोनो एक सिक्के के दो पहलू थे। मार्ग के काटे बटोरना, खेत मे बीज बिखेरना, वृद्ध, ग्लान, म्लान मानव मे मनस्विता का मधुर सिचन करना। नाना के श्रम के नाना आयाम थे।

नाना प्रकर्ष पुण्य का पाथेय ले मोडी कुल मे अवतरित हुए। कुल के उत्तम सस्कारो के आभार से, निर्भार की यात्रा का शुभारम्भ हुआ। अवसर्पिणी के 5-6 आरे की अर्थवत्ता का मेवाडी मुनि श्री चौथमलजी से आत्मबोध हुआ। गुरु (युवाचार्य) गणेशी से सुबोध को प्राप्त हुए। दिग्भ्रान्त जीवन दीक्षित हुआ। सम्भ्रान्त जीवन समीक्षित हुआ। मुमुक्षु 'नाना' मुनि बने। स्वाध्याय रसिक धुनी बने।

परिचर्चा और संवाद :

परिचर्चाओ के सवाद मे एक वृद्ध स्थविर बोले बताओ मदिर के घडियाल और घडी के टकारे मे क्या अन्तर है? मन्दिर के घडियाल जब चाहे बजते रहते हैं। घडी के टकारे समय पर बजते हैं। साधक साधु बोले हम समझ नहीं पाये आपके इस कथन को । ये नवदीक्षित 'नाना' मुनि समय पर बोलते हैं इसलिए इन्हे सुनने को लोग एकाग्र होते हैं। नाना मुनि भाषा समिति के उत्तम आराधको मे एक थे।

श्रीमद् गणेशाचार्य की सन्निधि परिचर्चाओ के सवाद मे एक वयोवृद्ध स्थविर मुनि बोले आचार्य मुझे बहुत क्रोध आता है। किन्तु इन 'नाना' मुनि पर मैं चाह कर भी क्रोध नहीं कर पाता हू। इसका क्या कारण अक्रोधी साधक की अमीय दृष्टि क्रोध को अक्रोध मे बदल देती है। 'नाना' मुनि ने शास्त्रकारो के निम्न कथन को अपने जीवन मे अक्षरक्ष: चरितार्थ कर दिखाया-"**...चित्ताणुया लहु दक्खोववेया, पसायए ते हु दुरासयंपि ॥13 ॥**"

उजली आंखों में मधुर व्यवहार :

उजली आंखों ने, काले काजल को।
प्रश्रय दिया है, धिक्कार नही॥1॥

निर्मल गंगा ने, घिनौने नालों को।
परिष्कार दिया है, तिरस्कार नहीं॥2॥
हर पवित्रात्मा ने, पापात्मा को कभी
दबाया नहीं, उभरने का अधिकार दिया है॥3॥

कवि की उपर्युक्त पक्तिया, आचार्य श्री नानेश पर अक्षरशः घटित हो रही है। गुरुदेवश्री के जीवन कोष मे धिक्कार-तिरस्कार दुत्कार जैसे शब्दों को अवकाश नहीं था। जिस जीवन में लोकोत्तर प्रकाश समाया हुआ था उस जीवन में धिक्कार-दुत्कार जैसे शब्दो को अवकाश ही कैसे मिल सकता है?

आचार्य श्री नानेश तू ता, थू था, की भाषा का प्रयोग करने की बजाय छोटे से छोटे बालक एवं छोटे से छोटे साधु-सती को जी आप विराजो, पधारों की भाषा से सम्बोधित किया करते थे। आचार्यश्री के अनुशासन मे 'दमन' की बजाय 'शमन' और हृदय परिवर्तन को महत्वपूर्ण स्थान था। **वे आगम विहीत दमन की साधना को, 'स्व से स्व के लिए' मानते थे।** आचार्यश्री की चिन्तन धारा मे आगमो का गहन चिन्तन-मथन समाया हुआ था। आचार्य श्री ने उत्तराध्ययन सूत्र की निम्न गाथाओं का तलस्पर्शी ढंग से चिन्तन ही नहीं, आत्मसात् कर दिखाया था, वे गाथाये निम्न हैं।

अप्पाचेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दंतो सुही होइ, अस्सिं लोए परत्थ य॥15॥
वरं मे अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य।
माऽहं परेहिं दम्मंतो, बंधणेहिं वहेहि य॥16॥

आचार्य श्री जी ने उपर्युक्त गाथाओं को मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषित ही नहीं किया **अपितु प्रयोगात्मकता का स्वरूप भी प्रदान किया। हर शिष्य में अपने आपसे, अपने आप में सुधार-परिष्कार की भावनाएं पैदा की। इसी का परिणाम है कि आचार्य श्री का एक भी शिष्य कुशिष्य की संज्ञा से अभिहित नहीं हुआ।** हर शिष्य के मन मे "**निग्गंथं पावय णं सच्चं निसंकं...**" के प्रति अटल विश्वास जगाने का कार्य आचार्य श्री जी ने अहर्निश किया। **वे अपने प्रति विनय की अपेक्षा निर्ग्रन्थ प्रवचन के प्रति विनय के विशेष पक्षधर थे।** आचार्य श्री जी "**दसंण भट्टो न सिज्झइ**" इस सूत्र पर अत्यन्त मार्मिक एव हृदय स्पर्शी प्रवचन किया करते थे।

हमारी नसों में आचार्य श्री नानेश के संस्कारों का खून प्रवाहित है :

मुझे याद है कि विभाजन के तत्काल बाद कुछ मनचले लोगो ने विभाजित सन्तो को सुविधा लिप्सू प्रशसा प्रसिद्धि पद लिप्सू कह कर अफवाहे प्रसारित की थी कि यह विभाजित सघ शीघ्र ही ध्वनि वर्धक यत्र एव आधुनिक शौचालय खुल्ले करने जा रहा है किन्तु पांच वर्ष की इस संघ यात्रा ने यह स्पष्ट कर दिखाया कि "हमारी नसो में आचार्य श्री नानेश के संस्कारों का खून अब भी प्रवाहित है। हमारे मतभेद सैद्धान्तिक है। लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओ के लिए है। **हमारे मतभेद सुविधाओं से सौदा समझौता समन्वय करने के लिए नहीं है।**"

आचार्य सम्राट पूज्य श्री आनन्द ऋषि जी का मन्तव्य :

सवत् 2029 मे छोटी सादडी श्री सघ आचार्य सम्राट श्री आनन्द ऋषि जी म सा की विनती करने गया तब आचार्य सम्राट ने फरमाया कि मेरा पूर्व श्रावक वर्तमान मे मुनि प्रेम छोटी सादडी है। मुझे तो वहां आना ही है। आचार्य सम्राट छोटी सादड़ी पधारे तब उनके साथ के भगत जी महा अस्वस्थ हो गए। इस कारण काफी दिन

विराजना हुआ। तब मैंने (मुनि प्रेम ने) आचार्य सम्राट से ज्ञान चर्चा के दौरान पूछा कि आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा ने श्रमण संघ से त्याग पत्र दे दिया फिर भी उनके उत्तराधिकारी आचार्य श्री नानालाल जी म सा प्रबल विरोध के बावजूद भी जहा पधारते हैं वहा उनका अभूतपूर्व प्रभाव पडता है। दिनोदिन उनका आकर्षण बढ़ रहा है तथा जन सैलाब उमड-घुमड कर उनके चरणो मे पहुच रहा है। इसका क्या कारण? कुछ समय की चिन्तन मुद्रा को तोड कर आचार्य सम्राट ने फरमाया कि-"**वे भले ही श्रमण संघ से बाहर हो, किन्तु उनका श्रमणत्व भगवान् महावीर के शासन को गौरवान्वित करने वाला है। नानालाल जी म.सा. का संयम अत्यन्त निर्मल है। उनकी चादर निर्मल धवल बेदाग है। इसी कारण उनका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।**" आचार्य सम्राट श्री आनन्द ऋषि जी म सा भी एक निर्मल निश्चल महायोगी सन्त रत्न थे, जिन्होने आचार्य श्री नानालाल जी म सा का यथार्थ मूल्याकन कर अपने आचार्यत्व की न्यायपक्षिता पर अपनी योग्यता की मोहर छाप लगाई थी। ऐसे थे स्वनाम धन्य आचार्य प्रवर।

आचार्य की बेदागिता :

कहना होगा कि आचार्य श्री जी म सा की सपूर्ण प्रभावकता का श्रेय उनकी चारित्र निष्ठा-निर्मलता-बेदागिता को है। आचार्यश्री अपने विद्यार्थी जीवन मे साध्वियो एव बहिनो के झुण्ड के बीच कभी नहीं बैठते थे तथा अपने आचार्यत्व काल मे भी अपनी मर्यादाओ के प्रति सदैव सजग प्रहरीवत् बने रहे। यही कारण है कि वे विरोधियों के बीच भी एक आन्दोलन के रूप मे उभरे और निखरे तथा जन-जन मे सुप्रतिष्ठित हुए। आचार्य श्री नानेश एक ऐसे पारस मणि थे जिनका स्पर्श पा हर शिष्य स्वर्णवत् निखर उठता था। मेरी दृष्टि मे आचार्यश्री जी म सा का एक भी शिष्य कुशिष्य नहीं था। **कुशिष्य होने के लिए उत्सूत्र-प्ररूपणा आवश्यक है जो कि आचार्यश्री जी के शिष्य परिवार में घटित नहीं की जा सकती। सुशिष्य होने के लिए आचरण की शुद्धता आवश्यक है जिसे हर शिष्य अपने आत्मावलोक से जान सकता है कि वह गुरु का सुशिष्य है या कुशिष्य?**

यही कारण है कि आचार्यश्री की निर्मल निर्निमेष दृष्टि एव करकमलो का स्पर्श ही ऐसा था कि हर शिष्य धन्य हो उठता था।

सच्चा उत्कृष्ट भक्त-शिष्य कौन?

गुरु और शिष्य के बीच सम्बन्धो के अनेक भेदानुभेद आगम एव सत् साहित्य में विद्यमान है। गुरुदेव को आहार पानी वस्त्र पात्र सुलभ करना, कपडे धोना-मालिश आदि परिचर्या करना गुरुदेवश्री की जघन्य भक्ति है। गुरुदेव श्री आज्ञानुसार कार्य करना यह गुरुदेव की मध्यम भक्ति है। इच्छानुसार सयमी जीवन मे स्वयं को रंग लेना यही गुरुदेव श्री की उत्कृष्ट भक्ति है। जो साधु अपने गुरु के द्वारा प्रदत्त पच महाव्रतो को प्राणार्पण से निर्मलता पूर्वक पालता है वही गुरुदेव श्री का सच्चा शिष्य है। उत्कृष्ट भक्ति करने वाला है।

आचार्य श्री हुक्मीचन्द जी म सा ने भले ही अत तक अपने गुरुदेव की सेवा परिचर्या न की हो किन्तु उन्होंने गुरुदेव श्री के द्वारा प्रदत्त सयमी जीवन की निर्मल आराधना कर अपने आपको अपने गुरुदेव श्री का उत्कृष्ट भक्त शिष्य प्रमाणित किया।

वर्तमान मे जो भी साधक आत्माये गुरुदेव श्री के वरदहस्तो की छाया तले दीक्षित एवं शिक्षित हुए हैं। वे सभी चाहे जिस दल या पक्ष मे हो यदि संयम की निर्मल आराधना कर गुरुदेव श्री की पहचान को कायम रखते हैं तो वे सभी गुरुदेव श्री के उत्कृष्ट शिष्य भक्त होने के अधिकारी हैं।

हमारा अन्तिम संकल्प समता की साकारता हो :

यदि हम तहेदिल से आचार्यश्री के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित करना चाहते हैं तो हम इस संकल्प को सदा दोहराते रहे कि हम अपने क्रियोद्धारक पूर्वज आचार्यों के द्वारा स्थापित आदर्शों को प्राणापण से निभायेगे साथ ही आचार्य श्री नानेश के निम्न 21 सूत्रीय निर्देशो को अपनी साधना का लक्ष्य बनाये रखेगे। यदि हम इस सकल्प पर अडिग रहे तो मतभेदो के बावजूद भी हमारी लक्ष्य यात्रा प्रवर्धमान रहेगी।

समता साधना के 21 आयाम :

1 ग्राम, नगर, राष्ट्र सम्बन्धी नैतिक नियमों का पालन करना, उसमे कुव्यवस्था पैदा करने वालो का असहयोग करना।

2. अनावश्यक हिंसा का परित्याग करते हुए व्यक्ति, परिवार, समाज एव राष्ट्र की रक्षा का ख्याल करना।

3 झूठी साक्षी नही देना, मिलावट नहीं करना, किसी की अमानत हजम नहीं करना अर्थात् चौर्यवृत्ति से दूर रहना।

4 परिवार, समाज, राष्ट्र एवं सस्कृति के साथ गद्दारी नहीं करना।

5 परस्त्री त्याग करना, स्वस्त्री के साथ अधिक से अधिक ब्रह्मचर्य पालन करना।

6 राष्ट्रीयता के दायित्व निर्वाह के आवश्यक अनुपात से अतिरिक्त धन-धान्य पर अधिकार नहीं रखना, आवश्यकता से अधिक धन-धान्य हो तो ट्रस्टी बन कर उसके यथा आवश्यक सम विभाग, सम वितरण की भावना रखना।

7 व्यापार-धंधे की तथा परिग्रह की मर्यादा रखना।

8 स्वयं के, परिवार के, समाज के, राष्ट्र के एवं सस्कृति के गौरव को कलकित करने वाला कोई भी कार्य नही करना।

9 आध्यात्मिक जीवन जीने हेतु नैतिक संचेतना तदनुरूप आचरण का ध्यान रखना।

10 मानव जाति मे गुण कर्म के अनुसार वर्गीकरण पर विश्वास रखते हुए किसी से नफरत नहीं करना।

11. संयम रखना, अनुशासन भंग करने वालों से अहिसक असहयोग करके उन्हें सुधारना।

12 प्राप्त अधिकारो का दुरुपयोग नहीं करना।

13 कर्त्तव्य पालन में तत्परता रखना लेकिन प्राप्त सत्ता मे आसक्त न होना।

14 सत्ता और सम्पत्ति को साध्य न मानते हुए उन्हे प्राणी मात्र की सेवा का साधन मानना।

15 सामाजिक व राष्ट्रीय सिद्धान्त पूर्वक भावात्मक एकता को महत्व देना।

16. जनतंत्र का दुरुपयोग नहीं करना।

17 धार्मिक, सामाजिक प्रसंग को निमित्त बना कर आडबर प्रदर्शन नहीं करना।

18 कुरीतियो का परित्याग करना, उन्हे प्रोत्साहन नही देना।

19 उच्च विचार, उच्च जीवन में विश्वास रखना।

20 चारित्र निर्माण एव धार्मिक शिक्षा पर बल देना। नित्य प्रति जीवन निर्माण हेतु स्वाध्याय-चिन्तन-मनन एव आचरण करना।

21 समता दर्शन के आधार पर सामाजिक व्यवस्था निर्मित करना।

यदि समता विभूति आचार्य श्री नानेश के सच्चे शिष्यत्व को सार्थक करना है तो हमे परस्पर के रागद्वेष को

त्याग कर समत्व योग की साधना के द्वारा "**मित्तिमे सव्व भूएसु**" का सूत्र चरितार्थ कर दिखाना चाहिए।

गुरुदेवश्री के प्रति हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए गुरुदेव श्री शीघ्र ही सिद्ध बुद्ध मुक्त दशा को प्राप्त करे इसी शुभेच्छा के साथ । इति शुभम् ब्रूयात्।

प्रस्तुति : **अशोक जैन**

❖ ❖ ❖

मेरी प्रार्थना

✍ प्रज्ञा रत्न श्री जितेश मुनि जी म.सा.

हे प्राण प्यारे गुरुदेव।

आपने अपने कर कमलो के आलम्बन से मुझे ससार रूपी कीचड से उबारा ही नहीं संयम का पवित्र अवदान दे, तारा भी है। मेरी जीवन नौका बीच मझधार है उसे भी पार लगाने मे मुझे आपका ही आधार है।

आपने आचारांग सूत्र की वाचनी देते समय जो यह एक सूत्र "**जाए सद्धाए निक्खन्तो तमेव मणुपालेज्जा**" का प्रदान किया है वह जीवनपर्यन्त, मेरे जीवन मे निर्मल साधना शक्ति का सचार करता रहे। मुझे भी सलेखना सथारा, समाधिमरण प्राप्त हो, यही एक प्रार्थना है, अभ्यर्थना है। इसी से मैं अपने आपको आपका सच्चा शिष्य भक्त के रूप मे चरितार्थ कर सकूगा।

मुझे दो आशीष पा जाऊं अपना ईश।

प्रस्तुति : **अशोक जैन**

❖ ❖ ❖

गुरुदेव की हित शिक्षाएं

✍ श्री अजित मुनि जी म.सा.

जन्म-मरण की श्रृंखला अनादिकाल से प्रवाहमान है। संसार के रंगमंच पर अनवरत कई आत्माएं जन्म धारण कर रही है एवं कई आत्माएं मरण धर्म को प्राप्त हो रही है। सर्वज्ञ महाप्रभु ने अपने अमृतोपदेश मे कहा है कि "**घोरा मुहुत्ता अबलं सरीरं**" अर्थात् काल महाघोर है, शरीर निर्बल है। इसके सामने कोई कितना भी बलवान हो, ज्ञानी हो, तपस्वी हो, दानवीर हो, शूरवीर हो, किसी की न चली है, न चलती है, न चलेगी।

प्रभु महावीर ने कालजयी होने के लिए अमर सूत्र दिया है कि हे साधक, तू हमेशा भारण्ड पक्षी की तरह अप्रमत्त होकर विचरण कर, क्योकि "**अपमत्तो नत्थि भयं**" जो साधक अप्रमत्त होकर साधनारत है, वे कालचक्र के क्रूर घेरे से मुक्त हो जाते है। उसी लक्ष्य को लेकर प्रगति पथ पर चलने वाले बीसवी सदी के महासाधक मम श्रद्धा के दिव्य आलोक परम श्रद्धेय पूज्य गुरुदेव श्री नानेश थे जिन्होने संसार की अनित्यता का बोध पाकर एवं कालचक्र की वीभित्सिका का वर्णन श्रवण कर युवावस्था मे स्वर्गीय गुरुदेव आचार्य श्री गणेशीलाल जी म.सा के पास संयम जीवन धारण किया।

आगमो के गहन अध्ययन एवं सेवा साधना से अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व का निर्माण किया। दीर्घ साधना काल मे पूज्य गुरुदेव श्री नानेश ने जिनशासन की जो भव्य प्रभावना की उसे शब्दो में आबद्ध करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान होगा।

स्व-पर कल्याण के धारक गुरुदेव ने अपने मुखारविन्द से 300 से भी अधिक श्रमण-श्रमणियो का निर्माण किया जो आज जिनशासन की भव्य प्रभावना करते हुए स्व चेतना के विकास में संलग्न है।

अछूतों के अवतार बन उनकी नैया के पतवार बनें। तनावपूर्ण जिन्दगी जीने वालो के लिए समीक्षण ध्यान के सेतु का निर्माण कर कुशल इंजीनियर बने। सामाजिक समरसता एवं समान धरातल के निर्माण हेतु समता का दिव्य आलोक प्रदान किया।

पूज्य गुरुदेव का जीवन अनेकानेक प्रसंगों से जुड़ा हुआ है, उनकी क्षमा, सहनशीलता, गंभीरता बेजोड थी। मुझे स्मरण हो रहा है कि जब गुरुदेव इन्दौर कचन बाग मे विराज रहे थे उस समय डॉ साहब आये, आख का उपचार चल रहा था। डॉ. साहब गुरुदेव की आंख मे इन्जेक्शन लगाने लगे, उस समय मै भी गुरुदेव के पास ही बैठा हुआ था। मैंनें कहा-'भगवन्! आपको कितनी तीव्र वेदना हो रही होगी?' गुरुदेव ने फरमाया-'अरे भाई मैंने भी किसी के सुई लगाई होगी।' कर्म सिद्धान्त पर आधारित इस वाक्य को श्रवण कर मै गुरुदेव की सहनशीलता का विचार करता रहा। ऐसे अनेक घटना प्रसंग है।

पूज्य गुरुदेव का अनुशासन करने का तरीका ही अनूठा था। कई संत चंचल प्रकृति के एवं प्रतिकूल व्यवहार करने वाले थे। गुरुदेव उनकी हरकतों को देखते रहते, उस समय विशेष कुछ न कह कर प्रतिक्रमण के पश्चात् सामूहिक शिक्षा प्रदान करते थे। जब वे शिक्षा फरमाते तो उस समय तत् सम्बन्धित प्रकृति वाले साधक को अपने आप पर आत्म ग्लानि हुए बिना नहीं रहती। अन्य संतो को ये भी महसूस नहीं होता कि गुरुदेव ने किसके लिए फरमाया। गुरुदेव का शिक्षा देने का अनूठा तरीका था।

वे शिक्षा फरमाते हुए कहा करते थे कि आप लोग अच्छे-अच्छे घर-घरानो से निकले हुए हैं, आप लोगो ने घर बार छोडा, संयम के प्रति पूर्णतया सजगता रखे। कोई हमे देखे या नही देखे, पुंजने, पलेवण, परठने मे पूरा विवेक रखे। ओघे से पूरा पूज कर चले। ओघा घिस जायेगा तो गृहस्थ और दे देगे। गोचरी मे गवेषणा का पूरा ध्यान रखना चाहिए। गृहस्थ दे भी देगे और बदनाम भी कर देगे।

गुरुदेव फरमाया करते थे कि प्रशंसा से हमेशा बचे क्योकि प्रशसा मीठा जहर है। आप सभी मे आपस मे सगे भाई से बढ कर एक-दूसरे से प्रेमभाव होना चाहिए। साधु जीवन मे क्या बाटना है, क्या साथ मे ले जाना है। बोलने मे भाषा समिति का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिए। तू तुकारे की भाषा का प्रयोग नही करना चाहिए। **''साधु सोहंता अमृत वाणी''** अपने व्यवहार मे हमेशा सभ्यता और शिष्टता रखनी चाहिए।

वास्तव मे गुरुदेव की सद्शिक्षाओ के बारे मे जब-जब चितन करते हैं, काश, ये बाते हम सभी के जीवन व्यवहार का अंग बन जाय तो सोने मे सुहागा वाली कहावत चरितार्थ हो जाय।

उनके जीवन घटनाक्रम को जितना लिखा जाय, पढा जाय, कहा जाय वह असीम को ससीम मे आबद्ध करने के समान होगा।

पूज्य गुरुदेव का अनंत-अनत उपकार है और रहेगा जिन्होने अनगढ पत्थर को एक आकृति प्रदान की है, सयम जीवन प्रदान कर जीने की सुन्दर कला प्रदान की है।

अशुभ कर्मोदय के कारण पिछली अवस्था मे गुरुदेव के सान्निध्य से वचित होने का मलाल मन को खेदित करता रहता है। नियति को यही मजूर था। गुरुदेव ने भी अपने ज्ञानालोक मे ऐसा ही देखा तभी तो सभी सन्तो को दही एवं गुड का प्रसाद देकर विदा किया एवं यही शुभाशीष प्रदान किया कि जहां भी रहो, सयम पालते रहना।

आज शांतक्रांति संघ अल्प अवधि मे जो उत्कर्ष कर पाया है वह जिनशासन गौरव आचार्य प्रवर श्री विजयराज जी म सा की विचक्षण प्रज्ञा व अनुशासन करने की कुशलता के साथ ही पूज्य गुरुदेव के मंगल आशीर्वाद का ही प्रतिफल है। प्रतिपक्ष ने कितने ही शूल खडे किये लेकिन वे सभी फूल बन गये, उसने अपयश फैलाने का भरपूर प्रचार किया किन्तु वह यशोगान की पताका के समान लहरा कर आज चहु दिशा मे विजय यात्रा को प्रगति पथ पर अनवरत आगे बढाने मे कामयाब हो रहा है।

वे ओर हैं जो अपने से कतरा के चले हैं।
एक हम हैं जो गैरों को अपना के चले हैं।

पूज्य गुरुदेव की दिव्य आत्मा जहां भी हो वहा परम शाति को प्राप्त कर अपने लक्ष्य परम पद सिद्ध अवस्था का मगल वरण करे।

फानुस बन के जिसकी हिफाजत हवा करें।
वह शमां क्या बुझे, जिसे रोशन खुदा करे।

संकलन : **पारस तातेड़**

मेरे गुरुदेव

✍ प्रज्ञा रत्न श्री जितेश मुनि जी म.सा.

जीवन के सफर मे इस ससार के प्राणी को अनगिनत व्यक्तियो के सम्पर्क मे आने का मौका मिलता है। सम्पर्क मे आए हुए हर व्यक्ति को याद रखना तो एक असंभव कार्य है, फिर भी कुछ व्यक्ति जो असाधारण व्यक्तित्व के धनी होते हैं सहज हमारे मानस पटल पर एक ऐसी अमिट छाप छोड जाते है जिन्हे हम लाख कोशिशो के बाद भी नहीं मिटा सकते। मुझे भी सौभाग्य से अपने जीवन मे कुछेक ऐसे ही असाधारण व्यक्तित्व के धारक महापुरुषों के संपर्क मे आने का सुअवसर मिला है। ऐसे ही एक महापुरुष थे आचार्य प्रवर पूज्य श्री नानालाल जी म सा ।

संयम साधना की निर्मल ज्योति से जिनका पूरा व्यक्तित्व आलोकित था, निष्कपट आचरण से जिनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व सुशोभित था, ऐसे महापुरुष का मेरे मानस पटल पर गहरा प्रभाव अंकित हुआ। ऐसे महापुरुष का शिष्य बनने का जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ उसका सारा श्रेय है प रत्न श्री प्रेमचन्द जी म सा को।

घटना है 1977 की। भाई श्री अशोक जी नवलखा की दीक्षा का प्रसंग गंगासर-भीनासर मे उपस्थित हो रहा था। इस प्रसंग पर श्रावक रत्न श्री कन्हैयालाल जी मेहता के साथ मैंने प्रथम बार आचार्य प्रवर के दर्शनो का सौभाग्य प्राप्त किया। आचार्य प्रवर के बारे में निन्दात्मक बाते मैने सुन रखी थी इसलिए मै सत्य-तथ्य जानने को तत्पर हुआ। प्रश्नोत्तर (धार्मिक चर्चाओ) के कार्यक्रम के पश्चात् मैने श्री सुरेन्द्र मुनि जी से निवेदन किया कि मै आचार्य श्री से 10-15 मिनट का समय चाहता हूं। उन्होंने मेरी भावनाओ को आचार्य श्री जी तक पहुंचाया। आचार्य श्री जी ने अपनी असमर्थता प्रकट की क्योकि अखिल भारतीय संघ का अधिवेशन व दीक्षा प्रसंग होने से वहां दूरस्थ क्षेत्रो के हजारों श्रद्धालुगण उपस्थित थे, वे श्रद्धालु अपने आराध्य देव के प्रत्यक्ष साक्षात्कार हेतु लालायित थे। अनेको सघ प्रमुखों ने आचार्य श्री जी का पहले से समय ले रखा था।

मेरा दिल उदास हो गया वह उदासी चेहरे पर भी . यह बात विद्वान श्री सुरेन्द्र मुनि जी म सा ने आचार्यश्री जी को बतलायी। आचार्य श्री जी ने तत्काल मुझे बुलवा लिया। यह थी उनकी करुणा।

आचार्य श्री-'आप कहा से आये हो?'

मैने कहा-'न मुझे यह पता है कि मै कहां से आया हू और न यह पता है कि मै कहां जाऊगा? इसीलिए तो आपश्री जी के चरणो मे ।' आचार्य श्री ने मुझे अत्यन्त आत्मियता पूर्वक देखा और मुस्कराये।

आचार्य श्री जी का वह कृपामय/स्वस्तिमय दृष्टिपात । मै तो निहाल हो गया।

आचार्य श्री ने मुझे अपनी जिज्ञासा रखने की इजाजत दी। मैने उनके बारे में जो सुना था उसी आधार पर बहुत से प्रश्न एक साथ प्रस्तुत किए।

आचार्य श्री जी ने मुझे बैठने का सकेत दिया। प्रश्न मेरे अटपटे थे, मुझे ऐसा लगा कि अब मुझे कोप का भाजन बनना पड़ेगा। मै आगे कुछ सोचता उससे पहले ही आचार्य श्री ने मुझे कहा कि मै आपके सारे प्रश्नो का जवाब दूगा और आप दो और दो चार की तरह मेरी बात समझ मे आये तो ही मानना और जब तक समझ मे नहीं आए तब तक

नि:संकोच रूप से प्रतिप्रश्न करते रहना, घबराने की आवश्यकता नहीं है।

आचार्य श्री जी की यह वाणी सुन कर मुझमे निर्भयता का सचार हुआ और यह एहसास हुआ कि आचार्य श्री जी का चित्त निराग्रही व निराहकारी है।

आचार्य श्री जी मेरी जिज्ञासाओ को शांत करने लगे। मेरी समस्याओ का समाधान देते गये। मै प्रश्न-प्रति प्रश्न करता गया। लगभग 3 घटे तक यह क्रम चला। तीन घटे मे न तो आचार्य श्री जी उत्तेजित हुए न उन्होने अपनी बात थोपने का प्रयास किया। बस वे तो सत्य-तथ्य को शांत चित्त से मधुर स्वर से अभिव्यक्त करते ही गए। मेरे जीवन का यह प्रथम प्रसंग था कि किसी महापुरुष ने इतनी आत्मियता से मेरी बातो को सुना और मेरी जिज्ञासाओ को शांत किया। उसी क्षण मैंने इसी महायोगी के चरणो मे जीवन समर्पित करने का सकल्प किया। मुझे पूज्य श्री प्रेमचन्द जी म सा ने जो परिचय दिया था अपने गुरुदेव का, वैसा ही मैंने पाया। यही कारण है कि मैंने दूसरे ही दिन प्रवचन स्थल पर जीवन समर्पण की भावना को गुरुदेव के समक्ष रखा। कुल तीन दिन मै वहा सेवा मे रहा। बहुत नजदीक से आचार्य श्री जी को देखा। उनके निर्मल सयमी जीवन से मे अत्यधिक प्रभावित होकर वापस लौटा।

इन महापुरुष की साधना का प्रत्यक्ष अनुभव किया था मैने पूना मे। मेरे कान मे काफी तकलीफ थी। पूर्व मे एक असफल ऑपरेशन हो चुका था। कान मे दर्द था, खून-पीब निकलता था। पूना के प्रसिद्ध ई एन टी सर्जन डॉ टेपन को दिखाया। डॉ साहब ने तत्काल ऑपरेशन की सलाह दी क्योकि तीन हड्डिया सडने लगी थी। स्थिति खतरनाक थी, दो दिन बाद ही ऑपरेशन तय हुआ। आचार्य श्री जी बीकानेर थे। श्री प्रेमचन्द जी म सा जावरा थे अल्प समय मे दर्शन लाभ सभव नही था। मैंने आचार्य श्री जी के वहा पर दूरभाष से सूचना भेजी कि 25 तारीख की सुबह 9 बजे ऑपरेशन है वही से मुझे मागलिक की कृपा करावे। सयोग ऐसा बना कि 25 तारीख को किन्ही कारणों से ऑपरेशन 9 बजे न होकर 12 बजे प्रारम्भ हुआ। जब ऑपरेशन प्रारम्भ हुआ तब मुझ ऐसा महसूस हुआ कि आचार्य श्री जी मंगल पाठ सुना रहे है। करीब 4 बजे ऑपरेशन सानन्द संपन्न हुआ। 27 तारीख को श्री लालचन्द जी मुणोत का बीकानेर से पत्र आया। उस पत्र में निम्न समाचार थे- ''25 तारीख को अति व्यस्तता के कारण प्रातः 9 बजे आचार्य श्री जी मांगलिक नहीं सुना पाये करीब 12 बजे आचार्य श्री जी ने ध्यान मे आपको मागलिक दिया है। अब आपका स्वास्थ्य सुधार पर होगा।'' इस घटना को महज सयोग नहीं कहा जा सकता। यह तो मेरे जीवन का अविस्मरणीय प्रसग है।

निर्लिप्तता नमस्करणीय थी नानेश गुरु की :

जयपुर के श्रेष्ठीवर्य श्री खेलशकर भाई दुर्लभ जी ने एक बार श्री प्रेमचन्द जी म सा के सामने बातचीत के दौरान कहा कि उपाध्याय प्रवर पूज्य श्री अमरचन्द जी म सा की मेरे ऊपर अत्यन्त कृपा है। उन्होने मुझे वीरायतन की लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियो मे जुडने का आदेश दिया तो मैने वहां करोड से अधिक का अर्थ सहयोग दिया किन्तु आचार्य श्री नानालाल जी म सा ने मुझे कभी कोई आदेश नही दिया। यदि वे कोई भी कार्य करने का आदेश देगे तो 2-4 करोड मेरे लिए कोई बडी बात नहीं है। यह जानकारी जब गुरुदेव को दी गयी तो गुरुदेव ने फरमाया कि खेलुभाई की भावना अच्छी है किन्तु सावद्य प्रेरणा देना यह भगवान् के शासन की मर्यादा के प्रतिकूल है और रही बात आदेश की तो मै इतना ही कहना चाहूंगा कि साधु का कार्य निरवद्य भाषा मे प्रेरणा देना है, उपदेश देना है न कि आदेश। कहना होगा कि श्रावक वर्ग मे उदारता, भावुकता होने पर भी आचार्य श्री जी ने उनकी भावुकता का लाभ उठाने के लिए सयमी मर्यादाओ की उपेक्षा नहीं की। आप श्री जी का यह आचरण **'निरुवलेवे'** अरिहंत के इस गुण

के आराधना स्वरूप था।

विविध गुणो से महिमा मण्डित आचार्य श्री नानेश शक्ति के महास्त्रोत थे। यही कारण था कि आप श्री जी जहा पर भी पधारते वहां **"हु शि ऊ चौ श्री जग नाना, लाल चमकता भानु समाना"** के गगनभेदी नारों से सारा वातावरण जोश व उत्साह मे परिणत हो जाता था। इस नारे के निर्माता थे थली प्रान्त के बब्बर शेर श्रीमान् मोतीलाल जी बरडिया। यह नारा आचार्य श्री जी की एक पहचान बन गया था। आगे जाकर रतलाम 25 दीक्षाओं के समय 108 नारे निर्मित हुए। वे **"जय गुरु नाना"** के रूप मे लोकप्रिय हुए। प्रथम नारे मे पूर्वज आचार्यों की आदर्श स्मृतिया संलग्न थी तो दूसरे नारे के साथ आचार्य श्री जी का प्रेरक संदेश जुडा हुआ था। भले ही दुनिया ने आचार्य श्री नानेश को संकीर्ण विचारधारा वाला व्यक्ति मान लिया होगा किन्तु वे सावद्य कार्यों मे संकीर्ण व निरवद्य कार्यों मे उदार थे अर्थात् असंयम के लिए संकीर्ण व संयम के लिए उदार थे और इसी उदारता का संदेश देने वाला यह नारा था **"जय गुरु नाना।"** नाना का अर्थ होता है अनेक अर्थात् अनेक गुरुओ की जय का संदेश देने वाला था यह नारा **"जय गुरु नाना।"**

वर्तमान मे पर्याय रूप मे आचार्य श्री नानेश का स्वरूप हमारे लिए प्रत्यक्ष नहीं है किन्तु आचार्य श्री का वह गुणात्मक अमर स्वरूप आज भी मौजूद है और आगे भी रहेगा। आप श्री का स्मरण-प्रत्येक भक्त व साधक के संकट व समस्या के समय को समता के आचरण मे बदल देगा। तनाव व अशान्ति की दशा को समीक्षण ध्यान की दिशा मे बदल देगा। विषय विकार की मानसिकता को विवेक व वैराग्य मे बदल देगा।

मेरे गुरुदेव महान् थे। उनकी महानता सदियो तक हर मानव को महान् बनने की प्रेरणा देती रहेगी। ऐसे महान् मेरे गुरुदेव को हृदय की असीम आस्था के साथ अर्पित है श्रद्धांजलि .श्रद्धांजलि ..श्रद्धांजलि।
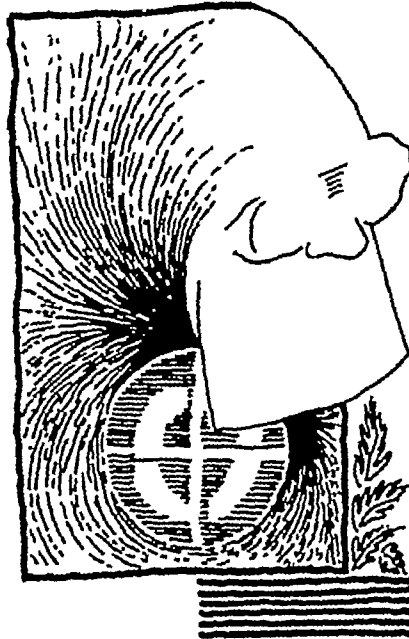
आस्थेय की आशीष पाथेय बने

✍ श्री विनोद मुनि जी म.सा.

आचार्य अर्थात् जो आत्महित की प्राथमिकता पूर्वक मार्दव गुण को सर्वत्र शीर्षस्थ रखते है। मृदुता अहिंसा का पर्याय है, अहिसा अर्थात् एकान्त आत्महित। आत्महित की भावना से भावित साधक का रोम-रोम मृदुता के रस से भीगा हुआ होता है। मृदुता मे गजब की शक्तिया समाहित होती है, इस अद्भुत शक्ति के पूंजीभूत, आस्था के आधार थे-पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री नानेश।

मैने मेरे सयमी जीवन के उषाकाल मे प्रवेश करते ही आचार्यश्री के पुनीत चरणो मे अपने हृदय से उद्भुत जिज्ञासा भाव प्रस्तुत किया कि-

''गुरुदेव। काल के प्रभाव से इस भरत क्षेत्र मे रहते हुए, इस पचम आरे मे मुक्ति तो प्राप्त नहीं की जा सकती पर मुक्ति के निकट पहुंचने का क्या उपाय है?''

आचार्य देव ने मुक्ति की निकटता की अनुभूति को शब्दो का परिधान पहनाते हुए मेरी जिज्ञासा को समाधान दिया कि-

''कषायों की मन्दता व उपशम भाव की प्रकर्षता पूर्वक अरिहत सिद्ध आचार्य उपाध्याय-चतुर्विध संघ एव निर्ग्रन्थ प्रवचन के प्रति भक्ति बहुमान अहोभाव रखते हुए संयमी जीवन मे आत्म-साक्षात्कार किया जा सकता है। इस आराधना से जीव को सुलभ बोधित्व की प्राप्ति होती है। सुलभ बोधि जीव शीघ्र मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।''

आचार्य देव द्वारा मुक्ति की निकटता के अहसास ने मेरी राहो को रोशन कर दिया। मेरे मुमुक्षु मन को प्रशस्त मार्ग प्रदान किया।

ऐसे मृदुता के मसीहा थे-महामहिम गुरुदेव। इस दिव्य विभूति की छत्र छाया मे व्यतीत जीवन के वे स्वर्णिम पल अविस्मरणीय हो गये। अन्तिम अनुभूति रही 25 मई 1996 की, सेठियां कोटडी बीकानेर मे महास्थविर श्री शान्तिमुनि जी म सा के साथ हम गुरु चरणो मे नत मस्तक थे। उन चिर-स्मरणीय क्षणो मे करुणा के महासागर आराध्य देव हम लघु संतो के मस्तक पर लगातार काफी देर तक वात्सल्य पूर्वक हाथ फेरते रहे तथा युगो-युगो तक पाथेय रूप आशीष प्रदान करते हुए फरमाया-''चाहे यहा रहो, चाहे वहां रहो, जहां कहीं भी रहो मस्ती से रहना, निर्मल संयम का पालन करना।'' वह घडी, वह दृश्य, वह स्नेहिल का स्पर्श जब भी संस्मरणो के वातायन मे उभरता है-मन का ओर-पोर रोमांचित हो उठता है, रोम-रोम आनंद के आप्लावित हो जाता है। धन्य हुआ यह जीवन। जो ऐसे आत्मदृष्टा महापुरुष की सत्संन्निधि मे आनन्दाराम सयम पथ पर आरूढ हुआ। कृपावारिधि रूप आस्थेय से आज भी यही चाहत है कि-मेरी आस्था सत्य एव संयम के प्रति अविचल बनी रहे। जिस लक्ष्य से इस संयमी डगर पर मैने अपने कदम बढाए मेरे ये कदम निराबाध एवं त्वरित गति से मोक्ष प्राप्त करने मे सक्षम बने।

इन्ही हार्दिक भावनाओ के साथ।

एक विराट व्यक्तित्व

✍ श्री ज्ञान मुनि जी

तू नहीं पर तेरी उल्फत, हर किसी के दिल में है,
शमा तो बुझ चुकी मगर, रोशनी महफिल में है।

विगत 26 अक्टूबर को उदयपुर मे समता विभूति आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री नानालाल जी म सा महाप्रयाण कर गये। ज्यो ही ये समाचार विदित हुए तो स्मृति पटल पर अनगिनत मार्मिक प्रसंग एकाएक उभरने लगे। महान् व्यक्तित्व की झलक दिल दिमाग पर छाने लगी, तो वह मोहनी छवि बार-बार सामने मंडराने लगी। दिव्य ललाट, विशाल भाल, चश्मे के पीछे प्रेम सद्भाव एवं करुणा से ओतप्रोत विशाल नेत्र। सौम्य मुख मुद्रा से निसृत धीर गभीर माधुर्य से सनी वाणी-कैसा विरल व्यक्तित्व था महापुरुष का। 62 वर्ष तक अनवरत साधना के विकट पथ मे निरन्तर अग्रगामी रहे कभी झुके नही, डिगे नही, रुके नहीं। भले ही लाखो रुकावटे एवं प्रतिरोध के झंझावत आये। आगमो के गूढ़ रहस्यों के ऐसे ज्ञाता तो आज खोजने पर भी विरले ही मिलते हैं।

धर्म क्रांति के उन्नायक, महानायक के रूप मे शताब्दियो तक स्मरण किये जायेगे। मालवा के ग्रामीण अचलो के लाखो बलाइयो मे जो अहिसा के संस्कारो का सिंचन किया उसकी कोई मिसाल खोजने पर भी नहीं मिलती। पूज्य जवाहिराचार्य को मैने देखा तो नही पर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की जो चर्चा यदा-कदा सुनी थी वे सारे लक्षण पूज्य नानेशाचार्य में साक्षात् नजर आते थे। मैने सर्वप्रथम सवत् 2019 मे उनके उदयपुर मे दर्शन किये। उसके बाद तो मुझे कई बार उनके दिव्य दर्शनो का लाभ मिलता रहा। संवत् 2035 मे जोधपुर मे उनके निकट संपर्क परिचय मे आने का अवसर मिला।

उस वक्त मैने जो कुछ निकटता से देखा उससे मेरी आंतरिक श्रद्धा उनके प्रति हजारो गुणा अधिक बढ गई। यदाकदा जब कतिपय छिद्रान्वेषी उनका अपलाव करते तो मन धैर्य खो बैठता। मै सोचता कि ये लोग क्यो कर्म बंधन कर रहे है। निंदा-विकथा से कोसो दूर पूज्य नानेशाचार्य अपने आप मे विराट व्यक्तित्व के धनी थे जैसा कि कहा है-"**एक मांहि अनेक राजे**" उनमे हजारों हजार गुणो का ऐसा झरना बहता था कि संसार दावानल के तप्त प्राणी वहां आकर अपार शांति एवं सहजता का अनुभव करते थे। किसी शायर ने कहा है-

हजारों साल नरगिस, अपनी बेनूरी पर रोती हैं।
बड़ी मुश्किल से होता है, चमन में दीदावर पैदा।।

ऐसे ही महापुरुष आचार्य भगवंत थे। किसी अन्य शायर ने कहा है-"**तेरी दीद जिसे नसीब है, वह नसीब काबिले दीद है।**"

जिसने उनके दर्शन किये व उनके वरदहस्त की छाया पायी, सचमुच वे लोग तथा वे क्षण, वे भाग्य धन्यभागी थे। अत मे हृदय की असीम आस्था के साथ मैं हार्दिक श्रद्धांजली अर्पित करता हू तथा वीरप्रभु से प्रार्थना करता हू कि उन महान् गुण समुद्र की तरह मैं भी बन सकूं, इसी कामना के साथ विराम करता हूं।

एक तेरी याद का आलम है, जो कभी बदला ही नहीं,
वरना तो वक्त के साथ हर चीज बदल जाती है।

प्रेषक : गौतमचद डूंगरवाल

आचार्यश्री नानेश का जीवन परिचय एवं महत्वपूर्ण घटनाएं

✍ मधुर व्याख्यानी श्री महेन्द्र मुनि जी

भारत की पावन भूमि की यह विशेषता है कि यहा निरन्तर पावन आत्माए अवतरित होकर अपने दिव्य प्रकाश से समस्त विश्व को आलोकित करती रही है। इन्ही पावन आत्माओ मे एक है परम पूज्य समता विभूति आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा ।

आपश्री का जन्म अरावली की पहाडियो मे चित्तौडगढ के दाता गाव के सुश्रावक धर्मानुरागी पिताश्री मोडीलाल जी पोखरणा की सहधर्मिणी श्रीमती श्रृगार बाई की कुक्षी से ज्येष्ठ शुक्ला द्वितीय विक्रम सवत् 1977 को हुआ आपश्री बहन-भाईयो मे सबसे छोटे थे। आपका मूल नाम गोवर्धन था। प्यार से सभी आपको नानालाल कहते थे। परिवार मे सबसे छोटे होने के कारण सभी का स्नेह आपके ऊपर था। बचपन से ही आपके जीवन मे नैतिकता की पराकाष्ठा थी।

किशोरवय मे मित्रो द्वारा आपको बहकाने का अथक प्रयास किया गया, परन्तु आपने नैतिकता त्यागना स्वीकार नही किया। नैतिकता के होते हुए भी आपके बालपन मे धर्मभाव नही था। दाता गाव मे आपका परिवार अकेला जिन धर्मानुरागी था।

आपकी बहिन ने अठाई का तप किया था। आपके पिताश्री ने कहा-पुत्र नाना! अपनी बहिन को चुदडी ओढ़ा कर आओ। बहिन का ससुराल भादसोडा, दाता गाव से लगभग चार कोस दूर था। घोडे पर आप भादसोडा गए।

आप जिस दिन भादसोडा पहुचे वह सवत्सरी महापर्व का दिन था। आपके बहनोई ने कहा अपने ग्राम मे मेवाडी मुनि चौथमल जी म सा का चातुर्मास है, प्रवचन का लाभ ले। हालाकि आपको धर्म प्रिय नहीं था पर बहनोई श्री की आज्ञा को ध्यान मे रख कर आप स्थानक मे पहुचे। जब आप पहुचे उस समय चौथमल जी म.सा. के मुखारविन्द से छठे आरे का वर्णन चल रहा था। इस वर्णन को सुन कर आपश्री का हृदय चित्कार उठा। आपके मन मे वैराग्य का अंकुर फूट पडा। इस घटना ने आपके जीवन की दिशा ही बदल दी। आपके जीवन को मोडने मे यह घटना महत्वपूर्ण सिद्ध हुई।

आप बिना किसी से कहे सुने स्थानक से उठ कर चल दिए। मार्ग मे एकान्त मे रुक कर आप चिन्तन करने लगे। मनुष्य को इतना दुःख भोगना पडेगा क्या? मनुष्य इतना भी समर्थ नही कि वह अपने कर्मों को काट सके। सोचते हुए आपके नेत्रो से जलधारा बह निकली। आपका चितन निरतर चलता रहा।

घर पर पहुच कर आपने माताजी से कहा-"माता मे साधु जीवन अंगीकार करूँगा।" माताजी चौंक गई। कहा-"क्या कह रहे हो बेटा! इस सुकुमार शरीर से सयम का बोझ कैसे उठाओगे।"

माता ने हर तरह से समझाने का प्रयत्न किया। पुत्र! अभी तो तुम्हारे खेलने खाने के दिन है। मुनि जीवन कष्टो से भरा है, नंगे पैर चलना पडता है, खाने का कोई पता नही, सर्दी-गर्मी सब सहनी पडती है। अपने यहा किस बात की कमी है। घर, मकान, जमीन-जायदाद, व्यवसाय सब कुछ है, सब तुम्हारी ही है।

आपने माता-पिता से कहा कि-'ससार दुःखो से भरा है जितने भी महापुरुष हुए हैं सभी ने सुख त्याग कर

संयम अपनाया है इसलिए मुझे भी संयम अगीकार करना है।' माता-पिता ने कहा अभी तुम छोटे हो, बडे हो जाओ तब देखेगे।

कुछ समय बाद आप चुपचाप घर से निकल पडे। आसपास के क्षेत्रो मे वरिष्ठ संतो के चातुर्मास थे आपने वहा अपनी भावना व्यक्त की। परन्तु उनका व्यवहार देखकर आपका मन वहां नही लगा। आप उदयपुर पहुंचे। उदयपुर के वरिष्ठ वकील सा. श्रावक डूंगरसिंह जी सरुपुरिया एवं अन्य सुश्रावक आपको लेकर कोटा पहुचे। जहां परम पूज्य आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा का चातुर्मास था। आपने आचार्यश्री को वदन कर अपनी भावना व्यक्त की। आचार्यश्री ने फरमाया पहले तुम अपना मन लगाओ, हमारा आचार व्यवहार देखो। हम तुम्हारा आचार व्यवहार देखेगे उसके बाद दीक्षा की बात सोचेगे।

इस तरह आप आचार्यश्री के पास मन लगाकर ज्ञान आराधना करने लगे। वैराग्य की परिपक्वता को देखते हुए आचार्यश्री ने उदयपुर के वरिष्ठ श्रावकों से कहा कि वैरागी नानालाल संयम के योग्य हैं आप लोग इनके लिए परिवार वालो से आज्ञा पत्र का प्रयास करे।

इधर वैरागी नानालाल ने भी अपने माता-पिता के चरणो मे पहुंच कर आज्ञा पत्र का प्रयास किया। माता-पिता ने इंकार कर दिया हम आज्ञा नही देगे।

इस पर आपने अन्न-जल का त्याग कर दिया। त्याग का तीसरा दिन था। परिवार के सभी अग्रज उपस्थित थे। सभी ने कहा-अच्छा तुम पारणा कर लो हम आज्ञा पत्र दे देगे। आपने कहा पहले आप आज्ञा पत्र दें तब मै पारणा करूंगा। माता-पिता ने आज्ञा पत्र लिख कर दे दिया। आपने भी पारणा कर लिया। परिवार वालो ने चुपचाप आज्ञा पत्र निकाल लिया। पूछने पर परिवार वालों ने कहा तुम्हे भोजन करवाना था अत: हमने तुम्हें झूठा पत्र लिख दिया था। आप भी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल थे कि दीक्षा लेकर ही मानूंगा। इतना कह कर आपश्री आचार्यश्री के पास चले आए। उदयपुर के वरिष्ठ श्रावको ने परिजनोको समझा कर अथक प्रयास से लिखित मे दीक्षा की स्वीकृति ले ली।

उन्नीस वर्ष की किशोरावस्था में आपने समस्त सांसारिक सुखों का त्याग कर कपासन नगर मे पौष शुक्ला अष्टमी विक्रम संवत 1996 को आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा. के मुखारविन्द से श्रमण दीक्षा अगीकार की।

संयम अंगीकार करने के बाद आप विनीत गुणो से युक्त **'आणाए धम्मो'** के अनुसार शास्त्र अध्ययन करने लगे। आप अध्ययन मे इतने रत रहते थे कि कोई वंदना कर रहा है या नहीं इनसे बेखबर रहते थे। इस सुदीर्घ परिश्रम के परिणामस्वरूप आप शास्त्रो मे पारंगत हो गये। स्व-पर का आपको ज्ञान प्राप्त हो गया।

आपश्री बहुत कम बोलते थे। आपकी वाणी सुनने के लिए श्रावक-श्राविका ही नहीं साधु-साध्वी भी लालायित रहते थे। कभी गुरु आज्ञा से जब आप अपनी वाणी द्वारा ज्ञान की अमृत वर्षा करते थे तो समस्त श्रोतागण चातक की तरह स्वाति-नक्षत्र के जल की भांति आपकी वाणी का पान करते थे।

परम पूज्य आचार्यश्री गणेशीलाल जी म.सा. जब अस्वस्थ स्थिति में रहने लगे। तब सभी श्रावको के निवेदन पर आचार्यश्री ने भावी आचार्य के लिये मुनि नानालाल जी का नाम बताया कि मुझे तो हर दृष्टि से गुण सम्पन्न एव ज्ञान गरिमा से युक्त मुनि नानालाल ही उपयुक्त लगे। मैने नानालाल के जीवन को हर दृष्टिकोण से देखा परखा है। मुनि नानालाल ही आगे चलकर पद की गरिमा को कायम रखते हुए संघ की शोभा को चार चांद लगायेगे। आचार्यश्री की भविष्यवाणी सत्य साबित हुई।

जिस दिन युवाचार्य चादर समारोह था उस दिन आकाश मे घटाये छाई हुई थी। सभी के मन मे शका थी कि

समारोह सम्पन्न होगा या नही। वह दिन विक्रम सवत् 2019 की आश्विन शुक्ला द्वितीया का दिन था। सभी सत-सतिया विराजमान थे। लगभग 30 हजार की सख्या मे चादर समारोह को देखने के लिए जनता उपस्थित थी। जिस समय आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा. ने आपश्री को चादर प्रदान की, उसी समय बादल हट गए एव सूर्य की किरणे आपश्री पर पडी, मानो सूर्य देव आशीर्वाद दे रहा हो कि आपश्री सूर्य के समान तेजस्वी, यशस्वी एव देदीप्यमान हो।

आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा ने माघ वदी एकम के दिन संलेखना सथारा ग्रहण किया। माघ वदी द्वितीया के दिन भौतिक देह को पार्थिव शरीर के रूप मे छोडा। उस समय पूरे कमरे मे प्रकाश फैल गया। युवाचार्य श्री नानालाल जी म सा को माघ वदी दूज के दिन ही चादर प्रदान कर आचार्य पद पर आसीन किया गया।

आचार्य पद प्राप्त करने के बाद सवत् 2020 को रतलाम चातुर्मास के बाद आपश्री ने बलाई जाति के एक लाख से ऊपर लोगो को धर्म का मार्ग दिखाया एव धर्मपाल रूप मे परिवर्तन किया। कल तक जिनके हाथ मे छुरी रहती थी आज उनके हाथ मे माला, अनानुपुर्वी, मुहपत्ती है।

जब आपको आचार्य पद प्रदान किया गया आपके पास अल्प सख्या मे ही शिष्य समुदाय था। आपके प्रभावपूर्ण प्रवचनो एवं सन्मार्ग पर चलने की प्रवल प्रेरणा से प्रेरित होकर लगभग 350 मुमुक्षु आत्माओ ने जैन भागवती दीक्षा अगीकार की। रतलाम मे सन् 1984 मे आपके मुखारविन्द से एक साथ 25 दीक्षाओ का आयोजन हुआ जो एक कीर्तिमान है। हुक्म वश मे आप पहले आचार्य हुए है जिन्होने लगभग 37 वर्षों तक संघ का नेतृत्व किया।

आपकी संयम साधना से अनेको को वोध प्राप्त हुआ। आपके जीवन मे चमत्कारिक घटनाएं भी घटी। जैसे कोढी पुरुष का कोढ समाप्त हुआ एव प्रज्ञाचक्षु को आपकी मागलिक से नेत्र ज्योति प्राप्त हुई।

सन् 1976 नोखामडी चातुर्मास मे संवत्सरी के बाद क्षमापना पर्व पर कानीराम जी लूणावत की माताजी के नेत्र मे ज्योति नहीं थी। आचार्यश्री की मागलिक सुनते ही ज्योति पुंज प्रकाशवान हो गए। इसी तरह 1979 मे जोधपुर जिले के चाडीगाव मे हीरालाल जी छाजेड को आखो से कम दिखाई देता था। शुगर, हाई ब्लड प्रेशर भी था। आपश्री के मागलिक एवं चरण रज से नेत्रो की रोशनी तेज हो गई। आचार्यश्री के दर्शनार्थ यात्री बस आयी थी। आपने उनके खाने-पीने की व्यवस्था की। उसमे मिठाई बनी थी। छाजेड़ जी ने जी भर कर मिठाई खाई। आपकी शुगर हाई ब्लड प्रेशर ठीक हो गए। आपकी सयम साधना ने संघ ने आपको आचार्य पद के साथ-साथ धर्मपाल प्रतिबोधक, जिनशासन प्रद्योतक, समता विभूति आदि उपमाओ से अलंकृत किया है।

आपश्री का जीवन उज्ज्वल नक्षत्र की भाति था जो दूसरो के जीवन मे प्रकाश भर देता था। आपश्री ने जिस तरह ज्ञान एव सयम को अपनाया है वह सचमुच एक प्रशंसनीय कार्य है जो आप जैसा योगी ही कर सकता है।

आपश्री के चरणो मे यह चन्द पंक्तिया समर्पित करते हुए-

जय-जय-जय श्री नानालाल, जय-जय आपकी धर्मपाल।
मात-पिता के सदा दुलारे, आचार्यश्री के रहे प्यारे।
समता विभूति हो महान्, जय-जय-जय श्री नानालाल।
संयम पाल जगत घटाया, जग (बलई) के दुख को दूर कराया।
कैसे करूँ तुम्हारा गुणगान, जय-जय-जय श्री नानालाल।

भक्तों के भगवान् थे आचार्यश्री नानेश

✍ श्री सुमति मुनि जी म.स

नाम रोशन कर गये, गुणों का ना कोई पार है।
लेखनी ना लिख सके, जो आपका उपकार है॥

भारतीय संस्कृति ऋषि प्रधान संस्कृति है उसमे भी श्रमण सस्कृति की महिमा तप-त्याग, साधना पद्धति के रूप में सर्वोपरि है। श्रमण संस्कृति को ही आजकल जैन संस्कृति के नाम से जाना जाता है।

आचार्यश्री नानेश श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की पाट परम्परा के 81वें पट्टधर थे। आचार्य प्रवर स्व गुरुदेव श्री नानालाल जी म सा. श्रमण परम्परा मे प्रकांड बहुश्रुत महामनीषी आचार्य हुए है। आपका जीवन अदर एवं बाहर किसमिस के समान था, दर्पण के समान स्वच्छ और निर्मल था। चन्द्रमा के समान शीतल एवं सूर्य के समान तेजस्वी था। आपने जीवन का स्वरूप भोग नहीं योग, असंयम नही संयम जाना। इस पवित्र पावन साधना पथ पर दूसरो को चलाया ही नही, स्वयं भी चले। आपकी साधना अद्‌भुत थी।

साधुता के प्रबल पक्षधर :

आचार्य प्रवर साधना का प्रमुख महत्त्व देते थे। आप संयम साधना पर विशेष जोर देते थे। आपका कथन था कि साधक बनना सरल है क़िन्तु साधना कठिन है। साधु बनना कोई बड़ी बात नहीं, किन्तु साधुता आना बहुत ही मुश्किल है। आपश्री यदाकदा श्रमण-श्रमणियो, श्रावक एवं श्राविकाओ को संबोधित करते हुए फरमाते थे कि साधु को सिंह के समान संयम का पालन करना चाहिए, श्रृगाल के समान नही।

आचार्य प्रवर ठाणांग सूत्र का प्रमाण देकर फरमाते जैसे-

चत्तारि पुरिसजाया पण्णत्ता, तंजहा :

1. सीहंताए णाममेगे णिक्खंते, सीहंताए विहरइ,

2. सीहंताए णाममेगे णिक्खते, सीयालंताए विहरइ,

3. सीयालंताए णाममेगे णिक्खते, सीहंताए विहरइ,

4. सीयालंताए णाममेगे णिक्खते, सीयालंताए विहरइ,

अर्थात् 1 कोई पुरुष सिंह वृत्ति से प्रव्रजित होता है और सिंह वृत्ति से ही संयम मे विचरता है अर्थात् सयम का दृढ़ता से पालन करता है।

2 कोई पुरुष सिंह वृत्ति से प्रव्रजित होता है किन्तु श्रृंगाल वृत्ति से विचरता है अर्थात् दीन वृत्ति (शिथिलाचार) से संयम का पालन करता है।

3. कोई पुरुष श्रृंगाल वृत्ति से प्रव्रजित होता है किन्तु सिह वृत्ति से कठोर संयम क्रिया का पालन करता है।

4 कोई पुरुष श्रृंगाल वृत्ति से ही प्रव्रजित होता है और श्रृगाल वृत्ति से ही संयम का पालन करता हुआ विचरता है।

आचार्य श्री नानेश इस शास्त्रीय प्रसग को इतने मार्मिक शब्दो मे सरलता के साथ फरमाते थे कि जिस भी शिष्य-शिष्याओ के मन मे कोई न्यूनतम भी सयमचर्या मे कमजोरी एव लापरवाही होती तो तुरन्त दूर हो जाती थी।

आचार्यश्री कभी किसी की सयम विषयक कमजोरी देखते तो एकाएक उसको टोकाटोकी न करते हुए उसे सामूहिक शिक्षा प्रसग पर सभी को लक्ष्य मे करके ऐसे सरल तरीके से समझाते जो सबके लिए तो प्रभावी होती ही थी पर जिसमे उस विषयक गलत प्रवृत्ति होती वह अपने आप समझ कर सयम के प्रति सावधान व सावचेत हो जाता और दूसरे किसी को भी मालूम नही पडता कि आचार्यश्री ने यह किसके लिए कहा था। ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

मुनि को कैसा होना चाहिए इस पर फरमाते हुए आचार्यश्री कहते है कि-

"पुढविसमो मुणि हवेज्जा" (दशवैकालिक सूत्र)

अर्थात् मुनि को पृथ्वी के समान क्षमाशील एवं समभावी होना चाहिए। पृथ्वी पर कोई थूकते भी है तो कोई पूजते भी है पर दोनो स्थितियो मे पृथ्वी समभाव एवं क्षमाशील रहती है, उसी प्रकार मुनि की यदि कोई निदा करे अथवा स्तुति करे, मुनि को समभाव रखना चाहिए। सच्चा साधु वही है जो दोनो स्थितियो एवं अवस्थाओ मे मित्र हो या शत्रु सबके प्रति समभावी एवं क्षमाशील होता है। सत-सतीवर्याओ को शिक्षा देते हुए आचार्यश्री नानेश एक बात विशेष रूप से फरमाया करते थे कि आजकल युग के नाम पर साधुचर्या मे बदलाव लाने की आवाज बहुत उठ रही है लेकिन मेरा आपको यही कहना है कि आप जो भी कार्य करे उसमे यह पूर्णतया ध्यान रखे कि कही पच महाव्रतो मे कोई दोष तो नही लग रहा है। चाहे वह कितना ही समाज उत्थान, कल्याण आदि का कार्य ही क्यो न हो?

महाव्रतो की सुरक्षा के विषय पर आचार्यश्री नानेश फरमाते थे कि ये पच महाव्रत हमारी साधना के मूल केन्द्र है। मूल ही चला गया तो फिर क्या बचेगा? आचार्यश्री नानेश की यही शिक्षा आज हमारे जीवन के लिए वरदान, धरोहर, अमूल्य निधि है। इसलिए तो किसी कवि ने ठीक ही कहा है कि-

साहिल भी तू है, दरिया भी तू है
नाव भी तू और पतवार भी तू है
धरा रो रही है, गगन रो रहा है
नयन ही नहीं, आज मन रो रहा है
तेरी याद में आज गुरुदेव!
जहां रो रहा है, वतन रो रहा है।

2. अनासक्ति के महादेव :

आचार्यश्री नानेश सबके बीच रहते हुए भी सबसे निर्लिप्त रहते थे। खाना भी केवल शरीर चलाने के लिए थोडा-सा ग्रहण करते थे। कैसा भी भोजन हो उसके प्रति किंचित् भी आसक्ति नही रखते हुए समभाव से ग्रहण करते थे।

एक बार गोचरी मे बिना नमक की खिचड़ी आ गई थी। अन्य सतो को मालूम पड गया कि गृहस्थ खिचडी मे नमक डालना भूल गये हैं। जब सतो ने गुरुदेव से पूछा-'भगवन्! खिचडी कैसी लगी?' गुरुदेव ने मुस्कान बिखेरते हुए कहा कि-भाई खिचडी तो खिचडी है, जो खाने मे भी सरल और पचाने मे भी सरल।

गुरुदेव! खिचड़ी मे नमक कैसा था?

गुरुदेव ने कहा–यह मुझे ध्यान नहीं।

कहने का तात्पर्य यह है कि सच्चे साधक का भोजन करने का उद्देश्य मात्र उदर पूर्ति है न कि स्वाद लेना।

कहा भी है–'साधक जीने के लिए खाते हैं न कि खाने के लिए जीते हैं।' ऐसे उच्च कोटि के साधक को कोटिशः नमन।

आचार्यश्री नानेश का जीवन अनासक्ति का सागर था। जन–जन मे अनासक्ति का भाव पैदा करने के लिए वे कई उदाहरण दिया करते थे जिसमे राजस्थान के जोधपुर जिले के तिवरी गांव के श्री पीरुदान जी का उदाहरण विशेष रूप से फरमाया करते थे–

पीरुदान जी के अपने हाथ से लेकर खाना खाने का त्याग था। एक बार पीरुदान जी खाना खाने दुकान से घर आए, उनकी धर्मपत्नी किसी कार्यवश घर से बाहर गई हुई थी। घर पर केवल पीरु की अंधी मा ही थी। मां की ममता को यह मंजूर नही था कि पुत्र भूखा ही वापस दुकान चला जाए। वह रसोईघर मे गई। उसमे दो बर्तन पडे थे, उसमे एक में खिचड़ा तथा दूसरे मे पशुओं का बाटा था। मा अंधी थी अतः खिचडे के स्थान पर बांटा थाली मे रख पीरुदानजी को परोस दिया। पीरुदानजी ने बिना किसी रोष–आक्रोश से यह सोच कर कि पशु भी तो जीव ही है, वे भी तो खाते हैं मैं खा लूं तो क्या फर्क पड जाएगा, ऐसा सोच कर समभाव से बिना आसक्ति के अग्लान भाव से बांटा खा कर दुकान पर चले गए। बाद में पीरुदानजी की पत्नी भी घर आ गई, काफी समय बीत गया तो उसने अपनी सास से पूछा–'क्या बात है, अभी तक वे खाना खाने नही आए?'

सास ने कहा–'वे तो कभी के खाना खाकर वापस दुकान चले गए है। मैने अपने हाथ से उसको खाना परोसा है।' पीरुदान जी की पत्नी ने रसोईघर मे जाकर देखा तो खिचड़ा तो ज्यो का त्यो पड़ा है और बाटा वाला बर्तन थोड़ा खाली था। कहने का तात्पर्य यह है कि आचार्य प्रवर इस तरह का मार्मिक प्रवचन देकर जन–जन मे अनासक्ति के भाव सरलता से भरते थे।

आचार्यश्री नानेश इतने अनासक्त योगी थे कि वे अपने शिष्य–शिष्याओ को भाई–बहिन कहते थे कि आप तो मेरे भाई हो, आप तो मेरी बहनें है। तीन सौ से भी अधिक साधु–साध्वियां होने पर भी अनासक्ति का जीवन जीना उत्कृष्ट साधना का ही द्योतक है। ऐसे उत्कृष्ट साधक को मेरा कोटिशः वन्दन।

3. आचार्य श्री नानेश का प्रभावी व्यक्तित्व :

आचार्यश्री नानेश का प्रभाव न केवल जैन समाज पर अपितु जैनेत्तर समाज पर भी था। सभी यह जानते थे कि आचार्यश्री नानेश की सानी का संत दुर्लभ है। कथनी और करनी की एकरूपता के कारण ही आपका प्रभाव सर्वत्र गुलाब की खुशबू की तरह सुरभित था। जो भी आचार्यश्री के एक बार दर्शन करता वह जिंदगी भर आपको विस्मृत नहीं कर पाता। वह चुम्बकीय आकर्षण की तरह आपकी ओर खींचा चला आता। आपके चरणो मे बैठने से अपूर्व शांति की अनुभूति होती। जीवन के संघर्ष को भूल कर व्यक्ति का मन इतना प्रफ्फुलित–उल्लसित एव आनन्दित हो जाता कि उसकी सारी समस्याएं ही गुरुदेव के दर्शन मात्र से समाप्त हो जाती।

न केवल जैन बन्धु अपितु अजैन बन्धु भी आपके दर्शनार्थ हजारो कि मी. से दूर यात्रा करके भी आते। एक बीकानेर का अजैन बन्धु आचार्यश्री नानेश का परम भक्त था। वह बीकानेर स्थानक मे भी लगातार पाच सामायिक

प्रतिदिन करता था। एक बार गुरुदेव के दर्शनार्थ मुम्बई (बोरीवली) पहुंचा। उसने बीकानेर से ही यह शपथ ली थी कि जब तक गुरुदेव के दर्शन नही होगे तब तक अन्न जल ग्रहण नहीं करूगा।

मुम्बई (बोरीवली) पहुंचने के बाद भी 3-4 घण्टे तक आचार्यश्री के दर्शन सुलभ नही हो सके। आखिर बाद मे दर्शन करने के बाद ही अन्न-जल ग्रहण किया। ऐसे कई उदाहरण है। ऐसा था आचार्यश्री का अजैनो पर भी प्रभाव। ऐसे प्रभावी व्यक्तित्व को मेरा कोटिश. वन्दन।

4. शाति एव समता के सागर :

जिस गांव-नगर मे आचार्यश्री नानेश के पांव पडते, वहा वर्षों से चल रहे झगडे-तनाव थोडे से प्रयास या उपदेश से शात हो जाते थे। ऐसे प्रसग अनेको हैं। जहा वर्षों से झगडे चल रहे थे उनको खत्म करने के कई प्रयास लोगो ने तो किये ही पर कई सतो ने भी किए पर झगडे शात नही हुए पर आचार्यश्री ने ऐसे प्रसगो को भी सरलता-सहजता के साथ समाधान कर दिया कि वहा पर प्रेम-एकता-समरसता की पावन सरिता प्रवाहित हो उठी। एक कवि ने ठीक ही तो कहा है-

गांव-गांव सब तीरथ बन गये, जहां पगल्या थारा पडग्या,
दृढ़ प्रतिज्ञ शिष्य थांरा हिवडे मे सब रे जमग्या,
थांरी वाणी हे वीतरागी, म्हारी अन्तरात्मा जागी।
भावा सूं भरी रे थांरी आरती।
जय नाना झुक-झुक उतारू रे थांरी आरती।

एक बार उदयपुर निवासी प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ दौलत सिंह कोठारी आचार्यश्री नानेश के दर्शनार्थ देवगढ पहुचे। प्रवचन के पश्चात् आचार्य प्रवर से अलग से समय मागा। आचार्यश्री द्वारा दिए गए समय के अनुसार उपस्थित होकर आचार्यश्री से पूछा-'गुरुदेव। शाति कैसे मिले?' गुरुदेव ने कहा-'शाति धन मे नही अपितु धर्म मे है। आप सोचते होगे कि धन-वैभव से शाति मिलेगी पर यह आपका भ्रम एव भूल है।' डॉ साहब ने कहा-हां, पहले मै भी यही सोचता व समझता था कि धन-वैभव मे शाति है, पर आज यह अनुभव हुआ कि धन वैभवादि ही तो अशान्ति के कारक है। गुरुदेव ने फिर कोठारीजी को सयम, स्वाध्याय, समता, सहिष्णुता, समन्वय आदि के बारे मे विस्तार से समझाया। डॉ साहब बहुत ही भाव विभोर हो गए। उन्होने अपने जीवन को सामायिक, स्वाध्याय, सादगी से जोड लिया।

5. आचार्यश्री की अनमोल निधि :

आचार्यश्री नानेश के महान् शिष्य जो वर्तमान मे आचार्य श्री विजयेश के रूप में विख्यात है। आपको जब देखते है तो उसमे आचार्यश्री नानेश के ही दर्शन होते है। उठने, बैठने, बोलने व चलने आदि सारी प्रक्रियाओं मे सारे समय मे ऐसा परिलक्षित होता है कि हूबहू आचार्यश्री नानेश ही है।

आपकी प्रवचन शैली से प्रभावित होकर भक्तजन कहते हैं कि आचार्यश्री नानेश के प्रवचनो से जो शंका का समाधान होता था, वही समाधान आपके दर्शनो एवं प्रवचनो से मिलता है। मै यह यथार्थ कहता हू कि आचार्यश्री नानेश ने अपने सारे सद्‌गुण अपने शिष्य विजयेश मे भर दिये है तथा विनीत एव अन्तेवासी शिष्य विजयेश ने अपने गुरु के उपहार को बडी ही सजगता व तन्मयता के साथ आशीर्वाद के रूप मे ग्रहण कर उस दिव्यालोक से स्व पर कल्याण मे पूर्णत: समर्पित है।

6. आचार्यश्री नानेश अमर रहेंगे :

आचार्यश्री चाहे नश्वर शरीर से आज हमारे बीच मे नही है पर उनकी चतुर्विध एवं मानव समाज को दी गई ज्ञान, दर्शन, चारित्र, समता एव समीक्षण ध्यान की अनमोल निधि जो उनके उपदेशो के माध्यम से प्राप्त हुई है वह मानव समाज को सदैव दिशा निर्देश देती रहेगी।

आज हम उनके द्वारा दिए गए उपदेशों को अपने जीवन मे उतारते हुए दूसरों को भी उनके द्वारा बताए गए पथ पर आगे बढाने का कार्य पूर्ण मन से करेगे तभी आचार्यश्री नानेश के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी। अंत मे आपश्री जी के पावन चरण कमलों में श्रद्धा पुष्प समर्पित करते हुए मै यह कामना करता हू कि भले ही आपश्री जी भौतिक देहपिण्ड छोड कर हमारे बीच से पृथक् हो गए है लेकिन आपश्री की सद्भावना, मंगलमय वरद्हस्त सदैव मेरे ऊपर बना रहे जिससे मै आपश्री के पद्चिन्हो पर चल कर निजोत्थान एव समाजोत्थान मे अधिकाधिक प्रयास कर सकूं। जहां भी आपकी दिव्यात्मा गई उसको चरम एवं परम अनन्त शांति मिले यही मगल कामना करते हुए विनम्र भावों से श्रद्धांजलि अर्पित करता हू।

एक कवि ने ठीक ही कहा है-

तेरे गुण की गौरव गाथा, धरती के जन-जन गायेंगे।
और सभी कुछ भूल सकेंगे, पर तुम्हें भूला ना पायेंगे।।
आह गुले चीने अजल, तुझसे यह नादानी हुई।
फूल वो तोड़ा कि गुलशन भर में वीरानी हुई।।
हाथ बिन नाड़ी जैसे, जल बिना तालाब है।
फूल बिन खुशबू और प्रकाश बिन महताब है।
चांद बिन जैसे अंधेरा और सुनी रात हैं।
इसी तरह बिन आपके, सूना जैन समाज है।
व्यक्ति चला जाता है स्मृति रह जाती है।
हर फूल की मिट्टी में, महक रह जाती है।
धन्य है, वे जग में कि जिनके बाद।
श्रद्धा और आस्था से भरी गाथा रह जाती है।।

जीहाए विलिहितो न भद्दओ सारणा जहिं नत्थि।
डंडेण वि ताडतो, स भद्दओ सारणा जत्थ ॥17॥

मुह से मीठा बोलता हुआ जो आचार्य गच्छ के आचार की रक्षा नही कर सकता, वह अपने गच्छ का हितकर्त्ता नही, किन्तु अहितकर्त्ता है और जो आचार्य मीठा नही बोलता किन्तु ताडना करता हुआ भी गच्छ के आचार की रक्षा करता है, वह आचार्य कल्याण रूप है-आनददायक है।

समता के प्रकाशपुञ्ज-सूना है हुक्मकुञ्ज

✍ साध्वी श्री अनोखा कंवर जी म.सा.

प्रत्येक जीवात्मा ससार मे जन्म लेती है और भिन्न-भिन्न तरीकों से जीवन यात्रा पूर्ण कर अगले पडाव की ओर प्रयाण कर देती है, जैसा कि ठाणांग सूत्र के चौथे ठाणे मे चार प्रकार की बधी का विवेचन आता है-1 पुण्यानुबधी पुण्य, 2 पुण्यानुबधी पाप, 3 पापानुबंधी पुण्य 4. पापानुबधी पाप।

पूज्य गुरुदेव प्रथम कोटि के साधक साबित हुए। 79 वर्ष की जीवनयात्रा मे 19 साल घर में रहे तो भी सबसे छोटे होने के कारण (नाना होने के कारण) बडे ही लाड-प्यार मे रहे, दीक्षा ली तो भी मात्र एक उपदेश को सुन कर जागृत होने वाली पुण्यात्मा गजसुकुमाल के समान एवं आगे चलकर अपनी विनय, नम्रता से गुरु का दिल जीता तो ऐसा कि तृतीय पद के अधिकारी बने। यह सब तो रहा पूर्वभव की पुण्यवानी का सुफल परन्तु आपश्री के आचार्यकाल की उपलब्धियों को देखते हुए सहज ही स्वर प्रस्फुटित हो जाते है-अहो पुण्यानुबधी पुण्य के सर्जनकार।

1 सैकडो की तादाद मे भव्य आत्माओ का मोक्षमार्ग मे आरोहण कराने वाले।

2 दलित वर्ग का उत्थान कर नव्य एव भव्य जीवन का सर्जन कराने वाले।

3 सुदृढ आचार-व्यवहार का पालन करने वाले एव कराने वाले।

4 विषमता के अधकार मे समता का प्रकाश स्तम्भ जलाने वाले।

5 सथारा-सलेखना कर आत्मशुद्धि करने वाले।

प्रत्येक आरे मे लाखो-करोडो साधु-साध्वियो साधक जीवन व्यतीत करती है परन्तु सही तौर पर हम जिन्हे संत कह सके जो सही अर्थों मे साधुता को उपलब्ध हुए हो, ऐसी विभूतिया विरल ही होती है। इन विरल विभूतियों की कडी मे पूज्य गुरुदेव का नाम जुड जाना चाहिए। उनके जीवन मे साधुता की जो सुगध मिली, वह उनके अन्तर्हृदय से निकली सुगध थी, नकली या दिखावटी नही। जिनके जीवन के प्रति हर नजर मे आकर्षण रहा और मृत्यु के प्रति अफसोस। इसीलिए ही तो 27-10-99 की शाम जन-जन के लिए गम की शाम बन गई थी। पूज्य आराध्य देव अपनी जीवन यात्रा मे जितने सजग रहे उससे भी कही ज्यादा सजगता अपने अंतिम समय के प्रति रही। तभी तो उन्होने कुछ दिन पूर्व ही साथी सतो को कह दिया था-'देखो मुझे खाली हाथ मत भेजना।' जिनके मन मे संथारा-सलेखना की प्रबल भावना रही होगी वही ऐसा सोच सकता है क्योकि सम्पूर्ण जिदगी का सार जीवन के अतिम क्षणो मे ही निकलता है।

हे सघ अनुशास्ता! आपने अपने जीवन के अनमोल क्षणों का सुंदर सदुपयोग किया। जिनशासन को खूब बढाया, पल्लवित पुष्पित किया। अगरबत्ती के समान स्वयं जल कर वातावरण को सुवासित करने वाले तुझे खोकर जैनो ने जवाहर खोया, सतो ने एक महान् सत को खो दिया। जिसकी पूर्ति निकट भविष्य मे नहीं हो सकती है।

दीपक की भांति, संसार में जलता है कोई-कोई।
'नाना' गुरु की भांति, संसार में जीता है कोई-कोई॥

मोक्षमार्ग के पथिक! अपनी यात्रा पूर्ण कर शीघ्र मुक्ति-मंजिल को प्राप्त होवे, इन्हीं श्रद्धाभावो के साथ।

ब्रह्मा, विष्णु और महेश, उसके सम है गुरु नानेश

✍ महासती श्री सूर्यकान्ता जी म.सा.

त्रिमूर्ति स्वरूपा श्री आचार्य नानेश का व्यक्तित्व :

श्रद्धेय आचार्य श्री नानेश का व्यक्तित्व प्रत्येक आत्मा के लिए एक प्रेरणा स्त्रोत रूप है। आप श्री जी ब्रह्मा, विष्णु एवं महादेव रूप प्रतीत होते है क्योंकि जब आपश्री जी के निकट से दर्शन सेवा का मौका मिला, तब ऐसा महसूस हुआ कि आपश्री जी भव्य मुमुक्षु को सम्यग् बोध उत्पन्न करने में ब्रह्मा के तुल्य है। अनादि काल से सुंसुप्त आत्मा जो अभी तक सम्यग् बोध के अभाव मे संसार मे परिभ्रमण कर रही थी। उसको वीतराग वाणी के माध्यम से सही सम्यग् दर्शन का मार्ग दिखा कर उसके जीवन मे बोधि बीज को उत्पन्न किया है। ऐसे एक नही लाखों प्राणियो के लिए बोधि बीज उत्पन्न करने मे आप ब्रह्मा बने है।

आपका स्वरूप विष्णु रूप भी है क्योंकि जिस प्रकार ब्रह्मा से उत्पन्न सृष्टि का पालन पोषण विष्णु करते है, वैसे ही आपश्री जी मे विष्णु की तरह बोधि बीज उत्पन्न हुई आत्मा मे व्रतो से यानी देशविरति और सर्व विरति रूप व्रतारोहण कर उसकी पापो से रक्षा करते हुए सद्आचरण की शिक्षा से प्रतिपालना करने मे विष्णु रूप है।

आपका स्वरूप महादेव रूप भी है क्योकि पापो का, दुष्ट आचार वृत्ति का, अन्याय अनीति का संहार करने मे आप श्री जी बड़े सजग एवं सदा जागरूक रहते थे। आप अपने एवं आश्रित श्रमण-श्रमणियो को भी सदा यही शिक्षा देते थे कि अपने अन्दर कभी बुराईयो को गलतियो को असद् विचारो को प्रवेश मत होने दो। क्रोध को क्षमा से, मान को विनय से, माया को सरलता से एवं लोभ को संतोष से राग को निर्मोही बन तथा द्वेष को समत्व भाव से जीतने का प्रयास करो तभी आत्मा-परमात्मा के स्वरूप को पाने मे सक्षम बन सकेगा। ऐसी शिक्षा देने वाले आचार्य श्री नानेश का जीवन भी अपने आप मे समता की साकार मूर्ति स्वरूप था। त्रिगुणात्मक रूप से आचार्य श्री नानेश को 'त्रिमूर्ति' कहे तो कोई अतिशयोक्ति रूप नही होगा, त्रिगुणात्मक देव की अपेक्षा से। गुरु की अपेक्षा से भी आचार्य नानेश मे तीन गुरु के गुण विद्यमान थे। आचार्य श्री श्रीलाल जी म सा जैसी त्यागवृत्ति एव सहिष्णुता थी तो युग प्रधान आचार्य जवाहरलाल जी म सा जैसी ज्ञान गरिमा शास्त्र मर्मज्ञता तथा प्रवचन पटुता थी। शान्त क्रान्ति के अग्रदूत आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा जैसी आचार संहिता एवं दृढता से संयम साधना मे जागरूकता थी। अत: तीन गुरु भगवन्तो के गुण आपश्री जी मे दृष्टि गोचर होते थे। अत: त्रिमूर्ति रूप थे। महापुरुषो मे तो अनेक गुण होते है। उसमे मेरी अल्प बुद्धि सभी का गुणानुवाद करने मे सक्षम नहीं है। अत: अल्प बुद्धि अनजान अथवा **'अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहास धाम'** की युक्ति मुझ मे चरितार्थ होती है।

महापुरुष में त्रिदेव, त्रिगुरु की तरह त्रिधर्मात्मक का स्वरूप भी पाया जाता है। उत्कृष्ट धर्म की आराधना साधना तथा प्ररूपणा त्रयात्मक रूप से करते थे। अहिंसा, सयम और तप ये तीन उत्कृष्ट धर्म है। **'सव्व जग जीव रक्खण दयट्ठाए पावयणं पवेइया भगवं'** इस प्रश्न व्याकरण सूत्र के अनुसार सभी जीवो की रक्षा रूप दया के स्वयं अहिंसा की आराधना पूर्वक साधना करते तथा प्रवचन के माध्यम से प्ररूपणा करते थे। सयम-इन्द्रिय निग्रह रूप विषयों से जीवन को संयमित रखना, सत्रह प्रकार से संयम की आराधना साधना तथा प्ररूपणा करना सयम धर्म को धारण करना।

तप-इच्छा निरोध रूप तप की आराधना, कर्मों से कलुषित आत्मा को तप की अग्नि मे तपाना और उससे आत्मा को पावन पुनीत बनाना इसमे बारह प्रकार का तप है। आचार्य नानेश मे बाह्य तप की अपेक्षा भी आभ्यन्तर तप की विशेषता थी जो उत्कृष्ट कर्मों की निर्जरा करती है। कषाय प्रतिसंलीनता रूप-क्रोध आवेश आदि से आप सदा दूर रहते थे। विषम से विषम परिस्थिति मे भी आप समता को विस्मृत नही करते थे। अत: दीर्घ अनुभवियों ने आप श्री जी को 'समता विभूति' समझ कर 'समता विभूति' विशेषण से सुशोभित किया। त्रयगुणात्मक धर्म को भी अपने जीवन का अग बनाया था। अत: आचार्य श्री नानेश का व्यक्तित्व देव गुरु और धर्म के त्रयगुणात्मक रूप होने से त्रिमूर्ति स्वरूप था। महापुरुषो के प्रति मेरी हार्दिक श्रद्धाजलि समर्पित हो तथा वैसे गुण मुझ अल्पज्ञ साधिका के जीवन मे भी प्राप्त हो, ऐसी भावना रखती हू। जैसी आचार्य श्री नानेश की कृपा दृष्टि थी। वैसी ही वर्तमान आचार्य श्री विजयेश की रहे। ऐसी मंगल कामना करती हूं।

मुक्तक

साध्वी सुरेखा श्री जी म.सा.

शांत दात गंभीर विचारक मधु से मीठी वाणी थी
दया प्रेम करुणा ममता की, देखो एक निशानी थी
निश्छल-निर्ग्रन्थ अद्भुत योगी, नहीं दूसरा शानी थी
धैर्य-धर्म-धीरज का जिसमें, बहता निर्मल पानी था ॥1॥

नैनों के झरनों से हरदम, निर्मल शांति झरती थी
मुखमण्डल की आभा नित ही, जन-मन पावन करती थी
मन मंदिर में ज्ञान दीप की, ज्योति हरदम जलती थी
किरणों से नव किरण निकलती, सबकी आशा फलती थी ॥2॥

जीवन के कण-कण में ममता, समता सागर लहराता।
संयम के सौरभ से सुरभित, शुभ समीर बहता जाता।
अंदर से बाहर तक सारा, निर्झर झरना झरता है।
शांति क्षमा का पुण्य सरोवर, सबका कलिमल हरता है ॥3॥

जय गुरुदेव

✍ साध्वी श्री पारसकंवर जी म.सा.

इस संसार में चन्द्र सूर्य ही ऐसे है जो नि:स्वार्थ भाव से सभी आत्मा को अपना प्रकाश देते है। प्रभु महावीर की वाटिका मे अनेक महापुरुष हुए है। उन्ही मे हमारे चरित्र नायक गुरु महान् जाज्वल्यमान थे उनके व्यक्तित्व को बताना चाहती हूं।

इस संसार मे सूर्य चन्द्र की तरह थे, जिनका हर सिरियल समता, सहिष्णुता, सरलता, वाणी की विशालता अपने आप मे अनूठा अनुपम था। वे मानव के हृदय को सरसब्ज बनाने मे जादूगर थे। आपश्री का सीधा-साधा रहन-सहन था, सीधा-साधा व्यवहार था और सीधा-सादा जीवन था, जो आता समता से भर जाता था। इस विराट विश्व मे प्रतिपल-प्रतिक्षण हजारों-हजार आत्माए जन्म लेती है और क्रूर काल के महाप्रवाह मे बह जाती है। न उनके जन्म पर आनन्द की उर्मिया उछलाती है और न मृत्यु पर शोक के अश्रु ही छलकते। वे जिस प्रकार आते है उसी प्रकार चले जाते है। न उनका आना महत्त्वपूर्ण होता है, न जाना ही। पर कुछ ऐसी विशिष्ट विभूतिया होती है जो अपने पवित्र चरित्र के द्वारा प्रतिभा की तेजस्विता के द्वारा जन-जन के अन्तरमानस पर अपनी छवि अकित कर देती है। जो भुलाने पर भी भुलाई नहीं जा सकती। क्रूर काल की छाया उनकी सुनहरी छवि को धुंधली नही बना सकती। वे कालजयी होते है। युग-युग तक वे प्रकाश स्तम्भ की तरह प्रेरणा प्रदान करते है।

जैन धर्म के इतिहास मे हजारो ऐसे महापुरुष हुए है जिनका जीवन ज्योर्तिमय था। जिनका आचार और विचार व समता पवित्र थी। इन सभी गुणो से हमारे चरित्र नायक आचार्य नानेश जो कि पाश्चात्य चिन्तको की तरह वे जीवन मे आचार और विचार व समता को पृथक्-पृथक् नही मानते थे। उनकी कथनी और करनी पृथक्-पृथक् दिशा मे नहीं थी। व्यक्तिगत जीवन कह कर आचरण के क्षेत्र मे वे उपेक्षित भी नही थे। जो विचार मे था, जो मन मे था, वही वचन मे था और वही कर्म मे। इसलिए उनके दिव्य जीवन की अमिट छाप जन-जीवन पर आज अकित है।

जैन श्रमण परम्परा के एक तेजस्वी, ओजस्वी समता की साकार प्रतिनिधि सन्तो मे श्रेष्ठ विद्या के साथ विनय, अधिकार के साथ विवेक, प्रतिष्ठा और लोकनिष्ठा के साथ सरलता का ऐसा अद्‌भुत संगम है जो विरले व्यक्तियो में ही मिलता है। पर ये सारे गुण हमारे चरित्र नायक आचार्य नानेश में थे जिनका कि शास्त्रीय ज्ञान अतुल गहराइयो पर पहुंचा हुआ था।

आपका यह विचार समता रूप, गुरुदेव शब्दों में नहीं समाता
जितना कुछ लिखूं पर लिखने को शेष रह जाता।

सामाजिक, आध्यात्मिक समता रहस्यो मे भरे प्रश्नों का प्रत्युत्तर उच्चतम गहराइयो की स्पर्श करते हुए होता था। प्रश्नकर्ता आत्म सन्तुष्ट भाव से अपने स्थान पर पहुंचता था और सेवा भाव आपके रोम-रोम मे स्पर्श कर चुका था। अपने आराध्य गुरुदेव की सर्वांगीण देखभाल करने का उत्तरदायित्व आप पर ही था। सेवा गुण के साथ-साथ नम्रता, सरलता, दक्षता, कर्त्तव्य परायणता व सामाजिक धार्मिक उन्नति की अवधारणा भी आपके जीवन का परमोत्कर्ष चिन्तन था और प्रमाद आपके जीवन मे कोसो दूर रहता था। आपका जीवन प्रशंसनीय ही नहीं आदरणीय समादरणीय भी था।

प्रभु महावीर ने कालजयी होने के लिए अमर सूत्र दिया है कि हे साधक। तू हमेशा भारण्ड पक्षी की तरह अप्रमत्त होकर विचरण कर क्योकि **'अप्पमत्तो नत्थि भयं'** जो साधक अप्रमत्त होकर साधना मे रत रहते है वे कालचक्र के क्रूर घेरे से मुक्त हो जाते है। उसी लक्ष को लेकर प्रगति पथ पर चलने वाले मेरे आराध्य गुरुदेव ने ससार की असारता जान कर, यौवन वय में दीक्षा लेकर अपने जीवन को गुरु सेवा एव अध्ययन मे लगा दिया। साधना मे अपने व्यक्तित्व का निर्माण किया, दीर्घ साधना काल मे पूज्य गुरुदेव नानेश ने धीरता, वीरता, गम्भीरता, समता के दरिया से जो जिनशासन की प्रभावना की और लाखो प्राणियो को आपने अपनी अमृतवाणी से सीचा। अजैनी को जैनी बनाया और गांव-गांव, डगर-डगर, अनेक देश-प्रदेश के कोने-कोने मे विचरण कर समता का सुन्दर प्रचार किया, कितनी भव्य मुमुक्षु आत्मा की नैया के खेवन हार एवं पतवार बने। हे भगवन् नानेश, आराध्य देव। आपने मुझ बाला को भी इस ससार के अपार खड्डे से निकाल कर भगवन् मेरे भव सीमित कर दिये, न मालूम मेरी यह पामर आत्मा कहा पर गिरती पर मेरे गुरु हृदय के हार जीवन के खेवन हार, प्रभु करना मुझ को भव से पार। आपका महान् उपकार इस जीवन मे क्या किसी भी भव मे नही भूल सकती हूं।

हे प्रभो। आराध्य देव आपके अथाग गुणो को किन शब्दो मे आबद्ध करूँ मेरी शक्ति के बाहर है।

हे महा प्राज्ञ, हे महा भाग्य।
ले जन्म धरा को धन्य किया।
अज्ञान मोह मद के विषय को
तुमने जन-जन को मुक्त किया।

नव जागृति का उद्बोधन दे,
शिक्षा और सद् संस्कार दिये।
अगणित जीवों को अभय दान,
करुणा की रसमय धार लिये।
सचमुच में थे समता सागर,
सदा समता सत्य पर रहे अटल।
आप हमें सदा याद आते रहे हर पल
श्रद्धा सुमन जीवन बने निर्मल।

आचार्य भगवन् की प्रवचन कला अत्यन्त आकर्षक थी। जब आप प्रवचन फरमाते तब सारी सभा मंत्र मुग्ध हो जाती थी। हास्यरस, करुणारस, वीररस और शान्त व समतारस सभी रसो की अभिव्यक्ति आपकी वाणी मे सहज होती थी। उसके लिए आपको किंचित् मात्र भी प्रयत्न नही करना पडता था, क्योकि आपकी वाणी मे मृदुता, मधुरता और सहज सुन्दरता थी। वक्तृत्व कला स्वभाव से ही आपको प्राप्त थी। किस समय क्या बोलना, कैसे बोलना, कितना बोलना यह आप अच्छी तरह से जानते थे, आप बडे अवसरवादी थे। आप जहा-जहा जाते एव पधारते तो आप की जय-जयकार होती रहती।

आपकी अमृत वाणी का जादू :

सरदार शहर की जीती जागती एक झाकी जो कि थलीप्रान्त मे बबरची शेर से पुकारे जाते थे, धर्मनिष्ठ श्रद्धावान् श्रीमान् मोतीलाल जी बरडिया क्रातिकारी युग प्रणेता स्व आचार्य श्री 1008 जवाहरलाल जी म सा एव

शासन शिरोमणि श्री 1008 श्री गणेशीलाल जी म.सा. और अष्टम पाट समता दर्शन के प्रणेता जिनशासन उद्योतक धर्मपाल प्रतिबोधक, आराध्य देव आचार्य श्री नानेश का सवत् 2031 का चातुर्मास सरदार शहर मे था उस समय महास्थविर श्रमण श्रेष्ठ श्री शांतिमुनि जी का भी चारित्र नायक आचार्य भगवन् की सेवा मे ही चातुर्मास था और परम विदुषी पूज्य अनोखा श्री जी म.सा व परम विदुषी पूज्य सूर्यकान्ता जी म सा. आदिठाणा-6 जिसमे मेरा भी सौभाग्य कहू कि मेरा भी सेवा मे रहने का मौका मिला था। सारी बात कहने को नहीं चाह रही हूं केवल मै वहा के एक बहुत बडे स्वर्ण अवसर को कहना चाहती हूं कि आचार्य भगवन् श्री नानेश का उन बरडिया परिवार पर क्या जादू-सा असर हुआ जो वर्षों एक स्थान पर रहना और काका व भतीजा का 40 वर्ष का जबरदस्त मनमुटाव चल रहा था। एक-दूसरे को देखना भी नहीं चाहते थे, बोलना तो बहुत दूर की बात थी। कुछ प्रेरणा तो महास्थविर श्री शातिमुनि जी म सा. की थी और अवसर आया महापर्वाधिराज क्षमायाचना का। सभा खचाखच भरी हुई थी। समोसरण सा ठाठ लग रहा था। ऐसे अवसर पर नानेश की उस अमृतवाणी ने काका मोतीलाल जी भतीजा कन्हैयालाल जी दोनों के वर्षों से टूटे हुए दिलों को जोड़ दिया था।

हे भगवन्, आपकी समता, आपकी ममता, आपकी मधुरता, आपके विजय पर थी इसलिए भगवन् आपने दही और गुड दिया। गुड-दही ही नही आपने उनको अन्तर हृदय का आशीर्वाद दे दिया। विजयमूर्त विजेश को विदा किया और आपका वरदहस्त वहां नही तो यहां उनको संघ नायक बना दिया। हे प्रभो, यह आपका ही पूर्ण समता का झरना है। आपने इनके जीवन के कण-कण को सजाया और मरुधर सिंहनी जिनशासन विभूति जो कि जिनशासन के अनुभूतियों से सजी हुई विचारों में सजी हुई इन अमूल्य रत्न को खोया नहीं पर अपनी सूझबूझ के मालिक गुरणीमैया श्री नानुकंवर जी म सा ने एवं ज्ञान की मसीहा संघ रक्षक परम पूज्य महास्थविर श्री श्रमण श्रेष्ठ श्री शांतिमुनि जी म सा , गणमान्य वरिष्ठ श्रावक श्री संघ ने निरखा और परखा। चतुर्विध सघ की नाव के खेवनहार, भगवान् के 83वें पाट एवं क्रांतिकारी हुक्मगच्छ के अनुशास्ता प्रज्ञानिधी, शासन गौरव नवम पट्टधर चमकता सितारा, श्री संघ का प्यारा, आराध्य देव नानेश की बगीया का श्री श्री आचार्य विजेश है रखवारा, आठ संपदा के पालनहारा है, हे प्रभो विजेश तेरी आज्ञा पर चलेगा चतुर्विध संघ सारा। जय हो, विजय हो सदाकाल।

तुम्हें हम ला नहीं सकते, हे प्रभो तुम अब आ नहीं सकते।
लाखों यत्न करके भी, अब तुम्हें पा नहीं सकते।।

कैसे कहे विछोह हुआ है बने हुए हो जब परछाई

✍ विदुषी साध्वी रत्ना श्री चन्दनबाला जी म.सा.

बाग का हर सुमन सौरभ सुषमा नही बिखेरता, गगन मण्डल का हर घटाटोप मेघ सावन बन कर नहीं बरसता, हर पर्वत प्रकृति को झरनो का सुरम्य सौन्दर्य प्रदान नही करता, वैसे ही सृष्टि का हर मनुज सुरनर द्वारा पूजित अर्चित, चर्चित नही होता, किन्तु जिन्होने अपनी महानता, दिव्यता, भव्यता से जन-जन के अर्न्तमानस को अभिनव आलोक से आलोकित किया है उन्हीं विरल विभूतियो की शौर्य-वीर्य-पराक्रम पूर्ण गौरवगाथा इतिहास के सौभासिक पृष्ठो पर स्वर्णाक्षरो मे अकित होती है।

चरित्र दिवाकर, ज्ञान सुधाकर, परम पूज्य, परम आराध्य आचार्य श्री नानेश का महान् गरिमा-महिमा मण्डित व्यक्तित्व एव कर्तृत्व जिनशासन क्षितिज पर जाज्वल्यमान नक्षत्र की तरह युगो-युगो तक दिप्तिमंत रहेगा।

ज्योतिपुज अलौकिक चेतना पूज्य गुरुदेव को मै क्या अर्ध्य चढाऊ? क्या श्रद्धाजलि समर्पित करू? जो मेरे इस जीवन के अविभाज्य अश, हृदय की अमिट आस्था तथा सदा-सर्वदा प्रदीप्त रहने वाली आत्मा की अखण्ड ज्योति है।

उस प्रखर-प्रचेता ने कुशलमाली की तरह अपने नेतृत्व की सघन छाव मे हमे बरसो तक श्रेयोमय ज्ञानसुधा से सिचित करके अपनी समता-ममता युक्त जीवनधारा से पल्लवित-पुष्पित किया। मेरे संयमी जीवन के सुसज्जित विन्यास मे उनकी कुशल अनुशासन शैली से सक्षम कलाकार का कार्य है। सयमी जीवन के अनेको प्रसगो पर उस महायोगी की वात्सल्य धारा मे निमज्जित होने का अनुपम अवसर प्राप्त हुआ। उस दिव्य विभूति का तात्कालिन स्नेहासिक्त, करुणापूरित हृदय एवं गुरुत्व का अहोभाव, जीवन के अंतिम क्षणो तक विस्मृत नही किया जा सकता।

परम कृपालु गुरुदेव की करुणार्द्र निगाहो मे मैने जो अमीरस बरसता हुआ देखा है, उनकी वाणी मे जो माधुर्यपूर्ण चुम्बकीय कशिश देखी है तथा चेहरे पर अद्य विकसित पुष्प-सी मुस्कान, हृदय मे ज्ञान सौरभ और ललाट पर तप साधना का जो सौन्दर्य छलकते हुए देखा है वह अद्भुत व अवर्णनीय था, जिन्हे देखते हुए आंखे अघाति नहीं थी, मन भरता नही था आज भी उन आह्लादकारी मधुर सस्मरणो के वातायतन से गुजरता हुआ यह मन कोष तोष से भर जाता है।

आध्यात्मिक ऊचाईयो के अनुरूप जिनकी अन्तःचेतना ढल चुकी थी ऐसे विराट व्यक्तित्व का मुझ पर ही नहीं मेरे सम्पूर्ण परिवार पर अविस्मरणीय उपकार रहा है। उस बेजोड सृजनहार ने शिष्य प्रशिष्य के भव्य जीवन निर्माण मे भी गजब की कमालियत हासिल की थी। उनकी सम्पूर्ण शक्ति सदा उदात्त सृजनात्मक कार्यों मे ही नियोजित रही।

यद्यपि उस दिव्यविभूति के जीवन की साध्य बेला मे उनका संघ किन्हीं कारणो से ऐसा विकट मोड पर पहुच गया कि जिस अनहोनी मजर की स्वप्न मे भी कल्पना नही की जा सकती थी जिसका मेरे साधनागत जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पडा।

सघ मे व्याप्त अव्यवस्था एव आक्षेपात्मक रवैये के कारण मुझे अपनी संयम की सुरक्षा हेतु कुछ कठोर

निर्णयात्मक कदम भी उठाना पडा तथापि उन परम कृपावतार के उपकारो को कभी भी विस्मृत नही किया जा सकता।

ब्रह्मचर्य जिनका सर्वस्व था वह निरंजन चारित्र का चमकता हीरा वर्तमान मे दैहिक दृष्टि से महाप्रयाण कर गया है पर उनका भावात्मक स्वरूप आज भी हमारी रग-रग मे व्याप्त है, प्रतिपल मन वीणा के तारो मे अनुगुंजित है।

न हम जुदा हुए न हमने तुम्हें विदाई दी है
क्योंकि तुम्हारी ही प्राण चेतना हमारे प्राणों के बीच समाई।
हे महाप्राण तुमसे ही अब तक इन प्राणों ने गति पाई।
कैसे कहे बिछोह हुआ है बने हुए हो जब परछाई।
वह ज्योति अब सदा जलेगी, तुमने जिसको हमें थमाई।

परम पावन परमोपकारी पूज्य गुरुदेव ने अपने जीवन के अंतिम क्षणो तक दिया ही दिया है। मुझे ही क्या सम्पूर्ण अखिल भारतवर्षीय हुक्मगच्छीय शातक्रांति संघ को एक सशक्त जिम्मेदार कर्णधार के रूप मे जन मन मंगल दीप, विजय वरदान दिया है जिनके सुदृढ नेतृत्व में यह संघ आशातीत उन्नयन के पथ पर अविराम गति से प्रवर्धमान है जिनकी पुरुषार्थ युक्त सोहरत स्वत: ही मुखरित हो रही है।

उन चिन्मय चिरागों को बुझाने की है किसमें हिम्मत।
जिन चिरागों की आपने हिफाजत का जुम्मा ले रखा है।

हे! पूज्यपाद नानेश तुम्हारी असीम कृपा किरणों से हुक्म सघ आफताब श्री विजय सरताज अपनी निर्मल ज्ञान दर्शन चारित्रमय दिव्य रश्मियो से इस अवनितल पर मोह तिमिर से परिक्लान्त, भव भंवर से भयाक्रात, असख्य-असंख्य जन समुदाय के बंधन मुक्ति मे परम सहायक बन कर अष्टाचार्य की यशोपताका सदियो तक दिग्दिगन्त मे फहराते रहेंगे।

तेरे गुलशन के गुल से फिर वही गुलजार बन गया।
तेरी ही जीनत देखी है जिसमें वह विजय बागवां बन गया
कोई बेखबर हो तो क्या हो तेरे तलबगार बन्दे तो वाकिफ है
कि कुदरत भी हिमायती थी जिनकी वह काबिले करतार बन गया।

अन्त मे . ऐसे बेमिसाल व्यक्तित्व के गुणवर्णन मे कलम कमजोर व शब्द के बोल बौने प्रतीत होते है और कुछ ऐसा एहसास होता है कि विराट सलिलाराज को भुजाओ से नापने का प्रयास हो रहा है। उस महाचेता के गहरे जीवन पृष्ठो को शब्दों मे बांधना उन्हे क्षुद्रता मे ले जाना ही कहलायेगा अत: उस अद्वितीय महान् साधक के प्रति शब्दांजलि नही भावाञ्जलि अर्पित करना ही मुनासिब समझती हूं।

महान् मतिमान पूज्य गुरुदेव के प्रति यही भाव सुमन समर्पित करती हू कि हजारो हजार भव्य मुमुक्षु आत्माओ को आध्यात्मिक पाथेय प्रदान करने वाली वह विशिष्ट आत्मा अविलम्ब निरतिशय निकाय को प्राप्त कर सिद्ध बुद्ध मुक्त बने इसी मंगल कामना के साथ।

प्रेषिका : वर्षा भंसाली

वात्सल्य की विरासत

✍ चितनशीला वसुमती जी म.सा

प्रभात का परिवर्तन सन्ध्या एव सन्धया का परिवर्तन प्रभात ऐसे ही जन्म मरण का प्रवाह बह रहा है।

सागर की नृत्य करती असख्य लहरो और गगन मे झिलमिलाते असख्य तारो की तरह चितन के आत्मीय क्षणो मे जगते हुए हर पल कितनी मधुर, प्रियाप्रिय स्मृतिया है मेरे साथ। मेरे ही साथ क्यो? हर शख्स के साथ अपना दिव्य आलोक भरा खजाना है। इन ज्योर्तिमय स्मृतियो का पुलिदा है मेरा जीवन। इन्ही स्मृतियो का एक आधार है आचार्य गुरुदेव नानेश।

जिनशासन के बसत मे बहार लाने वाले मेरे आराध्य देव आचार्य नानेश ने सथारा देवलोक ये अनचाहे शब्द ज्योही श्रुतिगोचर हुए, दिल मे हलचलो का सिलसिला जारी हो गया, क्या मेरे अनत उपकारी आचार्य नानेश दिव्य लोक को सुशोभित करने । विश्वास नही। पूज्य गुरुदेव की वो समता सिचित मासूम मूरत आज भी ज्यो कि त्यो आखो मे शाश्वत है। दिल से उस वात्सल्य की विरासत को कोई दूर नही कर सकता। जिन्होने अपने नेतृत्व काल मे श्रम, समन्वय, सगठन को आत्मसात् कर श्रमण सस्कृति के प्रकर्ष मे चार चाद लगाए। आचार्य नानेश स्थानकवासी समाज मे अनुपम अद्वितीय हस्ती के रूप मे निखरे। जिसके कुछ नमूने एक साथ 25 दीक्षाए, बलाई जाति को सद्सस्कार दे धर्मपाल बनाना, समता दर्शन व समीक्षण ध्यान जैसी विश्व को अभूतपूर्व देन। ऐसे आचार्य भगवन् पर हमे नाज था, है व रहेगा। जिन्होने मुझे सयम का चिरतन सार बताया। पूज्य गुरुदेव का ऋण जन्म-जन्म तक भूला नहीं पाऊगी। वो समता की जीवत प्रतिमा विश्व के कोने-कोने मे विख्यात हो गई। किन्तु कहा है-

"समय-समय का फेर है, समय-समय की बात।
किसी समय में दिन बड़ा, किसी समय में रात।।"

सघ को सुमेरु सी ऊचाईया दी किन्तु क्या कहू? या कह दू नजर लग गई। गुरुणी प्रवर श्री नानूकुवर जी म सा ने सघ भवन की इमारत को फौलाद बनाने हेतु काफी सुझाव दिए, मगर होनी, नूतन क्राति का दौर आचार्य नानेश के मगल आशीर्वाद से शुरू हुआ। इसी मरुधरा (बीकानेर) से साहसी सयत समूह ने सत्य, सयम व न्याय का बीडा हाथो मे थामा और चल पडे मेवाड की ओर। उदयपुर मे नये सघ का गठन हुआ तभी से इस नूतन गण के पुरोधा पराक्रम व परिश्रम की पूजी लगा सघ को व्यवस्थित करने मे जुट गये और सुव्यवस्थित कर ही दम लिया। पूज्य गुरुदेव के पास आने वालो की अलग-अलग भूमिकाए थी, अलग-अलग अपेक्षाए थी। बहुत कुछ अनुकूल, बहुत कुछ बेमेल भी रहा। फिर भी उस महान् क्षीरोदधि से सभी को मनचाहा, अपेक्षा अनुसार अभूतपूर्व खजाना मिलता रहा। देने वाले को पता नहीं कितना दिया, लेने वाले को पता नहीं कितना, कब, कैसे पा लिया। पाने वाला इतना ही जानता कि उसके जीवन की गति, शक्ति कृति के पीछे उस महान् गुरु के अमोघ आशीर्वाद स्वरूपी अजस्त्र श्रोत का ही प्रभाव है।

गुरु वो ज्योर्तिमय दीप है जो अपने ज्योर्तिमय सस्पर्श से न जाने कितने अनजले दीयो को ज्योति का आभा मडल सौगात मे देते हैं। गर शिष्य शब्द है तो गुरु उसमे समाये अर्थ को प्रगट कर देते हैं। शिष्य फूल है तो गुरु सुवास। शिष्य सूर्य है तो गुरु उष्मायित प्रकाश। गुरु को भी शिष्य की तलाश रहती है जैसे कठ पानी की तलाश करता

है तो पानी पात्र की तलाश का प्यासा है। गुरु की तलाश करने की पात्रता कहां थी मुझमें? गुरु ने सिर पे हाथ रख दिया, बस मैं निहाल हो गई। ऐसे थे मेरी आस्था के आयाम आचार्य नानेश। कुछ भी लिखने बैठती हूं तो मेरे हाथ सबसे पहले **'जय गुरु नाना'** को रूपायित करते हैं अक्षरो मे। आचार्य प्रवर के सद्गुणों का संकीर्तन कलम की नन्हीं-सी नोंक करने में कहां समर्थ? कोई बौना कलाकार निसर्ग की छटा को अपनी तुलिका से रंग स्नान कराने मे कहां सक्षम? फिर भी आपकी (Rocking Price) रोकिंग प्राइज गगनस्पर्शी मूल्यवत्ता कहां अदेखी है? जिन्होने शात क्राति संघ को उपकृत किया। एक तरफ ज्योति विलय, दूसरी तरफ ज्योत्सना (कुमुदिनी) का सर्वोदय।

अजमेर मे चतुर्विध सघ ने **'तरुणाचार्य विजय'** को अपने शास्ता के रूप में आचार्य का उत्तरीय धारण करवाया तो मानो वसुधा पारिजात सी महक उठी। जिनकी देह आकृति मे महापुरुषों (जवाहर-गणेश) के लक्षण हैं। पांवो में श्रम के निशान है, आखो में स्नेह का वर्षण है, भुजाओं मे पौरुष का बल है, जो सभी के समीप है यानी **'समय को सम्मान देने वाला सम्मानित होता है'** की उक्ति को चरितार्थ किया है। इस विश्व के रंगमच पर अगणित देह पात्र अपना अभिनय अदा कर विदा हो चुके, कुछ पात्र ऐसे होते हैं जिनके अभिनयों की छाप चिरस्थायी होती है। आचार्य नानेश ने एक कोहिनूर **''आचार्य विजय''** के रूप मे संघ को सौंपा। जिनका सरल तरल जीवन है। हे मरुधरा के लाल! सोनावत कुल के उजालों का चिराग।

शांत क्रांत सघ का उन्नयन तेरे ही फौलादी कंधो पर है। आप श्री शीघ्र ही आरोग्य की आर्यधरा पर अहर्निश अठखेलियां करते पूर्ण नैरोग्य के नंदन वन की तरफ गतिशील बने। युग का आह्वान तेरे (विजय के) मांगल्य का महागुंजन करता रहे। **मेरी कामना के बसंत! हो युगों-युगों तक जयवंत।**

अत में दो पंक्तियॉ-

सत्य के लिए सब कुछ त्याग दो
सब कुछ के लिए सत्य का नहीं
प्रबल प्रतिरोध की अग्नि में खरे उतरे
'विजय' के लिए अगणित बाधाएं सही
तुम चले तो लगा जैसे जाग हिमालय डोला
तुम बोले तो लगा जैसे कंठ सिंधु ने खोला
रोम राजि बधापन देते नहीं अघाति
शांति प्रेम पारस का तू आकर्षण अनमोला

अंग्रेजी वर्णमाला का 22वां अक्षर V (वी यानि हम) 22 संप्रदाय के संगठन का प्रतीक आदि अक्षर है। भावी का सनातन सत्य श्रमण संस्कृति का विजय सितारा बुलंद रखे, इन्हीं शुभ भाव रश्मियो के वसुधांगन में झिलमिलाता (चिंतन) बधाई का छोटा-सा, प्यारा-सा पृष्ठ।

प्रेषक : **अशोक कुमार कोठारी**, नागौर

एक मधुर स्मृति : आचार्यश्री नानेश

✍ परम विदुषी साध्वी रत्ना श्री भवर कंवर जी म.सा.

मानव जब भी जो कुछ सुनता, देखता है वह वर्तमान मे किया गया अनुभव भविष्य की स्मृति बन जाता है। इस तरह की स्मृतिया धारणा के रूप मे मानव के मन मस्तिष्क के स्मृति कक्ष मे (चैतनिक धरातल पर) न जाने कितनी सचित होती रहती है। कुछ तत्काल मिट जाती है, कुछ चिरजीवी होकर अर्न्तमन मे आसन जमाये रहती है। ऐसा क्यो होता है? बात यह है कि जो प्रसग साधारण है जिनको मन ने गहराई से स्पर्श नहीं किया है वे क्षण जीवी स्मृति के रूप मे क्षीण हो जाता है और जो प्रसग जीवन मे असाधारण रूप से घटित होते है वे चिरकाल तक स्मृति के रूप मे जगमगाते रहते है। जीवन को दीपक की उपमा दी है हमारे ज्ञानियो ने-दीपक जैसे-जैसे जलता है वैसे-वैसे उसका स्नेह भी जलता जाता है, ज्योति मद से मन्दतर होती जाती है, प्रज्वलित बाती झरती जाती है और जलते-जलते आ जाता है ऐसा अशुभ क्षण कि दीपक बुझ जाता है, फलस्वरूप अधेरा हो जाता है। ठीक वैसे ही जीवन दीप की लौ बुझने पर भी यही वेदना भरी कहानी होती है तब चारो ओर उदासीनता व्याकुलता का धुआं भर जाता है, एक मात्र आंसू बहाना ही शेष रह जाता है, खिन्नमना परिजनो के पास। आमतौर पर ऐसे दर्द भरे प्रसंग पर कहा जाता है कि 'समय ही सबका उपचार है।'

किन्तु यह बात सर्वसाधारण से सबधित है। कुछ महाप्राण ज्योतिर्मय व्यक्तित्व इसके अपवाद होते है जैसे हमारे आचार्य भगवन् जिनका कुछ ऐसा अनोखा व्यक्तित्व था उन्हे समय के प्रवाह मे भुलाया नहीं जा सकता है। प्रकृति ने भले ही उनका पार्थिव शरीर छीन लिया है हमसे जुदा कर दिया है पर शोकाकुल जुदाई असल जुदाई नही होती। क्योकि महान् आत्माओ का यश शरीर एव विराट व्यक्तित्व और उदात्त जीवन, जन जीवन मे वैसा ही परिव्याप्त रहता है जैसा कि उनके जीवनकाल मे रहता है। आचार्य भगवन् एक ऐसे ज्योतिर्मय जीवनदीप थे कि जो बुझ जाने पर भी उनकी निर्मल जीवन ज्योति बुझी नही है अपितु और अधिक प्रज्वलित होकर युग-युग तक साधना पथ को आलोकित करती रहेगी।

आचार्य भगवन् का भौतिक शरीर हमारी दृष्टि से ओझल हो गया है परन्तु उनका यश रूपी शरीर ज्ञानादि गुणो की अलौकिक सौरभ, क्रियानिष्ठा की कीर्ति एव सयम निष्ठ प्रेरणास्पद जीवन आज भी (विराजमान) विद्यमान है जो हमे सदा सत्पथ पर चलने की प्रेरणा देता रहेगा।

प्रेषिका : सुरेखा धींग 'रानी' कानोड़

विराट व्यक्तित्व के धनी : आचार्य श्री नानेश

✍ साध्वी श्री ताराकंवर जी म.सा

यह संसार जन्म-मरण का खेल है, अनन्त-अनन्त काल से व्यक्ति इस ससार के रंगमच पर जब भी कही किसी जीवन की प्रथम सास लेता है कुछ काल तक जीवन की धारा बहती है फिर मृत्यु के गहरे सागर मे डूब जाता है। फिर कही जन्म लेता है और फिर यात्रा करते-करते मृत्यु की गोद मे सो जाता है।

इस अवनीतल पर अनेक उच्च पवित्र महान् विभूतिया अवतरित हो चुकी है। उन्होने कठिन साधना के द्वारा कई सिद्धिया प्राप्त की और अपनी आत्मा को उज्ज्वल बनाया। अपने ज्ञान क आलोक मे जन-जन के मन को आलोकित किया। वास्तव मे महान् आत्माओ का जन्म परहित के लिए ही हुआ करता है। नीतिकार ने भी कहा है-

पिबन्ति नद्यः स्वमेव तोयं, स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
नादन्ति सस्य खलु वाति वाहाः, परोपकाराय संता विभूतयः॥

हमारे आचार्यश्री का जीवन भी ठीक इसी प्रकार का था जिस प्रकार अगरबत्ती और मोमबत्ती जल कर भी सुगंध और प्रकाश प्रसारित कर देती है। आपश्री ने भी अपने जीवन से चहु दिशा मे ज्ञान दर्शन चारित्र के द्वारा भव्यात्माओ को प्रकाश और सौरभ देकर सुगधित किया। आपकी अमृतमय वाणी सुन कर भव्यो के हृदय मे नवज्योति जागृत होती थी। आपकी ओजस्वी और माधुर्य रस से परिपूर्ण वाणी से शुष्क और निष्ठुर नीरस हृदय व्यक्ति सरसब्ज हो जाते। आपश्री के जीवन के कण-कण मे मन के अणु-अणु मे वात्सल्य भरा हुआ था। आपश्री का जीवन सरोवर के समान शात, गंभीर और विशाल था। आपके विषय मे जितना लिखा जाये उतना कम है क्योकि मै आपके समस्त गुणो को पूर्णरूपेण चित्रित करने मे असमर्थ हूं फिर भी अनन्त श्रद्धा के साथ आपश्री के चरणो मे श्रद्धा सुमन अर्पित करती हू।

क्या लिखूं क्या न लिखूं, आरजु मदहोश है।
गिरते हैं आंसू पन्नों पर, कलम खामोश है।

प्रेषिका : सुरेखा धींग 'रानी' कानोड़
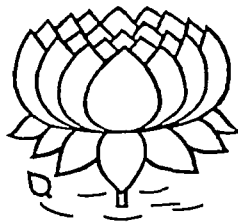
'नाना' का भाग्य : 'गणेश' का सौभाग्य

✍ श्री पुष्पावती जी म.सा.

एक महान् दार्शनिक हुए है-बायस। जो दिन के उजाले मे हाथ मे कदिल थामे गली-गली मे, नगर-नगर मे घूमते। लोग कारण पूछते तो वे कहते-मै एक शिष्य की तलाश मे हू। जिसने यह पूछ लिया कि दिन के उजाले मे कंदील क्यो जलाया? तो उसने पहले ही चरण मे अपनी अपात्रता जाहिर कर दी। गुरु के सामने क्यो और कैसे का प्रश्न ही नही आता। जैसे दार्शनिक बायस अपना अनुभव देने के लिए शिष्य की तलाश करते, ऐसे ही सद्गुरु अपना ज्ञान, अपनी सबोधि, आत्मबोध दूसरो को देने के लिए किसी मे स्थानान्तरित करने के लिए सही पात्र की तलाश करते है।

शातक्राति के अग्रदूत गणेशाचार्य ने भी ऐसे ही पात्र की तलाश की जिसमे वे अपने जीवन के रहस्यो को उडेल सके, अपने ज्ञान, अपनी प्राणवत्ता जिसमे अवतरित कर सके। शिष्य तो बहुत हो सकते है पर जिस पर आत्मविश्वास किया जा सके व जिसे आत्मज्ञान दिया जा सके, ऐसे शिष्य कोई-कोई ही होते है।

गौतम को महावीर जैसे सद्गुरु मिले, यह गौतम का सौभाग्य था पर भगवान् महावीर को गौतम-सा शिष्य मिला यह उससे भी ज्यादा सौभाग्य की बात थी। जैसे शिष्य गुरु की तलाश करता है वैसे ही गुरु भी योग्य शिष्य की खोज करते है। पूज्यपाद हृदय सम्राट नाना गुरु को शातक्राति के अग्रदूत श्री गणेश गुरु मिले यह तो आचार्य नानेश का सौभाग्य था पर गणेशाचार्य को नाना गुरु-सा समर्पित, विनीत शिष्य शायद दूसरा न मिला होगा। इतिहास मे द्रोणाचार्य हजारो मिल जायेगे पर एकलव्य जैसे पाच-पच्चीस भी नही मिलेगे। बिना अर्जुन के भला कृष्ण के मुख से गीता कैसे अवतरित होती? जैसे गोमुख से गगा निःसृत होने का श्रेय भागीरथ को जाता है वैसे ही गीता के अवतरण का श्रेय अर्जुन को दिया जाना चाहिए। नाना गुरु से समर्पित शिष्य जो अपने गुरु की बीमारी की हालत मे अहर्निश सेवा मे तत्पर खडे रहते है।

जो गणेशाचार्य के समर्पित शिष्य थे, वे हमे सद्गुरु के रूप मे मिले। शास्त्रो मे सद्गुरु की महिमा गाते हुए कहा-शिष्य का कायाकल्प कर, अन्तर्दृष्टि को खोलने वाला जिससे शिष्य स्वय का मार्ग प्रशस्त कर सके। ऐसे ही मेरे जीवन दीप को प्रज्ज्वलित करने वाले श्रद्धेय गुरुदेव के सान्निध्य मे मुझे शाति का स्नेह भरा स्पर्श मिला। यद्यपि गुरुदेव बहत अल्पभाषी थे पर सामान्य मानव बहुत कुछ बोलकर भी कुछ नही दे पाता है पर नानेश गुरु मौन रह कर भी बहुत कुछ दे देते थे। भीतर ही भीतर चेतना की तरग को तरगायित कर देते थे। जैसे सूर्य उदित होता है तो स्वतः कमल खिलने लगता है, बारिश होते ही अकुर फूटने लगते है, ठीक वैसे ही श्रद्धेयाचार्य नानेश की सद्शिक्षाए हमारे जीवन रूपी कमल को खिलाने वाली बनी और बनती रहेगी।

नाना गुरु के हर वचन, मेरे मूलमंत्र हो।
पूज्य गुरुदेव शीघ्र ही, भव भ्रमण से स्वतंत्र हो।

गुणों के पुंज : आचार्य श्री नानेश

✍ साध्वी श्री स्वर्णलता जी म.सा.

आपश्री का जीवन प्रारम्भ से ही दिनकर की भांति देदीप्यमान था। स्मित हास्य, इन्द्रिय विजय, मार्मिक वाचा नही बोलना, शुद्धाचार और सत्यानुराग आपके जीवन के मुख्य अग थे। आचार्यश्री नानेश एक सफल अनुशासक की श्रेणी मे गिने जाते थे। आपके जीवन का एक-एक क्षण मर्यादा मे बीतता था।

सरलता, समता, कथनी करनी की समन्वयात्मकता आपकी प्रेरणा के बिन्दु थे। इन्हीं आदर्शों की छाप आपकी शिष्य सम्पदा पर पडी रही। कुछ प्रकृति सबधित अनुपम विशेषताए भी आपके जीवन मे थी। पुष्प के समान कोमलता, पर्वत के समान अडिगता, सूर्य के समान तेजस्विता, वृक्ष के समान समता, धरती के समान क्षमता एव पक के समान निरलेपता, ये आपके अन्तरंग जीवन की विशेषताएं थी।

आपका जीवन एक कलाकार का जीवन था जो भूले भटके राहगीरो को कलात्मक जीवनयापन के लिए प्रेरित करता था। अपने कलात्मक जीवन के कारण इस समय तक एक अद्वितीय ज्योति के रूप मे थे। किन्तु आज हमारे सामने वह विभूति नही रही लेकिन उनका जो मार्गदर्शन हमे मिला उस मार्गदर्शन से हम निरन्तर बढते रहे तभी हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

प्रेषिका : सुरेखा धींग 'रानी' कानोड़

❖ ❖ ❖

बुद्धि, धन, बल या विद्या किसी की भी शक्ति स्वय के पास हो तो उसका कर्तव्य माना जाना चाहिए कि वह अपनी शक्ति का दूसरो के हित के लिए सदुपयोग करे।

-आचार्य श्री नानेश

संयम दृढ़ता के प्रतीक : आचार्य श्री नानेश

✍ तपस्विनी श्री उर्मिला जी म.सा.

अपने आराध्य परम श्रद्धेय गुरुदेव के विराट जीवन को पीछे मुडकर देखते है तो उनके अपरिमित गुणो का स्मरण एकदम हो जाता है। उनके निर्दोष सयम का अकन तथा उनके विविध गुणो का वर्णन मै अपनी छोटी-सी जिह्वा व बुद्धि से नही कर सकती हूं। आचार्य भगवन् का जीवन एक ऐसे महान् वृक्ष की भाति था।

"मूले दृढ़ उपरि कोमलः"

जिसके मूल मे दृढता होती है पर ऊपर कोमलता होती है। ठीक वैसे ही आचार्य भगवन् का जीवन था जो सयम मे दृढ थे और प्राणीमात्र के प्रति कोमल थे।

ऐसे आचार्य भगवन् के पुनीत पावन चरण कमलो मे श्रद्धा सुमन समर्पित करती हू।

प्रेषिका : सुरेखा धींग 'रानी' कानोड़

नानेश वाणी

❑ प्रवचन-प्रभावना के लिए आप झूठी प्रतिष्ठा पाने के प्रदर्शनकारी आडम्बरो को छोडिये और गिरे हुए स्वधर्मी व अन्य भाईयो के जीवन को ऊपर उठाने के लिए अपनी वात्सल्य-वर्षा को बरसाइये।

❑ आत्म-प्रशंसा क्षुद्रता का दूसरा नाम होता है।

❑ आप जब दूसरे के गुणो को देखे तो उसे भरपूर सम्मान दे और उन गुणो को अपने जीवन मे भी उतारने का प्रयास करे। गुणपूजा से गुणग्राहकता की वृत्ति पनपती है।

❑ दूसरो के दोष देखने के बजाए दूसरो के केवल गुण देखे और अपने केवल दोष देखे-तब देखिये कि आत्म-विकास की गति किस रूप मे त्वरित बन जाती है।

❑ जिनधर्म की तात्त्विक दृष्टि सिद्धान्तो के जगत् मे अलौकिक मानी गई है। स्याद्वाद रूपी गर्जना से मन घडन्त सिद्धान्तो के हरिण झाडियो मे घुस कर अपने को छिपा लेते है।

❑ अपनी निष्ठा और कर्मठता मे किसी भी आयु मे यदि तरुणाई समा जाए तो नया और नई खोज उसके लिए स्फूर्ति का विषय बन जाती है।

❑ दहेज सट्टे से भी बढ कर है।

अमर संदेश

✍ साध्वी श्री रजतमणी जी म.सा.

मेवाड शौर्य एव देश भक्ति के लिए प्रसिद्ध है तो साहित्य संस्कृति एव कला के लिए भी उसका गौरव भारत विश्रुत रहा है। यह प्रांत अध्यात्म ऐश्वर्य से भी अछूता नही है। आध्यात्मिक सम्पदा के खातिर इसे सम्पूर्ण विश्व मे शीर्ष स्थान प्राप्त है। इसी वीर प्रसवा मेवाड़ की धरती पर भव भंजन हार परम पूज्य आचार्य प्रवर का लोक-मांगल्य अवतरण हुआ।

आपश्री का सम्पूर्ण जीवन महिमा एव गरिमा से परिपूरित रहा। ऐसी व्यापक परिचय प्रशस्ति को शब्द श्रृंखला की कडियों में आबद्ध करना अल्पबुद्धि की हैसियत से परे हैं। आकाश मण्डल मे प्रसृत असंख्य तारिकाओ के आकलन की तरह आचार्य प्रवर के विराट व्यक्तित्व का बखान अशक्य है। इतना तौफिक नही है कि इस गुण दरिया मे हम दाखिल हो सके। पूज्य जानराय के यत्किंचित् गुणो का कीर्तन भी प्रयत्न साध्य है। प्रयत्न की क्षमता भी पूज्यवर द्वारा ही प्रदत्त है। जैसे कि आदि पुराण मे कहा है-

न विना यान पात्रेण, तरितुं शक्यते अर्णवः।
नेति गुरुपदेशाच्च सुतरोऽयं भवार्णवः।।

जैसे जहाज के बिना समुद्र को पार नही किया जा सकता, वैसे ही गुरु के मार्गदर्शन के बिना ससार सागर पार करना अत्यंत कठिन है। वास्तविक है कि आत्मबोध एवं सम्यक् जीवन पद्धति मे गुरु की रहनुमाई आवश्यक तत्त्व है।

अतरंग बीहडवन के सघन अंधकार को चीरकर महास्थविर, परम पूज्य श्री शातिलाल जी म सा एवं क्राति पथ की अग्रदूता, महोपकारी श्रद्धेया श्री चंदनबाला जी म सा ने श्रद्धा का दीप जलाया एव तारिक दिल को रोशन किया। गुरु चरण मे जीवन समर्पण की लौ भेट चढाए उसके काबिल बनाया।

पूज्य आचार्य प्रवर के जन श्रुत, प्रखर प्रभास्वर व्यक्तित्व की प्रभास्वरता की झलक पाने मन आतुर हो उठा। शुभ संयोग से शुभ दर्शन क्या हुए आपश्री ने हृदय का सर्वाधिक कोमल तार झंकृत कर दिया, विशुद्ध प्रेमामृत जी भरकर पिला दिया। जिससे इस तन के रग-रग मे श्रद्धाभिषिक्त रक्त प्रवाहित होने लगा। यही तो गुरु की खासियत है। गुरु स्वयं एक ऐसी ज्ञान-गंगा है जिसके तीर पर पहुंच कर मात्र एक घूंट ज्ञान वारि का आचमन कर जीने की नई दिशा उपलब्ध कर लेते है।

किसी ने ठीक ही कहा है-

उदास कमरे की सारी चीजें सरुर और मस्ती में डोलती है।
ये किसने पांव रखा कमरे में खामोश तस्वीरें बोलती है।।

पूज्य आचार्य प्रवर मे मन की पर्तों को खोलकर मन की गहराई मे प्रवेश करने की अनूठी विद्या थी। देशनोक मे हमारी अस्वस्थता के समय आपश्री के अन्तर्भेदी मनोभावो से हमे मां का अमृतोपम वात्सल्य, गुरु की परम कृपा एवं एक विश्रुत चिकित्सक की श्रेष्ठ चिकित्सा साक्षात् मुनासिब हो रही थी। यह इस जिदगी की एक अबुझ घटना

है।

महेश (बगुमुण्डा उडीसा निवासी) जैसे बच्चों को भी आचार्य प्रवर के स्नेह निर्झर व्यक्तित्व से इतनी गाढ अनुरक्ति कि वे हर स्थान पर हर दृश्य मे पूज्यपाद की छवि निहारते हैं।

आपश्री के व्यक्तित्व मे वाणी का माधुर्य, सत्य का सौन्दर्य, संयम की निष्ठा इन अपूर्व गुणो का अद्‌भुत समन्वय था। यही वजह थी कि आपश्री जैन, जैनेतर आबाल वृद्ध सभी के आकर्षण के केन्द्र बने हुए थे।

आचार्य शय्यंभव ने आचार्य के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को व्यक्त किया है कि शरद पूर्णिमा की शुभ रात्रि मे चन्द्र-नक्षत्र और ताराओ से सुशोभित होता है, वह चांद अमृत की वर्षा करता है, अपनी शीतल चादनी से जन-जन को शाति प्रदान करता है। वैसे ही आचार्य भी चांद के समान चतुर्विध संघ के परिवार से सुशोभित होता है। जिनवाणी रूप अमृत की वर्षा करता है और भवताप से तापित व्यक्तियो को शीतलता प्रदान करता है।

पूज्य आचार्यश्री नानेश का व्यक्तित्व एवं कृतित्व इसी के अनुरूप था। यशस्विता, मनस्विता, सरसता से समन्वित भव्य व्यक्तित्व भव्यो के लिए अमर संदेश है।

ऐसे महा-मनस्वी के इस अध्यात्म जगत् से प्रयाण कर जाने से सारी सृष्टि को क्षति पहुची है। फिर भी आपश्री द्वारा प्रदत्त जीवंत सिद्धात एवं अगरबत्ती की तरह जलता हुआ जीवन आदर्श रूप मे अमर है, भविष्य मे भी अमर रहेगा। ❖ ❖ ❖

पहली बार आचार्य नानेश को देखा. . .

✍ **श्रमण विनय कुमार 'भीम'**
राष्ट्र संत उप प्रवर्तक

घटना पुरानी है। जब मेरे शिक्षा गुरु जैन भूषण उप प्रवर्तक पूज्य स्वामी श्री ब्रजलाल जी म सा एवं मेरे दीक्षा गुरु उपाध्याय श्री मिश्रीलाल जी म सा 'मधुकर' महामदिर जोधपुर मे विराजमान थे। दीक्षा का प्रसंग था। गुरुदेव श्रमण सघ के उपाध्याय पद पर सुशोभित थे। चहल-पहल ज्यादा थी। लोगो ने दीक्षा पर पधारने की प्रार्थना की। गुरुदेव के साथ मैं भी गया। अपार भीड संत-सती-श्रावक और श्राविकाओ के साथ पर आदरणीय आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा दीक्षा पण्डाल की तरफ पधार रहे थे। संस्मरण तो पुराना है पर आज भी तरोताजा है। मैंने पहली बार आचार्य प्रवर को देखा। पण्डाल मे प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला। आप मेवाड़ के महान् सत रत्न थे। आपने मानव सस्कृति को जिन्दा रखने के लिए अनेकानेक विविध आयाम दिए। आज आचार्य प्रवर नानेश हमारे बीच नहीं है लेकिन उनका किया हुआ कार्य सदियो तक सूर्यचन्द्र की भांति चमकता-दमकता रहेगा-जीवन के सच्चे कलाकार को एक विनम्र भावभरी श्रद्धांजलि ।

मोड़ीराम के लाल को, याद करे संसार।
अमर हो गए इस धरती पर, मुनिवर विनय कुमार।
तपःपूत संयम साधक की, जय बोलो सब नर-नार।
निर्मल उनका जीवन अनुपम, कहता मुनिवर विनय कुमार। ❖ ❖ ❖

अनन्त अतिशयधारी श्री नानेश

✍ साध्वी श्री संबोधिजी म.सा.

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर के महिमारंजित व्यक्तित्व का वर्णन लेखनी की शक्ति से बाहर है, वह सर्वतोमुखी सुवासित अनुभूति तो केवल अन्तर्ग्राह्य एवं वाणी के क्षेत्र से अछूती ही है, परन्तु मै अपनी हृदयस्थ भावनाओ को अभिव्यक्ति का स्वर देने के उल्लास मे निज की अज्ञानपूर्ण सामर्थ्य विस्मृत करने का दुस्साहस करने चली हू। कहते है न **'जादू तो वह जो सिर चढ़ कर बोले'** इस उक्ति के अनुसार इस समय मन की विचित्र दशा है-कहने की अकुलाहट है और अज्ञ शक्ति हीनता की हिचक भी। आचार्य भगवन् का चमत्कारिक व्यक्तित्व ऐसी ही प्रेरक, प्रभावक और विपुल अतिशय-सम्पन्न है। दर्शन करने से भी पूर्व मैं तो अदृश्य श्रद्धा-डोर से बद्ध हो चुकी थी। केवल सुनने भर से गुरुवर 'नानेश' का व्यक्तित्व मेरे रोम-रोम मे समाहित हो गया-इतना विलक्षण प्रभावयुक्त है मेरे आराध्यदेव का व्यक्तित्व इस उथले प्रयास मे भले ही मै उपहास-पात्र बनू, किन्तु बालक की तोतली भाषा दूसरो की समझ मे न आने पर भी उसको अपने भावो के प्रकटीकरण का हर्ष प्रदान करती ही है।

सद्गुणो का प्राधान्य एव प्रचुरता महामहिम पुरुषो का सामान्य लक्षण होता है। पंच महाव्रत धारी मुनिराजो मे सद्गुणी जनो से अनन्त गुणी उत्कृष्टता होती है। उन उत्कृष्ट सत् प्रवरो के आचार्यश्री मे उनकी अपेक्षा अनन्त रत्नत्रयादिक सिद्धियां हुआ करती है-अनन्तगुणी नेतृत्व कुशलता एव विशेषता-बाहुल्य होता है और हीरक-माणिक-समान सर्वगुण सम्पन्न आचार्यों मे कोई एक दिव्य, तेजस्वी प्रखर सूर्यमण्डल-सी आभायुक्त विलक्षणता, जब समग्र रूप से एक स्थान पर पूञ्जीभूत होती है-अतिशय ज्योति जिसके समक्ष बौनी बन कर नमन करती है-उस परम चारित्र चूडामणि को हम आचार्यश्री 'नानेश' कहते है।

आचार्य प्रवर का जीवन सम्रगत: समताभिमुख है। उनके योग और प्रयोग, चिन्तन और ध्यान, साधना और निराली छटापूर्ण वैराग्य, वाणी और कर्म, आचार्य और व्यवहार, नेतृत्व-कौशल और वात्सल्य स्निग्ध मातृहृदय-ये सारे ही श्रद्धेय आचार्य भगवन् के विराट व्यक्तित्व-सागर की बूदे मात्र है। उनके अनन्त प्रतिभापुंजो की किरणे है। आचार्य 'नानेश' की अतिशययुक्त व्यक्तित्व तो उपर्युक्त गुणो से भिन्न विचित्र गरिमामय तथा अद्भुत-अपूर्व है।

मैंने पूज्यवर के अतिशयो का सकेत करते हुए प्रथम मे उल्लेख किया है कि स्वयं साक्ष्य अनुभव से मैने देखा है-किस प्रकार अप्रत्यक्ष, अबोले और असम्पृक्त रह कर भी वह चुम्बकीय आकर्षण जनमानस की उर-परिधियो को गहरे तक स्पर्श करता है। न केवल स्पर्श करता है, अपितु तरल तारतम्यता स्थापित करता हुआ सभी को स्पन्दित करने की महती शक्ति रखता है।

पूज्यपाद आचार्य भगवन् के अतिशय-वर्णन का लगडा प्रयास मैने कुछ इस प्रकार किया है :-

तर्ज : तेरे हुस्न की क्या तारीफ करूं

तेरे अतिशयों की महिमा गाऊं, यह सोच के ही रह जाती हूं।
जिह्वा-जीवन यदि चूक जाए, तो भी महिमा अधूरी पाती हूं।

सीमित है शक्ति वाणी की,
और गुण है अनन्त-असीम प्रभो!
कैसे पूरा हो इष्ट मेरा,
ये कार्य कठिन संभीम, प्रभो।

फिर भी गुण-गरिमा-चिन्तन से, कहने को बहुत ललचाती हूं।
जिह्वा-जीवन यदि चूक जाएं तो भी महिमा अधूरी पाती हूं।

बुद्धि तो है अल्प अति, अतिशय-
विस्तार बहुत ही गहरा है।
शब्दों और भाषा के ऊपर,
मेरे तुच्छतम ज्ञान का पहरा है।

महसूस ये होता है जैसे, खुद को ही छलती जाती हूं।
जिह्वा-जीवन यदि चूक जाएं तो भी महिमा अधूरी पाती हूं।

रत्नत्रय का समन्वित तेज प्रखर,
उसको कैसे कह पाऊं भला।
व्यवहार व संचालन-पटुता-
का वर्णन भी कर पाऊंगी क्या!

अंकन अपनी सामर्थ्य का कर, फिर तुच्छता से भर जाती हूं।
जिह्वा-जीवन यदि चूक जाएं, तो भी महिमा अधूरी पाती हूं॥

प्रत्यक्ष रहो या परोक्ष, प्रभु!
बोलो अथवा तुम मौन रहो।
छाते उर-अणु-परमाणुओं में,
हर भाव बना कर गौण, अहो।

प्रति-पल निस्सीम निकटता से, निज चेतन भरती जाती हूं।
जिह्वा-जीवन यदि चूक जाएं, तो भी महिमा अधूरी पाती हू।

परम आराध्य भगवन् के विस्तीर्ण प्रभामण्डल का तेज क्षण प्रति-क्षण जीवन्त-सजीव बन कर प्रत्येक श्रद्धा निष्ठावान् साधक के आत्मप्रदेशो को गुञ्चित करता हुआ लक्ष्यसिद्धि की अदृश्य किन्तु सशक्त-वात्सल्यभरी प्रेरणा देता है। यह आभास मेरे जैसी अनेको मुमुक्षु आत्माओ ने बहुश: किया है, जैसे वे ज्योतिपुञ्ज देव हमारा पथ-प्रदर्शन करते हुए प्रत्येक अवस्था मे हमारे अस्तित्व मे लय रहा करते है।

अनेकानेक चमत्कार पूर्ण घटनाए आचार्यश्री के जीवन मे सहजता से घटित हो जाती है और जब कोई असाध्य रोग तत्काल दूर हो जाता है, नेत्रो मे ज्योति आ जाती है, प्रबल विरोधी निन्दक स्वयमेव अभिभूत होकर चरणनत हो जाता है, सामर्थ्यहीन होने पर भी मात्र नामोच्चारण से सफलता चरण चूमने लगती है, विपत्ति-आपदा-परीषह प्रभावशून्य बन जाते है और स्मरण करते ही तथा दर्शन करते ही आत्मा समस्त परितापो को उपशमित करके

शीतलता का संस्पर्श करती है-तब स्वाभाविक ही आचार्य प्रवर के सूक्ष्मव्यापी विराट व्यक्तित्व की झलक मिल जाती है।

कितनी ही बार देखा गया है कि आचार्य भगवन् बिना कुछ फरमाए मौन विराज रहे हो, तब भी अदृश्य रूप से सबको सब कुछ प्रचुरता से मिलता रहता है। अनेक बार प्रवचन मे शास्त्रीय विषय गहनता की परिसीमाएं छूने लगता है और सामान्य बुद्धि-क्षेत्र से परे होता है, तब भी सभी व्यक्ति मंत्रमुग्ध बने गुरुदेव के श्रीमुख-चन्द्र की सुन्दर-भव्य छटा का चकोरवत् पान करते रहते हैं। अनपढ़ और अल्प-शिक्षित वर्ग के श्रोता भी आचार्यश्री के प्रवचन-भावो को उसी प्रकार ग्रहण करते रहते हैं, जैसे अन्य प्रबुद्ध-वर्ग। भले ही उस वर्ग की ग्रहणता मे शब्दश: वही भाव न रहें, लेकिन अनुभूतिजन्य बोधत्व मे किसी भी प्रकार न्यूनता नहीं आने पाती।

अतिशयों का अर्थ-परिक्षेत्र न समझते हुए भी उनके अदृश्य किन्तु व्यापक प्रभाव को समग्र जन चेतना अनुभव करे, यही तो महापुरुषो के अतिशयो का विलक्षण जादू होता है। पूज्यवर के व्यक्तित्व से नि:सरित ऊर्जा-रश्मियां समस्त वायुमण्डल को तेजोद्दीप्त करती हुई जब हम अपने चारो ओर अन्दर-बाहर फैलती देखते है, उनके आलोकमय आनन्द का रसास्वादन प्रतिपल करते है, तो अनायास ही श्रद्धाभिभूत होकर कह उठते है-

दिव्य अलौकिक अद्भुत योगी!
'नानेश' की समता क्या होगी!
तेरे चमत्कारों की कहें क्या!!
जय 'नाना'-गुरु 'नाना'-जय 'नाना'-गुरु 'नाना'!!

अन्तस् के भावो को सर्वांशत: व्यक्त करके परमकृपालु, आचार्यश्री के अतिशययुक्त-व्यक्तित्व का गुणानुवाद करने के लिए तो अनेक जन्मो की-अनन्त-अनन्त बुद्धि व शक्ति की अपेक्षा है-मैने पूज्यश्री के चमत्कारिक स्वरूप की आह्लादक झांकी सभी को मिले, इस विचार से नगण्य-सा यह प्रयास किया तो, मगर बन नहीं पाया और अपनी भावुकतापूर्ण अल्पज्ञता में घिर कर ही रह गई।

अंत मे परम पूज्य श्री चरणों के कृपा प्रसाद की सदा सर्वदा याचना करते हुए मेरी हार्दिक कामना है :-

अल्प ना हो कल्पना, रहने निकटतम भाव की।
दित्व सारा दूं मिटा, सृष्टि हो अविनाभाव की।
गुम हो गहरे गर्त्त में, प्रत्यक्षता का प्रश्न फिर,
स्वर्ण रंजित हों अमर, अक्षर मेरे इतिहास के।
चीर 'काजल'-आवरण, अपने मनोऽहंकार के,
तव वचन से हो विपुल घन छिन्न तुच्छाभास के,
बन सकूं तव तुल्य तव प्रसाद से तव आस के।।

-द्वारा भैरूलाल जी सरूपरिया, भदेसर (चित्तौड़गढ)

कलम की कृति में नानाकृति

✍ साध्वी मुक्ता श्री जी

ओ ज्योति से महा ज्योति बनने वाले आराध्य प्रवर। आप जहा कहीं पर भी हो मेरा भक्ति एव श्रद्धा से अभिसिक्त भाव भरा अर्घ्य स्वीकारे।

सागर से विशाल व्यक्तित्व को कैसे बांधु शब्दों के गागर मैं
जिनकी हर कृति कोहिनूर सी चमकती थी, कैसे करूँ उजागर मैं
तरणी के खैवन हार अब कौन संभाले पतवार को,
कैसे अभिव्यक्त करूँ अनंत उपकारों का आभार मैं।

उन करुणा के सागर की इबादत कैसे करू? उनके जीवन का हर एक क्षण अवदानो से भरा था। जिन्होने स्वार्थ के सलीब पर लटकती हुई मानवता को परमार्थ का पैगाम दिया। जिनके चिन्तन का चिराग हर वातावरण में नया प्रकाश देता था, युवा मन मे नया उत्साह एवं उल्लास प्रवाहित करता था। जिनकी जोश भरी वाणी हौंसलों की हिलती इमारत को स्थिर कर देती थी और उमग से उनका मुख मंडल दीप्त हो जाता था। अहं की चट्टानों से घिरा मानस विनम्र शब्द रूपी बारूद से चूर-चूर हो जाता था। ऐसे आराध्य देव का सहसा सुरलोक गमन सुनते ही मन मे अविश्वास की लकीरे खींच गई। नहीं, नहीं ऐसा नहीं हो सकता। जिनका जीवन गुलशन सद्गुणो की सौरभ से परिपूर्ण था। जिसमे समता के गुलाब शाति के कमल प्रेम सौहार्द की चमेली धैर्य सहिष्णुता के गुल खिले हुए थे। ऐसे आचार्य श्री की भव्य तस्वीर आज भी मेरे मन कैमरे मे हुबहू स्थापित है। सहानुभूति की उष्मा दिल के दर्द को वाष्प बना कर उडा देती थी। भक्तो के भाव क्षितिज पर जब आस्था का सूर्य उदित हो जाता तो फिर कभी भी रात्रि का अंधकार व्याप्त नहीं हो पाता। आपका समता सिद्धान्त जीवन के हर मोड पर आनन्द का अक्षय स्त्रोत प्रवाहित करता है। जिससे जिन्दगी का हर क्षण समन्वय समरसता से आप्लावित बन जाता है। प्रभु महावीर ने व्यक्ति के व्यक्तित्व का पैमाना जाति से नहीं उसकी कृति से नापा था। जैसा कि

कम्मुणा बम्भणो होइ, कम्मुणो होइ खत्तिओ।
वइसो कम्मुणो होइ, सुद्दो हवइ कम्मुणा।।

इसी का व्यापक एव साकार रूप वर्तमान मे आचार्य देव ने '**धर्मपाल**' बना कर प्रस्तुत किया। जात-पात के भेद से ऊपर उठकर परिष्कृत एव परिमार्जित आचरण को मानव जीवन का श्रृगार सिद्ध किया।

मैं बलिहारी हूँ। श्रद्धेया गुरुणी प्रवर (नानू कंवर जी म सा.) की पैनी प्रज्ञा पर जिन्होने शांतक्राति के अग्रदूत स्व आचार्य श्री 1008 श्री गणेशी लाल जी म सा को ऐसे अशुमालि से देदीप्यमान अभूत रश्मि को शासनेश बनाने का सुझाव दिया।

अनंत अथाह भवार्णव में भटकने के बाद वर्तमान मे आप श्री मेरे जीवन की कोरी रेखाओ मे संयम की सुषमा का सलौना रंग भरकर उसे सुदर रूप दिया। **प्रकाश स्तम्भ** बनकर भौतिक चकाचौंध के तिलिस्म भरी राहों मे भी त्याग का मार्ग दिखाया और **दिशानिर्देशक** बन अशांति के चौराहो मे भ्रमित मन को समाधि की पावन पगडडी दिखाई। मेरे बचपन के वो क्षण नैनों की झील मे तैर रहे हैं। जब आप श्री वात्सल्य भरी दृष्टि से अजस्त्र अनवरत

स्नेह बरसा कर अभिसिचित करते थे। मेरे लिए उन युग पुरुष के सान्निध्य मे बीते पल अब सिर्फ स्मृतिकोष की निधि बनकर रह गये हैं।

आप श्री का अथाह परिश्रम एवं साधना ने ऐसा रग दिखाया कि हुक्म सघ की मीनार अवनी-अबर के अतराल को भी मिटाने वाली बनी। मगर, समय ने करवट ली। विधाता के विधान की अबूझ पहेली ने अपना करिश्मा दिखाया। वह दृश्य दिल को दहलाने वाला था पर नाखुदा की फौलादी शक्ति ने उन खारो के चुभन को कैसे सहा? यह मेरे समझ के परे की बात है। खैर, कुदरत का खेल।

अमर ज्योति मे विलीन, प्राणवत से अनुप्राणित को अब मेरा ये छोटा-सा इजहार

ओ हुक्म संघ के मसीहा
आपकी अर्चा कैसे करूँ
न मेरे पास भक्ति का अक्षत है
न भावों का कुंकुम है
केवल श्रद्धांजलि के रूप में
आपके ज्ञान कुंज से प्राप्त
शुभ सरसिज समर्पित है कि
नाना आकारों से रिहा बन
मुक्तालय का मन सब पा जाये।।

नयनो ने दूसरे दृश्य को ज्योही निहारा दिल दर्पण मे नये अवि का प्रतिबिम्ब ऐसा परिलक्षित हुआ मानो जवाहर ही आ विराजे है गादी पर। सचमुच वे श्रुति गाथाएँ साकार हो उठी साक्षात के फ्रेम मे। आचार्य श्री 1008 श्री विजयराज जी म सा को 'अजयमेरु' मे गणिपद की गरिमा से सुशोभित किया सत् सान्निध्य के प्रत्यक्ष क्षणों में नयन दीप की लौ जगमगा उठी, आराध्य देव को शास्ता के शिखर पर निहार कर।

तिन्नाणं तारयाण के प्रतीक आचार्य प्रवर से आशान्वित है कि राजनीति एव कूटनीति के अटेक से धर्मनीति की छवि धूमिल न बने। जिन सघर्षो के चक्रव्यूह को सत्य एव संयम के अस्त्र से भेदा, उसकी स्मृति सदा अक्षुण्ण बनी रहे। विश्वास है कि आप श्री के दिल की उदारता मन की विशालता हमेशा उसे बरकरार रखेगी।

दिल करता है तेरी भव्य मूरत निहारती रहूं। मन करता है जादुई वाणी सुनती रहू। हृदय चाहता है तेरे नाम की सुरमुई सरगम गूजती रहे। मुख विजय गुरु की गरिमा का उच्चारण करने मे अपना गौरव समझे।

गुरुणी प्रवर नानुकवर जी म सा के अंतिम ऊर्जा स्त्रोत के रूप मे आपश्री ने चारित्र निर्माण की दिशा मे जो कदम उठाये वे वर्तमान परिपेक्ष में इतने साइटिफिक है कि जिससे केवल जैन समाज ही नही सम्पूर्ण विश्व लाभान्वित हो रहा है। साथ ही इस परिवर्धन मे आचार्य नानेश जैसे मेहरो करमा गुरु की अदृश्य शक्ति आपश्री के कदम-कदम पर नौ निधिया बिछा रही है, जिस पर हमे नाज है।

तेरे आशीषों के सुदीर्घ कोमल हाथ मुझे संयम की राहो पर सदा मस्त बना, मुक्ति की चाद सलौनी वसुधा पर बिठा दे। बस, इन्हीं छोटे से, प्यारे से अरमानों के साथ, मेरी लेखनी की सरपट दौड समाप्त।

आपश्री सदियों तक सदा बहारवत् आरोग्य लाभ से आवेष्ठित रहे। इन्हीं शुभ्र मंगल कामनाओ के साथ

बधाई बधाई बधाई ..

प्रेषक-**सागरमल ललवानी**, नागौर

❖ ❖ ❖

उस मोती में थी पूर्ण आब

✍ साध्वी श्री इन्दुप्रभा जी

इस जिनशासन रत्नाकर मे, उस मोती मे थी पूर्ण आब।
जिसने ज्योर्तिधर जवाहर के, पूर्ण किए सारे ख्वाब॥
विलक्षणताओ का सगम स्थल रहा, जिनका प्यारा बचपन।
विश्व विपिन मे अश्वारोही बन, किया छह आरो का चितन
समता की मन वसुधा पर, विश्व ममता के अकुर फूटे
अज्ञान का तिलिस्म दूर हुआ, पाए गणेश चरण अनूठे
दूर से ही आकर्षित कर लेता, तेरा तेजोदीप्त-फाब
जिसने ज्योर्तिधर जवाहर के पूर्ण किए सब ख्वाब॥1॥

व्यक्तित्व व कृतित्व तुम्हारा अनुपम व बेजोड था।
अपने फौलादी जज्बातो से दिया जमाने मे नया मोड़ था
इन्सानियत का सन्देशा दे, तुमने अनेको के भाग्य को जगाया
प्रेम की गगा बहा कर तुमने महावीर का मधुवन सरसाया
तुमसा अवढर दानी अब मिलना बडा नायाब
जिसने ज्योर्तिधर जवाहर के पूर्ण किए सारे ख्वाब॥2॥

तर्जे हुकुमत बडी निराली थी बेपनाह पाते तेरी पनाह
कौल व फैल मे नही थी दूरी, हर पल था नया उत्साह
अभय की शीतल छाव तेरी, हो रहा था सबको सर्वोदय
निर्भीक बन सब साधना करते, पर आया कैसा समय
समता का सूर्य विलीन हुआ, तब जन-जन बना बेताब
जिसने ज्योर्तिधर जवाहर के पूर्ण किये सारे ख्वाब॥3॥

हे ज्योतिपुज आलोक बिखेरो, भूले भटके अब पथ पाए
मझधारा मे किनारा मिल जाए, **'विजय'** के गीत सब गाये
तेरी श्रद्धा व आस्था के प्रकर्ष से, शाति सुप्रभात प्रकटाए
आदर्शो के निर्मल नीर मे, क्राति का शतदल विकसाए
हे हुक्मसघ की विरल विभूति, तेरे शुभाशीष से हो हम कामयाब।
जिसने ज्योर्तिधर जवाहर के पूर्ण किये सारे ख्वाब॥4॥

प्रेषक **अशोक कोठारी, नागौर**

❖ ❖ ❖

इति से अथ की ओर

✍ साध्वी कुमुद श्री जी म.सा.

जीवन क्षितिज के दो छोर-एक तरफ अनंत आकाश, दूसरी तरफ सर्वसहा धरित्री। नई भोर के दो किनारे पहला-कलाधर की परिक्रमा का विराम इस भरत भूमि की दृष्टि से, दूसरा रविराज का नवोदय बसंत। सुहानी सांझ के दो महत्त्वपूर्ण घटक-कुमुदिनी नायक का सितारों के बीच शुभागमन और आदित्य का लम्बे सफर के बाद अहम् को सलामी दे बादलो की ओट मे ओझल हो जाना।

सागर तल के दो हासिये-कहीं मोतियों की आबदार मुस्कान का शाही खजाना तो कहीं कीचड। पृथ्वी के गर्भ मे बहुमूल्य हीरे-जवाहारात है तो कोयले भी, ये ही जीवन की परिभाषा है। मेरे अंतर दिल में पूर्व आलेखित बाते आज प्रत्यक्ष परिलक्षित (घटित) हो रही है। एक तरफ मायूसी दूसरी तरफ खुशी।

प्रथम पक्ष-जैन समाज की एक अद्वितीय हस्ति आचार्य नानेश का अजान पथ की ओर प्रयाण। सुनते ही दिल दर्दीली हवाओ से आहत हो गया। जिन्होंने मुझे जीवन निर्माण की नई दिशाएं दी। संघ, समाज और विश्व को समता दर्शन व्यवहार की अविस्मरणीय देन दी स्वयं समतालक्षी बन कर। ऐसे कुशल कलाकार के हाथो में मेरे परिजनो ने मुझे सौप गौरवानुभूति की। साथ ही मुझे नाज था-मेरी खुशनसीबी पर कि ऐसे गुरु (शिल्पी) की छांह तले, संयम स्वीकार करने का स्वर्णिम सौभाग्य मिला। हर साधक के दिल पर जिनके अनुशासन का आसन था।

श्रद्धेया मरुधर सिंहनी गुरुणी प्रवर श्री नानुकवर जी म.सा. की शीतल, शौर्य, स्नेह, वात्सल्यमयी छांव के नीचे मेरे प्रगतिपथ को प्रशस्त होने का सुनहरा सान्निध्य दे मुझे धन्य बनाया। मेरा रोम-रोम पूज्य गुरुदेव का ऋणी रहेगा। जिन्होने कई अभूतपूर्व, ऐतिहासिक, सत्कार्यों से संघ समाज के भाग्य को संवारा। बच्चे से लेकर बूढ़े तक के अधरो पर **आचार्य नानेश** का नाम शाश्वत हो गया, ऐसे श्रद्धेय पूज्य प्रवर का इस जहां से अगम यात्रा के लिए प्रस्थान सदियो तक सालता रहेगा। आचार्य देव का दिल कितना निश्छल, कोमल, सरल था। उन्होने अपने श्रम से शासन उपवन के हर फूल को संसिंचन, संवर्धन दे महकने का मौका दिया और यही कारण है कि पूरे स्थानकवासी समाज मे साधुमार्गी संप्रदाय आचार्य नानेश के अनुशासन काल में जितनी प्रगति कर पाई वो विश्व के भाल पर सदा स्वर्णाक्षरो मे अंकित रहेगी।

अंत मे पूज्य प्रवर जिस किसी लोक को सनाथ कर रहे हैं वहां आपकी चेतना चिदानंद की पात्र बनी रही, इन्हीं शुभ भावों का अंतर अर्घ्य

आंसुओ की झील मे तैरते श्रद्धांजलि के दो कुमुद .

पटाक्षेप

नानेश का तराशा कोहिनूर हीरा

परदा गिरते ही दूसरा दृश्य सामने आया, मन खुशियो के बसंत से झूम उठा, सौम्य सलौने दिव्य दिनकर ने अपनी तेजोमयी रश्मियों से मेदनीपटल को नई चेतना, नई जागृति, नई स्फूर्ति प्रदान कर कृतार्थ किया। जव "हुक्मगच्छीय शांत क्रांति संघ के उजालो" के चिराग को तृतीय पद की गरिमा से अलंकृत देखा तो मेरा उल्लासो

का उपवन आबाद हो गया "**तित्थयरा समो सूरि**" इस आगमोक्ति का साकार रूप पाया आचार्य प्रवर 1008 श्री विजयराज जी म सा के जीवन दर्पण मे। जहां कहीं किसी से द्वेष, दुश्मनी, वैषम्य का भाव नहीं जो श्री चरणो मे आ गया वो आपका हो गया, आप उनके हो गये। इस सार्वभौम व्यक्तित्व के शिलालेख है आप। आपके बहुआयामी युगीन व्यक्तित्व, कर्तृत्व ने मेरे संयमी सफर को सतत जागरण की अप्रमत्तता दी, साथ ही लक्ष्य की अवाप्ति तथा आगमिक अध्येता बनने के सुमधुर सूत्र भी, जो मुझे निरतर विजयपथ की ओर गति प्रगति कराते रहे। जिनके जीवन दर्पण मे कही लुकाव छिपाव, दुराव, छल-कपट के दाग नही। शतांश स्वच्छ बेदाग आइना है आपका जीवन। व्यवहार इतना मधुर, वाणी इतनी प्रभावी और मूरत इतनी प्यारी कि हर बशर लौह चुम्बकवत् आकर्षित हो जाता है। शांतक्राति सघ ही नही, पूरा जैन समाज आपके उदार विचारो और वात्सल्य भावो से अभिभूत है। आपके श्रीचरण जिधर बढते है उधर एक नया युग साकार हो उठता है।

संघ का भाग्यवसन आपश्री के स्नेह संकेत, साधना सौहार्द, समन्वय के तारो से निरंतर विवर्धमान, विशुद्धयमान रहे, हर सदस्य कर्मठता और कर्त्तव्यनिष्ठा से सघ को शुभ ऊचाईया देने का संकल्प जगाये।

आपके जीवन दर्पण मे मेरा सयमी जीवन निखरता रहे, आशीषो की अमृतवर्षा मे भीगी रहू, शिवालय की शौध अगले जन्म मे ही पूरी हो इन्ही कामनाओ के साथ एक छोटी-सी भावना, आपश्री के सान्निध्य सरोवर मे मेरा मन सारंग सदा अठखेलिया करता रहे। आरोग्य वृद्धि के साथ युगो-युगो तक वसुंधरा को कर्म-विजय का उद्घोष मिलता रहे। जिनशासन विभूति के सपनो का सौन्दर्य सदियो तक खिलता रहे। आगमवाणी के अंगरक्षक, आराध्य देव को अनगिनत बधाईयां, बधाईया, बधाईयां

मरुधरा का मधुवन तूं है, शांति प्रेम का हंसता सुमन
पा रस महके जिनशासन में, आचार्य प्रवर श्री विजय को नमन।

प्रस्तोता : **मनगमल लूणावत**, नोखा
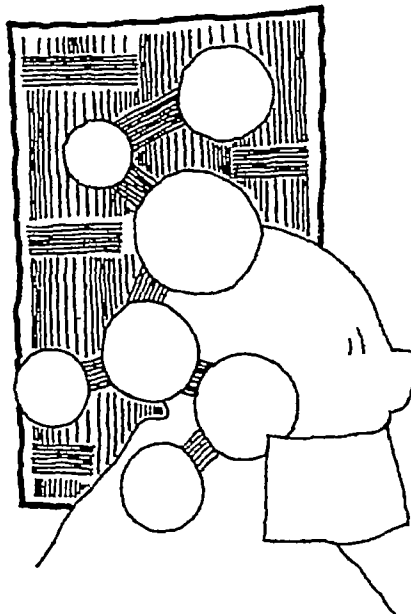
तुम्हें न भूला पायेंगे

✍ साध्वी चेलना श्री जी म.सा.

तेरे गुण की गौरव गाथा, धरती के जन-जन गायेंगे।
और सभी कुछ भूल सकेंगे, पर तुम्हें भूला न पाएंगे।

गुलाब जब डाली पर खिलता है, विकसित होता है तो वह अपनी मधुर सुवास को इधर-उधर दशो दिशाओ मे बिखेरने लगता है लेकिन कब तक? जब तक वह गुलाब विकसित है, खिला हुआ है, जब तक उसका अस्तित्व बना हुआ है। इस धरातल पर, परन्तु जैसे ही वह मुरझाया, डाली से गिरा, धूल मे मिला तो उसके जीवन का अतिम सास के साथ-साथ सुवास का महाकोष भी लुप्त हो जाता है और उसका महकता संसार परिसमाप्त हो जाता है।

निसदेह इस विश्व की सुंदर और सुरम्य वाटिका मे कुछ विशिष्ट आत्माए महकते पुष्प के रूप मे अवतरित होती है लेकिन उनका जीवन पुष्प की जीवन रेखा से भिन्न है, विलक्षण है, जब तक इस धरती पर उनका अस्तित्व रहता है। जीवन ज्योति का दीप प्रज्वलित रहता है। तब तक उनका व्यक्तित्व उनकी साधना जन-गण-मन को सुवासित व्यक्तित्व से महकाती ही है, परन्तु इस संसार से प्रयाण कर जाने के बाद भी उनकी साधना, उनका तेजमय ज्ञान ध्यान युक्त जीवन की सुवास का अनत अक्षय कोष कभी लोप नही होता। प्रत्युत उनकी मृत्यु के बाद भी जन-जन के मन को नई प्रेरणा, नई चेतना प्रदान करता है। उन्ही विशिष्ट आत्माओ मे से आचार्य भगवन् का व्यक्तित्व भी ऐसा ही था। अहा! कैसी सुन्दर, शीतल, शान्त भव्य प्रेरणा पूंज, जन-जन नायक सजीव मूर्ति थी। जिनके दर्शन मात्र से अपने हृदय की सारी मलिनताए, सारी अशांति गायब हो जाती थी। जिनका विराट व्यक्तित्व हमे स्वयं ही मोह लेता था।

आपका व्यक्तित्व इतना निश्छल, इतना मधुर और इतना आकर्षणशील था कि जन-गण-मन को बलात् अपनी ओर आकर्षित कर लेता था। आपने अनेको पतितो का उद्धार किया। आचार्य प्रवर का जीवन अनेक विशेषताओ का संगम स्थल था। समता विभूति, धर्मपाल प्रतिबोधक आपका आकर्षक व्यक्तित्व असाधारण था। अस्तु अनेको गुणो से युक्त आपके महान् जीवन का मै क्या वर्णन करू। मेरा हृदय श्रद्धा से पूर्णतः अभिभूत है। ऐसी महान् विभूति आचार्य श्री के चरणो मे श्रद्धा पुष्प सुमन अर्पित करती हू। साथ ही नूतन संघ के नायक शासन गौरव महिमा मडित आचार्य श्री जी के लिए ढेरो शुभकामनाए करती हूं कि आप युगो-युगो तक नानेश चमन को महकाते रहे। आपके मधुर अनुशासन मे हम प्रगति करते रहे।

छोटा सा निमित्त

✍ साध्वी शशिकांता जी म.सा.

आचार्य नानेश थे श्रृंगार दुलारे
स्वयं तिरे और अन्यों को तारे।
नानेश भक्तों के है अति प्यारे।
शत-शत वन्दन हो दिव्य सितारे।।

ससार के अदर जन्म-मरण की श्रृंखला मे प्रत्येक प्राणी आबद्ध होता है। चाहे देव हो, मनुष्य हो, तिर्यञ्च या नरकगामी आत्मा हो सीमित समय तक जीवन जीकर फिर मृत्यु की गोद मे लीन हो जाते है। बस इसमे जीवन की सार्थकता सिद्ध नहीं होती। जीवन को सजाने सवारने के लिए प्रत्येक प्राणी को ससार के रगमच पर एक अनूठा पार्ट अदा करना पडता है। पार्ट तो दुनिया मे बहुत है परन्तु मनुष्य जीवन के लिए सबसे बडा पार्ट है तप व त्याग का। ऐसे तप व त्याग का पार्ट अदा करने वाले थे आचार्य नानेश, जिन्होने छोटा-सा निमित्त पाते ही अपने जीवन को बदल दिया।

✦ जब आप दांता से भादसोडा पहुचे बहिन के 8 उपवास के उपलक्ष्य मे बेस लेकर गये। यहां पर विराजित मुनि प्रवर प्रवचन फरमा रहे थे। सावत्सरिक प्रसग को लेकर आरे का वर्णन चल रहा था। आपश्री के कानो मे वे शब्द पडे तो अवाक् रह गये। सोचा क्या इस कदर होना होगा। पचम आरे मे धर्म से ही बचा जा सकता है। चिन्तन मन्थन चलता रहा, रास्ता-रास्ता पार हो गया पता ही नही चला। दृढ संकल्प ले लिया सयम ही ग्रहण करूगा, प्यास से छटपटाते प्राणी के लिए पानी की बूद ही अमृत का काम करती है। वैसे ही महापुरुष के किए गये प्रण प्राण रूप होते हैं।

✦ जब आप बाल्यकाल मे थे तब की घटना है आपने धुए को आकाश मे उडते हुए देखा। देखकर बालवय मे चिन्तन चला मै ऊपर उठूँ धुए जैला हल्का बनूं। बालमानस मे ये सस्कार पैदा हुए उद्भूत होकर ही नहीं रहे वरन् उसका भी साक्षात् कर दिया। समय आने पर **दीवो समा आयरिया** की युक्ति को चरितार्थ कर अनेको आत्माओ को संसार के कलिमल से ऊपर उठाया।

✦ आपने एक बार बचपन मे इंजन चलते हुए देखा। सोचने लगे-अरे एक ही इन्जन इतने सारे डिब्बो को खींच रहा है। मैं भी ऐसा बनू सबको आगे बढाऊ। समय आने पर आप एक आध्यात्म योगी के रूप मे प्रगटे सारे सघ समाज को दिशा बोध दिया। समता सिद्धान्त की एक मशाल देकर सघ समाज को उसमे बढाया।

आपकी जिह्वा पर सरस्वती विराजमान थी। आपके बारे मे जितना कहा जाया उतना कम है। आप बहुमुखी प्रतिभा वाले महान् ज्ञानी व्याख्यानी आगम रत्नाकर थे। आप मे सेवा सहिष्णुता का चुम्बक-सा आकर्षण है। एक बार कोई आ जाता है तो वह अपनी जिन्दगी मे आपको कभी नहीं भूल सकता, ऐसा अद्भुत आकर्षण।

आपका मुख्य सिद्धान्त समता दर्शन था। आपने अधम नीच बलाई जाति का उद्धार किया। वो आज धर्मपाल के नाम से प्रसिद्ध है। वर्तमान मे आचार्य विजयराज जी म सा ने आपके साथ 17 चातुर्मास किए। आपका अनुभव प्राप्त किया। आपका वह अनुभव जनता को साक्षात्कार करा रहे है।

❖ ❖ ❖

आस्था के सुमनोद्गार

✍ साध्वी सुमनलता जी म.सा.

कांटों में भी फूलों सा खिलना सीखा था,
परीषहों को भी हंसते सहना सीखा था,
तेरी आत्म शक्ति का क्या परिचय दूं नानेश
पतझड़ में भी सावन-सा मुस्काना सीखा था।।

भारतवर्ष की पावन धरा पर अनादिकाल से कोटि-कोटि तीर्थंकर, पीर, पैगम्बर, महापुरुष, दानवीर, तपवीर, शूरवीर, रणवीर, पता नही कौन-कौन सी पवित्र आत्माओ ने जन्म लिया, इस ससार के भूमण्डल पर अवतरित होकर, अपने तप, त्याग से बल से, वीर्य से, इस भारत भू को गौरवान्वित किया है। उसी कडी की लडी मे आचार्य नानेश ने भी अपना विशिष्ट व्यक्तित्व निखारा जिसके कर्तृत्व और व्यक्तृत्व के साक्षात् अनुभव हमारे मन मानस मे आज भी उर्मिया भर रहे है, श्रद्धा से आस्था का पैमाना भरता ही चला गया और जा रहा है।

आचार्य नानेश गजब के अद्वितीय अध्यात्म योगी थे। आज भी दुनिया के दिलो पर उनकी अमिट छाप है। आप एक थे परन्तु व्यक्तित्व बहुआयामी था। एक ही तत्व को आपके भीतर खोज पाना असभव था। दर्शन, ज्ञान, चारित्र, समता, सहिष्णुता, धैर्यता, गभीरता जैसे गुण आप मे सहज प्राप्त थे। आचार्य भगवन् की वाणी मे ओज, हृदय मे पवित्रता तथा समता का सागर लहराता रहता था। ओजस्वी शान्त मुख मुद्रा, श्याम सलौनी सूरत नयनाभिराम थी। समता की अजस्त्र धारा बहाते नेत्र युगल, आशीर्वाद स्वरूप ऊपर उठा हाथ, ऐसी प्रभावी मुख मुद्रा को देख कर हर मानव आकर्षित होता हुआ, खिंचा चला आता और अपने आपको धन्य-धन्य कह उठता। सहज सुलभ साधना का खजाना था वह। ऐसे विराट व्यक्तित्व के धनी सद्गुरु देव को पाकर सम्पूर्ण विश्व गौरवान्वित हो उठा था।

कभी-कभी मन मे विचारो की गूंज उठा करती है-हे नानेश! तुम किस माटी के बने हो, हजारो आधियो के बीच अकम्पित तने हो, सुबह से शाम तुम्हें घेरे रहने वाले सुखो की छाया भी तुम्हारे चेहरे पर नही दिखती, मुसीबतो की भीड़ तुम्हारे शकुन भरे चेहरे पर चिन्ता का एक अक्षर नही लिखती, अपने भीतर तकलीफो के पहाड़ छिपाये, किसी समुन्दर की तरह शांत और गहरे हो तुम। तुम्हारे आकर्षण भरे व्यक्तित्व से जड को भी चेतना मिलती है। भीतर और बाहर की हलचल से प्रकाश स्तम्भ से ठहरे हो तुम। सुरभि सुमधुर मुस्कान से घावो को सहला लेते हो, उदास भरे चेहरो को हंसा कर पल मे बहला लेते हो। जबकि मै और बहुतेरे लोग अपने राई भर दुःख को पहाड सा बतलाते हैं। तमन्ना बस यही है कि तुम्हारे अनुपम अद्वितीय व्यक्तित्व का एक अंश भी ले सकूं।

विशेष प्रसंग : जब आचार्य भगवन् की यश कीर्ति चारो दिशाओ में फैल चुकी थी, गौरव गाथा उतुंग को छू रही थी उस समय अनुभवी व्यक्तियो का, बुजुर्गों का कहना था कि आचार्य पूज्य श्री श्रीलाल जी म सा की भविष्य वाणी है-"मुझे क्या देखते हो आठवे पाट को देखना वह खूब चमकेगा।" वास्तव में वह वाणी खरी उतरी। आठवें पाट को सभी ने खूब देखा कितने चमके आठवे पट्टधर। यह किसी से छिपा नही है। इतना ही नहीं आठवे पाट की महिमा को, गौरव गाथा को कहने, फैलाने मे एक ही आचार्य समर्थ नहीं हुए अतः दो-दो आचार्य आज उसे फैला रहे हैं, उस आचार्य नानेश की ख्याति को दिगदिगन्त मे गूंजा रहे है। मै तो प्रभु से यही प्रार्थना करती हूं कि दोनो ही महापुरुष गुरु के गौरव को विशेष-विशेष गौरवान्वित करे। आचार्य नानेश के शासन को दिन दुना रात चौगुना चमकाये, महकाये, वृद्धिंगत करे, इन्हीं शुभ भावनाओ सहित शत्-शत् वन्दन-अभिनन्दन। ❖ ❖ ❖

काव्यधारा

पद्य पुष्पांजलि
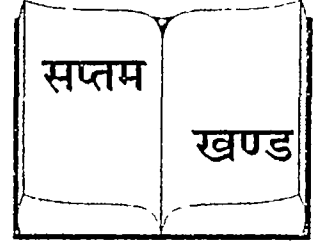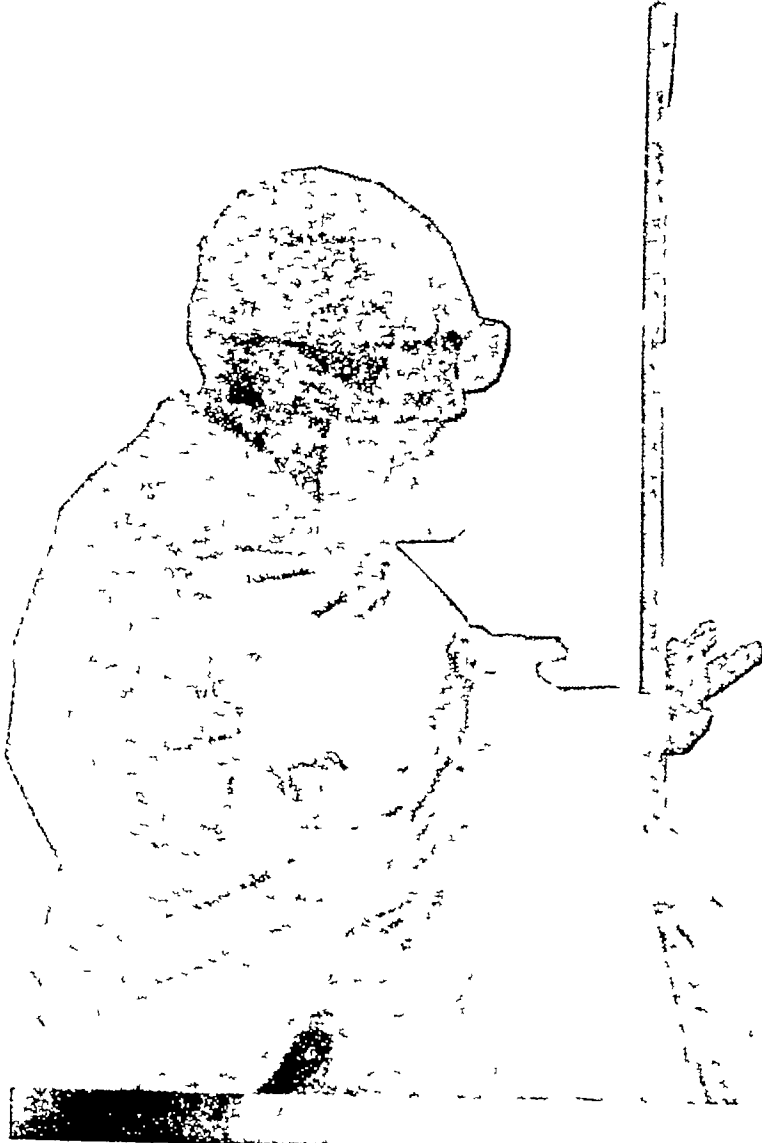
1. संतों के काव्य
2. महासतियों के काव्य
3. श्रावकों के काव्य

स्तब्ध है मन का जहाँ. . .

✍ आचार्य श्री विजयराज जी म सा

नाना तुम क्या गये, हृदय को रुला गये।
थम गई ये सासे, कहर इक ढहा गये॥

मूक सी वाणी मेरी, स्तब्ध है मन का जहा।
शिथिल है यह गाज सारा, वियोग की यह सुन कथा॥

तुम क्या गये हो, मन खो गया है।
सरसब्ज यह चमन, निस्तेज हो गया है॥

आदर्श तेरी बाते, आदर्श ही सब हो गई।
याद नित आती रहेगी, यादो मे जो खो गई॥

सत थे तुम सच्चे मन के, निस्पृहता के पुज थे।
मधुरता के भरे हुए, साधना निकुज थे।

ज्योति थे जवाहर की, और गणेशी शान थे।
वीर शासन के गुरुवर, सघ के अरमान थे॥

अखरता रहेगा जाना तेरा, शून्य ये भरेगे कैसे?
तेरे बिन तेरे पथिक ये, राह भूले भटकेगे जैसे।

तुम हो जहा, मन है वहा, ज्योति मे तेरी जलता रहा।
याद कर तेरे गुणो को, शीश यह झुकता रहा॥

नाना दीप से आलोक ही आलोक

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

छोटे से मन के इस
छोटे से आगन मे
एक नाना का
दीप जल उठा है
जो तिमिर जन्मो जनम का
अब हर चुका है
बेहद खुशी है मुझे
अनहद प्रसन्नता है मुझे
न बुझने दूगा अब उसे
जलता रहेगा
आलोक बिखेरता रहेगा
तिमिर के वे कण
शुभ्र ज्योति मे
शुभ्रता के परिवेश मे
ढलता रहेगा
आलोक की आलोक
जीवन मे भरता रहेगा।
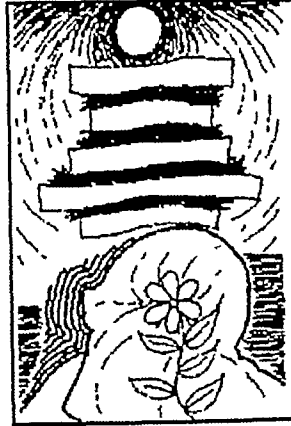
करते समता की बरखा

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

आज है पुलकित मेरा मनवा,
गुरु चरणो मे करके नमन
चारित्र सुगध को पाकर के
हर्षित है मेरा मन उपवन
यति निराले है इस जग के
आत्म ज्ञान के हैं भास्कर
रत्न त्रय की महा साधना
साधक है गुण रत्नाकर
श्री अखण्ड है ज्योति तेरी
तपो निरत है भव्य छटा
नाप नही सकते है गरिमा
दिव्य शक्ति की दिव्य कथा
नैसर्गिक वात्सल्य भरा है
करते समता की बरखा
शम दम खम से ओतप्रोत है
विजय रूप अपना निरखा।
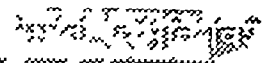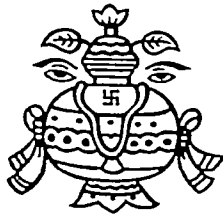
नाना ज्योति पा लेता

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

महासमर्थ हो सब अर्थों के,
अर्थ तुम्हे ही मान रहा।
समा गये हो अन्तहीन बन,
निरर्थ बाकी सब जान रहा ॥1॥

आज जहा तक दृष्टि फैली,
देख रही है बस तुझको।
ओझल कभी न होना पथ से
चाह रही बस यह मुझको ॥2॥

शब्दो के ये टुकड़े ही तो,
अर्पित कर मन सुख पाऊ।
भावो का महासागर भीतर,
उमड़ रहा क्या बतलाऊ ॥3॥

निर्भाव मूक और गतिहीन था,
तुमने दी प्रगति सारी।
निष्प्राणो में प्राण फूक कर,
तुमने दी शक्ति सारी ॥4॥

छलक रहे है नयन आज ये,
बस दर्शन को है आतुर।
क्षण-क्षण जड़ निश्चल होता है,
बन कर मनवा है बेसुर ॥5॥

ज्योति शून्य बन जाता जब-जब,
नाना ज्योति पा लेता।
तन मन के सब आसू पीकर
शब्दों से मन भर लेता॥

ज्ञाता दृष्टा भाव से

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

आत्म साधक ज्ञान प्रवर
समता विभूति अभिराम
पावन श्री पद कमल मे
श्रद्धा युत् है प्रणाम।

आराध्य प्रवर श्री सद्गुरु
अथाह ज्ञान आगार
करुणा सागर तेज पुज
पा जीवन आधार॥

जीवन दीप्तिमत है
सकल प्राणी सुखवाद
ज्ञाता दृष्टा भाव से
हरा मिथ्यामद अवसाद॥

आत्म तत्त्व का गूढ रहस्य
जाना है मति मान
तुम सम गहरे ध्यानी को
करता जगत प्रणाम॥

असीम गुणो के सिधु का
कैसे पाए पार
ससीम शब्द नही कह सके
गुण है अपरम्पार॥

शात दात गभीर वचन
प्रवचन कला प्रवीण
सरल सहज माधुर्य का
सगम है तल्लीन

चितन प्रखर नवनीत सम
दिया जगत बेमिसाल
दिशा प्राप्त होती रहे
हो कैसा भी हाल

❖ ❖ ❖

विजय दीप जलाता रहूं

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

ज्योति पुरुष ओ नाना तेरी, क्या गरिमा मै गा सकता?
विराट मुख भी हो जाऊ तो, क्या महिमा मै गा सकता? ॥1॥

महा यात्रिक हो इस युग के, तुमसे मार्ग प्रशस्त हुआ।
गरिमा तेरी देख-देख कर, जग सारा आश्वस्त हुआ॥2॥

महत्तम हो इस जीवन के, तुमसे मागू-मागू क्याय।
स्वय-स्वय से है यह शिकवा, दिया सभी फिर मागू क्या?॥3॥

देखो कहा था आज कहा हू, और कहा तक जाऊगा।
तेरी ही दिव्य किरण कृपा से, मजिल मै पा जाऊगा।॥4॥

अदृश्य रहे हैं हाथ तुम्हारे, तुमने पथ को साफ किया।
अधकार से भरा था जीवन, उज्ज्वल वह प्रभात किया॥5॥

मुझ अपात्र को पात्र बनाया, कलुषताए धो- सारी।
हर अभाव सद्भाव बने है, पा कृपा किरणे प्यारी॥6॥

है अनाम करुणा को मेरा, बार-बार बस रहे नमन्।
जीवन के पथरीले पथ पर, बढते जाये रुके चरण॥7॥

नाना चरण कमल का अमृत, पीता और पिलाता रहू।
हर अधियारी मनोदशा मे, विजय दीप जलाता रहू॥8॥

अर्पणाएं नित रहे

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म.सा

आस्था के पुज को
हृदय से प्रणाम है।
अनुग्रह की आश पर,
जीवन यह बलिदान है।।1।।

प्राणो की हर किरण मे,
तेरा ही आलोक है।
सासो की हर मोड पर
सौरभ का बस स्त्रोत है।।2।।

दृष्टि से अमृत वह झरता,
करो से आशीष है।
पाद प्रगति के चरण है,
स्वरो मे मानो ईश है।।3।।

सोच समता मे भरी है,
साधना गहराइया।
ज्ञान की उन्नत दशा मे,
पा गए ऊचाईया।।4।।

लौ यह जलती रहे,
तिमिर जग हरती रहे।
प्राची की इस लीला मे,
लालिमा बढती रहे।।5।।

हो प्रणत वर मागता हू,
अर्पणाए नित रहे।
'विजय' को ये श्रेष्ठताए
नानेश से मिलती रहे।।6।।

सहारे का साथ दिलाया

✍ आचार्यश्री विजयराज जी म सा

धधकती हुई ज्वालाओ मे
जकड़ती हुई काराओ मे
उफनते हुए तूफानो से

शाति का नीर बहाया
मुक्ति का मार्ग दिखाया
सहारे का साथ दिलाया

कोटि-कोटि वन्दन है पूज्य नानेश
युगो-युगो वन्दन है पूज्य नानेश
जन्मो-जन्मो वन्दन है पूज्य नानेश

क्या तुम्हारे उपकारो का वर्णन कर सकूगा
क्या तुम्हारे नजारो का अकन कर सकूगा
एक जन्म नही जन्मो-जन्मो निरतर
न कर सकूगा वर्णन, न कर सकूगा अकन।

❖ ❖ ❖

इन निगाहो से तुझे ही निहारू
इन विचारो से तुझे ही विचारू।

कल्पना की हर कोर पर बैठे हो नानेश,
इन चाहों से तुझे ही चाहू॥

मेरी शक्ति हो तो नानेश का नाम हो,
मेरी भक्ति हो तो नानेश का जाप हो॥

अर्पित है गुरु चरण मे, अपना तन मन आज।
भक्ति भाव पुलकित रहे, बना रहे गुरु ताज॥

नाना ऐसी शक्ति दो, दो ऐसा वरदान।
स्वीकृत लक्ष्य की ओर ये, होता रहे प्रयाण॥

❖ ❖ ❖

नानेश गुणाष्टक

✍ महास्थविर श्री शांति मुनि जी म.सा.

सौम्यं मनोहर विशाल-पवित्र-गात्रं,
उर्ज्स्वलं हरतिचन्द्र-मसोऽपि कान्तिम्।
योगीन्द्र-नाथ-मिव यस्य विभाति रूपं,
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥१॥

भावार्थ : शान्त, आकर्षक, विशाल पवित्र शरीर वाले, चन्द्र के निर्मल कान्ति को हरने वाला प्रशान्त हसमुख चेहरा, महायोगी सी मुख-मुद्रा के प्रतीक 'नानेश' पद से सम्बोधित होने वाले आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

उद्दाम-मोह करि राज कठोर सिंहं,
कामादि वर्ग दलने नितरां प्रवीरम्॥
मिथ्यात्व-मोह-तमसो हरणेऽशु-माली,
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥२॥

भावार्थ : निरकुश मदोन्मत्त गजराज के दमन मे सिह के समान पराक्रमी, काम-क्रोधादि शत्रुओ को नष्ट करने मे अपराजेय वीर, मिथ्यात्व मोह के अन्धकार को दूर करने मे तेजस्वी भास्कर, 'नानेश' पद से अभिसज्ञित आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

मन्ये त्वमेव भुवने किल देव देवः,
सद्धर्म-देशक वरो मतिमान वरिष्ठो
संविन्निहन्ति खलु यस्य-मदान्धकारं,
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥३॥

भावार्थ : 'जिन नहीं पर जिन सदृश' इस आगमोक्त वाक्य के अनुसार मानता हूँ आप ही ससार मे निश्चय ही देवाधिदेव, सद् धर्म के श्रेष्ठ उपदेशक, प्रकृष्ट बुद्धिमान, मद रूपी अन्धकार के नाश के लिए ज्ञान दीप, 'नानेश' पद से अभिसज्ञित आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

सौम्याद् विधोरिव च कान्त मुखान्निः सृत्य
भाषा प्रणाशयति निर्जडतां त्वदीया॥
सम्यक् स्तुवन्ति प्रतिवादि जना जिताश्च,
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥४॥

भावार्थ : आपके चन्द्र सम सौम्य एव तेजस्वी श्री मुख से निकली भाषा अज्ञान को नष्ट कर देती है, जिसको सुन कर पराजित प्रतिवादी भी स्तुति करने लगते है। ऐसे 'नानेश' पद से अभिसज्ञित आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

विद्या विवाद सहिता प्रतिपक्ष दक्षा,
स्तब्धा भवन्ति भवतां पटुतां विलोक्य।
श्रुत्वा गुणांश्च ननु ते विबुधा स्तुवन्ति,
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि ॥५॥

भावार्थ : विद्या के विवाद से वाचाल, प्रतिपक्ष मे कुशल आपकी प्रवचन पटुता के दर्शन कर स्तब्ध हो जाते है और जिनके गुणो को श्रवण कर निश्चय ही वे बुद्धिमान, देवगण स्तुति करते है, उन 'नानेश' पद से अभिसज्ञित आचार्य .श्री को शतशः प्रणाम।

कर्म-प्रवाह-हरणे सततं सुवीरा,
सिद्धान्त वाक्य परिपूर्ण-गुणान्विता या।
त्वय्येव भाति विरति-र्विकला-कलंका।
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥६॥

भावार्थ : सिद्धान्त में कहे गये परिपूर्ण गुणो से सम्पन्न कर्म प्रवाह को सतत् हटाने मे श्रेष्ठ वीर, निष्कलक निर्दोष विरति ही पावन आभूषण है, ऐसे नानेश पद की सज्ञा वाले आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

त्वामेव शुद्ध मतिमान, महितश्च भक्त्या,
ध्यात्वा जहाति सकलं कृत-पूर्व-पापम्।
प्राप्नोति ध्रौव्य-मचलं हि पदं च शीघ्रं
नानेश इत्यभिहितं गणिनं प्रणौमि॥७॥

भावार्थ : हे निर्मलमति। धारक और पूज्य आराध्य देव भक्ति से आपको ध्याकर अपने पूर्व सचित पाप कर्मों को नष्ट करता है और अवश्यमेव ध्रुव अचल पद को शीघ्र प्राप्त करता है। अत: 'नानेश' पद से अभिसज्ञित आचार्य श्री को शतशः प्रणाम।

तुभ्यं नमो निरतिचार चरित्रराशे,
तुभ्यं नमो विगत दोष विशिष्ट योगिन्।
तुभ्यं नमो मुनि गणेषु गणि प्रवीर,
तुभ्यं नमोऽवनि तले विदुषां वरेण्य॥८॥

भावार्थ : निरतिचार चरित्र के निधान आपको नमस्कार हो, दोषो से विहीन विशिष्ठ योगी आपको नमस्कार हो, मुनि मण्डल में अति श्रेष्ठ आचार्य आपको नमस्कार हो, विद्वत् समाज मे श्रेष्ठ विद्वान आपको नमस्कार हो।

नाना गुणान्वित-मिदं हि गुणाष्टकं च
अल्प श्रुतेन सरलैः रुचिरं सुशब्दैः।
शान्त्याख्य लाल मुनिना रचितं सुभक्त्या,
यः संपठेत किल लभेत सुखं वरिष्ठम्॥

भावार्थ : नाना गुणों से मंडित यह गुणाष्टक सरल, सरस, सुन्दर पदो मे शातिलाल मुनि ने रचा है। इसका श्रद्धा भक्तिभाव से अध्ययन पाठ करने वाला अवश्य श्रेष्ठ सुख का अधिकारी बनेगा।

❖ ❖ ❖

गुरु नानेश गुणाष्टकं

✍ श्री विनोद मुनि जी म.सा.

जिनशासन नायक नाम धर,
जिनधर्म प्रभाकर दिव्य स्वर।
समता सदन ममता वदन,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥1॥

घनश्याम मनोहर देह धर,
दृढ बाहु युग, कमलाक्ष शुभ।
प्रतिभा निधि-मद्भुत ज्ञानधर,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥2॥

गत दुर्मति दुर्गति दूरतर,
त्रय करण विशुद्धि विशुद्ध द्वद।
पुरवी सम सर्व सहत्व गुण,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुर ॥3॥

त्रिभुवन चिर कौशल चिन्तकत्व,
ममतामृत मुदधि पूरित एव।
समतामय जीवन प्रेरक त्व,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥4॥

दृढ सयम मार्ग सदा निरत,
जिनवाणि सुधारस सिंधु सम।
शुभ पुण्य पर यशकीर्ति धर,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥5॥

अपकारी जनेऽप्युपकारकर,
जग रोग शोक दु ख नाशकर।
चिरसचित कर्म विनाश कर,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥6॥

मलयानिल शीतल शान्त घन,
तरणीदु सम धुति सौम्य तन।
प्रददौ श्रद्धान्वित सौख्य धन,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुर ॥7॥

करुणाकर ताटक भव्य रथ,
जग मुक्ति प्रदर्शक प्रेय पथ।
श्रेयदय भवाम्बुनिधौ प्रथित,
स्मरणामि सदा श्री नाना गुरु ॥8॥

गुरु नानेशाष्टक, युगे-युगेर्बद्ध मुक्तिकम्।
जपेद्य नियम यत्नेन, शिव विजय मुपैतितम्॥
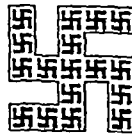
नाना गुणो नाना गणी
अगणित गुणी-नाना गणी

✍ **रचयिता : पूज्य भगवन् श्री रामप्रसाद जी म.सा.**

(पूज्य भगवन् श्री रामप्रसाद जी म सा बहुभाषा भाषी विद्वान संत हैं। आप मे संयम साधना, सौम्यता सहजता से परिलक्षित होती है। वर्तमान युग की अद्वितीय एव विरल विभूति है। मुनि मायाराम गण की अनमोल धरोहर तथा गुरु मदन गच्छ की अनन्य विरासत हैं। अपने गुरुभ्राता श्री सुदर्शन लाल जी म.सा. की स्मृति के, उनकी आदर्श विचारशैली के प्रतिनिधि संत रत्न है। तपोधनी संथारा साधक महामुनि श्री बद्रीप्रसाद जी म सा के चिन्तन के सजग प्रहरी है। आप काव्य कला, उर्वर मेधा शक्ति सम-सामायिक सोच के स्पष्ट प्रस्तोता है। पूज्य गणेशाचार्य तथा आचार्य नानेश के प्रत्यक्षद्रष्टा तथा कृपा पात्र रहे है। प्रत्युत्पन्न मति है। संयम की कठोरता को मन की कोमल अभिव्यक्ति से सर्वसुगम बना कर प्रस्तुत करने की कला में सिद्ध हस्त हैं। वर्तमान युग की बेजोड हस्ती है, उन्हीं की कलम से निसृत-निर्मित, संस्कृत काव्य तथा स्वयकृत अनुवाद से रसवती श्रद्धा का आस्वाद आप स्वयं ले पायेगे।)

नाना लाल आचार्यो, नाना गुण विभूषित.।
नाना रत्नै प्रतिपूर्णो, यथा हि मन्दरो गिरि ।।1।।

अनुवाद : नाना लाल आचार्य प्रवर, नाना गुण भूषण भूषित थे।
ज्ञानादिक नाना रत्नो से, पूर्ण मेरु से उपमित थे॥

नाना देश विहारित्वात्, नाना भाषा विशारद ।
गुरुपास्त्यास्वश्रमाच्च, शास्त्रेषु परिनिष्ठित. ।।2।।

अनुवाद : नाना देशो के विहार से, नाना भाषा भाषी थे।
गुरु सेवा और अपने श्रम से, शास्त्र ज्ञान अभ्यासी थे॥

गुरुणां स्नेह भूमि स, श्राद्ध (श्रद्धानां-श्रावकाना) श्रद्धेय पूजित ।
चतुर्वर्णाकीर्णसघे-हस्तच्छाया-करश्च स ।।3।।

अनुवाद : निज गुरु के वो स्नेह पात्र थे, श्रावक जन के अति श्रद्धेय।
संघ चतुर्विध वरद हस्त की, छाया मे पाता था श्रेय॥

गणेशीलालाचार्यस्य-शिष्यत्वे नोपलक्षित. ।
शिष्य सम्पत्सपन्न, मुनि राड् भूमि राडिव ।।4।।

अनुवाद : आचार्य गणेशीलाल गुरु के, शिष्य भाव का पा गौरव।
शिष्य संपदा से राजाओ, से ऊंचा पाया वैभव॥

जिन प्रवचनमाश्रित्य, प्रवचन प्रभावनाम्।
कुर्वन्नदीपि-सर्वत्र-दिवा दीपक भास्कर ॥

अनुवाद : आगम के अनुसार की थी, प्रवचन-प्रभावना कुशलतया।
शोभा पाई प्रतिदिन जैसे, उगता भास्कर नया नया॥

अस्माक स्नेहतो स्निग्ध, दिग्धोऽमृत रसेन च।
तप संयम मूर्तिश्च, पूर्तिश्च मन स्थिते ॥

अनुवाद : मयाराम गुरु मदनलाल गण, से अति स्नेहाबद्ध रहे।
तप संयम की वृद्धि मे, दोनो ही गण सन्नद्ध रहे॥

पूर्वाचार्य पट्टस्य, यौवराज्येऽभिषिञ्चित ।
आश्वेव स आचार्यपद वीमप्यशूशुभत॥

अनुवाद : हुक्मीचन्द्र आम्नाय पट्ट का, युवाचार्य पद पाया था।
तदनुसार आचार्य बने, जिनशासन को चमकाया था॥

सोऽधुना निधनं यात, निर्धनी कृत्यानुयायिन ।
अञ्जले शब्दभावानाम्, कुर्वेऽह समर्पणम्॥

अनुवाद : अनुजीवी जन लुटे-लुटे से, है अब उन्हे गंवा कर के।
हूं कृतार्थ मैं सब की ओर से, श्रद्धा पुष्प चढा कर के॥

-प्रस्तोता : **दलबीर शास्त्री**

मेरे गुरुवर आप कहां पर खो गये

तर्ज · दिल के अरमां आसुओं मे

मेरे गुरुवर आप कहाँ पर खो गये
प्यासे है ये नैन जन मन रो रहे ।टेर।।

आये थे पतवार बनकर आप तो
मेरी नैय्या छोड़कर ओझल हो गये ॥1॥

था सहारा आपका हमको सदा
तुम बिना गुरुवर हम कैसे जिये ॥2॥

अब तुम्हे पाऊँ कहो कैसे कहाँ
स्वप्न मे यह बात तो कह दीजिये ॥3॥

लौट कर एक बार गुरुवर आईये
दे दर्श हमको तो पावन कीजिये ॥4॥

श्रद्धाजलि अर्पितकर्ता

साध्वी कनक श्री जी म सा

श्रद्धा सुमन

✍ सुरेखा धींग 'रानी', कानोड

त्याग, तप, ज्ञान, दर्शन, चरित्र की जो अनुपम कृति है।
क्या लिखू उनकी अभिव्यक्ति मै, जिनका जीवन स्वय अभिव्यक्ति है।

अनेक पुण्यशालियो मे आचार्य श्रीनानेश का नाम भी बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है। उनके चरणो मे मेरी भावाभिव्यक्ति निम्न है -

तुम्हीं मेरे साहिल हो

(तर्ज -बहुत प्यार करते हैं)

बहुत याद करते है गुरूदेव हम।
भूला ना सकेगे हम जनम-जनम।।बहुत ॥

गुरूदेव महिमा तुम्हारी निराली।
दयालु तुम्ही से मिली खुशहाली।
भागे सब अन्धेरे घुटन और गम॥बहुत ॥

मेरी जिन्दगी को तुम्ही ने सजाया।
मेरी सोई किस्मत को तुम्ही ने जगाया।
तुम्ही मेरे साहिल हो मजिल परम॥बहुत ॥

साभार - पू उज्ज्वल प्रभा जी म सा की डायरी से

चमक्यो चमक्यो रे. . .

(तर्ज - आवो-आवो-रे ---)

✍ तपस्विनी इचरज कवर जी म.सा.

चमक्यो चमक्यो रे -2 चमक्यो-चमक्यो रे ||टेर ||

अष्टम पट्टधर चमक्यो भारत मे SSS
ज्योति जगाई जन मन मे ।
धर्म फैलाओ सारा जग मे ||१ ||

मोडी लाल जी का तारा SSS
गणेश गुरु का प्यारा,
पोखरना कुल उजियारा ||२ ||

समता का बिगुल बजाया SSS
रागद्धेष को दूर हटाया,
जीवन को धन्य बनाया ||३ ||

थारी व्याख्यान शैली निरालीSSS
सुन कई जीव बने वैरागी,
तत्त्वादिक ज्ञान दियो भारी ||४ ||

लाखा जीवारा थे प्यारा SSS
शरणे आया थे तार्या,
धर्मपाल ने उबार्या ||५ ||

सती भँवर है शरणे थारी SSS
तव चरणो मे बलिहारी
श्रद्धा सुमन चढावे भारी ||6 ||

प्रेषिका सीमा भाणावत

❖ ❖ ❖

थारो शासन चमक्यो जग रे मायने

तर्ज वाह म्हारा सावरा

✍ साध्वी रत्ना श्री विजय लक्ष्मी जी म सा

ओ पूज्य गुरुवर नाम दिपायो जग रे मायने
ओ पूज्य गुरुवर, थारो शाशन चमक्यो जगरे मायने ॥ टेर ॥

मोडीलाल जी रा लाडला कोई, पोखरना कुल चन्द
दाता गॉव मे जन्म है लीनो-2, सिणगारा रा नन्द ॥1॥

छ आरा रो वर्णन सुणने, आयो मन वैराग,
अन्तर्पथ के यात्री बन गये-2, छोड़ दिया सब राग ॥2॥

गजानन्द के कर कमला मे, सयम दीप जलाय,
कपासण री पावन भूमि-2, साल 96 माय ॥3॥

त्रय शताधिक ने थे तार्या, कियो आत्म उद्धार,
मालव प्रातरा धर्मपाल ने-2, दीनी समकित सार ॥4॥

झीलो की नगरी मे गुरु वर, सथारो है धार्यो,
चहु दिशि मे नाना नाम रो-2, गुज रहयो है सारो ॥5॥

दिव्य लोक मे आप पधारे, मन छायो विषाद,
श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते है-2, पाओ शाश्वत वास ॥6॥
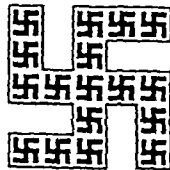
नाना गुरुवर नाम करके. . .

तर्ज-दिल के अरमा आसूओ मे

✍ साध्वी इच्छिताश्री

नाना गुरुवर नाम करके चल दिए
समता के निकुज कहाँ पर चल दिए ॥टेर॥

दी समीक्षण ध्यान की वो साधना
युग करेगा याद ऐसे काम किए ॥1॥

तन के रोगो ने है घेरा था तुझे
समता से सब कष्टो पर विजय हुए ॥2॥

धन्य है श्रृगार पिता उस मोडी को
कुल पोखरना को गुरु दीपा गए ॥3॥

उदियापुर मे तुम जो ओझल हुए
ज्योति मे ज्योति ज्यो समा गए ॥4॥

❖ ❖ ❖

तेरी आत्मा का दर्श सुखकारा

तर्ज तुम्हीं मेरे मदिर

✍ मुनि सुमति

गुरुवर जहा पे हो, वन्दन हमारा।
तेरी आत्मा का, दर्श सुखकारा ॥टेर॥

अज्ञान तिमिर मे, प्रकाश फैलाया।
अज्ञानियो मे भी ज्ञान जगाया॥
तेरी महिमा का, नही है किनारा ॥1॥

पापो को हटाया, धर्म बढाया।
भटके राहिईयो को, राह दर्शाया॥
तेरे गुणो का, है विस्तारा ॥2॥

नाना तुम नानेश हो, भक्तो ने माना।
शाति क्राति सघ को, आगे बढाना।
मुनि सुमति का, प्रबल सहारा ॥3॥

समता विभूति परम पूज्य गुरुदेव को श्रद्धांजलि

✍ साध्वी उज्ज्वल प्रभा जी म.सा.

सयम पथ अपनाकर जिनने, जीवन धन्य बनाया था।
महायोगी नानेश गुरु ने, यश-सौरभ महकाया था॥

धन्य हुई वो दाता नगरी, धन्य हुई श्रृगार कवर।
मोडीलाल जी पिता धन्य है, धन्य हुए गणेश गुरुवर॥
सतत-साधना मे रत रहकर, जीवन स्वर्ण तपाया था॥महा ॥

समता दर्शन देन अनुपम, शाति का करता सचार।
ध्यान-समीक्षण भी रूखे मन, मे करता आनन्द प्रचार॥
धर्मपाल लाखो को बनाया, जैन-ध्वज लहराया था॥महा ॥

रतलाम शहर मे पच्चीस दीक्षाओ का अनुपम ठाठ लगा।
अजब नजारा देख रहे थे, मेला-धर्म विराट लगा।
करके धर्मोद्योत हुक्म, सघ को खूब सजाया था॥महा ॥

अनचाहे जो कदम हमारे, भले गुरु इस ओर बढे।
अन्तर मे तो सदा है झकृत, जो हम पर उपकार तेरे।
साकार करे समता-दर्शन, जो तुमने हमें पढाया था॥महा ॥

आज विरह की इन घड़ियो मे, स्मृतियो का ताता है।
हुआ विलीन है दिव्य सितारा, पर ये जग यश गाता है।
करे आचमन उसी अमृत का, जो तुमने बरसाया था॥महा ॥

'उज्ज्वल' महिमान्वित जीवन है, तुमने जिसे निखारा है।
समरसता की खान विजयगुरु, जिनशासन उजियारा है।
गुज रहा यशगान जगत् मे, 'विजय' दिव्य सितारा है॥महा ॥

प्रस्तुति : प्रो. अभय जैन, इन्दौर

श्रद्धा के तीन पुष्प

✍ रेखचन्द सुराणा, राजनांदगांव (छत्तीसगढ़)

(1)

जग मे आकर समता बाटी,
यश की जिनके सीमा ना थी।
गुण गाथा क्या गाऊ उनकी,
रुकते नही कदम थे जिनकी।
ना जीवन भर समता छोडी,
ना ही किसी के दिल थी तोडी।

(2)

नर होकर नारायण सम थे,
महावीर के तुम गौतम थे।
नत मस्तक थी सारी दुनिया,
गुरु होकर भी बने लघुतम थे॥
रुढि वादिता का विरोध था,
देव धर्म पर पूर्ण शोध था।
वर्जनीय का नही ठौर था,
कोमल मन शासन कठोर था।

(3)

उन्हे कैसे भुला दे जिन्होने एकता के लिए प्रयास किया,
उन्हे कैसे भुला दे जिन्होने समता पर विश्वास किया।
आचरण के साथ अपनी धारणाए परम्पराए दी,
उन्हे कैसे भुला दे जिन्होने नया इतिहास दिया।

नानेशाचार्य के प्रति. . .

✍ अम्बालाल नन्दावत, कानोड़
स्वतंत्रता सैनानी एवं कवि

जप तप सयम शम के साधक
मगलमय अभिनदन।
मुक्तिमार्ग के अमर पथिक,
तुम्हे कोटि-कोटि वन्दन॥

मानवता के महा मसीहा, जिनशासन का सत महान्।
सर्व हिताय सुखाय विरति का, जीवन जिया त्याग प्रधान॥

महक उठा था एक सुमन, इस दाता ग्राम की धरती पर।
कुसुमाकर सौरभ लुटा गया, इस मृत्युलोक की अवनी पर॥

वह महाप्रतापी सत पुरुष था, वाणी जादूगर अनूप।
था वक्ता प्रखर प्रताप धनी, था यहा कर्मयोगी स्वरूप॥

वह जिनशासन का था प्रतीक, अरु कल्पवृक्ष था दीना का।
वह शरणागत प्रतिपालक था, अरु रिद्धि सिद्धि था हीना का॥

अध्येता था जिनवाणी का, कई विषयो का प्रणेता था।
निस्पृह साधक पूज्य प्रवर तू साधु मार्ग का नेता था॥

वह धरती के सम क्षमावत था, सागर वर गभीरा।
बडी खोज के बाद मिला था, वह कोहिनूर हीरा॥

शाश्वत कर्म ज्ञान भक्ति को, सुख का भान मिला जब।
चमके नभ मे चाद सितारे, नाना गुरु सा पूत मिला जब॥

जब याद करू गुरुवर तुमको, सकट की घड़िया टल जावे।
यह चमत्कार जद देखू हू, नेणा सू नीर उतर आवे॥

वह हुक्म सघ का स्वामी था, पूज्यवर गणेश का सैनानी।
तेरे दर्शन दुर्लभ देख आज, अखिया मे भर आया पानी॥

जब तक रहे जगत के अन्दर, सूर्य चन्द्र से साजे।
उत्तम संयम पाल अत मे, जाकर मोक्ष विराजे॥

जैसा नाम यथा गुण तेरा, दिव्य ज्योति अभिराम।
'अम्बालाल' का श्री चरणो मे, शत्-शत् बार प्रणाम॥

विजय गुरु महान् है

✍ पवन कुमार कातेला, देशनोक

(1)

जिनशासन की दिव्य विभूति, हुक्म सघ के जग मग ज्योति
विजय गुरु महान् हैं, विजय गुरु महान् है।
जतनचन्द जी की शान, भवरी मा की आन है,
विजय गुरु महान् है, विजय गुरु महान् है।
बीकानेर में जन्म लिया, सोनावत कुल उजियार है,
विजय गुरु महान् है, विजय गुरु महान् है।
नानेशाचार्य के श्री चरणो मे सयम अगीकार किया
विजय गुरु महान् है, विजय गुरु महान् है।
मात-पिता सग भगीनी सयम लिया स्वीकार है
विजय गुरु महान् है, विजय गुरु महान् है।
गुरुवर विजय के श्री चरणो मे पवन कातेला का वन्दन बारम्बार है,
वन्दन बारम्बार है, विजय गुरु महान् है, विजय गुरु महान् है।

(2)

जय नाना जय नाना गाए जा, चरणो मे शीश झुकाये जा,
मोडी के दुलारे सिगार के जाये, दाता गाव चमकाये जा,
न्याय नीति के पालनकर्ता अध्यात्म योगी प्रखर वक्ता,
शासन को महकाये जा।
नाना के साथ विजय का नाम रहे
अज्ञान तिमिर से दूर हो
पवन सरोज रोशनी प्रभात के गीत गाए जा।

✍ पवन सरोज रोशनी कातेला, देशनोक

(3)

तुम स्वय शकर थे, तुम्हे अमृत की जरूरत ना पड़ी।
तुम स्वय गौरव थे, तुम्हे हजारो की जरूर ना पडी।
हम लिखते है आपके बलिदानो की कहानी
मगर तुम्हे कभी भी जयकारो की जरूरत ना पडी।

✍ गौतम बबीता राजेश कातेला, देशनोक

❖ ❖ ❖

भावांजलि

✍ मासूम चतुरमुथा, खरियार रोड़ (उड़ीसा)

यह माना कि, मिलना-बिछुडना प्रकृति का,
अपरिवर्तित क्रम है।
लेकिन आपकी चिरनिद्रा से,
हम सबकी आखे नम हैं॥
जिनके त्याग सयम की, उद्यम की,
विजय पताकाए उन्नत हैं।
ऐसे दिव्य पूज के सन्मुख,
हम नत हैं॥
जिनका जीवन दर्शन, समतामय गीतो की गीताजलि है,
उन चरणो मे समर्पित है, भावो की भावाजलि है॥
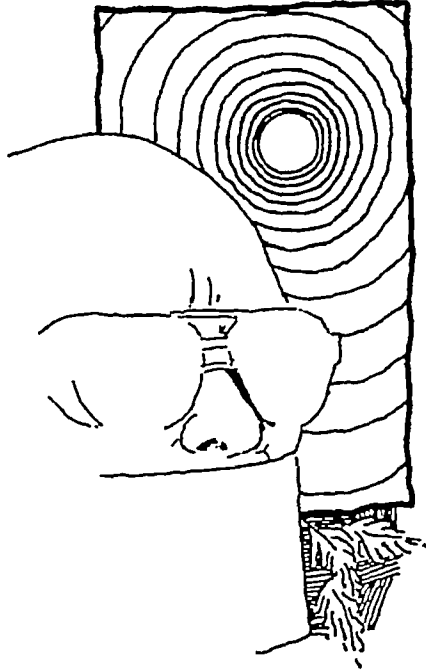
आचार्य नाना गुरुवर शीतल पावन

✍ नरेश जैन, दिल्ली

जीवन की परिभाषा थे तुम,
दुखित जन की आशा थे तुम,
बने सदा मरुस्थल मे सावन,
नाना गुरुवर थे शीतल पावन ॥1॥

मानव जन जब बिलख रहे थे,
मुश्किल था मानव का जीना,
तभी धर्म की जोत जगाई,
बजाकर कृष्ण की मधुर वीणा ॥2॥

धर्म कलश भी सिसक रहे थे,
दर्शन भी मुश्किल था जीना,
बाधाओ से टकराये तुम,
उस समय खोल अपना सीना ॥3॥

धर्मतत्व की परिभाषा थे तुम,
टूटे हृदयो की मधुर आशा थे तुम,
कर्म तुम्हारे थे मन भावन,
नाना गुरुवर थे शीतल पावन ॥4॥

राष्ट्र प्रेम नस-नस मे भर कर,
ऐसी पावन ज्योत जगाई,
देख आचार्य प्रवर को हर्षित हुआ जन-जन,
देवो में भी बज उठी दुदुम्भि शहनाई ॥5॥

विश्व शाति की आशा थे तुम,
बलिदानो की भाषा थे तुम,
सथारा कर उदयपुर से कर गए पलायन,
नाना गुरुवर थे शीतल पावन ॥6॥

अमृत सी लेखनी तुम्हारी,
जिसने दिव्य ज्ञान बिखराया,
जैन धर्म का मर्म, तत्त्व सब,
शब्दो में तुमने समझाया ॥7॥

सत्य प्रेम की भाषा थे तुम,
जन मन की परिभाषा थे तुम,
जन-जन के तुम थे मन भावन,
नाना गुरुवर तुम शीतल पावन ॥8॥

'नाना' नाम है महान् सारे जहान में

✍ मिश्रीलाल चौपड़ा, डोंडीलोहारा

नाना नाम,
भले ही छोटा है पर है महान्।
और है,
विशालकाय वट वृक्ष के समान।
जीवन के भागमभाग से त्रस्त-
हर इन्सान,
उस वृक्ष की छाया से
मन मे 'शान्ति' पाता है।
और अशाति से 'विजय' पाकर
'नाना' का गुण गाता है।
आराध्य देव स्व आचार्य नानेश ।
ना तो किसी व्यक्ति विशेष के लिए 'प्राइव्हेट' थे।
और ना ही किसी खास के लिए 'लिमिटेड' थे।
उनकी एक विशेषता यह थी कि-
सभी जैन-जैनेत्तर के लिए
सागर समान थे।
बहती जल धारा की तरह
आज आपके तो कल किसी
और के मेहमान थे।
जन मानस दूर-दूर से आकर,
उन महान् सत का दर्शन करते थे।
और उनके श्रीमुख से,
'जिनवाणी' श्रवण कर नही थकते थे।
सारे जहा मे
महान् थे, महान् है, महान् रहेगे।
जब तक धरती और आसमान रहेगे।
'नाना' नाम है महान् सारे जहान मे।
सारा जग नमन करे अपने ध्यान मे॥
श्रद्धा सुमन अर्पित 'मिसरी' की जुबान मे।
चाद ज्यो चमकता रहे आसमान मे।

❖ ❖ ❖

गुरुवर नाना

तर्ज : ब्याव बीन्दणी....

✍ विमल नवलखा, पीपोद

गुरुवर नाना, ज्ञान खजाना, कैसे बीते रातड़ी।
समता रा उद्घोषक जोऊ, मै तो थारी बाटड़ी॥टेर॥

दाता गाव मे जन्म लियो हो, पोखरणा उजियारा हो,
मा श्रृगार के पुत्र लाडला, मोडी नन्द सुहाया हो,
बाल पणा मे दीक्षाधारी, गुरु गणेशीलाल जी॥1॥ समता

समता रो उद्घोष सुणायो, ध्यान समीक्षण ध्याता हो,
छुआछूत रो भूत भगायो, धर्मपाल प्रतिबोध्या हो,
अष्टम पट पर आप विराजे, हुक्म गुरु की शान जी॥2॥ समता

गुरुवर नाना गुरुवर नाना, देश विदेशा पूजाया,
ठाठ बाठ सू साधुमार्गी, धर्म सघ ने दीपाया,
उदयापुर परियाण कर गया सत्ताइस दस रातडी॥3॥ समता
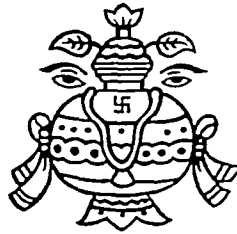
मेरी श्रद्धा के एक मात्र आधार हो तुम!

संकलन : विजय मोगरा

(1)

मेरी जीवन नैया के खेवनहार हो तुम
मेरे हृदय के अनुपम हार हो तुम।
दिन रात स्मृति रहती है तेरी,
मेरी श्रद्धा के एक मात्र आधार हो तुम॥

(2)

मेरी साधना सदा तेरा ही अनुगमन करती रहे,
मेरी भावना सदा तेरा ही स्मरण करती रहे।
एकमेक हो जाय अस्तित्व तुम से,
मेरी धारणा सदा तेरा ही अनुसरण करती रहे॥

(3)

मन मेरा तेरी ही यादो मे खोया रहे,
तन मेरा तेरे ही वादो मे पिरोया रहे।
तेरे ही पथ पर बढता रहू अविरल,
हृदय मेरा तेरे ही पादो मे सोया रहे॥

(4)

अस्तित्व की विलुप्त शक्ति को तुमने ही जगाया है,
जीवन-पथ प्रशस्त बनाकर जीना सही सिखाया है।
क्या कहू मै तेरी गरिमा कही नही कुछ जाती,
शासित हो शासक बनकर शासन खूब चमकाया है॥

(5)

सुषुप्त चेतना जगाई तूने शक्ति दीप जगा करके,
प्राण फूक दिया सघ मे तूने ऐक्य भाव अपना करके।
सुख स्त्रोत भी फूट पडा है तेरे अन्तर के तल से,
चमत्कृत किया है जग को तूने समता को अपना करके॥

(6)

गिरते व्यक्ति को सहारा दिया तूने,
डूबते हुए व्यक्ति को किनारा दिया तूने।
पालन महाव्रत का करते और करवाते हो,
भ्रमित हुए व्यक्ति को सही इशारा दिया तूने॥

(7)

चन्द्रमा सम शीतल लग रहा है चेहरा तेरा,
पकज के सम खिल रहा है चेहरा तेरा।
देख तुम्हे खुश हो रहा मन मेरा,
सबको आकर्षित करता है चेहरा तेरा॥

(8)

लौ को जलने के लिए दीपक का सहारा चाहिये,
मीन को तिरने के लिए पानी का सहारा चाहिए।
जीवन नैया को पार करने के लिए मुझको,
हे नरपुगव! तुम्हारा सहारा चाहिये॥

(9)

उठती हुई आहों को भरता चल,
जीवन के कष्टो को सहता चल।
गुरु 'नाना' के सम्बल को पा,
साधना के पथ पर तू बढता चल॥

(10)

ज्ञानदीप जला कर तुमने अधकार मिटाया है,
क्षमाभाव अपनाकर तुमने जीवन खूब सजाया है।
दुर्गम पथ पर अविरल बढ कर,
जन मन को तुमने समता पाठ पढाया है।

(11)

रागद्वेष की जड़े खोखली करने सयम अपनाया है,
समता, शुचिता अरु क्षमा को जीवन मे खूब रमाया है।
निर्भय होकर विकट विपत्तियो की रजनी मे
चन्द्र द्वितीया सम बढ कर तुमने शासन खूब चमकाया है।

(12)

अथक परिश्रम को जिसने जीवन मे अपनाया है,
चिन्तन की धारा को जिसने जीवन मे बहाया है।
झुक जाता है मस्तक मेरा ऐसे ही के चरणो मे,
समता के निर्झर मे जिसने अपने को नहलाया है॥

(13)

मेरे जीवन के अमूल्य श्रृगार हो तुम,
मेरी कल्पनाओ के जीवन्त साकार हो तुम।
बिखरी सारेताए मिलती तब सागर मे,
मेरी अभेद सुरक्षा के प्राकार हो तुम॥

(14)

समता की है सच्ची आराधना तेरी,
समता ही है सच्ची साधना तेरी।
विश्व शाति के प्रतीक हो तुम,
समता ही है सच्ची विचारणा तेरी॥

(15)

समता का विस्तार करना है जग मे,
समता को ही आधार बनाना है जग मे।
शाति की सुरभि फैलाने के लिए,
समता का ही विचार भरना है अग-जग मे।

(16)

समता साधना के प्रतीक हो तुम,
निशा के जगमगाते दीप हो तुम।
अपनी ही निर्मित राह पर चलने वाले,
इस दुनिया के आदर्श निर्भीक हो तुम॥

(17)

नाना दीपो को जलाने वाले हो तुम,
नाना जीवो को तिराने वाले हो तुम।
वदामि नमसामि करता हू तुमको,
नाना दु खो को मिटाने वाले हो तुम॥

(18)

हजारो हजार पुरुषो के हृदय सम्राट हो तुम,
हजारों हजार गुणो के धारी गणिराज हो तुम।
आत्म-शाति-पथ दर्शाने वाले,
हजारो हजार आत्माओ के अधिराज हो तुम॥

(19)

आत्म-विकास के पथ पर बढते ही जा रहे तुम,
मुक्ति की ओर प्रयाण करते ही जा रहे तुम।
समता-सयम तप से आप्लावित होकर,
सघोन्नति भी निरन्तर करते ही जा रहे तुम॥

(20)

भक्तिशील भक्तो के लिए भगवान् हो तुम,
भयभीत आत्माओ के लिए सुरक्षित स्थान हो तुम।
समतारस की सुर-सरिता मे कर अवगाहन,
मुक्ति-पथ बतलाने वाले विशिष्ट विद्वान हो तुम।

-65 कुशलपुर बडा बाजार, उदयपुर

तू ताज बना, सरताज बना

✍ श्री समरथमल डागरिया, रामपुरा

ओ जैनधर्म के महाऋषियो, ओ दशवैकालिक की मर्यादाओ।
ओ इतिहासो के स्वर्णिम पृष्ठो, ओ आगम की सब गाथाओ।
तुम्ही बताओ, जिनशासन मे, किसने बाग लगाया है?
किसने नव यौवन को फिर से, चिन्तन का पाठ पढाया है?

किसने सयम-सामायिक की, घर-घर मे बीन बजाई है?
किसने समता दर्शन की सुरसरिता, हर दिल मे आज बहाई है?
नन्ही-सी काया है जिसकी पर, हिमगिरि झुक-झुक जाता है,
कई सदियो मे ऐसा ऋषिवर, इस भूतल पर आता है।

तो सकल्प करो ओ जवा जुझारो, हम उसकी पीडा पी जावेगे,
हम इसके आदर्शो को, घर-घर मे जाकर पूजवायेगे।
तो लाल किले की इस भूमि पर, मै आवाज लगाता हूं।
पच महाव्रतधारी मुनि का, मै इतिहास सुनाता हू॥

तू ताज बना, सिरताज बना, और चमका चाद-सितारो से।
जिन्दाबाद है नाना गुरुवर, तू गूंजे जय-जयकारो से॥

सदियो का सौरभ पाया है, ऐसा गुरुवर मिले कहा?
अब यदि तुम चुक गये तो, बतलाओ फिर ठौर कहा?
जिसके जप-तप सयम पर, जिनशासन इठलाता है?
मन-मदिर मे झाक के देखो, कौन नजर तुम्हे आता है?
तू आन बना, अभिमान बना, हम झूमे मस्त नजारो से।जिन्दा॥

धर्मपाल के बढते चरण पर, मानवता हर्षाई है।
शुभ घडी जिनशासन मे गुरुवर तुझ से आई है॥
ओ महावीर के लोह लाडलो, युग ने तुम्हे पुकारा है।
बलिदानो का स्वर्णिम अवसर, आता नही दुबारा है।
तू शान बना, वरदान बना और झुक गये शीश हजारो से।जिन्दा॥

दीवानो के दिल उछले हैं, फिर तूफान उठाने को,
मस्तानों की मस्ती झूमी, अपना मार्ग बनाने को।

बदला-बदला यौवन लगता, उसने ली अगडाई है।
गुरुदेव! तुम्हारी वाणी ऊपर मचल उठी तरुणाई है।
तू साज बना, आवाज बना, कोई बात करे इन जुझारो से ।।जिन्दा ॥

बहिनो ने उलझी सुलझी बातो के रिश्ते तोड दिये,
सावन-फागुन महावर मेहदी से यू रिश्ते तोड दिये।
सन्नारी ने काम, क्रोध, मद, लोभ को ठोकर मार दी,
घर-घर मे अरे दया धर्म की नींव गहरी गाड दी।
तू राह बना, उत्साह बना, ये धधक उठी अगारो से॥

अभिनदन है, वन्दन गुरुवर तेरी बात निभायेगे,
जिनशासन को तेरे अरमानो की भेट चढायेगे।
ढूढ रहा हू उन शेरो को, जिनका लहु हुआ नही पानी,
जो हरगिज सह नही पायेगा, अब मौसम की मनमानी॥
तू प्राण बना, भगवान् बना, बस जियो बरस हजारो से।
जिन्दाबाद है नाना गुरुवर, तू गूजे जय-जयकारो से॥

❖ ❖ ❖

नाना गुरुवर

नाना गुरुवर-नाना गुरुवर
लोग सभी पुकारे
सोचा ना था एक दिन ऐसा आयेगा
हमारे गुरु भगवन को हमसे दूर ले जायेगा
दिव्य प्रकाश जग में फैलाया
आपका सबने आशीर्वाद पाया
जीवन था आपका सदा सच्चा
लगता नाम नाना अच्छा
नाना गुरुवर चरणों में वन्दन अभिनन्दन है
फूलों पर करते जैसे भंवरे गुंजन है
फूल श्रद्धा के चरणों में चढ़ाये
और श्रद्धा के गुण गाये
श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।
जीवन ये समर्पित करते हैं
एक साथ लय से बोले
नाना गुरुवर की जय बोले

✍ कल्पना जारोली

दो गजल

✍ श्री कैलाश पाठक 'अनवर'

(1)

तेरे दर्शन के लिए लोग तरसते है यहा,
अश्क आखो से मोहब्बत के बरसते है यहा।

तेरा दर राहे खुदा का है बताता सबको,
भूले भटके सभी इसान सवरते है यहा।

दुनियादारी के झमेलो मे फसा इन्सा है,
ना ना-हा हा मे लोग बदलते है यहा।

इन्सा आता है जमी पर और चला जाता है,
लाल दड़ी मे कई बार निकलते है यहा।

एक 'अनवर' ही नही भाई रूपावत भी है,
दर्द वाले ही तेरे पास पहुचते है यहा।

(2)

दया सागर तुम्हारा नाम है,
क्षमा करना तुम्हारा काम है।

फर्ज बनता है हर एक इन्सान का,
वन्दना करना सुबह और शाम है।

जहा जाऊ वहा अरिहन्त मिलता,
मिली समता तुम्हारा धाम है।

कोई प्यासा अगर पहुचा वहा तक,
भरा तुमने उसी का जाम है।

मिटाने कष्ट 'अनवर' के गुरु नानेश,
चलते रहे वनवास मे ज्यू राम है।

बी/207, यशोधर्य नगर, मदसौर

❖ ❖ ❖

करे गुरुवर की जय-जयकार

✍ अनिल लोढ़ा, नदुरबार

जय जयकार करे, गुरुवर की जय जयकार करे गुरुवर की जयकार।
हम सब आए शरण तिहारे नैय्या कर दो भव से पार॥टेर॥

(राजस्थान) मारवाड की वह सौरभ, महकी जग मे सारी।
जन्म भूमि और मात-तात कुल को दिया उजारी।

पावन किया उदयपुर को आपने दीक्षा धारी। जय जयकार
आश्विन वदी चौथ को बुधवार उदयपुर स्वर्ग सिधारी।

काल अचानक आकार धमका लुटी खुशिया सारे।
दया न आई कुछ भी हम पर कर गये निराधार। जय जयकार

गम के सागर मे हम डुबे ना कोई है साथी।
यादो मे गुरुवर के जले है जीवन वाणी।

हर पल बस मै तुम्हे पुकारु बहे ये अश्रुधारा। जय जयकार
क्या हुई गुरुवर गलती ऐसी जो हमसे मुखडा मोडा।

बिखलाते हम सबको छोड स्वर्ग धाम से नाता जोडा।
तुम बिना है जीवन सूना, सूना हुआ है ससार। जय जयकार

ममता मय गुरुवर तुमको कहते, कहा गई ओ ममता
कोमल दिल के कर निष्ठुर दिल मे धारी समता

यह तो बता दो कहा पाये अब तुमसा हम प्यारा। जय जयकार
जहा कही भी हो गुरुवर इतना ध्यान मे रखना।
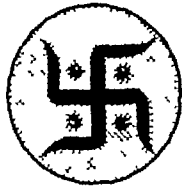
जीवन झलक

✍ छन्दराज 'पारदर्शी'

(मनहरण कवित्त)

(1)

सतों ने ससार सारा, सत्य से सजा-सवारा,
ज्ञान का ही दान, नाना विद्वेष मिटाये है।
चित्तौड जिले की शान, 'दाता' गाव खास जान,
यही लिया जन्म गुरु 'नानेश' कहाये है।
पिता मोडीलाल प्यारे, माताजी श्रृगारबाई,
पोखरना गोत्र धार, 'नाना' गुरु आये है।
साहस-शक्ति के धनी, 'नाना' गुरु नाना गुणी,
'पारदर्शी' सही राह, जग को बताये है।

(2)

आठ वर्ष की आयु मे, पिता साथ छोड चले,
व्यापार सम्हाला पर, मन नहीं भाये है।
गुरु जवाहरलाल, मिले भोपालसागर,
दर्शन व्याख्यान सुन, वैराग्य सुहाये हैं।
पुण्य कर्म उदय से, गये जब आप कोटा,
युवाचार्य गणेशीलाल, ज्ञान समझाये है।
उन्नीसौ छियाणु साल, पौष शुक्ला अष्टमी को,
'पारदर्शी' कपासन, दीक्षा गुरु पाये है।

(3)

ज्ञान-ध्यान तप किया, तप को तपाय लिया,
समता मे सार जानो, गुरु समझाया है।
दो हजार उन्नीस मे, आचार्य पदवी पाये,
जैन शासन की शान, मान को बढाया है।
अछूतो को अपनाया, सही पंथ बतलाया,
'धर्मपाल' नाम दिया, व्यसन छुडाया है।
गुरुदेव उपकारी, समता हृदय धारी,
'पारदर्शी' सच्चा ज्ञान, हमे समझाया है।

(4)

राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र जैसे प्रान्त,
मध्यप्रदेश मे दर्श, पाये नर-नारी है।
गाव-गाव घर-घर, पैदल ही घूमकर,
अज्ञान-तिमिर हटा, बने उपकारी है।
'नाना' के है नाना रूप, समता के मूर्तरूप,
राग-द्वेष जीत 'नाना', नाना गुणधारी है।
'पारदर्शी' का वन्दन, मिटे जग का क्रदन,
जुग-जुग जीये गुरु, प्रार्थना हमारी है।

–261, तांबावती मार्ग, उदयपुर

❖ ❖ ❖

गुरु अर्ज करते हैं. . .

तर्ज : बहुत प्यार...

✍ सुशीला पोरवाल, निकुम्भ

गुरु अर्ज करते हैं होके मगन
हमें आज ले लो अपनी शरण ॥टेर॥

जग में बड़ा है नाम तुम्हारा-2
तुम्हारे बिना अब कोई ना सहारा-2
तेरे गीत गायेंगे-2 जब तक है दम ॥1॥

गुरुवर की भक्ति में शक्ति है इतनी-2
भक्तों के मन में श्रद्धा है जितनी-2
कही तेरी चोखट से-2 भटके ना हम ॥2॥

सुना नाम कारण तरण है तुम्हारा-2
ये आत्म भंवर में फंसा है हमारा-2
तुम्हें गुण गुनायेंगे जन्मों जन्म ॥3॥

णाणेश-अट्ठगं

✍ डॉ. उदयचन्द जैन

वीरेस-दिण्ण जयय गुरुयं गहित्ता
उज्जोय-सम्म-पभवत्त-लहुत्त-भाव।
भत मणो मइवक्क-कुमइव्व जाया
णाणेस-आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥1॥

अच्छे-अच्छे एतदखिल तणवित्ति-जुत्तो
णाणा-विकप्प-दविय ण धण समत्थ।
णाय भवो सि समया सि मण च तुब्भ
णाणेस-आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥2॥

उम्मिल्ल-णेत्त-जुयल समयाणुपेही
दिट्ठ सुधम्म-सुसरत्त-दिवा सु-सूर।
गगासमो ससिकला च सु-सीयलो जी
णाणेस आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥3॥

ससारिणो विरहिणो सुयवत्तदसी
त धम्मवाल-गुरुण च सुभत्तिए ण।
त दसण चरिय-णाण-सुसम्म-जाय।
णाणेस आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥4॥

सता-सय भवसुसतदयाणुदिट्ठी
सिद्धत-सायर-तरत-पबुद्ध-जाओ।
अप्प हिय परमिय च विचितए हू
णाणेस-आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥5॥

गामाणुगाम-विचरत-समत्त-हेउ
आबाल-वुड्ढ-णर-णारि-पबुद्ध-णाणी।
'णाणा' तुम भव-सुबद्ध-परोवयार
णाणेस-आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥6॥

सच्च पहू विसमया-पवड्ढ-सीला
जीवो ण जाणइ इमस्स विराड-रूव।
धण्ण तुमेव पणया जणमेत्त-सम्म
णाणेस आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥7॥

तुज्झ णमो सु समया करुणावयार
तुज्झ णमो धरमवाल-पबोह-सीलं।
तुज्झ णमो विरय-वेहव-अप्पधाम
णाणेस आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥8॥

बुद्धि-हीण-विगय-मोहो, उदयचन्दो ण सोम्मो ण सरसो।
तव भत्तासत्तो अवि, समयाए लहिउ पवित्तो सि॥

-3 अरविन्द नगर, उदयपुर

श्रद्धांजलि

✍ वर्षा भंसाली

युग चेता की कीर्ति का वर्णन अतीत अपार है
श्रेष्ठता इन्द्रिय-दमन की, धरा सी धीरता,
वह शील उनका और उनकी वीरता-गम्भीरता,
उनकी सरलता और उनकी वह विशाल विवेकता,
मानों एक जन के अनुकरण मे सब गुणो की एकता॥
जिसकी प्रभा के सामने रवि-तेज भी फीका पड़ा,
मानो अध्यात्म विद्या का आलोक भरा हो देह मे,
ज्ञान गरिमागार थे, पुण्य-पारावार थे।
विख्यात जीवन-व्रत जिनका, स्वलोक-हित एकान्त था।
'आत्मा अमर है, देह नश्वर' यह अटल सिद्धान्त था॥

जीवन नहीं मरा करता है

✍ एस. नीशा सुराणा, चैन्नई

छुप-छुप आसू बहाने वालो!
मोती व्यर्थ लुटाने वालों!
कुछ सपनो के मर जाने से जीवन नही मरा करता है।

सपना क्या है? नयन पसार कर
खोया हुआ आख का पानी
और टूटना है उसका ज्यो
जागे कच्ची नीद जवानी

गीली उमर बनाने वालो!
डुबे बिना नहाने वालो!
कुछ पानी के बह जाने से, सावन नही मरा करता है।

माला बिखर गई तो क्या है?
खुद ही हल हो गई समस्या?
आसू गर नीलाम हुए तो
समझो पूरी हुई समस्या।

रुठे दिवस मनाने वालो!
फटी कमीज सिलाने वालो!
कुछ दीयो के बुझ जाने से, आगन नही मरा करता है।

खोया नही कुछ भी यहा पर
केवल जिल्द बदलती पोथी
जैसे रात उतार चादनी
पहने सुबह धूप की धोती।

वस्त्र बदल कर आने वालो!
चाल बदल कर जाने वालो!
चद खिलौने के खोने से, बचपन नहीं मरा करता है।

कितनी बार गगरिया फूटी
शिकन न आई पर पनघट पर।
कितनी बार किश्तिया डूबी
चहल-पहल वैसी है तट पर।

तुज्झ णमो सु समया करुणावयार
तुज्झ णमो धरमवाल-पबोह-सील।
तुज्झ णमो विरय-वेहव-अप्पधाम
णाणेस आइरिय ह पणमामि णिच्च ॥8॥

बुद्धि-हीण-विगय-मोहो, उदयचन्दो ण सोम्मो ण सरसो।
तव भत्तासत्तो अवि, समयाए लहिउ पवित्तो सि॥

-3 अरविन्द नगर, उदयपुर

❖ ❖ ❖

श्रद्धांजलि

✍ वर्षा भसाली

युग चेता की कीर्ति का वर्णन अतीत अपार है
श्रेष्ठता इन्द्रिय-दमन की, धरा सी धीरता,
वह शील उनका और उनकी वीरता-गम्भीरता,
उनकी सरलता और उनकी वह विशाल विवेकता,
मानों एक जन के अनुकरण मे सब गुणो की एकता॥
जिसकी प्रभा के सामने रवि-तेज भी फीका पडा,
मानो अध्यात्म विद्या का आलोक भरा हो देह मे,
ज्ञान गरिमागार थे, पुण्य-पारावार थे।
विख्यात जीवन-व्रत जिनका, स्वलोक-हित एकान्त था।
'आत्मा अमर है, देह नश्वर' यह अटल सिद्धान्त था॥

जीवन नहीं मरा करता है

✍ एस. नीशा सुराणा, चैन्नई

छुप-छुप आसू बहाने वालो!
मोती व्यर्थ लुटाने वालों!
कुछ सपनो के मर जाने से जीवन नही मरा करता है।

सपना क्या है? नयन पसार कर
खोया हुआ आख का पानी
और टूटना है उसका ज्यो
जागे कच्ची नीद जवानी

गीली उमर बनाने वालो!
डुबे बिना नहाने वालो!
कुछ पानी के बह जाने से, सावन नही मरा करता है।

माला बिखर गई तो क्या है?
खुद ही हल हो गई समस्या?
आसू गर नीलाम हुए तो
समझो पूरी हुई समस्या।

रुठे दिवस मनाने वालो!
फटी कमीज सिलाने वालो!
कुछ दीयो के बुझ जाने से, आगन नही मरा करता है।

खोया नही कुछ भी यहा पर
केवल जिल्द बदलती पोथी
जैसे रात उतार चादनी
पहने सुबह धूप की धोती।

वस्त्र बदल कर आने वालो!
चाल बदल कर जाने वालो!
चद खिलौने के खोने से, बचपन नही मरा करता है।

कितनी बार गगरिया फूटी
शिकन न आई पर पनघट पर।
कितनी बार किश्तिया डूबी
चहल-पहल वैसी है तट पर।

लौ की आयु घटाने वालो!
महापुरुष की उमर बढाने वालो!
लाख करे पतझड़ कोशिश, पर उपवन नही मरा करता है।

लूट लिया माली ने उपवन
लुटी न लेकिन गध फूल की।
तूफानो तक न छेडा पर
खिड़की बंद न हुई धूल की।

नफरत गले लगाने वालो!
सब पर फूल बरसाने वालो!
कुछ मुखडो की नाराजी से, दर्पण नही मरा करता है।

ऐसे थे करुणा के सागर
छोड चले निज आत्म के आगर
सत्य और सयम से प्यार
धर्मपाल से था पूरा अनुराग

काल चक्र ने उनको भी घेरा
मृत्यु से मुह को नही फेरा
श्रद्धाजलि देती हू हृदय से, महापुरुष कभी मरते ही नही।
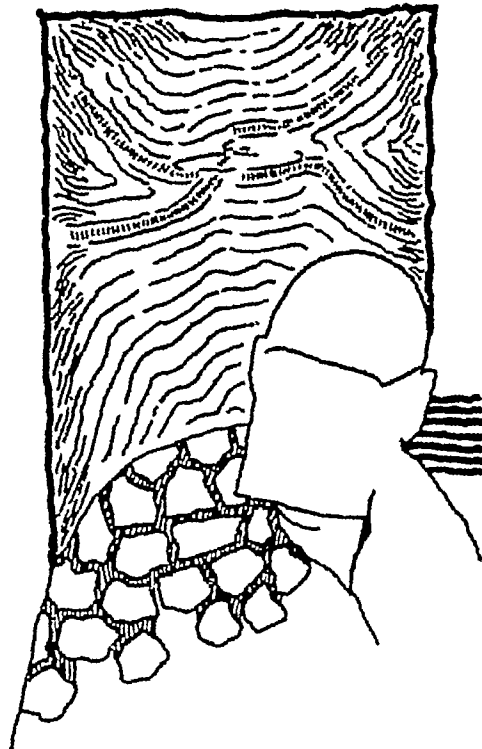
तेरे हाथों में. . .

तर्ज सावन का महीना

✍ मुमुक्षु लीना सुराणा, चित्तौड़

तेरे हाथो मे नाना गुरुवर,
सौप दी जीवन की डोर,
अब मेरी विनती इस नय्या को SSS
ले जा सयम ओर ॥टेर॥

तू चाहे तो तूफानो मे,
जगमग जलती ज्योति,
पतझड मे भी फूल है खिलते,
पत्थर बन गये मोती,
तेरी कृपा की पवन से उड जाये SSS
गम की घटा घनघोर ॥1॥

प्रेम के अश्रुभर नैनो मे,
धाम तेरे जो रोये,
आग की नदिया मे भी जिनका,
बाल न बाका होय,
काली रेन को तू कर देता SSS
सुख की उजली धूप ॥2॥

तू सृष्टि का सूर्य अनोखा,
जिनशासन प्रभाता,
सुमति मन बसने वाला
विजय शाति प्रदाता,
नाना गुरु तुम सयम धारी SSS
हम है शरण तिहारी ॥3॥

आते-आते हैं महा उपकारी. . .

तर्ज · जाओ-जाओ मेरे साधु रहो गुरु के संग

✍ मूलचन्द भटेवरा, उज्जैन (म.प्र.)

आते-आते हैं महाउपकारी, नाना पूज्यवर याद ॥टेर॥

मोड़ीलाल सुत मा सिणगारा, दाता ग्राम महान्।
लियो जन्म मेवाड़ देश में, जिसकी कीर्ति महान् ॥1॥

छठे आरे का वर्णन सुन कर, गई आतमा जाग।
दीक्षा लीनी पूज्य गणेशी, मिले गुरु महाभाग ॥2॥

स्वमत परमत ज्ञाता बन गये, कर गुरु चरण की सेव।
युवाचार्य पद दिया आपको, जब परख लिया गुरुदेव ॥3॥

ध्यान समीक्षण दिया आपने, समता पाठ पढाया।
प्रतिबोध पाकर के कई जन, धर्मपाल कहलाया ॥4॥

पूज्य हुक्म के पाट आठवें, शासन खूब दिपाया।
तीन सौ से अधिक मुमुक्षु, श्रमण धर्म अपनाया ॥5॥

पच्चीस दीक्षा एक साथ मे, रतनपुरी मे खास।
इस भव तो मैने नही देखी, और किसी के पास ॥6॥

शात भाव से किया संथारा, तेरह घटे आया।
राम भरोसे छोड सघ को, सुरपुर आप सिधाया ॥7॥

जन्म 77 दीक्षा 96, विक्रम सवत् जान।
2056 उदयापुर कीना महाप्रयाण ॥8॥

नहीं भूले उपकार आपका छत्र विजय का पाया।
मूलचद यो गुरु गुण गाकर, श्रद्धा सुमन चढाया ॥9॥

नाना अमृतवाणी

✍ कुसुम थींग, कानोड़

नाना अमृतवाणी के, अमृत भीगे बोल
अन्त करण मे तू प्राणी इस अमृत को घोल
भारतवर्ष मे तू बना जैनो मे विख्यात
लोग करोड़ो सेवते विश्व मे तू प्रख्यात
भक्तो ने देखे कई गुरुवर के चमत्कार
महिमा बखानी क्या तेरी हे जग के आधार
तुझे भुला ना पाये हम है प्राणों के नाथ
जन्म-जन्म मिलता रहे गुरुवर तेरा साथ
चाहे कितनी भी विपदा आ जाए भरपूर
नाना गुरु के नाम से हो जाये वो दूर
हर सकट मे गुरुवर जी रहना भक्तो के साथ
एक तू ही था देवता है अनाथ के नाथ
नाम सुमरते नाना गुरु दु खी सुखी हो जाय
शरण मे थारी आवे जो सकल मनोरथ पाय
नर-नारी तेरा ध्यान करे चरणो शीश झुकाय
कभी कष्ट ना कोई हो, आशीष तेरी पाय
नाना गुरुवर के प्रति जिसकी श्रद्धा अपार
बाल न बाका हो कभी नाम की महिमा धार
नाना गुरुवर के चरणो मे आते जो एक बार
विपदा से मुक्ति मिले, भव से हो बेडा पार।

अवतारी नानेश

कल्पना जारोली, खेरोदा

जबसे आपने दीक्षा लेकर, जीवन का शखनाद किया
उसी वक्त से आप सबको, देते रहे शिक्षा
इससे अमूल्य कौनसी होगी, इस जगत मे भिक्षा
भय से दूर थे, गुरु ज्ञानी उपकारी
आप तो लगते थे पूरे, ईश्वर के उपकारी
गुणो से भरे नानेश गुरु, धैर्य आपमे पूर्ण था
यह तो आपके अन्तर का, प्रमुख गुण था
चेहरे पर आपके वो तेज था
धन्य हो जाता वो, जो भी आपको देखता
आपने की एक ऐसी क्रान्ति
जीवन मे ला दीं सबके शान्ति
शब्द नही मेरे पास कैसे मै बखान करु
मै तो हृदय से, आपका गुणगान करु
इस कदर छोड कर स्वर्ग मे प्रस्थान किया
खामोश होगई सब राहे, खामोश हो गई
सब निगाहे, आपके जाने के बाद
क्षण प्रतिक्षण अब तो रह गई आपकी याद
इन नजारो की तरह सदा आप चमकते रहे
तारीफ मे आपकी सारे गुणी जन सन्त कहते है।
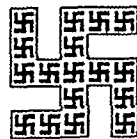
गुरु गरिमा

✍ चम्पालाल छल्लाणी, देशनोक

हु-शि-ऊ-चौ-श्री-ज-ग-'नाना'
'हुक्म सघ' जग जाहिर जाना,
'विजयराज श्री' सघ ने माना,
चमका चमचम भानु समाना,
हु-शि-ऊ-चौ-श्री-ज-ग-'नाना'

शात-क्राति पथ है सरसाना,
भक्ति-भाव कर प्रभु को पाना,
गुरु चरण-रज शीश चढाना,
गीत 'विजय' के सब मिल गाना,
हु-शि-ऊ-चौ-श्री-ज-ग-'नाना'

'विजय' वैजयन्ति बने महाना,
धर्म-ध्वजा मगल फहराना,
'शाति' 'प्रेम' 'पारस' फरमाना,
'चम्पक' नित नव-श्रद्धा बढाना
हु-शि-ऊ-चौ-श्री-ज-ग-'नाना'

❖ ❖ ❖

मुक्तक

१ जैसे देता दीपक उजाला
वैसा नाम निराला।

२ गीतो का सगम हो,और साथ मे लय हो।
नाना गुरुवर की बार-बार जय हो॥

३ सन्तो की श्रेणी मे नाना गुरुवर का नाम महान् है।
ऐसे गुरुवर को मेरा, कोटि-कोटि प्रणाम है।।

४ बहती है नदिया, गिरता है झरना।
हमे तो सदा गुरु नानेश को याद करना।

५ गुणो से गुणवान, हर कोई इन्सान बने
नानेश के आशीर्वाद से, नानेश के समान बने।

✍ कल्पना जारोली

प्रभु तुल्य गुरुदेव थे, थे भगवान् स्वरुप

✍ महावीर संचेती, डौंडीलोहारा

प्रभु तुल्य गुरुदेव थे, थे भगवान् स्वरूप।
सयम समतावान थे, थे सयम अनुरूप॥

श्रमण संस्कृति के सवाहक, श्रमणोपासक बोध प्रदायक।
धर्मपाल के थे निर्माता, जिन वाणी के सुन्दर गायक।।

समता दर्शन के व्याख्याता, ध्यान समीक्षण के थे ध्याता।
चरणों मे जो भी था आता, शाति-प्रेम-आनद था पाता॥

मीठा प्रेम पिलाते प्याला, संत सती की गूथी माला।
देव नही, वह महादेव थे, जीवन जिनका बड़ा निराला॥

धर्म दिवाकर, ज्ञान प्रभाकर, रोशन किया वीर का नाम।
महावीर के वीर पूत को, "महावीर" का कोटि प्रणाम॥

दाता गाव मे उदय हुआ था, उदयपुर से प्रयाण।
शिव लक्ष्मी को शीघ्र वरें, और-पाए पावन मुक्ति धाम॥

जहा विराजे मेरे गुरुवर,(भव्यात्मा), शाश्वत शांति उन्हे मिले।
सयम समता शाति प्रेम के, भूमण्ड़ल पर दीप जले॥

याद सताती नाना गुरु की, चैन नही मै पाता हूँ।
जय गुरु नाना सुमर सुमर कर,श्रद्धा सुमन चढाता हू॥

कृपा प्रेम की वृष्टि करना, जीवन मे पाऊ आह्लाद।
युग युग तक गूजे गुरु नाना, नाना गुरुवर जिन्दाबाद॥

जब तक सूरज चांद रहेगा, नाना गुरु का नाम रहेगा।
'महावीर' ही नही अकेला, बच्चा बूढा यही कहेगा॥

नाना को मेरा वंदन हजार

(तर्ज छोटी-छोटी गया, छोटे-छोटे ग्वाल)

✍ रेखा खुरदिया, रुण्डेडा

श्रृगारा ने किया शासन श्रृगार
नाना को मेरा वन्दन हजार
छे ऊपर जन्मयो गुदडी रो लाल
हर्ष मनाओ पिता मोडी लाल
सयम लेकर कियोरे कमाल
जग मे चमका सूर्य समान॥
नाना है नाम पर काम विशाल
दाता रो छोरो बडो है दातार
की ऐसी क्राति मालवा पधार
लाखो बनाये धरम पालन हार-
ध्यान समीक्षण गुरु की पुकार
समता का जीवन समता व्यवहार।।
बडी मा की ज्योति बड गया अपार
डूबती नैया पल मेरे पार
सयम की रक्षा सब से प्रधान
देना पड़े चाहे शीश निकार॥

नाणेस पंचय थुई

✍ श्री रमेश मुनिजी
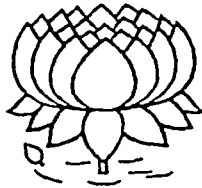
'नाणेस' णाम सूरी सो, सुरालये विरायइ।
सुयं मया जया अज्ज, तयाहं पीडिओ परं॥1॥

अर्थ 'नानेश' अर्थात् नानालाल जी म सा नामक आचार्य भगवान् देवलोक मे विराजमान है। ऐसा आज जब मैने सुना। तब मुझे अत्यधिक पीडा हुई अर्थात् मै खेद-खिन्न हुआ हू॥1॥

रायत्थाणम्मि पतम्मि, णयरो 'मेडता' इय।
तत्थ ताण मया पत्त, पढमं दसण सुह॥2॥

अर्थ राजस्थान प्रान्त मे मेडता नामक नगर है। वहा मैने उनके अर्थात् आचार्य नानेश जी म सा के प्रथम प्रशस्त दर्शन प्राप्त किए॥2॥

गणेसायरियाणं ते, सीसा आसि पहावगा।
सता दसा पर सोमा, जिण सासण भूसणा॥3॥

अर्थ वे अर्थात् आचार्य नानालाल जी म सा, आचार्य गणेशीलाल जी म सा के शान्त, दान्त, अत्यन्त सौम्य, जिनशासन के भूषण रूप प्रभावशाली शिष्य थे।

तम्मि काले मया दिट्ठो, सरला निम्मला परं।
ते सहावेण गभीरा, तवस्सिणो मणस्सिणो॥4॥

अर्थ · उस समय मे मैने देखा, वे स्वभाव से अत्यन्त सरल, निर्मल, गभीर, मनस्वी और तपस्वी थे।

उवज्झायो महापण्णो, सपुज्जो गुरु पोक्खरो।
ताण सीसो रमेसोऽह, वदामि त मुणीसर॥5॥

अर्थ उपाध्याय, महान् प्रज्ञा वाले, परम पूज्य गुरुदेव पुष्कर मुनि जी म सा हुए है, उनका शिष्य मै रमेश मुनि हूं। मै उनको अर्थात् आचार्य नानालाल जी को वन्दन करता हू।

श्रृंगार नंदन-सविनय वंदन

✍ वैराग्यवती सरला, संगीता व वर्षा भसाली

श्रद्धानत करते हैं वन्दन
जय-जय श्रृगारा नदन,
तेरे उपकारो के कारण,
यादो मे खोया है मन।
स्वर्गलोक मे गये हो लेकिन
गुरुवर भूल न पायेगे
समता दर्शन ध्यान समीक्षण
को जग मे फैलायेगे।
शात क्रान्ति सघ पर हे गुरुवर।
कृपा तुम्हारी बनी रहे
'विजय' गुरु तेरी ही कृति है
शाति चन्दन (सघ) जिन पर नाज करे।
'सरलता' का 'सगीत' गूजे
क्षमाभाव का हो 'वर्षण'
तब प्रदर्शित पथ पर चल कर
पायेगे हम लक्ष्य परम।
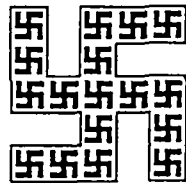
शत नमन 'नाना' चरण में

✍ श्रीमती ललिता बाबेल, लूणदा (उदयपुर)

शत नमन 'नाना' चरण मे, शत नमन 'नाना' चरण मे
आपकी पीयूष वाणी से जनता पीयूषामृत का पान करती
आपकी मृदुता हरदम नयनों से बरसती रहती
और समता का शखनाद गूज उठा नीलगगन मे
शत् नमन 'नाना' चरण मे

ज्ञान मे तो आप आगम मर्मज्ञ थे, दीखते थे मानो देव
और सरल, सौम्य सा चेहरा खिला रहता हरदम
पीडित मानवता के थे पोषक धर्मपाल के प्रति करुणा बरसाते
शत् नमन 'नाना' चरण मे

मन था दृढ अडिग हिमगिरि सा हिमवन्त
त्याग आपका अनुपम, ब्रह्मचर्य से तेज पावन
सरताज थे सघ के आप थे युग पुरुष महान्
शत् नमन 'नाना' चरण मे

आचार्य श्री के प्रति. . .

✍ विवेक सिसोदिया, उदयपुर

जिसकी ऊंचाई पर मैं हीं क्या।
गर्वित है यह भारत माता।
जननी के इस गौरव की।
नील गगन भी गाता है यश गाथा॥
जिसके मन में थी निर्मलता।
वाणी से हरदम झरती मृदुता॥
नयनों में तेज, चेहरे पर ओजस्विता।
युग पुरुष 'नानेश' को 'विवेक' वन्दन करता॥

'नाना' को वंदन बारम्बार है

✍ सुश्री श्वेता सिसोदिया, उदयपुर

नाना को वन्दन बारम्बार है।
यश जिनका जग मे अपरम्पार है।
नाना को वन्दन

मेवाड़ की शान, पोखरना कुल की आन।
सत्य, अहिंसा, साधना के गुण निधान।
समता, सेवा सयम अपरम्पार है।
तपोमय जीवन जिसको अगीकार है।
नाना को वन्दन

अल्पायु मे आचार्य पद पाया।
सघ दीपाया शासन का मान बढाया।
व्यक्तित्व विलक्षण बन पाया है।
नाना से वो नानेश कहलाया है।
नाना को वन्दन बारम्बार है।
यश जिनका जग मे अपरम्पार है।

आचार्य नानेश के प्रति...

'समता दर्शन' के अग्रदूत,
महावीर परम्परा के गौरव सपूत।
शत्-शत् नमन, वन्दन तुम्हें,
सत्य, अहिंसा के रक्षक हे सपूत॥

✍ सुश्री ऋतु मेहता, चित्तौड़गढ़

पूज्य गुरुदेव के द्वारा मुखरित भजन

जीवन सफल बनाना...

जीवन सफल बनाना, बनाना प्रभु वीर जिनराजजी ॥टेर॥

मन मदिर में घुप है अधेरा, ज्ञान की ज्योति जगाना, जगाना प्रभुवीर ॥1॥

धधक रहा है द्वेष दावानल, प्रेम पयोधि बहाना, बहाना प्रभुवीर जिनराज जी ॥2॥

भोग वासना जल रही है, अन्तर ताप बुझाना, बुझाना प्रभुवीर जिनराज जी ॥3॥

बीच भवर मे नैया फसी है झटपट पार लगाना, लगाना ॥4॥

न्याय मार्ग का पक्ष न छोडू, शत्रु हो सारा जमाना, जमाना ॥5॥

उत्कट सकट हस-हस झेलू, अविचल धैर्य बधाना, बधाना ॥6॥

प्राणी मात्र को सुख उपजाऊ, चाहू न चित्त दु खाना, दु खाना ॥7॥

मै भी तुम सा जिन बन जाऊ, परदा दुई का हटाना, हटाना ॥8॥

अमर निरतर आगे बढू मै, कर्त्तव्य वीर बनाना, बनाना ॥9॥

जैसा करोगे वैसा ही फल. . .

तर्ज जैसी करनी वैसी भरनी

बोवोगे जैसा बीज, तरु वैसा लहराएगा।
जैसा करोगे वैसा ही, फल आगे आयेगा ॥टेर॥

कुए मे एक बार कुछ बोल देखिए।
जैसा कहोगे वैसा ही, वह भी सुनाएगा ॥1॥

जोडोगे हाथ खुद तो, दर्पण बिम्ब जोडेगा।
चाटा दिखाओगे तो, झट चाटा दिखायेगा ॥2॥

काटा बनोगे तुम, किसी की राह मे अडकर।
काटा बनेगा एक दिन, वह भी सतायेगा ॥3॥

थूकोगे गर नादान, होकर आफ ताव पर।
वापस गिरेगा मुह पर, आ दुनिया हसायेगा ॥4॥

चाहते हैं लोग तुमको, कैसा जानना है क्या?
अपने हृदय से पूछिये, वह खुद बतायेगा ॥5॥

ससार मे मीठे 'अमर' बनकर सदा रहना।
आदर्श नर जीवन तुम्हे ऊचा उठायेगा ॥6॥

❖ ❖ ❖

नर नारायण बन जायेगा

नर नारायण बन जायेगा, जो आत्म ज्योति जगायेगा ॥टेर॥

पापो के बध टूटेगे, विषयो के नाते छूटेगे।
जो सोया सिह जगायेगा, नर नारायण बन जायेगा ॥1॥

घर मे बैठा इक ईश्वर है, जाने माने ज्ञानेश्वर है।
सब जन्म मरण मिट जायेगा ॥नर नारायण ॥2॥

बादल के पीछे दिनकर है, कर्मो के पीछे ईश्वर है।
जो सर्व ही ज्योति जगायेगा ॥नर नारायण ॥3॥

गुरु के चरणो मे जाकर के, श्रद्धा के सुमन चढा करके।
मुनि 'कुमुद' जो आनन्द पायेगा ॥नर नारायण ॥4॥

प्रेमी बन कर प्रेम से

प्रेमी बन कर प्रेम से जिनवर के गुण गाया कर।
मन मंदिर में गाफिले, झाडू रोज लगाया कर ॥टेर॥

सोने मे तो रात गुजारी, दिन भर करता पाप रहा।
इसी तरह बर्बाद तू बन्दे करते अपने आप रहा।
प्रात काल उठ प्रेम से, सत्सगत मे आया कर ॥1॥

नर तन के चोले का पाना, बच्चो का कोई खेल नही।
जन्म-जन्म के शुभ कर्मो का, मिलता जब तक मेल नही।
नर तन पाने के लिए, उत्तम कर्म कमाया कर ॥2॥

भूखा प्यासा पडा पडौसी, तेने रोटी खाई क्या।
दुखिया पास पडा है तेरे, तेने मौज उडाई क्या?
सबसे पहिले पूछ कर, भोजन तू फिर खाया कर ॥3॥

देख दया उस वीर प्रभु की, जिनशासन का ज्ञान दिया।
जरा सोच ले अपने मन मे, कितनो का कल्याण किया।
सब कर्मो को छोडकर, उसको ही तू ध्याया कर ॥4॥
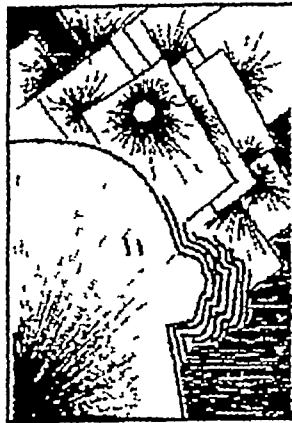
सच्चा भगत बन जाऊं. . .

कविरत्न मुनि 'अमर'

सच्चा भगत बन जाऊ, भगवान् तुम्हारा अब मै।
क्रोध निकट नही आने देऊ, शस्त्र अचूक क्षमा का लेऊ।
दूर ही मार भगाऊ, भगवान् ॥1॥

सत गुणीजन जब मिल जावे, मद मत्सर नही मन मे आवे।
सादर शीश झुकाऊ, भगवान् ।2॥

सत्य शख का नाद बजाके, परिवर्तन की क्राति मचा के।
सोता जगत् जगाऊ, भगवान् ॥3॥

न्यायमार्ग से मुख नही मोडू, स्वीकृत प्रण की टेक न छोडू।
कर्त्तव्य पथ बलि जाऊ, भगवान् ॥4॥

प्राणीमात्र को अपना भाई, मानूं सबकी चाहू भलाई।
सेवा मत्र बनाऊ, भगवान् ॥5॥

ऊचनीच का भेद न मानू, गुणपूजा का महत्त्व पिछानू।
व्यक्ति न व्योम चढाऊं, भगवान् ॥6॥

करुणानिधि वर करुणा कीजे, आत्मिक बल कुछ ऐसा दीजे।
अजर अमर हो जाऊ, भगवान् ॥7॥

मेरा जैन धर्म जय पावे. . .

तर्ज पजाबी हुण नाम जपन

सर जावे तो जावे मेरा जैन धर्म जय पावे ॥टेर॥

धर्म के खातिर महावीर स्वामी, कानो मे कील ठुकावे।
धर्म के खातिर पारस स्वामी, जलता नाग बचावे।

धर्म के खातिर गौतम स्वामी, घर-घर अलख जगावे।
धर्म के खातिर सेठ सुदर्शन, सूली पर चढ जावे।

धर्म के खातिर हरिशचन्द्र राजा, भगी घर बिक जावे।
धर्म के खातिर मोरध्वज राजा, सूत पर आरा चलावे।

धर्म के खातिर जम्बू स्वामी, सुख वैभव छिटकावे।
धर्म के खातिर मुनिवर सारे, नगे पैरो ढावे।

❖ ❖ ❖

होवे धर्म प्रचार प्यारे भारत में...

होवे धर्म प्रचार प्यारे भारत मे
ईर्ष्या करे न कोई भाई, सब के दिल मे हो नरमाई
सरल बने नर नार, -प्यारे भारत ॥1॥

जुआ मास शराब व चोरी, दूर हो जग से रिश्वत खोरी
न खेले कोई शिकार, प्यारे ॥2॥

सत गुणी जन जो भी आवे, सारे उनसे लाभ उठावे।
लेवे जन्म सुधार, प्यारे ॥3॥

महावीर के बने पुजारी, सत्य अहिंसा व्रत के धारी
बोलो जय जयकार, प्यारे ॥4॥

दुर्व्यसनो को शीघ्र निवारे, दया धर्म को मन मे धारे
होवे मगलाचार, प्यारे ॥5॥

धर्म का झडा फहरे फर-फर, नाम प्रभु का गूजे घर-घर
जपे मत्र नवकार, प्यारे ॥6॥

❖ ❖ ❖

सच्ची पूंजी

धर्म की पूंजी कमाले, कमाले जीवा, जीवन बन जायेगा।
जीवन पर बैरग है कब से, सयम रग चढा ले, चढा ले जीवा॥
सोया पडा है अतर चेतन सत्सग बैठ जगा ले, जगा ले जीवा॥
मोह पास के दृढ बधन से अपना पिड छुड़ा ले, छुडावे जीवा॥
राग द्वेष का जाल बिछा है, दूर से राह बचा ले, बचा ले जीवा॥

❖ ❖ ❖

अनमोल रत्न

नर तेरा चोला रतन अमोला।
वृथा खोवे मति ना, खोवे मति ना॥1॥

अब थने जून मिली है नर की
भक्ति कर लेना ईश्वर की
क्यू सुध भूल गया उस घर की
नीद मे सोवे मति ना॥2॥

हो गये हरिशचन्द्र से दानी
जिनके बिक गये तीनो प्राणी
जिसने भरा नीच घर पानी
विपत्त मे रोवे मति ना॥3॥

हो गये ऋषि मुनि फक्कर मे
फस गये माया के चक्कर मे
किश्ती आ गई है टक्कर मे
इस डुबावे मति ना॥4॥

यह मीठा प्रेम का प्याला

(तर्ज पजाबी-हूण नामजपन दो बेला)

यह मीठा प्रेम का प्याला, कोई पीयेगा किस्मत वाला।
यह सत्सग वाला प्याला, कोई पीयेगा किस्मत वाला ॥टेर॥

प्रेम गुरु है प्रेम है चेला, प्रेम धर्म है प्रेम है मेला
प्रेम की फैरो माला, कोई फेरेगा किस्मत वाला ॥1॥

प्रेम बिना प्रभु भी नही मिलते, मन के कष्ट कभी नही टलते।
प्रेम करे उजियारा, कोई करेगा किस्मत वाला ॥2॥

प्रेमी सबके कष्ट मिटावे, लाखो से दुराचार छुड़ावे।
प्रेम मे हो मतवाला, कोई होवेगा किस्मत वाला ॥3॥

प्रेमी सुख मुक्ति का पावे, नरको मे हरगिज नही जावे।
प्रेम का पथ निराला, कोई चलेगा किस्मत वाला ॥4॥

प्राणी मात्र का प्रेम मत्र है, जीवन का बस एक तत्र है।
प्रेम धर्म है आला, कोई पायेगा किस्मत वाला ॥5॥
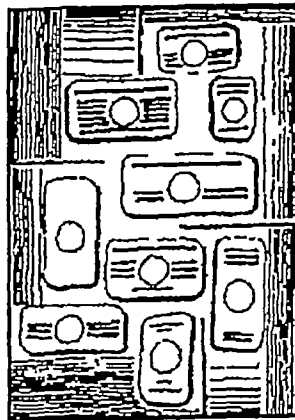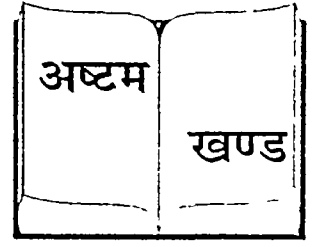
आगार

प्रेरक संस्मरण (विचार)

1. धर्मपाल
2. संघ व संगठन के श्रद्धा सुमन
3. श्रावक वर्ग
4. श्रावक वर्ग के संस्मरण (विचार)

धर्मपाल बन्धुओं के आध्यात्मिक विकास हेतु समता विभूति आचार्य नानेश द्वारा प्रदत्त नव सूत्र

1 धर्मपाल दिवस को समता दिवस के रूप मे मनाना चाहिए जिसके निम्न सूत्र पाले जाय

(अ) इस दिन (चैत्र सुदी 10) अगता रखे।

(ब) किसी से लडाई झगडा न करे कटु शब्द का प्रयोग न हो तथा किसी से मन मुटाव हो जाय तो क्षमा याचना कर ले।

(स) यथा शक्ति उपवास रखा जाए या एकाशन किया जाय।

(द) नशीले पदार्थ का सेवन तथा धूम्रपान नहीं करे।

(य) दिन भर धार्मिक क्रियाओ मे प्रवृत्ति रखी जाय।

2 इस चैत्र सुदी 10 से आगमी चैत्र सुदी 10 तक प्रत्येक सदस्य नये 5-5 धर्मपाल सदस्य बनावे।

3 प्रत्येक माह की शुक्ला 10 को सारे ग्रामवासी सामूहिक रूप से धार्मिक क्रियाओ की आराधना करे।

4 समस्त धर्मपाल परस्पर भ्रातृभाव रखे और फिर भी किन्ही के बीच कोई विवाद हो जाये तो उसे शाति से सुलझा ले।

5 जब भी किसी से मिलने का प्रसंग आवे तब हाथ जोड कर उनको 'जय जिनेन्द्र' कहे।

6 प्रातःकाल उठते ही ग्यारह नवकार मंत्र का जाप करना तथा देव गुरु धर्म का स्मरण करते हुए घुटने टेक कर वदन करना।

7 अपने यहा जब कभी संत-सतियों का पधारना हो तब दर्शन व्याख्यान का लाभ लेना।

8 अपने बालको में नैतिक एवं धार्मिक संस्कारो की वृत्ति हेतु उन्हे धार्मिक शालाओ मे अध्ययन हेतु प्रेरणा देना।

9 नित्य प्रति नमस्कार महामंत्र की माला जप कर निम्न सूत्रो का अन्तःकरण मे चिन्तन करना।

(अ) हे आत्मन्। तुम्हारे देव अरिहत है, गुरु निर्ग्रन्थ है और वीतराग भगवान् द्वारा बतलाया तुम्हारा धर्म हे जिन पर दृढ श्रद्धा बनी रहे।

(आ) हे चैतन्य देव। जगत् मे जितनी भी आत्माए हैं उन सब मे मेरे जैसा ही चैतन्य स्वरूप रहा हुआ हे अत. किसी को कष्ट न दे।

(इ) हे ज्ञान पुंज आत्मन् तेरा स्वरूप अजर, अमर और शाश्वत हे किन्तु कर्मों के संजोग से ससार मे जन्म मरण हो रहा है। यह अत्यन्त दुर्लभ मनुष्य भव जो मिला है, इसमे उस मूल स्वरूप को प्राप्त करने का सत्पुरुषार्थ करता हू।

❖ ❖ ❖

तप, त्याग एवं संयम की साकार प्रतिमा

अध्यात्म जगत् के उज्ज्वल नक्षत्र चारित्र चूड़ामणि समता विभूति बाल ब्रह्मचारी तप, त्याग एवं संयम की साकार प्रतिमा परम श्रद्धेय आचार्य श्री 1008 श्री नानालाल जी महाराज का महाप्रयाण पूरी मानव जाति के लिए आघात है। मै भी अपने को भाग्यशाली मानती हू कि पूज्य गुरुदेव के अतिम समय का दर्शन करने उदयपुर पहुच सकी। अंत में प्रभु महावीर से अभ्यर्थना करती हू कि स्वर्गस्थ आत्मा को शांति प्रदान करे। दिवंगत आत्मा को कोटिशः वंदन तथा चिरशांति केलिए प्रार्थना।

✍ विजयश्री उर्फ राजकुमारी सिपाणी
मूलचन्द जी कमलचन्द जी सिपाणी
धोराबास, गगाशहर

मेवाड़ के महर्षि

भारत के इस विशाल मानसरोवर के चित्रपट पर मेवाड की माटी ने अपनी रत्नगर्भा से अनेको पुष्पो का सृजन किया है। इसी माटी ने महाराणा प्रताप जैसे महा पराक्रमी, भामाशाह जैसे दानवीर एव ऋषि मुनियो को जन्म दिया है।

इसी धरा पर श्रद्धेय प्रज्ञा महर्षि समता विभूति तप और त्याग की साकार प्रतिमा चारित्र चूडामणि 1008 आचार्य श्री नानालाल जी महाराज का अवतरण हुआ है।

इतिहास साक्षी है ऐसे नर रत्नों का नाम स्वर्ण अक्षरों में अंकित होकर युगो-युगो तक चिर स्मृति बन जाता है।

आज वह दिव्य आत्मा इस भौतिक शरीर को छोड कर दिव्य लोक मे पहुंच गई है। चर्मचक्षुओ से हम उस महान् विभूति के दर्शन नहीं कर सकते पर उनके दिव्य गुणो की सुवास आज चारों और आभा मडल मे तरंगित हो रही है।

मै कामना करता हूं कि उनके उच्च आदर्शों को उनके अलंकार मय गुणो को अपने व्यक्तित्व मे आरोपित कर अपने जीवन को समतामय बनाए। यही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजली होगी।

✍ केशरीचन्द कोठारी
संरक्षक सदस्य, श्री खरतरगच्छ संघ, गगाशहर

जैन जगत् के सरताज

परम पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री नानेश, सर्वगुण सम्पन्न आचार्य एवं गुरु थे। हुक्मगच्छ के नायक होते हुए भी जैन जगत् के सरताज थे। छत्तीस गुण, आठ सम्पदा के धारी एवं उच्चाधिकारी मुनीश्वर थे। उनके नाम स्मरण से,

दर्शन से, संकट दूर होते थे। मनोकामना पूर्ण होती थी। इस दुनिया से वे चले गये, हम उनके बताए मार्गो पर शिक्षा एव सिद्धातो पर चलेगे, यही सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

✍ **कमल प्रभा सचेती,** डौडीलोहारा (दुर्ग-म प्र)

धर्म धुरन्धर ध्रुवतारा

परम प्रतापी, परम पूज्य गुरुदेव श्री नानालाल जी म सा इस युग के गुणपुञ्ज युग प्रवर्तक महापुरुष थे। उनके दर्शन, वदन ही नहीं, स्मरण मात्र से सुख शाति की रश्मियां फैलने लगती थी। दिव्य लोको से हमे शक्ति एव प्रेरणा मिलती रहेगी।

श्रद्धा सुमन समर्पण भगवन्, इसको कर लेना स्वीकार।
कृपा रहे हर दम गुरु मेरे, भव-भव में देना सहकार।

✍ **धरमचद सचेती,** डौडीलोहारा

आध्यात्मिक शक्ति संपन्न महापुरुष

पूज्य गुरुदेव का जीवन सयमीय गुणो का गुलदस्ता था। वे आलोकमुखी जैन दिवाकर, शाति सुधाकर, शासन सूर्य, आध्यात्म शक्ति सम्पन्न महापुरुष थे। हर दिन-हर क्षण उनके दर्शनो की भावना बनती थी। चतुर्विध सघ के बीच विराज कर जब धर्मदेशना देते, तब सुधर्मा पाट एवं आपश्री की छवि निराली लगती थी। उनकी कृपा से मुझे आनद ही आनद रहा। पूज्य गुरुदेव की मुझ पर असीम अनुकम्पा थी। कृपा एव अनुकम्पा तो रहेगी, किन्तु प्रत्यक्ष कब-कहा दर्शन कर पाऊगी, सोच-सोच मन व्याकुल हो उठता है। शाश्वत शाति की प्रार्थना।

✍ **नानेश चरण पुजारिन लक्ष्मीबाई सचेती**

जन-जन के प्राणेश

सयम सुमेरु, जगत वल्लभ, युग प्रधान, इतिहास निर्माता, परम प्रतापी, परम पूज्य आचार्य गुरुदेव श्री नानेश, जन-जन के प्राणेश के रूप मे विख्यात रहे। आपकी पुण्यप्रभा से धर्म जगत् मे आकर्षण वढता ही गया। महावीर के नाम को रोशन करने वाले सत महापुरुषो मे आप अद्वितीय आचार्य शिरोमणि महात्मन् थे। आपके सुरलोक गमन से तेजस्वी मार्तण्ड, शीतलचन्द्र से हम वंचित हो गए। आपका आदर्श जीवन ही सम्वल का कार्य करेगा। वह भव्य आत्मा शीघ्र मोक्ष लक्ष्मी को वरण करे।

✍ **मूलचद संचेती,** डोंडीलोहारा, दुर्ग (म प्र)

आनंददाता गुरु नानेश

आनन्ददाता नाना गुरु की आत्मा, शीघ्र सिद्ध बुद्ध मुक्त बने। ✍ **अमित जन,** राजनांदगाव (म प्र)

संकटमोचन गुरु नाथ श्री नानेश स्वामी

नानेश स्मरण से संकट दूर होते थे, सदैव कृपा वृष्टि होती रहे।

✍ **रिखबचंद संचेती**, डौडीलोहारा, (म प्र)

❖ ❖ ❖

चरण सरोजों में श्रद्धा सुमन अर्पण करूं नानेश को

नाना गुरु के चरण सरोजों में शांति मिलती थी, वे शाश्वत शांति वरण करें।

✍ **श्रीमती सरोज बंगानी**, धमतरी–छत्तीसगढ (म प्र)

❖ ❖ ❖

आध्यात्म कलाकार गुरुदेव

संयम जीवन के जादूगर, आध्यात्म कलाकार पूज्य गुरुदेव श्री नानेश की आत्मा शिव लक्ष्मी को शीघ्र प्राप्त करे।

✍ **लक्ष्मीलाल बाफना**, कुसुमकसा (दुर्ग–म प्र)

शांति सरिता गुरुदेव

शांति, सुख का रास्ता बताने वाले नाना गुरु की आत्मा परम शांति पाए।

✍ **शांतिलाल लुकड़**, कोरर (बस्तर–म प्र)

तारणसर गुरुदेव

परम श्रद्धेय नानेश भगवन्, संसार सागर से तिराने वाले महापुरुष थे। उनकी आत्मा मोक्ष लक्ष्मी को प्राप्त करे।

✍ **मांगीलाल संचेती**, सम्बलपुर (दुर्ग–म.प्र.)

परम कृपालु नाना गुरुवर

आचार्य भगवन् श्री नाना गुरुवर की मुझ पर असीम कृपा रही। उनकी कृपा से मेरी सारी अनुकूलताएं सदैव बनी रही। मैं उनका सेवक, वे मेरे स्वामी थे। उनके स्वर्ग पधारने से मै अनाथ हो गया हूं। गुरुवर की आत्मा शीघ्र मुक्ति धन को प्राप्त करें।

✍ **धनराज भंसाली**, डौडी लोहारा (दुर्ग–म प्र)

सुमन से कोमल गुरुवर नाना

गुरुदेव के दर्शन से जीवन सुमन खिल उठते थे, आज मुरझाहट है, शून्यता है। गुरुदेव श्री की आत्मा शीघ्र कर्मशून्य बने।

✍ **सुमन जैन**, एम एससी, एम ए , राजनांदगाव

असीम गुणों के भंडार, दांता रा दातार

नाना गुरु के गुणो की सीमा नहीं थी। उनके सयमी जीवन मे आकर्षण एव नाम स्मरण मे अद्‌भुत शक्ति थी। गुरुदेव श्री हमे छोड कर चले गए किन्तु समता निर्झर, शिक्षा के झरने, सिद्धात की सरिता आदि की अनुपम पूजी हमारे लिए छोड़ गये है। हमारा सम्यग्-आचरण ही गुरु आत्मा की शाति मे श्री वृद्धि कर पाएगा।

✍ कु. सीमा जैन, 'मारोठी' परपोडी, दुर्ग (म प्र)

❖ ❖ ❖

ज्ञान रश्मि गुरुदेव

नाना गुरु की दिव्य रश्मियां भूमंडल पर फैल रही है। हमारे लिए वे जीवन प्रकाश छोड गए हे। हम आलोक प्राप्त करे एवं समता दर्शन पर कदम बढ़ाएं। ✍ श्रीमती रश्मि सांखला, खैरागढ़, छत्तीसगढ (म प्र)

❖ ❖ ❖

संयम के सजग प्रहरी

संतोष, प्रेम, करुणा, समता का था वह झरना,
नाना कृपा तू करना, शीघ्र मोक्ष वरणा।

ब्रह्मर्षि, असीम गुणो के महासमुद्र, भक्तो की पुकार सुनने वाले, टूटे दिलो को जोडने वाले, धर्म का रग चढाने वाले, जाने वाले भी सभी मेरे भाई है, ऐसा विराट चिंतन रखने वाले, शाति के सागर, सयम के सजग प्रहरी, परम श्रद्धेय पूज्य गुरुदेव श्री नानेश की शिक्षाओ पर चल कर ही हम उनके नाम को अमर रख सकते हे आर आत्म-शाति के कारण भी बन सकते है। ✍ सतोष जैन, सी ए, रायपुर (म प्र)

गुरुदेव है-गुरुदेव थे, गुरुदेव हैं

शरीर से गुरुदेव है, सुनते, पढते ही, मन खिल उठता था।
शरीर से गुरुदेव नहीं है, सोचते ही आखो मे अधेरा छा जाता हे।
सभालती हूं अपने को, एवं सोचती हू गुरुदेव श्री जी हे
कृतियो से, यश से, अपने पावन कार्यों एवं नाम से।
तब अच्छा लगता है। उनके चरण रज कहां से लाऊ-फिर
सोचती हू मै ही चरण-रज हूं।
शाश्वत शाति की प्रार्थना, शत्-शत् करूं प्रणाम।
कृपा वृष्टि करना प्रभु, पाना शिव सुख धाम॥

✍ नानेश चरण पुजारिनी रोशन जैन (एल.एलबी.), डांडीलोहारा (म प्र)

पुण्यवान आचार्यश्री से, जैन जगत था बड़भागी

आचार्यश्री नानेश के नाम एवं सयम की महिमा चारो दिशा मे फैली हुई थी। वे नही है किन्तु उनका नाम, यश, ज्ञान एव सयम अमर रहेगा। उनके प्रयाण से धर्म जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। श्रद्धा पुष्प समर्पण पूर्वक शाति की कामना।

✍ **भागचन्द बंगानी**, नया पारा राजिम, रायपुर (म प्र)

❖ ❖ ❖

संयम प्रवीण नाना गुरु

नाना गुरु स्वनाम धन्य महापुरुष थे। नाना गुरु जगत महातीर्थ थे। लोग उनके दर्शनो के लिए तडफते रहते थे। नानेश्वर गुरुनाथ जहां भी विराजते थे। लोग यात्री बन कर जाते और '**साधुनां दर्शनं पुण्य**' की उक्ति को चरितार्थ करते थे।

✍ **रविन्द्र प्रवीण पारख**, अ नवागांव दुर्ग (म प्र)

नाना गुरु के दर्शन करके, धन्य-धन्य हो जाते थे

पूज्य आचार्य श्री नाना गुरुदेव के दर्शन कर अपार शांति मिलती थी। जीवन धन्य हो जाता था। ऐसी दिव्य विभूति गुरुदेव के स्वर्गगमन से मन काफी बोझिल है। दिव्य आत्मा को शाश्वत शांति मिले, मोक्ष धन को शीघ्र प्राप्त करे।

✍ **धनराज बोरा**, देवकर (दुर्ग-म प्र)

धर्मादित्य गुरु नाना

जैनेत्तर हूं किन्तु जैन धर्म एवं संयमी जैन संतो के प्रति मेरे मन मे काफी लगाव है, इसका श्रेय बहिन रश्मि सचेती को जाता है। बहिन रश्मि के साथ सन् 1997 मे मैंने भी ब्यावर चातुर्मास मे नाना गुरु के दर्शन किए। मैंने गुरु मंत्र लिया। कली-कली खिल गई थी, किन्तु वे आज नही रहे।

संयम से प्रीति थी जिनको, रीति नीति से प्यार।
समता सागर गुरुवर नाना, श्रद्धा सुमन करो स्वीकार॥

✍ **प्रीतिबाला सोनी**, डौडीलोहारा-दुर्ग (म प्र)

आध्यात्म मार्तण्ड जय गुरु नाना

यू मै श्वे0 मूर्तिपूजक परम्परा से सम्बन्धित हूं किन्तु सच्चे सन्तो के प्रति सदैव आदर भाव रहे है। गुरुवर की कीर्ति फैली हुई थी, सुनता रहता था किन्तु मेरी धर्मपत्नी की प्रेरणा से अक्टूबर 1998 मे 10, 12 लोगो को लेकर दर्शन करने उदयपुर गया। काफी पश्चात्ताप हुआ कि पहले क्यो दर्शन नही किया? अब तो वह दिव्य भव्य आत्मा, देवो के संसार मे है, शीघ्र अंतिम लक्ष्य पाएं, हम श्रद्धा सुमन चढाएं।

संयम प्रतीक थे गुरुवर नाना, जीवन जिनका ललित ललाम,
प्रतीक ललिता करे कामना, पाएं गुरुवर मुक्ति धाम।

✍ प्रतीक कुमार बाठिया, कर सलाहकार
ललिता बांठिया, एल एल बी , रायपुर (म प्र)

नाना गुरु को याद कर, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं

ज्ञान, गुण एवं संयम के सागर गुरुदेव, स्वनाम धन्य महापुरुष थे। उन्होने अपना ही नहीं अपने पूर्वज गुरुदेवो के, जिनशासन के नाम पर कीर्ति कलश स्थापित किया, सर्वोच्च शिखर पर। तभी तो लोगो के लिए एक मत्र था–

हु.शि.उ.चौ.श्री.ज.ग. नाना. .

ऐसे महान् योगीश्वर के स्वर्ग गमन का सुन कर आंखे भीग जाती है, मन की तडफ बढ जाती है।

नाना गुरु गुण गाते हैं, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।

✍ श्रीमती मीना, ओमप्रकाश बाफना, दुर्ग (म प्र)

धर्म गगन के महा दिवाकर

परम पूज्य नाना गुरुदेव, जब भूमण्डल पर थे, संत दर्शन की लहर चलती थी। लोग उन्हे युगो–युगो तक याद करते रहेगे

वदन, स्मरण, श्रद्धार्पण, शाति की प्रार्थना।

✍ धरमचद श्रीश्रीमाल, मोहला–राजनाद गाव (म प्र)

दिव्य लोक के वासी गुरुवर...

नहीं शीतलता जो चन्दन में, पाई वह तेरे चरणन में।

मै आज जो भी हू, नाना गुरु की कृपा से हू। वे मेरे रोम–रोम मे व्याप्त हे। यह प्रेरणा मुझे दादासा धनराजजी सा भसाली से मिली।

दिव्यलोक के वासी गुरुवर, दिल में तुम्हें मढ़ाता हूं।
चन्दन के नही फूल गुरुवर, श्रद्धा सुमन चढ़ाता हूं।

✍ चदन कुमार भसाली, बी ई इंजीनियर, वेकुण्ठ–रायपुर (म प्र.)

विमल विभूति गुरुदेव

गुरुदेव के दिव्य लोकगमन से सारे संघ–समाज ने, राष्ट्र ने, विमल विभूति दिव्य रत्न खो दिया है। अब कहां दर्शन पाएगे? श्रद्धार्पण शाति की प्रार्थना। ✍ श्रीमती विमला देवी डोसी, भेंडी–दुर्ग (म प्र)

पुण्यवान आचार्यश्री से, जैन जगत था बड़भागी

आचार्यश्री नानेश के नाम एवं सयम की महिमा चारो दिशा मे फैली हुई थी। वे नही है किन्तु उनका नाम, यश, ज्ञान एवं सयम अमर रहेगा। उनके प्रयाण से धर्म जगत की अपूरणीय क्षति हुई है। श्रद्धा पुष्प समर्पण पूर्वक शाति की कामना।

✍ **भागचन्द बगानी**, नया पारा राजिम, रायपुर (म प्र)

❖ ❖ ❖

संयम प्रवीण नाना गुरु

नाना गुरु स्वनाम धन्य महापुरुष थे। नाना गुरु जगत महातीर्थ थे। लोग उनके दर्शनो के लिए तडफते रहते थे। नानेश्वर गुरुनाथ जहां भी विराजते थे। लोग यात्री बन कर जाते और **'साधुना दर्शनं पुण्यं'** की उक्ति को चरितार्थ करते थे।

✍ **रविन्द्र प्रवीण पारख**, अ नवागांव दुर्ग (म प्र)

❖ ❖ ❖

नाना गुरु के दर्शन करके, धन्य-धन्य हो जाते थे

पूज्य आचार्य श्री नाना गुरुदेव के दर्शन कर अपार शांति मिलती थी। जीवन धन्य हो जाता था। ऐसी दिव्य विभूति गुरुदेव के स्वर्गगमन से मन काफी बोझिल है। दिव्य आत्मा को शाश्वत शाति मिले, मोक्ष धन को शीघ्र प्राप्त करे।

✍ **धनराज बोरा**, देवकर (दुर्ग-म प्र)

धर्मादित्य गुरु नाना

जैनेत्तर हूं किन्तु जैन धर्म एव संयमी जैन संतो के प्रति मेरे मन मे काफी लगाव है, इसका श्रेय बहिन रश्मि संचेती को जाता है। बहिन रश्मि के साथ सन् 1997 मे मैने भी ब्यावर चातुर्मास मे नाना गुरु के दर्शन किए। मैने गुरु मंत्र लिया। कली-कली खिल गई थी, किन्तु वे आज नही रहे।

संयम से प्रीति थी जिनको, रीति नीति से प्यार।
समता सागर गुरुवर नाना, श्रद्धा सुमन करो स्वीकार॥

✍ **प्रीतिबाला सोनी**, डौडीलोहारा-दुर्ग (म प्र)

आध्यात्म मार्तण्ड जय गुरु नाना

यूं मै श्वे0 मूर्तिपूजक परम्परा से सम्बन्धित हूं किन्तु सच्चे सन्तो के प्रति सदैव आदर भाव रहे है। गुरुवर की कीर्ति फैली हुई थी, सुनता रहता था किन्तु मेरी धर्मपत्नी की प्रेरणा से अक्टूबर 1998 मे 10, 12 लोगो को लेकर दर्शन करने उदयपुर गया। काफी पश्चात्ताप हुआ कि पहले क्यो दर्शन नहीं किया? अब तो वह दिव्य भव्य आत्मा, देवों के ससार में है, शीघ्र अंतिम लक्ष्य पाएं, हम श्रद्धा सुमन चढाए।

संयम प्रतीक थे गुरुवर नाना, जीवन जिनका ललित ललाम,
प्रतीक ललिता करे कामना, पाएं गुरुवर मुक्ति धाम।

✍ प्रतीक कुमार बांठिया, कर सलाहकार

ललिता बांठिया, एल एल बी , रायपुर (म प्र)

नाना गुरु को याद कर, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं

ज्ञान, गुण एव सयम के सागर गुरुदेव, स्वनाम धन्य महापुरुष थे। उन्होने अपना ही नही अपने पूर्वज गुरुदेवो के, जिनशासन के नाम पर कीर्ति कलश स्थापित किया, सर्वोच्च शिखर पर। तभी तो लोगो के लिए एक मत्र था-

हु.शि.उ.चौ.श्री.ज.ग नाना. .

ऐसे महान् योगीश्वर के स्वर्ग गमन का सुन कर आखे भीग जाती है, मन की तडफ बढ जाती है।

नाना गुरु गुण गाते है, श्रद्धा सुमन चढ़ाते हैं।

✍ श्रीमती मीना, ओमप्रकाश बाफना, दुर्ग (म प्र)

धर्म गगन के महा दिवाकर

परम पूज्य नाना गुरुदेव, जब भूमण्डल पर थे, सत दर्शन की लहर चलती थी। लोग उन्हे युगो-युगो तक याद करते रहेगे

वदन, स्मरण, श्रद्धार्पण, शाति की प्रार्थना।

✍ धरमचद श्रीश्रीमाल, मोहला-राजनांद गाव (म प्र)

दिव्य लोक के वासी गुरुवर...

नहीं शीतलता जो चन्दन में, पाई वह तेरे चरणन में।

मै आज जो भी हूं, नाना गुरु की कृपा से हू। वे मेरे रोम-रोम मे व्याप्त है। यह प्रेरणा मुझे दादासा धनराजजी सा भसाली से मिली।

दिव्यलोक के वासी गुरुवर, दिल में तुम्हें मढ़ाता हूं।
चन्दन के नहीं फूल गुरुवर, श्रद्धा सुमन चढ़ाता हूं।

✍ चंदन कुमार भंसाली, बी ई इजीनियर, बैकुण्ठ-रायपुर (म प्र)

विमल विभूति गुरुदेव

गुरुदेव के दिव्य लोकगमन से सारे संघ-समाज ने, राष्ट्र ने, विमल विभूति दिव्य रत्न खो दिया है। अब कहा दर्शन पाएगे? श्रद्धार्पण शांति की प्रार्थना।

✍ श्रीमती विमला देवी डोसी, भेडी-दुर्ग (म प्र)

दृढ़ संयमी जीवन व हमारे प्रेरणा के स्रोत बने : आचार्यश्री नानेश

✍ गेहरीलाल वया, मुम्बई (अध्यक्ष)

महान् आध्यात्मिक देश की भारत भूमि युगो-युगो से एक धर्म तपो भूमि रही है। अनेकता मे एकता वाले इस प्राचीन देश मे अनेक सम्प्रदायो के होने के बावजूद सभी एक मत से जन कल्याण की कर्म निर्जरा एव तपाराधना द्वारा जन-जन के आध्यात्मिक, नैतिक तथा धार्मिक उत्थान मे सहायक रही है। मानव जीवन की दुर्लभता को जान कर इस धरा के अनेक महान् सपूतो ने प्राप्त जीवन का सदुपयोग कर आत्मशुद्धि, परोपकार, धर्म आराधना तथा सर्वजनहित भाव को धारण कर सयमी जीवन को स्वीकार कर मानव जीवन को पूर्ण सार्थकता प्रदान करने वाले ऐसे महापुरुष सदैव पूज्यनीय व वन्दनीय बने है।

परम श्रद्धेय समान विभूति धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्यश्री नानालाल जी म सा. भी एक ऐसे ही महान् सत रत्न थे, जिन्होने सांसारिक जीवन का परित्याग कर आध्यात्मिक जीवन को स्थान दिया। संयम पथ ग्रहण किया। धन्य है भारतवर्ष की वीर भूमि मेवाड जहां महाराणा जैसे वीर रत्न पैदा हुए। उसी मेवाड भूमि के चित्तौडगढ जिले के छोटे से दांता ग्राम मे महायोगी आचार्यश्री नानेश का जन्म हुआ, जहां सीमित साधनो के कारण व्यावहारिक शिक्षा अधिक नही मिल सकी। आपश्री को पूज्य श्री चौथमल जी म सा के प्रवचन से प्रभावित होकर उसी समय वैराग्य भाव जाग्रत हो गया। शांत-क्रांति के अग्रदूत पूज्य श्री गणेशलाल जी म सा से संयम अंगीकार शास्त्रो का अध्ययन गुरु चरणो मे किया।

पूज्य गणेशाचार्य ने अपने अंतिम समय को जानकर आपश्री को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। आपश्री ने लम्बे अंतराल तक अपने दृढ संयमी जीवन से जिनशासन की भव्य प्रभावना की। अपने धर्म प्रतिबोध से धर्मपाल समाज की स्थापना की। आपश्री की अमृतमय वाणी ने सदैव शोषित व पीडितो को स्वाभिमान सम्मान के अमर पथ का वरण करने की प्रेरणा दी। आपश्री ने अपने शिष्य-शिष्या वर्ग को आचार के कठोर सांचे मे ढाला, कुन्दन-सा तपाया और स्वाध्याय-ज्ञान और तप के उच्च आदर्शों को अनुभव करने का सुअवसर प्रदान किया।

पूज्य आचार्य प्रवर की प्रवचन की शैली अनूठी थी। उनमे सरलता सजीवता निर्भीकता आध्यात्मिकता तथा आत्मीयता के सभी गुण समाहित थे। स्मरण शक्ति बहुत ही तेज थी। शरीर की नश्वरता से कोई अछूता नही रहा है, शरीर तो नश्वर है पर मानव द्वारा किए गए सत्कार्य अमर होते है। अनेक यश रूपी शरीर की मृत्यु कदापि नही होती। समता विभूति आचार्य प्रवर का दीर्घ सयमी जीवन यात्रा को पूर्ण कर दिनांक 27 अक्टूबर 1997 को उदयपुर नगरी मे महाप्रयाण हो गया।

ऐसे महान् संत जो सिर्फ हमारे ही नही देवता के पूज्य थे। जिन से जन-जन ने प्रकाश पाया, अपनी आत्मा को निर्मल बना कर अपने आपको धन्य बनाया और आज भी हमे उनका वरदहस्त प्राप्त है। जिसमे नवीन सघ की उत्तरोत्तर प्रगति हो रही है। ऐसी श्रमण विभूति पूज्य आचार्य श्री नानेश के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित है एव शासन देव से प्रार्थना है कि आपके दिव्य जीवनानुरूप ही आपको मोक्ष के सोपान प्राप्त हो।

शत्-शत् श्रद्धा सुमन अर्पित।

❖ ❖ ❖

सरलता की मूर्ति-आचार्य श्री नानेश

✍ गेहरीलाल वया
राष्ट्रीय अध्यक्ष, श्री अ भा सा जैन श्रावक सघ

श्री हुक्मगच्छ के अष्टम पट्टधर परम श्रद्धेय समता विभूति जैनाचार्य श्री नानेश का झीलो की नगरी उदयपुर मे जब महाप्रयाण हुआ तब सम्पूर्ण राष्ट्र स्तब्ध रह गया। एक साधारण परिवार का बालक इतना उच्च पद प्राप्त कर लेगा इसकी पोखरना कुल को लेशमात्र भी कल्पना नही थी। भादसोडा मे विराजित मुनिवृन्द अपने प्रवचन मे जब छह आरो का वर्णन फरमा रहे थे तब छठे आरे के वर्णन को सुन कर आत्मा जागृत हुई और पूज्य जवाहराचार्य के सान्निध्य मे पहुंच कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु वीतराग पथ की ओर अग्रसर हुए। सयम पथ पर आरूढ होकर हजारो किलोमीटर पैदल चल कर मेवाड, मारवाड, छत्तीसगढ, महाराष्ट्र आदि प्रान्तो मे धर्म चेतना जागृत कर समता का संदेश जन-जन तक पहुचा। मालवा प्रान्त के बलाई जाति के भाईयो को वीतरागी वाणी से प्रभावित कर धर्मपाल के रूप मे उन्हे निरूपित कर दुर्व्यसनो से मुक्त कराया। परम पूज्य आचार्य श्री नानेश सरलता की प्रतिमूर्ति थे। अपने गुरु की सेवा करने से कभी पीछे नही हटे। अन्ततोगत्वा गुरु की सेवा करने मे सफलता प्राप्त कर ली और गणेशाचार्य ने आपश्री को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। आचार्य प्रवर ने जीवनकाल मे जिनशासन को देदीप्यमान एव गौरवान्वित करने मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

आचार्य प्रवर ने अपने प्रवचनो से समस्त जैन समाज को प्रभावित किया है। सभी प्रान्त के भाई-बहिनो को सस्कारित करने मे तथा धर्म के प्रति आस्था एव श्रद्धा भक्ति भाव उत्पन्न करने मे आचार्य भगवन् का पूर्ण सहयोग रहा। मुम्बई तथा उपनगरो मे जब आचार्य भगवन् के चातुर्मास हुए उस समय मुझे पूर्ण सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस महान् विभूति का हमारे मध्य से चले जाना एक अपूरणीय क्षति है। उनके स्वभाव मे सरलता, वाणी मे मधुरता, व्यवहार मे सहजता, नम्रता, कुशलता-हृदय मे उदारता विशालता थी। ऐसे महान् व्यक्तित्व विरल विभूति को शत-शत वन्दन, अभिनन्दन, भावभीनी श्रद्धाजलि अर्पित है।

आचार्य श्री नानेश संस्मरणों के आइने में

✍ **धर्मीचन्द कोठारी**, महामंत्री

भारतीय संस्कृति ऋषि प्रधान सस्कृति है। इसमें भी श्रमण संस्कृति का महत्त्व सर्वोपरि है। भगवान् महावीर की पाट परम्परा मे हुक्मगच्छ की परम्परा भी अपनी विलक्षण छवि अपनी क्रांतिकारी विचार एवं आचार धारा को लेकर चल रही है। उसी परम्परा पर आठवे पाट पर आचार्य श्री नानेश विराजमान थे। आचार्यश्री नानेश ने श्रमण मर्यादा का कठोरता के साथ पालन करते हुए एवं कराते हुए जिनशासन की भव्य एव महती प्रभावना की। आपके त्याग एवं तपमय जीवन का जनता जनार्दन पर अचूक प्रभाव पड़े बिना नही रहा। आपके सदुपदेशो से हजारो हजार भव्यात्माओ ने अविरति से विरति रूप अणुव्रत अपना कर अपने जीवन का कल्याण किया व कर रहे हैं। तीन सौ की ऊपर संख्या मे मुमुक्षु आत्माओ ने भी अगार धर्म से अनगार धर्म अपना कर **तिन्नाण तारयाणं** का महत्त्वपूर्ण कार्य संपादित कर रहे हैं। आपने ज्ञान, दर्शन, चारित्र की त्रिवेणी रत्नो से संत रत्नो को जिस रूप मे तैयार किया, ऐसे सन्त अन्यत्र दुर्लभ है। स्व आचार्य श्री सोहनलाल जी म सा ने भी एक दिन धर्मसभा मे कहा था कि आचार्य श्री नानेश के संघ मे प्रभावशाली संत रत्नो की जोड़ी है, वह अन्यत्र अभी देखी नहीं जा सकती। इस बात को सभी एक स्वर से स्वीकार करते है।

आचार्य श्री का जीवन साधना प्रधान था। आपके जीवन का प्रत्येक क्षण साधना मे ही समर्पित था। यह कह देना भी अतिशयोक्ति पूर्ण नही होगा। आप जब प्रवचन देने पाट पर विराजमान होते और प्रवचन धारा प्रवाहित होती, उस समय आपकी भावभगिमा अपूर्व होती। आपकी वाणी सिंह गर्जना की तरह निकलती। श्रोतागण आपकी वाणी का अमृत रस भाव विभोर एवं गद्गद् होकर सुनते रहते। आपकी वाणी मे मिठास अपूर्व था। श्रोतागण सुनते-सुनते कभी अगाते नही थे। आपकी आकृति प्रकृति भी उस समय इतनी भव्य होती कि जिससे अनेको आत्मा मे विरक्ति उभर उठती। आपकी वाणी मे तप, त्याग की पावन गंगा बहती थी, भव संताप से संतप्त भव्यात्माएं आपकी निर्मल निर्झर वाणी सुन कर अनेक भवो का पाप एव सताप को मिटा कर सुख शाति का अनुभव करते थे। आप जैसे सत निकट समय मे प्राप्त होना दुर्लभ ही है। पूज्य गुरुदेव की जैसी कथनी थी, वैसी ही करनी थी। कथनी करनी की एकरूपता रखने वाले साधक का ही प्रभाव भूमण्डल पर पड़ता है।

आपका जीवन अनुपम था। आपके जीवन की महिमा को शब्दो मे बाधना चन्द्रमा को दीपक रूप बताना एव सागर को नापने के समान दुष्कर है। आकाश जैसे असीम है, वैसे ही पूज्य गुरुदेव के गुण असीम एव अनन्त है। ससीम शब्दो मे असीम गुणो को व्यक्त करना असंभव है। पूज्य गुरुदेव का मेरे पर अनन्त उपकार रहा है। आपने जो संयम धन दिया, वह आज मेरे जीवन मे अपूर्व आनन्द का नवसचार कर रहा है। गुरुदेव का एक ही विशेष सूत्र मेरे जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण रहा है, वह सूत्र है सत्य को सदा सर्वथा अपनाए रखो। जिसने सत्य को समझ लिया, उसके लिए ज्ञान, योग, भक्ति, साधना वरदान रूप होती है। सत्य को समझना दुष्कर है। कितना ही ज्ञान हासिल कर लिया जाए, कठोर से कठोर तपस्या भी कर ली जाए, दुष्कर क्रियाकाण्ड भी क्यो न अपना लिया जाए किन्तु सत्य को यथार्थ को समझे बिना सारी की सारी साधना निष्फल है। आचार्य श्री ने सत्य को जाना था। जिसने सत्य को जान लिया, उसके दिल व दिमाग मे भगवान् का निवास होता है। कहा भी है कि **"सच्च खु भगवं"** अर्थात् सत्य ही भगवान् है। आज जितनी ही कट्टरता आदि दिखाई देती है, वह सत्य को नहीं समझ पाने का ही परिणाम व नतीजा

है। गुरुदेव श्री ने मुझे समय-समय पर जो शिक्षाए दी वह आज मेरे जीवन के लिए वरदान रूप बनी हुई है।

किन्तु कुछेक शासन हितैषी का जामा पहने शासन विरोधी लोगो ने आचार्यश्री को गुमराह करने का जो षडयत्र रचा उसमे उनको सफलता भी मिली, किन्तु उसका नतीजा समाज के लिए अनुकूल नही रहा। आचार्य श्री ने अपनी अन्तरात्मा से जो भी निर्णय लिया वह हमेशा शासन मे चार चाद लगाने वाला ही रहा, किन्तु इस निर्णय को आचार्यश्री की अन्तरात्मा का निर्णय कहना गलत है। जब समाज मे विरोध के स्वर उठने लगे तो वे लोग आचार्य श्री के नाम से प्रचारित व प्रसारित कराने लगे कि युवाचार्य का चयन मैने अपनी अन्तरात्मा से किया है। किसी के दबाव मे आकर नहीं। किन्तु सही स्थिति आचार्यश्री की वही जानता है जिसने आचार्यश्री को नजदीक से समझने का प्रयास किया। मैने भी आचार्य श्री से इस विषय मे चर्चा की किन्तु आचार्य श्री के अन्तरग विचार अलग ही थे। कहने का तात्पर्य है कि जो लोग यह चर्चा करते है कि आचार्यश्री के सारे निर्णय प्रभावी होते है किन्तु यह निर्णय गलत कैसे हो गया? उनके लिए यही समाधान है कि आचार्यश्री की भावना से जो भी निर्णय हुआ वह सदा ही अच्छा ही हुआ है एवं समाज के हित मे ही हुआ है। किन्तु युवाचार्य के चयन में आचार्यश्री का निर्णय कहना गलत है क्योकि आचार्यश्री का निर्णय कभी असफल नहीं हुआ है। आचार्यश्री के सारे निर्णय स्वतः ही हुए है जो आचार्यश्री का नाम लेकर इस कार्य को सिद्ध करना चाहते है व आचार्यश्री की महिमा को घटा रहे है। वे आचार्यश्री के सच्चे उपासक नही है।

आचार्यश्री की महिमा अपरम्पार रही है। उनकी बाजी इतनी विलक्षण व जादूगर थी कि उसके प्रभाव से पत्थर दिल एव दिमाग भी दिलदार बन जाता था। एक बार का प्रसग है कि एक मुनि वयोवृद्ध थे, गर्मी के मौसम के कारण वह दिन मे बहनो के आवागमन पर भी खुले शरीर बैठे रहते थे। शरीर पर चद्दर नहीं रखते थे। आचार्यश्री ने उनकी प्रकृति बदलने के लिए उनको कहा कि मुनिजी आप वयोवृद्ध व अनुभवी संत है दिन मे बहिने आती रहती है आपको उस समय ख्याल रखना है कि वस्त्र रहित बैठे रहते है? आचार्यश्री द्वारा चतुराई पूर्ण शिक्षा को सुनकर मुझे मन ही मन हंसी आ रही थी एव गुरुदेव की प्रशासन सचालन कुशलता पर गौरव भी हो रहा था। उस मुनिजी ने गुरुदेव को कहा-गुरुदेव ध्यान रखूगा। मैने उसके पश्चात् उस मुनिजी को बहनो के आवागमन के समय वस्त्र रहित शरीर नहीं देखा। कैसी थी गुरुदेव की शिक्षा देने की कला? जिससे छोटे-बडे सभी मुनि सरलता से सही मार्ग पर कटिबद्ध रहते थे। ऐसे महान् विभूति देहपिण्ड से भले ही हमारे सामने नहीं है किन्तु आपकी गुण गरिमा पूर्ण सौरभ सदाकाल इस भूमण्डल पर सदा फैलती रहेगी। हमारे सच्ची श्रद्धाजलि इसी मे है कि हम गुरुदेव के द्वारा बताये मार्ग पर सदा चलते रहे। इन्ही मनीषा के साथ

अमर व अमिट है वह व्यक्तित्व

✍ प्रेमराज सोमावत, मद्रास

दुनियां में तीन तरह के इन्सान होते है–अति सामान्य, सामान्य, असामान्य।

अति सामान्य वे इन्सान होते है जिनके होने का बोध जन सामान्य को नहीं हो पाता और तो और उन्हे स्वय को भी अपने अस्तित्व का बोध नहीं होता है।

सामान्य वे इन्सान होते है जिन्हे दुनिया साधन सम्पत्ति के माध्यम से जानती है।

असामान्य वे इन्सान होते है जिन्हे सारा संसार साधना व आत्म समृद्धि के कारण, त्याग–वैराग्यभाव आचरण के कारण जानता है।

●●●

कुछ इन्सान अनूठे किस्म के होते है,
जो मरकर भी अमर हो जाते है
वे सदैव जिन्दा रहते है अपने भक्तो/प्रशंसको की यादो मे।
कुछ इन्सान खास किस्म के होते हैं,
जो मिट कर भी अमिट होते है अपने भक्तो की इवादत मे।
कुछ इन्सान ऊंचे किस्म के होते है,
जो दुनियां से विदा होने के बाद भी जिन्दा ही रहते है बन्दों की बन्दगी मे।
आचार्य श्री नानेश ऐसे ही अनूठे, खास व ऊंचे किस्म के इन्सान थे या यूं कहूं कि वे इन्सान के चोले मे भगवान् थे।
जिनकी मृत्यु के बारे मे हम कोई घोषणा नहीं कर सकते है।
उनकी पार्थिव देह के विषय मे शरीर विज्ञान–विज्ञाताओ ने घोषणा की थी कि . ।
किन्तु भक्तो की हृदय तन्त्री मे आज भी गुरुदेव जिन्दा है, झंकृत है।

●●●

समता विभूति अध्यात्म जगत् के एक महान् आश्चर्य थे।

भक्त वर्ग आचार्य श्री नानेश मे निहारते थे–आचार्य श्रीलाल जी म सा की सयम साधना को, आचार्य जवाहर की क्रांतिमय आभा को, आचार्य श्री गणेश की अनुशासन प्रियता को। लोग उन्हे निहारते थे, वन्दन मे, नमन मे व अभिनन्दन मे।

लोग उन्हे पुकारते थे–अन्नदाता, दीनदयाल, तिरण–तारण की जहाज, कृपा सिन्धु आदि शब्दों मे।

●●●

आचार्य श्री नानेश अपने आपको सजाते संवारते थे सिद्धो के पवित्र स्मरण से। सिद्धत्व उनकी श्रद्धा का सोपान

था जिस पर वे सर्वतो भावेन समर्पित थे। अरिहन्त उनकी आस्था-आराधना के आयाम थे जिस पर वे कुर्बान थे।

यही कारण है कि,

मृत्यु पूज्य गुरुदेव श्री को हमसे छीन नही सकी,

गुरुदेव श्री का पावन स्मरण हमारी हृदय तन्त्री का स्पन्दन है।

हमारी साधना का सम्बल है।

हमारा गुरुदेव श्री का रिश्ता देहातीत था, हमने उन्हे देह मे नही दिव्यता-भव्यता मे पाया है।

अपने मन मन्दिर मे सजाया है।

गुरुदेव श्री वह मूर्ति है, जिसकी हमने प्राण प्रतिष्ठा नहीं कि बल्कि गुरुदेव श्री जी ने हमे प्राण प्रतिष्ठा दी है।

काश! हम उसे प्रतिष्ठित रख पाये?

उस बेशकीमती व्यक्तित्व को, करुणाशील कर्तृत्व को व अनमोल आलोक को सुरक्षित रख पाये?

उसे न खोयें हम राग द्वेष, संकीर्णता, निन्दा-विकथा की वीथिका मे .

तब ही सार्थक होगे "जय गुरु नाना" के "उद्घोष"

जैन जयति शासनम् के "सुघोष"

जिनकी कृपा का वर्षण

सृजन का दीप बन

हमे आलोकित कर रहा है

ऐसे जन-मन के श्रद्धेय के

शाश्वत पाद पद्मो मे

समर्पित है श्रद्धा की पावन अजलि।

हुक्म संघ की दिव्य ज्योति

✍ **चैनमल पामेचा**, पूर्व महामंत्री

समता विभूति आचार्य पूज्य श्री नानालाल महाराज जी सा का नाम जैन समुदाय के उन आचार्यों की कोटि मे लिया जाता है जिन्होने लोकैषणा से दूर रहते हुए स्वय और ओरो के कल्याण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। जैन समाज उनके प्रति श्रद्धानत है। आचार्य नानालाल जी म सा का जन्म आज से ७८ वर्ष वर्ष पूर्व चित्तौडगढ जिलान्तर्गत दांता गाँव के पोखरना परिवार मे हुआ। उनके पिता का नाम मोडीलाल और माता का नाम श्रृगार बाई था। युवावस्था मे ही जैन योग की साधना मे लगने के उद्देश्य से उन्होने शान्त क्रान्ति के आचार्य गणेशलाल जी महाराज के पास १९ वर्ष की उम्र मे आज से ५९ वर्ष पूर्व जैन सन्यास ग्रहण कर लिया। लगातार २३ वर्ष तक गुरु की उत्कृष्ट सेवा साधना के प्रसाद स्वरूप आज से ३६ वर्ष पूर्व माघ कृष्ण द्वितीया को उन्होने आचार्य पद प्राप्त किया।

समता दर्शन : आचार्य नानेश ने व्यक्ति से लेकर विश्व तक शान्ति का प्रसार करने के लिए समता दर्शन का प्रवर्तन किया। जिस विषमता के वातावरण में इन्सान जी रहा है, उसमे स्वार्थ की भावना गहराती जा रही है। विभिन्न देशो का भी यही हाल है। तृतीय विश्व युद्ध के बादल मंडराते जा रहे हैं। विश्व के अरबो रूपए प्रतिवर्ष शस्त्र निर्माण के लिए खर्च हो रहे हैं। ऐसी स्थिति मे समता दर्शन का प्रथम चरण समता सिद्धान्त दर्शन भी अपना लिया जाय तो विश्व में शान्ति का प्रसार हो सकता है। यदि **''जीयो और जीने दो''** इतनी सी बात भी मान ली जाए तो सारे सघर्ष समाप्त हो जाते हैं।

जैन संन्यास का क्षेत्र : आचार्य नानेश ने अपने आचार्यत्व काल मे सैकडो भाई-बहनो को जैन संन्यास देकर आध्यात्मिक क्षेत्र को प्रगतिशील बनाया है। एक साथ पाच, सात, नौ, बारह, पन्द्रह, इक्कीस, पच्चीस दीक्षाए भी उनकी निश्रा मे हुई। रतलाम मे लाखो जनमैदिनी के बीच एक साथ २५ भव्यात्माओ को दीक्षा प्रदान की।

समीक्षण ध्यान : आज का मानव मानसिक तनाव से अधिक ग्रस्त है। अधिकाश शारीरिक रोग भी इसी की उपज है। कुछ तनाव तो इन्सान आने वाली आपत्तियो की सम्भावनाओ से पाल लेता है। कुछ समस्याएं ऐसी आती है, जो यथोचित मार्गदर्शन के अभाव मे उसके मन को कुठित बना देती है अनके कारणो से उत्पन्न तनाव के शमन को वैचारिक सशोधन के लिए आपने समीक्षण ध्यान की आगम सम्मत अलौकिक ध्यान विधि का सूत्रपात किया, जिसके अनेक शिविर लग चुके है।

समर्थ साहित्यकार : आचार्यश्री ने साधना की गहराइयो के निमित्त विचारो से साहित्य जगत को भी समृद्ध किया। इन्सान की मानसिक ग्रथियाँ है-क्रोध, अहकार, छल, लोभ, मोह, मान, माया आदि। इन ग्रन्थियो का विमोचन कैसे हो इसके लिए क्रोध समीक्षण, मान समीक्षण, माया समीक्षण, लोभ समीक्षण नामक साहित्य उनकी अप्रतिम देन है। अन्तर जीवन का शोधन करने के लिए आत्म-समीक्षण नामक अतिविशिष्ठ ग्रन्थ की रचना भी की। समता दर्शन और व्यवहार, ऐसे जीएं, पर्दे के उस पार, समीक्षण धारा, समीक्षण ध्यान, मनोविज्ञान आदि अनेकानेकग्रथ भी आचार्य प्रणीत है।

बेमाप पद यात्राएं : गत सत्तावन वर्ष मे आचार्य नानेश ने हजारो किलोमीटर की पद यात्राए की। आचार्य आधुनिक विचारो के मार्ग दृष्टा होने के बावजूद भी सैद्धान्तिक पक्ष के प्रतिपूर्णत: सचेष्ट सुदृढ एव समर्पित थे। यही कारण है कि प्रचार-प्रसार के नाम पर मर्यादाओ से हटना उन्हे कतई मन्जूर नहीं था। इसीलिए जैन धर्म की विशुद्ध क्रिया-नगे पैर, नगे सिर, श्वेत परिधान मे रहना, रुपया पेसा नही रखना, जिस गॉव मे जाए उस गॉव के ही शाकाहारी घरो से भोजन लेना, सूर्यास्त के बाद पानी भी नहीं पीना, सूर्यास्त के बाद सन्तो के आवास पर छोटी से छोटी बहिन का एव सतियो के आवास पर छोटे से छोटे भाई को भी नही आने देना आदि नियमो को दृढता के साथ पालन वे करते और करवाते थे। राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, पजाब, हरियाणा, उड़ीसा आदि प्रान्तो मे विचरण कर उन्होने हजारो लाखो व्यक्तियो को सस्कारित किया था।

अनेकता के बीच एकता हो : जैन समाज भगवान् महावीर के नाम से एक होकर भी अनेक पथ सम्प्रदायो मे विभक्त है। कुछ पूर्वाग्रह के सवत्सरी पर्व अलग-अलग मनाया जाता है। उसे एक करने के लिए नानेश ने उद्बोधन दिया था कि जैन समाज मिलकर जो दिन तय करे। मै उस दिन सवत्सरी मनाने को तैयार हूँ। उन्होने अपने विचारो को साकार करने के लिए अपनी परम्परागत तिथि का अनेक बार परिवर्तन भी किया है। एक जन सम्प्रदाय विशेष के आचार्य होकर भी उनके विचार सम्प्रदाय से उपर उठकर सम्पूर्ण प्राणी जगत के लिए कल्याणकारी सिद्ध हुए है। इसलिए वे किसी भी वर्ग विशेष से न जुडकर सभी वर्गों के मानवो के साथ समान रूप से व्यवहार करते थे।

ऐसी दिव्य विभूति को मेरा शत्-शत् नमन।

हुकम संघ की दिव्य ज्योति

✍ **चैनमल पामेचा**, पूर्व महामंत्री

समता विभूति आचार्य पूज्य श्री नानालाल महाराज जी सा. का नाम जैन समुदाय के उन आचार्यो की कोटि मे लिया जाता है जिन्होने लोकैषणा से दूर रहते हुए स्वय और ओरो के कल्याण का महत्त्वपूर्ण कार्य किया। जैन समाज उनके प्रति श्रद्धानत है। आचार्य नानालाल जी म सा का जन्म आज से ७८ वर्ष वर्ष पूर्व चित्तौडगढ जिलान्तर्गत दांता गाँव के पोखरना परिवार मे हुआ। उनके पिता का नाम मोडीलाल और माता का नाम श्रृंगार बाई था। युवावस्था मे ही जैन योग की साधना मे लगने के उद्देश्य से उन्होने शान्त क्रांन्ति के आचार्य गणेशलाल जी महाराज के पास १९ वर्ष की उम्र मे आज से ५९ वर्ष पूर्व जैन संन्यास ग्रहण कर लिया। लगातार २३ वर्ष तक गुरु की उत्कृष्ट सेवा साधना के प्रसाद स्वरूप आज से ३६ वर्ष पूर्व माघ कृष्ण द्वितीया को उन्होने आचार्य पद प्राप्त किया।

समता दर्शन : आचार्य नानेश ने व्यक्ति से लेकर विश्व तक शान्ति का प्रसार करने के लिए समता दर्शन का प्रवर्तन किया। जिस विषमता के वातावरण मे इन्सान जी रहा है, उसमे स्वार्थ की भावना गहराती जा रही है। विभिन्न देशो का भी यही हाल है। तृतीय विश्व युद्ध के बादल मंडराते जा रहे हैं। विश्व के अरबो रूपए प्रतिवर्ष शस्त्र निर्माण के लिए खर्च हो रहे हैं। ऐसी स्थिति मे समता दर्शन का प्रथम चरण समता सिद्धान्त दर्शन भी अपना लिया जाय तो विश्व मे शान्ति का प्रसार हो सकता है। यदि **"जीयो और जीने दो"** इतनी सी बात भी मान ली जाए तो सारे सघर्ष समाप्त हो जाते हैं।

जैन संन्यास का क्षेत्र : आचार्य नानेश ने अपने आचार्यत्व काल मे सैकडो भाई-बहनो को जैन संन्यास देकर आध्यात्मिक क्षेत्र को प्रगतिशील बनाया है। एक साथ पाच, सात, नौ, बारह, पन्द्रह, इक्कीस, पच्चीस दीक्षाए भी उनकी निश्रा मे हुई। रतलाम मे लाखो जनमैदिनी के बीच एक साथ २५ भव्यात्माओ को दीक्षा प्रदान की।

समीक्षण ध्यान : आज का मानव मानसिक तनाव से अधिक ग्रस्त है। अधिकाश शारीरिक रोग भी इसी की उपज है। कुछ तनाव तो इन्सान आने वाली आपत्तियो की सम्भावनाओ से पाल लेता है। कुछ समस्याए ऐसी आती है, जो यथोचित मार्गदर्शन के अभाव मे उसके मन को कुठित बना देती है अनके कारणो से उत्पन्न तनाव के शमन को वैचारिक सशोधन के लिए आपने समीक्षण ध्यान की आगम सम्मत अलौकिक ध्यान विधि का सूत्रपात किया, जिसके अनेक शिविर लग चुके है।

समर्थ साहित्यकार : आचार्यश्री ने साधना की गहराइयों के निमित्त विचारो से साहित्य जगत को भी समृद्ध किया। इन्सान की मानसिक ग्रथियाँ है-क्रोध, अहकार, छल, लोभ, मोह, मान, माया आदि। इन ग्रन्थियो का विमोचन कैसे हो इसके लिए क्रोध समीक्षण, मान समीक्षण, माया समीक्षण, लोभ समीक्षण नामक साहित्य उनकी अप्रतिम देन है। अन्तर जीवन का शोधन करने के लिए आत्म-समीक्षण नामक अतिविशिष्ट ग्रन्थ की रचना भी की। समता दर्शन और व्यवहार, ऐसे जीएं, पर्दे के उस पार, समीक्षण धारा, समीक्षण ध्यान, मनोविज्ञान आदि अनेकानेकग्रथ भी आचार्य प्रणीत है।

बेमाप पद यात्राए : गत सत्तावन वर्ष मे आचार्य नानेश ने हजारो किलोमीटर की पद यात्राए की। आचार्य आधुनिक विचारो के मार्ग दृष्टा होने के बावजूद भी सेद्धान्तिक पक्ष के प्रतिपूर्णत: सचेष्ट सुदृढ एव समर्पित थे। यही कारण है कि प्रचार-प्रसार के नाम पर मर्यादाओ से हटना उन्हे कतई मन्जूर नही था। इसीलिए जेन धर्म की विशुद्ध क्रिया-नगे पैर, नगे सिर, श्वेत परिधान मे रहना, रुपया पैसा नहीं रखना, जिस गाँव मे जाएं उस गाँव के ही शाकाहारी घरो से भोजन लेना, सूर्यास्त के बाद पानी भी नही पीना, सूर्यास्त के बाद सन्तो के आवास पर छोटी से छोटी बहिन का एव सतियो के आवास पर छोटे से छोटे भाई को भी नहीं आने देना आदि नियमो को दृढता के साथ पालन वे करते और करवाते थे। राजस्थान, मध्यप्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, पजाब, हरियाणा, उड़ीसा आदि प्रान्तो मे विचरण कर उन्होने हजारो लाखो व्यक्तियो को सस्कारित किया था।

अनेकता के बीच एकता हो : जैन समाज भगवान् महावीर के नाम से एक होकर भी अनेक पथ सम्प्रदायो मे विभक्त है। कुछ पूर्वाग्रह के सवत्सरी पर्व अलग-अलग मनाया जाता है। उसे एक करने के लिए नानेश ने उद्बोधन दिया था कि जैन समाज मिलकर जो दिन तय करे। म उस दिन सवत्सरी मनाने को तयार हूँ। उन्होने अपने विचारो को साकार करने के लिए अपनी परम्परागत तिथि का अनेक बार परिवर्तन भी किया है। एक जन सम्प्रदाय विशेष के आचार्य होकर भी उनके विचार सम्प्रदाय से उपर उठकर सम्पूर्ण प्राणी जगत के लिए कल्याणकारी सिद्ध हुए है। इसलिए वे किसी भी वर्ग विशेष से न जुडकर सभी वर्गों के मानवो के साथ समान रूप से व्यवहार करते थे।

ऐसी दिव्य विभूति को मेरा शत्-शत् नमन।

सरलता की मूर्ति-अनन्य श्रद्धा के केन्द्र : आचार्य श्री नानेश

✍ आनन्दीलाल संचेती
(व मत्री) श्री अ भा सा जैन श्रावक सघ

परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालाल जी म सा., श्री हुक्मीचन्द जी म सा की सम्प्रदाय के आचार्य हुए जिनका सान्निध्य हमने लम्बे अन्तराल तक पाया। उनकी मन लुभावनी सौम्यता की छवि दिल मे सदैव बनी रही और रहेगी। सरलता उनके जीवन मे इतनी थी कि यदि कोई पूछे तो समता विभूति जैनाचार्य श्री नानेश का जीवन इसका जीता जागता उदाहरण है। जैसा दिल मे वैसा ही बाहर, जैसी कथनी वैसी ही करनी। ऐसे दिव्य महापुरुष विरले ही होते है जिन्हे आचार्य पद पर विभूषित होने के बाद भी अपने पद का रच मात्र भी गर्व नही। यही उनकी सरलता भी।

आप श्री ने मेवाड अंचल की वीर भूमि चित्तौडगढ जिले के छोटे से ग्राम दाता मे खेलते कूदते खुले वातावरण मे अपना प्रारम्भिक जीवन बिताया। जीवन को परिवर्तन के पथ पर भौतिकता की चकाचौंध से हट कर आध्यात्मिकता के मार्ग पर वीतरागता की उपासना मे जिस सरलता से आपने मोड दिया, समर्पित कर दिया वह अभिनन्दनीय है। मै पूज्य आचार्य के सम्पर्क मे आया तो मैंने पाया कि ये ही मेरे अनन्य श्रद्धा के केन्द्र है, जिन्होंने प्रथम सम्पर्क मे ही साधुता के मर्म को पहिचान कर उसे आत्मसात करने की अद्‌भुत क्षमता के प्रदर्शन से समाज ने आप श्री को पहचान लिया। आप श्री ने अपने आपको पूज्य गणेशाचार्य श्री के चरणो में इस तरह से समर्पित किया कि गुरु शिष्य एक प्राण दो देह हो गए। आप श्री ने अपने गुरु के विचारो को समझकर स्वय ही तदनुरूप आचरण हेतु सर्वतोभावेन समर्पित कर दिया। पूज्य गणेशाचार्य ने आपकी साधना तथा आचार सहिता पहचान कर अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया। इस गुरुत्तर दायित्व को धारण करने पर भी आपकी सरलता और निरभिमानता यथावत् रही।

ऐसे महान् यशस्वी आचार्य के महाप्रयाण से समाज की महान् क्षति हुई है। पूज्य आचार्य की आत्मा शीघ्र मोक्षगामी बने, इसी के साथ श्रद्धा सुमन अर्पित है।

> बुद्धि की मलिनता को हटाकर यदि उसे विमल बनाना है तो मोह का त्याग करना होगा और तभी आध्यात्मिक ज्ञान एव सत्य का मार्ग खुलेगा।
>
> -आचार्य श्री नानेश

नाना गुरुवर ज्योतिर्मान

✍ ज्ञानचन्द ढेडिया, ब्यावर

ओ प्राणो के आधार, समता जीवन दातार,
वन्दन अभिनन्दन है, दुनिया के तारणहार
मगलमय हो तेरा दर्शन है
मगलमय तेरा सुमिरन है
मंगलमय तेरा चमन है,
मगलमय तेरा अर्चन है

हे गुरुवर!

आप हमे जगाने द्वारा पर दस्तक देते थे, पर हम ऐसे अभागे थे कि चद्दर तान कर सोते थे।

हे पूज्यवर!

अज्ञान अन्धकार को मिटाने मे समर्थ ऐसा आपकी साधना का प्रकाश था, पर हम प्रमादी आखे बन्द कर बैठे थे।

हे महाविभूति!

वीतरागता की राह पर चलाने मे सक्षम ऐसी कृपा प्रसादी बरसाते थे आप, पर हम अज्ञ राग के दलदल मे

हे महानिर्ग्रन्थ!

होता था आपकी शक्ति का एहसास कदम-कदम पर, पर हम जडमति अपनी समझ को ताक पर रख कर भटक रहे थे।

हे अध्यात्म योगी!

विषमता से मुक्त कराने वाली समता की पीयूष धाराये प्रवाहित होती थी, पर हम नादान ममता के कारागृह बनाने मे व्यस्त थे।

हे चारित्र चक्रवर्ती!

परम शाति प्रदायक आपकी समीक्षण साधना की सरिता गतिमान थी, पर हम किनारे पर मिट्टी के घरोदे बनाने मे बेभान थे।

हे दिव्य दिवाकर!

अब तुम्ही बताओ-

जीवन जागरण हो तो कैसे हो?

जीवन प्रकाशित हो तो कैसे हो?

वीतरागता की राह पर गति हो तो कैसे हो?

शक्ति का वरदान प्राप्त करे तो कैसे करे?

समता का रसपान करे तो कैसे करे? परम शाति का वरण करे तो कैसे करे?

बडा मुश्किल है, फिर भी हम निराश नही। क्योंकि आप दीप थे, आपकी लौ से शाति, प्रेम, विजय आदि अनेको दीप जले है। उन सभी दीप की लौ मे आपका ही प्रकाश है वही प्रकाश हमारा आधार है, सहारा है, प्रेरणा है। ❖

जैन जगत् के आलोकमान भास्कर आचार्य नानालाल जी म.सा.

✍ सुमति कुमार जैन,
अध्यक्ष
श्री व. श्वे स्था जैन श्रावक संघ, अलवर

कठोर संयम-साधना, शुद्ध सात्विक साधु मर्यादा, विशिष्ट ज्ञान-ध्यान-आराधना के लिए विख्यात, सम्यग् दर्शन, ज्ञान और चारित्र रूप रत्न त्रय की आराधना मे जीवनपर्यन्त समाधि भाव से लीन रहने वाले समुन्नत ललाट, तपःतेज मुख-मण्डल, समता विभूति, समीक्षण ध्यान योगी, जिनशासन प्रद्योतक, धर्मपाल प्रतिबोधक शिरोमणी आचार्य श्री नानालाल जी म.सा एक देदीप्यमान श्रमण सूर्य थे, जिनके बारे मे मै तो यह कहता हूं कि थे नही अपितु है, चाहे आज दैहिक रूप से वे हमारे समक्ष नही है किन्तु हम लोगों को उनकी अजर-अमरता का बोध सदैव बना रहेगा। यदि उनके जीवन वृत्त के विशेषणो की व्याख्याओं से स्मरण करे तो जीवन वृत अनावृत हो जाता है। आचार्यश्री इस युग के आध्यात्मिक जगत् की एक विरल विभूति के रूप मे सदा जाने जाते रहे थे और रहेगे। आचार्यश्री ने भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित तृतीय मनोरथ को अपना कर महान् निर्जरा, महापर्यवसान कर जैन समाज मे ही नही अपितु मानव समाज मे एक अनुकरणीय सदैव सर्वदा स्मरणीय आदर्श प्रस्तुत कर अपनी गुणग्राहिता, शान्तिप्रियता, सिद्धांतवादिता, एकान्तरमणता, स्वाध्यायशीलता, चारित्रिक उत्साहप्रदता आदि लक्षाधिक गुण हम सभी के सामने प्रस्तुत किये है अर्थात् जब सूर्य का प्रभात काल था तब उन्होने रात्रि के अंधकार का सफाया किया और कमल राशि को खिलाया। तेजस का वह प्रसार हुआ कि चन्द्र नक्षत्र सब फीके पड़ गये। मध्यान्ह काल मे अपनी किरणों से नदियों के जल को पीकर सुखाया वहीं सूर्य जब सध्या काल मे अस्ताचल के शिखर पर उतर गया हम सब शोकमग्न हो गए।

अपनी आन-बान के धनी ने दाताग्राम मे श्रृंगारबाई की कुक्षी से मोडीराम जी के परिवार मे दीपक बन कर पोखरना परिवार को गौरवान्वित किया। सांसारिक एव भौतिक सुविधाओ को त्याग कर पंचमहाव्रत धारी, त्यागी, श्रमण बन स्व-पर कल्याण की कामना को अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य बनाया। जैन जगत् के दिव्य ज्योर्तिधर के रूप मे महान् सितारा बन आज पूरे देश मे चर्चित, वर्णित, प्रकाशक बनें। नैतिकता, सामाजिक कर्त्तव्य एवं मानवीय जीवन की सार्थकता व महत्तता विषयक पर विविध आयामो से गंभीर चिन्तन किया। जन-जन के प्रेरणा स्त्रोत बने, ज्ञान गरिमा के अद्भुत, अमृत सरिता मे स्वय स्नान कर सभी को वास्तविक जीवन का लक्ष्य बताया। ज्ञानाभ्यास मे लीन होते हुए जैनागमो के साथ-साथ दर्शन, तर्कशास्त्र का अध्ययन ही नही बल्कि उन्हे आत्मसात किया। निर्मल, सरल व गंभीरता के साथ दृढता से अपने आपको समर्पित किया। जन जागृति, बिना जात-पात के हर कोई को व्यसन मुक्त क्रांति का सूत्रपात कर सुसंस्कारों से ओतप्रोत कर अपनी अलग विशेष पहचान बनाई। जैसे गन्ने को जिधर से भी चखें सर्वत्र मिठास ही मिठास है, सूर्य की प्रत्येक किरण तमःनाशक है, पानी की प्रत्येक बूंद प्यास बुझाने मे सक्षम है इसी प्रकार आचार्य भगवन्त के पावन जीवन का एक-एक क्षण अज्ञानांधकार में भटकने वाले मानव समाज के लिए प्रकाश स्तम्भ बना। वाणी मे ओज, हृदय मे पवित्रता एवं आचरण मे उत्कर्ष के साथ-साथ आपका बाह्य जीवन नयनाभिराम था उससे भी अनेक गुणा बढ कर आपके अन्तर्जीवन की सौरभ थी। जीवन मे

सागर सी गहराई, पर्वत सी ऊचाई, चन्द्र सी शीतलता, सूर्य सी तेजस्विता, धर्म की महाप्राण सरलता, सरसता आदि अनेको गुणों से सुशोभित रहा।

आचार्य नानेश एक महान् स्तम्भ के रूप मे जन मेदिनी पर छाये। सैकडो नर-नारियो को संयम बोध करा कर जीवन की वास्तविक स्थिति-परिस्थिति पर परिचित कराते हुए सयम उपदेश पाठ देकर मुक्ति के मार्ग की ओर अग्रसर किया। हजारो लाखो की संख्या मे जन मानस को प्रतिबोध देकर धर्मपाल बनाया।

जिस प्रकार एक महावृक्ष महावात के योग से गिर जाये उस समय अशरण बेचारे पक्षी गण क्रन्दन करते है यही स्थिति हम सभी की, जैन शासन और संघ की है। सघ के छत्रपति, जैन जगत् के आलोकमान भास्कर, मा भारती के अनुपम लाल आचार्य भगवन्त को आज हम हमारे बीच न देखकर, न पाकर हमारा हृदय उद्वेलित हुए बिना नहीं रहता। सहज ही राष्ट्रकवि श्री मैथलीशरण गुप्त के विचारों की ओर ध्यान जाता है-

जो इन्द्रियों को जीत कर, धर्माचरण में लीन है,
उनके मरण का सोच क्या? वो मुक्त बंधन हीन है।
जो धर्म पालन में विमुख, जिसका विषय ही भोग्य है,
संसार में मरना उसी का, सोचने के योग्य है।

ऐसे महापुरुष न मालूम कितनी शताब्दियो मे जाकर मानवता के हाथ आते है। सच ही कहा गया है-

हजारों सालों से नर्गिस, अपनी बेनूरी पर रोती है,
बड़ी मुश्किल से होता है, चमन में दीदावर पैदा।।

आप मे अध्यात्म योग की चरम परिणति। दिव्य शान्ति।। थी। जीवन के प्रारम्भ से अंत तक तेजस्वी व्यक्तित्व को जिया। ऐसे महान् दिव्य पुरुष की सर्व विशेषताओ को शब्दश: प्रकट करने की ताकत ही नही। दिव्य दिवाकर ने अपना दिव्य ज्ञानालोक वसुधा तल पर विकीर्ण किया, तप त्याग की सौरभ देकर सभी का पथ प्रदर्शक बन जन-जन का मसीहा बना। आज मुझे वह दिन भी स्मरण आ रहा है जब अलवर मे चातुर्मास हेतु पधारी हुई महासती सूर्यकाता जी ठाणा-6 ने आपके स्मृति दिवस पर एक प्रश्नमच प्रतियोगिता का आयोजन करवाया और आचार्य भगवन्त के गुणों की चर्चा करते हुए प्रभाव शैली मे अपने प्रवचन दिए। प्रवचनो से प्रभावित हो कोई संशय नहीं रहा कि आप अपने समय के अद्‌भुत, अनोखे, अनूठे आचार्य प्रवर थे।

धन्य है ऐसे आराध्य आचार्य देव, धन्य है उनकी साधना। ऐसे समता विभूति के चरण कमलो में सहस्त्र बार वन्दना।

आचार्य नानेश के विचारों को गुंफित करने का मुझे सुयोग मिला

✍ शांतिचन्द्र मेहता, चित्तौड़गढ़

यह एक तथ्य है कि आचार्य श्री नानेश का जितना भी साहित्य प्रकाशित हुआ है उसमे से अधिकांश पर व्याख्याता के रूप मे उनके नाम के साथ मेरा नाम सम्पादक के रूप मे जुडा हुआ है और इसे मै अपने लिए गौरवपूर्ण स्थिति मानता हूं। उनके विचारो को गुफित करने का मुझे सुयोग मिला और इस प्रकार उनकी आत्मीय निकटता मे दीर्घकाल तक रहते हुए उनके गुण सपन्न जीवन के प्रति मै सदा श्रद्धावनत् रहा हूं।

आचार्यश्री के नाम के साथ मेरे नाम का जुडाव शुरू हुआ 1975 मे उनके जयपुर चातुर्मास के प्रवचनो के मेरे द्वारा सम्पादन के साथ, जो पावस प्रवचन के नाम से पांच भागो मे प्रकाशित हुए। यह सम्पादन का क्रम चलता रहा और फिर मेरे द्वारा सम्पादित उनके कई प्रवचन संकलन प्रकाशित हुए, जिनमे **'प्रवचन पीयूष'** (देशनोक चातुर्मास), **'अमृत सरोवर'**, **'जीवन और धर्म'**, **'मगल वाणी'**, **'जीवन धर्म दर्शन'** (गंगाशहर-भीनासर), **'सर्वमंगल सर्वदा'** (जलगाव-महाराष्ट्र) आदि उल्लेखनीय है। इन्दौर चातुर्मास मे नया प्रयोग हुआ कि पूर्व निर्धारित विषयो (मुख्यत: सामाजिक) पर प्रवचन हुए तथा उनका मेरे द्वारा सम्पादित संकलन **'संस्कार क्रांति'** के नाम से निकला, जो बहुत लोकप्रिय रहा। नोखा चातुर्मास के सम्पादित प्रवचनो का प्रकाशन **'अपने को समझें'** नाम से दो भागो मे 1997 मे ही हुआ है।

इन प्रवचनो मे आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक एव अन्यान्य क्षेत्रो के सम्बन्ध मे आचार्यश्री के जो विचार सामने आये है उनमे परम्परा तथा नवीनता का सुंदर समन्वय हुआ है। विविध रुचि वाले श्रोताओ के बीच एक विषय पर व्याख्यान देना तथा सबको प्रभावित कर देना अपने आप मे एक प्रभावपूर्ण कला है और आचार्यश्री का यह प्रभाव विषय विस्तार मे ही नहीं, क्षेत्र विस्तार मे भी पूर्ण ओज के साथ अभिव्यक्त हुआ है और उन प्राभाविक विचारो को अपने सम्पादन मे गुफित करते हुए मुझे आत्मिक आनन्द की अनुभूति हुई है।

मैने अपने सम्पादन मे आचार्य श्री की सैद्धान्तिक वैचारिकता को भी संजोया है, जो प्रवचनाधारित नही है। इस दिशा मे 1978 मे एक ग्रन्थ **'समता : दर्शन और व्यवहार'** मेरे सम्पादन मे प्रकाशित हुआ, जिसके आधार पर देश एवं समाज मे समता भावना का विपुल प्रसार ही नही हुआ, बल्कि समता का विचार तो आचार्यश्री के हार्द के रूप मे प्रतिष्ठित हो गया कि वे समता दर्शन के व्याख्याता के नाम से प्रख्यात हुए। इस ग्रन्थ का अग्रेजी भाषा मे भी अनुवाद हुआ है।

अभी 1995 मे आचार्यश्री द्वारा व्याख्यायित तथा मेरे द्वारा सम्पादित 500 पृष्ठो का एक बृहद ग्रन्थ **'आत्म समीक्षण'** भी प्रकाशित हुआ है जो उनके बहुआयामी सैद्धान्तिक विचारो को सहजता से अपने मे समेटे हुए है। उत्तम पुरुष मे लिखित यह ग्रन्थ आत्मालोचना के रूप मे इतना भाव-प्रवण है कि पाठक अपनी आन्तरिकता मे प्रविष्ट होने की चेष्टा अवश्य करता है।

आचार्यश्री द्वारा अपने प्रवचनो के अन्तिम भाग मे कही जाने वाली पद्यमय कथाओ के आधार पर मैने तीन उपन्यास **'कुंकुम के पगलिये'**, **'अखण्ड सौभाग्य'** एवं **'लक्ष्य वेध'** भी लिखे हे जो पाठको के बीच वहुत ही लोकप्रिय रहे हे।

मेरा यहा यह विवरण देने का अभिप्राय यही है कि मैंने आचार्यश्री के मौलिक विचारो का जो आकलन, सम्पादन एव सग्रहण किया हे उसके प्रकाश मे देश तथा समाज को जीवन के समग्र विकास का एक नया मार्ग मिलता है। जैन दर्शन मे आत्माओ की जो मोलिक समता मानी गई है, उसे ही आचार्यश्री ने वर्तमान जीवन मे अभिव्यक्त करने का हृदयग्राही उपदेश दिया हे। उनकी इसी तेजस्वी विचारधारा ने समग्र समाज मे उनके प्रति आस्था का अभिनव अनुभव प्रकट किया हे, जो उन्हे महान् आचार्य का गोरव प्रदान करता है।

आचार्यश्री नानालाल जी महाराज साहव अव देह रूप मे भले ही विद्यमान नही हे किन्तु उनकी जागृत विचारधारा मे उनकी महान् आत्मा सदेव जीवित रहेगी एव सबको समग्र जीवन विकास की प्रभावपूर्ण प्रेरणा प्रदान करती रहेगी।
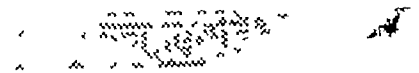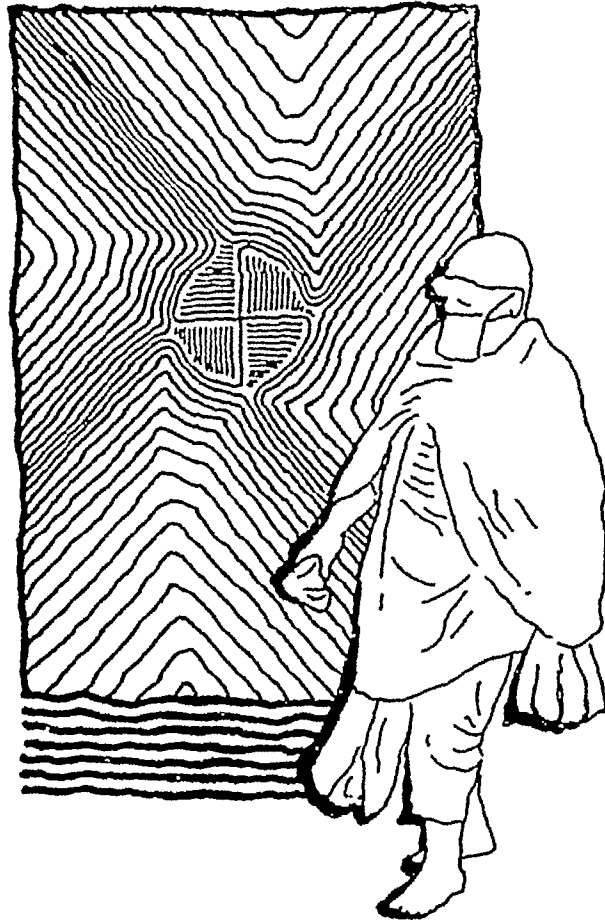
नानेश मुनि का भाग्य बड़ा देखो दो आचार्य बने

✍ एक अजैन भाई मोहनलाल जाट, आसावरा (चित्तौड़गढ़)

नानेश मुनि का भाग्य बड़ा देखो दो आचार्य बने।
एक तरुण एक युवा दोनों ही पयार्य बने।।
जिनशासन की अमर क्षितिज में देखो दो उदयमान बनें।
एक सूरज एक चन्दा तारे तो अनगिनित प्रकाशवान बने।
राग द्वेष मिटाने वाले समता को अपनाने वाले।
हुक्म संघ को चलाने वाले, क्रांति सूत्रधार मिले।
नानेश मुनि के समर शेष में देखों दो अवशेष मिले।
एक विजय-एक राम दोनों का ही एक काम व नाम मिले।
नानेश मुनि का नाम छोटा वो आत्मा, मोटा उनका सतनाम वो परमात्मा।
सतगुरु यूं फरमावें लड़ाई लड़ना सतनाम की, मत झगड़ों तुम आत्मा।।

उदाहरणार्थ-गंगा प्रसंग से-एक बार की बात है हिन्दू संस्कृति के अनुसार राजा सगर के 60 हजार पुत्र कपिल मुनि के श्राप से भस्म हो गए। क्योंकि उन पुत्रों ने ऋषि की तपस्या भंग करना चाहा तो उन्ही के वश मे राजा भागीरथ हुए तथा अपने पूर्वजो को तारने हेतु गंगा को स्वर्गलोक से मृत्युलोक मे लाने हेतु अरूढ तपस्या की तब गगा प्रसन्न होकर उन्हे कहा कि मुनिराज मेरा वेग अति तीव्र है अत: मेरा वेग कौन रोक पायेगा तब शिवजी ने गंगा का वेग अपनी जटा मे रोका तथा हरिद्वार, ऋषिकेश से आगे गंगोत्री नामक स्थान पर गंगा पृथ्वी पर उतर कर भागीरथ के पूर्वजो का उद्धार करने व मृत्युलोक का कल्याण करने बह चली।

हरिद्वार मे भारत माता के मंदिर के पास सप्त ऋषि तपस्या मे लीन थे। तब गंगा ने सोचा किसके पास पहले जाऊं तथा किसके पास बाद मे कहीं ऋषि मुझे श्राप नही दे दे। अत: गंगा वहां पर अपनी सात धारा बना कर सप्त ऋषि के पास एक साथ बह कर चली जिससे ऋषि भी प्रसन्न हुए व गंगा सप्त सरोवर से जानी गयी।

अब यह सोचना है कि नानेश मुनि का ज्ञान का वेग कोई गंगा के वेग से कम नहीं है। अत: एक आचार्य के बजाय दो आचार्य बने अब कौन आचार्य कितना गंगा का पानी (आचार्य का ज्ञानवेग) समाने की क्षमता रखता है और ज्ञान गंगा को कितनी फैलाता है यह समय बताएगा। एक आचार्य के पास तो मूलधन प्राप्त है तथा एक आचार्य के पास मूलधन की कमी है लेकिन कौन आचार्य कितना चक्रवृद्धि ब्याज जोड कर मूलधन को बढाते है यह भी समय बताएगा।

(**नोट :** यहां जैनी भाई मूलधन एवं चक्रवृद्धि ब्याज का अर्थ भौतिक सुख या धन से नहीं लगावे बल्कि आध्यात्मिक सुख व धन से लगावे क्योंकि आपका झुकाव भौतिक धन से ज्यादा होता है)

महापुरुष फरमाते है कि-

जाके पल्ले सतनाम का धन है, वाके है सब सिद्ध, कर जोड़े ढाड़े सभी अष्ट सिद्ध नव निद्ध।
काटो जम के फन्द जह फन्दे जग फंदिया, कटे तो होई निशंक नाम खड़ग सतगुरु दियो।।

संत जीवन बहुत मुश्किल से मिलता है तथा सात द्वीप नव खण्ड व तीन लोक चवदा भवन के ऐश्वर्य को छोड कर उनसे भी बडा सुख है तो वह है सन्त जीवन। यह एक जन्म के पुण्य उदय से नहीं मिलता बल्कि सात जन्मो या यूं कहिये कई जन्मो के पुण्य उदय होने से सत जीवन मिलता है। यह कोई सहज नही मिलता, अत्यन्त दुर्लभ है। भौतिक सुखो का त्याग व आध्यात्मिक सुखो का आनद ही परमानद (सच्चा सुख) है।

करुणाकर नाना के चरणों में है अभिनन्दन

सकल कलाओं मे भी मिल कर जिसका पार नही पाया
ठहर नही पाई जिनके आगे छल प्रपच की माया

कर न सकी जिनको आकर्पित मिथ्या दम्भ की माया
जिनके त्याग विराग योग की वनी न कोई परिभाषा

लालायित है जिनके अनुयायी बनने को जड चेतन
जिनकी गाथा को दोहराते थकते कभी नर-नारी

जिनके पद चिन्हो पर चलकर विषधर पाते विश्राम
जिनके दर्शन करके शूल भी बन जाते हैं फूल

जिनके आगे ठहर न पाया गर्वान्त हो कोई नरेन्द्र
जिनके आगे नत मस्तक हो आये मानव सारे

जिनके आगे मायापति ने भी हारी हार
जिनके नाना होने से हो गया महान् देश।

✍ रतनसिंह कावड़िया, उदयपुर

एक महान् ज्योति आचार्यश्री नानेश

✍ दिनेश धींग, कानोड़

महान् आत्माओ का जीवन महान् होता है। चारित्र चिन्तामणी समता विभूति युग प्रहरी विश्रुत व्यक्तित्व के धनी प्रातः स्मरणीय मम् आराध्य देव आचार्यश्री नानेश के दिव्य और अनुपम जीवन का कैसे परिचय कराऊं, कहा मै और कहां उनकी महानता?

आचार्य भगवन् के जीवन मे एक ऐसा आकर्षण था जिससे व्यक्ति उनके पास खीचता चला आता था। विभिन्न प्रकार की तपनो से तपा एवं उलझनो मे उलझा व्यक्ति आपके चरणो मे शाति पाता था।

उनके यशस्वी जीवन को कभी भूलाया नही जा सकता। वह महान् आत्मा आज हमारे बीच नही रही लेकिन उनका दिव्य सदेश युगों-युगों तक कायम रहेगा। अब तो एकमात्र आपश्री की सत् शिक्षा ही हमारा पथ-प्रशस्त करेगी। हे आचार्य भगवन्! आप जहा पर भी है हमे वही से अदृश्य शक्ति भेजते रहे और यह मंगल कामना करते है कि आप जहा भी रहे शाश्वत शाति को प्राप्त कर अनन्त सुखो मे लीन हो जाय।

उस महान् आत्मा को धीग परिवार की ओर से श्रद्धांजलि समर्पित करते है।

शत्-शत् वन्दन नमन।

यशस्वी आचार्य

✍ भंवरलाल छगनी देवी दस्साणी, कलकत्ता

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री नानेश एक सर्वतोमुखी ख्याति प्राप्त महापुरुष थे। लघुवय मे सयम लेकर वे संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी, गुजराती आदि भाषाओ के मर्मज्ञ विद्वान् बने।

उन्होने अपनी दिव्य लेखनी से अनेक अनमोल ग्रन्थ लिखकर समाज को समर्पित किया है जो सदियो तक जन-जन का मार्ग प्रशस्त करते रहेगे। आचार्यश्री ने अपने अनुभव ज्ञान की गगा बहाई है। आचार्यश्री पारम्परिक जीवन मूल्यो के संवाहक होते हुए भी आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन-अध्यापन के पक्षधर रहे। आपकी बराबर यह भावना रही कि जैन तत्त्वो का विवेचन और परीक्षण वैज्ञानिक प्रक्रिया से हो। आचार्यश्री स्वाध्याय, ध्यान आदि पर पूरा बदल देते थे। जब भी कोई मिलता वे उनसे यही पूछते कि स्वाध्याय निरन्तर करते हो या नही। सदैव ऐसे शब्द आज हमारे लिए प्रेरणा के स्त्रोत बने है। ऐसी महान् विभूति आचार्य भगवन् के पावन दर्शन कर सेवा का लाभ हमे भी प्राप्त हुआ है।

आज आचार्यश्री का पार्थिव देह हमारे बीच नही है। समाज मे अहिंसा, सेवा, ज्ञान और क्रियाओ की जो ज्योति उन्होने प्रज्वलित की वह दिग्दिगन्त तक प्रकाशमान रहे। परम आराध्य श्री की आत्मा वीतराग मार्ग पर अग्रसर होती हुई शाश्वत शिव सुख को प्राप्त करे, यही मंगल कामना करते हुए श्रद्धा सुमन अर्पित है।

जनमानस के मोती तुम को कौन नहीं जानता

✍ सरोज सेठिया, अध्यक्ष महिला मण्डल, सूरत

हर मानव जन्मता है मरता है किन्तु मरना उसका सार्थक माना जाता है जो कुछ कर जाता है। हमारे आचार्य भगवन् ने क्या नही किया? सब कुछ किया, सब कुछ दिया, किन-किनका वर्णन करू?

फिर भी एक उदाहरण याद आता हे जो जिनशासन विभूति जी से सुना गया वह है जब स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा का स्वास्थ्य अस्वस्थ चल रहा था। आचार्यश्री चिन्तन की धारा मे विचार मग्न बने हुए थे। इस सघ का भार किस को सॉपा जाय ओर कार्य प्रणाली से विराम लेकर अपनी आत्म-समाधि मे स्थिर बन जाऊं, उस समय विभूति जी ने आचार्यश्री के मानस को परखा पूछा क्या बात है चिन्ता नही चिन्तन करना है। तब विभूति जी म सा ने कहा कि आपश्री निश्चिंत बन जाइये वर्तमान का कार्यभार पडित रत्न श्री नानालाल जी म सा को सौंप दीजिए। आचार्यश्री ने फरमाया कि नानालाल जी म सा तो बोलते कम है आदि । विभूति जी ने कहा जो व्यक्ति कम बोलता है वह कार्य करने मे समर्थ होता हे। स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा की विचारधारा मे विभूति जी का सोचना सही निकला ओर नानालाल जी म सा को इस सघ का नायक बना दिया।

नायक बनने के बाद आचार्य श्री नानालाल जी म सा ने क्या नही किया? हर शैतान को मानव, हर मानव को भगवान् बनाने का पूरा-पूरा प्रयास करते रहे। अपनी साधना के बल से हिन्दुस्तान के कोने-कोने मे धर्म ध्वजा फहराई। अजेनी को जैनी, हर व्यक्ति को अपना बना दिया। क्या-क्या वर्णन करे उस दिव्य मूर्ति का, अपनी साधनामय जीवन से साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूपी तीर्थ को आगे बढाया। अपने अतिम समय मे भी इस सघ के महास्थविर श्रमण श्रेष्ठ श्री शातिमुनि जी म सा को अपनी दिव्य दृष्टि से आलोकित कर पावन कर दिया। धन्य हुआ अपना सघ, धन्य हुआ सारा समाज, हम तो क्या श्रद्धाजलि अर्पित करे। महापुरुषो के गुणो का वर्णन करना सूर्य को दीपक दिखाना है फिर भी हमारी महिला मण्डल की तरफ से यही भावना है कि आचार्यश्री जी की आत्मा जहां भी पहुची वहा से अति शीघ्र मोक्ष का वरण करे। शाश्वत शांति को प्राप्त करे।
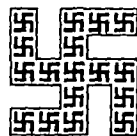
आचार्य श्री नानेश सादगी व व्यवहार कुशलता की प्रतिमूर्ति

✍ प्रवीण खमेसरा, उदयपुर

आचार्य श्री नानेश सादगी व व्यवहार कुशलता के प्रतीक थे। 35 वर्षों से आचार्य होते हुए भी नानेश की सादगी व उनकी शैली जिससे कि मैं बहुत ज्यादा प्रभावित हुआ। मेरा उनका दर्शन लाभ लेने का मौका पीपलिया कलां व उसके बाद नवरत्न कॉम्पलेक्स मे पधारने पर मिला। उसके बाद से ही दिन मे मांगलिक लेने की कोशिश करने लगे।

एक दिन हम लोग मांगलिक के समय 3 30 बजे से 5 मिनट पहले पहुचे लेकिन पता चला कि मागलिक हो चुकी है। उनके सहायक मुनि और अन्य बुजुर्ग लोग कह रहे थे कि मांगलिक तो 3 30 बजे हो चुकी है। तब लोग नही माने। यह बात आचार्य श्री ने अंदर से सुन ली व स्वयं बाहर पधार कर, जबकि उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं चल रहा था फिर मांगलिक फरमायी। यह बात आचार्य श्री की कितनी सादगी व व्यवहार कुशलता दर्शाती है। उसके बाद तो उन्होने मांगलिक फरमाने के पहले सही समय की पूछताछ भी कर लेने का जैसे कोई नियम ही बना लिया था। इतने सादगी पसन्द व व्यवहार कुशल आचार्यश्री को मेरा बार-बार वंदन। उनकी आत्मा सिद्धगति-मोक्ष प्राप्त करे, इसी शुभ भावना के साथ हार्दिक श्रद्धांजलि।

यह कैसा मानस हो रहा है कि आज कि कुत्ते और मोटर की सार-सभाल करेगे किन्तु गाय-भैस को रखने का विचार नही होता। शहरो मे बाजार के खाने-पीने पर ज्यादा निर्भर करते है। बाजार के खाने-पीने मे त्रस जीवो तक की घात का कितना प्रसग रहता है-यह श्रावको के ए सोचने की बात है।

-आचार्य श्री नानेश

एक नजर में : स्व. श्रीमद् नानेशाचार्य

चम्पालाल छल्लाणी, देशनोक

"जब स्व श्रीमद् गणेशाचार्य जी म सा को असाध्य वीमारी ने घेर लिया तब आचार्यश्री ने अपनी नजर सभी पर दौडाई, पर उन्हे कोई भी नजर नही आया। आचार्यश्री वड़े चितित हुए, क्या किया जाय? मरुधरा सिहनी महाश्रमणी रत्ना श्री नानूकवर जी म सा ने पूछा-गुरुदेवश्री! आज आप वडी चिता के सागर मे डूब रहे है, क्या बात है? श्रीमद् गणेशाचार्य श्री ने अपने मन की वात कही। तव मरुधरा सिहनी जी ने फरमाया-गुरुदेवश्री! आप क्यो चिता कर रहे है? खान मे हीरा माजूद है। कान? वे नानालालजी म सा है। गुरुदेवश्री ने फरमाया-नानालालजी एकान्त प्रिय है, किसी से वात नही करते, कैसे शासन चलायेगे? गुरदेवश्री वे कोहिनूर हीरे है, इनसे शासन दिन दूना रात चौगुना चमकेगा।

उक्त वार्तालाप महासती श्री सुलभाश्री जी म सा द्वारा 'स्मृति विशेपाक' मे रखा गया जिनसे स्पष्ट होता है कि किस प्रकार श्रीमद् गणेशाचार्यश्री ने मरुधरा सिहनी जी की वात को ध्यान मे लिया और शासन का भार आचार्य श्री नानालालजी के कंधो पर डाला।

इन्ही आचार्यश्री ने गुरुदेव गणेशाचार्य की उदयपुर मे अतिम समय तक असीम सेवा की थी।

श्रीमद् गणेशाचार्य श्री से मरुधरा सिहनी जी की सलाह पर कई सतो व श्रावको के विचार भेद उभरे, मरुधरा सिहनी जी को अनेको ने गालिया भी दी। अत मे उन्ही श्रावको ने रोते-गिडगिडाते हुए महाश्रमणी रत्नाश्री जी से क्षमायाचना की।

उन्हीं तेजोपुज महान् परम प्रतापी परम श्रद्धेय स्व श्रीमद् नानेशाचार्य श्री जी के पावन श्री चरणो मे श्रद्धा-सुमन भरी एक भाव भरी गीतिका प्रस्तुत है-

'नाना' वीतरागी पथिक, निर्मल मन मनीष।
करुणाकर करुणा करो, दो संघ को आशीष।।
संयम-पथ के सारथी, श्रमण धर्म श्रृंगार।
अष्टम-पद आचार्य वर, वन्दन सौ-सौ बार।।
प्रतिबोधक धर्मपाल के, श्रमण-संस्कृति प्राण।
संघ नायक सरदार हे! सत्-पथ का दो दान।।
स्वर्गा वर्ष ८०वें, श्रद्धा सुमन चरण अर्पण।
स्वीकारो हे महाऋषि! तुम चरणन् मम् वन्दन-वन्दन।।

हृदय की असीम आस्थाओ के साथ पुनः अति विनम्र भावो से नमन करता हुआ अपने अन्तर्मन के मनोभाव सक्षिप्त रूप से अभिव्यक्त करने का दुस्साहस कर रहा हू। भावो को रोकना मेरी प्रकृति नही, इसमे कोई त्रुटि अथवा शब्दो की न्यूनता किसी भी श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविका वर्ग को लगे तो अन्तर्मन बारम्बार क्षमाप्रार्थी हू।

सघ का विघटन होना मुझे बहुत ही दुःखद अनुभव हुआ है। कारण असहयोग, उपेक्षाए, अविश्वास,

अव्यवस्थाएं साथ ही अहम्, आग्रह एव आवेश जो भी रहे हो पर इसके कई ज्वलन्त बिन्दु प्रत्यक्षदृष्टा अथवा परोक्ष रूप मे सर्वविदित साक्षी है, लेकिन ज्ञानियो की भाषा मे-''सत्य की परख जल्दी नहीं होती, समय के साथ सत्य लोगों की समझ में आता है और अन्ततः सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम के प्रति अहोभाव रखने वाला संघ ही '**विजय**' हासिल करता है। क्योकि जिस संघ का आदर्श आचरण प्रतिकार नही, परोपकार हो। सघर्ष नहीं उत्कर्ष हो। विध्वश नही विकास हो। वही सर्वश्रेष्ठ उत्कृष्ट सघ कहलाता है। जिन्दगी की इस कठोर सच्चाई से समझौता हर इन्सान वाकिफ है फिर भी दिलो दिमाग आसानी से नही कर पाता।''

वि सं 2050 का चातुर्मास पूज्य गुरुदेव श्री नानेश का देशनोक के पुण्य प्रागण मे हुआ था। गुरुदेवश्री अस्वस्थतावश एवं विशेषकर आंखो की तकलीफ के कारण करीब 14 माह तक देशनोक श्री जैन जवाहर मण्डल मे विराजे थे। गुरुदेवश्री को डॉक्टरो ने पूर्ण विश्राम करने की सलाह दी थी। गुरुदेवश्री के विराजते मै सघ मत्री पद, श्री सोहनलाल जी लूणिया सयुक्त मंत्री पद पर एवं अध्यक्ष पद पर श्री शातिलाल जी सांड रहे। (जो वर्तमान मे सघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष है।)

गुरुदेवश्री के देशनोक विराजते युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा (इस वक्त आचार्यश्री रामलाल जी म सा) साथ ही थे। हमारा परम सौभाग्य रहा कि निकट से गुरुदेव श्री, युवाचार्यश्री की सेवा का सुअवसर प्राप्त हुआ।

चातुर्मास काल मे तप अनुष्ठान की 141 अठाइयो की कडी मे मेरे घर-परिवार मे एक साथ आठ अठाई तप हुए थे। इसके अलावा गुरुदेवश्री के 14 माह प्रवास काल में वर्षी तप, पारणे, दीक्षाएं, महाराष्ट्र भूकंप पीडितो के सहायतार्थ अर्थ सहयोग तथा संघ अधिवेशन आदि अनेक शुभ प्रवृत्तिया हुई।

'**बहता पानी निर्मला**' वाली कहावत चरितार्थ करते हुए अस्वस्थ स्थिति मे ही अपने तेजोमय आत्मबल से गुरुदेवश्री ने सह संत मंडली रासीसर की ओर एकाएक विहार कर दिया। विहार पूर्व किसी को जानकारी नही रही कि विहार बीकानेर की तरफ होगा या रासीसर की तरफ। सब देखते रह गये। रासीसर तक पहुचे ही थे कि वहा स्वास्थ्य गड़बडा गया। आंखो की तकलीफ ने उग्र रूप ले लिया। देशनोक के संरक्षक महोदय श्रीमान् दीपचद जी सा भूरा ने अति अनुग्रह पूर्वक प्रयास कर वापिस देशनोक पधारने की विनती की। आखिर गुरुदेवश्री देशनोक पधार कर कुछेक दिनो के विश्रामोपरांत बीकानेर पधारे। कारण वहा डॉक्टरो के निरीक्षण परीक्षण की सुलभता थी। उधर गुरुदेव श्री की अस्वस्थता का संवाद सुन युवाचार्यश्री जी अति शीघ्र उग्र विहार कर बीकानेर पधार गए। गुरुदेवश्री की दोनो आंखो का क्रमवार अहमदाबाद की विशेषज्ञ डॉक्टर भारती जी द्वारा 'ट्रासप्लाटेशन' हुआ। बीकानेर लम्बे अर्से तक विश्राम हेतु विराजना हुआ। बीकानेर संघ ने भी सेवा का खूब लाभ लिया।

आचार्य श्री युवाचार्य श्री के बीकानेर विराजने के दरम्यान कई कटु प्रसंग घटित हुए। संघ की सारणा-वारणा का भार युवाचार्य श्री के कंधो पर था। अनेक बिन्दुओ पर सत्य समाधान पाने हेतु पत्राचार, रूबरू डेपुटेशन के साथ बातचीत एवं हमारे (देशनोक) स्थानीय संघ अध्यक्ष महोदय को पत्र की प्रतिलिपि आदि एवं फिर बम्बोरा दीक्षा प्रसंग पर हम तीनो व्यक्ति गए तब युवाचार्यश्रीजी को एकान्त मे जानकारी दी गई लेकिन कोई सतोषजनक समाधान फलदायी सिद्ध नहीं हुआ। इन सारी बातो को विस्तृत रूप से यहां उजागर करना उचित नही समझता। फिर गुरुदेवश्री की रुग्णावस्था मे उन तक सारी बाते पहुंचानी भी उचित नहीं समझी। फिर भी एक पत्र विश्वस्त श्रावक-बन्धु के मार्फत बद लिफाफे मे गुरुदेवश्री जी के हाथो मे गंगाशहर में बडा साहस करके थमाया। यह तमाम प्रयास मात्र सघ हित की दृष्टि से किया गया। मालूम होता है कि गुरुदेवश्री जी वास्तविकता से अनभिज्ञ रहे हो? वरना गुरुदेवश्री जी

जैसे प्रबुद्ध पारखी इतने चुप क्यों रहते? पर हां, कथित श्रद्धा और संघ संगठन के नाम पर अनेको का सिंहावलोकन व कटु-सदेश प्रसारित करने की कमी नही रखी। यह सब आंतरिक कमजोरी का द्योतक नही तो और क्या? प्रबुद्धो के लिए गहन चितन का विषय है।

देखते-देखते सक्षम ओर अक्षम के परिसवाद मे सघ के दो फाड हो गए। जैसा कि स्वप्न मे भी किसी ने नही सोचा होगा। **'घर हाण लोक हसाई'** वाली कहावत चरितार्थ हुई। अवसरवादी कथित भक्तों ने भी अग्नि मे घी डालने मे कोई कोर-कसर नही छोडी। उन्माद भरे आक्रोशी स्वर सुनकर प्रत्येक का खिन्न होना स्वाभाविक था। अत॰ शब्द सकारात्मक पर तटस्थ दृष्टि से विचार किया जाता तो ऐसा प्रसग होने की सभावना रहती ही नही। आगे चलकर सत-सती ने समूह का रूप ले लिया और सघ से वहिर्गमन कर गए।

लेकिन जो हुआ वह किसी शुभ सृजन के लिए अच्छा ही हुआ। ऐसा मानकर अब हमे सतोष करना चाहिए और सदैव प्रयास यही हो कि वातावरण शाति प्रेम का आगे कैसे बढे। श्रद्धा और सत्य इन दो पाटो मे सर्वप्रथम सत्य-तथ्य परखने की प्रमुखता रहनी चाहिए तभी हुक्म सघ का **'विजय'** सूरज चमकेगा। आचार्य प्रवर श्री 'विजयेश' की सटीक उद्घोषणा सुनने मे आई कि 'दूसरो को वदलना और स्वय को न बदलना राजनीति है, धर्मनीति नही।' ऐसा ही सटीक मुक्तक भाई दिलीप जी धींग का अच्छा लगा-

देखते हे, सुनते हें, मगर बोलते नहीं
सूंघते हे, छूते हे, मगर खाते नहीं।
अजीब-सी आदतें है लोगों की
चाहते हें अंगूर, मगर बोते नहीं।।

और आगे किसी ने कहा है-

स्वर्ण का घड़ा नहीं,
मिट्टी का घड़ा शीतल जल देता है।
धनवान व सौन्दर्यवान ही नहीं
गुणी व्यक्ति ही 'विजय' की प्रेरणा देता है।

इन्हीं मगल मनीषा एवं भाव श्रद्धा-सुमनो के साथ समता विभूति स्व श्रीमद् नानेशाचार्य श्री के पावन श्री चरणो मे शत्-शत् वदन। शत्-शत् अभिनन्दन।।

अपना भी होवे भला, भला सभी का होय।
अपना भी मंगल सधे, सबका मंगल होय।।

जिन शासन की दिव्य ज्योति- आचार्य नानेश

✍ सुगनचंद बरलोटा, सूरत

परम श्रद्धेय, आगम पुरुष, चरित्र चुडामणी, समता दर्शन के प्रणेता, जिन शासन प्रद्योतक, समीक्षण ध्यान योगी, जिन नही पर जिन सरीखे, धर्मपाल प्रतिबोधक,सघ नायक, जन-जन की आस्था के केन्द्र, आदि अलकारों से आपको विभूषित किया गया एव पूजा जाता है। इसका मुख्य कारण आप हर तरह से सर्वगुण सम्पन्न थे अर्थात् जो गुण एक आचार्य मे होने चाहिए। वे सब जैसे यथा नाम तथा गुण, जैसी कथनी वैसी करनी, स्पष्ट वादिता, दृढता आदि आप मे थे।

सरलता, नम्रता, निर्मलता, आपके जीवन की अमूल्य निधी थी। आप सरल स्वभावी, मृदुभाषी थे। आलस्य व प्रमाद को कभी आपने पास नही आने दिया। आपका हृदय गगा जैसा पवित्र तथा निर्मल एव जीवन कमल जैसी महक से परिपूर्ण था।

इस सृष्टि मे कई तरह के पुष्प खिलते हैं। कुछ सौरभ फैलाते है तो कुछ सौरभ फैलाने के पूर्व ही मिट्टी मे मिल जाते है लेकिन कुछ सुगन्ध से वायुमण्डल के कण-कण को सुवासित कर देते है। वैसे ही कुछ प्राणी इस संसार मे जन्म लेकर अपने जीवन को विषय कषायो मे बर्बाद कर यहाँ से विदा हो जाते है तो कुछ जीवन को विषय कषायो से दूर रख कर सद्गुणो की सुवास से सुवासित करते हुए इस ससार रूपी सागर मे मनुष्यो को अपनी सौरभ लुटाते हुए अनेको के मन एव आत्मा को सुशोभित कर देते है।

किसी ने सच ही कहा है-

''जग में जीवन श्रेष्ठ वही, जो फूलों सा मुस्काता है''
अपने गुण सौरभ से, जग के कण-कण को महकाता है।

ऐसे ही जीवन से युक्त थे आचार्य प्रवर नानेश जिन्होने अपने आकर्षक व्यक्तित्व से अनेकानेक आत्माओ को सौरम्य बना दिया।

यह सच है कि जिन शासन प्रद्योतक, समता दर्शन के प्रणेता, धर्मपाल प्रतिबोधक, आचार्य प्रवर आज हमारे समक्ष नहीं है किन्तु उनका चमकता हुआ चेहरा सूर्य के समान तेजस्वी एव चन्द्रमा के समान निर्मल व मधुर मुस्कान हम सब के कानो मे गुजायमान हो रही है। जिन्होने सभी को वात्सल्य भावना से, अपने ज्ञान से, सबके हृदय को आलोकित किया तथा सयम के कल्पतरुओ को सिचन कर पल्लवित किया। आज उन्ही की साक्षात् चारित्रिक आत्माएँ जिन शासन की प्रभावना कर रही है एव गौरव बढा रही है।

जिस प्रकार पूर्व मे जितनी-जितनी भव्य आत्माए हुई है उन्हे किसी न किसी निमित्त से जिनवाणी सुनने का मौका मिला, उसे श्रवण कर अपने जीवन मे उसे उतारा तथा आचरण मे जिया और मोक्ष मार्ग की ओर बढ गये ठीक उसी प्रकार श्री गोवर्धनलालजी (बचपन का नाम) छोटे थे, स्कूल गये, दूसरा नाम हो गया नाना। स्कूल मे गुरुजी अपने शिष्य ''नाना'' पर निहाल थे। एक बार बचपन मे आप अपने गॉव मे ही चौपाल पर वैठे थे, एक वृद्ध महिला पानी का मटका उठाकर चल रही थी किन्तु उसके सामर्थ्य से मटके का वजन ज्यादा था यह देखकर नाना के मन मे

दया उत्पन्न हुई उन्होने उस महिला का मटका अपने सिर पर उठाकर उसको घर तक पहुँचाया। पुण्यार्जन जीवन को कल्याणमय बनाने वाला होता है। जिस प्रकार भगवान् महावीर ने नयसार के भव मे पुण्यार्जन किया उसी प्रकार आप भी नाना से नानेश बन गये।

सवत्सरी का प्रसग था। आप भादसोडा मे म सा के दर्शनार्थ गये वहाँ व्याख्यान सुना। व्याख्यान मे छठे आरे का प्रसग चल रहा था। आपका हृदय परिवर्तन हो गया और ससार से विरक्ति की दृढ भावना बना ली। आचार्य प्रवर पूज्य गुरुदेव श्री गणेशीलाल जी म सा के पास आपने 19 वर्ष की आयु मे दीक्षा अगीकार की एव गुरु भगवंतो के सान्निध्य मे ज्ञान, दर्शन तथा चरित्र की अभिवृद्धि की।

आपका दीक्षा पर्याय 60 वर्ष रहा, जिसमे आपने कुल 56 चातुर्मास किये जिसमे से 30 से 35 चातुर्मास आचार्य पदोपरान्त हुए। आपके आचार्य वनने के वाद प्रथम चातुर्मास रतलाम मे हुआ जिसमे आपने ''व्यसन मुक्ति'' जागरण प्रारम्भ किया और करीव 1 लाख व्यक्तियो को व्यसन से मुक्ति दिलाई। वही से आपको 'धर्मपाल प्रतिबोधक' के नाम से विभूषित किया गया।

भगवान् महावीर की अहिसा मूलक समता पर आप श्री ने विशेष जोर दिया और इस सन्देश को घर-घर तक पहुँचाने की कोशिश की। समता दर्शन, जीवन ओर व्यवहार आदि पुस्तको मे इसका विवेचन किया गया है। समता दर्शन एकता, समन्वय, सहिष्णुता, गुणानुरागिता आदि की प्रेरणा देता है।

साधना के क्षेत्र मे आप श्री ने समीक्षण ध्यान पर वहुत वल दिया। समीक्षण का अर्थ है ''स्वय को देखना'' अन्तरावलोकन करना, परदोप दर्शन से दूर होना। आपने छह दशक के दीक्षा पर्याय जीवन मे एक साथ 5, 7, 9 ,12, 15, 21 और 25 दीक्षाएं प्रदान करने का गौरव प्राप्त किया। आपने आचार्य काल मे लगभग 350 से अधिक मुमुक्षु आत्माओ को दीक्षा प्रदान की। आपने आचार्य काल मे कई ग्रन्थो की रचना की है जिसमे मुख्य है ''**जिणधम्मो**'' जिसमे ज्ञान, दर्शन एव चारित्र की विस्तृत जानकारी दी है। आप श्री की प्रेरणा से देश के अनेक स्थानो पर साधर्मिक सेवा सस्थाए, धार्मिक प्रशिक्षण केन्द्र एव नि:शुल्क चिकित्सा केन्द्र वर्तमान मे कार्यरत है।

आचार्य प्रवर श्री नानेश के जितने भी गुणगान करे उतने ही कम है। उन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन जिन शासन की प्रभावना, अहर्निश सयम साधना का पालन करते हुए आगम युक्त जीवन का निर्वाह करते हुए पूर्णरूप से वीतराग प्रभु की सेवा मे समर्पित कर दिया। विधी की विडम्बना-जिन शासन का यह दिव्य सितारा दि २७-१०-९९ रात्रि को ११ बजे अस्त हो गया।

आज आप प्रत्यक्ष रूप मे मौजूद नही है पर आपका दिव्य लोक कभी बिखर नहीं सकता। जनमानस के अनमोल मोती, जिन शासन की दिव्य ज्योति का ज्ञान का प्रकाश युग-युगान्तर तक हमे आशीर्वाद के रूप मे मिलता रहेगा। एव हम उनके बताये गये आदर्शों का अनुसरण करते हुए आगे बढेगे तो ही सही माने में हमारी भावांजलि होगी। ऐसी महान् चारित्रिक आत्मा, आचार्य सम्राट पूज्य गुरुदेव नानेश को हमारा शत्-शत् वन्दन, नमन, अभिनन्दन।

अन्त मे हम सभी वीतराग प्रभु से प्रार्थना करते है कि आप श्री की चेतना जहाँ कहीं भी हो, शीघ्रताशीघ्र सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर मोक्षगामी बने।

इन्हीं भावनाओ के साथ-जय जिनेन्द्र!

-मंत्री. अ भा सा जैन श्रावक सघ, ...

जैन जगत् की शान आचार्य श्री नानेश

✍ प्रदीप कुमार जारोली, एम ए
बडीसादडी

भारत देश आदि काल से ऋषियो मुनियो की जन्म भूमि रहा है। विश्व मे मेवाड का स्थान अद्वितीय रहा है। इसी धरा के छोटे से गाव दाता मे जन्मे करोडो के आराध्य देव प्रात: स्मरणीय बाल ब्रह्मचारी, समता विभूति, धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश २०वीं शताब्दी के महान् सन्त थे।

आचार्य नानेश ने कपासन मे दीक्षा अगीकार कर सयमी जीवन प्रारम्भ किया। आपका आचार्य काल अपने आप मे एक मिसाल है। कई प्रदेशो मे आपने अपने ओजस्वी प्रवचनो से जैन धर्म का प्रचार-प्रसार किया। कई बलाईयो को जैन बनाया जिससे आप धर्मपाल प्रतिबोधक कहलाएं।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के बाद तीर्थंकर परम्परा समाप्त हो गई और सुधर्मा स्वामी प्रथम पट्टधर आचार्य हुए। महावीर स्वामी की शासन परम्परा में आप 81वें तथा आचार्य हुकमीचन्द जी म. सा की सप्रदाय मे आप आठवे आचार्य बने।

आचार्य श्री लाल जी महाराज सा. ने भविष्यवाणी की थी कि आठवा पाट खूब चमकेगा। यह कथन सत्य निकला। आपने 350 से अधिक दीक्षा प्रदान की। 500 वर्ष के इतिहास मे किसी भी समाज मे 25 दीक्षा एक साथ नहीं हुई परन्तु आपने 25 दीक्षा एक साथ प्रदान कर कीर्तिमान स्थापित किया।

आपके देश-विदेश मे असख्य भक्त है जो ''जय गुरू नाना कहते नही थकते थे''। आपके नाम का श्रवण करने मात्र से संकट दूर हो जाता है।

आपके कई ग्रन्थ अखण्ड सौभाग्य, लक्ष्य वेध, ऐसे जीए, समता दर्शन और व्यवहार, कुमकुम के पगलिए, माया समीक्षण, कषाय समीक्षण आदि है।

21वीं सदी मे जब विश्व मे व्याप्त हिंसा, आतकवाद, गृह युद्ध आदि समस्याओ के निराकरण की बात होगी तो आपका ''समता दर्शन और व्यवहार'' सिद्धान्त सहायक सिद्ध होगा। समता का सदेश विश्व शान्ति के लिए अनमोल शस्त्र है।

जन-जन की आस्था के केन्द्र आचार्य श्री नानेश के बताये मार्ग पर चले, यहीं उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

हे पुरनूर तुझे याद करेगा जमाना

✍ वैरागिन सरला भसाली, डोडीलोहारा

हर रंग में जलवा है तेरी ही कुदरत का।
जिस फूल को सूंघती हूँ खुशबू तेरी ही तेरी है।।

चमन मे हजारो फूल हमेशा नहीं खिलते हैं वे मुरझाकर अपना अस्तित्व मिटा देते है। चमन के सभी फूल खुशबू नहीं देते कुछ ही फूल अपनी खुशबू से पूरे चमन को महका देते है उस चमन को महकाने वाले की स्मृतियाँ रह-रह कर उभर रही है कहाँ है ओ सवाव पुरुप, युग पुरुप जो हर पौधो को, फूलो को जीवन के कण-कण से सीचते रहे वो मधुर क्षण, सुहाने लम्हे, राहे हक मे रमने वाली हस्ती जिनके दीदार से, झलक मात्र से हृदय गद्गद् हो जाता था। जिनका पूरा जीवन ही सच को कुर्बान था सभी के दिलो मे राज करने वाले-हर दिल अजीज नेक दिल फरिश्ता तुम्हे कौन याद नहीं करेगा, ऐसे महामहिम के जीवन का वर्णन किधर से शुरूआत करे अन्त का नामोनिशान नहीं

ऐसे दिव्य पुरुप प्रकाशपुज, पुरनूर का इस चमन से चले जाना भला किसको रास आया होगा? ओ महापुरूष जो जन-जन के श्रद्धा का केन्द्र रहे आज हमारे बीच नही रहे पर उनका यश अक्षुण्ण रहेगा।

ए नूरपाश।

मेरे दिल का हर जर्रा यही दुआ करता है कि जिस जहाँ पे तू महरबाँ है उस जहाँ मे तुझे एक पल भी अशाति न मिले, हर पल शाति का नया नूर मिले। तेरे कदमो निशा पे चल सके वैसी काबिलियत देना हमे, यही मेरी भावभीनी श्रद्धाजलि है।

संत परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे आचार्य नानेश

✍ अनिल बाबेल

राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष, श्री अ भा सा जैन युवा सघ, कानोड़, जिला-उदयपुर (राज)

जैनाचार्य श्री नानेश सत परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। पारिवारिक सस्कारो की श्रेष्ठतम देन से अल्प आयु मे ही सयम जीवन अगीकार कर आप साधना के कठोरतम मार्ग पर चल पडे। ज्योतिर्धर जवाहराचार्य के आशीर्वाद व गणेशाचार्य की कृपा दृष्टि से आप 'नाना' से आचार्य नाना और फिर अपनी उत्कृष्ट सयम साधना से नानेशाचार्य बने। अपने आचार्यत्व के दीर्घ जीवनकाल मे देश के सुदूर अचल मे पाद-विहार कर श्रमण भगवान महावीर के उपदेशों का प्रचार-प्रसार किया। उनकी जादुई ओजस्वी वाणी, आकर्षक व्यक्तित्व, साधना, योग व ध्यान के प्रभाव से अनेक आत्माएँ दीक्षित हो आत्म-कल्याण की ओर अग्रसर हुई।

नानेशाचार्य समता व सरलता की जीवत मूर्ति थे। उनमे नैतिक ऊर्जा का अक्षय स्त्रोत विद्यमान था वे इस युग के एक उत्कृष्ट साधक व योगी थे। वस्तुत: आचार्य श्रमण परम्परा के गौरवशाली सत थे। ऐसे महान् व्यक्तित्व के प्रति हार्दिक श्रद्धाजलि अर्पित कर अपने आपको कृतकृत्य मानता हूँ। मेरा सहस्त्र वन्दन नमन
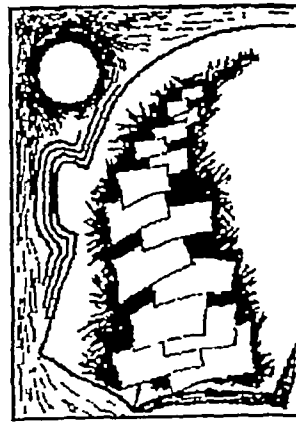
आचार्य नानेश के साथ बिताये क्षण

✍ प्यारचंद जैन, बड़ौदा (गुजरात)

इस 20वी शताब्दी के जैन आचार्यों मे हुक्म-गच्छ के आलोक पुँज अष्टम पद पर सुशोभित हुए बाल ब्रह्मचारी समता विभूति समीक्षण ध्यान योगी धर्म-पाल प्रतिवोधि आचार्य श्री नानालालजी महाराज सा के निधन से समस्त जैन समाज को क्षति हुई उनकी पूर्ति होना वहुत ही कठिन है। मैने उनके कुछ गुणो को तथा उनके साथ बिताये क्षणो को लिपिवद्ध किया जो इस प्रकार है-

(१) आपका जन्म राजस्थान के चित्तौड जिले के दाँता गाँव मे हुआ था। आपके पिता मोडीलाल जी तथा माता श्रृगार देवी पोखरना वश मे थी। आपका श्रावक समाज भारत मे प्रात· सभी प्रान्तो मे खासकर राजस्थान, मालवा, छत्तीसगढ, गुजरात, सौराष्ट्र, कर्नाटक, दिल्ली, हरियाणा तथा पजाब मे है। आपके जीवन का मूल मत्र समता तथा आपकी विशेषता-सयम मे कठिन जीवन जीना, अनुशासन से कोई समझौता नही, आपके विचार मे ''मुनि जीवन मे प्रचार का नही आचार का महत्त्व।''

(२) इसी शताव्दी मे आपकी प्रेरणा से करीव 350 मुमुक्षु आत्मा ने सयम अगीकार कर अपने जीवन को पावन किया इसी सदर्भ मे आपके द्वारा 25 वर्ष पूर्व रतलाम (मध्यप्रदेश) मे एक साथ 25 मुमुक्षु आत्माओ ने दीक्षा ग्रहण की जो जैन इतिहास मे स्वर्ण अक्षरो से अकित है तथा वर्षो का रिकार्ड तोड़ा। जिस समय रतलाम मे 25 दीक्षाए हुई उस समय जनता का सैलाव इतना उमडा कि कुछ कार्यकर्त्ता तथा पदाधिकारी आपस मे कानाफूसी कर रहे थे कि अगर इस समय आचार्य श्री माईक का उपयोग करते तो ठीक रहता। अवसर आने पर मैने जिज्ञासा पूर्वक पूछा कि-समय के साथ आप भी माईक की छूट दे देवे तो ठीक रहेगा। आप स्वय तो आचार्य ही है। आचार्यवर ने तुरन्त मेरी शका व समस्या का समाधान करते हुए फरमाया कि आज माईक की छूट दी जायेगी तो लाईट, पखा, फ्रिज, कूलर का उपयोग अपने आप चालू हो जायेगा। कालान्तर मे चम्पल, वाहन का उपयोग भी करने लग जायेगे जिससे साधु की चलनी ढीली होती जायेगी। जैसा कि कुछ सम्प्रदायो ने चालू कर दिया जो आगम के विपरीत है। मेरी बात का समाधान हो गया।

प्रथम प्रसंग-एक वक्त आचार्य श्री को महावीर जयन्ती पर फत्तहनगर पधारना था प्रत्येक छोटे मोटे गाँव फरसते हुए विहार हो रहा था। मैंने भी आचार्य को मेरा गांव काकरवा (जो भूपाल सागर-फत्तहनगर के बीच मे है) फरसने का निवेदन किया। आचार्य श्री ने फरमाया कि आपकी विनती मेरी झोली मे है। सयोग से आचार्यवर विहार करते हुए कपासन से मावली दूसरे रास्ते से पधार गये। मेरा गाँव बीच मे छूट गया। मावली से सनवाड पधार गये। सनवाड बडा क्षेत्र है वहा जैनियों के 150 घर है। एक व्याख्यान हुआ और दूसरे दिन के व्याख्यान की विनती सनवाड वालों ने की जो वाजिब ही थी। मैने आचार्य श्री को ध्यान दिलाया कि मेरा गाँव छूट गया जहा जैनियो के 4 चौके ही है। गाँव तो बडा है। इस पर सनवाड के श्रावको ने कहा कि काकरवा यहा से 8 किमी है तथा फत्तहनगर 3 किमी ही है। महावीर जयन्ती मे 1 दिन ही बीच मे शेष था आचार्य श्री ने फरमाया कि कल काकरवा जाने का भाव है। दूसरे दिन आचार्य श्री सभी सन्तो के साथ काकरवा पधार गये। दिनभर गाँव वालो को धर्मलाभ मिला। दूसरे दिन 6 किमी का विहार कर फत्तहनगर महावीर जयन्ती पर पधार गये। यह उनकी महानता ही थी कि सघ छोटा हो या बडा दोनो के प्रति

समभाव थे।

दूसरा प्रसंग-सघ विभाजन के पश्चात् आचार्य श्री का चार्तुमास ब्यावर मे था। मै भी अपने परिवार के साथ जो पिछले तीन वर्ष से गुजरात में बडौदा शहर मे रह रहे है, ब्यावर मे दर्शन हेतु गये थे। वहॉं पर आचार्य श्री से एकान्त मे वार्तालाप करने का अवसर मिला। इस वार्तालाप मे सघ विभाजन की चर्चा चली। आचार्य श्री ने सभी पत्र बताये तथा पूरी वार्ता करीब डेढ घटे तक की, बीच मे वहॉं के पदाधिकारी तथा सघ के पदाधिकारी मिलना चाहते तो आचार्य श्री ने उन्हे बाद मे मिलने को कहा। मुझ जैसे छोटे से श्रावक की शका का समाधान आचार्य श्री ने सरलता से तथा सहज मन से किया यही कारण था कि उनके मन मे प्रत्येक के प्रति समभाव व आदर था।

तीसरा प्रसंग-आचार्य श्री का विहार ब्यावर से उदयपुर की तरफ हो रहा था। रास्ते मे भूपाल सागर मे आचार्य श्री का स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ गया। वहॉं कुछ दिनो तक रुकना पड गया। डॉक्टर सा ने परामर्श दिया कि इन्हे शीघ्र उदयपुर पहुँचाओ। डोली से विहार चल रहा था। मै भी बडौदा से भूपालसागर गया हुआ था। दूसरे दिन आचार्य श्री के स्वास्थ्य मे सुधार हुआ। चेतना शक्ति तथा स्मरण शक्ति कार्य करने लग गई तो उस वक्त युवाचार्य राम मुनिजी ने उनसे परामर्श लिया कि कुछ दिनो पूर्व एक दीक्षा चिकारड़ा मे हुई उसकी बड़ी दीक्षा कल करानी है सो यही भूपालसागर मे ही करावे या फत्तहनगर। आचार्य श्री ने फरमाया कि इन दोनो के बीच मे काकरवा है वहॉं भी बडी दीक्षा हो सकती है। दूसरे दिन विहार कर आचार्य श्री युवाचार्य श्री सभी संत-सतियो के साथ काकरवा पधार गये। दिनभर अच्छा ठाठ रहा। बडी दीक्षा भी वहीं सम्पन्न हुई। उनका भाव यह रहता कि धर्म का लाभ सभी संघो को मिले चाहे वह छोटा भी हो, यह उनमे समभाव था। उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही है कि हम उनके बताये हुए मार्ग पर चले।

ऐसे आचार्यवर की कृपा दृष्टि हमारे पर पूरी थी। सिद्ध प्रभु से यही प्रार्थना करते है कि उनकी साधना अधूरी रही होवे तो शीघ्र पूरी होवे और वो शीघ्र सिद्ध गति को प्राप्त होवे। उनको कोटि-कोटि वदन।

संघ एवं संगठनों के श्रद्धा सुमन

अजमेर संघ का श्रद्धांजलि प्रस्ताव

✍ जीतमल चौपड़ा
मानद् मत्री
श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ, अजमेर

हमारे यहाँ विराजित शासन गौरव आचार्य श्री विजयराजजी म सा के सान्निध्य मे विराजित चतुर्विध सघ ने सर्व सम्मति से-

जैन धर्म दिवाकर, चारित्र चुडामणी, धर्मपाल बोधक, जैन सस्कृति के रक्षक, सघ शिरोमणी, परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानालालजी म सा के दि 27/10 के महानिर्वाण पर अत्यत चिता व दु:ख व्यक्त करते हुए श्रद्धेय आचार्य श्री के प्रति हार्दिक सवेदना व्यक्त की है।

स्व. आचार्य श्री ने अपने जीवनकाल मे सस्कृति की रक्षा एव मर्यादाओ का पूर्ण रूप से पालन करते हुए जिनशासन व सम्प्रदाय की जो अभूतपूर्व सेवा एव चतुर्विध सघ को धर्म प्रकाश से देदीप्यमान किया है, उसे कभी नहीं भुलाया जा सकेगा। अपने जीवनकाल मे करीब 350 से ज्यादा मुमुक्षु आत्माओ की दीक्षा, अपने आप मे एक अद्‌भुत रिकॉर्ड है। भारत मे चारो ओर भ्रमण करके जैनत्व की ज्योति जगाकर, हजारो धर्मपाल बनाये, अपने सम्पूर्ण जीवन ही को जिन्होने शासन उद्योत मे लगाया, ऐसा महापुरुष इस युग मे आप जैसा शानी का शायद ही कोई अन्य होगा।

ऐसे महान् उपकारी गुरुदेव के स्वर्गवास पर अजमेर का यह चतुर्विध सघ भारी चिन्तित है। आपके निर्वाण के समाचार आते ही व्याख्यान स्थागित रखा गया, बाजार बद रहा एव दि 29/10 को प्रवचन सभा मे प्रवचन बद रखकर हार्दिक श्रद्धाजलि समर्पित करते हुए गुरु गुणगान किये गये।

उज्जैन में गुणानुवाद सभा आयोजित

✍ रामचन्द्र श्रीमाल
उपाध्यक्ष, श्रावक सघ, उज्जैन

समता दर्शन प्रणेता, समीक्षण ध्यान योगी, सुप्रसिद्ध जैन आचार्य श्री नानालालजी म सा का उदयपुर मे दि 27 अक्टूबर 1999 को देवलोक गमन हो गया। श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ नमक मडी उज्जैन द्वारा श्रमण सघीय प्रवर्तक पूज्य श्री उमेश मुनिजी म सा के सान्निध्य मे पूज्य आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा के प्रति भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु गुणानुवाद सभा का आयोजन किया गया।

संत जीवन पर विस्तृत विवेचन करते हुऐ पूज्य प्रवर्तक श्री उमेश मुनिजी म सा ने बताया कि आचार्य श्री नानालाल जी एक विशिष्ट सत थे उन्होने निर्लिप्त जीवन जिया व धर्मोपदेश दिया। वे एक कुशल शिल्पी थे, जीवन निर्माता थे, सम्यक्त्व एव आचार के पालनकर्त्ता थे। उन्होंने सतों के अलावा श्रावक-श्राविकाओ को भी सस्कारी बनाया। उन्होने समता दर्शन का सूत्रपात किया। प्रवर्तक श्री ने उन्हे स्थानकवासी सत परपरा का उज्ज्वल नक्षत्र निरूपित किया।

श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक सघ नमक मडी उज्जैन के अध्यक्ष सर्वश्री विमलचद मूथा, चातुर्मास सयोजक पारसमल चौरडिया, श्रावक सघ के पूर्व मत्री माँगीलाल बैक वाला, सघ उपाध्यक्ष रामचन्द्र श्रीमाल, मनोहरलाल जैन धार वाले, महिला वर्ग से श्रीमती कमला माताजी, श्रीमती कमला बेन कोठारी ने आचार्य श्री नानालालजी म सा के जीवन पर प्रकाश डालते उनके गुणानुवाद किये व भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। कार्यक्रम का सचालन सघ उपाध्यक्ष श्री रामचन्द्र श्रीमाल ने किया। अत मे उपस्थित समुदाय द्वारा 4 लोगस्स का कायोत्सर्ग किया गया।

अनंत उपकारी गुरुदेव

अनिल के. लोढ़ा
एडवोकेट, नंदुरबार

स्थानकवासी जैन समाज द्वारा समता विभूति आचार्य श्री नानालाल जी म सा. के उदयपुर मे देवलोक गमन के समाचार ज्ञात होने पर स्थानक भवन मे गुणानुवाद सभा आयोजित की गयी। यहां विराजित श्रमण सघीय महासती श्री सत्यप्रभा जी म सा आदि ने आचार्यश्री का गुणगान किया। अंत मे अनंत उपकारी ऐसे गुरुदेव को 4-4 लोगस्स का ध्यान कर श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

समता ही जिनका जीवन था

शान्तिलाल कोठारी
मत्री, साधुमार्गी जैन श्रावक सघ, चिकारडा

आचार्य श्री नानेश साधुमार्गी की परम्परा को और समता तत्व को विश्वव्यापी बनाने मे निष्काम भाव से समर्पित रहे। आज विश्व जबकि बारूद के ढेर पर बैठा है, व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्व मे विषमता का बोलबाला है, उनके इस सिद्धान्त की महती आवश्यकता है।

आपने कई व्यक्तियो को उपदेश देकर धर्मपाल बनाया तथा समता दर्शन व समीक्षण ध्यान के माध्यम से अन्तरावलोकन की प्रेरणा दी।

आपके शान्त, गम्भीर व समतामय व्यक्तित्व का ही प्रभाव रहा कि कई मुमुक्षु अत्माओ ने सयमी जीवन

अगीकार किया।

आज आचार्य श्री नानेश हमारे बीच नही है किन्तु उनका समता दर्शन हामारे लिए एक प्रकाश स्तम्भ है। हम सभी अपने जीवन मे समता को उतारे यही उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

जैन श्री संघ-बालोद

✍ **शंकरलाल श्रीश्रीमाल**
कार्यालय प्रभारी

परम पूज्य आचार्य भगवन् श्री श्री 1008 श्री नानालाल जी म सा के देवलोक गमन से चतुर्विध सघ की अपूरणीय क्षति हुई है, इस खबर को सुनते ही शोक की लहर व्याप्त हो गई।

दोपहर मे नवकार मत्र का जाप रखा गया। साय शोक श्रद्धाजलि कार्यक्रम मे श्री कुन्दनमल जी गोलेछा एव श्री सुरेश जी लेंडिया ने पूज्य आचार्य श्री के जीवन परिचय एव उनके द्वारा समाज को दी गई उपलब्धियो की जानकारी दी कि आपने लाखो हिसक वृत्ति वाले अजैन वधुओ को जैन धर्म मे जोडकर धर्मपाल के नाम से उनको समाज मे स्थापित किया। आज वे जैन धर्म को अपने जीवन मे धारण कर जीवनयापन कर रहे हैं। आचार्य श्री की सबसे बडी सघ को देन है 'समता'। समता से जीवन मे पूर्ण शान्ति आ सकती है। सभा मे अध्यक्ष श्री घेवरचद जी साँखला, मत्री श्री सोहनलाल जी कोठारी व सभी प्रमुख जैन बधु, युवा वर्ग व बालिकाओ के अलावा जैनेत्तर बधु भी थे।

अत मे देवलोकवासी उस दिव्य आत्मा को कोटिश: वदन करते हुये चार लोगस्स के ध्यान के साथ श्रद्धाजलि दी गई एव उनके उपदेशो को जीवन मे धारण करने का सकल्प लिया गया।

महावीर संघ सूरत

✍ **शुभकरण सेठिया**, अध्यक्ष

दुनिया मे कई व्यक्ति आते हे, जिन्दगी पूरी कर के चले जाते है। उनका नाम इतिहास के पृष्ठो मे अकित नहीं होता, पर कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जिनका जन्म परहित के लिए ही होता है और वे स्व-परहित मे अपने हर क्षण का सदुपयोग कर स्वय को कृतार्थ समझते हैं। ऐसे महापुरुषो का नाम स्वर्णाक्षरो मे अकित हो जाता है। समता विभूति धर्मपाल प्रतिबोधक आचार्य श्री नानेश का जीवनवृत भी ऐसे ही पहलुओ से घिरा हुआ था। जहाँ एक ओर लाखो बलाई जाति वालो को धर्मपाल बनाया तो दूसरी ओर भव्य मुमुक्षुओं को मुक्ति मार्ग बताया। अप श्री का जीवन सागर सम गम्भीर था वही आपकी विद्वता विद्या की ऊँचाईयो को छूने वाली थी। ऐसे विद्वत् शिरोमणि गुरुदेव का महाप्रयाण जिनशासन मे एक अपूरणीय रिक्त स्थान को बनाने वाला है।

हमारे यहाँ विराजित परम विदुषी महासती श्री अनोखा कँवरजी म सा के सान्निध्य मे सूरत महावीर सघ मे भावभीनी श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए शोक प्रस्ताव पारित किया गया।

श्री वर्द्धमान स्थानक जैन श्रावक संघ, राताकोट

✍ **घेवरचन्द तातेड़**, मंत्री

27-10-1999 को रात्रि के समय 10 41 पर समता दर्शन प्रणेता बाल ब्रह्मचारी धर्मपाल प्रतिबोधक चारित्र चूड़ामणि प्रात: स्मरणीय परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य गुरुदेव 1008 श्री श्री नानालालजी म सा का देवलोक गमन हो गया-असह्य दु:ख हुआ। एकदम मन मलीन हो गया। शरीर मे सुस्ती का सन्नाटा छा गया पर विधि का विधान निराला ही है। सयोग के साथ वियोग है। क्या कर सकते। होनी को कोई भी मिटाने मे समर्थ नहीं हो पाया-होनी होकर रहती है।

पूज्य गुरुदेव श्री का जीवन बडा ही सरल था, आप श्री के विचार उच्चार आचार की एकरूपता अनुकरणीय थी। गुरुदेवश्री का आत्मबल बडा ही मजबूत था। आपश्री की वाणी मे माधुर्य की झलक विद्यमान थी। पूज्य गुरुदेवश्री हरदम प्रसन्न मुद्रा मे रहते थे। गुरुदेव श्री का जीवन ससारी प्रपचो से बिल्कुल दूर था। आपके जीवन मे क्षमा, शाति,सरलता हर समय झलकती रहती थी। गुरुदेवश्री के प्रवचनो मे जोश व ओज था। उस वाणी का आनद जिस भाई-बहिन ने लिया वह तो मत्र मुग्ध हो गया।

आपश्री के जीवन मे जिनशासन के प्रति सच्ची श्रद्धा थी। आपने जिनशासन के सजग प्रहरी बनकर जिनमत का बिगुल बजाया। पूज्य गुरुदेवश्री ने अपने सयम काल मे 24-25 भाई-बहिनो को एक साथ दीक्षा पाठ पढाया। आपश्री ने लगभग 350 से ऊपर मुमुक्षु प्राणियो को दीक्षा देकर सयमी बनाया। सभी को जीवन जीने की कला बताई जो अपने जीवन सार्थक बनाने मे सक्षम है।

ऐसे समता के सागर, वाणी के जादूगर, जिनशासन के सिरताज, धर्म दिवाकर को हमारी ओर से शत्-शत नमन-वन्दन। राताकोट का श्रीसघ हार्दिक श्रद्धाजलि-पुष्पांजलि अर्पित करता है। शासन से प्रार्थना करता है कि पूज्य गुरुदेवश्री जी को शान्ति प्राप्त हो। शुभस्थान प्राप्त हो।

श्री आसावरामाता अहिंसा प्रचार समिति-आसावरा

✍ **गेहरीलाल जैन**, महामत्री

परम पूजनीय समता विभूति धर्मपाल प्रतिबोधक समीक्षण ध्यान योगी, महान् आध्यात्म योगी, धुरन्धर पण्डित आचार्यों मे श्रेष्ठ आचार्य शिरोमणी आचार्य भगवन् 1008 श्री नानालालजी म सा जैन जगत् के देदीप्यमान नक्षत्र थे। जो भी चरणो मे जाता वह पुन: जाने की नही सोचता। हिसक लोग जो भी बलाई जाति के थे उनको अहिसक (धर्मपाल) बनाकर आप इस पचम आरे मे महान् कार्य कर गये। इस प्रकार आपने जीवन मे अपने श्रेष्ठ चारित्र बल के आधार पर अनेक कार्य किये है। आप महान् महानतम् थे। ऐसे आचार्य भगवन् के निधन पर मै अपनी अश्रुपूरित श्रद्धाजलि अर्पित करता हुआ महान् आत्मा की चिरशान्ति की कामना करता हूँ।

कानोड़ संघ की श्रद्धांजलि

✍ **विनोद नागोरी**, कानोड़

जैनाचार्य श्री नानेश के देवलोकगमन के समाचार ज्योही रात्रि ग्यारह बजे नगर में पहुँचे, जैन धर्मावलम्बियो मे शोक की लहर व्याप्त हो गई। सूर्योदय के पहले ही क्षेत्र के श्रावक-श्राविकाएँ आचार्य श्री के अंतिम दर्शनार्थ उदयपुर के लिए सपरिवार प्रस्थान कर गये। आचार्य श्री के विचारो से प्रभावित अनेक जैनेत्तर बन्धु भी पहुँचे। दूसरे दिन श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक सघ की ओर से अलावतो के नोहरे मे महासती भवर कुवर जी के सान्निध्य मे एक श्रद्धाजलि सभा का आयोजन रखा गया जिसमे अनेक श्रावक-श्राविकाओ ने आचार्य श्री नानेश को श्रद्धासुमन अर्पित किए। सघ के सरक्षक श्री मोतीलालजी डूगरवाल ने आचार्य श्री को सरल स्वभावी, सहजता के धनी बताते हुए उनके निधन को सघ की अपूरणीय क्षति बताया। सघ अध्यक्ष श्री पन्नालाल कुदाल ने उन्हे राष्ट्र के महान् सतो मे से एक, कवि श्री अम्बालाल जैन ने सघ के ही नही भारत के नूर साहित्य रत्न श्री विपिन जारोली ने उन्हे आचार निष्ठ, सयम सुमेरू तथा युवा सघ के राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष श्री अनिल बावेल ने उन्हे उत्कृष्ट सयम के साधक व राष्ट्र की विरल विभूति बताया। राष्ट्रीय प्रचार प्रसार मत्री श्री मानमल मेहता ने कहा कि आचार्य श्री की शिक्षाओ का अशमात्र भी जीवन मे उतारना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।
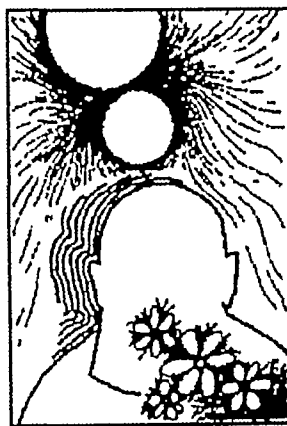
केसिंगा संघ की श्रद्धांजलि

केसिंगा, 28-10-99, गुरुवार। आज प्रात: 6 बजे पूरे केसिगा नगर के बाजार उदास-उदास नजर आ रहा था। जब कारण समझ मे आया तो मालूम पडा कि उदासी और सन्नाटे का इतना मजबूत कारण इस नगर को शायद ही प्राप्त हो। आज से 34 साल पहले इस वात्सल्य निधि, समता सागर ने अपने पावन चरणो से इस नगर को पवित्र करते हुए समाज को समता के सागर मे नहला कर, अपनी चुम्बकीय वाणी से ज्ञान का रसपान कराके पूरे नगर को भाईचारे, प्रेम, सौहार्द व समता के साथ रहना सिखाया था। उनके उपकारो को यहा की जनता आज भी याद करके भावुक हो जाती है। ऐसे उपकारी महापुरुष का यो छोड कर चले जाना, सचमुच मे असहनीय व पीडादायक है। आचार्यश्री के महाप्रयाण का समाचार सुनते ही, स्वेच्छा से जैन-जैनेत्तर सभी भाईयो ने अपने-अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान इस दुर्लभ महायोगी के सम्मान मे पूरे दिन भर बंद रखे। नगर के सौभाग्य से बाजार के बीच मे स्थित श्री जैन भवन मे इनकी विदुषी शिष्या, वाणी भूषण, शासन-श्रृगार, बाल ब्रह्मचारिणी महासती श्री शकुंतला श्री जी म सा. आदि ठाणा-3 इस वर्ष का वर्षावास हेतु विराजित है। तीनो साध्वियां जी स्तब्ध, किकर्त्तव्य विमूढ, गमगीन, उदासी के साथ बैठी थी। उनको संवेदना (सांत्वना) प्रकट करने के लिए नगर के आसपास के क्षेत्रो के भाई-बहनो का तांता-सा दिन भर लगा रहा।

समता दर्शन के प्रणेता, समीक्षण ध्यान योगी, धर्मपाल, प्रतिबोधक, बाल ब्रह्मचारी, चारित्र चूडामणि, इस बीसवी शताब्दी के दुर्लभ आध्यात्म योगी, साधुमार्गी जैन परंपरा के भीष्म पितामह, अष्टम देदीप्यमान आचार्य परम वंदनीय, पूज्य श्री 1008 श्री नानालाल जी म सा का उदयपुर शहर से दिनांक 27-10-99 को संध्या 5 बजे सथारे का समाचार प्राप्त हुआ। उसी समय से श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ ने अखण्ड नमस्कार महामत्र के जप का प्रारभ कर दिया था जो कि आगम पुरुष के पंचतत्व मे विलीन होने के बाद तक जारी रहा जिसमे काफी भाई-बहनो ने भाग लिया।

29-10-99 को ठीक सुबह 9 बजे श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ केसिंगा ने सामूहिक भावाजली सभा का आयोजन इनकी विदुषी साध्वी श्री शकुंतला श्रीजी आदिठाणा-3 के सान्निध्य मे किया जिसमे नगर के काफी जैन-जैनेत्तर समाज के भाई-बहनो के साथ आसपास के क्षेत्रो-राजा खरियार, बगुमुडा, कांटाबांजी आदि स्थानो से भी भाई-बहनो ने अपने परम आराध्य को श्रद्धा के सुमन, गुणानुवाद के माध्यम से अर्पित किए।

कार्यक्रम का प्रारम्भ वीर प्रभु की मंगल प्रार्थना से श्री बसत जैन ने किया। इस दुर्लभ विराट व्यक्तित्व के साठ वर्षीय प्रखर सयमी जीवन व उनके द्वारा समाज को दिये गये अनमोल उपकारो का गुणगान शायद ही कोई कर पावे, फिर भी काफी भाई बहिनो ने अश्रुपूरित आंखो से अपने अनुभवो (जिन्हे सौभाग्य प्राप्त हुआ था, इनके साथ रहने का) के माध्यम से गुणगान करने का प्रयास किया, जिसमे ऐसा लग रहा था मानो सूर्य को दीपक दिखाया जा रहा है। किसी भी भाई को पर्याप्त उचित शब्द ढूंढना मुश्किल हो रहा था।

सभी वक्ताओ ने इस महापुरुष को एक अलौकिक दिव्य महापुरुष बताते हुए कहा कि ऐसे अनमोल आध्यात्मिक विभूति का यो चले जाना पूरे समाज की तो क्षति है ही विशेष रूप से जैन शासन व इन्ही के हाथो द्वारा तरासा गया हुक्मशासन की बड़ी भारी तथा अपूरणीय क्षति है, जिसकी भरपाई निकट भविष्य मे भी संभव नहीं

लगती है। ऐसा दिव्य महायोगी समाज की जबरदस्त पुण्याई से ही होता है। इस जैन शासन सरोवर के राजहस ने किस प्रकार सयमी दीक्षा अगीकार की व 60 वर्ष तक कितने बेजोड़ तरीके से इसका पालन किया एव करीब 335 आत्माओ से पालन करवाया और समाज के विकास के लिए जैन शासन को चमक गौरवता प्रदान करने के लिए क्या-क्या किया और सबसे महत्वपूर्ण बात प्रखर क्रियोद्धारक महान् जैनाचार्य पूज्य श्री हुक्मीचद जी म सा द्वारा प्रतिष्ठित इनका संघ श्री साधुमार्गी जैन सघ जिसके कि इस नाना का प्राण कहा जाये तो अतिश्योक्ति नही होगी। इस कलियुग के जैन फकीर ने कभी भी भौतिक सुखो से समझौता नही किया। आज का समाज चाहे वह श्रावक समाज हो या साधु समाज, तनिक भी कष्टो को सहने को तैयार नही दिखता है, ऐसे विषम समय मे भगवान् महावीर के सच्चे आदर्शो को, सिद्धान्तो को अपने जीवन मे उतारना व दूसरो को भी इसकी प्रेरणा देना बहुत ही न्यून देखने मे आता है। इनके ऊपर काफी दवाव भी डाला गया, माइक, बिजली, पखा, लेट्रिन, स्थानक मे भोजन लेना, रास्ते मे भोजन सेवा स्वीकार करना, लेकिन इसने कभी भी ऐसी बातो से समझौता नही किया जिसमे थोडी सी भी छह काया के जीवन की हिसा की सभावना हो व साधु की सयमी मर्यादा स्खलित होती है, ऐसे सच्चे सत कम ही देखने मे आते हैं। प्रचार-प्रसार से कोसो दूर रहने वाले आप महावीर के इस विचार के पक्के समर्थक थे कि साधु अपनी साधना, अपनी आत्मा के कल्याण के लिए ही साधु बनता है। साधु पहले अपना सारा ध्यान अपनी आत्मा के कल्याण मे लगाता है। बाकी का समय पूरे जगत के प्राणियो की भलाई के लिए लगाता है। अपनी सयमी जीवन की मर्यादाओ से सच्चा साधु कभी भी समझौता नही करेगा। अगर वह जानबूझ कर ऐसा करता है तो कम से कम मैं तो उसे सच्चा साधु नहीं मानता। आज यह बात एकदम सच प्रमाणित हो रही है जब आज से 2500 वर्ष पहले भगवान् महावीर स्वामी ने आज के काल की (5वे आरे) व्याख्या करते हुए अपने परम शिष्य गौतम स्वामी को कहा था कि मेरा शासन 21000 वर्षो तक चलेगा और मेरे द्वारा प्रतिपादित अहिसा व साधु की संयमी मर्यादाओं को अक्षुण्ण रखने वाले मेरे सिद्धातो का सही और सच्चे रूप मे पालन करने वाले साधक आटे मे जितना नमक समावे तनी मात्रा मे भी जरूर होगे। सचमुच उसमे नाना नाम पहली पक्ति मे आएगा।

विशेष भावाजलि प्रकट करने वालो मे श्री नानूरामजी जैन बगुमुण्डा, श्री जौहरी जी कवाड काटाभाजी, श्री नानूराम जी ने अपने शव्दो को व्यवस्थित करते हुए युग पुरुष नाना के महत्वपूर्ण जीवन प्रसंगो को याद करते हुए इसे बगमुण्डा सघ पर गहरा घाव बताया। हम अपने को बिल्कुल अनाथ व असहाय महसूस करते है। नाना ने समाज को समता दर्शन और समीक्षण ध्यान नामक जो अद्‌भुत जीवन का कल्याण करने वाले अस्त्र दिये है जरूरत है इसके प्रचार प्रसार की। श्री जौहरीजी कवाड काटाभाजी जिनका परिवार इनका परम भक्त रहा है, ने बहुत ही दु:खी शब्दो से आचार्य प्रवर के गुणगान करते हुए कि ऐसे परम कृपालु करुणामयी गुरुदेव का बीच भंवर मे हमे अकेला छोड कर चले जाना, हमारे ऊपर व सघ के ऊपर बहुत बडा धक्का है। आपश्री की 60 वर्ष की कठिन तपस्या के प्रयास से ही आज यह सघ उस मुकाम पर जा पहुंचा था, जहा पर विरले ही पहुच पाते है, लेकिन नियति ने जितना क्रूर मजाक इस महान् आत्मा के साथ अतिम समय मे किया है। भगवान् ऐसा मजाक किसी के साथ भी न करे। आपने नाना को महामानव की सज्ञा देते हुए कहा कि इन कठिन परिस्थितियो को भी जिस समता भाव के साथ सहन किया वह सचमुच आश्चर्यजनक है। आज हम सभी का यह दायित्व बनता है कि जो पीडा गुरुदेव अपने साथ लेकर गये है हम उसको समझे और इस बेजोड सघ के पुराने गौरव को फिर से एकजुट होकर लौटाने का पुरुषार्थ करे तभी मैं समझता हू कि उनको हमारी सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

बहन शारदा ने गुरुदेव के गुणगान को सूर्य को दीपक दिखाने जैसा बताया। ऐसी महान् हस्ती को शब्दो के

माध्यम से सीमित दायरे मे नही बांधा जा सकता। गुरुदेव का नश्वर शरीर जरूर आज हमारे बीच नही है लेकिन वो एक ऐसी कृपालु आत्मा है जो हर समय हमारे आसपास रहते हुए हमारा मार्गदर्शन करती रहेगी, ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है।

तरुण युवा श्री शैलेन्द्र जैन (बिंदू) ने 'नाना' भगवान् को इस शताब्दी का अन्तिम महापुरुष बताया। जिसको जमाना अनन्तकाल तक भी भूला नहीं पायेगा। युवा वर्ग की दिशा बिना सच्चे मार्गदर्शक के आज दिशाहीन लक्ष्यहीन भ्रमित है, होती जा रही है, उसमे प्राण फूकने वाले जादूगर का यो चले जाना सचमुच युवा वर्ग की बहुत बडी हानि है।

तेरापंथ धर्म संघ केसिगा के वयोवृद्ध धर्मनिष्ठ श्रेष्ठ श्रावक श्री मंगतराम जैन ने अपने परिवार के जयपुर प्रवास का एक अनुभव सुनाते हुए (जब नाना गुरु वहां विराज रहे थे) कहा कि जब मै अपनी पत्नी को आपरी की शिकायत के कारण जयपुर दिखाने के लिए सपरिवार गया था तो स्थानक मे नाना के दर्शन हेतु पहुंचा तुरन्त हमारे पास अंदर से एक श्रावक आया और कहने लगा कि आप ही मंगतराम जैन केसिंगा (उडीसा) वाले हैं क्या मेरे आश्चर्य का ठिकाना नही रहा कि आचार्यश्री को कैसे ज्ञात हुआ कि मै अकेला आने वाला हू। चमत्कार मेरे आज तक समझ मे नहीं आया और अब तो आने का सवाल ही नहीं है। सचमुच यह अनुभव इस अलौकिक महापुरुष के विराट जीवन के दिग्दर्शन कराने के लिए काफी है। भाई रामनिवास, भाई शंभुलाल जैन, भाई पप्पन आदि ने भी अपनी-अपनी श्रद्धांजलि पद्य/गद्य के माध्यम से दी।

इस भावांजलि सभा का बहुत ही प्रभावी, मार्मिक संचालन जैन श्री सघ के मंत्री श्री बसत जैन ने करते हुए सर्वप्रथम 'साधुमार्ग क्या है', इसका संक्षिप्त परिचय देते हुए कहा कि साधुमार्ग की परम्परा अनादि है। आचार ही साधुत्व की प्राण सत्ता एवं कसौटी है। अत: वही साधुमार्ग की धुरी है। धुरी ही ध्वस्त हो जाये तो रथ पर झण्डी पताकें सजा कर तथा उसके चक्को पर पालिश करके कुछ समय के लिए एक चकाचौंध भले ही उपस्थित कर दी जाय उसे गतिमान नहीं बनाया जा सकता।

प्रखर क्रियोद्धारक आचार्यश्री हुक्मीचंद जी म.सा ने 'सम्यक् ज्ञान सम्मत क्रिया' का उद्घोष करके आचार की सर्वोपरिता का संदेश दिया। इस आचार क्रांति ने जिनशासन परम्परा मे प्राण ऊर्जा का सचार किया। अगले चरण मे ज्योतिर्धर जवाहराचार्य ने आगमिक विवेचन की तेजस-छैनी से कल्पित सिद्धान्तो की अवान्तर पर्ती को छील छाट कर सम्यक् ज्ञान सम्मतक्रिया को विशुद्ध शिल्प मे तराश दिया। आगे चल कर श्री गणेशाचार्य ने इस विशुद्ध शिल्प के साक्ष्य मे शांति क्रांति का अभियान चलाया।

समता विभूति आचार्य प्रवर श्री नानेश के सम्यक् निर्देशन मे शांत क्रांति का रथ उत्तरोत्तर आगे बढ़ रहा है। युग पर आश्वासन की सात्विक आभा फैलती जा रही है। विश्वास हिलकोरे लेने लगा है कि सात्विक साध्वाचार का लोप नहीं होगा। अंधकार छंटता और छूटता जा रहा है। दीप से दीप जलते जा रहे है।

आपने जीवन्त कविताओ व मुक्तकों के माध्यम से अपने आराध्य का गुणगान करते हुए उड़ीसा प्रांत पर विशेष कर केसिगा पर जो वात्सल्य दृष्टि वरदहस्त रहा है वह अद्भुत है। उड़ीसा प्रान्त केसिंगा नगर ऐसे उपकारी गुरुदेव को खोकर कितना अकेला महसूस कर रहा है। इसको शब्दों मे व्यक्त करना मेरे लिए मुश्किल ही नहीं असंभव भी है। वे हमारे केसिगा श्री संघ के ऊपर कितने कृपालु थे यह इसी बात से प्रमाणित हो जाता है कि वर्तमान मे जो विदुषी महासती जी का चातुर्मास केसिंगा नगर को प्राप्त हुआ है वह बिना इस कृपालु के संभव नहीं हो पाता।

अत मे आपने सभी से निवेदन किया कि खाली गुणगानो से कुछ होने वाला नही है। अगर आप उन्हे सच्चे सुमन अर्पित करना ही चाहते हैं तो आज दृढ सकल्प करे इस महापुरुष ने जो हमे आदर्श दिया है विशेष कर समता का उसका हम अपने जीवन मे थोडी मात्रा में अपना पाए। जब ज्यादा से ज्यादा त्याग, तप, भाईचारे, दान, दया, अहिसा, करुणा के मार्ग पर चलते हुए अपने जीवन के सच्चे स्वरूप को समझते हुए समाज मे जो दलित पीडित, शोषित हमारे मित्र है उनको भी अपने साथ जोड सके, यही सच्ची श्रद्धाजलि होगी। आपने इस महामनीषि द्वारा 60 वर्ष के प्रखर ज्ञान साधना के मथन से जो अनमोल दुर्लभ उपदेश समाज को दिये है उसमे से एक सामयिक उद्धरण आपने सुनाया-फिजूल खर्ची राष्ट्रीय अपराध है।

मैं कहता हू कि सरकार का काम सरकार जाने, किन्तु फिलहाल तो यही बहुत है कि आप लोग अपना काम जान ले। फिजूल खर्ची राष्ट्रीय अपराध हैं और भारत जैसे गरीब देश मे जहा एक ओर करोडो लोग भूखमरी के कगार पर हो तथा छोटे-छोटे बच्चो को दूध तक दुर्लभ हो, उस देश मे आतिशबाजी जैसी निरर्थक प्रवृत्ति पर पानी की तरह पैसा बहा देना अपराध ही नहीं मानवता पर घोर अत्याचार है। जरूरत इस बात की है कि फिजूल खर्चिया पूरी तरह रोक दी जाय, जो उचित खर्च है उन्हे कम करके बचत की जाय तथा उस राशि का सदुपयोग उन गरीबो का दु.ख दर्द कम करने और मिटाने के हितकर कामो मे किया जाय। सच तो यह है कि ऐसी सकटापन्न परिस्थितियो मे आतिशबाजी जैसी फिजूलखर्ची को एक दण्डनीय अपराध घोषित किया जाना चाहिए।

सभा का समापन करने से पहले मैं वीर प्रभु से यही प्रार्थना करूगा-आज हमारे ऊपर हमारे नगर के साथ पूरे उडीसा प्रान्त मे साथ मे उनके सघ शिष्य-शिष्याओ पर दुःखो का पहाड टूट पडा है। उन्हे वीर प्रभु सभलने का सम्बल प्रदान करे, शक्ति दे और उनके अथक परिश्रम से निर्माण किया हुआ बगीचा और भी ज्यादा पल्लवित-पुष्पित हो पावे। रागद्वेष की मनोवृत्तियों को कम करते हुए समता झरना आपने बहाया है वह प्रबल वेग के साथ जन-जन मे बहे है। अत मे उस पुण्यशाली महान् आत्मा की सुख शांति के लिए 4-4 लोगस्स का ध्यान के साथ सभी ने सामूहिक अतिम श्रद्धाजलि अर्पित की।

✍ बसंतलाल जैन, मंत्री
श्री साधुमार्गी जैन श्रावक सघ
मु पो केसिंगा जिला कालाहाण्डी (उडीसा)

श्रमण सांस्कृतिक ज्योतिर्मय नक्षत्र

✍ श्रीपाल जैन निडर

श्रमण सस्कृति का महत्त्व निर्विवाद है। श्रमणो ने अपनी आत्मसाधना के क्षेत्र मे सतत् जागरूक रहते हुए जनजीवन मे जिस तरह से नैतिक एव आध्यात्मिक चेतना का सूत्रपात किया सहज ही श्रमणो के अनूठे व्यक्तित्व और कर्त्तव्य के प्रति मन आस्था से अभिभूत हो उठता है। यह ठीक है कि वर्तमान युग मे जीवन मूल्यो का तेजी से पतन हो रहा है तथापि जो कुछ सतोषप्रद भरपाई देता है, वह सब श्रमणो की देन है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता की अनुभूति हुई कि श्रमण सस्कृति मासिक के एक विशेषांक के द्वारा श्रमण संस्कृति के ज्योतिर्मय नक्षत्र पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी महाराज के प्रति श्रद्धा सुमन समर्पित किये जा रहे है। वंदनीय श्रमणों के जीवन चरित्रो से आज जन मानस का परिचय होना चाहिए। अच्छे जीवन चरित्रो से संलग्नता का अर्थ अच्छे जीवन का निर्माण है।

पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म सा ने वीर भूमि मेवाड के एक छोटे से ग्राम दांता मे जन्म लिया। कपासन मे वे श्रद्धेय पूज्य श्री गणेशीलाल जी म सा के चरणो मे दीक्षित हुए। समर्पित भाव के साथ गुरु चरणो मे रह कर आगमो एवं अन्य दर्शनो का गहरा अध्ययन किया। वे विद्वान संत थे। ध्यान साधना मे भी उनकी गहरी अभिरुचि थी। अनेकजनो को उन्होने दुर्व्यसनो से मुक्त भी किया।

यह ठीक है कि वे एक संप्रदाय विशेष के आचार्य थे पर उनका प्रभाव विलक्षण था। उनके आचार्यकाल मे धर्मप्रभावना प्रचुर रूप से हुई। उन्होने जितनी मुमुक्षु आत्माओ को दीक्षित किया वह भी एक कीर्तिमान है। अहिसा प्रिय समाज की ओर से उस महापुरुष को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हू। साथ ही उनके चतुर्विध संघ से यह अपेक्षा करता हू कि छोटे-बडे मतभेदो को गौण करके समाज मे स्वस्थ वातावरण की स्थापना के लिए सकारात्मक प्रयास करने चाहिए। विषमताओ को हवा देकर हम महापुरुषो को श्रद्धाजलि कैसे दे पायेगे?

-रघुवरपुरा नं 2, गांधी नगर, दिल्ली-37

नानेश की चमत्कारिक छवि

✍ अजीत के. लोढ़ा एडवोकेट, नंदुरबार

हमारा तथा लोढा परिवार का श्री सघ से सपर्क तबसे हुआ जब महास्थविर श्रद्धेय श्री शातिलाल जी म सा ने 1986 मे नदुरवार मे चातुर्मास किया। उस वक्त आचार्य श्री का जलगाव चातुर्मास था। हमे श्रद्धेय श्री शांतिमुनि जी से ही प्रेरणा मिली जिसके स्वरूप हम जलगाव चातुर्मास मे सप्ताह मे एक बार आचार्य श्री के दर्शन करते थे। आचार्यश्री ने हमारी विनती सुनकर चातुर्मास पश्चात् नदुरबार होकर विहार कर राजस्थान पधारे। नंदुरबार मे आचार्य प्रवर 8 से 10 दिन रुके मगर वे दस दिन पर्युषण पर्व से भी अधिक उल्लास के साथ बीते और नदुरबार की जनता को ना ऐसा अवसर देखने को मिला था और ना ही मिलेगा जो आचार्यजी के पावन चरणो द्वारा हुआ।

उसके पश्चात् और म सा श्री की प्रेरणा और हमारे स्व मामाजी के फलस्वरूप हमने आचार्यजी के साल मे एक बार हर चातुर्मास मे दर्शन करने का निश्चय किया और करते थे। हमारा घटना प्रसग उस वक्त का है जब आचार्य जी का चातुर्मास चित्तौडगढ मे था उस वक्त श्रद्धेय श्री शातिमुनि जी म सा का चातुर्मास भी वही था। हम लोग सपरिवार हमारे माताजी भी साथ थे जिनका चार वर्ष पूर्व स्वर्गवास हुआ। हमारा प्रथम बार ही राजस्थान जाने का प्रसग था। उस वक्त हमारे साथ हमारे भाई की बेटी एक साल की कुमारी भाग्यश्री भी थी। हम लोग इंदौर दर्शन कर चित्तौड के लिए निकले और रास्ते मे हमारे भाईसाहब की लडकी भाग्यश्री की तबियत अचानक खराब हो गई। उसे उल्टी, दस्ते और फिर ऐसी अनेको तकलीफे एक साथ शुरू हो गई। हालत बहुत खराब हो गई। हम लोग बहुत घवराए और टेशन मे थे। रतलाम आने पर वहा डॉ शाह से उसकी तबियत बताई तो उन्होने सलाह दी कि आप लोग यहा से ही वापस नंदुरबार चले जाओ, लडकी की हालत बहुत खराब है। यह नदुरबार तक भी जीवित जाएगी या नही, इसमे शका है। तो आप यही से लौट जाए। मगर साथ मे हमारे माताजी थे उन्होने कहा इतने पास आकर आचार्यश्री के बिना दर्शन किये वापस नही जायेगे। कुछ भी हो आचार्यश्री के दर्शन किये बिना वापस नही जायेगे। चाहे लडकी मर जाए तो रास्ते मे ही उसे जला देगे। हम लोग फिर उसी रात मे निकल कर 'जय गुरु नाना हमे तिराना' करते सबेरे चित्तौडगढ पहुंचे। खातर महल मे गये प्रार्थना का समय था। आचार्यश्री ध्यान मे थे। हमने श्री शातिमुनि जी म सा के दर्शन किये। सारी हकीकत बताई कहा हमे सिर्फ आचार्यश्री के दर्शन करने है और तुरत जाना है। म सा श्री ने कहा आप ठहरो, आचार्यश्री मागलिक फरमाने बाहर पधारेगे ही, आचार्यश्री बाहर पधारे उनके चरणो मे सारी हकीकत रखी और हमारी माताजी बोले हमे सिर्फ आपके दर्शन करने है। ऐसे हालात मे हम तुरत निकल रहे है हमे मागलिक दो। तब आचार्यश्री ने फरमाया-बच्ची कहा है, उसे ऊपर लाओ। लडकी तो बार-बार उछलती थी और रोती ही थी। आचार्यश्री के सामने उसे रखा गुरुदेव ने उसको देखा उसे मांगलिक सुनाया। थोडी देर बाद वहीं सो गई। फिर व्याख्यान के बाद वापस आचार्यश्री पास मे गये लडकी उठी और रोने लगी। आचार्यश्री ने दूसरी बार मांगलिक दी, थोडी देर बाद उसने भूख लगने की बात कही। दोपहर मे मांगलिक पश्चात् बच्ची ऐसे खेलने लगी जैसे कुछ हुआ ही नही।

ऐसे परम आचार्यश्री गुरुदेव ने उस बच्ची को नई जिदगी दी जो आज दस साल की हो गई है और हर वक्त सकट मे ही 'जय गुरु नाना हमे तिराना, जय गुरु नाना पार लगाना' गाती रहती और धर्म ध्यान मे भी आगे है।

सामायिक, भक्तामर, प्रतिक्रमण आदि सीखा है। ऐसे हमारे परिवार में अनेकों बार पूज्य गुरु भगवतो की कृपा रही और हम पर अनेक उपकार किए और हमारी नैय्या पार लगाई। हम 1999 के अक्टूबर मे उदयपुर आचार्यश्री के दर्शन कर इंदौर होकर नंदुरबार को सबेरे मे आए और आने के बाद ऐसा समाचार सुन कर एकदम धक्का लगा। ऐसे गुरु भगवत को कोटि-कोटि वंदन कर उन्हे भावपूर्ण श्रद्धाजलि अर्पित करते है।

आचार्य नानेश इस युग की धरोहर

आचार्य नानेश इस युग की धरोहर थे,
मर्यादा व सयमी साधना के साक्षात् सरोवर थे।
ऐसे दिव्य महासाधक ने सघ उपवन को महकाया,
उनके जीवन के कई ऐतिहासिक कार्य मनोहर थे।

अनजान राहो पर प्रस्थान कर दिये गुरुवर,
श्रद्धालुओ को निष्प्राण कर चले गये गुरुवर।
जिनके उपकारो से सारा ससार ऋणी है।
वे नाना के सुमनो के सर्जक क्या गये हम सबको बेजान कर गये गुरुवर

भावान्जली मै क्या समर्पित करू
मेरा तो कुछ है ही नही।
बस ये दो शब्द ही है-
आखो मे आसुओ के सिवाय कुछ है ही नही।

जिनशासन की चमकती मशाल।
आचार्य भगवत नानालाल।

✍ श्रीमती मंजू गोखरु, कादिवली-मुम्बई

जैन जगत के दिव्य सितारे, नाना गुरुवर तुम्हें प्रणाम

✍ कु. रश्मि सचेती 'रोशन', डौडी लोहारा (दुर्ग-म.प्र.)

जैन जगत के दिव्य सितारे, नाना गुरुवर तुम्हें प्रणाम।
शाश्वत शांति पाएं गुरुवर, पाएं शीघ्र ही मुक्तिधाम।।

भारत माता के सच्चे सपूत, भारतीय सस्कृति के सजग प्रहरी, परम पूज्य गुरुदेव, आचार्यश्री नानेश, गुण रत्नाकर, जिनशासन प्रभावक, कुशल अनुशास्ता थे। आप माता श्रृगारबाई, पिता मोडीलाल जी पोखरना के कुलदीपक के रूप मे 80 वर्ष पूर्व चित्तौडगढ (मेवाड राजस्थान) जिला अन्तर्गत दाता ग्राम मे अवतरित हुए थे। संत वाणी सुन किशोरवय मे चितन पूर्वक ज्ञान के साथ वैराग्य फूट पडा। दीक्षा लेने की भावना बलवती हो गई। निकल पडे गुरु की खोज मे, गुरु मिले श्री गणेशाचार्य। वैराग्य और जीवन की कसौटी होने लगी, योग्य वैरागी के रूप मे आपने सभी का दिल जीत लिया। वह घडी भी आ गई और आपश्री 18 वर्ष की उम्र मे कपासन नगर मे जैनेश्वरी (भागवती) दीक्षा अगीकार कर मुनि बन गए।

भर यौवन में लेकर दीक्षा, गुरु गणेश से पाई शिक्षा।
ज्ञान-ध्यान-सेवा के द्वारा, जीवन की दी कड़ी परीक्षा।।

समय व्यतीत होता गया और पूज्यवर गणेश गुरु ने आपको भावी सघ नायक के रूप मे उदयपुर के अन्दर युवाचार्य के पद पर नियुक्त कर दिया। उसी वर्ष लगभग 37 वर्ष पूर्व आपश्री आचार्य पद पर विराजमान हो गए। गुरु गणेश स्वर्ग सिधार गए। आपका पधारना मालवा म प्र के तरफ हुआ। धर्मपाल बधु प्रतिबोधित हुए। रतलाम-इदौर चातुर्मास कर रायपुर निवासी भाईसा सम्पतलाल जी धाडीवाल के इस आग्रह पर कि आपश्री छत्तीसगढ़ रायपुर पधारे, मैं दीक्षा लूंगा। गुरुदेव का मगल पदार्पण हुआ। धार्मिक क्राति, दीक्षाओ की धूम मच गई। वैराग्यमूर्ति सपत्तलाल जी धाडीवाल भी षट्काया प्रतिपाल के चरणो मे समर्पित हो सपत मुनि जी म सा बन गए, जो कि आज भी अनुभव के धनी, मधुर मूर्ति, विद्वान मुनि 'भाईसा म सा ' के रूप मे जिनशासन की प्रभावना मे रत हैं। परम पूज्य गुरुदेवश्री के छत्तीसगढ पधारने का सम्पूर्ण श्रेय पूज्य श्री सम्पतमुनि जी म सा को जाता है। सम्पूर्ण छत्तीसगढ भारत मे प्रसिद्ध हो गया। अछोली ग्राम तो शाकाहार ग्राम बन गया। तीन चातुर्मास कर परम पूज्य गुरुदेव महाराष्ट्र पधार गए। पुनः छत्तीसगढ पधारना नही हुआ। लगभग 9 वर्ष पश्चात् आपश्री ने तपस्वी सम्राट श्री अमरमुनि जी म सा , युवको के हृदय सम्राट, ओजस्वी वक्ता पडित रत्न श्री शांतिमुनि जी म सा आदिठाणा-5 को प्रथम मुनि सिघाडे के रूप मे भेजा। तप-ज्ञान-श्रद्धा की ज्योति प्रज्वलित हो उठी। परम पूज्य गुरुदेव के अनुयायियों, भक्तो की संख्या बढने लगी, नानेश चरण की लौ लगने लगी, प्रतिवर्ष सैकडो श्रद्धालु गुरुदेव के दर्शनार्थ जाने लगे, वह क्रम अंत तक चलता रहा।

नानेश अमर शांति गुण गाएंगे।
समता-तप-शांति में रम जायेंगे।

इस प्रकार परम पूज्य गुरुदेव श्री जी म प्र , महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात विचरण करते रहे एव भारत की जनता

को समता दर्शन, भारतीय जनमानस को सम्पूर्ण धर्म अगो का पाठ पढाते रहे। धर्मपाल अभ्युदय, समता-दर्शन, 25, 21, 15, 12, 11 दीक्षाएं एक-एक साथ देकर तीन सौ से ऊपर दीक्षाए, समीक्षण ध्यान आदि के द्वारा आपश्री ने इतिहास बनाया, इतिहास को दुहराया। किसी ने सत्य ही कहा है-

है समय नदी की धार, कि जिसमें सब बह जाया करते हैं,
है समय बड़ा तूफान, प्रबल पर्वत झुक जाया करते हैं।
अक्सर दुनिया के लोग, समय में चक्कर खाया करते हैं
लेकिन कुछ ऐसे होते है जो, इतिहास बनाया करते हैं।

परम पूज्य गुरुवर-मानवता, नैतिकता, सदाचार, शाकाहार, व्यसन मुक्ति, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक सफल प्रचारक, **गुरुर्ब्रह्मा-गुरुर्विष्णु, गुरुर्देवोमहेश्वर** को सार्थक करने वाले महान् गुरु बन कर धर्म गगन मे गूजते रहे और भूमंडल पर भगवान् की तरह पूजा पाते रहे।

परमाराध्य गुरुवर जैन एकता/सवत्सरी एकता के प्रबल पक्षधर थे। संयम वीणा को सविधि बजाने वाले कलाकार, आगम एवं शास्त्रीय प्रवचनकार, समर्थ समाधानकर्ता, हुक्मसघ भास्कर, समता सागर, सयम सूर्य धर्म सरोवर के राजहस, परम पूज्य गुरुदेव ने अपने जीवन भर अपने नाम, उपमाओ को, आदर्श जीवन जीकर सार्थक किया।

गोवर्धन के रूप में वर्धन करना, नाना के रूप मे अनेक कार्य करना, नाना दीप प्रज्वलित करना, सयम, समता, श्रमणत्व का सम्पूर्ण पालन करना। ऐसे रहे हमारे गुरुदेव, ऐसे थे मेरे गुरुदेव।

परम श्रद्धेय, जगत् वल्लभ, षट्काया प्रतिपाल, जिनशासन रखवाल, मोक्ष मार्गदातार, धीर वीर गभीर, गुरुदेव श्री जी इस लोक से, सुरलोक की ओर प्रयाण कर गए, विश्वास नही होता किन्तु यह सत्य है। प्रयाण पूर्व उदयपुर मे विराज रहे थे किन्तु अब निम्न पक्तिया जीवित हो उठी है-

गुण के निधान और संघ सरताजजी
जन मन में विराजे पूज्य नानालाल जी।
अब जन-जन का उज्ज्वल मन, नाना गुरु का पावन धाम है।
ऊर्ध्वारोहन करे गुरु आतम, जो कहलाता मुक्ति धाम है।।

परम उपकारी गुरुदेव श्री जी ने उदयपुर से, परम उपकारिणी गुरुवर्या श्री नानू भगवती ने चित्तौड से महाप्रयाण किया। दोनो ऐतिहासिक नगरी मे विराज रहे थे। एक ने चातुर्मास 1999 के अंतिम माह मे और दूसरे ने चातुर्मास 1998 के प्रथम माह मे प्रयाण किया। दोनो के नाम अक्षर-सम, समता, समानता वाले थे। दोनो जगह भावी सघ नायक भी विराजमान थे। ऐसी आत्माएं, जीने वालो को जीवन सध्या तक यादो मे आती रहती है। ये स्व-पर कल्याणकारी महान् साधक रत्न थे। ऐसो के लिए ही कहा है-

जिन्दगी ऐसी बना, जिन्दा रहे दिलशाद तू,
जब न हो दुनिया में तो, दुनिया को आये याद तू।
जाने के बाद जो याद आते हैं, वे जाकर भी नहीं जाते हैं,
जीते जी जो याद न आते, वे जीते जी मर जाते हैं।।

नानेश इच्छा :

नाना गुरु की अंतिम इच्छा, जैनी मानें प्रभु की शिक्षा।
संयम, समता, शांति, प्रेम है, महावीर की उत्तम शिक्षा।

नानेश कह रहे हे-

जा रहा हू मेरे बच्चों, प्रेम से रहना सदा।
याद आए मेरी तो, जिनवर सुमरना तुम सदा।

हमारी शुभ भावना .

मम अभिलाषा, जन-जन की इच्छा,
मोक्ष वरें गुरु, करें प्रतीक्षा।

अर्थात्-गुरु शाश्वत शाति पाए, हम भी (कभी) मोक्ष जाए।

हार्दिक श्रद्धांजलि

जो चन्द्रकात-मोती सा आभा मडित था
जिसके आचार-विचार, चरित्र, कोहिनूर हीरे की तेजोपुज थे,
जो क्षमा-दधि, समता सागर सम गहन-गभीर
और जिनकी विनम्र, महा गभीर, विनम्र विद्वता और अनमोल प्रवचन
जन-जन को आलोकित कर आकर्षित करते थे
उस श्रद्धालोक के दिव्य देवता, परम श्रद्धेय
सद्गुरुवर, स्वर्गीय महाऋषि आचार्य भगवन् श्री श्री
नानालाल जी महाराज सा की पुनीत याद मे हार्दिक श्रद्धाजलि समर्पित।

भावभरा नमन

✍ गजेन्द्र वीरवाल जैन, जावद (म.प्र.)

परम श्रद्धेय बाल ब्रह्मचारी पूज्य गुरुदेव आचार्यश्री 1008 नानालाल जी म सा के देवलोक गमन होने से सिर्फ जैन समाज की ही नहीं अपितु समस्त मानव समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। समतामयी पूज्य गुरुदेव बडे ही उदार व कोमल हृदयी थे। जिस प्रकार एक गुलाब अपने चारो ओर के क्षेत्र को सुंदर महक से महका देता है,उसी प्रकार पूज्य गुरुदेव ने अपने धर्मोपदेश से जन-जन को महका दिया। जहां-जहां भी गुरुदेव के चरण पद पडे वह भूमि गुरुदेव के चरण पडने से पावन हो गयी।

गुरुदेव के व्याख्यान जो भी सुनता वह हर्ष विभोर हो जाता। गुरुदेव की कृपा दृष्टि जैन व जैनेत्तर दोनो पर थी। ओसवाल जैन समाज के साथ गुरुदेव की कृपा वीरवाल जैन समाज पर भी विशेष रूप से थी। आज गुरुदेव शरीर से हमारे बीच नही है किन्तु आत्मा से सदैव उनका परम आशीष हमे मिलता रहेगा। गुरुदेव जैसे महापुरुष दुनिया में विरले ही होते हैं, जो दुनिया मे आकर अपनी महानता की महक समस्त मानव समाज के बीच महका जाते है। ऐसे महापुरुष, महागुरुवर को श्रद्धापूर्वक भाव भरा नमन।

नमन मेरा

बाल ब्रह्मचारी समतामयी
चारित्र चूडामणी
महागुरुवर, गुणानुरागी
परम पूज्यनीय, मन:तपस्वी
कृपामयी, करुणामयी
अष्टम पट्टधर, अद्‌भुत ध्यानयोगी
महामुनि आचार्यश्री
नाना गुरुवर को
श्रद्धा सुमन अर्पित
श्रद्धापूर्वक नमन हमारा।

✍ मगनलाल वीरवाल जैन
अध्यक्ष, वीरवाल समाज, जावद (म प्र)

कहां से आए?

✍ सतीश कुमार चौपड़ा, जावद (म.प्र.)

वैसे तो जब से होश सभाला तभी से आचार्यश्री नानालाल जी म सा का सान्निध्य प्राप्त होता रहा है। समय-समय पर म सा श्री जी के दर्शन, प्रवचन, गोष्ठी, आध्यात्मिक प्रेरणा मिलने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। स्वास्थ्य खराब होने के बाद अतिम दर्शन का अवसर 5 अक्टूबर रविवार को प्राप्त हुआ जो कि जीवन की चिरस्थायी स्मृति बन गई। अवसर था शांतक्रात युवा सघ के गठन का इसी मौके पर महावीर युवा मडल के साथियो का उदयपुर आना हुआ। महास्थविर श्रद्धेय शांतिमुनि जी म सा के प्रवचन श्रवण के पश्चात् आचार्यश्री के दर्शन हेतु स्थानकवासी भवन गये। योग से आचार्यश्री का स्वास्थ्य ठीक होने से प्रवचन मे पधारे थे। वहा से लौट कर आपश्री नीचे के हॉल मे विराज रहे थे।

स्वास्थ्य की वजह से चरण छुना, बातचीत करने की मनाही थी। हम सभी साथियो ने खिडकी से ही म सा को वदना अर्ज की। म सा श्री जी आत्मानंद मे मस्त हो रहे थे। जैसे ही हमारी ओर निगाह पडी आशीर्वाद हेतु हाथ ऊपर उठाया और पूछा कहां से आये? हम सभी साथी म सा की वाणी सुन कर भाव विभोर हो गए। हमारा एक साथी दिनेश चौधरी तो भावुकतावश मनाही के बावजूद आचार्यश्री के चरणो साक्षात् दण्डवत् हो गया। हम सभी साथी आज भी उस दृश्य को नही भूल पाये है न भूलेगे। इस प्रसग पर मेरे साथ कमल जैन, जितेन्द्र काठेड, गुणवत चौधरी, हेमन्त चौपडा, दिनेश चौधरी आदि युवा साथी थे।

क्या लिखूं?

✍ भंवरलाल चौपड़ा, जावद (म.प्र.)

आचार्यश्री नानालाल जी म सा के बारे मे क्या-क्या लिखूं? क्योकि जीवन यात्रा के साथ-साथ 20 वर्षों तक जावद जैन समाज को साथ लेकर चलने का मौका मिला। इस दरम्यान अनेक स्थानो पर चातुर्मास मे जाना, आचार्यश्री जी का अनेको बार इस क्षेत्र का विचरण करना आदि कई कारणो से मै व्यक्तिगत सम्पर्क मे रहा हूं। अभी मेरा स्वास्थ्य खराब होने की वजह से घटनाओ का उल्लेख नही कर पा रहा हू। फिर भी मेरे एवं मेरे परिवार पर म सा श्री जी का विशेष आशीर्वाद रहा है। ऐसे महापुरुषो के साथ रह कर कार्य करने का जो अवसर मुझे मिला, यही मेरे लिए जीवन की सबसे बडी घटना है।

बीसवीं सदी के महामानव

✍ **लक्ष्मीलाल मोगरा**, महामंत्री
श्री राजस्थानी स्थानकवासी जैन सघ, अहमदाबाद
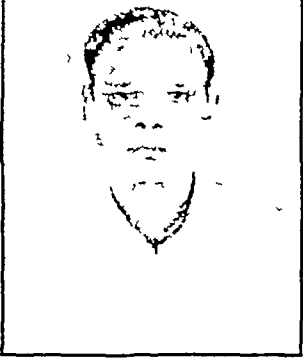
बीसवीं सदी के महामानवो की श्रृखला मे सन्त रत्न आचार्य श्री नानेश को एक युग प्रधान आचार्य के रूप मे सबोधित करना अतिशयोक्ति पूर्ण नहीं होगा। एक शिक्षा एक दीक्षा एवं एक ही आचार्य के नेतृत्व मे सैकड़ो साधु-साध्वियो का विचरण स्थानकवासी समाज के बीच एक अभिनव प्रयोग था। जिसके आचार्य श्री नानेश सफलप्रयोगकर्त्ता सिद्ध हुए। प्राय: किसी भी संगठन के सचालन मे सिद्धांतो व सुविधाओ के साथ समझौता किए बिना सगठन का चलना या चलाना कठिन कार्य होता है। ऐसे समय मे मर्यादाओं की लक्ष्मण रेखा के अन्तर्गत दृढीभूत बने रहना आचार्य श्री नानेश की विशेषता थी।

समता-सहअस्तित्व और सहिष्णुता आचार्य श्री नानेश की साधना के महत्त्वपूर्ण बिन्दु रहे है। जिनकी क्रियान्विती धर्मपाल उद्धार, समता प्रचार, समीक्षण ध्यान आदि लोक कल्याणकारी प्रवृत्तियो के माध्यम से की गई।

ऐसे महामानव आचार्य प्रवर का देहावसान किसी परपरा, सम्प्रदाय किसी धर्म की क्षति नहीं अपितु राष्ट्रीय क्षति स्वरूप है जिसे सह पाना साधुमार्गीय समाज के लिए ही नहीं सम्पूर्ण जैन समाज के लिए वज्रपात के तुल्य है।

इस गभीर हादसे को सहने का एकमात्र यही उपाय हो सकता है कि हम आचार्य श्री नानेश को पार्थिव देह के बिना भी भावात्मक दृष्टि से अपने बीच उपस्थित समझें और उन महापुरुषो के द्वारा स्थापित आदर्शों को हम अपनी साधना का केन्द्र बना ले। यदि ऐसा हुआ तो हमारे बीच आचार्य श्री नानेश सदियो पर्यन्त जीवन्त बने रहेगे।

श्री हुक्मगच्छीय शान्त-क्राति सघ ने आचार्य श्री नानेश की रिक्तता को पूर्ण करते हुए श्रद्धेय श्री विजय मुनि जी म सा को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करके एक ऐसी ज्योति प्रज्वलित की है जिसकी प्रकाश किरणे देश के कोने-कोने में पहुँच कर जन-जीवन को आलोकित करती रहेगी।

गुजरात के मूर्धन्य नगर अहमदाबाद में सन्त-रत्न त्रय के अभूतपूर्व चातुर्मास मे अपने असाम्प्रदायिक उदार विचारो एव आचार-व्यवहार की दृढता ने यह प्रमाणित किया है कि अपनी इन उदात्त विचार धाराओं के आधार पर यह सघ आचार्य श्री नानेश की आचार दृढता को जन जीवन मे जीवन्त बनाए रखेगा। और इस सघ के माध्यम से आचार्य श्री नानेश सदैव-सदैव के लिए जीवन्त रहेगे।

हयाते हक को भला क्या अजल का अन्देशा
हर वक्त फूल खिलाती है आशियाने में
जमीं रहे न रहे, आसमां रहे न रहे, हम भी रहें ना रहें
अमर रहेगा नानेश तेरा नाम हर जमाने मे।

हालांकि गुरुदेव तेरा गुलशन गुलजार है
गुलाब-मोगरे और केवडे सी जिसमें बहार
कोई इसे लूट ना ले ऐसे माली तेरी इन्तजार है
शांति-प्रेम-पारस सी 'लक्ष्मी' पा तेरे शुक्रगुजार है।

बिछड़े हुए दो हृदयों का मिलन

✍ उत्तमचन्द मेहता, सोजत

आचार्य श्री नानेश की समत्व प्रभा इतनी अधिक प्रभावशाली एव विस्तृत थी कि आपसी सघर्ष उस प्रभा तले पराभूत हो जाते थे। सोजत निवासी प्रसिद्ध व्यवसायी परम आदरणीय पिताजी श्री लालचन्द जी मेहता एवं चाचाजी श्री चुन्नीलाल जी मेहता सहोदर भ्राताओ मे परस्पर विचार भेद के कारण लगभग 10-12 वर्षो से चले आ रहे विग्रह का शमन उसी समत्व प्रभा का चमत्कार है।

यद्यपि मेहता बन्धुओ के इस दुराव की समाप्ति हेतु सामाजिक स्तर पर बडे-बडे प्रयास हो चुके थे, किन्तु विग्रह उपशमित नहीं हो पाया था। जब आचार्य श्री का सोजत पदार्पण हुआ तब अहमदाबाद से श्री लालचन्द जी सा एव मुम्बई से श्री चुन्नीलाल जी सा का आचार्य देव के दर्शनार्थ आगमन हुआ। आचार्य देव को इन दोनों मे चल रहे विग्रह की जानकारी हुई तो मधुर शब्दों मे कुछ सकेत किया। **'इंगियागार सम्पन्ने'** की तरह वह छोटा-सा सकेत जादूवत् प्रभावशील हुआ और सामान्य विचार मथन के बाद दोनो बन्धु एव श्री लालचन्द जी की सहधर्मिणी आचार्य देव के उपवन मे उपस्थित हो गए और वहीं अपने आराध्य के चरणाश्रय तले लघु भ्राता श्री चुन्नीलाल जी अपने अग्रज श्री लालचन्द जी तथा अपनी भाभी के चरण स्पर्श कर निवेदन करने लगे-'आप मेरे जनक-जननी के तुल्य है। आप मेरे विगत सभी अपराधो को क्षमा करे।'

इस पर अग्रज एव भाभी ने भी आशीर्वादात्मक वरदहस्त ऊपर उठा दिया और अनुज को सीने से लगा लिया। बिछडे हुए दो हृदयो के मिलन का वह दृश्य इतना स्नेहार्द्र एव भावपूर्ण था कि समीप खडे सज्जनों के नेत्र भी सजल हो गए। ❖ ❖ ❖

अब तक

✍ विजय पटवा, पूना (महाराष्ट्र)

भारतीय संस्कृति की ऐतिहासिक स्थली-चित्तौड। चित्तौड- राष्ट्रवीरो की कर्मभूमि व अध्यात्म वीरो की धर्मभूमि। इसी विश्व प्रसिद्ध चित्तौड जिले का एक छोटा-सा गाव दांता। दांता की सुरम्य प्राकृतिक गोद मे-श्रृगार नन्दन मोडीकुल चन्दन के रूप मे अवतरण हुआ, एक दिव्य आत्मा का।

आत्मा महान् थी किन्तु छोटी-सी पर्याय को धारण कर रखा था इसलिए वह ''नाना'' परम पुण्यशाली आत्मा, पारिवारिक उत्तम संस्कार। जागरण के लिए निमित्त मिला मेवाडी श्री चौथमल जी म सा. का। विवेकमय वैराग्य का जागरण हुआ। वीतरागता की प्राप्ति के लिए सर्वतोभावेन समर्पित होने का सुदृढ संकल्प लिया। महाव्रतो के महान् संकल्पपूर्वक गुरु गणेश के निर्देशन मे जीवन प्रगतिशील बना।

स्वाध्याय सेवा व मौन बाकी सब बाते गौण, ऐसी थी साधना। सयमी जीवन मे समष्टि के सार्वभौम हितो का दूरदर्शी-गहन चिन्तन भी चलता था साधना काल मे। जीव जगत् सत्रस्त है। उसे दु:ख से मुक्त व सुख से सयुक्त करना है, कैसे करे?

अन्तर मे समाधान खोजा तो उत्तर मिला मनुष्य का अहंकार व विकार के कारण ही जीव जगत सत्रस्त है। आगम का अवगाहन किया तो समाधान मिला मनुष्य मे मौजूद मान संज्ञा व मैथुन संज्ञा के कटु परिणाम घटित हो रहे है जीव जगत पर इसीलिए जीव जगत संत्रस्त है।

जीव जगत की अशान्ति का जिम्मेदार मनुष्य है, मनुष्य की वैभाविक परिणतियां हैं। सबसे पहले मनुष्य की रुग्णता को दूर करना ही होगा तभी जीव जगत मे सुख व शांति का संचार होगा। प्राप्त समाधान के आधार पर चल पडा दुर्व्यसन मुक्ति आन्दोलन व समता समाज का निर्माण कार्य।

ये दोनो अभियान जन-जन के आकर्षण केन्द्र बने। सहस्त्रो व्यक्ति समता समाज के सदस्य बने, सर्वज्ञ प्रभु के सदाचारी भक्त बने। आन्दोलन सशक्त बना।

अब जांति-पांति के आधार पर मानव समाज का बंटवारा इसे समता प्रणेता कैसे देख पाते? इस बंटवारे से भारतीय संस्कृति का अस्तित्व प्रश्नचिन्ह लग गया था। इस प्रश्नचिन्ह को मिटाने का लक्ष्य बना लिया, समता का बिगुल बजाया आचार्य श्री नानेश ने। जहा-जहां अंधश्रद्धा का/मूढ मान्यताओ का अंधकार ज्ञात हुआ वहा-वहा उस अंधकार को मिटाने स्वयं समता का सूर्य उदित हुआ।

इस क्रांतिकारी अभियान के सन्मुख अनेको समस्याये उपस्थित हुई कदम-कदम पर चुनौतिया किन्तु महापुरुष एक ही बात कहते थे-''हर समस्या का समाधान है निराश मत होइए। निराशा के साथ निर्णय का मेल नही।'' सुखद परिणाम सामने आया-जहां से समस्याये खडी हुई वही पर समाहित हो गई।

●●●

आचार्य श्री नानेश को पुरातन पंथी, कट्टर साम्प्रदायिक मे उभारा गया था कुछ लोगो के द्वारा। वे जितने कट्टर साम्प्रदायिक थे उससे ज्यादा वे असाम्प्रदायिक थे व मानवतावादी थे।

जांति-पांति, ऊच-नीच, कुलीन-अकुलीन की मिथ्या मान्यताओ को धार्मिकता का चोला पहना कर इन्सान के द्वारा इन्सान पर किये जाने वाले जुल्म-ज्यादती को, अन्याय-अत्याचार को आपश्री ने अनदेखा नही किया।

सवर्ण श्रेष्ठ व अवर्ण निकृष्ट है। श्रेष्ठ को तमाम सुख-सुविधा पाने का अधिकार निकृष्ट को नहीं। इन भ्रामक धारणाओ से भारतीय संस्कृति कलकित हो रही थी। हिन्दू समाज की एकता विखडित हो रही थी, स्थिति अत्यन्त गभीर थी। स्थिति का लाभ उठा कर धर्मान्तरण का कुचक्र निरन्तर गतिशील हो रहा था, गोरक्षक बन रहे थे गोभक्षक। आपश्री जी ने जन जीवन को सदेश दिया-

"एगा माणुसा जाई"-मनुष्य जाति एक है।

"एगे आया"-स्वरूप दृष्टि से सभी आत्माए समान है।

"णो हीणे णो अइरित्ते"-इस संसार मे कोई भी आत्मा न तो हीन (निकृष्ट) है न अतिरिक्त (विशेष) है।

इसलिए जाति-पाति की कृत्रिम दीवारे तोड कर पवित्र संस्कारो के साथ परस्पर में समन्वय स्थापित करो। आपश्री जी मात्र उपदेशक ही नहीं थे, किन्तु मनोविज्ञान के गहन अध्येता थे। आपने सवर्ण व अवर्ण को अस्तित्व का निषेध नही किया बल्कि उसे आध्यात्मिक परिभाषा दी। काला, गोरा आदि वर्ण शरीर का होता है, पौद्गलिक रचना का होता है। इसलिए सवर्ण याने शरीर है और आत्मा का कोई वर्ण नहीं होता इसलिए अवर्ण याने आत्मा है। समस्या को समाधान मे परिवर्तित करने वाले इन उपदेशो का अमृतपान करके जनता जागृत हुई। अछूत-दलित कहलाने वाले इन्सानो को गले लगाने की भावना जन-जीवन मे व्याप्त हुई।

अभियान के मस्तक पर सफलता का तिलक लग गया किन्तु आचार्य श्री जी पूर्ण संतुष्ट नही थे, तिलक पर अक्षत (चावल) लगाना शेष था।

हजारो-लाखो वे मनुष्य जिन्होने धर्म व सस्कृति के अनुरूप ढलना स्वीकार किया उन्हे सस्कार परंपरा मे समकित विधि से दीक्षित किया गया और उन्हे 'धर्मपाल' का आदरणीय विरुद प्रदान किया गया। इस प्रकार तिलक पर अक्षत लगा करके ही आचार्य श्री नानेश ने संतोष की सांस ली।

प्रबुद्ध वर्ग मे वैचारिक क्रांति का, धर्मीजनो मे आचार क्रांति का व पिछडे वर्ग मे संस्कार क्राति का अलख जगाया आचार्य श्री नानेश ने। मैं इसे समता दर्शन पर आधारित आचार्य श्री का साम्यवाद मानता हूं।

●●●

साम्प्रदायिक एकता चाहते थे आचार्य श्री नानेश। जनता को लुभाने वाली एकता या जनता की आखो में धूल झोकने वाली एकता वे नहीं चाहते थे। समता पर आधारित एकता ही उन्हे मान्य थी। गुड-गोबर मे समान मूल्य स्थापित करने वाली नीति को समता मे स्थान नही था और न गुड व गोबर को आपस मे मिलाने का चिन्तन समता मे था। गुड व गोबर दोनो के अस्तित्व को व उपयोगिता को आप स्वीकार करते थे किन्तु गुड के स्थान पर गोबर का व गोबर के स्थान पर गुड का प्रयोग उन्हे अस्वीकार था।

यही कारण है कि एकता के लिए उनकी तैयारी सशर्त थी। वे कहते थे-

❑ मै उस एकता को पसंद करता हूं-

- ◆ जिसका निर्माण सैद्धान्तिक धरातल पर हुआ हो।

◆ जिसमे मूलभूत सिद्धान्तो की अखण्डता सुरक्षित हो।

◆ जिसका लक्ष्य मूल व्रतो की शुद्ध परिपालना हो।

◆ जिसमे जीव जगत के सार्वभौम हितो के विपरीत सौदा, समझौता व समन्वयन न हो।

◆ जिसमे कथनी करनी की एकरूपता की सकल्पबद्धता हो।

◆ जिसका उद्भव जन समर्थन के आधार पर न होकर आत्मसाक्षी व परमात्म साक्षी से हुआ हो।

आचार्य श्री नानेश एकता, संगठन व समन्वय के लुभावने नारो से प्रभावित नहीं हुए। वे सर्वज्ञ प्ररूपित सिद्धान्तो के प्रति पूर्णतया समर्पित थे। वे खरबूजे जैसी एकता व अखण्डता के पक्षधर थे।

●●●

आचार्य श्री नानेश के लिए अनेको प्रतिकूलताये थी, अनेको चुनौतियां थी, कदम-कदम पर संघर्ष थे जिन पर विजय प्राप्त की थी, समता सहिष्णुता व संयम के बल पर।

पाठक के मन मे यह जिज्ञासा सहज ही उत्पन्न हो सकती है कि समता विभूति के लिए प्रतिकूलता क्यो, चुनौतियां क्यो व संघर्ष क्यो? ये सब विषमता के परिचायक है। समता व विषमता का आपस मे कही कोई रिश्ता नही है क्योकि एक प्रकाश है और दूसरा अन्धकार है।

यह एक सनातन सत्य है कि जब संसार मे विषमता की ज्वालाये धधकने लगती है तब प्रकृति से समता की साकार प्रतिमा प्रकट होती ही है। जब संसार मे हिसा का तांडव नृत्य चलता है तब प्रकृति के मंगल वरदान स्वरूप अहिंसा की ज्योति प्रज्वलित होती है। जब जैविक सभ्यता पर विकृति की धुध छा जाती है तब नैसर्गिक नियमानुसार संस्कृति सूर्य प्रखरता के साथ उदित होता है और यह भी शाश्वत सिद्धान्त है कि समता के सामने विषमता का, अहिंसा के सामने हिंसा का, करुणा के सामने क्रूरता का, संस्कृति के सामने विकृति का अस्तित्व खतरे मे पडता ही है तब अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए विषमता विकृति व विभाव मे विश्वास रखने वाले संघर्ष खडा न करे यह सर्वथा असंभव है। ऐसा ही कुछ हुआ था आचार्य श्री नानेश के जीवन मे।

●●●

तन की स्वस्थता मन की प्रसन्नता व चेतन की जागरूकता के साथ जीवन यात्रा उन्नति के पथ पर प्रगतिशील बनी रहे इस हेतु आचार्य प्रवर ने जो आगमिक आलोक प्रदान किया वह है "समीक्षण ध्यान साधना"।

समीक्षण ध्यान साधना के तीन आयाम है-

1. अतीत के पाप कर्मो का परिमार्जन

2 वर्तमान मे देहासक्ति के विसर्जन पूर्वक आत्मशक्ति का प्रवर्धन।

3. अनागत की वासना-कामना का विवर्जन।

स्वयं आचार्य श्री ने समीक्षण ध्यान के सहारे अनेको भव्यात्माओ को बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी व अन्तर्मुखी से ऊर्ध्वमुखी बनाया।

ऐसे थे आचार्यश्री जय गुरु नानेश, जो एक महासागर थे, उसमे जो भी गोता लगाने की तैयारी करता उसे गुण रत्नो की सम्पदा प्राप्त होती थी। ऐसे गुण रत्नो के आकार, रत्नाकार का सश्रद्धा-सभक्ति स्मरण. स्मरण।

❖ ❖ ❖

वात्सल्यता की मूर्ति

✍ गणेशलाल सहलोत
कार्यालय सचिव, श्री अ भा सा जैन श्रावक संघ

झीलो की नगरी उदयपुर के पौधशाला मे 26 अक्टूबर को जब समता विभूति आचार्य श्री नानेश के देवलोक गमन होने के समाचार देश के कोने-कोने मे पहुचे तब सम्पूर्ण देश शोक संतप्त हो गया।

आचार्य प्रवर साधुमार्गी सघ के आधार स्तम्भ थे, जिन्होने अपने समता सदेशो को जन-जन तक पहुचाते हुए हजारो किलोमीटर यात्रा तय की। आचार्य प्रवर की उदारता, सहजता, आत्मीयता एव करुणा निःसंदेह वंदनीय है। आचार्य भगवन् के गुणो को सीमा मे बाधा नही जा सकता। अपनी अमृतमय वाणी के माध्यम से जन-जन को आत्मबोध कराया। जीवन के अंतिम क्षणो तक संयम साधना मे सजग रहे। पूज्य आचार्य भगवन के प्रति मेरा सदैव आदर भाव रहा। यदि किसी भी सतवृन्द की गलती मुझे दृष्टिगोचर हो जाती मै तुरन्त आचार्य भगवन् से निवेदन कर देता। परम पूज्य आचार्य भगवन् उसे ध्यान मे लेकर समयानुसार आत्मियता व स्नेह से सतवृन्द को संकेत कर देते थे। मैं आचार्य भगवन् के सान्निध्य मे जब भी पहुंचा मुझे आत्मिक शाति का अनुभव हुआ। वाणी मे ओज, मन मे उमंग, उत्साह और आत्मा मे सयम की लहर उनके व्यक्तित्व को दर्शाता था। जो भी आचार्य श्री के दर्शन करता वह उनकी सरलता-निस्पृहता-ज्ञान-ध्यान आदि के साथ-साथ स्वाध्याय मे तल्लीन रहते हुए को देखकर नत मस्तक हुए बिना नहीं रहता। यद्यपि आज उनका पार्थिव देह हमारे बीच मे नहीं है किन्तु उनका यशस्वी शरीर तथा उनके सदुपदेश युगो-युगो तक हमारे सामने प्रस्तुत रहेगे। उस युग महापुरुष को मेरा शत-शत वन्दन और भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित है। ❖ ❖ ❖

आचार्य श्री : एक प्रेरणा स्त्रोत

✍ इन्दरचन्द नाहटा

आचार्य श्री नानेश के सवत् 2036 के अविस्मरणीय अजमेर चातुर्मास समाप्ति के बाद का यह प्रसग है। जब आचार्य श्री के विहार के दिन थे। उन दिनो आचार्य श्री के पैरो मे कुछ तकलीफ थी, जिसके कारण विहार सम्भव नहीं बन पा रहा था। अपने आत्मवल के कारण वे विहार करने के लिए तत्पर थे लेकिन एक सेवक का महान् पुण्योदय उसे रोक रहा था। सेवक लिक रोड पर रहता था और निस्वार्थ सेवा कर जीवन व्यतीत करता था। उसके अति आग्रह एव शारीरिक इलाज के कारण आचार्य श्री को लिक रोड पर स्थित हमारे निवास स्थान पर पधारना हुआ। सेवक मे सेवा और भक्ति का अद्भुत सामजस्य था। उसके इलाज के कारण पैरो मे शनै·-शनैः सुधार दिखाई दे रहा था।

उक्त प्रसग के कारण मुझे और मेरे परिवार को आचार्यश्री के व्यक्तित्व को निकट से अवलोकन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इतनी कडाके की ठड और रात्रि प्रहर के घोर अन्धकार मे वे प्रतिदिन मध्य रात्रि के ठीक 2.30 बजे नियमित उठ जाते थे और तुरन्त अपनी साधना हेतु ध्यान मे बैठ जाते थे। साधना से निवृत्त होने के बाद तुरन्त कनिष्ठ सतो की खैर खबर लेते और अस्वस्थ सन्तो की सेवा मे लग जाते देख, हम परिवारजन आश्चर्यचकित हो गए। स्वय बुखार मे होते हुए भी इस क्रम मे वे आलस्य नहीं बरतते। हम लोगो ने भी आचार्य श्री के साथ प्रात· 2.30 बजे उठ जाने का नित्य क्रम बना लिया। आचार्य श्री को वन्दना कर, मागलिक ले, सामायिक मे बैठ जाते। कितने स्वर्णिम क्षण थे वे। आचार्य श्री की सौम्य एव शान्त मुख मुद्रा एव उनका प्रतिदिन का प्रथम मागलिक आज भी स्मृति पटल पर तरोताजा है। ऐसे महामानव के साथ बिताये गये क्षणो की स्मृतिया हमारे लिये अनमोल निधि है, जिसका स्मरण मात्र हमारे लिये प्रेरणा प्रदायी है। जिनके पास लम्बे समय तक बैठने को जी चाहे, जिनसे बार-बार बात करने को जी चाहे, जिनकी निकटता मात्र से रोम-रोम पुलकित हो जाता है, रोम-रोम मे नई चेतना का सचार हो जाता है, ऐसे महान् आचार्य श्री नानेश को शत्-शत् वन्दन। ❖ ❖ ❖

समता-दर्शनः व्यापक मानव-धर्म

✍ श्री रणजीतसिंह कूमट

वर्तमान जीवन मे व्यक्ति से अन्तर्राष्ट्रीय जगत् तक व्यापक विषमता एवं उनकी विभीषिका, विग्रह एव विनाश की कगार, असन्तुलन एवं आन्दोलन आचार्य श्रीजी ने अपनी आत्म-दृष्टि से देखा एवं मानवता के करुणा क्रन्दन से द्रवित हो उसको बचाने के लिये उपदेशामृत की धारा प्रवाहित की है।

समता-सिद्धान्त नया नहीं है-वीर प्ररूपित वचन है व जैन दर्शन का मूलाधार है। परन्तु इसे धर्म की सकीर्णता मे बंधा देख व उसकी व्यापक महत्ता का ज्ञान जन-जन को न होने से इसे नये सन्दर्भ व दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया है। यह किसी वर्ग विशेष के लिये नही वरन् प्राणीमात्र के लिये है। यदि मानवता के किसी भी वर्ग ने समता-सिद्धान्त को न समझकर विषमता की और कदम बढाये तो समग्र विश्व के लिये खतरा उत्पन्न हो सकता है। इसी दृष्टिकोण को ध्यान मे रखकर व्यापक मानव-धर्म के रूप मे समता-दर्शन को प्रतिपादित किया है।

समता जीवन की दृष्टि है। जैसी दृष्टि होगी वैसा ही आचरण होगा। जैसा मानव देखता है वैसी ही उसकी प्रतिक्रिया होती है। यदि एक साधारण रस्सी के मनुष्य भ्रमवश सांप समझ ले तो उसमे भय, क्रोध व प्रतिशोध की प्रतिक्रिया होती है। यदि कदाचित् सांप को ही रस्सी समझ ले तो निर्भीकता का आचरण होता है। यही सिद्धान्त जीवन के हर पहलू पर लागू होता है। यदि किसी भी वस्तु को सम्यक् व सही रूप से समझने की दृष्टि रखे व उसी रूप से आचरण करने का प्रयत्न करे तो सामाजिक असन्तुलन, विग्रह व विषमता समाज मे हो नहीं सकती। यही आचार्य श्रीजी का मूल-सन्देश है।

आचार्यश्री ने सिद्धान्त प्रतिपादित कर छोड दिया हो ऐसी बात नही है। सिद्धान्त को कैसे व्यवहार मे परिणत किया जाय, इस पर भी पूरा विवेचन किया है। सिद्धान्त दर्शन के अतिरिक्त जीवनदर्शन, आत्मदर्शन व परमात्मदर्शन के विविध पहलुओ मे कैसा आचरण हो, इसका पूरा निरूपण किया है।

आज की युवा-पीढी पूछती है-धर्म क्या है ? किस धर्म को माने ? मन्दिर मे जाये या स्थानक मे-? अथवा आचरण शुद्धता लाये ? धर्म-प्ररूपित आचरण आज के वैज्ञानिक युग मे कहाँ तक ठीक है व इस का क्या महत्त्व है? कतिपय धर्मानुरागियो के 'धर्माचरण' व 'व्यापाराचरण' मे विरोध को देखकर भी युवा-पीढी धर्म-विमुख होती जा रही है। धर्म ढकोसले में नहीं है। आचरण मे है। धर्म जीवन का अंग है। समता धर्म का मूल है। इस तर्कसगत विवेचन व वैज्ञानिक दृष्टिकोण से आचार्यश्री ने आधुनिक पीढी को भी आकर्षित करने का प्रयत्न किया है।

समतासिद्ध जीवन

✍ प्रो. शिवाशंकर त्रिवेदी

आचार्यश्री का जीवन समग्रत: समताभिमुख है। उनके योग और प्रयोग, चिन्तन और ध्यान, साधना और वैराग्य, वाणी और कर्म, आचार और व्यवहार सबका आधार समत्व है। उनका साहित्य समताभिमुख है, सान्निध्य समत्वानुगुजित है, वाणी मे समत्व घोष है, ध्यान समत्वग्रही जीवन के अतल से वे समत्व का ही रस ग्रहण करते है और व्यावहारिक जीवन मे उसी रस की वृष्टि करते है। पिछली कई शताब्दियो मे समत्व का इतना गहन, जीवन्त, सुदीर्घ, अविचल और नैष्ठिक प्रयोग संभवत: आचार्यश्री के अतिरिक्त अन्य किसी ने नही किया है। वे समग्रत: समत्व एव चेतनानुवर्ती न्याय के मूर्त्त स्वरूप है। उनके जीवन को खण्डित रूप मे देखना, समत्व के खण्ड-खण्ड करने के समान है।

समता दर्शन केवल विचार-सामग्री नही, विचार-क्रान्ति भी नही है, यह तत्त्वत: आचार-क्रान्ति है। अत: इसके विस्फोट की पहली आवश्यकता है कि चेतन जागृत होकर अपने स्वत्व के प्रति सावधान हो जाय। इस क्रान्ति को आगे तभी बढाया जा सकता है जब हम अपनी सचेतना के प्रति आश्वस्त और निष्ठावान हो जायॅ। जडत्व, परीषह और विषमता के प्रति हम व्यामोहवश समर्पित है। इस व्यामोह का टूटना समत्व क्रान्ति की पहली शर्त और उसका अन्तिम चरण है। समत्व सर्व आयामी है। इसके विकास मे जहॉ विश्व का चरम मगल सन्निहित है, वही यह मानव-जीवन का परम पद भी है। यह एक ऐसा दर्शन है, जिसे क्रियान्वित करने के लिये सघर्ष और हिंसा की आवश्यकता नहीं है। हिसक सघर्ष चेतनता का अपमान है। हिसा का भाव हमारी मूर्च्छना का प्रमाण है। समत्व मे तो क्रमिक जागृति और विकास ही सन्निहित है। इसके पहले सोपान पर वैचारिक जागृति, दूसरे पर सदाचार और सत्साधना, तीसरे पर विश्व मंगल का उन्नयन और चौथे पर परम सत्ता का विलास है। यह वैचारिक पिष्टपेषण कम, व्यावहारिक कार्यक्रम विशेष है।

आचार्य श्री नानालालजी म सा ने समता-दर्शन को व्यापक एव व्यावहारिक बनाकर प्रस्तुत किया है। उन्होने कर्मासक्ति से कर्म-समृद्धि की और बढने का आह्वान किया है। कर्मासक्ति में आसक्ति प्रधान होती है। उसमे आसक्ति का स्वामित्व होता है-कर्म परवश होता है, व्यक्ति परवश होता है, जीवन परवश होता है। व्यक्ति अपने कर्मों का स्वामी नही, बल्कि आसक्ति का दास होता है। आचार्य श्री नानालालजी का समता-दर्शन व्यक्ति तक उसका स्वामित्व, उसका पौरुष, उसकी तेजस्विता पहुॅचाने का प्रयास है, अभियान है। उनका विश्वास है कि व्यक्ति के आसक्ति ग्रस्त जीवन मे ही उसके स्वातन्त्र्य एव स्वामित्व बोध का बीजारोपण किया जा सकता है। परिग्रह जहॉ घोर दासता और अध:पतन का सूचक है, त्याग स्वामित्व के उदय का सकेत है। ग्रहण और सग्रह की सनक मे केवल परवशता का ही भाव है। त्याग का भाव ही परिग्रह पर स्वामित्व की एकमात्र परख है। कर्मासक्ति और परिग्रह की बुनियाद ही स्वामित्व एवं स्वाधीनता की शक्तियो से अपरिचय अथवा इनका अप्रकाशन है। समत्व दर्शन इसी आधार पर स्वत्व का दर्शन न होकर स्वामित्व का दर्शन है। स्वत्व का हस्तान्तरण सम्भव है, स्वामित्व को हस्तान्तरित नहीं किया जा सकता। स्वत्व मूर्च्छना का प्रथम लक्षण है, स्वामित्व-बोध जागृति की पहली किरण है।

आचार्य नानेश के प्रवचन-साहित्य का अनुशीलन

✍ डॉ. नरेन्द्र शर्मा कुसुम

आजकल लोग 'प्रवचन' (Sermenizing) शब्द सुनकर चिढ से जाते है। कोई यदि उन्हे प्रवचन देने लगता है तो वे उस व्यक्ति को बोर कहने लगते हैं। दरअसल, प्रवचनो से हम सभी ऊब से गये है। बहुत कम लोग प्रवचन सुनना पसन्द करते है। इसका क्या कारण है ? इसका कारण सभवत: यह है कि प्रवचनकर्ता और श्रोताओ के वीच अपेक्षित संबंध नही पनप पाता,पारस्परिक सप्रेषणीयता का अभाव रहता है। आदाता और प्रदाता मे समीकरण नहीं बैठ पाता। प्रवचनकर्ता के शब्द श्रोताओ को उज्जीवित नही कर पाते। प्रवचन, मात्र वाचिक खिलवाड बनकर रह जाते है और प्रवचनकर्ता एक महज मशीन। यही कारण है कि 'प्रवचन' शब्द इतना अवमूल्यित हो गया है कि लोग प्रवचन सुनने से कतराने लगे है। यह स्थिति इसलिए भी पैदा हुई है क्योंकि प्रवचनकर्ताओ में वह ऊर्जा और प्रेरणा नही रही जो कि आदर्श और तपोनिष्ठ प्रवचनकर्ताओं मे हुआ करती थी। शब्द और कर्म, चिन्तन और आचरण का अद्वैत अब बहुत कम देखा जाता है। प्रवचनकर्ता प्राय: वे ही बाते दोहराते रहते है जो स्वयं न करके, दूसरो से करने की अपेक्षा करते है। परिणाम यह होता है कि प्रवचनकर्ताओ के प्रवचन, मात्र शाब्दिक-व्यायाम बनकर रह जाते हे, श्रोताओ पर उनका इच्छित प्रभाव नही पडता, पर दोष प्रवचनों का नही है। मानव जाति के सचित ज्ञान का कोष महान् व्यक्तियो के प्रवचनो का ही कोष है। विश्व की निखिल संस्कृति प्रधान रूप से प्रवचन प्रेरित रही है। महान संतो के प्रवचन, उनकी आर्षवाणी, उनके आप्त वाक्य-विश्व संस्कृति के सतत प्रेरणास्त्रोत रहे है। इन प्रवचनो ने मनुष्य को अन्धकार से बाहर निकालकर प्रकाश की राह दिखाई है। मनुष्य को पशुत्व से देवत्व की ओर प्रेरित किया है। उसके अनुदात्त जीवन को उदात्त बनाया है, आगम, वेद, उपनिषद् , गीता, कुरान, गुरु ग्रन्थ साहब, बाइबिल मूल रूप से प्रवचन ही तो है। बुद्ध, महावीर, नानक, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द तथा महात्मा गाधी-इनके प्रवचनो ने ही तो मनुष्य को अमृतत्व का मार्ग दिखाया है। क्या कारण है कि इन दिव्य पुरुषो के प्रवचनो को हम बार-बार सुनना और पढ़ना पसन्द करते है ? कारण बिल्कुल स्पष्ट है, ये प्रवचन इन महात्माओ की प्राण ऊर्जा से अभी तक प्रोद्भासित एवं ऊर्ज्वसित है। इन महाप्राण संतो मे वाणी और व्यवहार का द्वैत नही था। जो कुछ वे कहते थे, स्वयं करते थे, जो करते थे वही कहते थे। मानव संस्कृति का इतिहास वाणी और व्यवहार के स्वस्थ समीकरण का ही इतिहास है। ऐसे महात्माओ का ही लोकानुगमन होता है-

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥

(गीता 3, 21)

श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचरण करता है अन्य पुरुष वैसा ही आचरण करते है। वह जो कुछ प्रमाण कर देता है समस्त मनुष्य-समुदाय उसी के अनुरूप बरतने लग जाता है।

इन संतो के प्रवचनो मे इसलिए अधिक प्रभाव और सम्मोहन होता है क्योकि ये प्रवचन इन महात्माओ के स्वयं के अनुभवो पर आधारित होते है। कुछ वे बोलते है वह स्वानुभूत होता है, मात्र पुस्तकीय अथवा शास्त्रीय प्रलाप नहीं। फिर, ये प्रवचन दिव्य-तत्त्व से तरंगायित होते हैं और जब ये प्रवचन तपोपूत सतो के मुख से निकलते

है तो ये सीधे ही श्रोताओ के कर्ण-रध्रो को लाघते हुए उनके मन-प्राणो की गहराईयो में उतरते चले जाते है। अन्तत: ये प्रवचन श्रोताओ की सवेदना और चेतना का मूलाधार बन जाते है। इस प्रकार के प्रवचन, प्रवचनकर्ता और श्रोता-दोनो के लिए ही हितकर होते है। इनसे न केवल श्रोता ही लाभान्वित होते है अपितु प्रवचनकर्ता भी इनके माध्यम से लोकमगल और 'आत्मोत्थान' गुरु-गंभीर दायित्व पूरा करते है-

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्य संशयः॥

(गीता, 18, 68)

जो पुरुष मुझ मे परम प्रेम करके इस 'परम ज्ञान' को मेरे भक्तो मे कहेगा, वह मुझको ही प्राप्त होगा, इसमे कोई संदेह नही।

व्यष्टि और समिष्ट के सम्यक् विकास मे उदारचेतसमयी प्रेरणा से समन्वित सतो और महात्माओ के प्रवचनो की प्रभूत भूमिका रही है। दरअसल, धर्म के सस्थापन, प्रचार-प्रसार मे प्रवचनो का अमूल्य योगदान रहा है। मानव को उदात्त जीवन की ओर प्रेरित करने वाले प्रवचन किसी धर्म, सम्प्रदाय, जाति या देश की सीमाओ मे नही बंधे रहते। इन प्रवचनो का क्षितिज निस्सीम होता है, इनका आकाश व्यापक और विराट। इसलिए वे ही प्रवचन चिरस्थायी और कालजयी होते है जो सार्वभौमिक, सार्वकालिक और सार्वदेशिक होते है। वे ही प्रवचन प्रभावशाली और सनातन होते है जिनका लक्ष्य लोकमगल होता है, व्यष्टि-समष्टि का सतत क्षेम होता है। इन प्रवचनो की अपनी एक शैली होती है। प्रवचनकर्त्ता के भास्वर व्यक्तित्व को पूर्ण उजागर करने वाली। सरल, सहज, बोधगम्य, दृष्टात सम्पन्न, सम्प्रेष्य यह शैली प्रवचन का प्राण होती है। प्रवचनकर्ता के अपने अनुभवो का नवनीत इन प्रवचनो मे सम्पृक्त रहता है।

जैन धर्म के प्रात: स्मरणीय सत आचार्य नानेश जी के प्रवचन इसी शैली के पुष्कल प्रमाण है। इनके प्रवचन-साहित्य के अनुशीलन से वही प्रेरणा प्राप्त होती है जो कि उनके मुखारविन्द से नि:सृत वचनो से। संतश्री के प्रवचन मुद्रित रूप मे भी उतने ही बोधगम्य और प्रभावशाली होते है जितने कि उनको सुनते समय। इसका कारण संभवत: यह है कि नानेशजी प्रवचनो को न केवल मुखरित ही करते है अपितु वे उन्हे स्वयं जीते भी है। उनके चिन्तन और आचरण मे एक अद्भुत साम्य रहता है, विचार और क्रिया मे एक विरल अद्वैत के दर्शन मिलते है। आचार्यश्री के प्रवचनो को सुनना और पढना अपने आप मे एक दिव्यानुभूति (Divine Experience) है। **आध्यात्मिक वैभव** (प्रवचन माला 2, श्री साधुमार्गी जैन श्रावक सघ, बीकानेर से प्रकाशित) मे प्रस्तावना-स्वरूप लिखे प विद्याधर शास्त्री के ये शब्द कितने सार्थक है-

'महाराज का प्रत्येक वाक्य श्रोतव्य, मन्तव्य और निदिध्यासितव्य है। शुद्ध नैतिकता की अपेक्षा इसमे किसी विकृत राजनीति या अन्य किसी भी धर्म या वाद विशेष पर किसी तरह का आक्षेप नही है। यहां तो सर्वत्र कल्याणकारी उपदेशो का प्रकाशमान स्वरूप है जो शास्त्रीय एव ऐतिहासिक दृष्टातो से समर्थित है। **'पर उपदेश कुशल बहुतेरे'** वाली बात आचार्यश्री पर लागू नही होती क्योकि उनका अपना जीवन, प्रवचन और कर्म का एक मनोरम भाष्य है। उनका प्रवचन साहित्य इतना विपुल है, इतना विस्तृत है कि उसके अनुशीलन से श्रोता या पाठक मानव जीवन के विभिन्न पक्षो को आत्मसात करता हुआ, आत्म विकास की ओर प्रशस्त होता हुआ, **'आत्मवत सर्वभूतेषु'** की भावना से ओतप्रोत हो जाता है। उसमे प्राणिमात्र का द्वैत भाव तिरोहित हो जाता है।'

आचार्य नानेश जी के प्रवचन विभिन्न जैन-संस्थानो द्वारा प्रकाशित ग्रन्थो मे संकलित है। समय-समय पर दिये गये ये प्रवचन पुस्तकाकार रूप मे ढल कर भारतीय वाङ्मय के अग बन गये है। इन संग्रहो मे-प्रवचन प्रकाशन समिति, जयपुर द्वारा प्रकाशित **पावस-प्रवचन** (भाग 1, 2, 3, 4, 5, 1972) श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर द्वारा प्रकाशित **प्रवचन-पीयूष** (1980), **आध्यात्मिक वैभव** (वि सं 2014), **ऐसे जीयें** (1986), श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ गंगाशहर-भीनासर द्वारा प्रकाशित **मंगलवाणी** (1981), **जीवन और धर्म** (1982), **अमृत सरोवर** (1982), श्रीमती वाधुदेवी दूगड, देशनोक (राजस्थान) द्वारा प्रकाशित **प्रेरणा की दिव्य रेखायें** (1982) आदि प्रमुख है।

आचार्यश्री के प्रवचनो के दिव्य स्पर्श से ये ग्रन्थ मानवजाति की प्रेरणा के चिरस्थायी दीप्ति स्तम्भ बन गए हैं। इन ग्रन्थो मे एक ही भाव प्रमुख है, एक ही स्वर मुखर है और वह है कि मनुष्य अपने आभ्यन्तर 'दिव्य तत्व' को कैसे उजागर करे? विभिन्न कषाओं से धूमावृत आत्म-दीप को निर्धूम कैसे करे? प्राणिमात्र मे 'समता' का भाव कैसे जागृत हो? और व्यष्टि के पूर्णत्व से समष्टि का पूर्णत्व कैसे प्राप्त हो? यह भाव एक अर्थ मे सनातन भाव है तथा सभ्यता और संस्कृति के सूर्योदयकाल से ही मनुष्य की चेतना को कुरेदता रहा है। समय-समय पर उत्पन्न होने वाले संत-महात्माओ ने अपने-अपने ढंग से इन प्रश्नो के उत्तर खोजने का श्रम किया है। कभी ये उत्तर नितांत दार्शनिक, वायवी और सैद्धान्तिक बन कर रह गये है और कभी अत्यन्त व्यावहारिक। नानेशजी के प्रवचन ज्ञान-गरिमा की आभा से मण्डित होते हुए भी बोझिल नहीं है और न वे मात्र पाण्डित्यपूर्ण या अव्यावहारिक है। एक सुलझे, मनोविज्ञ प्रवचनकार की तरह नानेश जी श्रोता की मानसिकता को अच्छी तरह समझते है, उसकी सीमाओ से परिचित हैं, उसकी बोधवृत्ति का उन्हे सम्यग्ज्ञान है। यही कारण है कि उनके प्रवचन दुरूह, रूक्ष, क्लीष्ट, वायवी न होकर सुगम, सरल, सहज, व्यावहारिक और सम्प्रेष्य होते है। उनके प्रवचनो मे उपयुक्त, सांदर्भिक दृष्टांतो और उदाहरणो का अच्छा समावेश मिलता है। कहीं-कहीं काव्यत्व के भी दर्शन होते है। प्रवचनशैली मे कथाओ, दृष्टांतो, उद्धरणो, रूपको, उपमाओ का बड़ा महत्त्व होता है। इसी प्रकार की शैली श्रोता को बांधे रखती है और उसके मस्तिष्क मे विषय को दीर्घकाल तक थामे रहती है। नानेशजी अपने प्रवचनों में श्रोताओ से संभाषण करते चलते हैं। यही कारण है कि प्रवचनकर्ता और श्रोताओ मे एक 'निकटता' का सेतु बन जाता है। श्रोता, प्रवचनकर्ता को अपना मित्र, दार्शनिक और पथप्रदर्शक (Friend, Philosoper & Guide) मानकर उसके प्रति पूर्ण रूप से समर्पित हो जाता है। उसके प्रति श्रद्धावान बन कर ज्ञान लाभ प्राप्त करता है। नानेशजी के द्वारा प्रयुक्त उदाहरण, दृष्टांत केवल धर्म ग्रन्थो से नही होते अपितु हमारी रोजमर्रा की जिन्दगी से चुने हुए होते है। उनके दृष्टांत यदि एक ओर वेद, उपनिषद् गीता, नीति-शास्त्र एवं जैन वाङ्मय से लिये होते है तो दूसरी ओर वे लोक-कथाओ, लोक-जीवन तथा लोक-व्यवहार से गृहीत होते हैं। उनके प्रवचनो को सुनकर या पढ़ कर यह नहीं लगता कि वे मात्र एक संसारत्यागी संत हैं और उन्हे आसपास की जिन्दगी का कोई ज्ञान या अनुभव नहीं। प्रत्युत्, इन प्रवचनो के श्रवण और अनुशीलन से आचार्यश्री की पैनी, तत्वाभिनिवेषी, सर्वग्राही जीवन दृष्टि का सहज अनुमान लग जाता है। वे सही रूप मे 'जल मे कमलवत्' रहते हुए मनुष्य मात्र को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने मे सर्वथा समर्थ है।

आचार्यश्री के प्रवचन साहित्य का अनुशीलन अपने में एक आध्यात्मिक यात्रा (Spiritual Pilgirimage) है, एक दिव्य अनुभव है। इन प्रवचनो मे नानेश जी मनुष्य मात्र को संबोधित करते हुए कहते है कि मनुष्य अपने प्रयत्नो से ही अपना 'उद्धार' कर सकता है। गीता मे इसी भाव को मूलरूप से कहा गया है पर प्रवचन मे यह भाव ढल कर अधिक प्रभावशाली बन गया है। **'प्रेरणा की दिव्य रेखायें'** नामक संकलन मे इस भाव की सरलता एव बोधगम्यता

की एक बानगी देखी जा सकती है–

'मेरा काम उपदेश देना है, मार्ग बताना है परन्तु उस पर चलना तो आपका स्वयं का काम है। यह आपका दायित्व है कि अपना उद्धार स्वयमेव करे। एक व्यक्ति कमरा बंद कर रजाई ओढे सो रहा है। वह आंखो पर पट्टी बाध लेता है और फिर चिल्लाता है कि इस कपडे ने मेरी आंखे बाध दी है, रजाई ने मुझे ढक लिया है, कोई आकर मुझे बचाओ। अदर से सांकल लगी हुई है। दूसरा व्यक्ति अदर नही जा सकता। बाहर से कोई व्यक्ति उसे सुझाव देता है कि अरे भाई! तुमने अन्दर से सांकल लगा रखी है, रजाई तुमने ओढ रखी है, आंखों पर पट्टी तुमने बांध रखी है। अपने हाथो से ही पट्टी ढीली कर लो, रजाई फैक दो, अन्दर की सांकल खोल दो, बाहर की हवा लो, स्वयमेव तुम मुक्त हो जाओगे। वह कहता है कि 'मै तो यह सब नही कर सकता, आप ही मेरी मदद कीजिये। ऐसे व्यक्ति के विषय मे आप क्या सोचेगे? यही न कि वह मूर्ख है। ठीक इसी तरह अपने-अपने कर्मों के आवरण को स्वयमेव हटाने मे समर्थ है, दूसरा कोई नहीं।' (पृ 28-29)

उनका कहना है कि 'आत्मोद्धार' की प्रक्रिया मे, मनुष्य की आत्मा पर पडी हुई भारी शिलाओ को हटाना बहुत जरूरी है। ये शिलाए बाहरी नही है। बाहरी शिलाये तो दूसरो की सहायता से भी हटाई जा सकती है परन्तु आत्मा पर पडी हुई आठ कर्मो की भारी शिलाओ को हटाने के लिए स्वयं को ही पुरुषार्थ करना पडता है। दूसरा व्यक्ति निमित्त मात्र हो सकता है, उपादान नहीं। इस भाव को आचार्यश्री की प्रवचनशैली के माध्यम से सुने या पढे तो कैसा लगता है–

'मै आपसे एक सीधा सा प्रश्न करू। यदि कोई व्यक्ति किसी दुर्घटना के कारण पत्थर की शिला के नीचे दब जाये तो वह क्या करेगा? आप चट उत्तर देगे कि वह किसी भी तरीके से निकलने की कोशिश करेगा। यदि उसके हाथ खुले है तो उनसे शिला को हटाने का प्रयास करेगा। उस समय यदि कोई उसे कहे कि कलकत्ते से सोहन हलवा आया है, अपने हाथो से उसे ग्रहण करो। क्या वह व्यक्ति उस समय अपने हाथों को हलवा ग्रहण करने में लगायेगा? या अपने पर पड़ी हुई शिला को हटाने के लिए हाथो का उपयोग करेगा। स्पष्ट है कि वह पहले शिला को हटाने का प्रयास करेगा।   इन आठ कर्मों की शिलाओ को हटाने का काम आसान नहीं है। यह एक अत्यन्त कठिन कार्य है परन्तु प्रबल पुरुषार्थ के द्वारा साध्य है।' (वही पृ 5-6)

'आत्मोत्थान' के शुभ कर्म को बिना प्रमाद के प्रारम्भ कर देना श्रेयस्कर है क्योंकि–

परिजुरई ते सरीरयं, केसा पडुंरया हवन्ति ते।
से सव्व बलेण हावई, समयं गोयम मा पमायए॥

तुम्हारा शरीर जब ढल जायेगा, मुंह पर झुर्रिया पड जायेगी, बाल सफेद होगे और अगोपाग जर्जर हो जायेगे, तब क्या कर पाओगे? मुहूर्त के भरोसे मत बैठे रहो। प्रमाद मत करो। आत्मोत्थान के शुभ कार्य को आरम्भ कर दो।

'आत्मोत्थान' की प्रक्रिया मे जीवन को सस्कारित करना बहुत आवश्यक है क्योकि असंस्कारित जीवन मे आत्मोत्थान सभव नही है। आचार्यश्री के प्रवचन का एक अंश दृष्टव्य है–

'असंस्कारित जीवन मे किसी तत्त्व को डाल दोगे तो उसका संस्कार नही हो पायेगा, उसका दुरुपयोग होगा। अपरिपक्व घडे मे यदि अमृत डाल दोगे तो घडा भी चला जायेगा और अमृत भी।' (पावस-प्रवचन भाग 1 पृ 17)

इसलिए सस्कारित जीवन बनाने के लिए सुमति जागृत करना बहुत आवश्यक है। सुमति के बिना जीवन सस्कारित नहीं बन सकता। कुमति का जीवन असंस्कारित जीवन है, अज्ञान का जीवन है। इस भाव को कितनी

सरलता से नानेश जी अपने प्रवचन मे प्रस्तुत करते है–

'आप देख रहे है, एक बच्चे के सामने बहुमूल्य रत्न रख दीजिए। आप अपनी अंगूठी का तीन लाख या पाच लाख का हीरा रख दीजिए। वह बच्चा उस हीरे की कीमत क्या करेगा? वह बच्चा उस हीरे को क्या समझेगा? वह बच्चा उस हीरे को यत्न से रखने का प्रयत्न करेगा? नही। वह तो उसे उठाकर फेक देगा। बच्चे के जीवन मे हीरे की पहचान का संस्कार नही है। इसलिए वह बच्चा उस ज्ञान के अभाव मे, प्रारंभिक स्थिति मे असंस्कारित होने के कारण हीरे के विषय मे कुछ नही जान पा रहा है।' (वही पृ 17)

संस्कारित जीवन 'विमलता' का जीवन है। विमलता के अभाव मे ही, विषमताएं की ज्वालाएं सुलग रही है। यदि मनुष्य का मन विमल बन जाता है, इसमे पवित्र सस्कारों का सचार हो जाता है तो तमाम कुटिलताए और मलिनताएं समाप्त हो जाती है।

आचार्य नानेश जी के प्रवचनो मे जिस प्रमुख भाव का सौरभ बिखरा रहता है वह 'समता' का भाव है। आचार्यजी का मानना है कि व्यक्ति से व्यक्ति तभी जुड सकता है जबकि उसमे 'समता' दृष्टि हो। समता के अभाव मे विषमताओ का जन्म होता है और विषमता से विघटन और बिखराव। समता की विरोधी स्थिति होती है ममता की स्थिति। ममता मे 'मम' शब्द का अर्थ होता है 'मेरा' और ममता का अर्थ है 'मेरापन'। जहां 'मेरापन'–ममता है, वहां स्वार्थबुद्धि है, संग्रहवृत्ति है और पदार्थो के प्रति लोलुपता है। जहा ममता है वहां समता नहीं है या यो कहे कि सबको अपने तुल्य आत्मवत् समझने की क्षमता नही। नानेश जी का यह कथन कितना युगानुकूल और सादर्भिक है–

'भौतिक विषमता के कुप्रभाव से दृष्टि कितनी स्थूल बन गई है कि जब मुद्रा के अवमूल्यन का प्रसंग आता है तो देश के अर्थशास्त्री और राजनेता चिन्तित होते है किन्तु दिन–रात जो भारतीय–जन के चारित्र का अवमूल्यन होता जा रहा है, उसके प्रति चिन्ता तो दूर उसकी तरफ नेता लोगो की कार्यकारी दृष्टि नहीं जाती। विषमता के इस सर्वमुखी संत्रास से विमुक्ति समता को जीवन मे उतारने से ही हो सकेगी। समता की भूमिका जब तक जन–जन के मन मे स्थापित नहीं होगी, तब तक जीवन की चेतना–शक्ति के भी दर्शन नही होगे।' (**जीवन और धर्म**, पृ 32)

समता की दृष्टि, व्यष्टि और समष्टि, दोनों स्तरो पर आवश्यक है। आज के विश्व की अनेकानेक समस्याओ का समाधान 'समता दृष्टि' से ही संभव है। आज के परिप्रेक्ष्य मे आचार्यश्री के ये शब्द कितने सारगर्भित हैं–

'समता–जीवन–दर्शन के बिना शाति होने वाली नहीं है। अन्य अनेक प्रयत्न चाहे किसी धरातल पर होते हो,वे किसी भी लुभावने नारे के साथ हो परन्तु जीवन मे जब तक समता–दर्शन नही होगा, तब तक वे सब नारे केवल नारो तक सीमित रहेगे और उनके साथ विषमता की जडे हरी होती हुई चली जायेगी। इसलिए समता–जीवन–दर्शन को मुख्यता अपने जीवन मे उतारने के लिए तत्पर हो जाते है तो मानव–जीवन मे एक नये आलोक और एक नई शात क्रांति का प्रादुर्भाव हो सकता है।' (**आध्यात्मिक वैभव**, पृ 65)

'आत्मवत् सर्वभूतेषु' की ऐसी व्यापक एवं सर्वग्राह्य व्याख्या अन्यत्र कहां मिल सकती है? नानेश जी मात्रस्वप्नदर्शी न होकर सही अर्थों मे एक कर्मयोगी है। स्थित प्रज्ञ एवं स्थिरधी है। उनके लिए समस्त मानव ज्ञान 'हस्तामलकवत्' है और ये उस ज्ञान को व्यक्ति और समाज के परिष्करण मे लगाना अभीष्ट समझते है। शास्त्रीय ज्ञान की व्यावहारिक एवं जनसंवेद्य व्याख्या उनके प्रवचनो का प्राणतत्व है। वे गगन विहारी दार्शनिक न होकर जीवन की कठोर भूमि पर विचरण करने वाले कर्मठ तापस हैं। ऐसे तपस्वी जो कन्दरावासी न होकर समाज की धड़कनों को समझते हें, आज के तरुण–वर्ग को उद्‌बोधित करते हुए वे कहते हैं–

'आज का तरुण वर्ग कानो मे तेल डाल कर सोया हुआ है। तरुण सोचते है कि धर्म करना तो वृद्धो का काम है। हमको तो राजनीति मे भाग लेना है, या नौकरी अथवा व्यवसाय करना है। यह वर्ग जीवन के लक्ष्य को भूला हुआ है।' (वही पृ 70)

'ऐसे जीए' नामक सकलन मे आचार्यश्री ने जीवन जीने की कला का मर्म उद्घाटित किया है-जो भी काम करे, चाहे वह छोटा से छोटा भी क्यो न हो, उसे मनोयोग पूर्वक सम्पन्न करने का प्रयास करे, जिससे कि आपको सही ढग से जीने की कला प्राप्त हो सके। (पृ 16-17) **'योगः कर्मेषु कौशलम्'** की कितनी सरल व्याख्या।

आचार्य नानेश जी के प्रवचनो मे बुद्ध, महावीर, ईसा, नानक, रामकृष्ण परमहस, विवेकानद, महर्षि अरविन्द, महात्मा गाधी प्रभृति महात्माओ के भाव और कर्मलोको का प्रतिबिम्ब दिखाई पडता है। इस दृष्टि से इन प्रवचनो मे एक विशेष प्रकार की विश्वजनीनता (Universality) है। मानव की 'समग्र चेतना' को इन प्रवचनो मे संजोना नानेशजी जैसे तपस्वी संत का ही कर्म हो सकता है। उनके प्रवचन-साहित्य का अनुशीलन, चिन्तन-मनन तथा तदनुसार आचरण व्यक्ति और समाज दोनो के हित मे है! वे व्यक्ति एवं सस्थाये धन्य है जो आचार्यश्री की वाणी को जन-जन तक पहुंचाने का मंगलमय कार्य कर रही है। -7च2, जवाहर नगर, जयपुर-4

कंकर और गेहूँ

आचार्य श्री नानेश

एक मनुष्य ने बहुत बडी गेहूँ की राशि देखी, जिससे बहुत अधिक ककर मिले हुए थे। फिर उसने यह विचार किया कि इस गेहूँ के साथ बहुत ककर है और यदि ये ककर के साथ खाए गए तो मेरे जीवन के लिए घातक बनेगे। मै इन ककरो को बीन लूं तो शुद्ध गेहूँ मेरे जीवन के लिए हितावह हो सकते है। इस भावना से यदि वह गेहूँ को देखना चालू करे और उसमे रहने वाले ककरों को चुनना चालू करे तो आहिस्ता-आहिस्ता वह उस गेहूँ की राशि को कंकरो से रहित कर सकता है। परन्तु यदि कोई चाहे कि गेहूँ की राशि को मै एक साथ ही ककरो से रहित कर दू तो यह शक्य नही है।

इस जीवन की भव्य राशि मे कंकरो के समान जो हीन-भावनाओ का संचय है, मलिन तत्त्वो की उपस्थिति है, यदि उनको चुनने का कोई अभ्यास बना ले तो वह प्रतिदिन अपने गुणो मे वृद्धि करता हुआ, अपने जीवन मे पुण्यशील बन सकता है।

आचार्यश्री नानेश के उपन्यास : कथ्य और शिल्प

✍ प्रो. महेन्द्र रायजादा

आचार्य श्री नानेश जैन आगमो तथा शास्त्रो के मर्मज्ञ विद्वान है। वे समता दर्शन के अध्येता, व्याख्याता तथा पुरस्सरकर्त्ता है। श्री नानेश जैन धर्म के अनन्य साधक होने के अतिरिक्त साहित्य के साधक और सृजनात्मक प्रतिभा के धनी भी है। उनकी प्रतिभा बहुमुखी है। वे अपने तात्त्विक और गूढ विचारो को सीधी-सादी एवं सरल भाषा मे अभिव्यक्त करने मे सिद्धहस्त है। उन्होने प्राचीन लोककथाओ के द्वारा मानव जीवन के सत्य एवं मर्म को अपनी कथा-कृतियो के माध्यम से उद्घाटित किया है।

कथा-कहानिया सुनने के प्रति मानव का आकर्षण चिरकाल से रहा है। बालक से लेकर वृद्ध तक सभी को कथा-कहानियो द्वारा जीवन के यथार्थ और आदर्श को आसानी से समझाया जा सकता है। आचार्य नानेश ने अपने चातुर्मास के दौरान अपने प्रवचनों मे समय-समय पर अपने नैतिकतापरक मूल्यवान धार्मिक विचार कथा-कहानियो के माध्यम से रोचक ढंग से व्यक्त किये है। उन्हीं आख्यानो को विद्वानो ने संकलित संपादित कर उपन्यासो के रूप मे प्रस्तुत किया है। उपन्यास, साहित्य की एक ऐसी विधा है जो जीवन के गूढ विषयो को सरस और सुगम बना कर प्रस्तुत करती है। आचार्य नानेश ने अपने सद्विचारो को समता दर्शन मे निरूपित कर अस्पृश्यता-निवारण हेतु महान् कार्य किया है। मध्यप्रदेश के मालवा क्षेत्र के अस्पृश्य श्री नानेश के सदुपदेशो तथा प्रवचनो ने प्रेरणादायी कार्य किया है। जनमानस मे संयम, नियम, समताभाव, त्याग और विवेकशीलता को जागृत करने मे इन कथाओ का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

आचार्यश्री के चार उपन्यास अब तक प्रकाशित होकर सामने आये है, जिनका कथ्य और शिल्प इस प्रकार है-

1. ईर्ष्या की आग :

यह लघु उपन्यास आचार्य नानेश के प्रवचनो का अंश है। आचार्यश्री द्वारा अपने प्रवचनो मे कही गई रोचक कहानी को श्री ज्ञानमुनिजी ने संकलित एवं संपादित कर उपन्यास के कलेवर मे सजाया-संवारा है। आधुनिक युग मे कहानी और लघु उपन्यास अधिक लोकप्रिय है। इस दृष्टि से यह कथाकृति पाठको के लिए मार्गदर्शन का कार्य करती है।

प्रस्तुत उपन्यास मे मेदनीपुर निवासी संपत सुभद्र सेठ के दो पुत्र सुधेश और अवधेश तथा पुत्रवधुए भामिनी और यामिनी की कथा प्रस्तुत की गई है। बडा भाई सुधेश बचपन से ही स्वार्थी और कपटी है। छोटा भाई अवधेश उसके विपरीत परमार्थी, सरल और ईमानदार है। पिता की मृत्यु के बाद घर-गृहस्थी का भार बडे भाई सुधेश पर आया। सुधेश विवाहित था और उसकी पत्नी भामिनी भी उसी की तरह स्वार्थी, कपटी और ईर्ष्यालु थी। अवधेश अपने बडे भाई सुधेश और भाभी की बहुत इज्जत करता था और आज्ञाकारी भी था। अवधेश को उसकी भाभी जो कुछ रूखा-सूखा खाने को देती, उसे वह समभाव से संतोषपूर्वक ग्रहण कर लेता था। अवधेश साधु और मुनियो का सत्संग करता था। अत: वह निन्दा और प्रशंसा मे समभाव रखता था तथा बड़े भाई और भाभी द्वारा दिये गये कष्टो को सहन करता था। सुधेश ने अपने छोटे भाई अवधेश का विवाह एक गरीब घराने की कन्या यामिनी से कर दिया।

कुछ दिनो के पश्चात् सुधेश और भामिनी ने अवधेश और यामिनी को अपमानित कर अलग रहने के लिए बाध्य किया। अवधेश अपनी पत्नी यामिनी के साथ एक खण्डहर वाले टूटे-फूटे मकान मे रह कर मेहनत मजदूरी कर जीवन निर्वाह करने लगा। दूसरी ओर सुधेश व्यापार करने लगा और अपनी पत्नी भामिनी सहित सुख और वैभव का जीवन व्यतीत करने लगा।

एक दिन अवधेश लकडी काटने जगल मे गया। वहा उसे एक योगी मिले और उन्होने अवधेश को त्याग-प्रत्याख्यान की बात कही और गीली लकडी काटने का निषेध किया। कई दिनों तक अवधेश को सूखे वृक्ष दिखलाई नही दिये और उसे अपनी पत्नी सहित निराहार रहना पडा, किन्तु उस स्थिति मे भी वे सतोषपूर्वक प्रसन्न रहे। एक दिन देवालय के कपाट कुल्हाड़े से तोडते समय सोमदेव प्रकट हुए और अवधेश के सयम-नियम का प्राणपन से पालन करने को देखकर उसे वरदान दिया। फलस्वरूप सूखी लकडिया चदन बन गई और उसे उन्हे बेचने पर बीस हजार रुपए प्राप्त हुए। बाद मे वह ईमानदारी से व्यापार कर सदाचारिणी यामिनी सहित सुखपूर्वक रहने लगा। भामिनी यामिनी से सारी बात जानकर अपने पति सुधेश को सोमदेव से वरदान लेने भेजती है किन्तु वहा जाकर सुधेश को जान के लाले पड जाते है और देव के समक्ष प्रतिज्ञा करने पर उसे छुटकारा मिलता है।

अत मे सुधेश और भामिनी को अपने किये पर पश्चात्ताप होता है। सुधेश सोमदेव के आदेशानुसार अपने पिता की सम्पत्ति का आधा भाग ब्याज सहित अवधेश को देने पर विवश होता है। अवधेश के यहा पुत्रोत्सव का आयोजन होता है। सुधेश और भामिनी अवधेश और यामिनी के साथ सद्भावना पूर्वक रहने लगते है। अन्ततोगत्वा महायोगी के दर्शन प्राप्त कर अवधेश और यामिनी परम शाति और आनद की अनुभूति से सम्यक् साधना की गहराइयो मे पेठ कर महामानव की दिशा की ओर अग्रसर होते है।

उपन्यासकार ने इसके पात्रो मे अवधेश और यामिनी को सदाचारी, सात्विक, परमार्थी और परम सतोषी दर्शाया है तथा सुधेश और भामिनी को स्वार्थी, ईर्ष्यालु, बेईमान और कपटी बतलाया है। अवधेश और यामिनी परम त्यागी, समतावान और श्रमण संस्कृति के अनुगामी है। इस उपन्यास का कथानक पाठक को सद्प्रवृत्तियो की ओर उत्प्रेरित कर उदात्त जीवन मूल्यो की ओर उन्मुख करता है।

2. लक्ष्य-वेध :

इस उपन्यास का कथानक 25 परिच्छेदो मे विभक्त है। इसकी कथा मानसिह और अभयसिंह के आदर्श भ्रातृ-प्रेम को लेकर लिखी गई है। इस उपन्यास की कथा वस्तु प्राचीन लोककथा के आधार पर बुनी गई है। कथानक का उद्देश्य अपने 'स्व' को जागृत कर सशक्त बनाना है। आज व्यक्ति का 'स्व' अस्थिर और चचल बना हुआ है। फलतः वह पथभ्रष्ट और दिशाहीन हो रहा है। लेखक ने अभयसिह के माध्यम से भीतरी लक्ष्य अर्थात् त्याग और सेवा की वृत्ति का समर्थन करते हुए मानसिंह के मध्य से बाह्य लक्ष्य और भोगवृत्ति से विरत होने का सकेत किया है। लेखक का उद्देश्य मानव के आत्मधर्म तथा समाज धर्म के प्रति कर्त्तव्य पालन की भावना को जागृत करना है।

इस उपन्यास की सक्षिप्त कथा इस प्रकार है-

महाराजा प्रतापसिह के मानसिंह और अभयसिह दो पुत्र थे। राजा प्रतापसिह प्रजापालक, चारित्रवान, न्यायप्रिय और आदर्श जीवन व्यतीत करने वाले लोकप्रिय शासक थे। मानसिंह और अभयसिह दोनो भाइयो मे पारस्परिक प्रगाढ प्रेम था। मानसिंह भोग-लिप्सा और रसिकता मे विश्वास करता था, किन्तु अभयसिंह सात्विक विचारो का विवेकशील युवक था। एक दिन दोनो भाई नगर के प्रसिद्ध उद्यान मे कमलताल के निकट बैठे हुए वार्तालाप कर रहे

थे। तालाब की दूसरी ओर नगर श्रेष्ठी की कन्या अन्य सखियो के साथ जल गगरी भर कर खड़ी थी। मानसिंह अपने तीर से लक्ष्य भेद कर नगर श्रेष्ठी की कन्या की गगरी (कलशी) का छेदन करता है। पर अभयसिह को मानसिंह का यह कार्य अच्छा नही लगता है। अभय का विश्वास था कि अपनी कला अथवा ज्ञान का उपयोग पर पीडन मे नहीं है। प्राणीमात्र को सुख पहुंचाना हमारा आन्तरिक लक्ष्य होना चाहिए। अभयसिंह का जीवन इसी आन्तरिक लक्ष्य प्राप्ति हेतु समर्पित रहता है। जब महाराजा को ज्ञात होता है कि राजकुमार मानसिंह ने नगर श्रेष्ठी कन्या की जल-कलशी को छेदन करने का अपराध किया है, वह उसे राज्य से निकाल देता है। साथ ही अभयसिंह को भी राज्य से निष्कासित कर देता है क्योकि उसने मानसिंह के इस अपराध की सूचना राजा को नहीं दी थी।

दोनो राजकुमार इस निर्वासन काल मे अनेक प्रकार के कष्टो का बडे धैर्य, साहस और विवेकशीलता से सामना करते है। दोनों भाइयो का बिछोह भी होता है। जगल मे लक्ष्मी् और कालका देवियो का आगमन और उनके द्वारा मार्गदर्शन होता है। नाग की मणि लेने के बाद अभयसिंह की नागिन के दश से मृत्यु, तात्रिक महात्मा के मंत्र से अभय का विषहरण, श्रेष्ठी कन्या द्वारा परिचर्या और उससे विवाह। राजा की नि:संतान मृत्यु, उत्तराधिकारी के लिए हथिनी द्वारा माल्यार्पण। इधर अभयसिंह बसन्तपुर के एक बडे व्यापारी धनदत्त के साथ रत्न दीप जाता है। रत्नद्वीप की राजकुमारी रत्नावली अभयसिंह का वरण करती है। अभय और रत्नावली के जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ होता है और दोनो प्रेम के पवित्र बंधन मे बंध जाते हैं। दोनो विशुद्ध प्रेम और आचरण की शुद्धता में पूर्ण निष्ठा रखते हैं।

अन्त मे मानसिह और अभयसिंह का राम और भरत की तरह मिलाप होता है। दुष्ट धनदत्त को फासी की सजा सुनाई जाती है। महाराजा प्रतापसिंह विरक्त हो राज्य का भार युवराज अभयसिंह को सौप देते है। मानसिंह अपने पिता प्रतापसिंह के साथ साधना के मार्ग पर चल पडते है। राजा अभयसिंह अपनी महारानी मदन-मंजरी व रत्नावली के साथ रत्नद्वीप के भी राजा बन जाते है। कालान्तर मे अभयसिह अपने पुत्रो को राज्य सौंप कर दोनों महारानियो सहित भागवती दीक्षा ग्रहण कर आत्म-साधना मे लीन हो जाते है।

लक्ष्य-वेध का कथानक प्रेम, संयम, न्याय और समाज-धर्म के भावो को जागृत करता है। इस उपन्यास का नायक अभयसिंह सात्विक गुणो एवं सद्प्रवृत्तियो से युक्त हैं। प्राचीन लोककथा पर आधारित इस उपन्यास मे मानव जीवन का यह सत्य प्रतिपादित किया गया है कि मानव का लक्ष्य 'स्व' को जागृत कर सशक्त बनना है। आज व्यक्ति अपने केन्द्र 'स्व' से हट कर परिधि की ओर दौड रहा है। अत: वह पथभ्रष्ट होकर दिशाहीन हो रहा है। कथाकार मानसिंह के माध्यम से 'बाहरी लक्ष्य' अर्थात् भोग दृष्टि की ओर संकेत करता है तथा अभयसिंह के माध्यम से भीतरी लक्ष्य अर्थात् त्याग दृष्टि तथा सेवावृत्ति का प्रतिपादन करता है।

इस उपन्यास द्वारा विद्वान् लेखक व्यक्ति के अंदर समाज के प्रति उत्तम कर्त्तव्य बोध की भावना जागृत करता है। नगर श्रेष्ठी जयमल धर्म की सामाजिकता का पोषण करता है और नगरवासियो के चारित्र को बिगडने देना नहीं चाहता है। समाज धर्मिता मनुष्य में उदात्त लोकसेवा की भावना जागृत करती है। आदिवासियो को वह अपना प्यार देता है तथा उन्हे ज्ञानदान देकर सुसस्कारी बनाता है। पन्ना कुम्हार निर्लोभी है और घूस मे वह अशर्फिया लेने से इन्कार कर देता है। कान्ता दासी सच्ची नारी है और वह अपनी स्वामिनी रत्नावली का निष्ठापूर्वक साथ देती है। धनदत्त दुष्ट है और किसी भी प्रकार से धन कमाना उसका लक्ष्य है। उपन्यास के अंत मे दुष्ट पात्रो के लिए उचित दण्ड की व्यवस्था कर सदाचरण और मन की शुद्धि पर बल दिया गया है। अभयसिंह की दोनो पत्नियां मदनमंजरी और रत्नावली शील और सदाचार का आदर्श है, उनमे सेवा और त्याग की भावना विद्यमान है। कथानक मे कर्म और

पुरुषार्थ का सिद्धान्त प्रतिपादित किया गया है।

उपन्यास के घटना-संयोजन मे विभिन्न रूढियो का आश्रय लिया गया है। राजकुमार द्वारा जल-कलशी छेदन, राजकुमारो का निर्वासन, वन-वन भटकना, लक्ष्मी और कालिका देवियों का आगमन, उनके द्वारा मार्गदर्शन, नर राक्षस का आतंक, मणिधर सर्प, सर्पिणो का दश, तांत्रिक द्वारा मत्र से विष उपचार, 32 लक्षणो वाले पुरुष की बलि का विधान आदि रूढियो के प्रयोग मे कथा मे कौतूहल और रोचकता का समावेश किया गया है।

3. अखण्ड सौभाग्य :

आचार्यश्री नानेश के प्रवचनो के आधार पर प्रकाण्ड विद्वान् श्री शातिचन्द्रजी मेहता द्वारा इस उपन्यास का सपादन किया गया है। इस कथाकृति मे महाराज चन्द्रसेन आदि उनकी पटरानी तथा युवराज आनद सेन के माध्यम से समतावान जीवन, क्षमाशीलता, राजा के कर्त्तव्य तथा विनयशीलता आदि मानवीय उदात्त गुणो का प्रतिपादन किया गया है। कथानक रोचक एवं कौतूहलवर्धक है।

इस उपन्यास का कथानक संक्षेप मे इस प्रकार है-

ऐतिहासिक चम्पा नगरी अपने राज्य वैभव के कारण इतिहास मे प्रसिद्ध है। यहां के राजा प्रजा-हितकारी, समतावान और जनकल्याण के प्रति निष्ठावान थे। इसी परंपरा मे सम्राट चन्द्रसेन चम्पा नगरी के शासक बने। उनके कोई सन्तान नहीं थी। अत: वे इस कारण चितित रहते थे कि उनका उत्तराधिकारी कौन होगा? वे देवी-देवताओ को मनोतियां करते रहते, पर उनकी महारानी ज्ञानवान तथा समतावती थी, वह कर्म सिद्धान्त मे विश्वास रखती थी। महाराजा को खिन्न देखकर उसने दूसरे विवाह की अनुमति दे दी। दूसरे विवाह से भी उन्हे सन्तान की प्राप्ति नहीं हुई। इस प्रकार राजा चंद्रसेन ने एक के बाद एक बारह विवाह किये। बडी रानी के स्नेह एवं समतामय जीवन तथा सद्व्यवहार के कारण सभी रानियां प्रेमपूर्वक रहती थी। राजा चद्रसेन स्वयं बडी रानी के श्रेष्ठ विचारो एव आदर्श जीवन से प्रभावित थे।

श्री विद्याधर की पुत्री विश्व सुन्दरी श्री चद्रसेन की बारहवी रानी थी जो वास्तव मे अपूर्व सुन्दरी थी। दैवयोग से विश्व सुन्दरी गर्भवती हो जाती है। राजा चद्रसेन विश्व सुन्दरी की देखभाल का कार्य अनुभवी नाइन सलखू को सौपते हैं, किन्तु अन्य रानियो को विश्व सुन्दरी से ईर्षा हो जाती है और वे सलखू नाइन को स्वर्णाभूषण का प्रलोभन देकर विश्व सुन्दरी की भावी सतान को नष्ट करने हेतु षड्यत्र रचती है। सलखू नाइन प्रलोभन मे आकर विश्व सुन्दरी के जुडवा शिशुओ को एक अधे कुए मे फैक देती है और महाराजा से असत्य कह देती है कि रानी ने कुत्ते के दो बच्चो को जन्म दिया है। फक्कड बाबा ब्रह्मानंद द्वारा विश्व सुन्दरी के दोनो बच्चो (आनदसेन और चम्पकमाला) की रक्षा होती है।

अन्त मे महाराजा चम्पानगरी से आनन्दपुर जाते है। वहा अपने पुत्र आनंदसेन और पुत्री चम्पकमाला से मिलकर अत्यन्त प्रसन्न होते है। शीलावती आनंदसेन को स्वामी स्वीकारती है। राजा चन्द्रसेन षड्यत्रकारी ग्यारह रानियो को मृत्यु दण्ड और सलखू नाइन को राज्य निष्कासन का आदेश देते है। किन्तु विश्व सुन्दरी और आनन्दसेन के तथा चम्पकमाला के कहने पर मृत्यु दण्ड को देश निष्कासन मे परिवर्तित कर देते है। महाराजा चन्द्रसेन, बडी रानी, आनंदसेन, विश्व सुन्दरी, चम्पकमाला आदि सहित चम्पानगरी लौटते है। वे राज सभा मे आनन्दसेन को अपना उत्तराधिकारी घोषित करते है। महाराजा चन्द्रसेन, सभी रानिया तथा राजकुमारी चम्पकमाला भागवती प्रव्रज्या ग्रहण करते हैं। आनदसेन अपनी रानी शीलावती सहित धर्मानुसार अपना कर्त्तव्य पालन करते है।

उपन्यास के अन्तिम अश मे आर्य जिनसेन से उद्‌बोधित होकर मुमुक्षु आत्माओ का संयम धारण करना आदि कौतूहलवर्धक है। इस कथाकृति मे सत्य, समता भावना तथा नवकार महामत्र की महत्ता और साधना का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। साथ ही समता, आस्था, शील और विनय को अखण्ड सौभाग्य का देने वाला दरसाया गया है। कथा में निरन्तर रोचकता बनी रहती है।

कुंकुम के पगलिए :

आचार्य श्री नानेश ने अपने अजमेर चातुर्मास के दौरान अपने प्रवचनो में इस उपन्यास की कथा का उपयोग किया था। श्री शान्ति चन्द्र मेहता ने इस कथाकृति का सुसम्पादन किया है। इस उपन्यास का कथानक ३४ परिच्छेदो में विभक्त है। श्रीकान्त और मंजुला इस उपन्यास के नायक और नायिका है। दोनो का आदर्श चरित्र नैतिक सदाचार से युक्त है। लौकिक प्रेम से परिपूर्ण मंजुला द्वारा नववधू के रूप मे बनाये गए कुंकुम के पगलिए अनेक घटना-चक्रो से गुजरकर तप और त्याग की अग्नि मे दहकते हुए उसे आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर करते है। कथानक का सृजन लोकभूमि के धरातल पर हुआ है। मंजुला के पगलिए लाल कुंकुम के हैं जो अनुराग, सुख और अखण्ड सौभाग्य के प्रतीक है।

श्रीपुर नगर में श्रेष्ठ वर्ग का श्रीकान्त नामक एक सस्कारशील, स्वाभिमानी और पुरुषार्थी युवक अपनी माता और छोटी बहन पद्मा के साथ रहता था। श्रीकान्त का विवाह एक सुशील सुसंस्कारी मंजुला नामक कन्या से हुआ था। मंजुला के माता-पिता भी सम्पन्न एवं सद्‌प्रवृति वाले थे। नववधू सौ. मंजुला के पगतलियो मे कुंकुम का लेप किया गया ताकि ससुराल की हवेली मे पडने वाला उसका प्रत्येक चरण कुंकुम के पगलिए मांडता जाए, उसका प्रत्येक चरण इस घर को कुंकुम की तरह मंगलमय बनावे।

श्रीकान्त सादगी पसंद एक स्वाभिमानी युवक था। धन और वैभव की उसे चाहना नही थी। अपने पिता की सम्पत्ति को वह मां के दूध की तरह पवित्र मानता था और उसका उपयोग अपने लिये नहीं करता है। वह अपने पुरुषार्थ से अर्जित की गई सम्पत्ति को निजी सम्पत्ति मानता था। अत: विवाह के दूसरे दिन ही वह स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करने की कामना से अपनी जीविका के लिये पुरुषार्थ के पथ पर चल पड़ता है। उसे विश्वास है कि उसकी पत्नी मंजुला के कुंकुम के पगलिए और उसका शील-सौभाग्य बनकर उसे सदैव सुखी रखेगा।

इधर श्रीकान्त पुरुषार्थी बनकर अनजान पथ पर अग्रसर हो जाता है। उधर श्रीकांत की अनुपस्थिति मे उनकी पत्नी मंजुला पर उसकी मां और बहन पद्मा द्वारा मिथ्या आरोप लगाये जाते है और घर से निकाल दिया जाता है। मंजुला दर-दर भटकती हुई अनेक कठिनाइयों का सामना करती है और एक पुत्र को जन्म देती है। बाद मे उसका पुत्र भी उससे बिछुड जाता है। मंजुला दुर्भाग्यवश कामुक राजा जयशेखर की बंदिनी बनती है। वह अपनी विषम स्थितियों मे शील और धर्म की रक्षा करती है। किसी प्रकार राजा जयशेखर से छूट कर वह एक वेश्या के चंगुल मे फंस जाती है। अपने प्राणाो की बाजी लगा कर मंजुला उस वेश्या से मुक्त होती है। अन्त मे दोनो को कठिनाइयो से छुटकारा मिलता है। श्रीकान्त और मंजुला अपने पुत्र कुसुम कुमार से मिलते है। मा और पद्मा को भी अपनी गलती का अहसास होता है। श्रीकान्त, मंजुला और उसका पुत्र कुसुम कुमार विधि-विधानपूर्वक साधु धर्म की दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं।

मंजुला का चरित्र एक शीलवती, सदाचारिणी आदर्श नारी के रूप मे चित्रित हुआ है। उसके द्वारा बनाये गए कुंकुम के पगलिए राग के प्रतीक न होकर उसके लिए विराग का अमृत बन जाते है। वह तेजोमयी, कर्त्तव्यनिष्ठ,

शक्तिवती नारी है। श्रीकांत एक स्वाभिमानी, उत्साही, पुरुषार्थी और साहसी युवक है। उसमे आत्मशक्ति और परोपकारी भावनाएँ है। वह अपने भाग्य का निर्णय करने हेतु अनजान पथ का पथिक बन जाता है। उसे अनीति से प्राप्त धन अभीष्ट नही है। वह पुरुषार्थ, न्याय और नीति से अर्जित धन पर ही अपना अधिकार समझता है। मित्र विद्याधर के सहयोग से उसके पुरुषार्थ को बल मिलता है। अनेक कठिनाईयो को सहन करने के पश्चात् वह अपने उद्देश्य मे सफल होता है। श्रीकान्त अपने स्नेहिल सद्व्यवहार और परोपकारी वृत्ति से दूसरों को प्रभावित करता है।

इस उपन्यास मे लेखक ने अनेक घटनाओ का समावेश किया है। उपन्यासकार उदात्त जीवन मूल्यो की स्थापना करने मे सफल रहा है। उपन्यास मे पात्रो के अन्तर्द्वन्द्वो का भी चित्रण किया गया है। कथा के नायक श्रीकांत और नायिका मजुला को बाह्य तथा अन्तर्द्वन्द्व से निकाल कर लेखक निर्द्वन्द्व की स्थिति मे पहुंचा कर उदात्तीकरण की और ले जाता है। वास्तव मे मनुष्य अपने जीवन को प्रेम, त्याग और परमार्थ के पथ पर ले जाकर ही अपनी सार्थकता को बनाये रख सकता है।

आज मानव भौतिक सुखो की लालसा से ग्रसित है। वह भोग विलास को ही सब कुछ मान बैठा है। यह उपन्यास आज के भौतिकवादी मानव को इस भोग-लिप्सा से निकल कर परमार्थ के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है। मंजुला और श्रीकांत के चरित्र आज की युवा-पीढी को सही दिशा मे उन्मुख होने की प्रेरणा देते हैं। यह कृति भौतिकता मे लिप्त मानव को परमार्थ और आध्यात्मिकता का संदेश देती है।

आचार्य श्री नानेशजी की उपयुक्त विवेचित कथा-कृतिया समता-दर्शन, संयम, सेवा, क्षमाशीलता, वीतराग, अहिसा, कर्त्तव्य पालन और त्याग का स्फुरण करने वाली है। नैतिक, सदाचार की भावना से अनुप्राणित लोक-कथाओं के द्वारा इसकी कथा का ताना-बाना बुना गया है। इनकी अनेक घटनाएँ कौतूहल वर्धक है तथा पारस्परिक कथा रूढियो का पोषण करती है। अत: उनमे अतिरजना और कहीं-कही चमत्कारिकता दृष्टिगोचर होती है। ये कथाएँ आचार्य श्री के प्रवचनो के दौरान कही गई है, अत: ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ उपदेशपरक भी हैं। इनमे उपन्यास के सभी साहित्यिक तत्त्वो को खोजना अनुपयुक्त होगा। इनकी भाषा-शैली रोचक, प्रभावोत्पादक है एवं बोधगम्य है।

-पूर्व प्रिंसीपल, गर्वनमेन्ट कॉलेज डीग
5 ख 20, जवाहर नगर, जयपुर-302 004

अनेक गुणों के धारकः आचार्य नानेश

✍ पं. लालचन्द मुणोत, ब्यावर

जह दीवो दीवसयं पइप्पए जसो दीवो
दीव समा आयरिया दिव्वंति परं च दिवति

जिस प्रकार दीपक स्वयं प्रकाशित होकर अन्य सैकड़ो दीपको को प्रकाशित करता है। उसी प्रकार आचार्य ज्ञान-दर्शन-चारित्र द्वारा स्वयं प्रकाशित होकर अन्य को प्रकाशित करते है।

इसी शास्त्रीय कथन को परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य श्री नानालालजी म सा. के सत्सान्निध्य मे रहकर वर्षो तक संघीय कार्य करते हुए मैने उनके जीवन में अनेक रूपो मे देखा तथा अनुभव किया। आचार्य श्री नानेश समता की अद्वितीय साक्षात् प्रतिमूर्ति, अदम्य साहसी, उत्साही, आत्मबली, कष्ट सहिष्णु, निराभिमानी, गुप्त तपस्वी, प्रवचन प्रभावक समभावी, समीक्षण-ध्यान योगी, दीर्घ द्रष्टा, यशस्वी, तेजस्वी, छुआछूत की कृतिमता के विरोधी, दलितोद्धारक, धर्मपाल प्रतिबोधक, शासन के सफल संचालक, अनुशास्ता, संगठन के हिमायती, चमत्कारिक वचनसिद्धि, जिनशासन प्रद्योतक, कर्मठ, सेवाभावी, चारित्रनिष्ठ, अद्वितीय ज्योतिर्धर महापुरुष है। वे स्वयं इन गुणों से प्रकाशित है तथा जन-जीवन को प्रकाशित किया है और कर रहे है।

आचार्य श्री नानेश के जीवन मे ये उपयुक्त गुण कितने सार्थक है। इनसे संबन्धित घटनाएं यथावत् तो मेरे स्मृति पटल पर नही है पर कई घटनाएं मेरी स्मृति मे है उनमे से कुछ इस प्रकार है-

1. आचार्य श्री नानेश के जीवन में क्रोध जनित कोई भी समस्या उत्पन्न हुई तो आपने उसे धैर्यपूर्वक सहनशीलता एवं समता भाव से सहन किया। प्रकट रूप मे उतेजित होना तो दूर मुख मंडल पर भी क्रोध की किंचिदपि रेखाए तक परिलक्षित न हुई और न होती है।

2 आचार्यश्री नानेश अदम्य उत्साही एव कष्ट सहिष्णुता के परम उपासक है। आचार्य पद प्राप्त होने के पश्चात् जब आप रतलाम का प्रथम ऐतिहासिक चातुर्मास पूर्ण करके मालव प्रान्त के छोटे-छोटे अंचलो मे विचरण कर रहे थे तब उनको ज्ञात हुआ कि इधर छोटे-छोटे गांवो मे खेती करने वाले बलाई जाति के हजारो हिन्दू परिवार रहते है, उनको ईसाई बनाने के लिए ईसाइयो की मिशनरी प्रचार कर रही है तो आचार्यश्री का करुणामय हृदय द्रवित हो उठा और ग्रीष्मकाल की प्रचण्ड गर्मी मे गांवो की ओर विहार कर भूख-प्यास व सर्दी-गर्मी आदि के परिषहो को सहन करते हुए उन गांवो मे अहिंसा का मार्मिक उपदेश दिया एवं हजारो लोगो को मद्य-मासादि कुव्यसनो का त्याग करा कर जीवन मे सदाचार की ओर प्रवृत्त किया तथा अछूत कही जाने वाली बलाई जाति को धर्मपाल नाम से घोषित किया।

आचार्यश्री नानेश अपने मुनि जीवन मे हमेशा एकान्त मे ज्ञान-ध्यान, चिन्तन-मनन आदि मे तल्लीन रहते क्योकि आप गृहस्थो से विशेष परिचय को मुनि जीवन के लिए हानिकारक समझते है। आचार्य पद प्राप्त होने के बाद शासन को चलाने के लिए श्रावको से सात्विक परिचय रखना आवश्यक हो जाता है सो रखते है। फिर भी उसमे विशेष रुचि हो, ऐसा नहीं लगता।

आचार्यश्री नानेश आभ्यन्तर एवं गुप्त तप के महान् तपस्वी है। तप के बारह भेदो मे से बाह्य तपो मे शारीरिक क्रिया की मुख्यता रहने से वे प्रायः दूसरो को दृष्टिगोचर नहीं होते। बाह्य तपो मे भी जितना अनशन तप दृष्टिगोचर होता है, उतने अन्य पाच तप नही।

आचार्यश्री नानेश को बेला, तेला, पंचोला, अठाई आदि बाह्य अनशन तप करते प्रायः बहुत कम देखा गया। आप बाह्य तप नही करते हो ऐसा नही बल्कि आपकी बाह्य तपस्या भी ऐसी होती है जो प्रायः हर व्यक्ति को मालूम नहीं होती। मैने देखा है तथा सतो से भी सुना है कि आपकी अधिकतर ऐसी तपस्या होती है कि अमुक आहार अमुक मात्रा मे ही ग्रहण करना, अधिक नही। अमुक समय तक गोचरी आ जावे तो ग्रहण करना अन्यथा नहीं। निर्धारित समय मे लाये गये आहार मे से अमुक चीज हो तो नही लेना स्वादिष्ट, रसयुक्त व चटपटे पदार्थ हो तो नही लेना या लेना तो अमुक ही लेना या अमुक मात्रा से अधिक न लेना।

आचार्यश्री नानेश व्यक्ति की अपेक्षा गुणो को विशेष महत्त्व देते हैं। व्यक्ति की श्रेष्ठता गुणो पर आधारित है अतः छूआछूत की कृत्रिमता पर करारा प्रहार करते है और फरमाते है कि-

गुणी पूजा स्थानं न च लिंगं न च वय

आचार्यश्री नानेश चारित्र निष्ठ, शुद्ध सयम पालक कुशल महान् अनुशासक हैं। आप स्वय शास्त्रीय नियमोपनियमो का पालन करने मे हर समय तत्पर रहते है और अपने शिष्य परिवार के लिए भी संयमी मर्यादाओ का पालन कराने मे हर समय जागरूक रहते है। आप नवनीत के समान अतिकोमल पर संयमीय मर्यादाओ के पालन कराने में अनुशासन की दृष्टि से महान् कठोर अनुशासक है।

आचार्य श्री नानेश चारित्र के साथ-साथ ज्ञान की तरफ भी विशेष लक्ष्य रखते है जिससे संयमी मर्यादाओ का पालन करते हुए आपके सत्सान्निध्य मे कई साधु-साध्वी उच्च कोटि के विद्वान तैयार हुए है और हो रहे, हैं।

आचार्यश्री नानेश दीर्घ दृष्टा महापुरुष है। परम श्रद्धेय आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा. के जावरा चातुर्मास मे शारीरिक अस्वस्थता ने उग्र रूप धारण कर लिया। ऐसी स्थिति मे जिस क्षेत्र मे उपचार के सब साधन उपलब्ध हो, वहां ले जाना अत्यावश्यक था। अतः सत महात्मा अपनी भुजाओ पर उठा कर रतलाम ले आये। पर आचार्यश्री नानेश को रतलाम उपर्युक्त नहीं लग रहा था। कारण वहा उपचार के पर्याप्त साधन उपलब्ध होना कठिन था। फिर वहा से मदसौर नीमच ले आये। सभी सघ अपने यहा उपचार कराने हेतु आग्रह भरी विनती कर रहे थे। पर आचार्य श्री नानेश को उदयपुर के सिवाय अन्य कोई क्षेत्र उपयुक्त नही लग रहा था। आखिर डॉक्टरो की राय भी उदयपुर की होने से उदयपुर ले आये। ज्योतिषियो का कहना हुआ कि अब उम्र अधिक नहीं है पर आचार्यश्री नानेश की अन्तरात्मा साक्षी नही दे रही थी। आचार्यश्री गणेशालील जी म.सा. का उदयपुर मे किडनी का ऑपरेशन हुआ। तत्पश्चात धीरे-धीरे स्वास्थ्य मे सुधार आया और फिर अधिक अस्वस्थ हो गये तब अनेको की राय हुई कि अब पूर्ण सथारा करा दिया जाए पर आचार्यश्री नानेश ने नाडी देख कर कहा अभी पूर्ण संथारा कराने जैसी स्थिति नहीं है। अत. तीन दिन तक अचेतनावस्था मे सागारी सथारा चलता रहा। तीन दिन बाद चेतना आई और करीब तीन वर्ष तक जीवित रहे। यह सब आचार्यश्री नानेश की दीर्घदृष्टि का प्रतीक है।

आचार्यश्री नानेश कर्मठ सेवाभावी है। स्व आचार्य श्री गणेशीलाल जी म सा की रुग्णावस्था मे यह देखा गया कि आपने अहर्निश अनत्यभाव से जो सेवा की उसका शब्दो द्वारा वर्णन किया जाना अशक्य है। इतना ही नहीं, छोटे से छोटे साधु के अस्वस्थ हो जाने पर भी रात-दिन अपनी सारी शक्ति सेवा मे अर्पण कर देते हैं।

आचार्यश्री नानेश महान् आत्मबली, साहसी एवं उत्साही महापुरुष है। उदयपुर मे स्व आचार्यश्री गणेशीलाल जी म सा. का स्वर्गवास हो जाने के बाद अब आपका साधु मर्यादा के अनुसार विहार होना आवश्यक होने से हाथीपोल से विहार होने की हलचल मची। तो स्थानीय संघ के तथा अन्य सदस्यो ने प्रार्थना की कि हाथी पोल होकर जाने मे आज उस तरफ दिशा शूल है। अन्य दरवाजे से विहार होना उपर्युक्त है। आपने फरमाया सीधे मार्ग को छोड कर चक्कर खाकर अन्य दरवाजे से विहार करना उपयुक्त नही है। मुहूर्त के चक्कर मे न पडे। जिस समय जिस कार्य को करने मे जिसका अति उत्साह हो वही समय उसके लिए अत्युत्तम मुहूर्त है आदि कह कर हाथीपोल के दरवाजे से विहार कर दिया।

आचार्य श्री नानेश जो कुछ कहते वह सोच-समझ कर फरमाते। इस पर कोई बाधा उपस्थित हो जाती तो कष्टो की तनिक भी परवाह न करते हुए अपने वचन का पूरा ध्यान रखते है। अत: आपकी कथनी-करनी मे एकरूपता है।

आचार्यश्री नानेश उच्च कोटि के महान् प्रभावक महापुरुष है। आपके प्रवचन प्रभाव से अनेक जगह अनेक परिवार झगड़े समाप्त कर परस्पर आत्मीयता के साथ आनन्द ले रहे है।

आचार्यश्री नानेश महान् चमत्कारिक महापुरुष है। नोखा मंडी मे एक प्रज्ञा चक्षु वृद्धा बहिन की विनती प आपश्री उसको दर्शन देने के लिए उसके घर गए और मांगलिक सुनाकर वापस लौटे कि उसके बाद उस वृद्धा की आंखो मे रोशनी आ गई।

आचार्यश्री नानेश अलौकिक महापुरुष है। आपके प्रति जो व्यक्ति शुद्ध सात्विक श्रद्धा भक्ति रखता हुआ सच्चाई के साथ यथाशक्ति न्याय नीतिपूर्वक चलता है और धर्म पर भी श्रद्धा रखता है वह उपस्थित आपत्ति से जल्दी या देरी मे अवश्य छुटकारा पाता है और अपनी उचित आवश्यकताओ की पूर्ति से वंचित नही रहता है।

आचार्यश्री नानेश अध्यात्म प्रधान भारतीय संस्कृति के ज्योतिर्मय दीपक ही नही बल्कि सूर्य है। विषमता के युग मे समता का पाठ पढ़ाने वाले महान् समताधारी है। शिथिलाचार के विरुद्ध कड़ा प्रहार करने वाले क्रातिकारी महापुरुष हैं। पूजा प्रतिष्ठा, मान सम्मान के विरोधी है और शुद्ध सात्विक संगठन के पूरे हिमायती है।

आचार्यश्री नानेश समीक्षण ध्यान के महान् योगी पुरुष है। आप प्रतिदिन नियमित रूप से प्रात: 3 बजे से पूर्व अपनी शय्या त्याग कर ध्यानारूढ़ हो जाते है। ध्यानावस्था मे आपके मुखमंडल पर अलौकिक तेज प्रस्फुटित हुआ देखा गया है।

आचार्यश्री नानेश प्रदर्शन एवं आडम्बरी प्रवृत्तियो से सदा विलग रहे है पर भक्तजन भक्ति के वश होकर विहार, नगर प्रवेश, तपस्या आदि की सूचनाओ को तथा जन्मोत्सव, दीक्षा महोत्सव, अर्द्धशताब्दी वर्ष महोत्सव, स्वर्ण जयंती महोत्सव आदि को धर्म प्रचार-प्रसार व प्रभावना में सहायक समझ कर आयोजन करते है। पर इसमे केवल यही बात नही है। दूसरी तरफ भी देखना चाहिए। यदि इन बाह्याडंबर मे संत जन भी लिप्त हो जाते है तो संयम-साधना मे धीरे-धीरे शिथिलता आकर संयम विघातक बडी-बड़ी त्रुटियो का पनपना भी सहज स्वाभाविक है यही कारण है कि आचार्यश्री नानेश समय-समय पर आडंबरी प्रवृत्तियो का निषेध करते रहते है।

अन्त मे मेरा यह निवेदन है कि परम श्रद्धेय आचार्य श्री नानेश के इस दीक्षा अर्द्धशताब्दी वर्ष के प्रसग से आचार्य श्री उपरोक्त गुणों से प्रेरणा लेकर निर्ग्रन्थ श्रमण संस्कृति की सुरक्षा हो। कोई भी श्रावक साधु मर्यादा से विपरीत किसी भी छोटे-छोटे कार्य मे भी न तो साधु समाज को प्रेरित करे और न ऐसे कार्य मे साधु समाज का

सहयोगी बने।

दूसरी बात दीक्षा अर्द्धशताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य मे 50 हजार श्रावक जन-आजन्म के लिए सप्तकुव्यसन के तथा मांगणी करते दहेज लेने की त्यागी हो साथ ही 50 हजार आयम्बिल तप भी करे।

-बिचडली मोहल्ला, ब्यावर (राज)

समता के स्वर

आचार्यश्री नानेश

वर्तमान विषमता की कर्कश ध्वनियों के बीच आज साहस करके समता के समरस स्वरों को सारी दिशाओं में गुंजायमान करने की आवश्यकता है। समस्त जीवन के सभी क्षेत्रों में फैली विषमता के विरुद्ध मनुष्य को संघर्ष करना होगा, क्योंकि इस विषम वातावरण में मनुष्यता का निरन्त ह्रास होता जा रहा है।

यह ध्रुव सत्य है कि मनुष्य गिरता, उठता और बदलता रहेगा, किन्तु मनुष्यता कभी समाप्त नहीं होगी, उसका सूरज डूबेगा नहीं। वह सो सकती है, मर नहीं सकती। अब समय आ गया है कि जब मनुष्य की सजीवता को लेकर मनुष्य को उठना होगा-जागना होगा और क्रांति पताका को उठा कर परिवर्तन का चक्र घुमाना होगा। क्रांति यही कि वर्तमान विषमताजन्य सामाजिक मूल्यों को हटा कर समता के नये मानवीय मूल्यों की स्थापना की जाए। इसके लिए प्रबुद्ध एवं युवा वर्ग को विशेष रूप से आगे आना होगा और एक व्यापक जागरण का शंख फूंकना होगा ताकि समता के समरस स्वर उद्बुद्ध हो सकें।

जंगम विद्यापीठ

✍ श्री मानवमुनि

भगवान् महावीर निर्वाण-शताब्दी वर्ष मे श्री अ भा. साधुमार्गी जैन संघ के तत्त्वावधान मे धर्मपाल क्षेत्र मे पदयात्रा प्रारम्भ हुई। यह क्षेत्र आचार्य श्री नानालाल जी म सा की साधना, तप, आध्यात्मिक शक्ति एवं धर्मपाल प्रवृत्ति की तीर्थभूमि है, जो भविष्य में भारत का एक शोध-संस्थान होगी, ऐसी आशा है।

इस पदयात्रा का सबको महत्त्वपूर्ण लाभ मिला। सहजीवन, सहचिंतन, सामूहिक प्रार्थना, वन्दना सामायिक, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय के साथ जीवन संयममय हो, यह सबने अनुभव किया।

महिलाओं ने एक विशेष महत्त्वपूर्ण कार्य महिला सम्पर्क का किया। पुरुषवर्ग मे यह एक अभाव-सा रहा कि ये धर्मपाल परिवार के लोगो से व्यक्तिगत चर्चा कम कर सके।

मुझे तो बड़ा आनन्द इस बात से रहा कि सबको माता-बहिनों का व भाईयो का आत्मीय स्नेह मिला। यह सबसे बड़ी उपलब्धि हुई और इससे शक्ति भी मिली।

श्रीमान् डा. नंदलाल जी बोरदिया की प्रत्येक पडाव पर जो सेवा हुई, वह चिरस्मरणीय रहेगी। मै इस यात्रा को एक प्रकार की जीवन साधना मानता हूं। इसे जंगम विद्यापीठ भी कह सकते हैं।

अभिनन्दनीय उपक्रम

✍ श्री रणजीत सिंह कूमट, अजमेर

पदयात्रा में सम्मिलित होने का जो मुझे सौभाग्य मिला और उसकी अभूतपूर्व जो सफलता देखी, उससे मैं बहुत उत्साहित हुआ। श्रेष्ठिवर्ग का उच्च अट्टालिका से निकल कर ग्रामीण जन से सम्पर्क करने हेतु दुरुह पदयात्रा में सम्मिलित होने का उपक्रम अभिनन्दनीय है। दूसरी ओर ग्रामीण जनता से अनौपचारिक रूप मे मिल कर बातचीत करने का जो सौभाग्य मिला, वह भी एक नया अनुभव था। पद पर रहते हुए क्षेत्र मे दौरा करने से जनता से खुली बात नही हो सकती परन्तु अनजान बन कर अनौपचारिक रूप उनके मन की बात ज्ञात कर सकने की सुविधा पदयात्रा में ही मिल सकती है। मै समझता हूं ऐसे प्रयास और होने चाहिए। संगठन कार्यकर्त्ताओ ने इसका नियोजन बहुत ही अच्छे रूप मे किया और वह भी सफलता का मूल कारण रहा।

पाका हांडै गार नीं लागै पर लाख तो लागै

✍ श्रीमती प्रेमलता जैन, अजमेर

यात्री-दल खाचरौद से रवाना होकर ग्राम चौकी पहुंचा और अपने निश्चित कार्यक्रम के उपरात मै जन सम्पर्क

हेतु गांव मे जाने लगी तो कई धर्मपाल भाईयो ने हमे गांव मे जाने सो रोका। उनके रोकने से मेरे मन मे गाव निवासियो से सम्पर्क करने की भावना और अधिक तीव्र हो गई।

भाईयो के मना करने पर भी मै टेट के पीछे से गाव के घरो मे जा पहुची। मै उसी घर मे पहुची, जहा हमारे पहुचने के एक घण्टे पूर्व ही एक 42 वर्षीय भाई की मृत्यु हुई थी।

घर मे जाकर मैने जो दृश्य देखा तो दग रह गई घर के सारे प्राणी पदयात्रियो के स्वागत सत्कार एव उनके साथ ज्ञानचर्चा हेतु गये हुए है। केवल मृतक की पत्नी एवं बहिन ही घर में शांत-मुद्रा मे बैठी थी।

उन बहनो के सामने जाते ही मैं आत्मविभोर हो गई। मेरे पास उन्हे सांत्वना देने के शब्द भी नही रहे। लेकिन उन बहनो ने मुझे कहा-बहिनजी, यह दुःख तो जब तक हम जीवित है, हमे रहेगा ही, लेकिन हमारे गांव मे जो धर्म-गगा आई है, उसमे हम पहले गोता लगा ले तो हमे कुछ ज्ञान हो जायेगा। यदि हम रोने धोने बैठेगे तो हम इस लाभ से वचित रह जायेगे।

देखिये, वे निरक्षर जन कितने बुद्धिमान है। कितनी सहनशीलता, कितना धैर्य है उनमे। आश्चर्य। अति आश्चर्य।

इतनी सहनशीलता का एक अनूठा उदाहरण मैने पहली दफा देखा। इससे मुझे बहुत प्रेरणा मिली।

एक दिन पदयात्री सध्या समय ग्राम बडवा पहुचे। जन सम्पर्क का कार्य चल रहा था। धर्मपाल माता यशोदाजी बहनो को कुछ सीखने को कह रही थी। उस समय एक भाई ने कहा-"**अब कांई पाका हांडे गार लागे**" उस भाई की बात सुन कर पास बैठी धर्मपाल बहिन निम्माबाई ने तत्काल उपर्युक्त दलील का खण्डन करते हुए कहा-"**दादा, पाका हांडे गार नीं लागै पर लाख तो लागै**" यानी मिट्टी का घडा पक जाता है, फिर उस पर कच्ची मिट्टी नही ठहरती है। यह तो सच है, पर उस पर लाख तो लग जाती है अर्थात् वह कहना चाहती थी कि हम लोग उम्र मे बडी हो गई तो क्या हुआ, हमारे अदर लगन है तो हम अब भी बहुत कुछ सीख सकती है।

धर्मपाल बहिन के ये शब्द मुझे आज भी जीवन पथ पर आगे बढने की प्रेरणा देते है।

एक यात्रा : कृत्रिम जीवन से वास्तविक जीवन की ओर

✍ श्रीमती रोशनी देवी खाबिया, रतलाम

मेरा जीवन आज जिस आनन्द, प्रेम और शून्य की विराट नाव मे खो गया है, उसके प्रेरणा स्त्रोत आचार्य भगवान् श्री नानालाल जी म सा. ही है।

उन्ही आचार्य प्रवर के मार्ग पर हम 2 अप्रैल से पदयात्रा पर निकल गए।

मेरी प्रतिदिन विश्राम करने की नियमित आदत बनी हुई है। इसीलिए मेरा मन अदर ही अंदर सामायिक से बचने के लिए तर्क खोज रहा था कि मेरे अन्तर्द्वन्द्व को देख कर अध्यक्ष महोदय श्री चोरडिया साहब ने पूछा-"क्या आप सामायिक नही लेगी?" और मै उनके विराट व्यक्तित्व के सामने इंकार न कर सकी। मैंने सामायिक ले ली और सामायिक मे इतना अधिक आनन्द आया कि प्रतिदिन दो सामायिक भी करती तो भी मन नहीं भरता।

इस यात्रा मे एक कमी लगी तो आचार्यश्री की-यदि आचार्यश्री का सान्निध्य होता तो पूरा समवसरण का आनन्द आता।

धर्मपाल भाई-बहनो का भोलापन और श्रद्धा शब्दो मे व्यक्त नही किये जा सकते और उनके भावपूर्ण भजन आज भी कानो मे गूंज मे रहे है। बालको का उत्साह देख कर लगता है कि स्वर्ग का आनन्द यही उतर आया है।

श्रीमान् गणपतराज जी सा. बोहरा का व्यक्तित्व नन्दबाबा जैसा मौन और गभीर है तो यशोदा देवी का यशोदा मैया जैसा आत्मीय।

सक्षेप में यदि लिखूं तो इस यात्रा से शरीर और मन की क्रियाएं सतुलित होने लगी है। चित्त भगवत् आनन्द से भर गया। जीवन नित्य प्रति अज्ञात तरंगो से गतिमान हो रहा है।

धर्मपालों की आर्थिक उन्नति के दर्शन

✍ श्री प्रेमराज सोमावत, ब्यावर

इस प्रकार की पदयात्रा द्वारा हमे गरीब जनता के घर-घर जाने और उनकी सम्भाल लेने का अवसर प्राप्त होता है। सच्चे अर्थों मे यही मानव सेवा है।

130 पदयात्री और 125 स्वयंसेवको के समूह मे ब्यावर संघ के भी पन्द्रह सदस्य पहुंचे। हम वहा पहुच कर अपने घर तथा व्यापार धंधो के प्रपंचों को भूल गए। प्रकृति के शान्त वातावरण मे हम गांव-गांव व घर-घर जाकर लोगो को संस्कारशील बनने की प्रेरणा देते। इस प्रयास मे हमने कभी थकावट महसूस नही की।

मालव क्षेत्र में संघ द्वारा 70 पाठशालाएं चलाई जा रही है व उनमे प्रशिक्षित शिक्षको द्वारा धर्मपाल बच्चो मे पूर्ण जागृति लाई जा रही है। बच्चो को शुद्ध-प्रतिक्रमण, नवकार मंत्र और थोकडे आदि सिखाये जाते है। संघ ने हर समय इस क्षेत्र मे धर्म प्रचार किया और इनकी समस्याओ को सुलझाया। इसी का फल है कि आज इस क्षेत्र की आर्थिक स्थिति भी सुधरने लगी है। गांव की गृहणियो को भी संघ की महिलाओ व भाईयो ने सब तरीके से समझा कर धार्मिक एवं आध्यात्मिक जीवन जीने की प्रेरणा दी है। इससे बहुत सी महिलाओ का हृदय परिवर्तन हुआ है और हजारो बहनो ने त्याग प्रत्याख्यान लिये है।

धर्मपाल क्षेत्र मे धर्म जागरण पद यात्रा का दैनिक कार्यक्रम अति व्यस्त और क्रमबद्ध था। जनता पर इस धर्म-गंगा का सच्चे माने में असर पडा और इसलिए धर्म जागरण पदयात्रा को प्रतिवर्ष अनिवार्य करने के निमत्रण आने लगे है।

❖ ❖ ❖

स्नेह दान

✍ श्री नौरतनमल ढेडिया, ब्यावर

संघ द्वारा आयोजित धर्मपाल क्षेत्रीय पदयात्रा स्वधर्मी बन्धुओ और धर्मपालो के बीच पारस्परिक स्नेह दान की यात्रा थी। धर्मपालो का बढता हुआ उत्साह और आत्मविश्वास हमारी बहुत बडी सफलता है।

❖ ❖ ❖

पदयात्रा के वे स्वर्णिम दिन

✍ श्रीमती सरोज खाबिया, रतलाम

मैंने अपने जीवन मे वहुत-सी यात्राएं की लेकिन पदयात्रा का मेरा यह पहला ही अवसर था तथा पदयात्रा के अनुभव आज भी मेरे हृदय मे अकित हैं। मैंने कभी स्वप्न मे भी नही सोचा था कि मै कभी पदयात्रा करूगी, लेकिन वह स्वर्णिम अवसर मेरे हाथ लग ही गया।

धर्मपाल क्षेत्र की धर्म जागरण पदयात्रा के वे स्वर्णिम दिन मेरे जीवन की एक महान् उपलब्धि है। यात्रा का अन्तिम रात्रि पडाव रतलाम के वाहर था। तब प्रतिक्रमण के पश्चात् सभी ने प्रायश्चित्त लिए। यह देख कर तो मुझे अत्यधिक आश्चर्य हुआ कि जो व्यक्ति, अपनी सत्य वात सत मुनिराजो के सामने कहने मे सकुचाते है, वहा त्यागमूर्ति अध्यक्ष गुमानमल जी चोरडिया के समक्ष प्रत्यक्ष खडे होकर अपनी गलतिया बताने व उनका प्रायश्चित्त मागने लगे। सचमुच। 'आहा' कैसी अद्‌भुत बाते थी वे।

सबसे ज्यादा आनन्द की अनुभूति तो सायकाल 3-4 मील की यात्रा मे 'अन्त्याक्षरी' करते हुए होती थी। किस तरह 3-4 मील हम चल लेते, इसकी अनुभूति हमे नही होती। समय बडी तीव्र गति से बीत गया और आखिर वह दिन आ ही पहुचा जिस दिन हमे ब्यावर के लिए प्रस्थान करना पडा।

कैसी थी वह पदयात्रा जिसका चित्र मेरी आखो के सामने अब भी घूमा करता है, मेरे स्मृति पटल से एक मिनिट के लिए भी नही हटता। मै तो यही सोचती हू कि वापिस कब उस स्वर्णिम पदयात्रा के दिन आए और मै सम्मिलित होकर उसी आनद की चरम सीमा पर पहुच सकू।

व्यक्तित्व

✍ चम्पालाल छल्लाणी, देशनोक

अपने व्यक्तित्व को आकर्षक बनाइए। आकर्षक व्यक्तित्व का निर्माण निश्छल नैसर्गिक एव पारदर्शी होना चाहिए। कृत्रिम आकर्षण जिन्दगी को किरकिरा बना देता है।

सहज आकर्षक व्यक्तित्व की जादुई चाबी है। दूसरो के प्रति सहज उष्मा भरा व्यवहार रखना, उदार होना, दिल की उदारता सबसे बडी चीज है और लोग हम तक बेझिझक बेहिचक पहुंच सके-वैसा खुला हुआ व्यक्तित्व ही आकर्षक होता है।

दयालुता, करुणा, दोस्ती का भाव ये सब सहज आकर्षण के चिन्ह है। सहज, कोमल, जादुई-सा दिखने वाला आकर्षक व्यक्तित्व, विनम्रता एवं विशिष्ट सयमितता के सम्मोहन तले पनपता है। ऐसा आकर्षक व्यक्तित्व मुखर नहीं होता बल्कि मौन-मुस्कान के सहारे छा जाता है। कवि कहता है-

हर युवा में नया जोश होता है,
हर वृद्ध में एक नया होश होता है।
जोश और होश जब मिल नहीं पाते,
तब बहुत बड़ा अफसोस होता है॥

जैन जगत् के देदीप्यमान नक्षत्र

✍ दिलीप धींग (बम्बोरा), उदयपुर

जैन जगत के देदीप्यमान नक्षत्र आचार्य श्री नानालाल जी महाराज का जन्म 80 वर्ष पूर्व ज्येष्ठ शुक्ला 2, विक्रम सवत् 1977 को चित्तौडगढ जिले के दांता गाव (नानेश नगर) मे पिता श्री मोडीलाल जी पोखरना के घर माता श्रृंगार देवी की कुक्षि से हुआ था। उनका बचपन का नाम गोवर्धन था। सामान्य स्कूली शिक्षा प्राप्त गोवर्धन ने मुनि चौथमल जी के प्रवचन मे छठे आरे का मार्मिक वर्णन सुनकर किशोरवय मे संसार की असारता को जानकर वैराग्य भाव धारण कर लिया। 19 वर्ष की उम्र मे चित्तौडगढ जिले के कपासन कस्बे मे वि सं 1996 की पौष शुक्ला अष्टमी को आचार्य गणेशीलाल जी से जैन आर्हती दीक्षा अंगीकार कर ली। गुरु सेवा, अप्रमत्त-साधना और निर्मल-चारित्र से मुनि नानालाल विशिष्टताएं अर्जित करते गए।

विक्रम संवत् 2019 की माघ कृष्णा द्वितीया को आचार्य गणेशीलाल जी के उदयपुर मे देवलोक गमन कर जाने के साथ ही मुनि नानालाल जी को उनका उत्तराधिकारी घोषित किया गया। अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के आठवे आचार्य नानालाल जी 'नानेश' के साढे तीन दशक के आचार्य काल मे अनेक उपलब्धिपूर्ण, रचनात्मक और ऐतिहासिक कार्य हुए।

आचार्य बनने के बाद नानेश का प्रथम वर्षावास रतलाम (म प्र) मे हुआ। उस वर्षावास मे उन्होने व्यसन मुक्ति और संस्कार जागृति के माध्यम से समाज-उत्थान का सपना संजोया। सामाजिक दृष्टि से उपेक्षित और पिछडे बलाई जाति के व्यक्तियो को व्यसन मुक्ति का संकल्प दिलवा कर उन्हे 'धर्मपाल' जैसे पवित्र शब्द से सम्बोधित किया। इस तरह से वे 'धर्मपाल प्रतिबोधक' विशेषण से अभिहित किये गये। जातिवाद के विरुद्ध दलितोद्धार के इस 'धर्मपाल अभियान' के फलस्वरूप करीब एक लाख की संख्या मे धर्मपाल समाज बेहत्तर जीवन जी रहा है। धर्मपाल अभियान से आचार्य नानेश एक समाज सुधारक और राष्ट्रीय सन्त के रूप मे प्रतिष्ठित हुए।

भगवान महावीर की अहिंसा मूलक समता पर आचार्य नानेश ने विशेष जोर दिया। इस विषय मे उनके विचार **'समता दर्शन : जीवन और व्यवहार'** पुस्तक मे संकलित है, जिसका अंग्रेजी मे भी अनुवाद हुआ। समता-दर्शन एकता, समन्वय, सहिष्णुता, गुणानुरागिता आदि की प्रेरणा देता है। साधना के क्षेत्र मे आचार्य नानेश ने **'समीक्षण ध्यान'** करने पर बहुत बल दिया। समीक्षण का अर्थ है-स्वयं को देखना, अन्तरावलोकन करना और पर-दोष-दर्शन से दूर होना।

करीब छह दशक तक देशभर मे हजारो किलोमीटर का पाद विहार करके आचार्य नानेश ने अपने उपदेशो से धार्मिक, सांस्कृतिक चेतना जगाई। उन्होने एक साथ पांच, सात, नौ, बारह, पन्द्रह, इक्कीस और पच्चीस दीक्षाए प्रदान की। उनके आचार्य काल मे तीन सौ से अधिक मुमुक्षुओ को प्रव्रजित कर उन्होने समाज को सन्त सम्पदा सौंपी। आचार्य नानेश के प्रवचन अनेक पुस्तकों मे संगृहीत है। **'जिण धम्मो'** नामक पुस्तक मे जैन धर्म, दर्शन और तत्त्व ज्ञान की विस्तृत जानकारी मिलती है। महास्थविर शांति मुनि ने **'अन्तर्पथ के यात्री : आचार्य नानेश'** शीर्षक ग्रन्थ मे तथा साहित्यकार डॉ नेमीचंद जैन ने **'आगम पुरुष'** पुस्तक मे आचार्य नानेश की जीवनियां लिखी है।

आचार्य नानेश के उपदेशो से प्रभावित होकर उनके अनुयायियों द्वारा देश मे अनेक स्थानो पर सेवा, साधना, शिक्षा, चिकित्सा आदि अनेक प्रकल्प गतिमान हैं। 27 अक्टूबर 1999 को उदयपुर मे आचार्य नानेश का देहावसान हो गया। एक प्रभावक आचार्य चला गया। हार्दिक श्रद्धांजलि।

❖ ❖ ❖

महान् क्रांतिकारी धर्मप्राण आचार्य श्रेष्ठ हुक्मेश के अष्टमाचार्य श्रमण श्रेष्ठ श्री नाना

दलीचन्द्र जैन, वरिष्ठ स्व स सै , रतलाम

मैंने कभी यह कल्पना भी नही की थी कि परम श्रेष्ठ आचार्य भगवन् श्री नाना की जीवनलीला इतनी तीव्रता से समाप्त हो जायेगी और मुझ अकिचन को स्वर्गस्थ विभूति के पावन जीवन पर अपनी लेखनी उठा कर अपने सस्मरण जनहिताय लिखना पडेगा।

मेरा सबंध इन महागुणी, निरन्तर ज्ञानाराधना मे सलग्न रहने वाले ऋषि प्रवर से सन् 1960 के आसपास निकट से हुआ। स्वर्गीय शात क्राति के जनक कठोर सयमी, चरित्रपालक भगवन् गणेशाचार्य के व्याधि-ग्रस्त होकर उदयपुर पचायती नोहरे मे जो विराजमान थे उस समय इन गहन शास्त्राभ्यासी बहुत ही अल्पभाषी श्री नानालाल जी महाराज से मेरा सबंध बना, जब मैने सप्रमाचार्य गणेश भगवन् से विनय की-'भगवन्! आपने क ऐसा ''सुमड'' साधुजी को सेवा मे बैठा रखा है?' महोपकारी श्री गणेशाचार्य श्री ने मुस्कराते-मुस्कराते उत्तर दिया-'वकील सा उहरो और देखो। यह सन्त खरा सोना है जो अंधेरे मे प्रकाश भरेगा।' और पूज्य आचार्यश्री की वाणी सत्य साबित हुई। षष्टमाचार्य ज्योर्तिधर जवाहिर की उस भविष्यवाणी के साथ जो श्री नाना मुनि के दीक्षा ग्रहण के कुछ ही दिनो बाद की गई थी-'गणेशमुनि तू इस नवदीक्षित सत को सम्हालना।' नाम का मुनि 'नाना' महान् श्रमण होगा। इसे खूब टींचना, पढाना, यह प्रतिभाशाली हीरा सावित होगा। वास्तव मे बाद मे सन् 1963 से लगा कर सन् 1999 तक के 66 वर्ष के अन्तराल मे इस महान् समता साधक ने हजारो निम्न अछूत माने जाने वाले मालवा निवासी बलाइयो को ''धर्मपाल'' महाप्रभु शासनाधिपति महावीर के अनुयायी बना कर जिनधर्माकाश मे तेजोमय भास्कर की नाई चमकते रह कर नानेशाचार्य ने द्वय महान् आचार्यों की भविष्यवाणियो को अपने कठोर सयम चरित्र पालन से इस महामुनि ने क्षमा वीर शात, हसमुख तपस्वी ने धर्माराधना, धर्मप्रभावना और प्राय: 300 मुमुक्षु नर-नारियो को जिन दीक्षाएं देकर व रतलाम शहर मे एक साथ 25 व्यक्तियो की एक साथ दीक्षा (इस युग की महान् घटना) देकर अपने इन महान् गुणो से अलकृत कर दिया। सारे भारत देश मे पाद-भ्रमण मे स्व आचार्य भगवन् ने जैनाजैन को जिस प्रकार आकर्षित किया, धर्म का प्रचार-प्रसार कर जैनाजैन को मोहित किया-वह सब अब ऐतिहासिक घटना के रूप मे आगामी पीढिया जानेगी, पढेगी और इन महान् आत्मदर्शी-महाविज्ञ सदैव जागृत रह कर जिनेश्वर के पावन साधु जीवन का आदर्श विश्व के सम्मुख रखा, उन्हे याद करेगी और आचार्य नाना की जय गाथा गायेगी।

आचार्य पद लेकर अपने कुछ गुरु भाईयो और शिष्य मुनियो के साथ 1963 मे उदयपुर से शस्य श्यामला मालव की ओर मालवा के हृदय केन्द्र रतलाम के मध्य दो मुमुक्षु भाई-श्री कवरलाल और श्री हरकचन्द्र की दीक्षाएं होने वाली थी। मैने आचार्य भगवन् से कहा अकेले मे बैठकर-इन दोनो दीक्षाओ को अभी नही-पर कुछ कोसा। परीक्षा रूप मे वैरागी बना कर इन्हे योग्य होने पर दीक्षा देने की सादर विनय की। आचार्य भगवन् ने गभीरता पूर्वक चितन कर कहा-''जैन साहब! आपका सुझाव दीक्षा की घोषणा के बाद आया। यदि घोषणा के पूर्व आ जाता तो उचित भी था। अब इस समय दीक्षा नहीं देने से वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे सघ की, धर्म की हानि और अप्रतिहर होगी। मैं सदैव आपके कथन पर गहरा निगरानी रखूंगा। यह आम-सत्य है कि मुनि हरकचंद जी ने दीक्षा छोडी अल्पकाल

मे और मुनि कवरलाल जी ने आचार्य भगवन् पर सांघातित हमला लकडी के वडे पाटे को फेक कर किया। शासन देव की अनुकंपा से मध्य मे खडे मुनियों ने पाटे को बीच मे रोक दिया पर धन्य है नानेशाचार्य जो तनिक भी कुपित नही हुए और श्री कंवरमुनि को प्रायश्चित्त देकर पावन कर दिया। धन्य है नाना गुरु सा करुणा सागर क्षमावीर। बार-बार उन्हे प्रणाम।

मुझे इस महान् सताचार्य के धर्म स्नेह, प्रेम और जब तब मुझे एकांत सुनते व मेरी अनेक सलाह मानकर मुझे उपकृत करने का गौरव प्राप्त हैं। बहुतेरे गुण वर्णन करना है-बादलो की तरह उमड घुमड़ कर कई बातें समक्ष आ रही है-पर लेख लंबा होने के भय से और मेरे अपने अस्वस्थ होने से मै कलमबंद करने से पूर्व एक घटनाक्रम का-गच्छाधिपति नानेश के उदयपुर मे अधिक अस्वस्थ होने के कारण-शासन देव की प्रेरणा से मैं यत्किंचित सेवा उनकी अंतिम दिनो व अतिम दिन तक उदयपुर मे रह कर सका, इसका छोटा सा रेखांकन करना आवश्यक समझता हूं।

मै संभवत: अक्टूबर की 22 तारीख को उदयपुर पहुंचा। संतो के दर्शन कर रुग्णावस्था मे बद कमरे मे आचार्य भगवन् आराम मे थे। थोडी देर ठहरा, फिर पूज्य श्री राममुनि जी से गुरुदेव के दर्शनों की इच्छा, जो गुरुदेव के निकटतम कमरे मे धर्मक्रियाए कर रहे थे, प्रकट की। मुनिराज ने कुछ ही मिनटो मे मुझे अंदर के कमरे मे गुरुदेव के पास बुलाया। गुरुदेव को उठा कर उनके उत्तरीय व अधोवस्त्र व्यवस्थित कर मेरे दर्शनार्थ आने को कहा। गुरुदेव ने नेत्र खोले, पलभर मुझे देखा व पुन: लेट गये। मैंने नाडी देखी विनय की, पर मेरे दुर्भाग्य से आचार्य प्रवर ने नेत्राकुंज नही उघाड़े। मुझे गत माह "पंच रत्न" कॉम्पलेक्स मे विराजमान इन महामहिम के वे शव्द याद आ गये जो आचार्य भगवन् ने प्रात: बेला मे वायु सेवन कर लौटने पर-मेरे व मेरी पुत्री सौ. मंजू मुरडिया (एम.ए) के समक्ष श्री राममुनिवर से कहे थे-"राम, मै पूर्ण सावधान हूं, पर तू हमेशा ध्यान रखना कही ऐसा न हो कि मैं कोरा चला जाऊं।" आचार्य भगवन् की वाणी ने मेरे मानस को झकझोर दिया-मेरे नेत्र सजल हो उठे। गुरुदेव ने मुझे अपने स्वास्थ्य का पूछा। मैने विनय की 'भगवन्! आपने याद किया था-मंजू ने मुझे सूचित किया-मै सेवा मे उपस्थित हू। मुझे सेवा बता कर कृतार्थ करे।' गुरुदेव ने मेरी पुत्रियों की ओर देखकर कहा-"देखो जैन सा. की खूब सेवा करना, यह अच्छे धर्मसाधक ज्ञानी है। मै साधु हूं नहीं तो मै इनकी सेवा करता। गुरुवाणी सुन कर मै अभिभूत होकर गुरुदेव के चरणो मे गिर पड़ा-गुरुदेव मुझ अकिंचन-अज्ञानी पर इतनी दया। आप महान् है मुझे सेवा स कृतार्थ करो।" पर मेरा दुर्भाग्य था गुरुदेव के नेत्र डबडबा गये। उन्होने मुंह नीचा कर मेरी विनय पर मांगलिक फरमा कर मुझे पावन व कृतार्थ कर दिया।

गुरुदेव के इस अंतिम बीमारी को मैंने पूज्य सम्पतमुनि जी, रणजीत मुनिजी व विशेष कर गुरुदेव के सन्निकट के अनगार श्री राममुनि जी को सावधान किया और अपना कर्तव्य निभाया। मैं गुरुदेव के स्वर्गारोहण के दिन 6 बजे संध्या तक गुरुदेव के पास जाता देखता रहा व निराश होकर लौटता था। मैंने गुरुदेव से अलग हुए पूज्य श्री शांतिमुनि जी, श्री चन्दनाजी म सा. को भी अंतिम समय मे गुरुदेव के दर्शन, क्षमायाचनादि को प्रेरित किया। उन्होने भी दर्शनादि कर अपना साधु धर्म के अनुसार उचित किया। दि. 24-10-99 को मैने पू श्री विजयमुनि जी को भी यही विनय की और बाद मे पता लगा कि उन्होने भी संदेश भेज कर उचित कर्म कर अपना कर्त्तव्य निभाया। मैं गुरुदेव के महाप्रयाण यात्रा में चाहने पर दूर-दूर तक नहीं जा सका। रात्रि ही को स्थानक मे एक बजे पहुंचकर मैंने पार्थिव देह के दर्शन किए। प्रात: उनकी अंतिम यात्रा को विदा कर लौट पड़ा।

गुरुदेव का निधन मेरे अपने लिए अपनी निजी हानि है। जो क्या अब मुझ 85 वर्ष के मानव के लिए किसी प्रकार सदा-सदा आत्मा को टीसती रहेगी। मै निम्न श्रद्धांजलि महा अनगार के पावन चरणो मे प्रस्तुत कर अपना यह लेख समाप्त करता हूं। **"परमादरणीय महामहिम, श्रेष्ठ श्रमणाचार्य श्री श्री नानेशाचार्य के पावनपाद पद्मो में हार्दिक श्रद्धांजलि।"**

❖ ❖ ❖

क्रांतिकारी महापुरुष

✍ मानवमुनि, इन्दौर

आचार्य श्री नानेश विज्ञान युग मे क्रातिकारी महापुरुष थे। उदयपुर नगर मे ही चादर महोत्सव किया गया था। उदयपुर मे ही महाप्रयाण हुआ। उन्होने समाज को आध्यात्मिक दृष्टि दी, समीक्षण ध्यान, समता समाज, धर्मपाल प्रवृत्ति, समाज सुधार के लिए अनेक विचार व्यक्त किए। क्रातिकारी कार्य किया और अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ का गौरव बढाया।

आचार्य नानेश से तीस वर्ष पूर्व नागदा के पास ग्राम गुराडिया (उज्जैन) मे बलाई जाति (हरिजन) के मुखिया प्रार्थना करने आए। ग्राम गुराडिया मे बलाई जाति समाज का कार्यक्रम हो रहा है। आसपास ग्रामो के काफी लोग इकट्ठे होगे। आप हमारा उद्धार करें। हमसे घृणा करते है हाथ का पानी भी उच्च समाज के पीते नही है। अपमान की हीन दृष्टि से देखते हैं। उनके विशेष आग्रह पर नागदा जक्शन से 12 किमी दूर विहार कर सध्या के पूर्व ग्राम मे पहुचे। निवास की व्यवस्था एक मकान के बाहर ढालिया मे की गई जहा से बलाई समाज का सारा दृश्य दिखाई देता था। चेत्र शुक्ला दशमी का दिन था। समाज के प्रमुख लोग आए। बलाई समाज की सभा मे ले गए। वहां बैठने की व्यवस्था साफ सुथरा मकान का चबूतरा था वहां किया।

धर्मनाथ की प्रार्थना के बाद प्रवचन मे कहा मनुष्य से घृणा कोई नही करता है। जो बुराइयां है-मासभक्षण, शराब पीना, पशु बलि आदि है उससे घृणा करते है। कुव्यसनो का त्याग कर दोगे तो कोई घृणा नहीं करेगा। यह बात उनको हृदय मे जच गयी तो सभी ने खड़े होकर महिलाओ व पुरुषो ने हाथ जोड कर कहा हमे सौगन्ध दिला दो गुरुदेव ने सूर्य की साक्षी से सबको सौगंध (पच्चक्खाण) करवा दिये पर वहा के प्रमुख श्री सीताराम जी, श्री धूल जी ने कहा कि बुराइयां तो छोड दी पर बलाई नाम से ही घृणा करेगे तब आचार्य भगवन्त ने कहा कि धर्मनाथ भगवान् की प्रार्थना की वास्ते बलाई जाति का काला तिलक जो है उसे हटा कर अब आज से धर्मपाल का स्वर्ण तिलक लगाया गया। अब धर्मपाल नाम बताना जय जिनेन्द्र करना तो कोई घृणा नहीं करेगा। उज्जैन सम्मेलन मे अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी सघ ने धर्मपाल प्रवृति मानकर धर्मपाल प्रचार-प्रसार समिति का संगठन किया। आज जावरा, रतलाम, उज्जैन, मकसी, शाजापुर जिलो के ग्रामो मे धार्मिक सस्कार हेतु पाठशाला प्रारंभ की गई। समता भवन का निर्माण किया गया। धार्मिक शिक्षण शिविर लगाए गए। धर्मपाल क्षेत्रो मे पदयात्रा का आयोजन किया गया। दिलीप नगर मे श्री गणपत राज प्रेमराज बोहरा धर्मपाल छात्रावास की स्थापना की गई। उनके उत्थान व विकास की योजना बनायी गई। एक लाख से अधिक लोगो ने व्यसनो को त्याग कर धर्मपाल जैन बन गए। आज अखिल भा साधुमार्गी जैन सघ की मुख्य प्रवृत्ति हो गई। अब धर्मपाल समाज रचना की ओर कदम आगे बढाया है। कई धर्मपाल परिजनो ने रात्रि भोजन का त्याग किया। यह आदर्श है अब धर्मपाल समाज व जैन समाज मे किसी प्रकार का भेद नहीं रहा। आचार्य श्री नानेश धर्मपाल समाज रचना से अमर हो गए। उनके चरणो मे वदन अभिवंदन।

भीषण-वज्रपात

✍ अगरचंद राजमल चोरड़िया, अमरावती

परम पूज्य गच्छाधिपति महामुनि आचार्य सम्राट 1008 श्री श्री पूज्य नानालालजी महाराज श्री के स्वर्गवास के समाचार शोकजनक हृदय से सुने। जैन संसार व्यवहार की अपेक्षा से जैन समाज मे इनके स्वर्गवास से भारी क्षति हुई है जिसकी पूर्ति न हो सके ऐसी त्रुटि पैदा हो गई है। यह बहुत ही हृदय विदारक घटना हुई। जैन साधु समाज की अपेक्षा से भी उनकी भारी कमी हुई है जिसकी निकट भविष्य मे पूर्ति होना असंभव है।

आप श्रीजी का जन्म दांता गांव (राज) मे सन् 1920 ज्येष्ठ शुक्ला 2 विक्रम संवत् 1977 को भरे पूरे धर्मनिष्ठ परिवार मे हुआ।

परम पूज्य हुक्मचंद जी म सा की सम्प्रदाय मे आपने उम्र के 19वे साल मे पूंज्य आचार्य सम्राट 1008 श्री श्री गणेशलाल जी महाराज श्री के चरणों में कपासन (राज.) मे सन् 1939 वि सं. 1976 मिति पौष शुक्ला 8 को दीक्षित होकर अपने पुण्य जीवन की शुरूआत की।

सन् 1962 वि सं. 2019 आश्विन शुक्ल 2 को उदयपुर शहर मे आपश्री को युवाचार्य घोषित किया गया। इसी वर्ष आपश्री के दीक्षा गुरु संघ संरक्षक आचार्य सम्राट 1008 पूज्य श्री श्री गणेशीलाल जी महाराज श्री के स्वर्गवास होने से आपश्री को मिती माघ कृष्ण 2 को उदयपुर शहर मे आचार्य पद प्रदान कर श्री सघ का सारा भार सौंपा गया। आप इस सम्प्रदाय के अष्टमपद के आचार्य कहलाए। आप बाल ब्रह्मचारी थे।

इस वर्ष के वर्षावास (चातुमासार्थ) हेतु आपश्री का उदयपुर मे ही विराजना हुआ था। गत दो वर्ष से आपश्री शरीर से अस्वस्थ चल रहे थे इसी के चलते काल ने आप पर अपना प्रभुत्व जमाया और तारीख 27-10-99 आपका इस संसार से मोक्ष की ओर प्रयाण हुआ।

आपश्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ के आचार्य थे। आपश्री का सन् 1968 का चातुर्मास कराने का लाभ अमरावती श्री सघ को मिला था। जो कि उस समय के हिसाब से आज भी अविस्मरणीय कहलाया जाता है। आपश्री के सान्निध्य मे स्व. श्री ताराचंद जी मुणोत की स्वागताध्यक्षता मे साधुमार्गी जैन संघ का अखिल भारतीय अधिवेशन दि 24-9-68 से 26-9-68 तक आयोजित किया गया था जिसमे संपूर्ण भारतवर्ष से लगभग 6-7 हजार महानुभावो ने भाग लिया था। इसमे संघ और समाज के हित की दृष्टि से कई महत्वपूर्ण ठराव पारित कर उन्हे कार्यान्वित करने का संकल्प किया। इसमे प्रमुख ठराव दहेज देना व लेना इस पर स्वयं स्फूर्ति से बंधन लगाया गया। कई युवको और पालको ने प्रतिज्ञा की। इसी दृष्टि से आपश्री का चातुर्मास संघ एव समाज के लिए अनूठा एव अविस्मरणीय रहा है।

अपने साधु समाज के ये नेता शास्त्र, सिद्धान्त के पारगामी, वीतराग की आज्ञा का सभी साधुओ से पालन कराने वाले, पूर्ण प्रेमी, शासन की रक्षा करने मे अडिग, साधु मंडल मे तनिक भी अपवित्रता दाखल न हो जाये ऐसा हर पल सचेत रह कर ध्यान देने वाले, पवित्रता के पालक, संपूर्ण समय स्वाध्याय मे लीन रहने वाले इस महात्मा की कमी सम्पूर्ण जैन समाज के साधु समुदाय मे पद-पद पर प्रकट होगी।

जैन समाज मे समय को देख उनके जैसा प्रतिभाशाली, सचोट, शास्त्र सिद्धान्त तथा नियमबद्ध ज्वलंत उपदेश देने वाले महापुरुष, महात्मा विरल ही होगे और इसीलिए जैन समाज के संसार व्यवहार को धर्म की दृष्टि से सुधारने को तत्पर जैसे संत-महत की जैन समाज को बडी भारी क्षति हुई है।

आपने मध्यप्रदेश, मेवाड, मालवा, राजस्थान मे हजारो खटीक परिवारो को जैन सिद्धान्त का प्रतिबोध देकर जीवन को उज्ज्वल बनाने के मार्ग पर अग्रसर किया है। हजारों परिवारो ने इनके शरण मे अपने आपको समर्पित कर मांस मदिरा एवं कुव्यसनो का त्याग कर अपने जीवन को स्वर्णमय बनाया है। इन परिवारो को धर्मपाल उपाधि से सम्मानित किया गया है।

मैंने मेरे अपने जीवन मे अनेक संत सतियो के पवित्र दर्शन एवं सतसग किया है। ऐसे संत महत मेरी उम्र मे विरले ही देखे हैं जिनका प्रताप, जिनकी वाणी, जिनकी शासन रक्षा, जिनका सदुपदेश, जिनका तप एवं तेज, जिनका उद्योत, जिनका उत्साह ये सब गुण एक साथ विरले ही महापुरुषो में भाग्य से ही होते है। बेशक कई साधु-साध्वी जो उत्तम वंदनीय, पूज्यनीय है, परोपकारी है, परन्तु मुझे पक्षपाती कहो या अन्यन्य भक्त कहो। जो कहना हो सो कहो, मैं जिन जैनो को या जैनेत्तरो को प्रामाणिक और परीक्षक समझता हू उनका हृदय तो उन्हे श्रेष्ठ साधु समझता था।

एक कवि की भाषा मे अगर कहूं तो अहिसा समता इनके जीवन का मूल मंत्र था और यह इनके जीवन मे ताने बाने की तरह फैल गया था। सत्य आपश्री का मुद्रा लेख था। तप आपश्री का कवच था। ब्रह्मचर्य आपका सर्वस्व था। सहिष्णुता इनकी त्वचा थी। उत्साह जिनका ध्वज था, अखूट क्षमा, बल जिनके हृदय पात्र या कमडल से भरा था। सनातन योगी कुल के यह योग मालिक थे। रागद्वेष के दावानल से आप अलग थे। मेरे तेरे के ममत्व भाव से परे थे। सभी मुमुक्षु जीवो के कल्याण के आप इच्छुक थे। इतना ही नहीं सब के कल्याण के उपदेश मे ये सदा मशगूल रहते थे। ऐसा जैन जगत् का सम्पूर्ण भारत के एक वर्तमान महान् धर्मगुरु, धर्माचार्य, शासन के श्रृंगार, परोपकारी, समर्थ वक्ता, समर्थ क्रियापात्र, कर्तव्यनिष्ठ, गच्छाधिपति का महापरिनिर्वाण होने से हमने एक अनुपम, अमूल्य आचार्य खोया है। आपश्री की आत्मा को विनम्र श्रद्धाजली।

फलक तूने इतना हंसाया न था।
कि जिसके बदले यों रुलाने लगा।।

गौरवशाली आचार्य श्री नानालाल जी म.सा.

✍ मदनलाल जैन सरूपरिया, भदेसर (चित्तौड़गढ़)

समता विभूति समीक्षण ध्यान योगी आचार्य श्री नानालाल जी म.सा के स्वर्गारोहण के अवसर पर भावभीनी श्रद्धांजलि।

आगम के पृष्ठो पर हम अवलोकन करते है कि कई ऋद्धि सम्पन्न श्रेष्ठि पुत्र एवं राज पुत्र एक ही वार जिनवाणी का रसास्वादन कर संसार से विमुख हो आत्मोत्थान के मार्ग पर प्रस्थित हो गये ऐसे अनेक उदाहरण हे। यथा-गज सुकुमाल मेघकुमार जम्बू कुमार आदि। ऐसा ही एक उदाहरण इस वर्तमान भौतिक युग मे प्रस्तुत किया हमारे चरित्र नायक आचार्य श्री नानेश ने।

दांता ग्राम के श्री मोडीलाल जी पोखरना की सात संतानों मे से सबसे छोटे थे। इनका बाल्यावस्था का नाम गोवर्धन था किन्तु सब भाई-बहिनो मे छोटे होने के कारण प्यार से इन्हे परिवार एवं फिर गांव मे 'नाना' नाम से संबोधित किया जाने लगा। प्यार का नाम ही अंततः सुविज्ञ नानालाल हो गया।

इनकी ज्येष्ठ भगिनी श्रीमती मोतिया बाई ने जिनको भादसोडा ग्राम में व्याही गई थी, पर्युषण पर्व मे अठाई की तपस्या की थी। तपस्या पूर्ति के अवसर पर पीहर से चूंदड ओढ़ाने हेतु श्री नानालाल जी को भादसोडा भेजा गया था। उस समय भादसोडा मे मेवाडी सम्प्रदाय के पूज्य श्री एकलिंगदास जी म सा. के शिष्य श्री चौथमल जी म सा का चातुर्मास चल रहा था। अपने बहनोई जी के आग्रह से श्री नानालाल जी महाराज श्री जी के प्रवचन मे गये उस रोज प्रवचन मे छह आरों का वर्णन चल रहा था। महाराज श्री जी ने छठे आरे का वर्णन बड़े ही मार्मिक एव कारुणिक शब्दो मे प्रस्तुत किया था। उस कारुणिक वाणी को सुन कर एवं छठे आरे के मनुष्यो को कच्छ मच्छ का आहार करने को मजबूर होना पड़ेगा। यह सुन कोमल हृदय श्री नानालाल जी को रोमाच हो गया और उसी समय यह दृढ़ निश्चय किया कि मै कुछ ऐसा कार्य करूं जिससे मुझे छठे आरे मे जन्म ही नहीं लेना पडे। उस समय श्री नानालाल जी की माता श्रीमती श्रृंगार बाई जी भदेसर मे अपने पीहर मे थी। श्री नानालाल जी अश्वारोही बन भादसोड़ा से भदेसर पहुंचे। रास्ते मे अपने पूर्व जीवन का अवलोकन करते हुए कि मै कभी धर्म के सन्मुख नहीं हुआ और मेरी माताजी भी सामायिक आदि जो धार्मिक क्रियाएं करती थी उसमे हर वक्त अन्तराय देता था। अपनी आलोचना करते हुए एवं आंसुओ द्वारा अपने पापो का प्रक्षालन करते हुए भदेसर पहुचे और अपनी माताजी से क्षमायाचना की। अन्तर जागरण का वह एक ही उपदेश श्री नानालाल जी को जागृत कर साधु बाने के लिए कारगर बना और एक सामान्य साधु से विनय वैयावृत्य एवं स्वाध्याय को जीवन मे उतार कर जिनशासन के सर्वोच्च पद आचार्य पीठ को सुशोभित कर अपनी आत्मा को साधना के शिखर पर स्थापित किया। धर्मपालो का उद्धार कर लाखो व्यक्तियो को व्यसन मुक्त कराया। तीन सौ से ऊपर मुमुक्षु आत्माओ को संयम पथ पर अग्रसर कर शासन को गौरवान्वित किया। अंतिम समय मे संलेखना संथारा कर अपना लक्ष्य सिद्ध किया। ऐसे गौरवशाली आचार्य श्री नानालाल जी म.सा को भावभीनी श्रद्धांजली समर्पित करते हुए प्रभु से प्रार्थना करता हूं कि उन्हे शाश्वत सुख प्राप्त हो।

जैन इतिहास के एक महान् प्रभावक तेजस्वी आचार्य नानेश

अम्बालाल नंदावत, स्वतंत्रता सैनानी
कानोड़

मेवाड के एक छोटे से गांव दाता मे एक प्रतिष्ठित परिवार के पोखरना वश मे सवत् 1977 के ज्येष्ठ शुक्ला 2 को एक महान् आत्मा का जन्म हुआ जिसका गोवर्धन नाम दिया गया। यही व्यक्ति आगे चल कर श्री नानेशाचार्य के नाम से विख्यात हुआ। साधारण परिवार, पिता श्री मोडीलाल एव माताजी श्रीमती श्रृंगार बाई की कुक्षि से जन्म लेकर इस बालक ने अपने वंश और गांव को ही रोशन नहीं किया बल्कि एक ऐसे साधुमार्गी संघ को आलोकित किया जिसका प्रकाश वर्षों तक जगमगाता रहेगा।

ये सच्चे अर्थों मे जैन जगत् के देदीप्यमान सूर्य थे जिनका ज्ञानोपदेश रूपी प्रकाश बिना किसी भेदभाव के जन-जन को सन्मार्ग दिखाता रहा, इनकी आध्यात्मिक साधना की रोशनी भारतवर्ष मे कश्मीर से कन्याकुमारी तक गूजती रही। आचार्यश्री का व्यक्तित्व इतना महान् था कि उन पर बडे-बड़े ग्रन्थ लिखे जा सकते है।

आचार्यश्री का जीवन एक ओर प्रखर तेजस्विता का उदाहरण प्रस्तुत करता है, दूसरी ओर अनेक भव्यो की आत्माओ को जागृत एवं उद्बोधित करने वाला तथा सद्ज्ञान व सदाचार का प्रेरक रहा है। इनकी प्रेरणा ने हजारो मानवो को धर्म के प्रति जागृत एवं दुर्व्यसनो को छोड़ने को मजबूर किया है।

आचार्यश्री ने इस युग में जन्म लेकर विश्व कल्याणार्थ अपना संदेश देकर लोक कल्याण एवं लोक मगल का मार्ग मानवमात्र के लिए आलोकित किया। गुरुदेव एक महामना थे जिनका व्यक्तित्व अनोखा, प्रखर एवं कतिपय विशेषताओ से युक्त था। विचारों की उच्चता आचरण की शुद्धता जीवन की सरलता और सादगी ने आपके व्यक्तित्व को प्रखर और बहुमुखी प्रतिभा बनाया है। आपका हृदय इतना विशाल था कि उसमे विश्व के प्राणी मात्र के प्रति असीम करुणा का निवास विद्यमान था। वे एक ऐसे महामानव थे जो सम्पूर्ण मानवता के प्रति सर्वतोभावेन समर्पित थे। किसी भी प्रकार के भेदभाव रहित होकर आपने समाज के निम्न पीडित दलित और उपेक्षित वर्ग के लोगो के नैतिक आध्यात्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक उत्थान के लिए आपने सदुपदेश और आव्हान के द्वारा जो क्रांतिकारी कार्य किये हैं वे इतिहास के पृष्ठो मे चिरकाल तक स्वर्णाक्षराकित रहेंगे।

वर्तमान शताब्दी मे श्रमण आचार विचार का निष्ठा एवं विवेकपूर्ण परिपालन करने के कारण आचार्यश्री को श्रमण परम्परा मे विशिष्ट एवं अद्वितीय स्थान प्राप्त है।

आत्म साधना के पथ पर आरूढ़ होकर निरंतर पांच महाव्रतो का अखण्ड रूप से पालन करने वाला बाईस परीषह तथा रत्न त्रय को धारण करने वाला शुद्ध परिणामी सरल स्वभावी अन्तर्मुखी दृष्टि से आत्म-साक्षात्कार हेतु प्रयत्नशील तथा श्रमण धर्म को धारण करने वाला साधु ही श्रमण कहलाता है और निज स्वरूपा-चरण मे प्रमाद नहीं होना उसका श्रामण्य है।

आप श्रमण परंपरा के एक ऐसे सूर्य थे जिसने समाज को आलोक दिया, दिशा दृष्टि प्रदान की और अपने सत्साहित्य के द्वारा प्रेरणास्पद संदेश दिया, विभिन्न स्थानो पर आयोजित अपने चातुर्मासकाल मे अपने उपदेशों के माध्यम से असंख्य लोगो का उद्धार किया। आपका जीवन इतना संयत सदाचार पूर्ण एवं आडवर विहीन रहा

उसने प्राय: सभी को प्रभावित किया। आपने अहिसा आदि का पालन इतनी सूक्ष्मता एव सावधानी से किया कि उसे देख कर लोगो को आश्चर्य होता था। वे यद्यपि वाक्पटु थे और आपकी वाणी व वक्तृत्व शैली मे गजब का सम्मोहन था। फिर भी आपकी वक्तृत्व मे वाक्पटुता की अपेक्षा जीवन का यथार्थ ही अधिक छलकता था। एक ओर उनका जीवन को ऊचा उठाने वाला और नैतिकता का बोध कराने वाला आपका सन्देश और दूसरी ओर आपका अनुकरणीय आदर्श जीवन लोगो के जीवन पर गजब का प्रभाव डालता था। यह कथन अपने मे सत्य है कि वाणी चरित्र के प्रतिध्वनि होती है, जैसा चारित्र होता है व्यक्ति मे वैसी ही वाणी मुखरित होती है जो प्रभावशाली व जनकल्याणकारी होती है।

आपका कानौड का वर्षावास बहुत ही भव्य आदर्शमय एवं गौरवशाली कहा जायेगा। इस वर्षावास मे जो यहा के श्रावको का उत्साह, जोश एव प्रेरणा मिली वह इतिहास के स्वर्णाक्षरो मे अंकित रहेगी।

भगवान् का जो पतित पावन विशेषण है उसे आचार्यश्री ने अपने जीवन मे सार्थक कर के पतितोद्धारक बने, उनका अनुकरण यदि हमारे अन्य साधु साध्वी करे तो लाखो व्यक्तियो का उद्धार हो जाय एवं जैन समाज की प्रभावना हो।

वे हर सदंर्भो मे जीवन व समाज को स्वस्थ भाव भूमि व जीवनी शक्ति प्रदान करने वालो मे एक अग्रसर आचार्य के रूप मे स्मरण किये जाएंगे।

संत परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र

पारस नागौरी
संस्थापक
वर्धमान महिला सेवा मंदिर

आचार्य नानेश संत परम्परा के जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। पारिवारिक संस्कारो की अनुपम देन से अल्पायु मे ही संयम जीवन अगीकार कर आप साधना के कठोरतम मार्ग पर चल पडे। ज्योतिर्धर जवाहराचार्य के आशीर्वाद व गणेशाचार्य के सहयोग, स्नेह ने समय के साथ आपकी तेजस्विता मे उत्तरोत्तर वृद्धि की इसी के परिणामत: आपने आचार्यत्व के दीर्घ जीवनकाल मे देश के सुदूर अंचल मे पाद विहार कर प्रभु महावीर के सिद्धान्तो का प्रचार-प्रसार किया। उनकी जादुई ओजस्वी तथा अमृतमयी वाणी जन-जन के लिए प्रेरणादायी थी। आपकी साधना एवं ब्रह्मचर्य के प्रभाव से अनेक आत्माएं दीक्षित हो आत्म-कल्याण की ओर अग्रसर हुई।

आचार्य नानेश चारित्र की जीवंत प्रतिमूर्ति थे। उनमे नैतिक ऊर्जा का अक्षय कोष विद्यमान था वस्तुत: वे इस युग के एक उत्कृष्ट साधक, योगी व श्रमण परम्परा के श्रेष्ठतम गौरवशाली जैनाचार्य थे। ऐसे महान् व्यक्तित्व को हार्दिक श्रद्धा सुमन अर्पित कर अपने आपको कृतकृत्य मानता हू।

पुनश्च: उस विराट शिखर पुरुष जैनाचार्य को सहस्त्र वन्दन, नमन्

वे इस धरती के सबसे ऊंचे माप थे

दीप बुझा प्रकाश अर्पित कर, फूल मुरझाया सुवास समर्पित कर।
टूटे तार पर सूर बहाकर, गुरुवर चले पर नूर फैला कर।।

वृक्ष की डाली पर जब फूल खिलता है, तो वह चारो ओर आसपास के वातावरण मे अपनी सौरभ को बिखेर देता है। कण-कण को महक देता है। किन्तु कब तक? जब तक वह डाली पर है, जब तक उसका अस्तित्व है, जब तक वह खिला हुआ है। वही फूल जब मुरझाया, डाली से गिरा तो उसका अस्तित्व ही समाप्त नही हुआ, सुगन्ध का भण्डार भी लुप्त हो गया। उसकी महकती दुनिया ही समाप्त हो गई।

परन्तु महापुरुषो का अवतरण फूलो से भी बेहतर होता है। विशिष्ट होता है, महान् होता है। महापुरुष जब तक मौजूद रहते है तब तक उनका व्यक्तित्व जनमानस को अपनी ओर प्रभावित करता ही है। सौरभ दान से जन-जन मे एक नवीन ताजगी भरता ही है, परन्तु आंखो से ओझल हो जाने के बाद भी उनके गुणो की मधुर सुवास जन-जन को एक नवीन चेतना, नव स्फूर्ति एव नवजीवन प्रदान करती रहती है। उपवन का वह माली जिसने हर पौधे, हर फूल और हर पत्ती को अपने जीवन के कण-कण से सीचा, वह कल्पवृक्ष जिसने इच्छित फल प्रदान किया, वह चिन्तामणि जिसने जन-जन के दु:ख दर्द को हर लिया, वह छत्र जिसने सकटो की धूप को छूने तक नहीं दी। वह महापुरुष जिन्हे हम आराध्य देव कह कर पुकारते थे। वे क्या थे? तुच्छ शब्दावली से हम व्यक्त नही कर सकते।

हिमालय से विराट, सागर से गभीर, चन्द्र से उज्ज्वल एव सूर्य से तेजस्वी उन गुरुवर को शब्दो की सीमा से बाधे भी कैसे? इस धरती के सबसे ऊंचे माप थे-वो उन्हे मापने का कोई पैमाना नही है मेरे पास। सारे प्रयास, सारे गज फूट, उस आकाश से ऊचे व्यक्तित्व को नाप नहीं सकते। हिमालय से महान् उनके जीवन पर दृष्टि डालते-डालते हमारा मस्तक गौरव से ऊंचा हो जाता है और अन्र्तहृदय श्रद्धा से झुक जाता है। वे सयम, साधना के ताप मे तपे, खूब तपे निरन्तर तपते रहे, निखरते रहे और निखरते-निखरते वे निर्मल हो गये, शुद्ध कुन्दन जो बन गये। उनकी अन्तर निर्मलता, निश्चलता वस्तुत: स्वच्छ थी, निर्विकार थी। 27 अक्टूबर 1999 रात को दस बजकर इकतालीस मिनिट पर आचार्यश्री का तेजोमय जीवन दीप सदा के लिए बुझ गया। जैन जगत् का देदीप्यमान सूर्य अस्त हो गया। समाज का एक अनमोल रत्न हमसे सहसा छीन लिया गया और वह तप:पूत आत्मा इस नश्वर देह को छोड कर हमसे विदा हो गए। जिसने भी यह सुना उनके दिल पर मानो वज्रपात हो गया। हजारो हजार की सख्या मे एकत्रित श्रद्धालु भक्तजन अपनी अश्रुभरी आंखो से उन महान् गुरु के चरणो मे अपनी श्रद्धाजलिया अर्पित करते रहे। विधि का कठोर विधान यह कौन जानता था कि आचार्य भगवन् हमे यो अचानक छोड कर चल देगे, ऐसा स्वप्न मे भी नहीं सोचा था।

आचार्य भगवन् के इस महाप्रयाण से सबको व्यथा हुई किन्तु हम जैसी लघु शिष्याओ को गहरा आवात लगा। आचार्य भगवन् ने बचपन से ही हमको अपनी छत्र छाया मे स्थान दिया। सर्द, गर्म हवा के झकोरो मे हमे संभाला, हर भाति सुशिक्षाओ से हमारे जीवन को गढा, उनका साया उठ जाना असह्य हो गया हमे। धैर्य का बांध तो टूट गया हमारा। आचार्य भगवन् शरीर पिड से भले ही चले गये किन्तु उनका उज्ज्वलतम चरित्र यश सौरभ के साथ हमारे लिए प्रकाश पुज बन कर अमर है। प्रभु वीर के शासन को उन्होने जिस भाति गौरवान्वित किया, वह इतिहास गगन

का देदीप्यमान नक्षत्र बन कर चमकता रहेगा। हम उनके बताये मार्ग पर चल कर श्रमणी जीवन को समुज्ज्वल बनायेगे। इसी श्रद्धा के साथ-

गुरुवर तेरी मीठी स्मृतियां, युग-युग बाध जगायेंगी,
सुख में दुःख में उलझे मन की उलझन को सुलझायेंगी।
कल्याणकारी है आपका च्यवन, मंगलकारी है आपका जन्म,
पावनकारी है आपकी प्रव्रज्या, प्रेरणादायी है आपका निर्वाण।।

इन्ही भावनाओ के वीर प्रभु से मै अभ्यर्थना करती हूं कि मेरे आस्था पुंज श्रद्धेय पूज्य गुरुवर की आत्मा अतिशीघ्र चरम लक्ष्य को प्राप्त करे।

प्रेषक : **सुरेश भैरविया, बांसवाड़ा**

❖ ❖ ❖

नानेश ने बम्बोरा में बहाई समता-समन्वय की गंगा

✍ निर्मल-रेखा गांग, खोर (म.प्र.)

उदयपुर जिले क बम्बोरा गाव मे किसी बात को लेकर जैन धर्मावलम्बियो मे विवाद उत्पन्न हो गया। दो परिवारो का संघर्ष धीरे-धीरे सामाजिक स्तर पर आ गया और दो गुट बन गए। एकता के समर्थको ने अपने प्रयास किये लेकिन निराशा हाथ लगी। ऐसे ही समय मे समता विभूति आचार्य श्री नानेश के बम्बोरा पधारने का प्रसंग बन रहा था। आचार्यश्री के आगमन के पूर्व इस विवाद को समाप्त कर वैमनस्य, कटुता को भूल स्नेह सरिता प्रवाहित करने के प्रयास संघ के प्रबुद्ध श्रावको द्वारा किए गए किन्तु सफलता नहीं मिली। इसी बीच समता विभूति का बम्बोरा पदार्पण हो गया ज्योही आपके कदम बम्बोरा की धरती पर पडे समाज मे समरसता का वातावरण बनने लगा। आम जन के वैचारिक प्रवाह बहने लगे, चिन्तन की धाराएं बदलने लगी। हर तरफ एक अजीब शांति मिठास थी, हर जन उस दिव्य दृष्टा की ओर खींचे चले जा रहे थे। कुछ प्रवचनोपरान्त ही द्वय पक्षो ने कटुता, आपसी द्वेषता भूला विवाद को आचार्य श्री की झोली मे बहरा दिया। एक बार फिर बम्बोरा मे सामाजिक एकता का सुमन खिल उठा। कुछ समयोपरान्त दीक्षा प्रसंग पर केसरवृष्टि ने साधर्मियो के मिलन को अमिट बना दिया। यो लगा मानो देवताओ ने स्वयं उपस्थित हो आचार्य श्री के विराट व्यक्तित्व को नमन किया है। इस तरह आचार्य नानेश के पदार्पण से बम्बोरा मे समता समन्वय की गंगा प्रवाहित हुई जो साधुमार्गी जैन समाज के इतिहास की एक अमिट दास्तान बनी। ऐसा योगी, जिसके चरण जिधर पड़ते है उधर के वातावरण मे एक सुवास व्याप्त हो जाती है ऐसे योगीराज को नमन, वन्दन, अभिनन्दन।

मेरी आस्था के अमृत सिन्धु

✍ ज्योति भैरविया, बांसवाड़ा

चले गये हो हमें छोड़ कर, हम ना सकेंगे तुमको भूल।
सदा आपकी याद स्मृति में, करेंगे अर्पित श्रद्धा फूल।।
तुम अब कभी आ नहीं सकते, तुम्हें हम अब बुला नहीं सकते।
लाखों कोशिशें करे मगर, तुम्हें अब हम पा नहीं सकते।।

वास्तव मे यह अनादिकालीन सिद्धान्त है कि जो मिलता है वह अवश्य बिछुडता है। जो उदित होता है वह अवश्य ही अस्त होता है। जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु भी होती है।

जिस प्रकार रात्रि के आकाश मडल मे असंख्य तारे उदित होकर टिमटिमाते हैं। अपनी चमक दमक दिखा कर अन्तत: प्रभात मे विलीन हो जाते है। इस पृथ्वी तल पर अनन्त-अनन्त प्राणी आते हैं अपनी छटा दिखाकर चले जाते हैं।

ससार मे सफल साधक वही गिने जाते है जो अपने आपको सयम साधना मे लगाये हुए एक पवित्र एव उज्ज्वल आदर्श स्थापित कर जाते है। आपश्री का मन एव हृदय दया, करुणा से लबालब भरा था। आचार्य भगवन् का सद्गुणमय जीवन महानता का द्योतक है। गुणो के अक्षय कोष थे, गुणों के प्रशान्त महासागर थे, आचार्य गुरुदेव का समस्त जीवन ही गुण स्वरूपा था। इस विश्व मे प्रतिदिन अनेक पुष्प खिलते है और समय आने पर मुरझा जाते हैं। कुछ पुष्प ऐसे होते है जो अपने आसपास के वातावरण को सुरभित कर देते है। वह फूल जमीन पर गिरा, मधुर सौरभ से मिट्टी को सुवास प्रदान की। जमीन को अपनी सौरभ से महका दी।

इस प्रकार समाज मे भी कुछ फूल इस प्रकार के आते है जो गुलाब के फूल की तरह समाज की टहनी पर महकते रहते है एवं मृत्यु के पश्चात् भी वे अपने पवित्र चारित्र की सौरभ और विचारो के वैभव से जन-जन को मुग्ध करते है। अपनी सौरभ दुनियां को लुटा कर मुरझा जाते है। वैसे ही महापुरुष भी इस अवनितल पर अवतरित होते हैं और अपने समुज्ज्वल जीवन की सौरभ संसार मे फैला कर चले जाते है।

आचार्य भगवन् इस विश्व वाटिका के सौरभान्वित सदाबहार सुमन थे। वे अपने जीवन की सुमधुर सौरभ विश्व मे फैला कर इस असार संसार से चले गये। फिर भी उनकी स्मृतियो की सौरभ हमारे जीवन को आज भी सुवासित कर रही है। जिस प्रकार अगरबत्ती एवं मोमबत्ती अपनी देह के कण-कण को जला कर वातावरण को सुवासित एव प्रकाशित बनाती है। उसी प्रकार समता सिन्धु आचार्य देव भी अपने जीवन का प्रत्येक अमूल्य क्षण समाज को समर्पित कर समाज मे ज्ञान का प्रकाश, प्रेम की सुवास फैलाते रहे। व्यवहार दृष्टि मे आचार्य नानेश चले गये हैं किन्तु हमारे अन्तर हृदयो से आप कभी नहीं जा सकते। हम प्रतिदिन आराध्य देव के पावन दर्शन करते है भावालोक मे। मेरे भावालोक के देवता। मेरी शत्-शत् वन्दना स्वीकार करे।

शबनम फूल पर गिरती, पत्तियां नम नहीं होती।
लाख महामानव चले जाये, स्मृतियां कम नहीं होती।।

आचार्य भगवन् के गुणो का वर्णन किया नही जा सकता।

आराध्य देव समुद्र के समान सद्गुणो की खान थे। भगवन् की पावन स्मृति मे मेरी यही हार्दिक कामना एव मंगल मनीषा है कि मेरे जीवन मे भी उनके गुणो की छाया सदैव बनी रहे। इसी मनोकामना के साथ मे देवलोक मे विराजमान भव्य तारणहार दिव्यात्मा के लिए मै श्रद्धा सुमन भेट करती हूं।

जिन्दगी की आप आला हस्ती थे,
जिन्दगी में फकीराना मस्ती थे।
जिनकी शान में है कौम आज सिजदा,
जिन्दगी में चमकती रोशन वस्ती थे।।

ऐसे महामानव के वियोग से दिल को बड़ा आघात लगा, आचार्य भगवन् की महान् आत्मा शरीर से हमारे बीच नही है किन्तु उनका महिमा मंडित यश पुंज व्यक्तित्व मेरे स्मृति पटल पर अजर अमर है। वे अन्तर मे निरन्तर बसे हुए है। उनका बताया हुआ शुभमार्ग असंख्य भाव आत्माओ को युगो-युगो तक प्रेरणा देता रहेगा।

महकता था जिससे घर संसार का सारा गुलशन हमारा।
वह फूल अपनी महक बिखेर, हमें छोड़ गये बेसहारा।

हृदय का सम्राट जिगर का हुक्मरां जाता रहा।
खार का महबूब, गुलों का महरबां जाता रहा।
मौन क्यों गुच्छे हैं और क्यों हर कली मुरझा गई।
आज हमारे बाग से बागबां जाता रहा।

अंत मे मैं मेरे आराध्य भगवन् के लिए शासन देव से यही प्रार्थना करती हू कि मेरे भगवन् शीघ्र अतिशीघ्र मोक्षगामी बने।
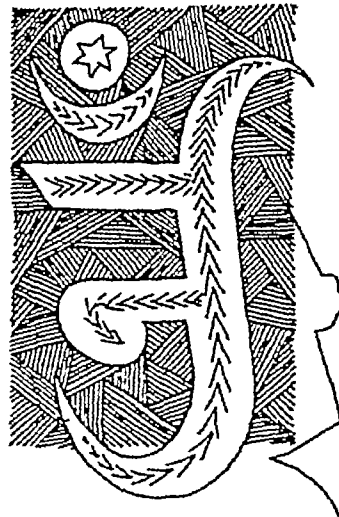
जैन जगत् की शान

✍ रोशनलाल भण्डारी, दलौदा (मदसौर)

आचार्य श्री श्रद्धेय नानालाल जी म सा उच्च कोटि के सत और विश्व वंदनीय समता दर्शन के प्रणेता थे।

आचार्य भगवन् की हमारे परिवार पर असीम कृपा रही, आचार्य पद ग्रहण के पश्चात् प्रथम चातुर्मास हेतु उदयपुर से रतलाम पधारते समय हमारे छोटे से ग्राम दलौदा को भी पावन किया। हमारे पिताश्री भवरलाल जी भण्डारी एव माताश्री मोहनबाई को आशीर्वाद वचन फरमाये व लघु भ्राता पारसजी को शासन सेवा मे समर्पित करने के उद्गार व्यक्त किये। इससे लघुभ्राता की भावना ऐसी जागृत हुई कि वह श्रीचरणो मे साथ हो गए व उच्च भावना के साथ मे श्री इन्द्र भगवन् से ज्ञान ध्यान मे तल्लीन हुए और राजनादगाव मे दीक्षा अगीकार की जो आज श्री पारसमुनि जी महाराज के नाम से जाने जाते है। इसी श्रृखला मे लघु बहिन की भावना जागृत हुई और उन्होने महाश्रमणी श्री पेपकवरजी महाराज के श्री चरणो मे ज्ञान ध्यान अर्जित कर शासन सेवा मे गगाशहर-भीनासर मे दीक्षा अगीकार की।

प्रथम चातुर्मास से ही हमारे पिताजी व माताजी पर श्री आचार्य भगवन् की ऐसी कृपा हुई कि जीवन पर्यन्त गुरु सेवा मे समर्पित भाव को रखते हुए प्रथम चातुर्मास से ही सपूर्ण चातुर्मास अवधि पर्यन्त श्री चरणो मे ही रहने का निर्णय लिया। आचार्य भगवन के अहमदाबाद चातुर्मास मे श्री चरणो मे रहते हुए पिताश्री अतिम दर्शन व मागलिक श्रवण कर स्वर्गारोहण हुए उस समय माताश्री को ऐसी प्रेरणा दी कि परिवार के सदस्य आर्तध्यान नही करे इसका पूर्ण रूप से ध्यान रखें। माताश्री ने भी उसी प्रेरणा से परिवार के सदस्यो को हिम्मत से कार्य करने की शिक्षा दी।

माताश्री ने श्री चरणो मे बीकानेर में ही रहते हुए मागलिक श्रवण कर स्वास्थ्य अनुकूल नहीं रहने से मन्दसौर के लिए प्रस्थान किया और मन्दसौर मे स्वर्ग सिधारी।

जैन जगत् की विरल विभूति आचार्य भगवन् के महाप्रयाण से सघ एव शासन के लिए ही नही वरन् सपूर्ण विश्व के लिए आघात लगा है। आचार्य भगवान् जैन जगत् ही नही संपूर्ण समाज के प्रेरक व श्रद्धा के केन्द्र थे। हम भडारी परिवार के सदस्य उनके गुणो, आदर्शों एव उनकी महती कृपा के ऋणी है तथा उनके द्वारा दी गई प्रेरणा से अविरल गति से धर्म भावना के साथ आगे बढते रहे, यही सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

हम पर महान् उपकार है

✍ राजेन्द्र जैन, टीटू

उडीसा प्रांत की पिछडेपन, गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता मे पूरे विश्व मे अपनी एक अलग पहचान है जिसमे से इस प्रान्त का पश्चिमी क्षेत्र (बलागीर, कोरापुट, कलाहाण्डी जिले) अपना विशेष स्थान रखते है, जहां पर माताओ को अपने परिवार की भूख शान्त करने के लिए अपने जिगर के टुकडे को भी बेचा जाता है। यहा की भोली भाली, सरल व अन्धविश्वासी जनता को जीवन निर्माण के प्राथमिक सूत्रो की भी जानकारी (नैतिक, चारित्रिक-संयमी, नीति-अनीति, आचार-व्यवहार, धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, सत्य-असत्य आदि मौलिक बातो की) न होने से उनका दैनिक जीवन दिशाहीन, हिंसक, दुर्व्यसन युक्त अन्धकार मय था।

आज से करीब 34 वर्ष पहले सच्चे, सयमी, प्रामाणिक जैन मुनि का प्रवास कल्पना मे ही सभव लगता था। क्योंकि खरियार रोड़ नगर के बाद का रास्ता केसिंगा शहर तक करीब 190 किमी का भयानक जंगल, हिंसक जीव जन्तुओ से पटा पड़ा था। मीलो तक जैन साधु के पीने लायक पक्का पानी भी उपलब्ध नहीं था, कभी-कभी इजन का पानी ही उपलब्ध हो पाता था। शुद्ध आहार की तो आप कल्पना ही कर सकते हैं। ऐसे विकट समय मे उडीसा वासियो की भावपूर्ण जिद् वाली विनती को देख समता सागर भगवान् श्री नानालाल जी ने उडीसा की तरफ अपनी विद्वान-संत मण्डली के साथ रायपुर चातुर्मास पूर्ण कर विहार किया। महावीर जिनशासन की प्रभावना-अपनी चुम्बकीय चमत्कारी वाणी के माध्य से इस क्षेत्र की जनता की आध्यात्मिक आवश्यकता को समझते हुए उनको सही दिशा, सही ज्ञान, स्वस्थ सात्विक जीवन निर्माण के दुर्लभ सूत्रो के माध्यम से भयावह रास्ता सूखे समाधे पार कर केसिंगा पधारें और जैन परिवारो को अपने सही धर्म का, सच्चे गुरु कौन है, इसकी जानकारी, बोध करा उड़ीसा प्रान्त के रूप मे एक नये क्षेत्र का आविष्कार किया।

इस महान् आध्यात्मयोगी के उस ऐतिहासिक प्रवास को आज भी यहां की जनता ज्यो का त्यो सजोये हुए हैं, यहां का विशेषकर अग्रवाल समाज, वैष्णव समाज उन्हे एक अलौकिक चमत्कारी महापुरुष के रूप मे सच्चे जैन साधक के रूप मे मान रहे है। उस समय (1966) मे इस क्षेत्र मे वैष्णव समाज और जैन समाज मे जैन धर्म की एक परम्परा तेरापन्थ धर्म संघ के दान और दया के नये सिद्धान्तो की भ्रान्तियो के कारण कटुता वैमनस्य-रागद्वेष का वातावरण काफी वर्षों से बना हुआ था। नाना भगवन्त ने उन्हे सही प्रामाणिक जैन मान्यताओ को बहुत ही सुदर, सरल, सरस भाषा मे समझा कर सही जैन धर्म की जानकारी देकर उनकी शंकाओ को दूर करते हुए पूरे समाज की विषमता वैमनस्य को पूरी तरह खत्म करते हुए दोनो को एक किया। उस पूरे प्रवास मे पूरे वैष्णव अग्रवाल समाज ने आचार्यश्री जी के सान्निध्य का, सेवा का लाभ उठाया। वह इस क्षेत्र मे तेरापथ जैन सम्प्रदाय का गढ होने व आचार्य श्री तुलसी जी के प्रवास के बाद भी मील का पत्थर है। (इस क्षेत्र मे स्थानकवासी घर बहुत कम है) अग्रवाल समाज के स्तम्भ प्रमुख समाजसेवी श्री मांगीलाल जी गुप्ता का लगाव आचार्यश्री जी के प्रति कितना जबरदस्त था इसको शब्दो मे व्यक्त करना, लिखना मेरे लिए मुश्किल है। आचार्यश्री जी का केसिंगा चातुर्मास करवाने हेतु उनकी चरम विनती शायद कम ही देखने मे आती हो। गुप्ताजी स्वयं आचार्यश्री जी के साथ राजनादगाव तक रहे।

आगम महापुरुष, जैन क्रातिचेत्ता, इस विश्व की विरल विभूति महा आध्यात्मिक कर्म योगी साधना के शिखर सौरभ, जन-जन के कल्याण में कठिन सयमी-चारित्राचार के नये मानदण्ड स्थापित करने वाले परम वन्दनीय, परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री नानालाल जी म सा का यह प्रवास हर दृष्टियो से जिनशासन को, धर्म को, साधुमार्गी परम्परा को, नये आयामो के साथ उपलब्धियो से भरा रहा। पूरे प्रवास मे जैन धर्म की एक परम्परा का सम्प्रदायवाद चरम पर होने के बावजूद हर स्थान पर दर्शन होते ही अज्ञानी व्यक्ति भी अपना भान भूल कर उनमे ही खो जाता था। उस महापुरुष का ऋण यहां का समाज/जनता अपने जीवन मे उतार नही पावेगा।

यशस्वी आचार्य

✍ दिलीप धींग, बम्बोरा (उदयपुर)

उदयपुर के सार्वजनिक चिकित्सालय मे एक प्रसिद्ध वरिष्ठ सत चिकित्सार्थ प्रवासरत थे। जहां मुनि श्री स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे, वहां लोगो की आवाही-जावाही ज्यादा थी। मुनिश्री के ईलाज से असम्बद्ध एक चिकित्सक ने उधर से जाते हुए नम्रता से पूछा-'क्या यहां आचार्य नानालाल जी विराज रहे हैं?' वहा खडे व्यक्ति ने कहा-'नही।' यह आचार्य नानेश की लोकप्रियता का प्रमाण था।

आचार्य नानेश के देवलोकगमन के 12-13 घण्टों के भीतर ही उनकी अतिम यात्रा आरम्भ हो गई थी। इतने कम अन्तराल मे भी जन सैलाब उमड पडा। सतो के निधन के उपरान्त उनके पार्थिव शरीर को लम्बे समय तक रोके रखने वालो को इस घटना से प्रेरणा लेनी चाहिए।

हम अपने उदात्त आचरण से आचार्य नानेश के विमल यश को विमलतर बना सकते है।

एक संक्षिप्त सिंहावलोकन

✍ चम्पालाल छल्लाणी, देशनोक

वि स 2050 मे स्व गुरुदेव श्री नानालाल जी म सा तथा युवाचार्य श्री (वर्तमान मे आचार्य श्री रामलाल जी म सा) का चातुर्मास देशनोक की पुण्य धरा श्री जैन जवाहर मण्डल के पुण्य प्रांगण मे हुआ था। उस वक्त सघ अध्यक्ष श्री शांतिलाल साड और मै मत्री था। चातुर्मास प्रवास और उसके बाद करीब दस-ग्यारह माह गुरुदेव श्री शारीरिक अस्वस्थतावश एवं विशेष कर आखो की तकलीफ के कारण देशनोक ही विराजे थे। शारीरिक दृष्टि से आप पूर्ण रूपेण सक्षम नही थे। विहार की स्थितियां भी अक्सर डोली से हुई थी। इस तकलीफ के कारण चेतना शक्ति भी बराबर सबल रहनी सभव नही थी। इस अवधि मे देशनोक से विहार का अचानक मानस बना रासीसर दिशा की तरफ इसका पूर्वाभास किसी को नही रहा। लेकिन रासीसर पहुंचते-पहुचते आंखो की तकलीफ बढ जाने से आगे विहार का निर्णय टाल कर पुन: देशनोक पधारे। यहा अल्प समय विराज कर इलाज की सहूलियत मद्देनजर रख कर बीकानेर पधारे और चार-पाच साल तक बीकानेर, गंगाशहर, नोखामंडी, उदयरामसर क्षेत्र मे चातुर्मास प्राप्ति तथा विराजने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसी अवधि मे आखो का ट्रांसप्लाटेशन (प्रत्यारोपण) अहमदाबाद की डॉ भारती बहिन ने किया। फिर यहां से ब्यावर, उदयपुर की तरफ विहार अधिकाश डोली के सहारे करके उदयपुर पधारे और अंतिम वर्षो मे आपका विराजना उदयपुर के पुण्य प्रांगण मे ही हुआ।

आंखो की ज्योति की स्थितिया उतार-चढाव से चलती रही। आपकी इन तकलीफो को लेकर श्रावक समाज सदैव चितित रहता था और कामना यही करता कि हमारे समता विभूति गुरुदेव श्री शीघ्र स्वास्थ्य लाभ करे।

संघ की सारणा-सभालना का भार वर्तमान आचार्यश्री रामलाल जी म सा पर रहा। इस दरम्यान इस क्षेत्र (देशनोक, बीकानेर, गंगाशहर, उदयरामसर, नोखामंडी) मे कई उतार-चढाव की स्थितिया बनी। उन शकाओ के बीच बीकानेर से अलाय तक के क्षेत्र मे काल की परिपक्वता समझिए अथवा संघ विघटन की विकट विपन्नता समझिए। जो नही होना था वह हुआ और सोचने-समझने वालो की दृष्टि वालो की दृष्टि मे देखते-देखते सकारण संघ के दो फाड हो गए। संघ विघटन का प्रकरण बडा ही दुखदायी पूर्ण हुआ। 'घर हाण लोक हंसाई' वाली कहावत चरितार्थ हुई और सक्षम अक्षम के साथ पत्र की तोड मरोड उलझन आखिर तक सुलझ नही पायी। अर्थ का अनर्थ लगाया गया और इसी विकट परिस्थितियो मे वरिष्ठतम संतो का सघ से बहिर्गमन गंगाशहर-भीनासर से हुआ। गुरुदेव, युवाचार्य श्री उस वक्त बीकानेर विराज रहे थे। संतो की विवशता यहां बाध्य हुई और वे बहुत ही दु खी मन बांठिया कोटडी से विहार किये। उनके साथ विहार मे सैकडो नर-नारी उदयरामसर तक थे। संतो का आश्रय अवर से धरती पर अधर मे रहा। साथ ही उन पर नाना प्रकार के आरोपो, अपमानो का सिलसिला प्रारंभ हुआ जो आज तक थमा नही।

श्रद्धा के नाम पर धर्मोन्माद की लहर चरम सीमा लांघ चुकी। कई कथित श्रावक-भक्त तो कई सत-सती वर्ग भी न्यून भाषा प्रयोग करने मे पीछे नही रहे। वास्तविकता समझने की कोशिश से परे प्रशसा लूटने का मोह छोड नहीं सके और श्रमणोपासक जैसी पत्रिका ने भी अनेको लेख, सिंहावलोकन छाप कर अपना फर्ज निभाया। उद्देश्य सिर्फ एक ही कि गुरुदेव श्री के सच्चे भक्त हम ही है। तो क्या ऐसे तथाकथित भक्त नेताओ ने ही गुरुदेव श्री जैसी

पुण्यात्मा को छला?

सघ विघटन का स्थल बीकानेर, गगाशहर-भीनासर त्रिवेणी सघ रहा तो कई ज्वलत बिन्दुओ का कुरुक्षेत्र (सघर्ष क्षेत्र) देशनोक भी कम नही रहा। अनेको बिन्दु संघ विघटन से पूर्व यहा उभरे थे। सघ हित की दृष्टि से डेपुटेशन रूप मे मौखिक लिखित अनेको प्रश्न आचार्यश्री, युवाचार्य श्री तक पहुंचाए। इस बीच बम्बोरा जाकर युवाचार्य श्री तक बाते बतलाई लेकिन 'अम्मा-पिया' भाव दृष्टि से किया गया प्रयास सफल नही हुआ। साम्प्रदायिक सद्भावना का वातावरण सुधरने के बजाय दिनोदिन बिगडता गया। इसलिए धर्मोन्माद जहा चरम सीमा पर चला गया हो वहा कषाय भाव न बढे तब खामोश रहना ही श्रेयस्कर रहता है। कारण सत्य अपनी जगह सदैव ध्रुव सत्य ही है और उसका स्थान श्रद्धा से प्रथम है। श्रद्धा कही-कही अध भी हो सकती है। पर सत्य कभी अधा नही हो सकता। इसके आगे 'अग्निबाण' जैसी पत्रिका स्वय अपनी मौत ही मर गई। गीता सार की प्रथम पक्ति के अनुसार "जो हुआ, अच्छे के लिए हुआ।" और यही सदैव मगल कामना है कि सबको सद्‌बुद्धि दे भगवान् जिससे गुरुदेव श्री नानेश की जैसी पुण्यात्मा जहा भी विराज रही हो शाति प्रेम पारस विजय पाए।

इधर श्री हुक्मगच्छीय साधुमार्गी शात क्राति संघ के तमाम संत-महापुरुषो, साध्वी रत्नो के आगे प्रतिपक्ष की हरकतो की प्रसंगवश कभी कदाच चर्चाएं चली तब प्रतिवाद की जगह प्रत्युत्तर मे उनके मुखारविद से वही शीतल शातिदायक स्वर निकलते कि 'उन्हे कहने दीजिए, करने दीजिये, अपने आप शात हो जावेगे।' यही तो उनके समतामय सयमी जीवन की सही पहिचान है। कारण उनका ध्येय तो प्रत्येक प्राणी जगत् को ज्ञान का दिव्य अमृत पिलाना ही है और अत तक रहेगा। जिनकी जिनशासन के गौरव को बढाने मे आज चहुदिश बुलदी किसी से कम नहीं। जिनकी गणन सख्या भले ही आज छोटे रूप मे 18 सत-महापुरुषो एव 65 साध्वी रत्नो मे हो पर, ये महत्त्व सिर्फ सख्या को नहीं देते, गुणवत्ता की प्रधानता को महत्त्व देते है।

अत मे श्रमण भगवान् श्री महावीर की पवित्र पावन शासन परम्परा से जुडी आ रही हु-शि-उ-चौ-श्री-ज-ग-नाना सघ के 82वे पट्टधर जिनशासन गौरव प्रज्ञानीधि, मरुधरा बिकाणे के मोती परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री 1008 श्री विजयराज जी म सा है। जिनकी पावन नेश्राय मे यह नवोदित सघ दिनोदिन प्रवहमान रह कर फले-फूले और जिनशासन की धर्म प्रभावना मे चार चाद लगावे और गुरुदेव की अमर आत्मा को शाति पहुचाए। इसी मगल शुभ भावो के साथ-

अत मे प्रत्यक्ष मे देखी, सुनी, समझी मैने मेरे अन्तर्मन विचारो की चद शब्दो मे अभिव्यक्तिया लेखनी माध्यम से 'एक सक्षिप्त सिंहावलोकन' के रूप मे प्रस्तुत की है। सघ हित की दृष्टि से समझने सोचने की अगर किसी की जिज्ञासा हो तो बिन्दु उजागर करने मे मुझे संकोच नही। मेरा उद्देश्य किसी को ठेस पहुचाना नही है और न ही किसी से द्वेष भाव है। पुनः विनम्र निवेदन यही है कि सत्यासत्य की वास्तविकता को समता भाव से समझने, सोचने का प्रयास हो, जिससे दूरी बढने की जगह, दूरी घटे और आपसी प्रेमभाव पुनः बढे तभी उस पुण्यात्मा गुरुदेव श्री नानेश की अमर आत्मा की शांति और बढेगी।

त्रुटि कहीं लगे तो क्षमा प्रदान करने की कृपा कीजियेगा। यहां गालिब का एक शेर याद आ गया-

या रब न वो समझते हैं, न समझेंगे मेरी बात।
दे उनको दिल और, न दे मुझको जुबां और।
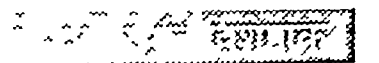
अध्यात्म जगत् की महान् विभूति थे आचार्य श्री नानेश

✍ शैलेन्द्र गांग/प्रकाश गांग, खोर (म.प्र.)

आज जहां पूरे विश्व मे भौतिकता का जहर मानव मात्र मे फैल रहा है। हर तरफ हथियारो की होड एव आतंकवाद का साया सारे वातावरण को कलुषित किए हुए है। टी वी पर बच्चो मे धर्म के प्रति मोह भंग करने वाले एव बच्चो की मानसिकता को अश्लील विज्ञापनो के माध्यम से दिग्भ्रमित किया जा रहा है। ऐसे दूषित एवं नफरत भरे वातावरण मे धर्म की ज्योति को पग-पग सारे देश मे घूम कर प्रज्वलित करने वाले महान् संत एवं आचार्य श्री नानेश को युगो-युगों तक याद किया जाता रहेगा।

एक छोटे से गांव दांता (नानेश नगर) में जन्म लेकर कोहिनूर हीरे की भाति चमकने वाले आचार्यश्री के बारे मे शब्दों के द्वारा कुछ भी अभिव्यक्ति नही की जा सकती है। मेरे निजी जीवन मे भी अनेको बार मुझे आचार्यश्री के दर्शनो का लाभ मिला है। उनके व्याख्यानो मे हमेशा नई-नई तरह की बाते जीवन को नई दिशा प्रदान करने वाली होती है।

जावद मे अक्षय तृतीया के पारने के पावन प्रसंग पर मैने लगातार पांच दिन तक आचार्य श्री के व्याख्यानो का भरपूर लाभ उठाया। उस वक्त मेरे दिल मे भी यह भावना जागृत हुई कि किसी भी तरह आचार्यश्री का पदार्पण मेरे छोटे से ग्राम खोर में हो जाए लेकिन मेरे मन में यह विचार आया कि मैं आचार्यश्री के सामने कैसे अपने गांव खोर पधारने की विनती करूं, कहीं आचार्य श्री मना नही कर दे। लेकिन फिर भी मैं हिम्मत करके ग्राम खोर के सरपच श्री भोपालसिंह जी चन्द्रावत को एवं गांव के ही चार-पांच बन्धुओ को लेकर आचार्यश्री की सेवा मे विनती हेतु प्रस्तुत हुआ तो आचार्य भगवन् ने सहज भाव से न केवल हमारी विनती स्वीकार की बल्कि प्रमुख संतो को एक दिन पहले ही खोर गांव मे विहार हेतु भेज दिया। मुझे आज भी वह दिन याद आता है कि कितने सहज एवं विनयशील थे आचार्य श्री नानेश।

युग प्रणेता आचार्य श्री नानेश भले ही आज हम लोगो के बीच मौजूद नही रहे लेकिन उनका बताया हुआ आत्मकल्याण का मार्ग युगो-युगो तक इस विश्व को अध्यात्म की ओर अग्रसर करता रहेगा। ऐसे महापुरुष महाप्रयाण करने के बाद भी हमारे दिलो मे सदैव हमारे जैसे हजारो मानव को अध्यात्म की याद दिलाते रहेगे।

इस संसार मे हजारो महापुरुषो ने जन्म लिया है एवं मृत्यु को प्राप्त हुए है लेकिन कोहिनूर हीरे के समान चारो दिशाओ को देदीप्यमान करने वाले आचार्य श्री नानेश को शत-शत वन्दन।

ज्योर्तिपुंज आचार्य प्रवर

✍ अशोक कुमार कोठारी, नागौर

दांता गांव के पुण्य रत्न थे महामहिम समता सागर
पिता मोड़ी माता श्रृंगार, दुलारे पोखरना कुल उजागर
जीवन संस्कृति के अमर रूप, सत्य अहिंसा के आगर।
भावभीनी श्रद्धांजली स्वीकारे हुक्म संघ के गुणाकर।।

सौन्दर्य मंजुषा मेवाड मेदिनी की शस्य-श्यामला धरित्री दांताग्राम मे आप श्री का जन्म हुआ और इसी मेवाड आचल के कपासन ग्राम मे श्वेत परिधान से परिवेष्टित बन जिनपथ के अनुरागी बने और झीलो की नगरी उदयपुर मे ही हुक्म संघ अष्टम पट को सुशोभित करने वाले महाभास्कर, शासन सिर ताज के रूप मे देदीप्यमान हुए और उसी उदयपुर मे नश्वर पार्थिव देह से मुक्त होकर भक्तो को अनाथ बना अमरपुरी को सनाथ बनाने पधार गए। गुरुवर की अनुपस्थिति से जग का आगन सूना लग रहा है, मन रिक्त है। हृदय सागर उमड कर नयनो के माध्यम से बरस रहा है। मगर आराध्य देव के पावन दर्शन अब इन नेत्रो से नहीं हो सकते पर आज भी आपश्री के वे पावन क्षण उभर रहे है कि प्रथम दर्शन मे ही मेरा भक्त दिल आपश्री की हर अदा पर फिदा हो चुका था। वो क्षण कैसे सुहाने थे? आपश्री की जादू भरी वाणी, आखो को लुभाने वाला आकर्षक चेहरा जो हरदम मेरे दिल मे मदिर के समान प्रतिष्ठित हो जाता था। गुरुवर के जीवन का हर एक पृष्ठ महानताओ से भरा है जिसकी अभिव्यक्ति मै अपनी छोटी-सी लेखनी से नहीं दे सकता-

ज्योर्तिपुंज आचार्य प्रवर की गरिमा कुछ और है
अंबर अवनि में मयूर महिम का शोर है
कैसे संकीर्तन करूँ करुणा सदन आपका
क्योंकि असलियत का कहिं और न छोर है।

दूसरी तरफ दृष्टिपात करता हू तो दिल खुशियो से झूम उठता है। मरुधरा के लाल को संघ शिखर पर विजय ध्वज के रूप मे पाकर आपकी दिव्य प्रभा इस अवनितल को सदा अपने उज्ज्वल आलोक से आलोकित करती रहे। जब तक चाद-सितारो का जहान रहे तब तक आपकी रोशनी दिनदूनी रात चौगुनी वृद्धि को प्राप्त होती रहे। इन्हीं मगलमय शुभ भावो के साथ मै अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हू।

गुरुदेव की अन्य कोई सानी नहीं

✍ मोती सरोज सचेती, डौंडीलोहारा

उपर्युक्त बिन्दु ही गागर मे सागर की बात को छलकाती है। सच तो यही है शब्दो से बाधना मुश्किल है मेरे लिए। दरअसल-

क्या कहूं कैसे कहूं, कितना कहूं
बात सूरज की, दीपक की जुबानी है
जो भी कहूंगा-अल्प ही होगा, कमी ही होगी
सागर की गाथा, बूंद की जुबानी है।

स्मृति की पृष्ठभूमि मे उस महान् योगी को सादर कोटिशः पुष्पांजलि।

कार्तिक कृष्णा 3, 2056 एक अजीबोगरीब दिवस कहू, वीराना दिवस कहू, निराला दिवस कहूं, चूकि इस विराट व्यक्तित्व के दायरे मे सूझ जो नही रहा है। बस इतिहास के पन्ने के लिए वह दिवस परम पूज्य गुरुदेव के जीवन की पूर्णता को मृत्यु का नाम भी देगा। नश्वरता की बात उस आखरी शाम, आखिरी सांस अलविदाई दिवस कहेगा। बस उक्त दिवस मे परम पूज्य गुरुदेव जीवन को परिभाषित करते मृत्यु के सच को स्मृति के रूप मे छोड कर हम सबसे प्रत्यक्षता बतौर सदैव के लिए जुदा हो गए। उस विराट व्यक्तित्व को कोटिश नमन्, सादर पुष्पांजलि।

जिसे देख इंसानियत जग जाए
जिसे पा सुदामा कुबेर हो जाए
जिसे लख हैवानियत भग जाए,
जिसे निहार जीवन धन्य हो जाए,
जिसे देख मन मयूरी नृत्य कर जाए
जिसे जान जीवन तर जाए
और न जाने क्या क्या बन जाए,
उनका नाम काफी है
व्यक्तित्व की सानी के लिए
उनकी स्मृति शब्द
काफी है इतिहास सजाने के लिए।

हद नही बालपन सी सरलता का, प्रचुर गभीरता, गणेशपट्टधर की विनायकी मूरत, समता सरलता की खान, सदैव एक समान, अनुशासन स्नेह की पाठशाला, संयमी, सावली, सलौनी सूरत और न जाने क्या-क्या गरिमाए थी, बताना लाजिम न होगा। चूंकि कम ही होगा।

मैने तो बेहद करीब याने जीवन से परखा है जो किसी भी नाम की यथार्थता, सत्यता, प्रभु अशत्व के लिए पर्याप्त है। सूरज की लालिमा डॉक्टरी ताने बाने, जीवनसाथी का सघर्ष, औषधालय की पीडा और गुरु नाना का

करिश्मा, मन आत्मा की पुकार पूरे समर्पण से प्रार्थना-हु शि उ चौ श्री ज ग नाना-लाल चमकता भानु समाना।

पुकार- **हु शि उ चौ श्री ज ग नाना-अभी तो गुरुवर प्यार निभाना।**

बस कदम पलटते ही सब सामान्य। आठ घटे का संघर्ष पल भर मे जीवनदायी। बस गुरुनाम गुरु सत्य की ही विसात रही। अन्य कई प्रसग है। ये प्रसग काफी है औचित्य के लिए गुरुनाना नाम की बलिहारी एव गुरु आशीष के लिए।

बडे सयमी दयालु, भोले व्यक्तित्व के पर्याय थे मेरे गुरुदेव। सचमुच मे योगी थे, जोगी थे। धन्य मा श्रृगारा, धन्य पिता मोडीलाल जिन्होने ऐसा रत्न इस ससार को दिया, धन्य ग्राम दाता और गौरवान्वित सघ।

गुरुदेव शरीर से विलग है पर उनकी स्मृति उनके कारनामे उनका व्यक्तित्व सुगध बहुत है जीवन को सजाने। उनके बारे मे पूर्व गुरुदेवो की भविष्यवाणी कि आठवा पट्टधर खूब चमकेगा जो किसी से छुपी भी नही। इतना विशाल परिवार नानेश सघ क्या हुआ? आज दो भाई अपने ढग से उसी नाम अनुरूप कुछ मतभेदो के चलते अपने गतव्य की ओर अग्रसर है।

अछूते तो और कथाओ मे राम भी नही रहे

कष्ट तो महावीर ने भी पाया

पर जीवन इनका जीवन के ही काम आया, बस यही सोच गुरुदेव की स्मृति मे श्रद्धाजलि होगी। जीवन जीवन गढे इसी भाव से।

'नाना' से 'नानेश' बन गए

✍ सुशील-बिन्दु धूप्या, माडलगढ़ (भीलवाड़ा)

इस विशाल विश्व के विराट प्रागण मे कई-अनन्त जीवन ज्योतिया जन्म लेकर अपने-अपने सस्कार व पुरुषार्थों के आधार पर कार्य कर जीवन सचालित कर रही है। इनमे से अनेक आत्माए भौतिकता की चकाचौंध मे अपने जीवन को अशात बना अनुचित कृत्यो द्वारा कालिमामय इतिहास का सृजन कर डालती है तो कुछ ऐसी जीवन ज्योतिया भी विद्यमान है जो अपने जीवन की उत्कृष्ट तेजस्विता प्रकट कर विश्व को प्रकाशवान् बना देती है। ऐसी ही एक महान् ज्योति है-आचार्य नानेश। यह ज्योतिपुज जैन जगत् मे कुछ समय के लिए उदित हुआ और उसने अपनी साधना व संयम, आराधना द्वारा जन-जन के जीवन को आलोकित किया। आज नानेश रूपी दीपक भले ही बुझ गया लेकिन इसने जो दीपको की श्रृखला तैयार की वह आज अधकार मे भटक रही भव्य आत्माओ को प्रतिबोध देती हुई नानेश के बताए मार्ग पर अग्रसर हैं। यही कारण है कि यह व्यक्तित्व अपने अनूठे कृतित्व से इतिहास मे अमर हो गया। वस्तुतः आचार्य श्री प्रखर चिन्तक, कुशल शास्त्रज्ञ, आगम मर्मज्ञ, प्रवचन प्रभावक, उच्चकोटि के विद्वान थे। उनका जीवन अनेक दिव्य विशिष्टताओ से युक्त था इसलिए तो यह श्रेष्ठ नर पुगव देखते-देखते 'नाना' से 'नानेश' वन गया। ऐसे महान् जैनाचार्य को धूप्या परिवार का शत-शत अभिवदन।

जब मृत्यु महोत्सव बन गई

✍ अरुण भाणावत
संस्थापक-संचालक-व.ग्रा से सं , कानोड

आचार्य नानेश के अंतिम दर्शनार्थ एक अंतहीन कतार, कभी न रुकने वाला निनाद-''**जब तक सूरज चाद रहेगा, नाना तेरा नाम रहेगा**'' के साथ बढती भीड का समूह सामने बैकुंठी मे आचार्य साधक अवस्था मे विराजमान है। मै अपलक दृष्टि से देख रहा हूं ऐसा लग रहा है मानो कुछ ही देर मे आचार्य प्रवर मुस्करा अपना हाथ उठा मुझे आशीर्वाद देंगे। सच! मृत्यु का कोई लक्षण नहीं वही सरल, सौम्य, तेजस्विता युक्त आभा मण्डल जीवन मरण की एक ही भाव दशा। मैं सोच रहा था आचार्य श्री के चेहरे पर लम्बी व्याधि फलस्वरूप थकान या रुग्णता के चिन्ह अवश्य होगे लेकिन यहां तो कुछ और ही विश्वास ही नही हो रहा था कि मुखमण्डल पर इतनी दिव्य शाति होगी वाह! धन्य है आचार्य का आत्मबल, आत्मिक शक्ति जो मरणोपरांत स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रही थी कि सहसा मुझे यो लगा मेरे नयन मे पानी की बूद (आंसू) आने मे है यकायक उत्तराध्ययन सूत्र की कुछ पंक्तियां मेरे जेहन मे उठी और मेरे चिन्तन प्रवाह की दिशा बदल गई। सोचा जब संत नश्वर देह छोड परिनिर्वाण को प्राप्त हो चुके है तो आंखो मे आंसू क्यो? आचार्य प्रवर ने तो मृत्यु महोत्सव का वरण किया है और वह भी राणा प्रताप की उस कर्म स्थली पर जहां का हर रणबांकुरा मृत्यु का आलिंगन करता है उस वीर भूमि पर आचार्य ने अपनी नश्वर देह त्याग अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से अमरत्व प्राप्त किया। यह जरूर है कि काल के क्रूर उपहास से समाज की अपूरणीय क्षति हुई है इसलिए मुझे किसी लेख की दो पंक्तियां बरबस याद हो आयी कि-

ऐ मौत! आखिर तुझसे नादानी हुई।
फूल वो चुना, जिससे गुलशन की विरानी हुई।।

समता विभूति आचार्यश्री नानेश की समता एवं गंभीरता

✍ मूलचन्द भटेवरा, उज्जैन (म.प्र.)

वर्ष 1988 मे आचार्यश्री नानेश होली चौमासी, महावीर जयंती व अक्षय तृतीया के प्रसंग पर उज्जैन विराज रहे थे। उस समय गुजराती संतो का भी पधारना हुआ एवं सम्मिलित प्रवचन हुए।

आचार्यश्री शिष्य मंडली सहित पाट पर ही विराजमान थे। गुजराती संतो द्वारा व्याख्यान के माध्यम से ही राजस्थानी सतो के सबंध मे धोवन, पानी व कपडो बाबत टीका टिप्पणी की गई व आचार्यश्री के सबध मे भी श्रोताओ को जय गुरु नाना बोलने व घरो आदि पर नाम लिखने बाबत भी कुछ शब्द कहे। शिष्यगण व्याख्यान मे ही उन बातो का स्पष्टीकरण देना चाहते थे। श्रोताओ मे भी उत्तेजना थी। वातावरण का आकलन कर आचार्यश्री ने स्वयं ही व्याख्यान देना चालू कर दिया। उनके गभीरतापूर्ण समता मय प्रवचन से उत्तेजना अपने आप दूर हो गई।

श्रावकों की असावधानी पर भी ध्यान : इसी अवसर पर एक दिन रात्रि प्रतिक्रमण के बाद मैं स्वय प्रत्याख्यान व वदन हेतु आचार्य श्री के समीप गया। उस समय संतो की वंदना चल रही थी। मै एक तरफ खडा रहा। मेरे हाथ मे उधाडी डंडी का ओघा था जो नीचे गिर पडा। आचार्य श्री की दृष्टि पड़ते ही बडे मधुर स्वर मे फरमाया कि "ओघा की डाडी नीचे गिरी दण्ड आया" मैने तुरत हाथ जोड कर प्रायश्चित्त मांगा और एक सामायिक का प्रायश्चित्त दिया।

सन् 1980 मे नयापुरा सघ महासतीजी के चातुर्मास की विनती हेतु मुझे साथ ले गया। हमने आचार्यश्री की सेवा मे सोजत के पास बागावास पहुंच कर विनती की। आचार्यश्री ने फरमाया कि अगर महासती श्री इन्द्रकवर जी म सा एक सिंघाडा दे सकते हो तो विचार किया जा सकता है। इसके बाद दो पत्र फिर स्मृति रूप मे भेजे गये तो नयापुरा सघ की उत्कट भावना के कारण व्यवस्था मे फेर बदल कर दुबारा आने जाने की क्रिया न हो इसको ध्यान मे लेते हुए चातुर्मास की स्वीकृति फरमाई व महासती श्री पुष्पलता म.सा. आदि ठाणा-3 का चातुर्मास हुआ।

पूज्य गुरुदेव महान् थे

✍ सुनील बोथरा, नोखा गांव

राजस्थान के मेवाड प्रान्त की धीर वीर तपोभूमि चित्तौड जिले मे दाता ग्राम की माटी मे जन्मे गोवर्धन को कौन जानता था कि यह बालक विश्व पूज्य बन जायेगा। किन्तु हमारे यहां कहावत है कि '**पूत का पग पालणा दीखे।**' आचार्य श्री नानेश जिनके बाल्यकाल की घटना सुनने मे आती है कि वे जब अपने गांव मे बच्चो के साथ खेल खेला करते थे उस खेल मे आप स्वय इंजन बनते एवं एव बाकी सभी बच्चो को डिब्बे बना कर छुक पक छुक पक करते हुए गाडी चलाते, यह खेल-खेल ही था। उनका यह खेल जिनशासन के नायक के रूप मे परिणित हुआ और चतुर्विध सघ की गाडी को खींचने वाले कुशल ड्राइवर के रूप मे साकार हुआ।

आचार्य प्रवर के जीवन की कई घटनाए है जो हमे शिक्षा प्रदान करती है। उनकी क्षमा सहिष्णुता समता वाकई मे बेजोड़ थी। पूज्य गुरुदेव के जीवन की यह विशेषता थी कि उनमे चन्द्रमा-सी शीतलता, सूर्य जैसी तेजस्विता सागर-सी गंभीरता, मां जैसी ममता, आकाश जैसी विशालता, कोहिनूर-सी आकर्षकता थी। उनके गुणो का वर्णन करना सूर्य को दीपक दिखाने के समान होगा। पूज्य गुरुदेव ने अपने साधना काल मे समाज के लिए बहुत कुछ दिया है। उन्होने विश्व शाति के लिए समता का दर्शन दिया। अछूतोद्धार कर धर्मपाल समाज की रचना की टेशन मुक्ति के लिए समीक्षण ध्यान की प्रयोग विधि बताई।

लगभग 350 श्रमण-श्रमणियो का निर्माण किया। उन दीक्षाओ मे एक संस्मरण मुझे प्रत्यक्ष देखने मे आया वो था मेरे अनुज अशोक बोथरा की दीक्षा का प्रसंग। 29 नवबर 1992 को गुरुदेव ने हमारे अनुज एवं हम परिवारजनो के ऊपर अनन्त उपकार किया। आचार्य प्रवर का जीवन अनेकानेक उपलब्धियो से भरा हुआ है। आज उनका शरीर पिंड हमारे बीच नही रहा किन्तु उनका गुणात्मक जीवन युग-युग तक मानव को प्रेरणा प्रदान करता रहेगा।

वर्तमान मे हुक्मगच्छ सघ अनुशास्ता आचार्य प्रवर श्री विजयराज जी म सा जिनशासन की भव्य प्रभावना कर रहे है। वर्तमान आचार्य श्री से समाज को बहुत कुछ आशाएं है।
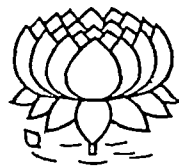
भारत रूपी मानसरोवर के राजहंस थे आचार्य नानेश

✍ अनिल बाबेल
राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष, श्री अ भा सा जैन युवा सघ, कानोड

आचार्य नानेश आध्यात्मिक धरातल के इस विशाल मानसरोवर मे एक ऐसे राजहंस थे जिन्होने सत्य, अहिसा, सद्भाव, एकता, समता, सेवा रूपी मुक्ता को चुन-चुन राष्ट्र को समर्पित किया तो दूसरी ओर आप धर्म के विस्तीर्ण इस दिव्याकाश मे देदीप्यमान नक्षत्र की भांति पिछले लम्बे समय से अपनी आभा से जैन-जैनेत्तर को धर्म और नैतिकता के ज्ञान से उपकृत कर रहे थे।

एक ऐसे समय मे जब हमारे समाज का मातृत्व पथभ्रमित हो महावीर की अहिंसा को तिलाञ्जलि दे भ्रूण हत्या की ओर अग्रसर हो रहा था जिससे नारी और पुरुष के अनुपात मे भी भारी अन्तर परिलक्षित लगने लगा था। तब आपने अपने भ्रूण हत्या के मर्मस्पर्शी उद्बोधन, लेखन द्वारा नारी समाज को झकझोर दिया और एक नवीन दिशा दी जिससे सैकडो भ्रूण हत्या रोकने मे सफलता मिली। यो कहा जाय कि गांधी की मृतप्राय: अहिंसा को आपने पुनरुज्जीवित करने के लिए अनथक प्रयास किये तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। आप द्वारा प्रतिपादित समता दर्शन, समीक्षण ध्यान के सिद्धान्तो के अनुशीलन से सम्पूर्ण मानव जाति सुखी एवं गरिमामय जीवन व्यतीत कर सकती है।

आचार्यश्री के प्रेरणादायी ओजपूर्ण व्याख्यान मे शब्दों का चयन, भावो की प्रधानता, परिस्थितियो का सुव्यवस्थित संयोजन व घटनाओ का उचित स्थान पर प्रस्तुतीकरण उनकी अनुभव प्रवणता का बोध कराता है। आचार्यश्री के मन मे एक तडफ थी कि आज विज्ञान के क्षेत्र मे हमने भौतिक रूप से भले ही प्रगति कर ली हो लेकिन उसी अनुपात मे नैतिकता के मामले मे पिछडे हैं। मानवीय मूल्यो का निरन्तर ह्रास हुआ है। प्रेम, स्नेह, भाईचारा, सहिष्णुता, ईमानदारी, राष्ट्रप्रेम, कर्त्तव्यनिष्ठा, चरित्रिकता सब इतिहास के उज्ज्वल पृष्ठ के शब्द मात्र रह गये है। मानव अर्थ के पीछे भाग रहा है जिसे प्राप्त करने के लिए चाहे कितने ही मूल्यो की बलि क्यो न देनी पडे। फलत: वे अपने सम्पर्क मे आने वाले प्रत्येक जन को मानवीय मूल्यो की प्रेरणा अवश्य दिया करते थे। आपकी इस दृढ वैचारिक शक्ति व चिन्तन का ही प्रभाव था कि श्रीमन्त आपके सम्पर्क मे आने के उपरान्त अपनी सम्पत्ति का बहुतायत भाग पीडित मानवता के हितार्थ लगा पुण्यार्जन करते थे। उनके व्यक्तित्व की इन विलक्षणताओ के कारण ही आप मानवता के मसीहा, साधुमार्गी संघ के धर्म प्राण, जैनत्व के प्रहरी के रूप मे सदैव याद किये जायेगे। उनका व्यक्तित्व इतना घनीभूत था कि उसे भूला पाना असभव है। वे ऊर्जा के धनी प्रकाशपुज थे, सहजता, मृदुता, करुणा, समता और ऋजुता की तो प्रतिमूर्ति थे। उनकी कथनी-करनी मे सामञ्जस्य था। वे तो पुरुषार्थ की वह अमिट प्रज्जवलित मशाल थे जो अतिम क्षणों तक प्रकाशमान रही। जब यह महान् आत्मा अपनी नश्वर देह का त्याग कर अनन्त मे विलीन हो गई तो मानव जगत् मे एक आध्यात्मिक शिखर पुरुष की रिक्तता व्याप्त हो गई। आज जव उस महान् व्यक्तित्व के नमन की वेला है तब हम अन्तर्मन से उसकी विराटता को नमन करते हुए उनकी स्मृति को हृदय मे सजोये उन्हीं के दिखाए पदचिन्हो पर चल पंथ, सम्प्रदाय, संकीर्णता से ऊपर उठ पीडित मानवता की सहायतार्थ अपने कदम बढायें, यही उस विराट व्यक्तित्व को सच्ची श्रद्धांजलि है। उस दिव्य ज्योति को नमन .।
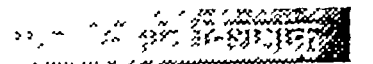
आचार्य प्रवर के ज्योर्तिमय दिव्य स्वरूप की झलक

✍ चांदमल बाबेल, कानोड़

- आप श्री बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी थे।
- आप उत्कृष्ट संयम के तपोमयी तेजस्वी साधक थे।
- आपकी साधना उच्च कोटि की थी।
- आपका जीवन तप, त्याग, तपस्या, वैराग्य का साक्षात् प्रतिबिम्ब था।
- परिस्थितियां चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल, समभाव ही आपके जीवन की विशेषता थी।
- आप बाह्य आड़म्बर पर नहीं, श्रेष्ठ विवेकशील आचरण पर बल देते थे।
- आपका व्यक्तित्व सहज सरल था।
- आपका चिन्तन प्राणी मात्र के हितो के प्रति समर्पित था।
- आपके प्रवचन नैतिक, चारित्र, आड़म्बर रहित, ज्वलंत सामाजिक समस्याओ से ओतप्रोत होते थे।
- भ्रूण हत्या पर आपका मर्मस्पर्शी विवेचन पाषाण हृदय मातृत्व मे भी कमल खिला देता था।
- सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन, सम्यक् चारित्र की साधना समुचित रूप से कर आपने दीर्घकाल तक आचार्यत्व पर रह प्रसिद्धि पाई।
- आपकी साधना व व्यक्तित्व का ही प्रभाव है कि आपकी अमृतमय देशना का पान कर अनेक आत्माए संयम मार्ग की ओर उन्मुख हुई।
- आपके वात्सल्यमय स्नेह को पाने अनेक जन आतुर रहते थे।

ऐसे महामनस्वी को शत्-शत् नमन .

❖ ❖ ❖

जन-जन के श्रद्धा केन्द्र

✍ नवरतन-अरुणा मेहता, चित्तौड़गढ़

जन-जन के श्रद्धा केन्द्र, साधुमार्गी जैन संघ के शिरोमणि, धीर-वीर-गम्भीर, महान् सत, समता विभूति आचार्य नानेश का व्यक्तित्व अनुपम प्रभावशाली व विलक्षण था। एक बार जो भी आपके सम्पर्क मे आ जाता वह आपश्री के मृदु व्यवहार एवं मुख मण्डल की अद्‌भुत आभा से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। उनकी वाणी मे एक ऐसी मिठास थी जो श्रावको को बरबस उनकी ओर खिचती थी जैन-जैनेत्तर सभी के लिए वे प्रेरणास्त्रोत थे। दलित उत्थान के क्षेत्र मे आपका योगदान अविस्मरणीय है। मध्यप्रदेश के ऐसे आदिवासी अंचल मे जहा आर्थिक प्रगति के कोई लक्षण नहीं थे। मानवीय सभ्यता अभी विकास के शैशवकाल मे थी ऐसे वनवासी अंचल मे नागरिको को सस्कारित कर उन्हे धर्मपाल की उपमा से विभूषित कर निर्बल, असहाय, दलित जाति के उद्धार का शंख फूका। लाखो लोगो के जीवन की दिशा बदल दी। यह कोई दिव्य पुरुष ही कर सकता था। यही नहीं आपने सम्पूर्ण भारतवर्ष मे परिभ्रमण कर महावीर के सिद्धान्तो का प्रचार-प्रसार किया।

समता, शुचिता, संयम, साधना, सादगी, नैतिक व चारित्रिक रूपी सद्‌गुण सौन्दर्य से पूर्ण खिला आपका जीवन था। आपके मन का अणु-अणु, समय का पल-पल व तन का कण-कण सघ, समाज व धर्म की उन्नति के लिए समर्पित था। इसीलिए तो वह महापुरुष जन-जन की श्रद्धा का केन्द्र बन गया। आज श्रद्धेय आचार्य प्रवर की स्मृति मे हमे उनके पावन सान्निध्य मे प्राप्त सस्कारो को संजोये रख उनके द्वारा बताये मार्ग पर चलना ही उन्हे सच्ची श्रद्धांजलि होगी। मेहता परिवार आपके महानिर्वाण पर हार्दिक श्रद्धा सुमन अर्पण करता है।

अनन्त आनन्द के सरोवर में

महावीर वाणी के ज्ञान चिन्तन से जब अनन्त आनन्दानुभव की श्रेष्ठता तक पहुचा जा सकता है तो क्यो नहीं, प्रत्येक ज्ञान पिपासु उस सरोवर मे अवगाहन करने का सुंदर प्रयास करे? जिस शीतलता से आपको आनन्द का अनुभव हो, उस शीतलता की दिशा मे आगे बढना स्वयं आपके लिए पहले हितावह है। आप शीतलता का अनुभव करेगे तो दूसरों को भी अपने विषय विकारो का शमन करके शीतलता की ओर बढने की प्रेरणा दे सकेगे।

ऐसे श्रेष्ठ महावीर भगवान् के चरणो मे भावपूर्वक वन्दन करे और श्रद्धा के साथ उनकी अमूल्य वाणी के अध्ययन और अन्वेषण मे लगे। यदि ऐसा आह्लाद और उल्लास के साथ करेगे तो आपको अमित आनन्द और अनन्त आनन्द की प्राप्ति भी हो सकेगी।

-आचार्य श्री नानेश

कुशल मूर्तिकार-आचार्य नानेश

✍ मनोहर-मीना सिसोदिया, उदयपुर

आचार्य नानेश अपने शिष्य समुदाय सहित बीकानेर विराज रहे थे। उस समय आचार्य प्रवर की नेत्र ज्योति धीरे-धीरे क्षीण होती जा रही थी। बडे-बडे नेत्र विशेषज्ञो द्वारा इलाज कराने पर भी कोई लाभ नही हुआ। अन्तत. डॉक्टरो ने आचार्य श्री का नेत्र बदलने की राय दे डाली। स्वयं आचार्यश्री असमंजस की स्थिति मे थे। श्रावको का एक वर्ग व संघ के तत्कालीन पदाधिकारी इसी ऊहापोह मे थे कि क्या किया जाय और क्या नही? निर्णय नही हो पा रहा था कि आचार्यश्री का नेत्र बदला जाये या नही और यदि बदला जाये तो नेत्र कहां से कैसे प्राप्त होगा इत्यादि। यह सूचना पूरे भारतवर्ष मे हवा की तरह फैल गई। उस समय आचार्यश्री के सुशिष्य श्री विजयराज जी म सा बडी सादड़ी मे विराज रहे थे। 'विजय मुनि' को जब यह ज्ञात हुआ तो उन्होने तुरत कहा कि आचार्यश्री को यदि नेत्र बदलना है तो मै अपना नेत्र देने को तैयार हूं और आनन-फानन मे सत ने अपना दृढ निश्चय आचार्यश्री व तत्कालीन युवाचार्य श्री रामलाल जी म सा की सेवा मे प्रेषित कर दिया। गुरु भक्ति का ऐसा अनूठा उदाहरण विश्व मे कहीं देखने को नही मिलेगा। संभवत: एकलव्य के बाद यही एक ऐसा शिष्य था जिसने गुरु की नेत्र ज्योति बनी रहे इसके लिए अपना नेत्र देने की घोषणा की। धन्य है आचार्य प्रवर जिन्होने ऐसे उत्कृष्ट विचार वाले अनुदार साधको का निर्माण किया। वस्तुत: नानेश एक ऐसा मूर्तिकार था जिसने एक से बढ कर एक जीवंत प्रतिमाओ का निर्माण कर मानव जाति पर उपकार किया। श्रद्धेय श्री शांतिमुनि जी, श्री पारसमुनि जी, श्री प्रेममुनि जी, श्री ज्ञानमुनि जी जैसी विद्वत् प्रतिमाओ को आचार्यश्री ने अपने हाथो से गढा।

ये ऐसी प्रतिमाएं है जो साधुमार्गी जैन संघ की पताका सुदूर अंचलो मे फहरा जन-जन मे 'नाना' की प्रशस्ति पहुंचा रही है। यह 'नाना' की योग्यता, आत्मबल, साधना, संयम का ही परिणाम था कि उन्होने ऐसे कुशल शिष्यो को तैयार किया और उसमे भी विजय तो एक ऐसा रत्न है जिस पर संघ, समाज ही नही वरन् सम्पूर्ण मानव जाति को गर्व है। ऐसे महान्तम आचार्य का परिनिर्वाण नि:संदेह संघ के लिए तो अपूरणीय क्षति है ही लेकिन मानव मात्र के लिए भी जबरदस्त क्षति है। बार-बार मेरे जेहन मे प्रश्न की तरगे उठती है कि अब ऐसी कुशल मूर्तियो का निर्माण कौन करेगा जो समाज को सत्य, अहिंसा, दया, त्याग, तप व मानवता रूपी उपदेशामृत का पान करा सके।

अंत मे यही कहूंगा कि आचार्य नानेश एक ऐसे गौरवशाली जैनाचार्य थे जिसके पास श्री विजय जैसा कोहिनूर था और वही कोहिनूर आज संघ की बागडोर सम्भाले नानेश को सच्ची श्रद्धांजलि के रूप मे नानेश की धवल कीर्ति पताका देश के कोने-कोने मे फहरा 'समता समाज' की रचना व चरित्र निर्माण की दिशा मे अग्रसर है। ऐसे कुशल मूर्तिकार आचार्य नानेश के जिन्होने समाज को अनुपम देन दी, हम युगो-युगो तक ऋणी रहेगे। ऐसे महामानव को मै हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं। उसके विराट व्यक्तित्व को नमन करता हूं।

समता के आईने में आचार्य श्री नानेश

✍ लालचन्द जैन, डोम्बिवली

त्याग, बलिदान, भक्ति एव शौर्य के लिए प्रसिद्ध वीर वसुन्धरा मेवाड क्षेत्र के एक छोटे से गाव दाता मे सुश्रावक श्री मोडीलाल जी पोखरना के घर मा श्रृगार की कुक्षी से सवत् 1977 की ज्येष्ठ शुक्ला दूज को एक होनहार बालक ने जन्म लिया जिसका नाम 'गोवर्धन' रखा गया, लेकिन परिवार वाले प्यार से उसे 'नाना' कहकर पुकारते थे। किसे मालूम था कि यही बालक नाना आगे चल कर गुरु गणेश के शिष्य मुनि नानालाल एव हुक्म सघ के अष्टम पट्टधर आचार्यश्री नानेश बन कर अपने गाव, परिवार, समाज एवं राष्ट्र के गौरव को बढायेगा। आपने जैन शास्त्रो के साथ-साथ जैनेत्तर शास्त्र गीता, वेद, पुराण, उपनिषद, षट्दर्शन, कुरान, बाईबल आदि ग्रन्थो का भी गहन अध्ययन किया था।

आपने अपने साठ वर्ष के साधना काल मे अनेक उतार चढाव देखे लेकिन आप कभी विचलित नही हुए। हमेशा समभाव बनाये रखा। आप जीवन मे बहुत सरल, मृदु एव कोमल थे लेकिन साध्वाचार के पालन मे हमेशा दृढ रहे। अपने सभी सत एवं सतियो को भी अनुशासन मे रहते हुए दृढता से पालन करने की प्रेरणा दी। आपने कभी भी कोई निर्णय किसी पूर्वाग्रह, दुराग्रह या कदाग्रह से नही लिया। आप जो भी निर्णय लेते थे वह अपनी आत्म प्रेरणा एव आत्म साक्षी से लेते थे और फिर उस निर्णय पर दृढता से अमल भी करते थे।

'समता दर्शन' समाज, राष्ट्र एव विश्व को आपकी एक अमूल्य देन है। जयपुर चातुर्मास मे लगातार चार महीने तक **'किं जीवनम्'** जीवन क्या है और इसे कैसे जिया जाए, इसी विषय पर व्याख्यान दिए और समता दर्शन की विशद व्याख्या की। समता दर्शन की रचना के पीछे श्रम, समय, शक्ति, सकल्प एव साधना की सच्ची समर्पणा थी। आपका मानना था कि ससार मे व्याप्त राग द्वेष, अशान्ति, कलह एव आतंक का मूल कारण समाज मे व्याप्त वर्ग एव वर्ण भेद की विषमता है। आज इस विषमता को हटाने के लिए समता की आवश्यकता है। आपने समता यानी समभाव को ही तमाम विषमताओ की अचूक औषधि बताया। समता विचारो मे दृष्टि और वाणी मे, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे, आचरण मे आनी चाहिए। विश्व की सभी समस्याओ का समाधान समता समाज की रचना कर इसे व्यवहार एव आचरण मे लाने से हो सकता है। यह एक अहिसक क्रांति है। यदि विश्व के सभी राष्ट्र इसको अपना कर इस पर अमल करे तो स्थायी विश्व शाति स्थापित हो सकती है। वास्तव मे आप विश्व शाति के महान् पथ प्रदर्शक थे।

आपने हजारो हजार लोगो को कुव्यसनो का त्याग करा कर सात्विक, अहिंसक एव सुसस्कारित जीवन जीने की प्रेरणा दी। आप द्वारा प्रवर्तित 'धर्मपाल प्रवृति' सामाजिक समता का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह एक महान् सामाजिक क्राति थी। आपके उपदेशो से मालवा क्षेत्र के बलाई जाति के हजारो लाखो दलित, पतित, हिसक जीवन जीने वाले लोग घृणित एव हिसक कार्यों को छोड कर व्यसनमुक्त एवं सुसस्कारित जीवन जीने के लिए सकल्पित हुए। सादगी, स्वच्छता एव समता का सात्विक जीवन अपना कर वे व्यसनमुक्त एव सुसस्कारित बने। आपके उपदेश से उस क्षेत्र मे कई सस्कार विद्यालयो का निर्माण हुआ, कई संस्कार शिविर लगाये गए और प्रतिवर्ष पदयात्राए भी निकाली जाने लगी। इस प्रकार जैन समाज के लोगो ने उस दलित जाति के साथ प्रेम, वन्धुत्व, वात्सल्य एव समता

का व्यवहार कर उनका दिल जीत लिया। व्यसन मुक्ति एवं सुसस्कारो के क्षेत्र मे इस अद्वितीय उपलब्धि के लिए समता विभूति आचार्य श्री नानेश 'धर्मपाल प्रतिबोधक' के रूप मे हमेशा याद रहेगे।

आपने समता जीवन के विषय में केवल उपदेश ही नहीं दिया, बल्कि हमेशा अपने जीवन मे इसको प्रेक्टिकल स्थान भी दिया। आपने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे इसको अपनाने पर जोर दिया। आपका मानना था कि कथनी और करनी में अन्तर नहीं रहना चाहिए और इसको जीवन व्यवहार में अपना कर आप स्वयं सबके लिए एक उदाहरण बने। समता दर्शन की कठिन परीक्षा आप स्वयं को देनी पड़ी। आप अपने प्रिय शिष्य-शिष्याओं के पृथक्करण पर भी हमेशा समता मय ही रहे। उनके लिए आपने सिर्फ इतना ही कहा कि जाने वाले भी सब मेरे भाई ही है। न तो तेजी लाये और न क्रोध ही किया। कहते है कि आपने जाने वाले सन्तो को अपने हाथ से गुड़ और दही खिलाया था। ब्यावर मे साधु श्रेष्ठ श्री प्रेममुनि जी म सा. एवं उनके साथी सन्तों और भूपालसागर मे महाश्रमणी रत्ना, मरुधरा सिंहनी श्री नानूकुंवर जी म.सा. एवं अन्य सतीवृन्द ने आपके दर्शन वन्दन का लाभ लिया और आपने उनको मांगलिक श्रवण करा कर उत्कृष्ट समता भाव का परिचय दिया। इससे स्पष्ट है कि संघ से बहिर्भूत सन्तो एवं सतियो के प्रति भी उतना ही स्नेह एवं वात्सल्य था। महापुरुष अच्छी तरह जानते थे कि सन्त एवं सतियों को परिस्थिति से विवश होकर ऐसी स्थिति मे आना पडा है लेकिन अन्दर से गंगा, जमुना और सरस्वती की धारा तो एक है। आज भले ही दो संघ हो गये हो लेकिन आचार्य श्री नानेश के नाम से दोनों संघ आज भी एक है। दोनो सरिताएं आचार्य भगवन् के हृदय रूपी मानसरोवर में एक है।

आपके लिए सम्पन्न-विपन्न, गरीब-अमीर, छोटे-बडे, ऊंच-नीच सभी समान थे और सबके साथ आपने बिना किसी भेदभाव के समान व्यवहार भी किया। आपका कहना था कि ये भेदभाव की गाठें नही रहनी चाहिए। आपका हमेशा यह भी कहना था कि विपरीत परिस्थितियो में भी शान्त रहना चाहिए। ऐसा करना कायरता नहीं है। व्यापकता के अभाव मे एक घर को चलाना भी मुश्किल हो जाता है। यहां व्यापकता से अभिप्राय सतोष, सहिष्णुता, संवेदनशीलता, परस्पर सम्मान, सद्भावना एवं समन्वय से है। इससे परिवार को ही नहीं अपितु संघ, समाज एवं राष्ट्र को शक्ति मिलती है। आपस में विश्वास बढ़ता है, सम्बन्धो में मधुरता एवं प्रगाढ़ता आती है। एकान्तिक वर्चस्व के प्रदर्शन से मेलजोल मे दुराव एक खटास पैदा होती है अत: इससे बचना चाहिए। तनाव मुक्ति के लिए 'समीक्षण ध्यान' के माध्यम से आपने हमेशा आत्मचिन्तन पर जोर दिया। कषायो से ऊपर उठ कर विभाव से स्वभाव मे आने की प्रेरणा दी। इससे जीवन मे सही अर्थों मे समरसता ला सकते हैं। यह आपकी जीवन साधना का अनुपम प्रयोग है।

मेरा एवं धर्मपत्नी स्व. श्रीमती शकुन्तला जी डांगी (जो महिला समिति की राष्ट्रीय सहमंत्री भी रही) का सौभाग्य था कि आपकी हमारे प्रति हमेशा कृपा दृष्टि बनी रही। पारिवारिक परिस्थितियो की विवशता के कारण हम श्री ज्ञानमुनि जी म सा की दीक्षा के आठ-नौ वर्ष बाद भावनगर चातुर्मास मे दर्शन के लिए गये तो आपने मीठा उलाहना देते हुए कहा कि मामाजी को भाणेज के दर्शन करने की अब फुर्सत मिली है। खैर, उसके बाद हमने सकल्प कर लिया कि प्रतिवर्ष दर्शन करने का प्रयत्न करेगे और उसके बाद हम प्रतिवर्ष दर्शन के लिए जाते रहे है। जब भी हम जाते आचार्य भगवन् हमे अलग से समय देते और हमेशा धर्म ध्यान, स्वास्थ्य एवं संघ हित की ही बाते करते। कई बार इस बात का संकेत भी किया कि डांगी जी, ध्यान रखना आपके बड़े दादाजी स्व श्री मगनमल जी डांगी ने किस प्रकार संघ को अखंडित रखा। हमने अपने जीवन मे आपके आशीर्वाद का सुफल भी अनुभव किया है।

आचार्य भगवन् अपने अन्तेवासी शिष्यो को कहा करते थे कि 'ध्यान रखना मै खाली हाथ न चला जाऊ।' इस

प्रकार वे अपने जीवन के प्रति सदैव सजग एव सचेत थे। अपनी जीवन यात्रा के अन्तिम दिन दिनाक 27 अक्टूबर 1999 को 'तीन शरीर एक प्राण के सदस्य' सेवाभावी, सुयोग्य एव विश्वसनीय शिष्य स्थविर प्रमुख, संत प्रवर श्री ज्ञानमुनि जी म सा ने संथारे के प्रत्याख्यान कराये। आपके चेहरे पर पूर्ण समता भाव था। स्थविर प्रमुख श्री ज्ञानमुनि जी म सा. की सेवा से आचार्य भगवन् बहुत प्रभावित थे। आपने कहा भी था कि 'श्री ज्ञानमुनि जी तो पूर्ण शासन निष्ठा एव सर्वतो भावेन समर्पणा के साथ सघ सहकार मे लगे हुए हैं। वे मेरे साथ छाया की तरह लगे रहते है ताकि मेरे को पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक शांति रहे। इनका सकल संघ, युवाचार्य श्री और मेरे को जो सहयोग है वह विलक्षण है।' वे यह भी कहा करते थे कि ज्ञानमुनि जी मेरे प्राण हैं। संघ के सर्वेसर्वा है। यह जो कहता है वह मै कहता हूं। मै, युवाचार्य श्री और ज्ञानमुनि जी तीन शरीर और एक प्राण है। इनके जीवन की महत्ता का मूल्याकन जनता कर पाये या न कर पाये, इनका महत्त्व मेरे हृदय मे है। इससे स्पष्ट है कि आचार्य श्री नानेश के दिल मे श्री ज्ञानमुनि जी के लिए कितना स्थान था।

आचार्य श्री नानेश जीवन के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक समता की परम साधना मे लीन रहे। आज इस बात की आवश्यकता है कि हम सब उनके बताये समता मार्ग पर चल कर अपने जीवन मे पूर्ण समता, समन्वय एव वात्सल्य भाव को स्थान देवे। यही अपने आराध्यदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ऐसे समता विभूति महान् आचार्य थे, मेरा शत्-शत् वन्दन नमन्।

श्री महावीर नमो "वरनाणी" शासन जेहनो जाण रे प्राणी!

कवि ने प्रार्थना मे आपको उद्बोधित किया है कि आप महावीर प्रभु को नमस्कार करे लेकिन कैसे महावीर को? वे महावीर '**वरनाणी**' है अर्थात् श्रेष्ठ ज्ञानी है और श्रेष्ठ ज्ञान की ऐसी प्रगतिशील दिशा उन्होने दुनिया को दिखाई कि आज भी उनका धर्म शासन चल रहा है। आज हम सभी उनके शासनस्थ होकर जो चल रहे है, उसकी मूल प्रेरणा उनके श्रेष्ठ ज्ञान की प्रेरणा है।

श्रेष्ठ ज्ञान का उत्कृष्ट प्रतीक केवल ज्ञान होता है। उससे बढ कर और कोई ज्ञान नहीं होता उसी तरह जैसे कि सूर्य के प्रकाश से बढकर और कोई प्रकाश नहीं होता। सूर्य के प्रकाश के सामने दीपक, बल्ब, ट्युबलाईट, तारो और चन्द्र का प्रकाश भी फीका दिखाई देता है। वास्तव मे तो श्रेष्ठ ज्ञानी को सूर्य की उपमा देना भी उनके योग्य नहीं है। इसीलिए मानुतंगाचार्य ने भक्तामर स्तोत्र मे कहा है कि अनन्त सूर्यों के प्रकाश से भी श्रेष्ठ ज्ञान के दिव्य प्रकाश की तुलना नहीं की जा सकती। सूर्य का प्रकाश ताप देने वाला होता है और अधिक सूर्यों का ताप इकट्ठा हो जाये तो मनुष्य भस्म हो सकता है। लेकिन भगवान् का ज्ञान रूपी सूर्य ऐसा है, जिसका प्रकाश पाने पर आह्लाद उत्पन्न होता है, उल्लास जागता है और आन्तरिक आनन्द की वृष्टि होती है।

-आचार्य श्री नानेश

समता मूलक समाज के लिए आचार्य श्री नानेश का योगदान

✍ प्रो. (डॉ.) जमनालाल बायती

समता की चर्चा हो, वाद-विवाद हो या विचार गोष्ठी हो तथा आचार्यश्री नानेश का नाम न आये, यह आश्चर्य ही होगा। बिना उनका नाम आए, बिना उनके सिद्धान्तो का विवेचन-विश्लेषण किये समता पर होने वाली चर्चा या गोष्ठी या कार्यशाला अधूरी ही मानी जायेगी। आचार्यश्री का नाम ही रहस्यपूर्ण है। रहस्यपूर्ण इसलिए कि पिता की छोटी सन्तान होने से नानालाल नाम पड़ गया। समाज मे फैली कष्टच्छेदी प्रतियोगिता, धोखाधडी, झूठ, प्रपंच, नरसंहार, अनाचार, चोरी-डकैती, द्वेष, बैर, हिसा, युद्ध, हत्या, क्रूरता, संवेदनहीनता से उनका हृदय चित्कार उठा। दृढ निश्चय के साथ सजगतापूर्वक एव लक्ष्य आधारित किये गये प्रयत्नो से क्या नहीं हो सकता है? आचार्य श्री नानेश को लगभग 19 वर्ष की आयु मे ससार से विरक्ति हो गई थी।

आचार्य श्री नानेश की समाज को एक बहुत बड़ी देन है-धर्म तथा विज्ञान मे समन्वय। इस विचार से आचार्य श्री प्रसिद्ध भारतीय शिक्षा शास्त्री प्रो पी एस नायडू के बहुत निकट पहुंचे जाते है जब वे विश्वास के साथ दृढ़तापूर्वक कहते है कि धर्म रहित विज्ञान हमे नहीं चाहिए। आचार्यश्री नानेश ने समाज को बताया कि दोनो मे विरोध नही है वरन् एक-दूसरे के सम्पूरक है। अंध परम्पराओ, रूढियो तथा अंधविश्वासो से मुक्ति पाने के लिए विज्ञान की जानकारी, उसका ज्ञान अति आवश्यक है। उनका छुआछूत मे विश्वास नही था। उन्होने हरिजनो को धर्मपाल की संज्ञा देकर उनके उद्धार का मार्ग प्रशस्त किया।

समतामूलक समाज की रचना मे आचार्य श्री के अनुसार सबसे बडी बाधा है-विषमता को विकसित करने की स्थितियां एव उसके लिए उत्तरदायी कारण। यदि विषमता को आगे बढाने वाले कारणो को वश मे कर लिया जाये तो समता के विकास का मार्ग अग्रसर हो सकता है, प्रशस्त हो सकता है। इस क्षेत्र मे आचार्य श्री नानेश की सोच, उनकी विचारधारा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। आचार्यश्री ने समता मूलक समाज की रचना के लिए कुछ सिद्धान्तो का निरूपण किया है, उनमे से कुछ इस प्रकार है :-

हिंसा से मुक्ति :

समता मूलक समाज की रचना मे आचार्यश्री के अनुसार हिंसा से मुक्ति प्रथम स्थान पर आवश्यक है। उन्होने हिंसा को व्यापक अर्थ मे लिया है। उनके अनुसार किसी को कष्ट पहुचाना या चोट मारना ही हिंसा नही है वरन विवशता मे होने वाले कष्टो के समय शान्त रहना या प्रसन्न होना भी हिंसा है। ऐसे समय मे लाचारी का अनुभव करना अहिंसा की श्रेणी मे आता है।

इस सूत्र का गूढार्थ यह है कि परिवार के लिए व्यक्ति का निजी हित, गांव के लिए परिवार का हित, जिले के लिए गाव का हित, राज्य के लिए जिला का हित तथा राष्ट्र के लिए राज्य का हित नजरअंदाज किया जाना चाहिए। इसी भांति विश्व के लिए या मानव जाति के लिए किसी एक राष्ट्र को अपना हित छोडना चाहिए, बडे हित के सामने छोटा हित गौण हो जाता है। कहने का अर्थ मात्र इतना ही है कि बडे हित के लिए छोटे हित की अनदेखी करना चाहिए, महत्त्व नही देना चाहिए। मोटे रूप मे यह कहा जाना चाहिए कि स्वहित के पालन मे परहित की क्षति नहीं होनी चाहिए।

तृष्णा का त्याग :

पूज्य बापू कहा करते थे कि मनुष्य को अपनी आवश्यकताए सीमित रखनी चाहिए। जब आवश्यकताए बढायेगे तथा उनको तृप्त करने के साधन नही होगे तो तृष्णा आपको अनुचित या गैर वाजिब तरीको से कार्य करने के लिए प्रेरित करेगी। आचार्यश्री इसी विचार का दृढता से समर्थन करते हैं। मनुष्य अनावश्यक चीजो का सग्रह न करे तथा अपनी रोटी अपने पसीने से कमाये तथा खाये, जब मनुष्य ऐसा सोचता है तो वह महात्मा ईसा द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो का पालन कर रहा होता है।

अधिकारों का सदुपयोग :

समाज मे पद, प्रतिष्ठा, योग्यता जो भी प्राप्त है वह समाज के अन्य लोगों के बाधा न पहुंचाये या उनके हस्तक्षेप न करने के कारण ही प्राप्त है। इसलिए उसे समाज के हरेक व्यक्ति के प्रति अनुगृहीत होना चाहिए। इसका यह अर्थ कदापि नही है कि व्यक्तियो को प्राप्त अधिकारो का उपयोग केवल परिवार या परिचित या सम्बन्धियो या मुट्ठी भर अन्य लोगो के लिए ही किया जाय। यदि ऐसा किया गया तो अधिकारो का दुरुपयोग ही कहा जायेगा। अधिकारो के सदुपयोग या दुरुपयोग का सही अर्थ समझने के लिए लेखक अपने जीवन का एक उदाहरण देने का लोभ सवरण नहीं कर पा रहा है।

लेखक को राजपत्रित सेवावधि के आरम्भ मे ग्रामीण क्षेत्र मे पदस्थापित किया गया। वहा एक बार गाव के किसी सम्भ्रान्त नागरिक को कोई दस्तावेज सत्यापित-प्रमाणित कराना था। लेखक ने मूल दस्तावेज देखकर, मिलान कर हस्ताक्षर कर दिये तथा लिपिक से पद की मुहर लगवा लेने की बात कही। जब वह नागरिक उस लिपिक के पास छाप लगवाने गया तो लिपिक महोदय ने तापमान खो दिया तथा लेखक के पास आकर कहने लगे कि इससे तो हमारा काम बढ जायेगा। मिलान करने का काम हमारा है। लेखक ने बताया कि दस्तावेज प्रमाणित है, गाव मे कोई अन्य राजपत्रित अधिकारी नही है, यह नागरिक कहा किसके पास जायेगा, यह भी आपके गांव का ही है। पर लिपिक का एक ही कहना था इससे हमारा काम बढता है। लेखक ने कहा कि यदि भगवान् ने मुझे यह सत्यापित करने का अधिकार दिया है तो इसका लाभ यहा के लोगो को मिलना चाहिए। प्रमाणित करने का काम न करके मे इन ग्रामीणो का काम बढाऊगा, इनका कोपभाजन बनूंगा और फिर मै भगवान् की कृपा का पात्र नही बन सकता। हा, आपका काम बढता है तो मुहर मेरे पास रख दीजिए। दो-चार दिन बात चर्चा मे रही तथा फिर आई गई हो गई।

इस घटना से समझा जा सकता है कि आज सार्वजनिक लोक सेवको मे किस प्रकार की वृत्ति या विचारधारा विकसित हो गई है? कोई किसी का काम करने को, सहायता करने को तैयार नही फिर तो रोबिनसन क्रूसो ही बन कर रह जायेगे।

सादगी एवं सरलता :

अर्थशास्त्र की भाषा मे आवश्यकताएं कम करने से ही जुडा हुआ दूसरा सूत्र है सादगी तथा सरलता। आचार्यश्री के अनुसार जितनी अधिक साधना होगी व्यवहार मे उतनी ही अधिक सरलता परिलक्षित होगी। अधिक सम्पन्नता, अधिक सादगी तथा अधिक विकास तो इसी भाति अधिक विनम्रता, शालीनता नागरिक जीवन मे आनी चाहिए। स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति मे क्रांति, रक्तपात या दुराग्रह को स्थान नहीं होगा।

सामाजिक कुरीतियों का मूलोच्छेदन :

समता मूलक समाज की रचना के लिए सामाजिक कुरीतियो, रूढियो को कोई स्थान नहीं दिया जाना चाहिए।

दहेज प्रथा का दृढ़तापूर्वक विरोध किया जाना चाहिए जिससे आए दिन होने वाली बहुओं की हत्याये रोकी जा सके। आज समाज में व्याप्त कुरीतियां हानि ही नहीं पहुंचा रही है वरन् वे मानवता विरुद्ध भी हो गई है। समाचार पत्रो के पृष्ठ सदैव ही दहेज हत्याओ से भरे रहते हैं। इन कुरीतियो से मुक्ति पाने के लिए समता मूलक विचारधारा के समर्थको को कडा संघर्ष करना होगा, इन कुरीतियो से जकडे समाज को जागृत समाज नहीं कहा जा सकता है।

सम्पत्ति का समान वितरण :

व्यक्ति अपनी, अपने परिवार की आवश्यकताओं के अनुसार वस्तुएं, धन सम्पत्ति संग्रह कर ले, शेष सम्पत्ति के लिए वह ट्रस्टी का काम करे, उसको सम्भालने की जिम्मेदारी निभाये, अपने को उसका मालिक नही, रखवाला समझे, उसे समाज के बृहत्तर हित मे उपयोग की जाय, यह ध्यान रखा जाना जरूरी है। धन धान्य व अन्य सम्पत्ति के सम वितरण की व्यवस्था जितनी जल्दी हो सके उतनी ही जल्दी समतामूलक समाज की रचना हो सकेगी।

सीधा सच्चा कार्य व्यवहार :

इस सूत्र का सीधा सा अर्थ है कि अनैतिक तरीके से जीविका नहीं कमानी चाहिए। वस्तुओं मे मिलावट करना या कम तोलना या नापना या अपनी वस्तु के गुण धर्म को बढा चढा कर बेचना आदि धोखे की श्रेणी मे आता है। आज आर्थिक प्रपंच, शोषण, राजनैतिक दोहन कुटिल या छलपूर्ण व्यवहार के लक्षण हैं। जब तक व्यापार मे सीधा व सच्चा व्यवहार होता है तब तक वह समाज के स्वीकृत रूप मे ही गिना जायेगा पर ज्योही व्यापार मे लोभ तत्त्व समाविष्ठ हुआ वह भ्रष्टाचार, अन्याय तथा अत्याचार का रूप ले लेगा। आज न केवल किसी एक देश मे बल्कि सम्पूर्ण विश्व में इस क्षेत्र मे सुधार की आवश्यकता है।

नैतिकता से आध्यात्मिकता :

सामान्य नागरिक गृहस्थ जीवन बिताते हुए पहलै नैतिक धरातल का विकास करे, तदन्तर विकास का अगला चरण आध्यात्मिक होगा। इसलिए आवश्यक है कि नागरिकों को पहले जीविकोपार्जन, दैनन्दिनचर्या तथा आपसी व्यवहार में नैतिकता लानी होगी।

सुधार का अहिंसावादी तरीका :

अनाचार, अत्याचार, चोरी, मिथ्याचरण, धोखाधडी की स्थितियो मे सुधार के लिए हिंसा का प्रयोग कदापि न हो। सुधार के वक्त न तो द्वेष मन में रहे तथा न ही प्रतिशोध। आचार्य श्री नानेश का यह कथन गांधीवादी के दर्शन के कितना निकट पहुंच जाता है। जब वे कहते है कि पाप से घृणा करो, पापी से नही-निश्चय ही पापी से दशमलव मे भी नहीं। अहिंसक तरीके से कौन नहीं समझ पाता, किसका हृदय नही पिघलता? इतिहास ऐसे प्रमाणों से भरा पड़ा है।

भावात्मक एकता :

आज चारो ओर निम्न राष्ट्रीय चरित्र पर असंतोष व्यक्त किया जा रहा है तथा इस सम्बन्ध मे ज्यो-ज्यो सुधार के प्रयत्न किये गये त्यों-त्यो ही रोग बढ़ता जा रहा है। राष्ट्रीय एकता का निहितार्थ शक्ति सूचक है। मन, कर्म तथा वचन की एकता मनुष्य को सशक्त बना देती है। इस प्रकार के गुणो से ओतप्रोत मनुष्यो से उच्च राष्ट्रीय चरित्र का विकास होता है। ऐसी राष्ट्रीय भावात्मक एकता चिरस्थायी होती है जो शक्ति प्रदायिनी है तथा समता मूलक समाज की रचना को अग्रसर करती है।

विश्व नागरिकता का विकास :

नागरिकों मे क्रमशः भाईचारा विकसित किया जाय, उनको विश्व नागरिकता का ज्ञान कराया जाय, विश्व धर्म मे दीक्षित किया जाय। यदि नागरिक ग्राम धर्म, समाज, धर्म, राज्य धर्म तथा राष्ट्र धर्म के प्रति सही अर्थों मे सजग है, पालन करते हैं तो विश्व धर्म या नागरिकता का उनमे विकास करने मे कोई कठिनाई नहीं आयेगी। इतना ही नही, जरूरी यह भी है कि इन क्षेत्रो मे अव्यवस्था फैलाने वालो को सहयोग न किया जाए (यहां धर्म शब्द को इसके सही तथा कल्याणकारी अर्थ मे लिया जाना चाहिए)। भिन्न-भिन्न स्थितियो मे नागरिको के भिन्न-भिन्न कर्त्तव्य हो सकते हैं। आवश्यकता इस बात की भी है कि नागरिक कर्त्तव्यो का पालन करते समय सामूहिक हितो को प्रथम स्थान पर महत्त्व दे, उनकी रक्षा करे।

समत्व के दर्शन पर विश्वास :

नागरिको को समता के दर्शन उसके सिद्धांतो मे गाढ़ा विश्वास होना चाहिए। जिस नये समाज की रचना करनी है उसका आधार समता हो तथा समता मे उसका अटूट विश्वास हो। उसके प्रयत्न भी इसी दिशा मे होने चाहिए। विषमता की मुक्ति को शीर्षस्थ प्राथमिकता दें तथा सम्पर्क मे आने वाले सभी मित्रो को, बुजुर्गों को, सभी को समता मे विश्वास करने के लिए उद्यत करे। एक वाक्य मे कहे तो समता मूलक समाज की रचना के लिए सही अर्थों मे पूरे मन से अपने को समर्पित कर दे।

आचार्य श्री नानेश आज समाज मे भौतिक रूप से उपस्थित नहीं है पर उनके इन सिद्धान्तो को, समता मूलक समाज की रचना मे उनके योगदान को युगो-युगो तक याद किया जाएगा। उनके द्वारा प्रतिपादित ये सिद्धान्त लोकमानस का मार्गदर्शन करते रहेगे। इनके सिवाय भी आचार्यश्री ने निम्नलिखित सिद्धान्तो का समता मूलक समाज की रचना के लिए आग्रह किया है :

सत्य आचरण करना, सत्य पर आग्रह, चोरी न करना, विश्वासघात न करना, ब्रह्मचर्य का पालन, उच्च्व चरित्र, अनासक्त भाव, सत्ता तथा सम्पत्ति को साध्य न मानना, चिन्तन एव स्वाध्याय, समाज सम्मत गुण धर्म का वर्गीकरण, जनतान्त्रिक सिद्धान्तो मे विश्वास आदि-आदि।

-बी-186, डॉ. राधाकृष्णन नगर, भीलवाडा-311 001

आचार्य नानेश महान् व्यक्तित्व के धनी थे

✍ शातिलाल पोखरणा (जैन)

इस युग के महान् आचार्यों मे पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म.सा का नाम अमर हो गया। नाम से नाना परन्तु कार्यों से उन्होने अपने आपको महान् बना कर जैन धर्म की भारत के कोने-कोने मे खूब प्रभावना की। स्वय एक श्रेष्ठ गुरु होने के साथ-साथ आपने अनेक मुमुक्षु आत्माओ को दीक्षित किया जो सौभाग्य बहुत कम आचार्यों एव गुरुओ को प्राप्त होता है। आपके सान्निध्य मे करीब 320 दीक्षाएं और उसमे भी पच्चीस दीक्षाए एक साथ होना ऐतिहासिक उपलब्धि है। आप सयम मे कठोर तथा अति अनुशासन प्रिय थे जिस कारण आपने हुक्म संघ की एक विशेष छाप बना कर उसके गौरव को खूब बढाया।

रोडी मे रत्न वाली कहावत आपने चरितार्थ की जिसके अनुसार मेवाड़ की शूर वीरो की धरती के छोटे से ग्राम दांता मे जन्म लेकर हमारे पोखरणा परिवार के वंश को उजागर किया और अपनी संयम की सौरभ से मेवाड, मालवा मारवाड़, महाराष्ट्र ही नहीं अपितु भारत के कोने-कोने मे अपने आचरण की छाप छोड़ी।

सन्त किसी पन्थ या सम्प्रदाय तक सीमित नही होते है वे तो विश्व की धरोहर होते है जो निरन्तर विश्व शाति, विश्व कल्याण एवं प्राणीमात्र के कल्याण की मंगल कामना करते रहते है। मनुष्य मे मनुष्यता का बीज बोने वाले, नीति और धर्म की प्रेरणा देने वाले, लोकोत्तर पथ की ओर अग्रसर कर मोक्ष मार्ग बताने वाले सत ही होते है। तभी तो राजा-महाराजा भी सन्तो की सेवा के लिए लालायित रहते है और उनके चरणो मे अपना माथा टेकते है।

आपके जीवन की मै सबसे बडी उपलब्धि धर्मपाल संघ की स्थापना को मानता हूं जिसके माध्यम से हजारो हिंसक परिवारो को अहिंसक बनाया जिससे उनमे सुसंस्कारो का निर्माण हुआ और आज भी वे परिवार गुरुदेव की कृपा से फल फूल रहे है। विशेष कर बलाई जाति के मेवाड मालवा के गावो मे यह अभियान बहुत सफल रहा। इस युग मे सर्वप्रथम जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म सा ने अनेक मुसलमानो व मोचियो को जैन बनाया जो आज भी जैन सिद्धान्तो पर अडिग है और तत्पश्चात श्री समीर मुनि जी म सा ने भी क्रान्ति का बिगुल बजाया और वीरवाल संघ की स्थापना की जिससे खटीक समाज का बहुत उत्थान हुआ और आज भी खूब हो रहा है। अहिसा के प्रभाव से आज अनेक वीरवाल सुसंस्कारित अध्यापक, डॉक्टर, इंजीनियर, मिनिस्टर, विधायक तथा करोडपति है। ऐसे सद्गुरु के चरणो मे कोटि-कोटि श्रद्धा सुमन।

-'भूरूप' 77 काशीपुरी, भीलवाडा

चमत्कारी गुरुदेव...

✍ केसरीचन्द पारसचन्द जैन

हे गुरुदेव श्री!

आपकी सौम्यता कितनी चमत्कारी थी। शायद इसका आपको भी पता नही था।

आपका सौम्य-मधुर स्मित मुख मण्डल कितना चमत्कारी था?

आपके दर्शनों से...

- मुरझाये चेहरे खिल उठते थे।
- कषायो से सन्तप्त हृदय 'प्रशान्त' बन जाया करते थे।
- जीवन जीने का उत्साह खो बैठे अनको मे जागृति सचार हो जाया करता था।
- वासना की वीथिका मे भटकते हुए प्राणियो में संयम की शीतलता का संचार हो जाया करता था।
- बालक आपश्री की ओर आकर्षित हो खिंचे चले आते थे।
- युवक जवानी के उन्माद से मुक्त हो, संयम के सुपथ पर समारूढ होते थे।
- प्रौढो मे आराधना-साधना के उत्साह का सचार होता था।
- वृद्धो मे नूतन जागृति का सचार 'श्रमणत्व' श्रृंगार आपके जीवन की महत् कला थी।

आपने अपने जीवन की सद्गुण समृद्धि को सुरक्षित रखते हुए अनेको के जीवन को सद्गुण मय बनाये रखने मे जो श्रम किया, उसे श्रेय के रूप मे समर्पित कर शत्-शत् वन्दन हार्दिक अभिनन्दन।

-पारस मेडिकल स्टोर, भोपाल (म प्र)

तू रहमत का दरिया है

✍ सुश्री चन्द्ररेखा बाघमार, अहमदाबाद

'गुरु भगवन्' शब्द का श्रवण करते ही जिस फरिश्ते की तस्वीर मेरे जेहन मे आती है वो है आराध्यदेव गुरुवर्य श्री नानेश की तस्वीर। जिनका प्यारा व छोटा सा नाम था 'नाना'। सारे जहां मे धूम थी "जय गुरु नाना" की। हर दिलो में धुन बजती थी "जय गुरु नाना" की। हर गांव नगर गूंजता था "जय गुरु नाना" के नारों से। ऐसे थे मेरे गुरुदेव जन-जन के प्यारे, जिनशासन के दुलारे, श्री संघ के रखवाले।

सिर्फ प्रात:काल ही नही बल्कि प्रतिपल आपकी ही पावन प्रतिमा मेरे मानस पटल पर उभरती है, ऐसा होने का कारण यह नही कि वे प्रचंड यशोकीर्ति के धारक थे किन्तु यह है कि आप साधना की खास ऊंचाई को छूने वाले मसीहा थे या कहूं कि आप अद्वितीय अनुपम लाजवाब योगी थे। यही कारण है कि आपके दरबार में दीन-दु:खियो की व सुखी-समृद्ध की भीड़ रहती थी। किसी के लिए आप फरिश्ता थे, तो किसी के लिए गुलिस्ता। क्या कहे आपका शान्त, दान्त व निरारम्भ व्यक्तित्व ही ऐसा था कि आप जिस किसी बस्ती मे जाते थे वह बस्ती भक्ति की मस्ती मे सराबोर हो जाती थी। आप जिस किसी कस्बे मे जाते थे वह कस्बा भलमानसता व खुशियों का उद्गम स्थल बन जाता था। मुझे आपके अनुपमेय व्यक्तित्व पर बड़ा नाज है, गर्व है।

तू रहमत का दरिया है,
तेरी रहमत मेरी किस्मत है,
तेरी रहमत मेरी अस्मत है,
तेरी रहमत मेरी हिम्मत है।

गुरुदेव।

छोड़ के हम सब का साथ, बस गये प्रभु आवास,
दिल में रही सिर्फ आपकी, समता, श्रद्धा व सुवास।

भगवन्! हम कभी नही भूल पायेंगे आपको। क्योकि आप साधक ही नहीं बल्कि आदर्श साधक थे। आडम्बर मुक्त आराधना. प्रदर्शन मुक्त प्रभावना . विवेक युक्त आचार-विचार व व्यवहार अस्तित्व की रक्षा के अनुरूप निरवद्य उच्चार.. प्रपंच मुक्त धर्म का प्रचार. समस्याओं से पहले समाधान ढूंढने की पावन प्रज्ञा प्रतिपल अनुशासन एवं शिष्टाचार के हिमायती . कैसे भूल पायेगे कभी नहीं भूल पायेगे

आपकी याद मेरी शक्ल को मायूस बना देती है आपकी याद मेरे नयनो को सजल-अश्रुपूर्ण बना देती है आपकी यादे छू लेती है दिल की गहराईयां. .

तू मंजिल है मेरी, मैं तेरी दिवानी हूं,
तू चिरागे शमां हैं, मैं तेरी परवाना हूं,
मुझे दुनियां कहे पागल, इसका न मुझे गम है,
पर तेरी जुदाई को सहने का नहीं दम है।

फिर भी

दिल उदास क्या करना, मन बेचैन क्या करना
फूल का मुकद्दर है शाख से जुदा होना।

इस शेर को याद करे अपने आपको तसल्ली देती हूं।

श्रद्धांजलि के इस प्रसंग पर यह कामना करती हू कि आज तक आपने जन साधारण के बीच जितनी खुशियां फैलाई है वो सारी हजारो गुना होकर दुनियां के हर कोने मे आपकी यादगार बन कर फैले।

डॉ. शैलेन्द्र हिरण का परिचय

झीलों की नगरी उदयपुर जैन समाज का ऐसा कौनसा व्यक्ति होगा जो डॉ शैलेन्द्र हिरण को नहीं जानता होगा। धार्मिक, सामाजिक आदि क्षेत्रों में अपनी पकड़ मजबूत रखने वाले डॉ शैलेन्द्र हिरण समाज सेवा के हर कार्य मे अग्रसर रहते हैं। आपका जन्म झीलों की नगरी उदयपुर मे हुआ। आपके पिता श्रीमान् प्रो के एस. हिरण एवं मातुश्री श्रीमती शान्ता हिरण है। आपने एम बी.बीएस , एम डी. की योग्यता प्राप्त कर सन् 1982 हिरण एक्सरे क्लिनिक का शुभारम्भ किया। आपकी धर्मपत्नी रमा हिरण मृदुभाषी, सरल स्वभाव श्राविका है। आपके दो पुत्र रत्न मनीष एवं दीपेश है।

उदारमना, कर्मठ समाज सेवा में हर समय अग्रणी, उत्साही, सरल हृदय, हंसमुख, मिलनसार डॉ. शैलेन्द्र जी हिरण सभी समाज के साधु-साध्वियो की नि:शुल्क व नि:स्वार्थ भाव से जांचे भी करते हैं। आप चिकित्सा सेवा कार्य मे व्यस्त होते हुए नियमित सामायिक प्रतिक्रमण आदि की आराधना भी करते है। आप जैसे समाजसेवी चिकित्सक को पाकर समग्र जैन समाज गौरवान्वित है। आप स्वस्थ एव दीर्धायु होकर जिनशासन की सेवा करने मे सर्वतोभावेन समर्पित रहे, यही हमारी शुभ मंगल कामना है। श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ एवं श्रमण संस्कृति परिवार आपकी नि:स्वार्थ सेवाओं की सराहना करता है और हार्दिक आभार ज्ञापित करता है।

एक विशिष्ट व्यक्तित्व जो समय से पूर्व चला गया

अनुराग खाबिया-एक परिचय

आचार्य नानेश एव उनके सघ के प्रति आस्थावान रतलाम का खाबिया परिवार समाज मे अपनी एक अलग पहचान रखता है। स्व श्री गेदालाल जी खाबिया ने अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन सघ के वरिष्ठ विशिष्ट व्यक्तियो मे अपने मृदुल व्यक्तित्व के कारण एव साधर्मी वात्सल्य की उदार वृत्ति के कारण अपना वरिष्ठ एव विशिष्ट स्थान बनाया तो उनकी धर्मपत्नी प्रबुद्ध विचारिका धर्मशीला श्रीमती रोशनदेवी खाबिया ने *अखिल भारतवर्षीय महिला समिति* मे अपनी प्रतिभा के कारण अपनी पहचान बनाई है।

अपने वारिसाना सस्कारो के अनुसार उन्हीं के सुपुत्र श्री अशोक कुमार जी खाबिया ने आचार्य श्री नानेश के सुशिष्य श्री शातिमुनि जी म सा के सान्निध्य मे गठित एवं आचार्यश्री नानेश के पट्टधर आचार्य श्री विजयराज जी म सा के नेतृत्व मे गतिशील श्री अखिल भारतवर्पीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ के सस्थापक महामत्री बनकर अपने पारम्परिक सस्कारो का परिचय दिया। यही नहीं उनके द्वितीय सुपुत्र श्री कमल कुमार जी खाविया एव सुपुत्री श्रीमती सगीता कोठारी भी अत्यन्त प्रतिभावान है। सब मिलकर खाबिया परिवार उच्च शिक्षित एव आदर्श सस्कारो से ओतप्रोत परिवार है।

श्री अशोक कुमार एव श्रीमती मनु खाबिया के ज्येष्ठ सुपुत्र स्वर्गीय श्री अनुराग खाविया एक विशिष्ट प्रतिभाशाली युवक थे जो असमय में ही सब कुछ छोड कर विलीन हो गये। दिनाक 20 फरवरी 1973 को जन्मे श्री अनुराग खाबिया ने साढ़े तीन साल की उम्र मे ड्राइग कम्पीटीशन मे जीवन का पहला पारितोपिक हासिल किया।

'अभियान' नामक बाल फिल्म मे मुख्य कलाकार की भूमिका निभाई एवं काफी नाम कमाया। नृत्य चित्रकला और संगीत के साथ-साथ अध्ययन मे भी सदैव प्रथम श्रेणी मे रहे एवं बी कॉम में मेरिट लिस्ट मे टॉप रहे। कॉलेज के अध्ययन की समाप्ति के पश्चात् ज्वेलरी डिजाइन मे डिप्लोमा किया। बैकाक मे एवं मुम्बई मे नामी फर्मों पर डायमड का काम सीखा और चाचा कमल खाबिया के दिशा निर्देश में मुम्बई में हीरा व्यवसाय एक्सपोर्ट का सफलता पूर्वक कार्य कर रहे थे। छोटी उम्र में ही इनकी प्रतिभा को आज भी मुम्बई के डायमंड मार्केट मे सब याद करते हैं।

अपनी धुन के पक्के अनुराग प्राय: 18 से 20 घटे तक कार्य करते थे एवं सभी प्रकार के कुव्यसनो से दूर थे। चाय, सुपारी, पान, गुटखा किसी भी चीज का उपयोग नही करते थे। अनुराग खाबिया का फ्रेन्ड सर्किल भी पूरा सात्विक एवं प्रतिभावान था जो अनुराग को एवं उसकी प्रत्येक राय को महत्वपूर्ण मानता था।

अपनी मृत्यु के कुछ दिन पूर्व ही संतो के सामने व्यक्त विचारो के अनुसार श्री अनुराग समाज एव धर्म संघ के लिए भी बहुत कुछ कर गुजरने के संकल्प रखते थे। उनके भीतर समाज मे चल रही कुछ रुढियो के खिलाफ एक तडफन थी तो समाज के सामान्य वर्ग के लिए कुछ कर गुजरने का संकल्प था।

साधु-साध्वियो की सेवा मे सदैव अहोभाव से तत्पर श्री अनुराग खाबिया को अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ के संस्थापक महामंत्री के सुपुत्र होने का गौरव प्राप्त हुआ था तो श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ के संस्थापक अध्यक्ष श्री उम्मेदमल जी गांधी जोधपुर का दामाद होने का सगौरव भी प्राप्त हुआ उनकी सुपुत्री वर्षा के संग 16 फरवरी 1997 को जोधपुर में विवाह सूत्र में बंधे थे।

श्री अनुराग खाबिया का दिनांक 9-10-2000 को अचानक हृदयाघात के कारण ट्रेन मे ही देहावसान हो गया। मात्र 27 वर्ष की अल्पवय में अपनी प्रतिभा का अद्भुत चमत्कार दिखा कर चला जाना परिवार, समाज और संघ के लिए तो अपूरणीय क्षति का कारण माना जायेगा किन्तु कर्म गति के अनुसार भवितव्यता को स्वीकारना पडता है।

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन श्रावक संघ एवं श्रमण सस्कृति परिवार दिवंगत आत्मा के प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए जिनेश्वर भगवान् से दिवगत आत्मा को शांति प्रदान करने की कामना करते है।

ज्ञानचंद ढेडिया
(प्रबध सम्पादक)

सफाईकर्मी के बंगले से 80 लाख रु. मिले

मुम्बई। मुम्बई पुलिस ने वृहन मुम्बई नगर निगम के एक सफाईकर्मी के घर छापा मारकर अस्सी लाख रुपए से अधिक की नगदी एवं ढाई लाख रुपए के स्वर्णाभूषण बरामद किए है।

पुलिस ने जाली नोटो के सिलसिले मे नागुराव माल्कू घडगे के कुर्ला स्थित आलीशान बंगले पर छापा मारकर यह बरामदगी की। घडगे को पुलिस हिरासत मे भेज दिया गया है। जाली नोटो की बरामदगी के लिए गई पुलिस इतनी बडी नगदी और वह भी असली नोट देखकर दग रह गई। पुलिस ने फ्रिज के पीछे बनी गुप्त तिजोरी से 80 लाख 57 हजार 860 रुपए तथा 2.53 लाख रुपए मूल्य के स्वर्णाभूषण बरामद किए।

घडगे का कहना है कि उसने ब्याज के धंधे तथा चिटफंड व्यवसाय से यह राशि कमाई है। जबकि पुलिस को उसके माफिया सरगना छोटा शकील से सम्बन्ध होने का सन्देह है। पुलिस के अनुसार जबरन पैसा वसूली और गैरकानूनी चिटफड के लिए कुख्यात घडगे के खिलाफ घरो मे लूटपाट एव डकैती के मामले भी दर्ज है। पुलिस के अनुसार घडगे का आलीशान बंगला वातानुकूलित है और उसमे होम थियेटर सहित एशोआराम के आधुनिक उपकरण मौजूद हैं। पुलिस ने उसका मोबाइल फोन भी टेप किया जिससे उसके अनेक मत्रियो, बडे नेताओ, निगम, पुलिस व प्रशासनिक अफसरो से सम्पर्कों का पता चलता है।

डेढ़ वर्ष की बच्ची ने जान बचाने का बीड़ा उठाया

लन्दन। यकृत एवं छोटी आंत का दोहरा अंग प्रत्यारोपण कराने वाली डेढ वर्षीय ब्रिटिश बालिका बेथनी सेलमन ने अब अपने जैसे दूसरे मरीजो की जान बचाने का बीडा उठाया है।

जटिल अग प्रत्यारोपण के लिए नौ माह तक जीवन और मौत के बीच संघर्ष करने वाली बेथनी का अंग दान करने की अपील वाला एक पोस्टर जारी किया। इस पोस्टर मे बेथनी के अलावा फुटबाल खिलाडी एस्टन विला, डियोन डबलिन एव डेविड गिनोला को इस नारे के साथ दिखाया गया है ''जीवन मे कुछ चीजे गोल से अधिक कीमती होती है।'' राष्ट्रीय अभियान के तहत इस पोस्टर को देशभर के स्कूलो, दुकानो तथा चिकित्सा केन्द्रो पर लगाया जाएगा।

पूर्वी सर्रे मे नवम्बर 1999 मे जन्मी बेथनी के जन्म से एक ही गुर्दा था। बाद मे उसकी 90 प्रतिशत आंत भी बेकार हो गई थी। डाक्टरो के अनुसार बेथनी यकृत एवं छोटी आंत के प्रत्यारोपण के बिना सिर्फ छह माह तक जीवित रह सकती थी। उसे नसो से भोजन दिया गया जिससे उसका यकृत क्षतिग्रस्त हो गया। समाचार पत्रो एवं मीडिया मे जबर्दस्त विश्वव्यापी प्रचार अभियान के बावजूद बेथनी को नौ माह बाद दानदाता मिला। अप्रेल मे बर्मिंघम स्थित राजकुमारी डायना शिशु अस्पताल मे 20 घण्टे तक चले आपरेशन के बाद उसकी जान वच सकी।

एड्स की रोकथाम के लिए उपाय तेज किए जाएं

नई दिल्ली। प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने एड्स से सबसे अधिक प्रभावित देश के छह राज्यो के मुख्यमत्रियो से इस घातक रोग की रोकथाम के उपायो मे तेजी लाने और युवाओ को जागरूक बनाने का अभियान

तेज करने की आज सलाह दी।

एड्स और एचआईवी वायरस पर यहां मुख्यमंत्रियो के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री वाजपेयी ने कहा कि इन राज्यो को स्कूली बच्चो, फुटपाथी बच्चों और युवाओ को जागरूक बनाने के लिए कार्यक्रम लागू करने चाहिए, ताकि वे जिम्मेदार जीवनशैली अपनाएं। इसके अलावा इस काम मे धार्मिक प्रतिष्ठानो को सक्रिय रूप से शामिल किया जा सकता है और वे समाज के एक बड़े वर्ग को प्रभावित कर सकते है।

देश मे एड्स से सबसे ज्यादा प्रभावित राज्यो मे महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, मणिपुर और नागालैण्ड शामिल हैं। प्रधानमंत्री ने इन राज्यों से एड्स की चुनौती का मिलकर मुकाबला करने को कहा, ताकि एड्स रोग अफ्रीकी देशो की तरह बेकाबू नही हो जाए। उन्होने कहा कि ये राज्य पहले ही इस रोग की जकड मे है और एचआईवी संक्रमण के 75 प्रतिशत मामले इन्ही राज्यो मे है। भारत मे इस समय 38 लाख 60 हजार लोग एचआईवी विषाणु से ग्रस्त है। राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण ब्यूरो के अनुसार इन छह राज्यो मे एचआईवी संक्रमण तेजी से बढ़ रहा है। श्री वाजपेयी ने इसे चिंता का विषय बताया। प्रधानमंत्री ने कहा कि राज्य एड्स नियंत्रण सोसायटियो के जरिए कार्यक्रम चलाया जा रहा है लेकिन इस मुख्यमत्रियो का नेतृत्व और समर्थन मिलना बहुत जरूरी है। लोगो की इसमे भागीदारी तभी सुनिश्चित हो पाएगी।

इस सम्मेलन मे स्वास्थ्य मंत्री सी पी ठाकुर के अलावा आध्रप्रदेश, कर्नाटक और नागालैण्ड के मुख्यमंत्री तथा महाराष्ट्र, तमिलनाडु और मणिपुर के स्वास्थ्य मंत्री मौजूद थे। जागरूकता अभियान मे गैर सरकारी संगठनो को बडे पैमाने पर शामिल करने की जरूरत पर जोर देते हुए प्रधानमंत्री ने महाराष्ट्र, तमिलनाडु और कर्नाटक मे गैर सरकारी संगठनों की भूमिका की प्रशंसा की।

लड़के से लड़की बना, अब पत्नी बनेगा

मुंबई। इश्क का रोग इन्सान को क्या से क्या बना देता है। कोई मजनू बन जाता है, कोई पागल तो कोई वैरागी। मुंबई मे दो लडको को आपस मे इस कदर प्रेम हुआ कि उनमे से एक ऑपरेशन कराकर लडकी बन गया है और आगामी नवम्बर मे दोनो विवाह सूत्र मे बंध रहे है। चर्चा विशाल और कमला (परिवर्तित नाम) की हो रही है। चलो मुंबई डॉट कॉम के अनुसार कमला का जन्म लड़के के रूप मे हुआ था परन्तु उसकी परवरिश लडकी की तरह हुई। वह दिखता भी लडकी जैसा था। यहां तक कि जन्म प्रमाण पत्र मे भी वह लडकी दर्ज थी। 16 वर्ष की आयु मे मासिक धर्म शुरू नही हुआ तो डॉक्टरो की मदद ली गई। नायर अस्पताल में उसका आठ वर्ष से इलाज कर रहे डॉक्टरो के अनुसार कमला का मामला असाधारण है। विभिन्न जांच व परीक्षणो से पता चला कि वह जननागो के विकार से पीडित थी। ऐसे लोग पुरुष होने के बावजूद दिखने व मानसिकता से औरत होते है लेकिन स्त्री अग नहीं होते है। मासिक धर्म नहीं होता और बच्चे भी पैदा नही कर सकते। जुलाई 1994 मे शल्य क्रिया से कमला को स्त्री बनाना शुरू किया गया। 24 वर्षों तक लडका रही कमला को स्त्री अंग प्रदान किए गए। कमला के अनुसार विशाल ने ही उसे इतने बडे निर्णय के लिए प्रेरित किया। दोनो ने करीब चार वर्ष पहले कॉलेज मे एक-दूसरे को पसद किया और साथ-साथ रहने का फैसला भी। विशाल कमला के अर्द्धनारीश्वर रूप से वाकिफ था। डॉक्टरो के अनुसार कमला को ताउम्र महिला बने रहना तथा हड्डियो की टूट फूट रोकने को एस्ट्रोजन हार्मोन थैरेपी लेनी होगी। दोनों इस बात से वाकिफ है कि वे औलाद का सुख नहीं भोग सकेगे। पर वे एक-दूसरे को पाकर ही खुश हैं।

❖ ❖ ❖

जीवन का परिवर्तन बाहर से नहीं लादा जा सकता, उसे तो समीक्षण की गभीर साधना द्वारा भीतर से ही पैदा करना पडता है। -आचार्य श्री नानेश

आचार्य श्री नानेश को हमारे सभी प्रतिष्ठानों के पार्टनर व स्टॉफ
की ओर से भावांजलि और श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

पूज्य आचार्य श्री नानालाल जी म.सा. की प्रथम पुण्यतिथि एवं
आचार्य प्रवर पूज्य श्री विजयराज जी म.सा. के आचार्य पदारोहण
की प्रथम वर्षगांठ के उपलक्ष में प्रकाशित समता विभूति
विशेषांक प्रकाशन के शुभ अवसर पर
हार्दिक शुभकामनाएं

* पुखराज ज्ञानचन्द एण्ड कम्पनी
* जे.जी. टेक्सटाइल मिल्स
* जे.जी. ग्राइंडिंग इण्डस्ट्रीज
* जे.जी. खनिज उद्योग

17, शिव गंगा मार्केट, ब्यावर (राज.)

फोन

58194, 55069, 23604 (ऑ)
21810, 20185, 20378 (फै.)
56927, 56710, 57046, 55541, 56714, 56493

- ज्ञानचन्द ढेडिया - मोबाइल : 098290-71927
- ताराचन्द ढेडिया - मोबाइल : 098290-72384
- चंदुलाल कोठारी -मोबाइल : 098290-71327
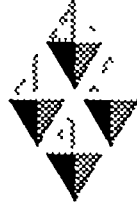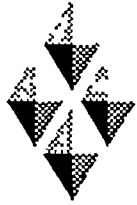
जय हुक्मेश　　जय नानेश　　जय विजय　　जय शान्ति

हुक्मेश संघ के अष्टम पट्टधर आचार्य श्री नानेश
के दिनांक 27-10-99 को संलेखना संथारा पूर्वक
देवलोक गमन पर सादर श्रद्धा सुमन
एवं
पूज्य श्री विजयराज जी म.सा. के आचार्य पद पर विराजने की
हार्दिक मंगल कामनाएं

शुभेच्छु
आजाद कोठारी
सचिव
लायंस क्लब
फतहनगर

शुभेच्छु
पारस कोठारी
अध्यक्ष
साधुमार्गी जैन श्रावक संघ
फतहनगर

श्री महावीर इलेक्ट्रिक इण्डस्ट्रीज

रीको फतहनगर (राज.) फोन : 20158

संबंधित फर्म : **आजाद इलेक्ट्रिकल्स**, नाड़ा खाड़ा, उदयपुर फोन : 417529

विचारों के साथ संस्कारों में जो परिवर्तन आता है वही स्थायी रहता है। -आचार्य श्री नानेश.

आचार्य श्री नानेश को कोटि-कोटि नमन...

डालचन्द अशोक कुमार श्रीश्रीमाल

बागड़ी मौहल्ला , बीकानेर (राज.)

तर्क सम्मत श्रद्धा ही आत्म विश्वास की जन्मदायिनी होती है। -आचार्य श्री नानेश

युग संत आचार्य श्री नानेश को प्रणाम सहित

शंशाक एक्सपोर्टस्

1201, जोगानी एपार्टमेन्ट,
डुंगरसी रोड़ मलाबार हिल्स, **मुम्बई 400 006**
फोन : 3648188

लोकेन्द्र एक्सपोर्टस्

221, पंचरत्न, ओपेरा हाऊस
मुम्बई 400 006
फोन : 3642450

डागरिया ज्वैलर्स्

मंगलश्री कॉम्पलेक्स, बड़ा सराफा, **इन्दौर (म.प्र.)**
फोन : 430551

डागरिया ब्रदर्स

तिलक मार्ग, **नीमचकेंट (म.प्र.)**
फोन : 07423 - 32631

संतोषमल समरथमल डागरिया

मेन रोड़, **श्यामगढ़ मण्डी (म.प्र.)**
फोन : 07423 - 32057, 32218

□ राजाबहादुर सिंह डागरिया □ लोकेन्द्रसिंह डागरिया □ अशोक कुमार डागरिया

समता की साधना सच्चे सुख और सच्ची शाति की प्रदायिनी होती है। -आचार्य नानेश

आचार्य श्री नानेश के चरणों में नमन . . .

श्रीमती मनोहर कंवर

[illegible] श्री [illegible] लाल जी तातेड़
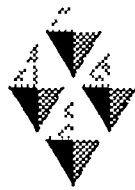
दस्साणी चौक, बीकानेर (राज.)

समता का सबसे बडा शत्रु परिग्रह है। -आचार्य श्री नानेश

हुक्मेश संघ के अष्टमाचार्य श्री नानेश के
दिनांक 27-10-99 को संलेखना संथारा सहित
देवलोक गमन होने पर उनकी परम पुण्यात्मा को सादर श्रद्धासुमन अर्पित।

कैलाश मार्ग, मन्दसौर

मेसर्स कचरमल किशनलाल जैन
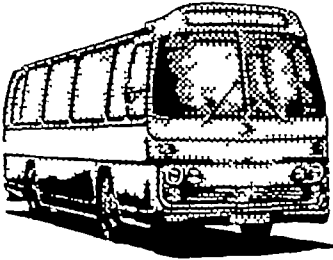
तीर्थयात्रा, पिकनिक पार्टी, शादी, स्कूल ट्रिप, पारिवारिक ट्रिप के लिए नई व उच्च मॉडल की यात्री बसें हमेशा उपलब्ध है।

सम्पर्क सूत्र

शिखरचन्द रातड़िया ◆ कान्तिलाल रातड़िया

फोन

कैलाश मार्ग–44472 ● गौशाला भवन 52624 (रात्रि 8 से 10)

निवास : 53472, 41472

आचार्य श्री नानेश को कोटिशः प्रणाम...

स्व. केशरीचन्द जी सेठिया परिवार

लाभूजी का कटला , बीकानेर (राज.)

सबकी सेवा *सबको प्यार*
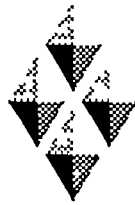
धर्म रहित जीवन बिना डोर की पतग के समान है। -आचार्य श्री नानेश

प्रातः स्मरणीय आचार्य श्री नानेश को भावभरी श्रद्धांजलि

कानमल भंवरलाल चौपडा

धान मण्डी, जावद जिला-नीमच (म.प्र.)

- चन्द्रकंवर-भंवरलाल
- केसरबाई-हिम्मतमल
- केसरबाई-जतनमल
- तारा देवी-अरविन्द
- चन्द्रा देवी-बलवन्त
- शकुन्तला-अशोक
- संगीता-सतीश
- मीनाक्षी-प्रदीप

राजेश, सन्दीप, महावीर, विजेयता, पियुषा, मनीष, दीपिका, लोकेश, मीना, मुकेश, धर्मेश, प्रज्ञा, कविता, पेप्सी एवं चौपड़ा परिवार-जावद

आस्था की मौलिक शक्ति को दबाने वाला मूलभूत शत्रु कर्म ही है। -आचार्य श्री नानेश

आचार्य श्री नानेश को कोटि-कोटि नमन...

नेमचन्द माणकचन्द सेठिया
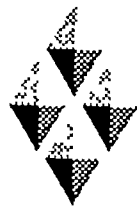
सेठिया डागा मौहल्ला , बीकानेर (राज.)

श्री वीतरागाय नमः

हुक्मेश संघ के अष्टमाचार्य श्री नानेश के
दिनांक *27-10-99* को संलेखना संथारा सहित
देवलोक गमन होने पर उनकी परम पुण्यात्मा को सादर श्रद्धासुमन अर्पित।
जिनके मंगलमय आशीर्वाद ने हमारे जीवन पथ में सदैव सफलता के पुष्प बिछाए,
जिनकी सद्‌शिक्षाओं ने हमारे मानस लोक को नित नूतन आलोक दिया,
उन साधक पथ के सजग पथिक
आचार्यश्री को हम श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं।

श्रद्धावनत

सुरेशचन्द्र बाफना	रोशनलाल मेहता
पुष्पा बाफना	दिलखुश बेन मेहता
सिद्धार्थ बाफना	महावीर मेहता

Mehta Brothers & Sons

Dealing in Ferrous, Non Ferrous, Metal & Chemicals
27, Sahjanand Shopping Centre, Shahibaug
AHMEDABAD - 380 004
Phone (O) 5621208 (R) 5624636

Shilpa

FILAMENTS PVT. LTD.

MFG. TEXURED & CRIMP YARN

Regd Office 4023, Jash Textile & Yarn Market, Ring Road, **SURAT**
Fact Unit I Karanj (Surat) • Unit II Silvasa (Daman)
Phone (O) 641511, 636753 (R) 220392

Working to-Gether Works

ज्ञान का प्रकाश घोर तिमिर का नाश कर देता है। -आचार्य श्री नानेश

हुक्मेश संघ के अष्टम पट्टधर आचार्य श्री नानेश
के दिनांक 27-10-99 को संलेखना संथारा पूर्वक
देवलोक गमन पर सादर श्रद्धा सुमन
एवं
पूज्य श्री विजयराज जी म.सा. के आचार्य पद पर विराजने की
हार्दिक मंगल कामनाएं

GISULAL HAMEERMAL & CO.

METAL MERCHANTS

Dealers in
**Copper Wire, Rods,
D.C.C. Strips &
Stockists of Super
Enamelled Wires etc.**
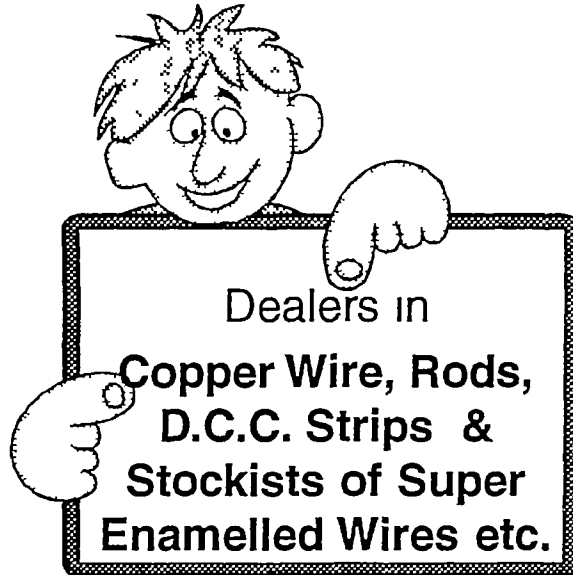
14, 1st Sutar Gally, Null Bazar, **MUMBAI-400 004**

Phone : 3862344, 3882919, 2307422

☆ *Ratanlal Mehta* ☆ *Kaloolal Mehta* ☆ *Rajmal Mehta*

◆ राग की आग आत्मगुणों के बाग को जला कर खाक कर देती है।

◆ समझदारी और सुज्ञता बन्धनों को तोड़ने में है बढ़ाने में नहीं।

ऐसे गंभीर सूत्र प्रदाता आचार्य श्री नानेश को शत-शत वन्दन

सादर श्रद्धांजलि समर्पित

☎ 7494638 (O)
7470958 (R)

NAVKAR JEWELERS

A/21, Angita Shopping Centre, Pragatinagar Road, Naranpura,
AHMEDABAD-380 013

© 7494638
Mobile 98240-63887

KAMAL Consumers

Grain Wholesale & Retail Merchant

A/20, Angita Shopping Centre, Pragatinagar Road, Naranpura,
AHMEDABAD-380 013

◆

- Navin V Jain (Bhagmar)
- Chandresh V Jain (Bhagmar)
- Gotam Jain (Bhagmar)
- Vimal Kumar Jain (Bhagmar)

हुक्मेश संघ के अष्टमाचार्य श्री नानेश
दिनांक 27-10-99 को संलेखना संथारा सहित
देवलोक गमन होने पर उनकी परम पुण्यात्मा को सादर श्रद्धासुमन अर्पित।

✦ Shah Gotilal Bhorilal Jain

Station Road, **BARI SADRI** - 312 403 © 01473-64227, 64228

Branch Mandiyard, PRATAPGARH (Raj.) © 01478-22530

✦ G.B. Enterprises ◆ G.B. & Sons
G.B. Cleaning Corp.

Chokanna Balaji, Station Road, **NEEMUCH (M.P.)**
© 07423 (R) 22775 (O) 24424, 25079

✦ Gotilal Bhorilal Jain & Company

827, Sector 4, Hiran Magri, **UDAIPUR (RAJ.)**
© 0294 (Mandi) 584714 (Res.) 460518, 461519

Branch BARISADRI - 312 403

✦ ARIHANT MARBLE & GRANITES

G-28, Udyog Bihar Ind. Area, Sukher, **UDAIPUR (RAJ.)**
© 0294 Off.-441120 Fact.-440183, Res. 461519, 460518

✦ Shubham Marble & Granites

Sukher Main Road, N.H. No. 8, **UDAIPUR**
© 0294-441120, (R) 460518, 461756

✦ Arihant Matels

Station Road, **BARI SADRI (RAJ.)**

☆ *BHORILAL DHING*

जय हुक्मेश *जय नानेश* *जय विजय* *जय शान्ति*

हुक्मेश संघ के अष्टम पट्टधर आचार्य श्री नानेश
के दिनांक **27-10-99** को संलेखना संथारा पूर्वक
देवलोक गमन पर सादर श्रद्धा सुमन एवं पूज्य श्री विजयराज जी म.सा.
के आचार्य पद पर विराजने की हार्दिक मंगल कामनाएं

फतहलाल चांदमल एण्ड सन्स

अजवायन एवं किराणा सामान के आढतिया एवं कमीशन एजेन्ट

फतहनगर (राज.) फोन : 20030 (ऑ.), 20140 (नि)

शुभेच्छु

हस्तीमल मारू, उपाध्यक्ष-साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, फतहनगर

आचार्य श्री नानेश को हार्दिक श्रद्धांजलि

OSTWAL & ASSOCIATES

INCOME TAX & SALES TAX PRACTITIONER

A/3, Shanti Ganga Aparment, 1st Floor, Opp Railway Station
BHAYANDAR (E) 401 105
© 8164676 (O), 8164345 (R) Fax 8165707

पाप कर्म न करना ही परम मगल है और यही धर्म है। -आचार्य श्री नानेश
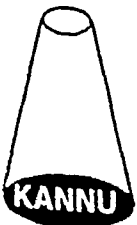
With best compliment from :

KANNU CONE

F-16, Industrial Area, IInd Phase, **BEAWAR - 305 901 (Raj)**
© 01462-23499, 51369 (O), 52677, 53478 (R) Fax 01462-51369

श्री आचार्य नानेश समता विभूति विशेषांक के अवसर पर श्रद्धा सुमन अर्पित

Ever Smiling. .

Phone 31666

GAUTAM TIMBERS

51 Lakkar Pitha, **RATLAM (M.P.)**

Phone 42666

JAYANTIL AL & SONS

Timber and Plywood Merchant

52, Lakkar Pitha

RATLAM (M.P)

Mobile 98272-23666

JANARDHAN PLYWOOD IND. DEHARADUN

गुण पूजा का भाव समानता का द्योतक है। -आचार्य श्री नानेश

श्री आचार्य नानेश समता विभूति विशेषांक के अवसर पर श्रद्धा सुमन अर्पित

युगदृष्टा सत आचार्य श्री नानेश को हार्दिक श्रद्धाजलि

MOHIT DYE STUFF PVT. LTD.

5, Technocrate Society, Moti Magri Scheme
UDAIPUR - 313 004 (Raj.)
© 0294-525085, 420643
Fax 0294-529173 • Email dikshant@datainfosys com

Distributors

◆ **M/s. Jay Synth Dye Chem Ltd., Mumbai** ◆ **M/s. ICI India Ltd.**

Bhilwara Office :
Bhopal Ganj, Near Chittor Ki Haveli
© 28952, 36930

समता विभूति आचार्य श्री नानेश को श्रद्धा सुमन अर्पित है

महासती श्री नानुकंवर जैन बुक बैंक जन कल्याणार्थ हेतु समग्र समाज के विद्यार्थियों को स्नातक सी.ए. इंजीनियरिंग, बी.बी.एम. के सभी विषयों की पुस्तकें उपलब्ध करवा कर एक महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। उदारमना दानदाताओं से अनुरोध है कि इसे और गति प्रदान करने हेतु मुक्त हस्त तन, धन से दान देवें।

आचार्य श्री नानेश के प्रति सम्पूर्ण कृतज्ञता भाव से समर्पित

आभूषणों के थोक विक्रेता

तिलक पथ, घन्टाघर के पास, नीमच (म.प्र.)

✦ *प्रेमचन्द-प्रेमबाई* ✦ *विमल-दिलखुश*
✦ *राजेश-ललिता* ✦ *कमलेश-दिलखुश*
लोढ़ा परिवार, अठाना (म.प्र.)

कर्मों की निर्जरा ही कर्मों से मुक्ति दिलाती है, यही वीरत्व है। –आचार्य श्री नानेश

484528
484540

श्रद्धावनत

मै. कुमावत कन्सट्रक्शन

"AA" Class Contractors

293, स्वराज नगर, माछला मगरा, रोड नं. 9
उदयपुर (राज.)

विचारों के साथ संस्कारों मे जो परिवर्तन आता है, वही स्थायी रहता है। -आचार्य श्री नानेश

आचार्य श्री नानेश की स्मृति में श्रद्धा सहित :

आसकरण इन्दरचन्द सोनावत

पुरानी लेन, गंगाशहर (बीकानेर) 270 053

सुमति उसी बुद्धि का नाम है जो आये हुए अवसर को हाथ से नही जाने देती। -आचार्य श्री नानेश

जन-जन के हृदय सम्राट आचार्य श्री नानेश को कोटिशः प्रणाम

83, जवाहर नगर, नीमच (म.प्र.) 458 441

✆ : (07423) 25296

जब तक अपने आपको नही देख पायेगे, परमात्मा को भी नही देख पायेगे। -आचार्य श्री नानेश

जिनका नाम ही संसार सागर से तारने वाला है,
उन आचार्य श्री नानेश को प्रणाम :

बालचन्द जेठमल सेठिया

सेठिया मौहल्ला, भीनासर

एक नमस्कार से ही सभी पापो का नाश हो जाता है। -आचार्य श्री नानेश

संयम साधना के ध्रुव नक्षत्र आचार्य श्री नानेश को हार्दिक श्रद्धांजलि

पूनमचन्द ताराचन्द डागा

बाबा रामदेव रोड, पुरानी लाईन, गंगाशहर (बीकानेर)

आचार्य श्री नानेश के चरणो मे शत्-शत् वन्दन

With best compliment from :

G. R. Agarwal Builders and Developers Limited

80/A, Shahı Complex, Hıran Magrı, Sec 11
UDAIPUR - 313 002 (Raj.)
© 0294-487370, 483033

Branch Office :

❑ A-67, Pratap Nagar, CHITTORGARH - 312 001 (Raj) © 01472-40017, 40569
❑ 1-7, Sukhee Jeevan Complex, Jacob Road, JAIPUR (Raj) © 0141-222212
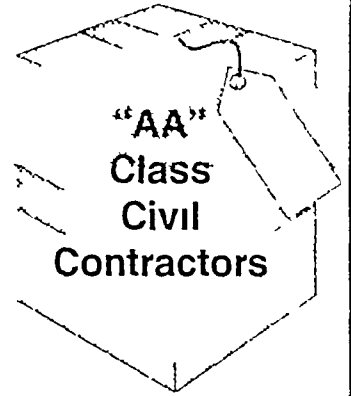
With best compliment from :
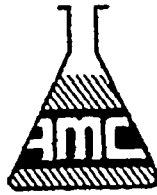
RAJASTHAN MINERALS & CHEMICALS

F-232, Road-1E, Mewar Industrial Area
UDAIPUR - 313 003 (Raj.)

© 0294-490134, 491811
Fax 0294-492568

Manufacturer & Supplier of

◆ Rock Phosphate
◆ Soap Stone
◆ Dolomite
◆ Bauxite & other Mineral Powders & Grinding Contractors

समता मानव के मूल मे है, उसे भूला कर जब वह विपरीत दिशा में चलता है तभी दुर्दशा आरम्भ होती है। -आचार्य श्री नानेश

With best compliment from :

PATEL PACKAGING INDUSTRIES

[illegible] BOXES, SHEETS & ROLLS

Postal Bedwa, Post-Partapur, Dıstt Banswara (Raȷ) 327 024

✦

Fact Navagav, Partapur, Dıstt Banswara (Raȷ) 327 024

✦

✆ (02963) 20337 (O), 20162 (F), 21182, 20800 (R)
Fax 02963-21183

आचार्य श्री नानेश की पावन स्मृति में

With best compliment from :

ARIHANT BEARING SERVICES PVT. LTD.

SKF Authorised Stockist & Recognised Importer

Inside Udaipole, **UDAIPUR- 313 001**
Phone 421407 Fax 0294-487802
Emaıl arıhantskf@bppl net ın

✦

Plot 11/B, Scheme 47, Snehnagar, Main Road,
Near Sapna-Sangeeta, **INDORE - 452 001**

Phone 464396, 360544 • Fax 0731-478202
Emaıl ajaymeht@bom4 vsnl net ın

जय नानेश *जय जिनेश* *जय विजयेश*

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री 1008 श्री नानालाल जी म सा को कोटिश नमन

गोटिलाल भोरीलाल जैन

बड़ी सादड़ी (राज.) फोन : 64228, 64227

सबधित फर्म

गोटिलाल भोरीलाल जैन एण्ड कंपनी
49, कृषि उपज मंडी
उदयपुर (राज.)
फोन : 584714, (नि) 460518, 461519

अरिहंत मार्बल एवं ग्रेनाइट
जी-128, सुखेर, उदयपुर (राज)
फोन : 441120 (फै), 440183 (गो)
460518, 461519 (नि)

मैसर्स जी.बी. एन्टरप्राइजेज ◆ मैसर्स जी.बी. एण्ड सन्स

स्टेशन रोड, नीमच फोन : 24424, 25079, (नि) 22775

भोरीलाल, सागरमल, कन्हैयालाल, गौतमलाल, विनोद कुमार
अनिल कुमार, दिलीप कुमार, नवीन कुमार एवं समस्त धींग परिवार

जन-जन के हृदय सम्राट आचार्य श्री नानेश को कोटिशः प्रणाम

चम्पालाल गणेशमल छल्लाणी

पोस्ट-देशनोक
जिला बीकानेर (राज.) 334 801

आचार्य श्री नानेश को हार्दिक श्रद्धांजलि

हेमन्त स्टूडियो

382-बी, अशोक नगर, रोड़ नं. 9, विद्या निकेतन,
बालिका स्कूल के सामने, उदयपुर - 313 001
फोन : 411018

- स्टील मॉडलिग एण्ड आर्टिकल फोटोग्राफी एवं वीडियो
- आचार्य श्री नानेश के महाप्रयाण यात्रा के फोटो व वीडियो कैसेट, लेमीनेशन

भूपेन्द्र मल्हारा

जय नानेश जय जिनेश जय विजयेश

साधना का लक्ष्य आत्मशुद्धि के लिए है

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री 1008 श्री नानालालजी म सा को कोटिश नमन

कन्हैयालाल निर्मल कुमार पितलिया

83, जवाहर नगर, नीमच (म प्र) फोन : 07423-25296

जय नानेश जय जिनेश जय विजयेश

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री 1008 श्री नानालालजी म सा को कोटिश नमन

मे. औंकारलाल सागरमल मेहता
ग्रेन मर्चेन्ट एण्ड कमीशन एजेन्ट
321, तिलक मार्ग, नीमच

मे. सुशील कुमार एण्ड ब्रदर्स
ग्रेन मर्चेन्ट एण्ड कमीशन एजेन्ट
16, मंडी प्रांगण, नीमच

फोन : 20168, 21391, 23412 (का.), 20268, 21531, 23413 (नि)

जय नानेश जय जिनेश जय विजयेश

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री 1008 श्री नानालालजी म सा को कोटिश नमन

नीमच श्री साधुमार्गी जैन संघ, नीमच

सागरमल मेहता-संरक्षक, सुनील मेहता-अध्यक्ष, मनीष भामावत-उपाध्यक्ष, मदनलाल कांठेड-सचिव,
बागमल पटवा-सहसचिव, धनरूपमल नागौरी-कोषाध्यक्ष, दिलीप कुमार नपावलिया-उपकोषाध्यक्ष
गौतमलाल धीग-सहसचिव, कन्हैयालाल पितलिया-प्रचार मंत्री

जय नानेश जय जिनेश जय विजयेश

परम श्रद्धेय समता विभूति आचार्य श्री 1008 श्री नानालालजी म सा को कोटिश नमन

M.L. JAIN, *Ex Insp, C R P F*
Asstt Central Intelligence Officer-II, SPG
(Prime Minister Security, New Delhi)
Pricipal-T N Neemuch Public School
14, Jawahar Nagar, **NEEMUCH**
Tel 07423-23808, 25566

MANISH JAIN
JAIN COMPUTER'S
LIFE INSURANCE CORPORATION AGENT
JAIN PCO
14, Jawahar Nagar, **NEEMUCH**
Tel 07423-23808, 25566

जय गुरु नाना जय महावीर जय विजय-शान्ति

जो जीवन सम्यक् निर्णायक और समतामय है वास्तव में वही जीवन है। —आचार्य श्री नानेश

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

शुभकरण चम्पालाल जी सेठिया

उपाध्यक्ष,, श्री अ भा साधुमार्गी जैन श्रावक सघ ◆ अध्यक्ष, श्री साधुमार्गी जैन श्रावक सघ, सूरत

नवरतनमल-कमलादेवी सेठिया
शुभकरण-सरोजदेवी सेठिया
महेन्द्रकुमार-प्रेमदेवी सेठिया
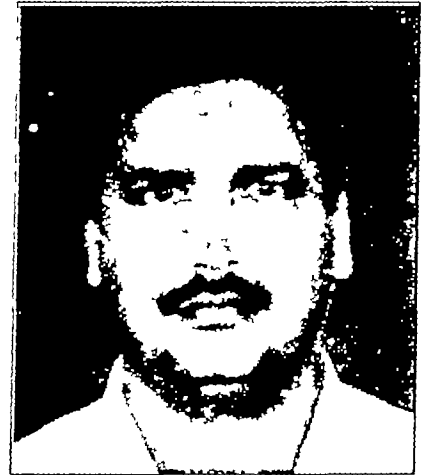
MANJUSHREE
Badarpur, Asam

JAI PETROLEUM & LUBRICANT

(Lube C & F Agent of Hindustan Petroleum Corporation Ltd
R-6, Bombay Market, Umarwada, SURAT
PH. 641737, 646094, Tele. Fax : (0261) 646094

SUN CHEM

O-30, Bombay Market, SURAT

VS-12, Bombay Market, SURAT-395 010
PH. (O) 646094, 641737 M. 98251-20795

जय गुरु नाना जय महावीर

जो जितना समतावान् होगा वह उतना ही सवेदनशील हो

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आ

हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत्

प्रकाशचन्द मानकदे

रिखब कुमार दसा

गोपाल कीसना टीक
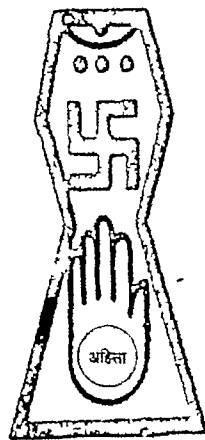
परस्परोपग्रहो जीवानाम्

76, जमुनालाल बजाज स्ट्रीट, कलक

फोन : 2385648, 2302167, 4

जय गुरु नाना | जय महावीर | जय विजय-शान्ति

प्राणी को प्राणी समझना, उसकी आत्मा को अपनी आत्मा समझना, उस पर मैत्री भाव रखना और दीन-दुखियो पर अनुकम्पा करना समता है। —आचार्य श्री नानेश

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

प्रदीप कुमार-ललिता दसाणी
वीनित कुमार-परण कुमार दसाणी
प्रकाशचन्द किशनलाल

72324 गली दीगाबेगी, दिल्ली - 110 009

फोन : 3963509, 3911420
7121697, 7241697

आचार्य श्री नानेश के चरणों में कोटि-कोटि वंदन सहित

With Best Compliments From :

Near Kalina Church, Shop Number 2, Santacruz (E)
Kalina, MUMBAI - 400 029
PH. : 6112692, 6160380 (O), 6132846
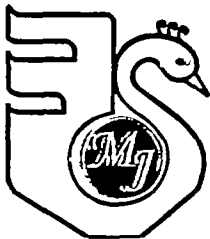
Mayur
...ellers (A/c Showroom)

Ellora Building, Shop Number 6,
Kalina Kurla Road, Kalina, Santacruz (E)
MUMBAI - 400 029 PH. : 6134514

Rooplal Jain ❐ *Ashok R. Jain* ❐ *Vinod R. Jain*

जय गुरु नाना　　　　जय महावीर　　　　जय विजय-शान्ति

प्राणी को प्राणी समझना, उसकी आत्मा को अपनी आत्मा समझना, उस पर मैत्री भाव रखना
और दीन-दुखियो पर अनुकम्पा करना समता है।—आचार्य श्री नानेश

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

प्रदीप कुमार-ललिता दसाणी
वीनित कुमार-परण कुमार दसाणी
प्रकाशचन्द किशनलाल

72324 गली दीगाबेगी, दिल्ली - 110 009

फोन : 3963509, 3911420
7121697, 7241697

जय गुरु नाना | जय महावीर | जय विजय-शान्ति

बुद्धि, धन, बल या विद्या किसी की भी शक्ति स्वय के पास हो तो उसका कर्त्तव्य माना जाना चाहिए कि वह अपनी शक्ति का दूसरो के हित के लिए सदुपयोग करे।–आचार्य श्री नानेश

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

मूलचन्द दसाणी

दीपेश कुमार-दिशा कुमारी दसाणी

मूलचन्द दिलीप कुमार
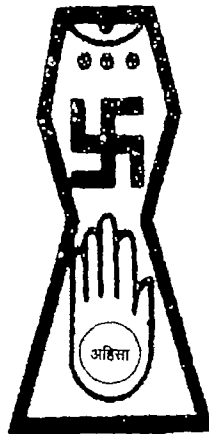
परस्परोपग्रहो जीवानाम्

201–बी, महात्मा गांधी रोड, कलकत्ता – 700 007
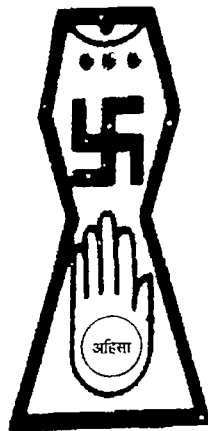
फोन : 2312498, 5346457

आचार्य श्री नानेश के प्रति हार्दिक श्रद्धा सहित

With Best Compliments From :

K.C. METAL INDUSTRIES

Manufacturers of

▲ Electrolytic Copper
▲ Strips ▲ Flats
▲ Rods
▲ Profiles & Non Ferrous Metals Merchants

Factory :
Ram Mandir Industrial Estate,
Ram Mandir Road, Bldg. No. 3, Gala No. 2 & 5
Goregaon (E), **MUMBAI - 400 063**

Phone :
Fact. 8765268, 8730191 • Resi. : 8727420
Fax 8733329

Mr. G.K. Jain

जय गुरु नाना

जय महावीर

जय विजय-शान्ति

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

भंवरलाल-छगनी देवी दसाणी

43, डवसन रोड, हावड़ा (कलकत्ता)

फोन : 6662676
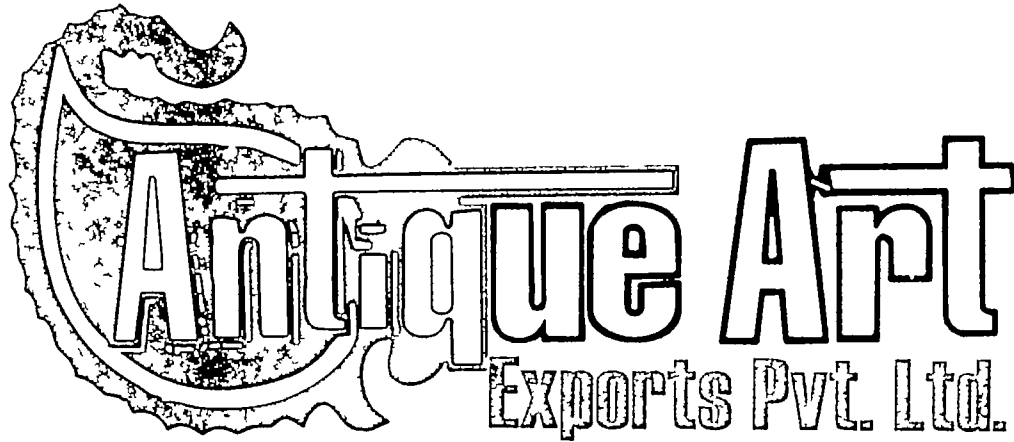
With Best Compliments From.

Shilpa
FILAMENTS PVT. LTD.

Regd. Office :
4023, Jash Yarn & Textile Market,
SURAT - 395 002 Gujarat (INDIA)

Factory

Unit-I - Plot Number 13/A, Block Number 79/81,
Karanj Ind. Estate, Kim-SURAT
Unit-II - Survey Number 231/3/1/1. Dadra,
Silvasa, D.N. & H. (Union Teritory)

ROTO YARN, CRIMPED & TEXTURISED, AIR TEX, DYED & FANCY, POLYSTER YARN

Phone Number
Office 0261-641511, 636753, 653317
Factory (Kim) 02621-34765, (Silvasa) 0260-648636
Resi . 0261-252383, 668736

◆ ***Roshan Lal Mehta*** ◆ ***Suresh Shankarlal Bapna***

◆ ***Mahavir R. Mehta***

जय गुरु नाना

जय महावीर

जय विजय-शान्ति

आतरिक पवित्रता मधुर वाणी एव निर्मल व्यवहार मे प्रकट होती है। —आचार्य श्री नानेश

समता विभूति समीक्षण ध्यानयोगी आचार्य श्री नानेश को
हार्दिक श्रद्धांजलि

शत्-शत् वंदन! शत्-शत् अभिनन्दन!

हिम्मतसिंह मेहता (उदयपुर)

कोषाध्यक्ष, श्री साधुमार्गी जैन श्रावक संघ, सूरत
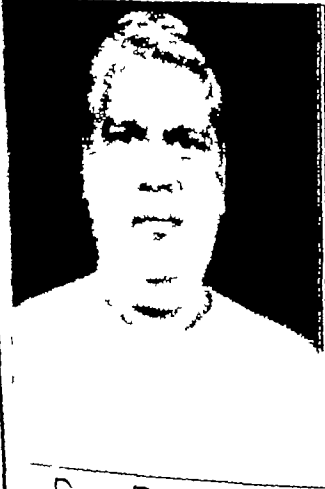
हिम्मतसिंह मेहता

कुशलदेवी मेहता
अरुण, सविता, वीरेन्द्र
एवं समस्त मेहता परिवार

Mahavir Silk Place

G-24 Bombay Market, Umarwada, SURAT-10
PH. (O) 633873 (R) 623819

Arunkumar Himmatsingh

B-8, Bombay Market, Umarwada, SURAT-10